CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

11·2

कौषीतकीय संस्कार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कृष्णदास संस्कृत सीरीज

३६

॥ श्रीः ॥

कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्

(अधिकरण ४, ५, ६, ७, ८, ९)

वनात्मक भूमिका, ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक अध्ययन तथा हिन्दी अनुवाद)

लेखक

डॉ० रघुनाथ सिंह

एम. ए., एल. एल. बी., पी-एच. डी., डी. लिट,
एफ. आर. ए. एस. (लन्दन)

खण्ड २

कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

१९८६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकाशक : कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : वर्द्धमान मुद्रणालय, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०४२
मूल्य : रू० १२५-०० (द्वितीय खंड)

© कृष्णदास अकादमी
पो० बा० नं० १११८
चौक, (चित्रा सिनेमा बिल्डिंग), वाराणसी-२२१००१ (भारत)

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी-२२१००१ (भारत)
फोन : ६३१४५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES

36

KAUTILIYAM ARTHAŚASTRAM

(Adhikarana-4, 5, 6, 7, 8, 9)

(Original text translation in Hindi with historical, geographical and cultural notes)

By

Dr. Raghunath Singh

M. A., LL. B., Ph. D., D. Litt.,

F. R. A. S. (London)

Part II

KRISHNADAS ACADEMY

VARANASI–221001

1986

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

© KRISHNADAS ACADEMY
Oriental Publishers & Distributors
Post Box No. 1118
Chowk, (Chitra Cinema Building)
VARANASI-221001 (India)

First Edition
1986
Price Rs. 125-00 (Part II)

Also can be had from
Chowkhamba Sanskrit Series Office
Oriental Publishers & Distributors
K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Post Box 1008, VARANASI-221001 (India)
Phone : 63145

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुरोवाक्

कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम् के द्वितीय खण्ड में ६ अधिकरण, ७० प्रकरण, तथा ५१ अध्याय हैं। कण्टक शोधनय अध्याय में ४१८, योगवृत्तम् अध्याय में २५४, मण्डलयोनि में ५८, षाड्गुण्य में ६८४, व्यसनाधिकरण में २३५, अभियास्यत्कर्म में ३४० कुल १८१६ सूत्र हैं।

यह खण्ड एक तरह से अर्थशास्त्र का हृदय है। सूत्रों की व्याख्या अनुवाद तथा कौटिल्य के शब्दों के अर्थ दिये गये हैं।

मैं प्रायः अस्वस्थ रहता हूँ। शरीर में कम्पन आ गया है। लिखने में कठिनता होती है। अपना ही लिखा पढ़ने में परिश्रम करना पड़ता है। मुद्रण में संशोधनों के बावजूद कहीं-कहीं त्रुटियाँ रह गयी हैं।

मैं सन् १९६९ में विशाखा पत्तनम् हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड, सरकारी उपक्रम उदयपुर के कार्य से गया था। जिसका मैं अध्यक्ष था। वहाँ एक दूसरे परिद्रावक बनाने की योजना थी। उदयपुर का कारखाना भारत के यशद की पूर्ति नहीं कर सकता था। वहाँ पर मैं अर्थायिटिस से पीड़ित हो गया। वाम पैर में भयंकर पीड़ा होने लगी। स्थानीय डॉक्टरों ने अस्पताल में भर्ती होने की बात कही। मैं किसी प्रकार कलकत्ता होते हुए काशी पहुँचा।

श्री के० एन० उड़प्पा, एम० एस०, एफ० आर० सी० एस०, (कनाडा) एफ० ए० एम० एस०, उस समय हिन्दू विश्व विद्यालय के मेडिकल कालेज के प्रिंसिपल थे। वे जब हिन्दू विश्वविद्यालय को विद्यार्थी थे, उसी समय से मेरा उनका परिचय था। वे सहृदय, अनुपम, चरित्रवान् तथा कर्मठ व्यक्ति हैं। मेडिकल कालेज इस समय इन्टीट्यूट बन गया हैं। आपने अपने अथक परिश्रम और दूर दृष्टि के कारण महामना स्वर्गीय मालवीय जी की तरह अच्छे लोगों का संग्रह किया। विश्व विद्यालय की अच्छी ख्याति हुई।

इसी समय डॉ० एस० एन० तुली, एम० एस०, पी एच० डी०, एफ० ए० एम० एस०, जो आजकल मेडिकल इन्स्टीच्यूट के डाइरेक्टर हैं और हड्डी के विशषज्ञों में भारत के माने-जाने व्यक्ति हैं, उन्होंने डॉ० उडप्पा के साथ मेरा उपचार शुरू किया। डॉ० उडप्पा ने डॉ० विमल चन्द्र कटियार, एम० डी० एफ० आर० सी० पी० (लन्दन तथा एडिन वर्ग) ग्राम दधिखा, पो० विल्हौर, जिला कानपुर को मुझे देखने के लिए कहा। डॉ० कटियार ने जाँचकर बताया कि मेरा रोग अर्थायिटिस ही है।

डॉ० तुली ने एक दिन मुझसे कहा कि अर्थायिटिस का रोगी आजन्म रोगी रहता है। मैं ६ सप्ताह काशी विश्वविद्यालय के अस्पताल में रहा। चलते समय मैंने डॉ० तुली से कहा इसको मैं योग से अच्छा करूंगा। सन् १९३० से ही आसन और प्राणायाम जेल में तो आरम्भ किया था और अब तक करता हूँ। मुझे अर्थायिटिस बिल्कुल नहीं रह गयी।

मैंने डॉ० कटियार से सलाह ली। उन्होंने निदान किया। पार्किशन्स व्याधि हो गयी है। उन्होंने यह स्पष्ट कहा कि यह बीमारी पूर्णतया अच्छी नहीं होती है। किन्तु यह मारक बीमारी नहीं है। कष्ट अवश्य होता है। इसके पूर्व मैं दो वर्षों तक आयुर्वेदिक उपचार करता रहा। उससे कुछ लाभ हुआ किन्तु पूर्णतया स्वस्थ नहीं हो सका।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कम्पन की बीमारी मेरे यहाँ स्वर्गीय श्री ठाकुर विश्वनाथ सिंह को भी थी। वे कर्मठ व्यक्ति थे। काशी के शेर कहे जाते थे। दो गोलियों से घायल हुए तीन बार स्वतन्त्रता संघर्ष में जेल गए थे। उनकी औषधि तत्कालीन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के स्वनामधन्य स्वर्गीय श्री सत्यनारायण शास्त्री ने की थी। सन् १९३६ से अपनी मृत्यु पर्यन्त सन् १९४४ ई० तक वे आयुर्वेदिक चिकित्सा करते रहे। विशेष लाभ नहीं हुआ। दिन प्रतिदिन कमजोरी बढ़ती गयी। अन्त में उनकी मृत्यु सन् १९४४ में हो गयी।

मैं बहुत सावधानी से रहने लगा। मुझे विश्वास हो गया कि आयुर्वेदिक औषधि के कारण अच्छा नहीं हो सकूँगा। अतएव मैं श्री डॉ० कटियार के पास गया। उन्होंने सौजन्यतापूर्वक देखा। एलोपैथिक दवा निश्चित किया। पहले ही दिन देखकर कह दिया कि वृद्धावस्था की बीमारी हैं। पूर्णतया अच्छी नहीं होगी। औषधि खाने से लाभ होगा। मैं उनकी बतायी औषधि लीयोडोपा खाने लगा। कौटिलीय अर्थशास्त्र का तृतीय भाग तैयार कर लिया है। मुझे विश्वास हो गया था। हाथ पैर चलते यदि कार्य समाप्त कर लूँगा तो पुस्तक का तीसरा भाग पूर्ण हो जायेगा। क्योंकि न जाने मृत्यु कब आ जायेगी। यद्यपि मैं मृत्यु का स्वागत करने को तैयार बैठा हूँ। मैं श्री डॉ० कटियार के प्रति धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ।

इस काल में आचार्य श्री पशुपति प्रसाद द्विवेदी प्राध्यापक उत्तर रेलवे इन्टर कालेज का सहयोग प्राप्त होता रहा है। श्री डॉ० सच्चिदानन्द पाण्डेय एम, ए., पी. एच. डी. तथा आचार्य श्री वाचस्पति मिश्र ग्रा० कुरुथुवा पो० सोनहरा, जिला आजमगढ़ की लिखने में सहायता मिली है। वे धन्यवाद के पात्र हैं।

श्री मुरारजी देसाई का पूर्ववत्, मुझे आशीर्वाद प्राप्त होता रहा है। उनके प्रति भी मैं आभार प्रकट करता हूँ।

संस्कृत विश्वविद्यालय काशी के पुस्तकालयाध्यक्ष श्री लक्ष्मी नारायण तिवारी तथा उप पुस्तकाध्यक्ष श्री अच्युतनाथ झा के प्रति आभार प्रकट करता हूँ। उनके कारण कौटिल्य सम्बन्धी पुस्तकों की जानकारी होती रही है। डॉ० श्री लल्लन जी गोपाल के यहाँ सायंकाल बैठने और विचार विमर्श करने में तथा अनेक पुस्तकें प्राप्त होने के कारण कौटिल्य की अनेक गुत्थियाँ सुलझी हैं। वे तथा श्री कृष्णचन्द्र बेरी और हनुमान प्रसाद शर्मा का उदार हृदय मेरी प्रेरणा का श्रोत रहा है। मेरे भतीजे माधो प्रसाद शर्मा तथा कृष्ण मुरारी सिंह एवं संतोषकुमार उर्फ (छेदी) के कारण मेरे दैनिक जीवन में सहायता मिलती रही है। मेरी सरहज श्रीमती रामबाला देवी और मेरी भाजी विजयवाला देवी धर्मपत्नी श्री दानबहादुर सिंह एडवोकेट के कारण मुझे घर के खाने-पकाने की कठिनाई से मुक्त कर दिया। वे धन्यवाद के पात्र हैं।

कृष्णदास अकादमी के निदेशक और मुद्रक श्री बाबूलाल जैन फागुल्ल तथा उनके कर्मठ पुत्र राजकुमार जैन के प्रति आभार प्रकट करता हूँ। जिनके कारण पुस्तक प्रकाशित हो सकी है।

पुस्तक में अनेक मुद्रण त्रुटियाँ रह गयी हैं, उनके लिए मैं पाठकों से क्षमा प्रार्थी हूँ।

ज्ञात अज्ञात रूप से जिन महानुभावों ने सहानुभूति प्रकट की है तथा स्वलेखन में सहायता पहुँचायी है। उनका मैं आभारी हूँ। मैं उस अव्यक्त शक्ति को नमस्कार करता हूँ, जिसके कारण यह कार्य पूर्ण हो सका है।

—रघुनाथ सिंह

डी० ५५।१९७ औरंगावाद
वाराणसी (उ० प्र०)
१५-८-८५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषयानुक्रमणिका

कण्टकशोधनम्-चतुर्थमधिकरणम्

७६ षट्सप्ततितमं	प्रकरणम्	अध्याय	कारुकरक्षणम्	१-१७
७७. सप्तसप्ततितमं	,,	,, २२	वैदेहकरक्षणम्	१८-२४
७८. अष्टसप्ततितमं	,,	,, ३३	उपनिपातप्रतीकारः	२५-३४
७९. एकोनाशीतितमं	,,	,, ४४	गूढ़ाजीविनां रक्षा	३५-४१
८०. अशीतितमं	,,	,, ५५	सिद्धव्यञ्जनैर्माणव प्रकाशनम्	४२-४३
८१. एकाशीतितमं	,,	,, ६६	शङ्कारूपकर्माभिग्रहः	४४-५५
८२. द्वयशीतितमं	,,	,, ७	आशुमृतकपरीक्षा	५६-६४
८३. त्र्यशीतितमं	,,	,, ८	वाक्यकर्मानुयोगः	६५-७२
८४. चतुरशीतितमं	,,	,, ९	सर्वाधिकरणरक्षणम्	७३-८२
८५. पञ्चाशीतितमं	,,	,, १०	एकाङ्गवधनिष्क्रयः	८३-८८
८६. षडशीतितमं	,,	,, ११	शुद्धश्चित्रश्च दण्डकल्पः	८९-९५
८७. सप्ताशीतितमं	,,	,, १२	कन्याप्रकर्म	९६-१०५
८८. अष्टाशीतितमं	,,	,, १३	अतिचारदण्डाः	१०६-११६

योगवृत्तम्-पञ्चममधिकरणम्

८९. एकोननवतितमं	प्रकरणम्	अ० १	दाण्डकर्मिकम्	११७-१२८
९०. नवतितमं	,,	,, २	कोशाभिसंहरणम्	१२९-१४४
९१. एकनवतितमं	,,	,, ३	भृत्यभरणीयम्	१४५-१५३
९२. द्विनवतितमं	,,	,, ४	अनुजीविवृत्तम्	१५४-१५९
९३. त्रिनवतितमं	,,	,, ५	समयाचारिकम्	१६०-१६५
९४. चतुर्नवतितमं	,,	,, ६	राज्यप्रतिसंधानम्	१६६-१७०
९५. पञ्चनवतितमं	,,	,, ६	एकैश्वर्यम्	१७०-१७५

मण्डलमोनिः षष्ठमधिकरणम्

९६. षण्णवतितमं	प्रकरणम्	अ० १	प्रकृतिसंवदः	१७६-१८३
९७. सप्तनवतितमं	,,	,, २	शमव्यायामिकम्	१८४-१९२

षाड्गुण्यम्-सप्तममधिकरणम्

९८. अष्टनवतितमं	प्रकरणम्	अ० १	षाड्गुण्यसुमुद्देशः	१९३-१९६
९९. नवनवतितमं	,,	,, ,,	क्षयस्थानवृद्धिनिश्चयः	१९७-२०१
१००. शततमं	प्रकरणम् ,,	,, २	संश्रयवृत्तिः	२०२-२०७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१०१. एकशततमं	प्रकरणम्	अ० ३	समहीनज्यायसां गुणाभिनिवेशः	२०८-२११
१०२. द्विशततमं	,,	,, ,,	हीन संधयः	२११-२१६
१०३. त्रिशततमं	,,	,, ४	विगृह्यासनम्	२१७-२२१
१०४. चतुःशततमं	,,	,, ,,	संधायासनम्	२२१-०
१०५. पञ्चशततमं	,,	,, ,,	विगृह्ययानम्	२२३-०
१०६. षट्शततमं	,,	,, ,,	संधाययानम्	२२३-०
१०७. सप्तशततमं	,,	,, ,,	संभूयप्रयाणम्	२२३-२२४
१०८. अष्टशततमं	,,	,, ५	यातव्यामित्रयोरभिग्रहचिन्ता	२२५-२२८
१०९. नवशततमं	,,	,, ,,	क्षयलोभविरागहेतवः प्रकृतीनाम्	२२९-२३३
११०. दशशततमं	,,	,, ,,	सामवायिकविपरिमर्शः	२३३-२३६
१११. एकादशशततमं	,,	,, ६	संहितप्रयाणिकम्	२३७-०
११२. द्वादशशततमं	,,	,, ,,	परिपणितापरिपणिताप्रसृताः संधयः	२३८-२४८
११३. त्रयोदशशततमं	,,	,, ७	द्वैधीभाविकाः सन्धिविक्रमाः	२४९-२५६
११४. चतुर्दशशततमं	,,	,, ८	यातव्यवृत्तिः	२५७-२५८
११५. पञ्चदशशततमं	,,	,, ,,	अनुग्राह्यमित्रविशेषाः	२५८-२६५
११६. षोडशशततमं	,,	,, ९	मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधयः तत्र मित्रसन्धिः हिरण्यसंधिश्च	२६६-२७७
११६. षोडशशततमं	,,	,, १०	मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधयः, तत्र भूमिसन्धिः	२७८-२८६
११६. षोडशशततमं	,,	,, ११	मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधयः, तत्र अनवसितसन्धिः	२८७-२९६
११६. षोडशशततमं	,,	,, १२	मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधयः, तत्र कर्म सन्धिः	२९७-३०६
११७. सप्तदशशततमं	,,	,, १३	पार्ष्णिग्राहचिन्ता	३०६-
११८. अष्टादशशततमं	,,	,, १४	हीनशक्तिपूरणम्	३२३-
११९. एकोनविंशतिशततमं	,,	,, १५	बलवता विगृह्योपरो धहेतवः	३२४-३२९
१२०. विंशतिशततमं	,,	,, ,,	दण्डोपनतवृत्तम्	३२९-३३२
१२१. एकविंशतिशततमं	,,	,, १६	दण्डोपनायिवृत्तम्	३३२-३४०
१२२. द्वाविंशतिशततमं	,,	,, १७	सन्धिकर्म	३४१-३४७
१२३. त्रयोविंशतिशततमं	,,	,, ,,	समाधिमोक्षः	३४७-१५४
१२४. चतुर्विंशतिशततमं	,,	,, १८	मध्यमचरितम्	३५५-३६०
१२५. पञ्चविंशतिशततमं	,,	,, ,,	उदासीनचरितम्	३६०-३६३
१२६. षड्विंशविशततमं	,,	,, ,,	मण्डलचरितम्	३६३-३६६

व्यसनाधिकारिकम् अष्टममधिकरणम्

१२७. सप्तविंशतिशततमं	प्रकरणम्	अ० १	प्रकृति व्यसनवर्गः	३६७-३७९
१२८, अष्टाविंशतिशततमं	,,	,, २	राजराज्ययोर्व्यसनचिन्ता	३८०-३८५
१२९. एकोनत्रिंशच्छततमं	,,	,, ३	पुरुषव्यसनवर्गः	३८६-३९७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१३०.	त्रिंशच्छततमं प्रकरणम्	अ० ४	पीडनवर्गः	३९८-४०८
१३१.	एकत्रिंशच्छततमं ,,	,, ,,	स्तम्भवर्गः	४०९-४०९
१३२.	द्वात्रिंशच्छततमं ,,	,, ,,	कोशसङ्गवर्गः	४०९-४०९
१३३.	त्रयस्त्रिंशच्छततमं ,,	,, ५	बलव्यसनवर्गः	४१०-४१७
१३४.	चतुस्त्रिंशच्छततमं ,,	,, ,,	मित्रव्यसनवर्गः	४१७-४२०

अभियास्यत्कर्म-नवमाधिकरणम्

१३५.	पञ्चत्रिंशच्छततमं	अ० १	शक्तिदेशकालबलाबलज्ञानम्,	४२१-४८२
१३६.	षट्त्रिंशच्छततमं	,, ,,	यात्राकालः	४२८-४३२
१३७.	सप्तत्रिंशच्छततमं	,, २	बलोपादानकालाः	४३३-४३८
१३८.	अष्टत्रिंशच्छततमं	,, ,,	संनाहगुणाः	४३८-४३९
१३९.	एकोनचत्वारिंशच्छततमं	,, ,,	प्रतिबलकर्म	४४०-४४१
१४०.	चत्वारिंशच्छततमं	,, ३	पश्चात्कोपचिन्ता	४४२-४५१
१४१.	एकचत्वारिंशच्छततमं	,, ,,	बाह्याभ्यन्तरप्रकृतिकोपप्रतीकारः	४४२-४५१
१४२.	द्विचत्वारिंशच्छततमं	,, ४	क्षयव्ययलाभविपरिमर्शः	४५२-४५९
१४३.	त्रिचत्वारिंशच्छततमं	,, ५	बाह्याभ्यन्तराश्चापदः	४६०-४६६
१४४.	चतुश्चत्वारिंशततमं	,, ६	दूष्यशत्रुसंयुक्ताः (आपदः)	४६७-४८१
१४५.	पञ्चचत्वारिंशततमं	,, ७	अर्थानर्थसंशययुक्ताः (आपदः)	४८२-४९४
१४६.	षट्चत्वारिंशच्छततमं	,, ,,	तासामुपायविकल्पजाः सिद्धयः	४९५-४९९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संकेत-सूची

अ०—अध्याय
अग्नि०—अग्निपुराण
अथर्व०—अथर्ववेद
अनु०—अनुशासनपर्व
अमर०—अमरकोष
अयो०—अयोध्याकाण्ड रा० वा०
अरण्य०—अरण्यकाण्ड रा० वा०
अर्थशास्त्र०—कांगले संस्करण १९६९
आदि०—आदिपर्व
आप०—आपस्तम्बधर्मसूत्र
आश्व०—आश्वमेधिक पर्व
उ०—उद्योगपर्व-महाभारत
उत्तर०—उत्तररामचरितम्
ए० ब्रा०—एतरेय ब्राह्मण
ऋ०—ऋग्वेद
ऋतु०—ऋतुसंहारम्
कठ०—कठोपनिषद
कर्ण०—कर्णपर्व
कलि०—कलिगताब्द
का०—कादम्बरी
कामन्दक०—कामन्दक नीतिसार
का० सू०—कामसूत्र
कि०—किष्किन्धाकाण्ड रा० वा०
कु०—कुमारसम्भव
कूर्म—कूर्म पुराण
कौटिल्य०—कौटिल्य अर्थशास्त्र
उ० ख०—उत्तर खण्ड
गरुड़०—गरुड़पुराण
गीता०—श्रीमद्भगवद्गीता
गौतम०—गौतमधर्मसूत्र
छां० उ०—छान्दोग्योपनिषद
जोन०—जोनराजकृतराजतरंगिणी
त्रि०—त्रिकाण्डशेष
तै० ब्रा०—तैत्तिरीय ब्राह्मण
तु०—तुलनीय
देवी०—देवीमाहात्म्य
दे०भा०—देवी भागवत
द्र०—द्रष्टव्य
द्रोण०—द्रोणपर्व
नार०—नारदस्मृति
नार० पु०—नारदपुराण
नै०—नैषध
नृ०—नृसिंह पुराण
पंच०—पंचतन्त्र
पंचवि०—पंचविंशब्राह्मण
पद्म०—पद्मपुराण
परा०—पराशरमाधवीय
पाण्डु०—पाण्डुलिपि
पु०—पुराण
प्राचीन०—प्राचीनचरित्रकोष संस्करण १९६४
बा०—बालकाण्ड रा० वा०
ब्रह्म०—ब्रह्मपुराण
ब्रह्मा०—ब्रह्माण्ड पुराण
ब्रह्म० वै०—ब्रह्मवैवर्तपुराण
भा०—भारतमञ्जरी
भर्तृ०—भर्तृहरिशतकत्रयम्
भवि०—भविष्यपुराण
भाग०—भागवत पुराण
भामि०—भामिनीविलास
भीष्म०—भीष्मपर्व
म०—महाभारत
मत्स्य०—मत्स्यपुराण
मनु०—मनुस्मृति
मा०—मातङ्गलीला

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानस०—मानसोल्लास
माल०—मालविकाग्निमित्रम्
मुद्रा०—मुद्राराक्षसम्
मेघ०—मेघदूत
मार्कण्डे०—मार्कण्डेय पुराण
याज्ञवल्क्य०—याज्ञवल्क्यस्मृति
योग० वा०—योगवाशिष्ठ रामायण
रघु०—रघुवंश
राजतरंगिणी०—रघुनाथसिंह
रा० वा०—रामायण वाल्मीकीय
लिङ्ग०—लिङ्गपुराण
वन०—वन पर्व
वशिष्ठ०—वशिष्ठ स्मृति
वाज०—वाजसनेयिसंहिता
वा०—वाराहपुराण
वामन०—वामन पुराण
विष्णु धर्मो०—विष्णु धर्मोत्तरपुराण
विष्णु०—विष्णु पुराण
विक्र०—विक्रमांकदेवचरितम्
विक्रम०—विक्रमोर्वशीय
वृ० उ०—वृहदारण्यक उपनिषद
वृ० स०—वृहत्संहिता
वै०—वैशेषिक दर्शन
श० ब्रा०—शतपथ ब्राह्मण
शक्ति०—शक्तिसंगम तन्त्र
शाकु०—शाकुन्तल
शांखायन०—शांखायन श्रौत सूत्र गृह्यसूत्र
शल्य०—शल्य पर्व
शान्ति०—शान्ति पर्व
शिव०—शिवपुराण
शिशु०—शिशुपाल वध
शुक्र०—शुक्रनीति
शुक्ल०—शुक्ल यजुर्वेद
सभा०—सभापर्व
सा० वा०—सामविधान ब्राह्मण
साम०—सामवेद
सु०—सुन्दरकाण्ड वा० रा०
सु०—सुश्रुत संहिता
स्कन्द०—स्कन्द पुराण
संस्कृतकोश०—आप्टे संस्करण १९६९
ह० वं०—हरिवंश पुराण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्

कण्टकशोधनम्—चतुर्थमधिकरणम्

७६वां प्रकरण–कारुकरक्षणम्

अध्याय १

प्रदेष्टारस्त्रयस्त्रयोऽमात्याः कण्टकशोधनं कुर्युः ।

१. तीन प्रदेष्टा, तीन अमात्य कण्टक शोधन करें।

अर्थ्यप्रतीकाराः कारुशासितारः संनिक्षेप्तारः
स्ववित्तकारवः श्रेणीप्रमाणा निक्षेपं गृह्णीयुः ।

२. अर्थ्यप्रतीकार, कारुशासिता, संनिक्षेप्ता, स्ववित्तकारु एवं श्रेणीप्रमाणजन निक्षेप (न्यास) ग्रहण करें।

पाद टिप्पणी :

१. (१) प्रदेष्टा : शासनाधिकारी या मजिस्ट्रेट या कण्टकशोधन के लिए नियुक्त महामात्र-विशेष, जो कण्टक उन्मूलन कर सके। द्र० ३:६:३१, इसका काम अपराधों की जांच करना और दण्ड देना था। द्र० २:३५:७, यह समाहर्ता के अधीनस्थ कर्मचारी होता था। द्र० ४:४:९, ४.५:१३,

(२) त्रयोऽमात्या : तीन अमात्य, शासकीय अधिकारी राज्य के उच्चस्तरीय- मन्त्री के समकक्ष अध्यक्ष, धर्मस्थ, अमात्यों की श्रेणी में आते थे। द्र० १:२:१,१:८:२९,२:९:१,३:१:१,३:३:१ ।

(३) कण्टकशोधन : अपराधियों का दमन। अभियोगों को दो वर्गों में कौटिल्य ने बांटा है, धर्मस्थीय तथा कण्टकशोधन। प्रायः दो दलों के मध्य होने वाले विवादों को धर्मस्थीय तथा वाक्पारुष्य, दण्डपारुष्य, संग्रहण एवं स्तेय को कण्टकशोधन में रखा है। कण्टकशोधन अर्थात् क्षति करने वाले अभियोग राज्य तथा राजकर्मचारियों द्वारा देखें जाते थे। आज भी यह प्रक्रिया है। फौजदारी के मामलों में जो राज्य वादीपक्ष, अपराधियों के पक्ष के विरुद्ध होता था। कण्टकशोधन राजा का धर्म माना जाता था। नारद० १०:१४, द्र० १:१०:१३ मनु० ९:२५३,

तमिल मलयालम टिप्पणी के अनुसार कण्टक का अर्थ कुशीलव किया गया है। श्रीमूला में कण्टक का अर्थ प्रजापीड़क किया है। उनका शमन करना कण्टकशोधन है।

पाठभेद

'अर्घ्यप्रतीकारा : का पाठ भेद भाषा व्याख्यान में 'अर्घ्य प्रकाराः' और 'स्ववित्तकारवः' का तंजोर में 'स्वचित्तकारवः' मिलता है।

टिप्पणी :

२. (१) अर्घ्यप्रतीकारा : इस योग्य जो खोई हुई वस्तु की पूर्ति कर सके। अभ्यर्थनीय, प्रशंसनीय सरल स्वभाव वाले, ईमानदार प्रकृति के व्यक्तित्त, भी अर्थ किया गया है।

(२) संनिक्षेप्तार : गिरवी रखने वाले अथवा साक्षी सहित सभी व्यवहार करने वाले।

(३) स्ववित्तकारव : वे शिल्पी, जो स्वयं अपनी पूँजी से कार्य करते तथा खरीददारों से सीधा सम्पर्क रखते हैं। इसका एक अर्थ और किया जाता है, अपने धन से अलंकार बनाने वाला सुनार।

(४) श्रेणीप्रमाण : जो संगठित होकर कार्य करने वालों या परस्पर संघीय कार्य करने वालों के विश्वास और ईमानदारी का उत्तरदायी या प्रत्याभूत होता है। द्र० २:४:१६,८:४:२७। श्रेणी ग्राहकों के सम्मुख अपने कारुओं के कार्य का जिम्मेदार होता था।

(५) निक्षेप : धनादि का न्यास, धरोहर या गिरो रखना। मनु० ८:१७९,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विपत्तौ श्रेणी निक्षेपं भजेत् ।

३. मृत्यु होने पर (निक्षेप हानि की स्थिति में) श्रेणी (खण्डशः) निक्षेप प्रदान करे ।

निर्दिष्टदेशकालकार्यं च कर्म कुर्युः, अनिर्दिष्टदेशकालं कार्यापदेशम् ।

४. (शिल्पीजन) देश, काल एवं कार्य का निर्देश करके कर्म करें, देश, काल एवं कार्य का निर्देशन न करने पर, कारण स्पष्ट कर, कर्म करें ।

कालातिपातने पादहीनं वेतनं तद्द्विगुणश्च दण्डः ।

५. कालातिपात होने पर, वेतन का चतुर्थांश वेतन कम किया जाय और उसका दूना दण्ड आरोपित किया जाय ।

अन्यत्र भ्रेषोपनिपाताभ्यां नष्टं विनष्टं वाऽभ्यावहेयुः ।

६. हिंसक जीव तथा दैवी आपदा के अतिरिक्त अन्य कारण से नष्ट या विनष्ट होने पर उसे बहन करे अर्थात् लौटाने का जिम्मेदार हो ।

पाद टिप्पणी :

३. (१) विपत्ति : मृत्यु, आपदा अथवा बहुकाल व्यापी प्रवासादि । द्र० १:२१:६,३:१९:१५ ।

(२) निक्षेप : शिल्पी के हाथ में संस्कारार्थ द्रव्यादि रखने से यहाँ तात्पर्य है । द्र० ४:३:१३, ५:२:४०, ५५, २:१४:५ ।

(३) भजेत : प्रत्यर्पण करना या भागानुसार देना ।

पाठ भेद :

'कालं कार्यापदेशम्' का पाठभेद तंजौर त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद टिप्पणी में 'कालकार्यापदेशम्' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

४. (१) अनिर्दिष्टकाल : जिसका निर्देश या अनुबन्ध न हो । द्र० २: १४:१ ।

(२) अपदेश : ज्ञापन, घोषणा, वक्तव्य, कथन, बयान ।

पाद टिप्पणी :

५. विक्रेता के आदेश के विरुद्ध काम करने पर दण्ड की व्यवस्था, सूत्र ५-७ में की गई है ।

(१) कालातिपातने : निश्चित समय से बढ़ने या अधिक होने या समय का अतिक्रमण होने या बीतने पर । द्र० २:१४:४ ।

(२) वेतन : याज्ञ० २:१९३ ।

पाठ भेद :

'वहेयु' : का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद टिप्पणी में 'भवेयुः' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

६. (१) भ्रेष : क्षीण होना, गुण ह्रास, हानि, विकृति । द्र० ३:१२:२३,२९,४:१:६ ।

(२) उपनिपात : भूत और दैवादि से उत्पन्न उपद्रव, आकस्मिक आपत्तिया दुर्घटना । द्र० ३:१०:८, ३:१२:२९, ३:१५:१,३,९ ।

(३) अभ्यावह : उत्तरदायित्व जिम्मेदारी । द्र० २:२८:२६,२:२९:१४ ४:१३:२३,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कार्यस्यान्यथा[1]करणे वेतननाशस्तद्द्विगुणश्च दण्डः ।

७. कार्य अन्यथा करने पर, वेतन की हानि की जाय तथा उसका दूना दण्ड लगाया जाय ।

तन्तु[1]वाया[2] दशैकादशिकं सूत्रं वर्धयेयुः ।

८. तन्तुवाय (बुनकर) दस पल सूत का ग्यारह पल बुना सूत वृद्धिपूर्वक दें ।

वृद्धिच्छेदे छेद[1]द्विगुणो दण्डः ।

९. वृद्धि की हानि होने पर हानि का दूना दण्ड लगाया जाय ।

सूत्रमूल्यं वान[1]वेतनम्, क्षौम[2]कौशेया[3]नामध्यर्धगुणम्, पत्रोर्णा[4]कम्बल[5]दुकूला[6]नां द्विगुणम् ।

१०. सूत के मूल्य के बराबर सूती बुनाई का वेतन हो, क्षौम एवं कौशेय की बुनाई सूत्र मूल्य का डेढ़ गुना, पत्रोर्णा, कम्बल एवं दुकूल की बुनाई सूत्र मूल्य का दो गुना हो ।

मान[1]हीने हीनाव[2]हीनं तद्द्विगुणश्च दण्डः, तुला[3]हीने हीनचतुर्गुणो दण्डः, सूत्र[4]परिवर्तने मूल्यद्विगुण[5]ः ।

११. (वस्त्र) परिमाण में न्यूनता होने पर, हानि के बराबर वेतन न्यून किया जाय तथा उसका दूना दण्ड लगाया जाय, तुला में कमी होने पर, उसका चार गुना दण्ड लगाया जाय, सूत्र परिवर्तन करने पर, (सूत्र) मूल्य का दूना दण्ड लगाया जाय ।

पाद टिप्पणी :

७. (१) अन्यथा : दूसरे प्रकार से, दूसरी रीति से, उल्टा या विरुद्ध करने से । द्र० याज्ञ० १२:१९५ ।

पाद टिप्पणी :

८. (१) तन्तु : धागा या सूत ।

(२) वाय : बीनना, तन्तुवाय का अर्थ जुलाहा, कुविन्द, बुनकर, वस्त्र बनाने वाला होता है । द्र० अग्नि० १६८:५ ।

पाद टिप्पणी :

९. (१) छेद : छीजन या कमी ।

पाद टिप्पणी :

१०. (१) वानवेतन : बुनने का पारिश्रमिक ।

(२) क्षौम : रेशमी वस्त्र । द्र० भाग० ६:१:४२, ४३, मार्क० १५:२७-२८, ब्रह्म० १०८:९२ ।

(३) कौशेय : रेशम से निर्मित वस्त्र । द्र० अग्नि० २५९:३९,३२ ।

(४) पत्रोर्णा : एक प्रकार का रेशम, पत्तों पर ऊनके समान कीड़ों से बनने वाला रेशमी या धुला वस्त्र । द्र० २:११:१०७ । एक जाति का नाम भी है । म० भा० ३:५३:१८

(५) कम्बल : द्र० २:२४:५७, शिव० १:२४। ५७ । एक नाग तथा तीर्थ का नाम भी है । म० भा० ३:९:९,३:८५:८६,

(६) दुकूल : अत्यन्त महीन रेशमी वस्त्र ।

पाठ भेद :

'हीनावहीनं' का पाठभेद तंजौर की पाद टिप्पणी में 'हीनापहीनं' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

११. (१) मानहीने : निर्दिष्ट माप से कम ।

(२) हीनावहीनं : जिस अनुपात से माप कम हो, उसी अनुपात से वेतन भी कम कर दे ।

(३) तुलाहीन : वजन या भार में कम होने पर । द्र० अग्नि २१०:१८ ।

(४) सूत्रपरिवर्तन : सूत बदल देना ।

(५) द्र० मनु० ८; ३९७, याज्ञ० २:१८०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन द्विपटवानं व्याख्यातम् ।

१२. उक्त प्रकार से द्विपट की बुनाई की व्याख्या सम्पन्न हो गई ।

ऊर्णातुलायाः पञ्चपलिको विहननच्छेदोरोमच्छेदश्च ।

१३. सौपल ऊन में पांच तक विधूनन में तथा पांच पल बुनाई में छीजन (हानि) होती है ।

रजकाः काष्ठफलकश्लक्ष्णशिलासु वस्त्राणि नेनिंज्युः ।

१४. रजक काष्ठफलक और चिकने शिला फलक-पर वस्त्रों को धोयें ।

अन्यत्र नेनिजतो वस्त्रोपघातं षट्पणं च दण्डं दद्युः ।

१५. अन्यत्र धुलाई करने वाले रजक वस्त्र क्षति की पूर्ति करें तथा छःपण दण्ड दें ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) द्विपटवान—दो सुत्ती या दो सूत से बीना । द्र० २:११:१०५ ।

श्यामशास्त्री ने जोड़ा वस्त्र अर्थ किया है । ४४: २३० । पूर्वकाल में लम्बी चोड़ाई का वस्त्र नहीं बनता था । उन्हें चौड़ा बनाने के लिए दोपाट जोड़ देते थे । सन् १९२१ में खद्दर की चौड़ी पाट की स्त्रियों की साड़ी नहीं बनती थी, उसमें दो पाट जोड़ कर चोड़ा किया जाता था ।

पाद टिप्पणी :

१३. (१) ऊर्णा : ऊन ।

(२) तुला : सौ पल का एक तुला होता है । द्र० २:१९:२१ । अग्नि० २१०:१८

(३) विहननच्छेद : धुनने में छीजन या कम होना ।

(४) रोमच्छेद : बाल जो कम्बल बनाने के काम में आता है । उसमें छीजन या कम होने से तात्पर्य है । द्र० २:११:१०१,

पादटिप्पणी :

१४. सूत्र १४ से २४ तक रजक तथा उसके ग्राहकों के सम्बन्ध में लिखा गया है ।

(१) रजक : धोबी कपड़ा धोने वाला ।

(२) काष्ठफलक : लकड़ी का पटरा ।

(३) श्लक्ष्ण : कोमल, चिकना पत्थर या पत्थर की पटिया । आज भी धोबी नदी, सरोवर के तट पर पत्थर या लकड़ी का तख्ता अपनी तरफ ऊँचा और जल की तरफ नीचा कर रखते हैं । उसी पर कपड़ा दोनों हाथों से उठाकर पटकते हैं । यदि काष्ठफलक चिकना नहीं होता है, तो कपड़ा फट जाने का भय रहता है ।

(४) नेनिज्यु : शोधन करे, धोये ।

पाठभेद :

'नेनिजतो' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम में 'नेनिजन्तो' मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुद्गराङ्कादन्यद्वासः परिदधानास्त्रिपणं दण्डं दद्युः ।

१६. मुद्गरचिह्न रहित वस्त्र धारण करने वाले रजक तीन पण दण्ड दें।

परवस्त्रविक्रयावक्रयाधानेषु च द्वादशपणो दण्डः परिवर्तने मूल्यद्विगुणो वस्त्रदानं च ।

१७. पराये वस्त्र का विक्रय, अवक्रय एवं आधान करने पर वस्त्र मूल्य का दूना दण्ड तथा वस्त्र प्रदान करें ।

मुकुलावदातं शिलापट्टशुद्धं धौतसूत्रवर्णं प्रमृष्टश्वेतं चैकरात्रोत्तरं दद्युः ।

१८. (रजक) पुष्पमुकुल तुल्य सुकोमल वस्त्र एक दिन रात्रि के बाद, शिलापट्ट सदृश स्वच्छ वस्त्र दोरात्रि बाद, धुले सूत्र सदृश वस्त्र तीनरात्रि बाद तथा अति धवल वस्त्र चाररात्रि बाद (धोकर) दें ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) मुद्गराङ्कात् : मुद्गर के चिह्न से चिह्नित । धोबी लोग आज भी वस्त्रों की पहचान के के लिए भिन्न भिन्न चिह्न काली स्याही आदि से लगाते हैं, जो धोने पर नहीं छूटता । यहाँ धोबी के मुद्गर के चिह्न से अपना वस्त्र अंकित करना चाहिए, ताकि उनके अपने तथा दूसरे के वस्त्रों की पहचान हो सके । धोबी आज भी अपने ग्राहकों का वस्त्र पहन लेते हैं । इस भ्रष्टाचार से बचाने के लिए कौटिल्य ने इस नियम का उल्लेख किया है । आज भी मुद्गर समस्त भारतवर्ष के अखाड़ों में व्यायाम करने के लिए रखा रहता है । यह लकड़ी का होता है । इसके मूठ को पकड़कर दोनों हाथों से फ़ेरा जाता है । ये दो होते हैं । अंग्रेजी क्लब के समान इनको फेरते हैं । काशी में इनको जोड़ी कहते हैं । प्राचीन काल में इसका प्रयोग अस्त्र के रूप में होता था । गदा और मुद्गर में अन्तर है । गदा एक ही होता है, जिसमें ऊपर की तरफ गोलाकार लट्टू बना होता है । अखाड़ों में गदा बाँस के डण्डे में पहनाया हुआ पत्थर का रहता है । उसको दोनों हाथों से भांजते हैं । हनुमानजी की मूर्ति के एक हाथ में गदा बनी रहती है । गदाधर भगवान् का नाम इसलिए है कि उनके एक हाथ में गदा रहती है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) विक्रय : बेचना ।

(२) अवक्रय : किराये पर देना ।

(३) आधान : गिरो या धरोहर रखना । याज्ञ० २:२३७,२४, अग्नि० २५८:३३ ।

(४) परिवर्तन : बदलना । आज भी वस्त्रों की अदला-बदली कर देते हैं । द्र० मनु० ८:३९६, याज्ञ० २:२३८

पाठभेद :

'रात्रोत्तरं' के बाद तंजौर नें 'दण्डं' भी मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

१८. (१) मुकुलावदातं : कली के समान श्वेत, वस्त्र का एक भेद है ।

२. प्रमृष्ट : साफ या धुला या स्वच्छ या चमकीला, या विरंजित करना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पञ्चरात्रिकं तनुरागंषड्रात्रिकं नीलं, पुष्पलाक्षामञ्जिष्ठारक्तं गुरुपरिकर्म यत्नोपचार्यं जात्यं वासः सप्तरात्रिकम् ।

१९. अल्प रंग वाला वस्त्र पांच रात्रि में, नीला रंग और पुष्प, लाक्षा एवं मञ्जिष्ठारंग से रंगा जाने वाला वस्त्र छः रात्रि में तथा अधिक कार्य वाला परिश्रम साध्य उत्तम वस्त्र सात रात्रि में (कार्यसम्पादन पूर्वक) लौटायें ।

ततः परं वेतनहानिं प्राप्नुयुः ।

२०. उसके उपरांत देने पर वेतन हानि की जाय ।

श्रद्धेया रागविवादेषु वेतनं कुशलाः कल्पयेयुः ।

२१. रंग सम्बन्धी विवाद में श्रद्धेय कुशलजन वेतन निश्चित करें ।

परार्ध्यानां पणो वेतनम्, मध्यमानामर्धपणः, प्रत्यवराणां पादः, स्थूलकानां माषकद्विमाषकम्, द्विगुणं रक्तकानाम् ।

२२. उत्तम रंग से वस्त्रों की रंगाई (धुलाई) का वेतन एक पण, मध्यम का आधा पण, निम्न कोटि का चौथाई पण, मोटे वस्त्रों का एक-दो माषा तथा लालरंग के वस्त्रों का दूना अर्थात् दो या चार माषा वेतन दिया जाय ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) पंचरात्रिकम् : पांच रात । रंगने का काम अधिक समय लेता हैं, यही यहाँ तात्पर्य है ।

(२) तनु : हल्का, पतला ।

(३) राग : रंग या लाल रंग ।

(४) नील : नीला रंग ।

(५) पुष्प : साधारण अर्थ पुष्प होता है । केसर पुष्प, पलाश पुष्प, पारिजात पुष्प तथा अनेक प्रकार के द्रव्यों से बनाए गए रंग से तात्पर्य है ।

(६) लाक्षा : लाख एक प्रकार का लाल रंग, महावर, यह रंग वीर बहूटी नामक कीड़े अथवा वृक्ष विशेष से तैयार होता था ।

(७) मञ्जिष्ठा : मजीठ । एक प्रकार की लता इसके जड़ और गुठली से लाल रंग निकलता है । यह गहरा सुर्ख होता है ।

(८) गुरुपरिकर्म : कठिन काम, अनेक रंगों में रंगने का कार्य अधिक समय में होता है ।

(९) जात्य : प्रशस्त, श्रेष्ठ, बहुमूल्य, कुलीन, विशुद्ध, निर्मल । द्र० ८:२:२३, ७:१७:१८, २०, ४:२:१५ ।

पाद टिप्पणी :

२१. (१) श्रद्धेय : श्रद्धा योग्य, आप्त ।

(२) रागविवाद : रंग के सम्बन्ध में विवाद होने पर ।

(३) कुशल : विशेषज्ञ । याज्ञ० २:१८१ ।

(४) कल्पयेयु : निश्चय करें या निर्णय दें ।

पाठ भेद :

'० नां माषकद्विमाषकम्—सहस्रं दण्ड : को०' (वाक्य सं० ४८), 'तंजौर में छूट गया है तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'माषक' का पाठभेद 'माष' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२२. (१) परार्ध्यानाम् : उत्तम रंगों या बढ़िया रंगों से या अत्यन्त उत्तम वस्त्र की रंगाई ।

(२) प्रत्यवराणाम् : मामूली या अधम ।

(३) स्थूलक : विशाल नारद ९:८:९:१३ ।

(४) रक्तका : लाल रंगे वस्त्र से तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रथमनेजने[1] चतुर्भागः क्षयः, द्वितीये पञ्चभागः[2] ।

२३. प्रथम बार की धुलाई में (मूल्य का) चौथाई भाग तथा द्वितीय बार की धुलाई में पंचम भाग क्षय होता है।

तेनोत्तरं[1] व्याख्यातम् ।

२४. उक्त प्रकार से परवर्ती धुलाई की क्षीणता की व्याख्या सम्पन्न हो गई।

रजकैस्तुन्नवाया[1] व्याख्याताः ।

२५. रजकों की व्याख्यानुसार तुन्नवायों की भी व्याख्या सम्पन्न हो गयी।

सुवर्णकाराणामशुचिहस्ताद्[1] रूप्यं सुवर्णम्[2] अनाख्याय[3] सरूपं[4] क्रीणतां द्वादशपणो दण्डः, विरूपं[5] चतुर्विंशतिपणः, चोरहस्ताद्[6] अष्टचत्वारिंशत्पणः ।

२६. दासादि अशुचिजनों के हाथ से बिना सुवर्णाध्यक्ष को सूचित किए स्वर्ण-रजत भूषण खरीदने वाले सुवर्णकार पर बारह पण तथा सोना-चांदी खरीदने पर चौबीस पण, और चोर के हाथ से खरीदने पर अड़तालीस पण दण्ड लगाया जाय।

पाद टिप्पणी :

२३. (१) प्रथमनेजने : पहली धुलाई में।

(२) पञ्चभाग : यहाँ 'तीन भाग के पाँचवें हिस्से से' कुछ अनुवाद को ने अर्थ किया हैं परन्तु साधारणतः अर्थ पाँचवां भाग होता है।

पाद टिप्पणी :

२४. (१) उत्तरम् : पश्चात् धोने पर इसी प्रकार से क्षय होता जायगा।

पाद टिप्पणी :

२५. (१) तुन्नवाय : दर्जी, सीने वाला, सौचिक। द्र० ४:१:६, ना० ९:८, ९:१३। इसका अर्थ तन्तु अर्थात् धागा बीनने वाला जुलाहा या ताती भी किया गया है।

२६. (१) अशुचिहस्त : दास कर्म आदि करने वाला बदनाम व्यक्ति।

(२) रूप्यं सुवर्णम् : यहाँ रजत एवं सोने के आभूषणों से तात्पर्य है। द्र० २:१४:१।

(३) अनाख्याय : नामादि कहे विना।

(४) सरूपं : हार, कुण्डल आदि रूप युक्त। अर्थात् एक ही रूप आकार एवं लक्षण प्रकट करने वाले।

(५) विरूपं : बदले हुए रूप में अर्थात् सोना चांदी गलाकर पासे के रूप में।

(६) चोरहस्ता : चौर के हाथ से खरीदने का तात्पर्य है।

पाठ भेद :

'विरूपमूल्य—' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '—विरूपं मूल्य—' मिलता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रच्छन्न[1]विरूपमूल्य[2]हीनक्रयेषु स्तेय[3]दण्डः, कृत[4]भाण्डोप[5]धौ च ।

२७. गुप्त रूप से, स्वरूप नष्ट करके या कम मूल्य पर (स्वर्ण रजते) क्रय करने तथा निर्मित भाण्ड परिवर्तन करने पर चोरी का दण्ड लगाया जाय ।

सुवर्णा[1]न्माषकमपहरतो द्विशतो दण्डः, रूप्य[2]धर[3]णान्माषकमपहरतो द्वादशपणः ।

२८. सुवर्ण से एक माषा चुराने वाले सुवर्णकार पर दो सौ पण तथा धरण प्रमाण चांदी से एक माषा अपहृत करने वाले (सोनार) पर बारहपण दण्ड लगाया जाय ।

तेनोत्तरं व्याख्यातम् ।

२९. उक्त प्रकार से अधिक अपहरण का दण्ड विधान व्याख्यायित हो गया ।

वर्णोत्कर्ष[1]मप[2]सारणं योगं[3] वा साधयतः पञ्चशतो दण्डः ।

३०. वर्णोत्कर्ष, अपसारण अथवा योग (मिश्रण) करने पर पांच सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

त[1]योरपच[2]रणे रागस्या[3]पहा[4]रं विद्यात् ।

३१. उन दोनों को अग्नि में प्रक्षिप्तकर रंग परिवर्तित होने पर, अपहरण जाने ।

पाद टिप्पणी :

२७. (१) प्रच्छन्न : प्रच्छन्न एवं विरूप का एक दूसरे से यहाँ सम्बन्ध नहीं है । प्रच्छन्न का अर्थ गुप्त या ढका या वस्त्र से लपेटा होता है ।

(२) मूल्यहीन : कम दाम, निम्न दर पर ।

(३) स्तेयदण्ड : चोरी का दण्ड । याज्ञ० २:१६८, २४, २५ ।

(४) कृतभाण्ड : बना सामान ।

(५) उपधि : परिवर्तन, कपट, छल, धोखा सच्चरित्रता एवं निष्ठा की गुप्त परीक्षा । मत्स्य० २२७ : ३, मनु० ८:१९३ ।

पाद टिप्पणी :

२८. (१) सुवर्णान्माषक : सुवर्ण का सोलहवाँ भाग (चुराने पर) । द्र० २:२:१९:२–६ ।

(२) रूप्य : चाँदी ।

(३) धरण : सोलहमाषा चाँदी की मुद्रा । या दशपल वजन का बाट । द्र० २:१५:४, २:१९: २-६, २० ।

पाठ भेद :

'अपसारणं' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'अपसाराणां' तथा भाषा व्याख्यान में 'असाराणां' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३०. (१) वर्णोत्कर्ष : (कृत्रिम) चमकीला बनाना ।

(२) असार : सारहीन हीन वर्ण धातु । द्र० ३:१४:२०-२४ ।

(३) योग : मिश्रण, मिलाना ।

पाद टिप्पणी :

३१. (१) तयोः : उन दोनों (सुवर्ण एवं चाँदी) का ।

(२) अपचरणे : दुष्कृत्य यहाँ धोखा देने से तात्पर्य है या अग्नि प्रक्षेप करने पर ।

(३) राग : रंग । द्र० ४:४:२२ ।

(४) अपहार : चुराना, हटाना, उड़ा ले जाना । गण० १:५४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

माषको वेतनं रूप्य[1]धरण[2]स्य, सुवर्ण[3]स्याष्ट[4]भागः ।

३२. धरण प्रमाण, रजत की कारीगरी करने पर, एक माषा रजत वेतन तथा सुवर्ण के शिल्प पर, एक माषा स्वर्ण का अष्टम भाग वेतन हो ।

शिक्षा[1]विशेषेण द्विगुणा वेतनवृद्धिः ।

३३. शिल्प-वैशिष्ट्य के अनुसार दूनी वेतन वृद्धि की जाय ।

तेनोत्तरं[1] व्याख्यातम् ।

३४. उक्त प्रकार से कठिन शिल्प की वेतन व्याख्यायित हो गई ।

ताम्र[1]वृत्त[2]कंस[3]वैकृ[4]न्तकारकूट[5]कानां पञ्चकं शतं वेतनम् ।

३५. ताम्र, वृत्त, कंस, वैकृन्तक एवं आरकूट के शिल्प का पांच प्रतिशत वेतन दिया जाय।

ताम्रपिण्डो दशभागक्षय[1]ः ।

३६. ताम्रपिण्ड का दसमभाग शिल्पकाल में क्षीण होगा ।

पल[1]हीने[2] हीनद्विगुणो दण्डः ।

३७. शिल्पकर्म में (उक्त प्रमाण से) पल प्रमाण की हानि होने पर हानि का दूना दण्ड लगाया जाय ।

पाद टिप्पणी :

३२. (१) रूप्य : रूपा चांदी ।

(२) धरण : द्र० ४:१:२८ । गण० ३:२१८ ।

(३) सुवर्ण : स्वर्ण मुद्रा ।

(४) अष्टभाग : पण का आठवाँ भाग ।

पाद टिप्पणी :

३३. (१) शिक्षा विशेष यहाँ शिल्प या कौशल की विशेषता या वैचित्र्य से तात्पर्य है ।

पाद टिप्पणी :

३४. (१) तेनोत्तरं : इस नियम से आगे के वेतन दर से ही तात्पर्य है ।

पाठ भेद :

'-वैकृन्त-' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '—वैकृतन्ता—' मिलता है ।

२ को० अ० द्वि०

पाद टिप्पणी :

३५. (१) ताम्र : ताँबा ।

(२) वृत्त : इस्पाती लोहा । गण० ३६ ।

(३) कंस : काँसा ।

(४) वैकृन्तक : लोहा, (स्टील), लोहा विशेष, एक प्रकार की धातु ।

(५) आरकूट : पीतल ।

पाद टिप्पणी :

३६. (१) क्षय : छीजन या कमी ।

पाद टिप्पणी :

३७. (१) पल : भार या तौल या समय देखने का मान है । यहाँ पल भार या तौल के लिए प्रयोग किया गया है । चार कर्ष का एक पल होता है । चार अक्ष का एक कर्ष होता है । एक अक्ष १६ मासे का होता है ।

(२) हीन : कमी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेनोत्तरं व्याख्यातम् ।

३८. उक्त रीति से उत्तरोत्तर की व्याख्या हो गई।

सीसत्रपुपिण्डो विंशतिभागक्षयः ।

३९. सीस एवं त्रपुपिण्ड का बीसवां भाग (कर्म में) क्षीण होता है।

काकणी चास्य पलवेतनम् ।

४०. एक पल का सीसा-त्रपु का शिल्प वेतन एक काकणी हो।

कालायसपिण्डः पञ्चभागक्षयः ।

४१. कालायसपिण्ड का (शिल्प में) पञ्चम भाग क्षीण होता है।

काकणीद्वयं चास्य पलवेतनम् ।

४२. इसके एक पल निर्माण का वेतन दो काकणी हो।

तेनोत्तरं व्याख्यातम् ।

४३. उक्त प्रकार की व्याख्या हो गयी।

पाद टिप्पणी :

३९. (१) सीस : सीसा।

(२) त्रपु : रांगा, अग्निपुराण (२५७:२९) के अनुसार रांगा का भार आठ प्रतिशत कम हो जाता है। याज्ञ० २:१७८।

कुछ अनुवादकों ने टिन और सीसा पिण्ड अर्थ किया है, त्रपुकापर्यायवाची शब्द है।

पाद टिप्पणी :

४०. (१) काकणी : घुघची, कौड़ी या एक तोला का चौथाई भाग।

पाद टिप्पणीः

४१. (१) कालायस : लोहा। द्र० ३:१७:७।

पाद टिप्पणी :

४२. (१) काकणी : ताम्र मुद्रा या कौड़ी से यहाँ तात्पर्य है। क्योंकि संख्या २ दी गई है। कौड़ी या मुद्रा की ही गिनती की जा सकती है। द्र० ३: २०:८, ४:१०:९, २:१२:२४। हमारे बाल्यकाल (सन् १९१६–१९२० ई०) में कौड़ी का व्यवहार व्यापार तथा अन्य व्यवहारों में किया जाता था। एक पैसा में बीस कौड़ी होती थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूपदर्शकस्य स्थितां पणयात्रामकोप्यां कोपयतः कोप्यामकोपयतो द्वादशपणो दण्डः ।

४४. प्रचलित निर्दोष पण व्यवहार को दोषयुक्त तथा दोषयुक्त को निर्दोष प्रमाणित करने वाले मुद्रा-परीक्षक पर, बारह पण दण्ड लगाया जाय ।

व्याजीपरिशुद्धौ पणयात्रा ।

४५. राजकीय देय (पांच प्रतिशत) देने पर, पण व्यवहार प्रचलित हो ।

पणान्माषकमुपजीवतो द्वादशपणो दण्डः ।

४६. एक पण से एक माषा अपहृत करने वाले (अधिकारी) पर, बारह पण दण्ड आरोपित किया जाय ।

तेनोत्तरं व्याख्यातम् ।

४७. उक्त प्रकार से उत्तरोत्तर की व्याख्या हो गई ।

पाद टिप्पणी :

४४. (१) रूपदर्शक : मुद्रा या पण परीक्षक । द्र० २:१२:२५, २:५:१०, २:९:१८, गण० १:१३४, १६४, २०६ ।

(२) स्थितां : चलती या प्रचलित मुद्रा । यदि रूपदर्शक स्थित या प्रचलित पणयात्रा में व्यवधान उपस्थित करता है, तो वह दण्ड का भागी बनता है । वर्तमान मुद्रा ।

(३) पणयात्रा : पण व्यवहार, मुद्रा परिचलन, पण चाँदी की मुद्रा होती थी । यह एक कर्ष का चाँदी और ताम्र दोनों का होता था । पुराने दस्तावेजों में सिक्का के साथ, सोना, चाँदी, ताँबा लिखा जाता था ।

(४) अकोप्य : अस्वीकार न करने योग्य, अदूषणीय ।

पाठ भेद :

'परिशुद्धौ' का पाठभेद भाषाव्याख्यान में 'परिशुद्धा' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

४५. (१) व्याजी : कमीशन या राज-कर । मुद्रा उसी समय कानूनी रूप लेती थी, जब उस पर व्याजी दे दिया जाता था । द्र० २:१२:२६, गण० १:१३ ।

पाद टिप्पणी :

४६. (१) उपजीवतः : दूसरों के सहारे रहने वाला या जींविका चलाने वाला । चुराते हुए, हरण करते हुए । यह अर्थ लाक्षणिक है । मुद्रा में यदि धातु की कमी हुई तो उस अपराध का दण्डभागी रूपदर्शक होता था । मनु० ९:२५ :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कूटरूपं[1] कारयतः[2] प्रतिगृह्णतो[3] निर्यापयतो[4] वा सहस्रं दण्डः, कोशे प्रक्षिपतो[5] वधः ।

४८. जाली मुद्रा निर्मित कराने वाले, उसे स्वीकार करने वाले अथवा परिचलित करने वाले व्यक्ति पर एक हजार पण दण्ड लगाया जाय । उसे कोश में डालने वाले का वध किया जाय ।

चरक[1]पांसुधावकाः[2] सारत्रिभागं लभेरन्, द्वौ राजा रत्नं च ।

४९. कर्मचारी एवं पांसुधावक सारवस्तु का तीसरा भाग प्राप्त करें, दो भाग तथा रत्न राजा ग्रहण करे ।

रत्नापहार उत्तमो दण्डः[1] ।

५०. रत्न का अपहरण करने पर (उन पर) उत्तम दण्ड आरोपित किया जाय ।

खनि[1]रत्ननिधि[3]निवेदनेषु षष्ठमंशं निवेत्ता[2] लभेत, द्वादशमंशं भृतकः[4] ।

५१. खान, रत्न एवं निधि की (राजा को) सूचना देने वाला व्यक्ति छठा भाग तथा राजकीय सेवक बारहवां भाग प्राप्त करे ।

पाद टिप्पणी :

४८. (१) कूटरूप : जाली मुद्रा या मुद्रा का कूटकृत या कूटकरण ।

(२) कारयतः : जाली मुद्रा टंकित कराने से तात्पर्य है ।

(३) प्रतिगृह्णतो : लेना । स्वीकार करना ।

(४) निर्यापयतो : बाजार में चलाने के लिए भेजे या परिचालित करे ।

(५) प्रक्षिपतः : राजकोष या खजाने में रखना ।

पाठ भेद :

'चरक-' का पाठभेद तंजोर में 'झरक-' और त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम अनुलिपि की पाद-टिप्पणी में 'रखरक-' मिलता है । श्रीमूला में 'सरक' पाठ भेद मिलता है । संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी का पाठ श्री मूला का पाठ है ।

पाद टिप्पणी :

४९. (१) चरक : अनुचर, परिचर, सेवक । द्र० २:१३:३३ ।

(२) पांसुधावक : मार्ग की धूलि (कूड़ा करकट) साफ करने वाला । द्र० वायु उ० खं० ३९:११:८ । इसका एक अर्थ रत्न की मैल आदि साफ करने वाला भी होता है ।

पाद टिप्पणी :

५० (१) दण्ड : द्र० मनु० ८:३३-३४ ।

पाद टिप्पणी :

५१. (१) खनि : खान ।

(२) निवेत्ता : निवेदक ।

(३) निधि : जमीन में गड़ा धन, निखात निधि या खजाना ।

(४) भृतक : नौकर । यहाँ खान आदि श्रमिकों से तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शतसहस्रादूर्ध्वं[1] राजगामी[2] निधिः ।

५२. सौ हजार (एक लाख) से अधिक निधि राजा को प्राप्त हो ।

ऊने[1] षष्ठमंशं[2] दद्यात् ।

५३. उक्त से न्यून होने पर षष्ठांश राजा को दे ।

पौर्वपौरुषिकं निधिं जानपदः शुचिः[1] स्वकरणेन[2] समग्रं लभेत ।

५४. सदाचारयुक्त जनपदवासी अपने पूर्वजनों द्वारा स्थापित निधि को साक्षो आदि से प्रमाणित कर पूर्णरूपेण प्राप्त करे ।

स्वकरणाभावे पञ्चशतो दण्डः, प्रच्छन्नादाने[1] सहस्रम् ।

५५. साक्षी प्रमाण के बिना ग्रहण करने पर, पांच सौ पण तथा गुप्त रूप से ग्रहण करने पर, एक हजार पण दण्ड लगाया जाय ।

भिषजः[1] प्राणाबाधिक[2]मनाख्यायोपक्रममाणस्य विपत्तौ पूर्वः साहसदण्डः, कर्मापराधेन विपत्तौ मध्यमः[3] ।

५६. प्राणबाधायुक्त रोगी की अधिकारी को बिना सूचना दिये चिकित्सा करने वाले चिकित्सक पर उसकी मृत्यु होने पर पूर्व साहस दण्ड तथा चिकित्सा सम्बन्धी त्रुटि से मृत्यु होने पर मध्यम साहस दण्ड आरोपित किया जाय ।

पादटिप्पणी :

५२. (१) ऊर्ध्वं : ऊपर या अधिक ।

(२) राजगामी : राजा को जायगा ।

पादटिप्पणी :

५३. (१) ऊने : कम होने पर । याज्ञ० : ३:१

(२) षष्ठम् : द्र० याज्ञ० २:३५ ।

पाठ भेद :

'दौर्व०' का पाठभेद तंजौर में 'पौर्वा०' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५४. (१) शुचि : सद्गुणी, पवित्रात्मा । मनु० ४:७१ । गण० ३:१४५ ।

(२) स्वकरण : कोई व्यक्ति अपने पूर्वजों की सम्पत्ति या कोश का अधिकारी प्रमाण उपस्थित करने पर हो सकता था । द्र० २:३६:३७, ३:१:१५, ३:१६:१७, ४:२:१, मनु० ८:३५, ३७ ।

पादटिप्पणी :

५५. (१) प्रक्छन्नादाने : गुप्त विनियोग या चुपचाप हजम कर जाना । द्र० ८:३१, ३२, ३७, याज्ञ० २:३५, विष्णु० ३,५८, ६१, ना० ७,६ ।

पाठ भेद :

'कर्मापराघेन' का पाठभेद तंजौर में 'कर्मापराधेन' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५६. (१) भिषज : वैद्य, चिकित्सक ।

(२) प्राणाबाधिक : जीवन के लिए बाधा या खतरा ।

(३) मध्यम : मध्यम दण्ड अर्थात् ५०० जुर्माना । गण० २:३५९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मर्मवेध[1]वैगुण्य[2]करणे दण्डपारुष्यं[3] विद्यात् ।

५७. मर्म वध एवं वैगुण्यकरण की स्थिति दण्ड में पारुष्य के अनुसार दण्ड विधान किया जाय ।

कुशीलवा[1] वर्षारात्र[2]मेकस्था[3] वसेयुः ।

५८. कुशीलव वर्षाकालीन रात्रि एक स्थान पर व्यतीत करें ।

कामदानमतिमात्रमेकस्यातिवादं च वर्जयेयुः ।

५९. प्रीतिपूर्वक अत्यधिक दान एवं किसी एक की अतिस्तुति का वर्जन करें ।

तस्यातिक्रमे द्वादशपणो दण्डः ।

६०. उसका अतिक्रमण करने पर बारह पण दण्ड लगाया जाय ।

पाठ भेद :

'मर्मवध-' का पाठभेद तंजौर में 'कर्मवध-' एवं भाषाव्याख्यान में 'मर्मवेध-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५७. (१) **मर्मवध** : शरीर के मर्मस्थान या सजीव स्थान पर आघात या गम्भीर रूप से क्षति पहुँचाना ।

(२) **वैगुण्यकरण** : विरूप या अंगभंग या अंग विकार करना ।

(३) **दण्डपारुष्य** : यहाँ दण्ड का नियम लागू होगा । उग्रतापूर्ण व्यवहार, किसी को चोट पहुँचाना, मारना आदि के अपराधों की गणना दण्डपारुष्य में होती है । द्र० ३:१९:१२-१४, याज्ञ० २:२४२, वि० ५:१७५, गण० ३:१९ ।

पादटिप्पणी :

५८. (१) **कुशीलव** : नट प्रभृति । द्र० मत्स्य० २२७:१२०-१२१, द्र० १:१२:९, १:३४, १:१२:९, १३, २:१:३४, २:२७:७, २५, ३:१३:३०, ३:१८:८ ।

(२) **वर्षारात्र** : वर्षा ऋतु की रात्रि ।

(३) **एकस्थ** : एक ही स्थान में । चातुर्मास में सन्यासियों एवं भिक्षुओं को एक ही स्थान पर समय बिताने का विधान है । यही बात कलाकारों के लिए लागू की गई है ।

पादटिप्पणी :

५९. (१) **कामदान** : अत्यधिक दान । स्वामी या संरक्षक से वेतन या पारिश्रमिक के अतिरिक्त जो अधिक धन मिलता है । कामदान का अर्थ कुछ अनुवादकों ने प्रेम सम्बन्धी अधिक दान या उपहार से भी किया है ।

पाठ भेद

'द्वादशपणो' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम एवं मलयालम नागरी अनुलिपि में 'द्वादशगुणो' मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कामं देशजातिगोत्रचरणमैथुनावहासेन नर्मयेयुः ।

६१. वे देश, जाति, गोत्र एवं चरण सम्बद्ध जनों का प्रेम-परिहास द्वारा सम्यक् मनोरंजन करें ।

कुशीलवैश्चारणा भिक्षुकाश्च व्याख्याताः ।

६२. कुशीलवों की व्याख्या से भिक्षुकों एवं चारणों की व्याख्या हो गयी ।

तेषामयःशूलेन यावतः पणानभिवदेयुस्तावन्तः शिफाप्रहारा दण्डाः ।

६३. अयःशूल मर्म पीड़ा पहुँचाने पर उन पर जितने पण दण्ड लगाए जाय (उन्हें न देने पर) उतने कोड़े लगाये जांय ।

शेषाणां कर्मणां निष्पत्तिवेतनं शिल्पिनां कल्पयेत् ।

६४. कथित कर्मों के अतिरिक्त कर्मशील शिल्पियों के कार्य का वेतन कल्पित कर लेना चाहिए ।

पाठ भेद :

'–मैथुनावहासेन' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '–मैथुनावभासेन' तथा भाषाव्याख्यान में '–मैथुनापहाने' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६१. (१) चरण : किसी शास्त्र सम्प्रदाय या शाखा का अध्ययन ।

(२) मैथुन : प्रेमकार्यकलाप, प्रेमप्रपंच, प्रेमोन्माद, प्रेमसंगम, रतिक्रीड़ा, संयोग ।

(३) नर्मयेयु : विनोद या अनुरंजन करें ।

पाठ भेद :

'चारणा भिक्षुकाश्च' का पाठभेद 'चारणादिभिक्षुकाश्च' तंजौर में मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६२. (१) चारण : भ्रमणशील, भाट, गायक । मनु० १२:१४, महाभा० १:६३, ६६, ७० ।

पाठ भेद :

'अभिवदेयुस्' का पाठभेद तंजौर में 'अभिदेयुस्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६३. (१) अयःशूलेन : एक छड़ । लोहे के छड़ से तात्पर्य है । दुर्गा सप्तशती में त्रिशूल एवं शूल शब्द दोनों का प्रयोग किया गया है । त्रिशूल में तीन फल होते हैं जब कि शूल में एक ही होता है ।

(२) अभिवदेयु : दण्ड रूप में न्यायाधी कहा गया है ।

(३) शिफा : वेंत या कोड़ा । प्रहार दण्ड ।

पाठ भेद :

'कर्मणां' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'कर्मणा' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६४. (१) शिल्पिनां : शिल्पियों, कलाकारों का ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं चोरानचोराख्यान् वणिक्कारुकुशीलवान् ।
भिक्षुकान् कुहकांश्चान्यान् वारयेद्देशपीडनात् ॥

६५. इस प्रकार राजा नाम से चोर न होकर भी चोर वणिक्, कारु, कुशीलव, भिक्षुक, कुहक एवं अन्य लोगों को देशपीडन से निवारित करे।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे कारुकरक्षणं प्रथमोऽध्यायः । आदितोऽष्टसप्ततितमः ।

६६. चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टक-शोधन में कारुक रक्षण प्रकरण सम्बन्धी प्रथम अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

६५. (१) कुशीलव : मनु० ९:२३५, गण० १:५८, ५९, १०७, २:३५ ।

(२) कुहक : ऐन्द्रजालिक, नानायोगविद्, वञ्चक, ठग, धूर्त, छल या कपट से जीविका चलाने वाला । भवि० १:८:२१, ब्रह्म० २०:२४, कूर्म० २१: ४३, द्र० १:२:१८, ४:४:३, ५:४:१० ।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः कारुकरक्षणम्, आदितोऽष्टसप्ततितमः ।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने कारुकरक्षणं प्रथमोऽध्यायः, आदितोऽष्टसप्ततितमः ।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः कारुकरक्षणं आदितोऽष्टसप्ततितमः ।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे कारुकरक्षणं प्रथमोध्यायः ॥१॥ आदितोऽष्टसप्ततिरध्यायः ॥७८॥'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सप्तसप्ततितमं प्रकरणम्—वैदेहकरक्षणम्

७७वां प्रकरण - वैदेहकरक्षण

अध्याय २

संस्थाध्यक्षः[1] पण्यसंस्थायां[2] पुराणभाण्डानां[3] स्वकरणविशुद्धानामाधानं[4] विक्रयं वा स्थापयेत् ।

१. संस्थाध्यक्ष पण्यसंस्था में स्वकरण विशुद्ध पुराणभाण्डों के आधान एवं विक्रय की व्यवस्था करे ।

तुलामानभाण्डानि[1][2] चावेक्षेत पौतवापचारात्[3] ।

२. वह नाप-तौल का दोष दूर करने के लिए तुलाभाण्डों की परीक्षा करता रहे ।

पाद टिप्पणी :

१. (१) संस्थाध्यक्ष : बाजार या मण्डी या वणिक संघ का अध्यक्ष । इस अधिकारी के कर्तव्यों का उल्लेख इस अध्याय में नहीं किया गया है। संस्थाध्यक्ष का कर्तव्य खरीददारों के स्वार्थ या उनकी सुविधाओं को देखना था । वह बाजार में या बिकने वाले पुराने भाण्डों की जांच करता था कि वे कहीं चोरी के न हों । द्र० १:२०:१०-१९, १:११:२२, १:१२:८, २:३५:१५, ३:१:४३,४४, गण० १:५५, ६१ ।

(२) पण्यसंस्था : दुकान, कारखाना या बाजार का स्थान । द्र० ४:७:१७, ७:१७:४६ । गण० २:३५६ ।

(३) पुराणभाण्डनां : प्राचीन विक्रेय वस्तुएँ ।

(४) स्वकरण : न्यायपूर्वक किसी वस्तु पर अपना अधिकार करना । द्र० २:३६:७, ३:१:१५ ।

(५) आधान : निवेशन, आधि अर्थात् धरोहर के रूप में रखना स्थापित करना । द्र० अग्नि० २५८: ३३ । गण० ३:१२२ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) तुला : परिमाणी, तराजू, बटखरा या बांट, तुलामान का अर्थ है जिसका मान तौलने से किया जाता है । द्र० २:१६।१०, अग्नि० २१०:१६, मनु० ८:४०३ ।

(२) मानभाण्ड : द्रोण, परी आदि नपुआ, जिससे सामान नापकर दिया जाय । तेल, दूध आदि तरल पदार्थ आज भी नपुए से नाप कर दिए जाते हैं । यह नपुए १ छटाँक, आधपाव, पावभर, आधसेर और १ सेर के मिट्टी या धातु के बने होते हैं । द्र० १:६:१ ।

(३) पौतवापचारात् : तोलकर मापना । पौतव का अर्थ बाँट या नपुओं के मानकीकरण या उनका मानक करना होता है । द्र० २:१९:१, गण० १:७, १३६, २५६ ।

(४) अवेक्षेत : परीक्षा करे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिमाणी[1]द्रोण[2]योरर्धपलहीना[3]तिरिक्त[4]मदोषः ।

३. परिमाणी एवं द्रोण में आधा पल का न्यूनाधिक्य दोष नहीं है ।

पल[1]हीनातिरिक्ते द्वादशपणो दण्डः ।

४. एक पल का न्यूनाधिक्य होने पर, बारह पण दण्ड लगाया जाय ।

तेन पलोत्तरा दण्डवृद्धिर्व्याख्याता ।

५. उत्तरोतर पलों के न्यूनाधिक्य पर दण्डवृद्धि की व्याख्या हो गई ।

तुला[1]याः कर्ष[2]हीनातिरिक्तमदोषः ।

६. एक तुला में एक कर्ष का न्यूनाधिक्य दोष नहीं है ।

द्विकर्षहीनातिरिक्ते षट्पणो दण्डः ।

७. दो कर्ष न्यून या अधिक होने पर छः पण दण्ड लगाया जाय ।

तेन कर्षोत्तरा दण्डवृद्धिर्व्याख्याता ।

८. उक्त प्रकार से उत्तरोत्तर कर्षों के न्यून या अधिक होने पर दण्ड वृद्धि की व्याख्या हो गई ।

आढक[1]स्यार्धकर्ष[2]हीनातिरिक्तमदोषः ।

९. एक आढक में आधा कर्ष न्यूनाधिक्य होना दोष नहीं है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) परिमाणी : परिमाणी तथा द्रोण दोनों नपुओं में २०० पल सामान अँटता था । परिमाण का अर्थ माप, तौल, मात्रा या आकार होता है । द्र० २:१९:१७,१८,२९ ।

(२) द्रोण : चार सेर का एक आढ़क तथा आठ आढ़क का एक द्रोण, ३२ सेर होता है ।

(३) हीन : कम ।

(४) अतिरिक्त : अधिक ।

पादटिप्पणी :

४. (१) पल : चार कर्ष का एक पल होता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) तुला : एक सौ पल का होता था । अग्नि० २१०:१२ ।

(२) कर्ष : पल का चौथाई भाग या सोलह माषा के बराबर । द्र० २:१९:१२-१५ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) आढक : द्रोण का एक चौथाई आढक होता था । यह अनाज की माप थी । द्र० २:१९:३१ ।

(२) कर्ष : रजत एवं सुवर्ण का १६ माषा का वजन । द्र० ४:२:६, द्र० भाग० ७:११:१९, स्कन्द० ७:१:२०७:५४, अग्नि० २५८:१४, याज्ञ० २:२१७, शिव० १:१३:६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्षहीनातिरिक्ते त्रिपणो दण्डः ।

१०. एक कर्ष न्यून अथवा अधिक होने पर तीन पण दण्ड लगाया जाय ।

तेन कर्षोत्तरा दण्डवृद्धिर्व्याख्याता ।

११. उक्त प्रकार से उत्तरोत्तर कर्षों का न्यूनाधिक्य होने पर, दण्ड वृद्धि की व्याख्या हो गई।

तुलामानविशेषाणामतोऽन्येषामनुमानं कुर्यात् ।

१२. पूर्वोक्त के अतिरिक्त अन्य तुलामान विशेषों का अनुमान अर्थात् उनमें न्यूनाधिक्य होने पर, दण्ड विधानादि की परिकल्पना कर लेनी चाहिए ।

तुलामाना[1]भ्यामतिरिक्ताभ्यां[2] क्रीत्वा हीनाभ्यां विक्रीणानस्य त एव द्विगुणा दण्डाः ।

१३. अतिरिक्त (अधिक बड़े) तुलामानों से खरीदकर न्यून (कम, छोटे) तुलामान से बेचने वाले पर, पूर्वोक्त दण्डों के दूने दण्ड की व्यवस्था की जाय।

गण्यपण्येष्वष्टभागं[1] पण्यमूल्येष्वपहरतः षण्णवतिर्दण्डः ।

१४. गण्य पण्यों के पण्य मूल्य का अष्टभाग का अपहरण करने वाले पर, ९६ पण दण्ड लगाया जाय।

काष्ठ[1]लोहमणिमयं रज्जुचर्ममृण्मयं सूत्रवल्करोममयं वा जात्यमित्यजात्यं[2] विक्रयाधानं नयतो मूल्याष्टगुणो दण्डः ।

१५. काष्ठ, लोह या मणि के; रज्जु, चर्म व मिट्टी के; सूत्र, वल्कल या रोम के बने अपकृष्ट (दोषयुक्त) वस्तु को उत्कृष्ट कहकर, विक्रय या आधान करने वाले पर, उसके मूल्य का आठ गुना दण्ड लगाया जाय ।

पाठ भेद :

'दण्डाः' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'दण्डः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) तुलामान : द्र० ४:२:३, याज्ञ० २:३४४ ।

(२)अतिरिक्ताभ्यां क्रीत्वा : खरीदने के समय अधिक भार के बांट से लेना और विक्रय के समय कम भार के बांट से तौलकर बेचना । द्र० ४:२:३ ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) गण्यपण्येष्वष्टभागम् : गण्य और पण्य मूल्यों का आठवां भाग । 'गण्य का अर्थ गिनकर बिकने वाले सामानों से होता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) काष्ठ : याज्ञवल्क्य ने २:२४६ में उक्त सूत्र का भाव अक्षरशः रखा है ।

(२) जात्याभित्यजात्यम् : निकृष्ट को उत्कृष्ट, अर्थात् नकली सामान को असली बताना । द्र० २:१७:१८-२०, ४:१:१९, गण० २:३५१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सारभाण्डमित्यसारभाण्डं तज्जातमित्यतज्जातं राधायुक्तमुपधियुक्तं समुद्गपरिवर्तिमं वा विक्रयाधानं नयतो हीनमूल्यं चतुष्पञ्चाशत्पणो दण्डः, पणमूल्यं द्विगुणो, द्विपणमूल्यं द्विशतः ।

१६. हीन मूल्य वाली असार वस्तु को मूल्यवान् तद्देशीय वस्तु, हीन मूल्यवाले कृत्रिम मौक्तिादि (राधायुक्त) को मूल्यवान् अकृत्रिम, अल्पमूल्यवान् मिश्रणयुक्त को अमिश्रित बहुमूल्य, कहकर अथवा समुद्ग परिवर्तन पूर्वक विक्रय या आधान करने वाले पर, चौवन पण दण्ड लगाया जाय । एक पण मूल्य वाले असारभाण्डादिक विक्रयाधान पर, उक्त दण्ड का दूना तथा दो पण के मूल्यवाली उक्त वस्तुओं के विक्रयाधान पर, दो सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

तेनार्घवृद्धौ दण्डवृद्धिर्व्याख्याता ।

१७. उक्त प्रकार से वस्तु के मूल्य की अधिकता पर अधिक दण्ड की व्याख्या सम्पन्न हो गई ।

कारुशिल्पिनां कर्मगुणापकर्षमाजीवं विक्रयक्रयोपघातं वा संभूयं समुत्थापयतां सहस्रं दण्डः ।

१८. परस्पर संगठित होकर कर्मगुण में अपकर्ष करने वाले, अधिक लाभ लेने वाले अथवा विक्रय क्रयोपघात करने वाले कारु-शिल्पियों पर प्रत्येक पर सहस्र पण दण्ड लगाया जाय ।

पाठ भेद :

'राधायुक्तम्' का भाषाव्याख्यान में 'राढायुक्तम्' और 'समुद्गपरि०' का तंजौर में 'समुत्परि०' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) तज्जातम् : विशेष वर्ग का । द्र० २:१२:२१, २:१८:१, २:२२:२५, ४:६:३ ।

(२) राधायुक्तम् : कृत्रिम सौंदर्य से युक्त या कृत्रिम चमकदमक वाला ।

(३) उपाधियुक्तम् : भिन्न जाति का मिश्रण करके या गलत सामान या जहाँ कपट किया गया हो ।

(४) समुद्गपरिवर्तिमम् : पूर्व प्रदर्शित पेटिका के स्थान पर भिन्न पेटिका दिखाना या दूसरे नपुआ से देना । इसका अर्थ होता है कि एक पेटी में अच्छा माल दिखाकर, दूसरी पेटी से कम मूल्य का माल देना ।

(५) द्विपण : याज्ञ० २:२४७-२४८ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) अर्घ : मूल्य, कीमत ।

पाठ भेद :

'विक्रयक्रयोप०' का पाठभेद तंजौर में 'विक्रयं क्रयोप०' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) कर्मगुणापकर्ष : कार्य और गुण की हानि ।

(२) अपकर्ष : कम करना, घटाना, हानि, ह्रास ।

(३) आजीव : लाभ, जीविका, आमदनी । द्र० २:१७:१७, २:३५:५, ३:९:२०, ३:१२:१५,१६ ।

(४) विक्रयोपघात : अधिक मूल्य पर, बेचकर, हानि करना ।

(५) क्रयोपघात : कममूल्य पर, खरीदकर, हानि करना ।

(६) संभूय : समुत्थापित । याज्ञ० २:२४९, २५० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैदेहकानां वा संभूय पण्यमवरुन्धतामनर्घेण विक्रीणतां वा सहस्रं दण्डः ।

१९. परस्पर संगठित होकर पण्य अवरुद्ध करने वाले अथवा अनुचित मूल्य पर (खरीदने या) बेचने वाले व्यापारियों पर (प्रत्येक पर) एक सहस्र दण्ड लगाया जाय ।

तुलामानान्तरमर्घवर्णान्तरं वा—धरकस्य मायकस्य वा पणमूल्यादष्ट-भागं हस्तदोषेणाचरतो द्विशतो दण्डः ।

२०. तुला-मान अथवा मूल्य और वर्ण (गुण) का अन्तर करने वाले धरक अथवा मायक के अपर हस्तदोष द्वारा पण मूल्य का अष्टम भाग अन्तर करने पर दो सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

तेन द्विशतोत्तरा दण्डवृद्धिर्व्याख्याता ।

२१. उक्त प्रकार से उत्तरोत्तर अधिक अपहरण करने पर दो सौ पण से अधिक दण्डवृद्धि की व्याख्या हो गई ।

धान्यस्नेहक्षारलवणगन्धभैषज्यद्रव्याणां समवर्णोपधाने द्वादशपणो दण्डः ।

२२. धान्य, स्नेह, क्षार, लवण गन्ध एवं भैषज्य द्रव्यों में समान वर्ण का द्रव्य मिलाने पर, बारह पण दण्ड लगाया जाय ।

पाठ भेद :

'विक्रीणतां' के बाद तंजौर में 'क्रीणतां' भी मिलता है ।

पादटिप्पणी :

याज्ञवल्क्य ने उक्त सूत्र अपने २:२५० श्लोक में यथावत् लिखा है ।

१९. (१) वैदेहक : वणिक् । महाभारत के अनुसार एक जाति का नाम है । द्र० १२:२९६:८, १३:४:१०, २२,२५ ।

(२) अनर्घं : अनुचित कीमत पर । अग्नि० २२७:५७-५८, मत्स्य० २२७:१८६ ।

पण्याध्यक्ष विक्रय वस्तुओं का मूल्य निश्चित करता था । मूल्यांकन व्यापार में लगी पूँजी, सूद, देयकर आदि का विचार कर निश्चित किया जाता था ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) धरक : तुला धारक । द्र० २:१९: ६३ ।

(२) मापक : माप करने वाला ।

(३) हस्तदोष : डांड़ी या टेनी मारना ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) द्विशत्तोत्तरा : दो सौ पण क्रमशः या क्रमिक वृद्धि या बढ़ती ।

पाठ भेद :

'समवर्णोपधाने' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् में 'सवर्णोपधाने' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) स्नेहद्रव्य : तैल, घृतादि ।

(२) गन्ध : चन्दनादि । अग्नि० २५८:३९, याज्ञ० २:२४४-२४५ ।

(३) समवर्णोपधाने : एक समान वस्तुओं को मिलाना । मिश्रण करना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यन्निसृष्टमुपजीवेयुस्तदेषां दिवससंजातं संख्याय वणिक् स्थापयेत् ।

२३. विक्रेतादि जो निसृष्ट (अनुमत भाग) प्राप्त करें, वणिक् उनकी दैनिक गणना कर, लिपिबद्ध करे।

क्रेतृविक्रेत्रोरन्तरपतितमादायादन्यद्भवति ।

२४. क्रेता-विक्रेता अर्थात् क्रय-विक्रय से उत्पन्न लाभ (संस्थाध्यक्ष से) सम्बन्धी को न प्राप्त हो अर्थात् राजकीय हो। क्रेता-विक्रेता के मध्य प्राप्त लाभ पण्यग्रहणकाल के मूल्य के अतिरिक्त होता है ।

तेन धान्यपण्यनिचयांश्चानुज्ञाताः कुर्युः ।

२५. संस्थाध्यक्ष की अनुमति प्राप्त वणिक् धान्य-पण्य-समूहों का संग्रह करें।

अन्यथानिचितमेषां पण्याध्यक्षो गृह्णीयात् ।

२६. अनुमति के बिना संग्रहीत इनका पण्य पण्याध्यक्ष ग्रहण करे ।

तेन धान्यपण्यविक्रये व्यवहरेतानुग्रहेण प्रजानाम् ।

२७. अतएव (पण्याध्यक्ष) धान्य पण्य के विक्रय में प्रजा पर, अनुग्रह का ध्यान रखकर, व्यवहार करे।

अनुज्ञातक्रयादुपरि चैषां स्वदेशीयानां पण्यानां पञ्चकं शतमाजीवं स्थापयेत्, परदेशीयानां दशकम् ।

९८. वणिकों के लिए अनुमति प्राप्त क्रय मूल्य के अपर स्वदेशी पण्यों पर, पांच प्रतिशत तथा अन्यदेशीय पण्यों पर, दश प्रतिशत लाभ निश्चित करे।

पादटिप्पणी :

२३. (१) निसृष्ट : कल्पित भाग या प्राधिकृत या प्राधिकरण ।

पाठ भेद :

'आदायादन्यद्' का पाठभेद तंजौर में, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी तथा भाषाव्याख्यान में 'आनायादन्यं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अनुज्ञात : स्वीकृत या अनुमति या सहमति ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) निचित : संग्रहीत, आच्छादित, पूरित भरा हुआ ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) प्रजा : प्रजा या जनता। द्र० २:१६:५, याज्ञ० २:२५३ ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) क्रयाद् : खरीद की कीमत, देशी बने सामानों पर पाँच प्रतिशत तथा विदेशी पर दस प्रतिशत लाभ लेने की व्यवस्था थी। इससे अधिक लेने पर विक्रय कर्ता दण्ड का भागी होता था।

(२) आजीव : लाभ, फायदा। द्र० ४:२:१७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ततः परमर्घं वर्धयतां क्रये विक्रये वा भावयतां पणशते पञ्चपणाद् द्विशतो दण्डः ।

२९. क्रय-विक्रय में उससे अधिक मूल्य बढ़ाने वाले अथवा सौपण पर, पांच पण और अधिक लाभ ग्रहण करने वाले वणिकों पर, दो सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

तेनार्घवृद्धौ दण्डवृद्धिर्व्याख्याता ।

३०. उक्त प्रकार से मूल्य वृद्धि करने पर, दण्ड वृद्धि की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

संभूयक्रये चैषामविक्रीते नान्यं संभूयक्रयं दद्यात् ।

३१. वणिकों के संगठित होकर (पण्य) क्रय करके, विक्रय न होने तक (संस्थाध्यक्ष) अन्य को संगठित क्रय न दें । अर्थात् उक्त प्रकार का क्रय न करने दे ।

पण्योपघाते चैषामनुग्रहं कुर्यात् ।

३२. जलाग्न्यादि उपद्रव से पण्य की क्षति होने पर उनका उपकार करे ।

पण्यबाहुल्यात्पण्याध्यक्षः सर्वपण्यान्येकमुखानि विक्रीणीत ।

३३. पण्य की बहुलता होने पर पण्याध्यक्ष सब पण्यों को एक स्थान पर विक्रीत करावे ।

तेष्वविक्रीतेषु नान्ये विक्रीणीरन् ।

३४. उनके न बिकने तक अन्य वणिक् विक्रय न करें ।

तानि दिवसवेतनेन विक्रीणीरन्ननुग्रहेण प्रजानाम् ।

३५. प्रजा का कल्याण ध्यान में रखकर दैनिक वेतन देकर उन्हें विक्रीत करें ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) अर्घ : मूल्य । अग्नि० २५८:४०, याज्ञ० २:२४९ ।

(२) पणशते पञ्चपणाद् : पांच प्रतिशत अधिक ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) संभूयक्रये : संयुक्त खरीददारी या मिलकर खरीदना ।

(२) नान्यम् : दूसरे व्यापारी को ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) उपघात : नाश, प्रहार, क्षति, हानि, क्षय, नुकसान । अग्नि० २५३:२८ ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) पण्यबाहुल्य : अधिक सामान या प्राचुर्य होने पर ।

(२) एकमुख : एक स्थान पर विक्री के लिए लाना । द्र० २:१२:१९, २:१६:४, २:२५:१, ३:२०:१, ४:२:३३ ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) अन्य : दूसरे, स्वतन्त्र व्यापारी ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) दिवसवेतन : दैनिक वेतन या पारिश्रमिक ।

(२) अनुग्रह : कल्याण, क्षमा, दया, मत्स्य० १८८:५३ । ग्राहक का स्वार्थ या हित सर्वोपरि माना जाता था ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देशकालान्तरितानां तु पण्यानां—
प्रक्षेपं पण्यनिष्पत्तिं शुल्कं वृद्धिमवक्रयम् ।
व्ययानन्यांश्च संख्याय स्थापयेदर्घमर्घवित् ।

३६. मूल्यवेत्ता पण्याध्यक्ष देश-कालान्तरित पण्यों का प्रक्षेप, पण्यनिष्पत्ति, शुल्क, वृद्धि अवक्रय एवं अन्य व्ययों की गणना करके मूल्य निर्धारित करे ।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे वैदेहकरक्षणं द्वितीयोऽध्यायः । आदित एकोनाशीतितमः ।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कंटकशोधन में वैदेहकरक्षण-सम्बद्ध द्वितीय अध्याय समाप्त, आदि से उन्यासीवां अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

उक्त सूत्र निर्विवाद रूप से कौटिल्य का लिखा माना जाता है ।

३६. (१) देशकालान्तरित : दूर स्थान तथा समय ।

(२) प्रक्षेप : वस्तुमूल्य, मूल्यनिर्धारण, विनिधान, लागत, पूंजी, परिव्यय । द्र० २:९:४, ३:१३:१७, ७:४:२२ ।

(३) पण्यनिष्पत्ति : वस्तु-निष्पत्ति के कालादि का निर्देश ।

(४) वृद्धि : ब्याज, सूद । गण० १:१४३, २:२३९ ।

(५) अवक्रय : गाड़ी भाड़ा, किराये पर उठाना इत्यादि ऊपरी खर्च । द्र० ३:८:२५, ३:९:३६, अग्नि० २५८:३३ । गण० २:१६२,२५३ ।

(६) अर्घवित् : पण्याध्यक्ष । द्र० ३:१६:३, याज्ञ० २:२५१-२५३ ।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः, वैदेहकरक्षणम्, आदित एकोनाशीतितमः ।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने वैदेहकरक्षणं द्वितीयोऽध्यायः, आदित एकोनाशीतिः ।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः वैदेहकरक्षणम्, आदित एकोनाशीतितमः ।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे वैदेहकरक्षणं द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ आदित एकोनाशीतिः ॥७९॥'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अष्टसप्ततितमं प्रकरणम्—उपनिपातप्रतीकारः

७८वां प्रकरण–उपनिपात प्रकरण

अध्याय ३

दैवान्यष्टौ महाभयानि-अग्निरुदकं व्याधिर्दुर्भिक्षं मूषिका व्यालाः सर्पा रक्षांसीति ।

१. आठ दैव महाभय हैं—अग्नि, जल, व्याधि, दुर्भिक्ष, मूषिका, व्याल, सर्प एवं राक्षस ।

तेभ्यो जनपदं रक्षेत् ।

२. उनसे जनपद की रक्षा करे ।

ग्रीष्मे[1] बहिरधिश्रयणं[2] ग्रामाः कुर्युः, दशमूलीसंग्रहेणाधिष्ठिता[3] वा ।

३. ग्रीष्म ऋतु में ग्रामीण जन बाहर भोजन पाक करें अथवा दशमूलीसंग्रह के अनुसार करें।

नागरिकप्रणिधावग्निप्रतिषेधो व्याख्यातः, निशान्तप्रणिधौ राजपरिग्रहे च ।

४. नागरिक प्रणिधि में अग्निमय परिहार की व्याख्या की गई है निशान्त प्रणिधि और राजपरिग्रह में भी इसकी व्याख्या है ।

पादटिप्पणी :

(१) उपनिपात : आकस्मिक दुर्घटना या आपत्ति । द्र० ३:१०:८, ३:१७:२९, ३:१५:१७, गण० २:७५ ।

(२) महाभय : विपत्ति दो प्रकार की होती है—१. मनुष्यकृत, २. देवकृत ।

देवकृत विपत्ति : आठ प्रकार की होती है—१. अग्नि, २. जल, ३. व्याधि, ४. दुर्भिक्ष, ५. मूषिक, ६. व्याल, (क्रूर स्वभाव व्याघ्रादि), ७. सर्प एवं ८. राक्षस ।

पाठ भेद

'दशमूली—' का पाठभेद भाषाव्याख्यान में 'दशकुली-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) ग्रीष्मे : ग्रीष्म काल में । द० २:३६: १५ ।

(२) अधिश्रयण : भोजन बनाना, चूल्हा आदि, बाहर बनाने से तात्पर्य है । द्र० २:३६:१७ ।

(३) दशमूली : एक मत से दश शामक अर्थात् आग बुझाने का उपकरण (यन्त्र) । दूसरे मत से इसका अर्थ दस कुलों का समूह या दश घरों का रक्षक किया गया है । द्र० २:३६:१८ । गण० ३: १४५ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) नागरिक : नगर अधीक्षक । द्र० २:३६:१५ ।

(२) निशान्तप्रणिधि : राजभवन, राजवारी, राजप्रसाद, राजनिवास । द्र० १:२०:४ ।

(३) राजपरिग्रह : राजकीय सम्पत्ति, राजभवन का मैदान या भूमि । द्र० २:३:२२, २:८:३७, ४:७:८, ५:३:२६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

बलि[1]होमस्वस्तिवाचनैः पर्वसु[2] चाग्निपूजाः कारयेत् ।

५. पर्वों पर बलिहोम-स्वस्तिवाचनों द्वारा अग्नि की पूजा कराये ।

वर्षारात्रमानूपग्रामा[1]ः पूरवेला[2]मुत्सृज्य वसेयुः ।

६. वर्षा कालीन रात्रों में जल-बहुलप्रदेश के ग्रामवासी जल तट छोड़कर (अन्यत्र) निवास करें ।

काष्ठ[1]वेणु[2]नावश्चोपगृह्णीयुः ।

७. काष्ठ एवं वेणु की नावों का संग्रह किये रहें ।

उह्यमानमला[1]बुदृति[2]प्लव[3]गण्डिका[4]वेणिका[5]भिस्तारयेयुः ।

८. जल प्रवाह से प्रवहमान जन को अलाबु, दृति, प्लव, गण्डिका एवं वेणिका द्वारा तैराकर पार करें ।

अनभिसरतां[1] द्वादशपणो दण्डः, अन्यत्र प्लवहीनेभ्यः ।

९. रक्षार्थ न जाने वालों पर, बारह पण दण्ड लगाया जाय किन्तु तरण साधन प्लवादि रहितजनों के रक्षार्थ न जाने पर, दण्ड न लगाया जाय ।

पादटिप्पणी :

५. (१) बलि : भूत बलि या यज्ञ या रक्षा होम आदि । मनु० ३:६:९९, ७:८० ।

(२) पर्वसु : पूर्णिमा तथा शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा या उत्सवादि ।

पादटिप्पणी :

६. (१) अनूपग्राम : जलीय या जलबहुल या दलदल वाला, या जलसमीपस्थ ग्राम या प्रदेश । स्कन्द ७:१:२०७:६१, द्र० २:२४:५ ।

(२) पूरवेला : जलप्रवाह, नदी, झरना आदि के निकट का यह स्थान जहाँ तक बाढ़ का पानी पहुँचता है । कु० १:१०, रघु० १३:१२,१५, १:३०, ८:८०, १७:३७ ।

पाठ भेद :

'चोपगृह्णीयुः' का पाठभेद तंजोर में तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में—'चापगृह्णीयुः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) काष्ठ : काठ या काष्ठ के पटरे तथा तख्तों की नाव ।

(२) वेणु : बाँस या बाँस की फराटी से बनी नाव । यह इस समय प्रचलित नहीं है । गण० ३:५ ।

पादटिप्पणी :

८. (१) अलाबु : तुम्बी । मनु० ६:५४ ।

(२) दृति : चर्मकृत मशक । मनु० २:९९, याज्ञ० ३:२६८ ।

(३) प्लव : डोंगी या छोटी नौका या तमेर । मनु० ४:१९४, ११:१९ ।

(४) गण्डिका : वृक्ष का तना या वृक्ष के स्तम्भ से बनी नाव । द्र० २:१३:९, गण० ३:२११; २२८ २:१३०, ३:१०९ ।

(५) वेणिका : जलतरण का साधन विशेष या जल में तैरने वाली सरकण्डे से बनी नाव, तैरती वस्तु या तैरनेवाली दौरी या नरकुल की बनी तैरने वाला साधन या उपकरण । द्र० १०:२:१४, गण० ३:१३०, ३:१०९ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) अनभिसरतां : (डूबते व्यक्ति को) जो बचाने न जाय ।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर्वसु[1] च नदीपूजाः कारयेत् ।

१०. पर्वों पर नदी पूजा कराये ।

मायायोगविदो[1] वेदविदो[2] वा वर्षमभिचरेयुः ।

११. मायायोगवेत्ता अथवा वेदवेत्ता जन अतिवृष्टि का शमन करें ।

वर्षावग्रहे[1] शचीनाथ[2]गङ्गा[3]पर्वत[4]महाकच्छ[5]पूजाः कारयेत् ।

१२. अवर्षण होने पर, इन्द्र, गङ्गा, पर्वत एवं समुद्र की पूजा कराये ।

व्याधि[1]भय[2]मौपनिषदिकै[3]: प्रतीकारैः[4] प्रतिकुर्युः, औषधैश्चिकित्सकाः शान्तिप्रायश्चित्तै[5]र्वा सिद्ध[6]तापसाः[7] ।

१३. कृत्रिमव्याधिभय औपनिषदिक उपायों से दूर करें, अकृत्रिम व्याधिभय चिकित्सक औषधियों से अथवा सिद्ध तापस जन शान्ति प्रायश्चित्तों से दूर करें ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) पर्व : अमावास्यादि पर्व, दिवसों पर ।

पादटिप्पणी :

११. (१) मायायोगवित् : माया एवं योग के जानने वाले । द्र० १:१९:३२, ४:३:४०,४४, ऐन्द्रजालिक करने वाला या मान्त्रिक ।

(२) वेदवित् : यहाँ अथर्ववेद के ज्ञाता से तात्पर्य है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) वर्षावग्रहे : सूखा पड़ने या अवर्षण होने पर ।

(२) शचीनाथ : इन्द्र ।

(३) गंगा : गंगाजी ।

(४) पर्वत : पहाड़ ।

(५) महाकच्छ : समुद्र, वरुण । द्र० ३:१६:३८, गण० २:१३० ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) व्याधि : बीमारी, महामारी, एपिडेमिक । व्याधि दो प्रकार की होती है—कृत्रिम और अकृत्रिम । पहली औपनिषदिक, विषधूम, विषपान आदि तथा दूसरी धातु दोष से उत्पन्न व्याधि । पहली प्रकार की व्याधि का उपचार वैद्यों औषधियों द्वारा तथा दूसरी व्याधि का औषधि तथा सिद्ध तपस्वियों द्वारा शान्ति कर्म, व्रत, उपवास आदि द्वारा उपचार किया जाय । राजा का यह कर्तव्य माना गया था कि महामारी फैलने पर जनता की चिकित्सा तथा संक्रामक रोग की रोकथाम के लिए उपाय करे । द्र० ४:३:१४-१६ ।

(२) भय : उपद्रव ।

(३) औपनिषदिक : विजय पाने की गुप्त रहस्यमय युक्तियाँ । द्र० १४वां अधिकरण ।

(४) प्रतीकार : शान्ति कर्म, वैर शुद्धि ।

(५) प्रायश्चित्त : परिशोध, पाप-निष्कृति ।

(६) सिद्ध : देवताओं का एक विशेष वर्ग, उपदेव । साधक जिसने सिद्धता प्राप्त कर ली है । काश्मीर में सिद्धजाति पुरा काल में रहती थी । महाभारत में एक जाति का नाम दिया गया है । महा० ६:९:५ ।

(७) तापस : कठिन साधना या तपस्या करने वाला संन्यासी वानप्रस्थी या भक्त । गण० १:५२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन[1] मरको[2] व्याख्यातः ।

१४. उक्त प्रकार से मरक की व्याख्या हो गयी ।

तीर्थाभिषेचनं महाकच्छ[1]वर्धनं[2] गवां श्मशाना[3]वदोहनं कबन्ध[4]दहनं देवरात्रिं[5] च कारयेत् ।

१५. तीर्थस्नान, समुद्रपूजन, श्मशान में गायों का दोहन, कबन्धदहन, देवार्चनपूर्वक रात्रि जागरण कराये ।

पशुव्याधिमरके स्थानार्थ[1]नीराजनं[2] स्वदैवत[3]पूजनं च कारयेत् ।

१६. पशुओं में व्याधि एवं मरक होने पर स्थानार्थ-नीराजन और स्वदैवत पूजन कराये ।

दुर्भिक्षे राजा बीजभक्तोपग्रहं[1] कृत्वाऽनुग्रहं[2] कुर्यात्, दुर्गसेतुकर्म वा भक्तानुग्रहेण, भक्तसंविभागं वा, देशनिक्षेपं वा ।

१७. दुर्भिक्ष होने पर राजा बीज एवं अन्न उपलब्ध कराकर, प्रजापर अनुग्रह करे, अन्न प्रदान द्वारा दुर्ग सेतु निर्माण कर्म अथवा अन्न वितरण अथवा देशनिक्षेप करके, प्रजा का उपकार करे ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) तेन : इस प्रकार से । उक्तरीति से ।

(२) मरक : महामारी या मारी, संक्रामक रोग । गण० ३:२५ ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) महाकच्छ : समुद्र या वरुण देव । द्र० ३:१६:३८ । ४:३ १२ गण० २:१३० ।

(२) वर्धन : पूजन ।

(३) श्मशानावदोहन : श्मशान में गाय दुहना ।

(४) कबन्ध : सिर रहित धड़ (शरीर) चावल या सत्तू से बनाकर उसे श्मशान में जलाना । म० भा० ३:२:९, ३९, ४०; गण० २:१३० ।

(५) देवरात्रि : देवपूजा, रात्रि जागरण । विशेष पर्वों पर आज भी रात्रि में जागरण कर देव पूजा की जाती हैं । गण० २:१३० ।

पाठ भेद :

'स्थानार्थ—' का पाठभेद तंजौर तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद टिप्पणी में 'स्थानान्यर्थ—' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) स्थानार्थ : भिन्नस्थान स्थिति जैसे गोशाला, पशुओं के रहने के स्थान आदि । गण० १:१४३, २:२४०, २५४, ३:१०, १२:६ ।

(२) नीराजन : आरती ।

(३) स्वदैवतपूजन : सुब्रह्मण्य, हाथी के देवता । आश्विनौ (दोनों अश्विनीकुमार) अश्व के देवता । पशुपति—पशुओं के देवता भैंसों के वरुण, खच्चरों एवं गदहों के वायु, बकरी के देवता अग्नि हैं ।

पाठ भेद :

'दुर्भिक्षे' का पाठभेद तंजौर तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'दुर्भिक्षो' तथा 'दुर्गसेतुकर्म' का तंजौर में 'दुर्गतुकर्म' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) बीजभक्तोपग्रह : बीज और भोज्य अन्न की व्यवस्था, संग्रह ।

(२) अनुग्रह : उपकार, गण० १:१११; ३:२०० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मित्राणि वा व्यपाश्रयेत, कर्शनं[1] वमनं वा कुर्यात् ।

१८. मित्रों का आश्रय ले अथवा कर्शन या वमन (प्रजा का अन्य देश में प्रेषण) करे ।

निष्पन्नसस्यमन्यविषयं वा सजनपदो यायात्, समुद्रसरस्तटाकानि वा संश्रयेत[2] ।

१९. अथवा जनपद सहित राजा सस्य सम्पन्न अन्य प्रदेश में चला जाय अथवा समुद्र-सरोवर तालाबों का आश्रय ग्रहण करे ।

धान्यशाकमूलफलावापान् वा सेतुषु कुर्वीत, मृगपशुपक्षिव्यालमत्स्यारम्भान्[2] वा ।

२०. अथवा सेतुओं पर धान्य, शाक, मूल एवं फलों को बोये अथवा मृग, पशु, पक्षी, व्याल एवं मत्स्यों का शिकार आरम्भ करे ।

---

(३) दुर्ग : किला । म० भा० १२:५६:३५ ।

(४) सेतु : बन्ध, आधुनिक युग में भी दुर्भिक्ष या अकालावस्था में जनता को काम देने के लिए भवनों, सेतुओं, सरोवरों, सड़कों आदि सार्वजनिक हितकर कार्यों का निर्माण कराया जाता है । गण० १:१३६ ।

(५) देशनिक्षेप : देश को दूसरे राजा के यहाँ धरोहर रखे, और समय आने पर वापस ले ले ।

पाठ भेद :

'वा व्यपा०' का पाठभेद मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'वाप्यपा०' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) कर्शन : लोगों को तात्कालिक रूप से अन्य स्थानों पर भेजकर आबादी कम करना । इसका दूसरा अर्थ कर-आदि द्वारा अर्थसंग्रह भी हैं । द्र० ७:३:१६, ७:४:१०, ७:१०:४ ७:८:८; १३:४:१, गण ३:२०० ।

(२) वमन : दीर्घकाल के लिए ऐसे स्थान पर भेजना जहाँ अन्न सुलभ हो । द्र० २:१:१ ।

भारत में आज भी अकाल पड़ने पर लोग अपने प्रदेश एवं स्थान को त्यागकर जहाँ अन्न-जल का सुपास होता है, चले जाते हैं, और अकाल समाप्त होने पर लौट आते हैं । द्र० २:१:१, १३:४, गण० ३:२०० ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) विषय : जिला, क्षेत्र । लोक० २ ।

(२) संश्रय : विश्रामस्थल, आवासस्थान, बसाने या रहने से तात्पर्य है । गण० २:२३ ।

पाठ भेद :

'–फलावापान्' के बाद का 'वा' तंजौर में नहीं है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) वापान् : बोना । गण० १:५, २:२२५ ।

(२) आरम्भान् : शिकार खेलने या पकड़ने से तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूषिकभये मार्जारनकुलोत्सर्गः ।

२१. मूषिकभय होनेपर मार्जार और नकुल (नेवले) छोड़े जाँय ।

तेषां ग्रहणहिंसायां द्वादशपणो दण्डः, शुनामनिग्रहे च अन्यत्रारण्यचरेभ्यः ।

२२. उन्हें ग्रहण करने अथवा मारने तथा (पालित) कुत्तों का निग्रह न करने पर, बारहपण दण्ड लगाया जाय । किन्तु वनेचर कुत्तों के विषय में यह दण्ड नहीं लगेगा ।

स्नुहिक्षीरलिप्तानि धान्यानि विसृजेद्, उपनिषद्योगयुक्तानि वा ।

२३. स्नुही वृक्ष के दूध अथवा उपनिषत् में उक्त योग से युक्त धान्यों को विखेर दे ।

मूषिककरं वा प्रयुञ्जीत ।

२४. अथवा मूषिककर का प्रयोग किया जाय ।

शान्तिं वा सिद्धतापसाः कुर्युः ।

२५. अथवा सिद्धतापस जन शान्ति करें ।

पर्वसु च मूषिकपूजाः कारयेत् ।

२६. पर्वों पर मूषिका पूजा करायो जाय ।

पाठ भेद :

'–नकुलोत्सर्ग' का पाठभेद तंजौर में '–नकुलोत्सर्जः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) तेषां : बिल्ली, नकुलादि ।
(२) हिंसा : मारना ।
(३) शुनाम् : पालतू कुत्तों के ।
(४) अरण्यचर : वनपाल या वनस्थल या वन में भ्रमण करने वाले या वनचर से तात्पर्य है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) स्नुही : सेहुँड़ का वृक्ष । गण० ३:२१६ ।
(२) उपनिषद्योग : औपनिषदिक प्रकरण में बताई औषधि या युक्तियाँ या गुप्त मिश्रण । गण० ३:१४२ ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) मूषिककर : चूहों पर कर ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) सिद्ध : अर्ध दिव्य प्राणी जो अत्यन्त पवित्र एवं पुण्यात्मा माने जाते हैं । पुरातन काल में काश्मीर में सिद्ध लोगों की एक जाति रहती थी । अब वह लुप्त हो गयी है । द्र० ४:३:१३ ।
(२) तापस : साधना करने वाला, तपस्वी ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) पर्वसु : पूर्णिमादि में ।
(२) मूषिकपूजा : चूहों की पूजा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन शलभपक्षिक्रिमिभयप्रतीकारा[2] व्याख्याताः ।

२७. उक्त प्रकार से शलभ, पक्षी, एवं क्रमियों का भय दूर करने का उपाय व्याख्यायित हो गया।

व्यालभये मदनरससंयुक्तानि पशुशवानि प्रसृजेत्, मदनकोद्रवपूर्णान्यौदर्याणि वा ।

२८. व्यालभय होने पर, मदनरस युक्त अथवा उदर में मदन-कोद्रव भर कर, पशुओं का शव छोड़ दे।

लुब्धकाः[1] श्वगणिनो[2] वा कूटपञ्जरावपातैश्चरेयुः[3] ।

२९. लुब्धक एवं श्वगणी कपटपञ्जर एवं कपट गर्तों का प्रयोग करें।

आवरणिनः[1] शस्त्रपाणयो व्यालानभिहन्युः ।

३०. आवरणयुक्त शस्त्रधारी जन व्यालों का वध करें।

अनभिसर्तुर्[1]द्वादशपणो दण्डः ।

३१. (व्यालपीडित की) सहायता के लिए न जाने वाले पर बारह पण दण्ड लगाया जाय।

पाठ भेद :

'–क्रिमि–' का पाठभेद तंजौर की पादटिप्पणी में '–क्रमि–' मिलता है।

पादटिप्पणी :

२७. (१) शलभ : टिड्डी।

(२) प्रतीकार : उपचार, वह उपकार जो किसी अनुपकार के बदले किया जाता है।

पाठ भेद :

'प्रसृजेत्' का पाठभेद मलयालम नागरी अनुलिपि में 'विसृजेत्' मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) मदनरस : धतूरे का रस या मादक-विषाक्त पेय पदार्थ। द्र० १:१८:१९, ४:५:१६, ११:१:२४, १३:३:४५,४६, १४:१:१६,१७, गण० २:१३२।

(२) कोद्रव : कोदो, यह जहरीले कोदो या विषयुक्त कोदो से तात्पर्य है।

पादटिप्पणी :

२९. (१) लुब्धक : बहेलिया या व्याध। द्र० १:१४:४। गण० ३:१७१।

(२) श्वगणी : कुत्तों से शिकार खेलने वाला शिकारी या चाण्डाल गण।

(३) कूटपञ्जर : घास-फूस से छिपाया गुप्त गढ़ा या पिंजरा। द्र० २:३:१५, ४:१०:३।

पादटिप्पणी :

३०. (१) आवरणिन : कवचधारी। गण० ३:५७, १२५,२००।

पादटिप्पणी :

३१. (१) अनभिसर्ता : सहायता करने न जाने वाला। द्र० ४:३:९।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स एव लाभो व्यालघातिनः ।

३२. व्याल का वध करने वालों को बारह पण पारितोषिक दिया जाय ।

पर्वसु च पर्वतपूजाः कारयेत् ।

३३. पर्वों पर पर्वत पूजा कराये ।

तेन मृगपशुपक्षिसंघग्राहप्रतीकारा व्याख्याताः ।

३४. उक्त प्रकार से मृग, पशु, पक्षि समूह एवं ग्राहों से उत्पन्न भय दूर करने का उपाय व्याख्यायित हो गया ।

सर्पभये मन्त्रैरोषधिभिश्च जाङ्गुलीविदश्चरेयुः ।

३५. सर्पभय होने पर जाङ्गुली विद् जन मन्त्रों एवं औषधियों का व्यवहार करें ।

संभूय वापि सर्पान् हन्युः ।

३६. अथवा (पुरवासी) संगठित होकर सर्पों का वध करें ।

अथर्ववेदविदो वाऽभिचरेयुः ।

३७. अथवा अथर्व वेद वेत्ता अभिचार करें ।

पर्वसु च नागपूजाः कारयेत् ।

३८. पर्वों पर नागपूजा कराये ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) व्याल : उन्मत्त हाथी या जंगली जानवर यथा व्याघ्रादि हिंस्रपशु । द्र० २:१५:४२, २:३१:४, २:३२:१,८,१०, १:२१:२२, २:१:३, गण० ३:१३१ ।

पाठ भेद :

'मृगपशुप- -' का पाठभेद तंजौर में 'मृगपक्षि-' मिलता है ।

पाठ भेद :

सूत्र ३५ से ३९ तक तंजौर में नहीं है ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) मन्त्र : कौटिल्य के समय से ही बाधा दूर करने के लिए मन्त्र का प्रयोग किया जाता रहा । गण० ३:४४ ।

(२) जाङ्गुलीविद् : विषवैद्य, जहर उतारने वाला । द्र० १:२१:९ । गण० १:१०५ ।

पाठ भेद :

'सर्पान्' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'वोपसर्पान्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) अथर्ववेदविद् : अथर्ववेद का ज्ञाता ।

(२) अभिचार : मन्त्रादि द्वारा मारण, मोहनादि प्रयोग । द्र० ४:३:११ ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) पर्व : कृष्ण चतुर्दशी तथा अष्टमी आदि ।

(२) नागपूजा : नीलमत पुराण में नागपूजा का विशद उल्लेख मिलता है । नागपूजा कश्मीर में बहुत प्रचलित थी । द्र० नीलमत पुराण ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेनोदकप्राणिभयप्रतीकारा व्याख्याताः ।

३९. उक्त प्रकार से जलचर प्राणियों के भय का प्रतीकार व्याख्यायित हो गया।

रक्षोभये रक्षोघ्नान्यथर्ववेदविदो मायायोगविदो वा कर्माणि कुर्युः ।

४०. राक्षस (भूत-प्रेत) का भय होने पर, अथर्ववेद ज्ञाता अथवा मायायोगवेत्ता रक्षोघ्नकर्म करें।

पर्वसु च वितर्दिच्छत्रोल्लोपिकाहस्तपताकाच्छागोपहारैश्चैत्यपूजाः कारयेत् ।

४१. पर्वों पर वितर्दि, छत्र, उल्लोपिका, हस्तपताका एवं छागोपहारों से चैत्यपूजा सम्पन्न कराये।

'चरुं वश्चरामः' इत्येवं सर्वभयेष्वहोरोत्रं चरेयुः ।

४२. सब प्रकार का भय होने पर, हम तुम्हारे लिये चरु सम्पन्न कर रहे हैं। इस प्रकार कहते हुए दिन-रात संचरण करें।

पादटिप्पणी :

३९. (१) उदकप्राणी : जलचर-जलजन्तु जैसे नक्र आदि जीव।

पादटिप्पणी :

४०. (१) रक्षो : यहाँ अर्थ दुष्ट प्रेतों से है। कतिपय अनुवादकों ने इसका अर्थ राक्षसों से किया है। म० भा० १:१:१०८।

(२) मायायोगविदः : माया जादू में अभ्यस्त। यहाँ माया का आध्यात्मिक या दार्शनिक अर्थ नहीं है कि ब्रह्म जिस शक्ति से प्रतिभासित होता है वह माया है, भ्रम है। शैवादि तन्त्रों में प्रतिपादित मारण, उच्चाटन आदि क्रियाओं के करने वाले से तात्पर्य है। द्र० १:१९:३२, ४:३:११,४५।

पादटिप्पणी :

४१. (१) पर्वसु : कृष्ण चतुर्दशी, अष्टमी आदि तिथि पर्व के दिन।

(२) वितर्दि : वेदी, ऊँचा चौतरा या पीठ स्थान।

(३) छत्र : छाता।

(४) उल्लोपिका : एक प्रकार का खाद्य-विशेष पूआ आदि। महा भा० ५:१९१:२१, गण० २:१३३।

(५) हस्तपताका : हाथ में छोटी झण्डी लेकर चलना। गण० २:१३३।

५—कौ० अ० तृ०

(६) छाग : बकरी, बकरा।

(७) चैत्य : ऐसी पूजा को कौटिल्य मान्यता देता है। अर्थशास्त्र साधारण जनता के विश्वासों को स्वीकार करता है। सुझाव देता है कि उनका राज्य के स्वार्थ के लिए उपयोग करना चाहिए। द्र० ५:३:४१, म० भा० २:२१:१८, १:१५१:३३, गण० ३:१८७,१८८,१९०।

पाठ भेद :

'चरुं' तंजौर में नहीं है तथा 'वश्चरामः' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'वश्चरामि' मिलता है।

पादटिप्पणी :

४२. (१) चरु : एक प्रकार की आहुति, या उबले चावल आदि से देवताओं तथा पितरों की सेवा में उपस्थित करने के लिए तैयार की गयी आहुति।

ऋग्वेद काल में किसी पात्र या कड़ाही के लिए इस शब्द का प्रयोग मिलता है। इसका एक ढकना या अभिपधान होता था। इसमें कुण्डी लगी रहती थी। उससे यह अग्नि पर रखा जाता था। यह पीतल या लोहे का होता था। इसका गौण अर्थ इसमें बनाया जाने वाला खाद्य है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वत्र चोपहतान् पितेवानुगृह्णीयात् ।

४३. समस्त भयों से पीडित जनों को (राजा) पिता तुल्य अनुगृहीत करें ।

मायायोगविदस्तस्माद्विषये सिद्धतापसाः ।
वसेयुः पूजिता राज्ञा दैवापत्प्रतिकारिणः ॥

४४. अतएव राजा द्वारा सम्मानित दैवी आपदा का प्रतीकार करने वाले मायायोग ज्ञाता एवं सिद्ध तपस्वी जन राज्य में निवास करें ।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे उपनिपातप्रतीकारस्तृतीयोऽध्यायः । आदितः अशीतितमः ।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टकशोधन में उपनिपात प्रतीकार नामक तीसरा अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) उपहृत : अन्यायग्रस्त, हानिग्रस्त, शारीरिक मानसिक व्याधिग्रस्त । द्र० १:१४:३, २:८:२४, ७:२:२१ ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) मायायोगविद् : द्र० १:१९:३२, ४:३:११,४० ।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः उपनिपातप्रतीकारः । आदितोऽशीतितमः ।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने उपनिपातप्रतीकारः तृतीयोऽध्यायः आदितोऽशीतितम ।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः उपनिपातप्रतीकारः, आदितोऽशीतितमः ।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे उपनिपातप्रतीकारस्तृतीयोऽध्यायः ॥३॥ आदितोऽशीतितमः ॥८०॥'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एकोनाशीतिमं प्रकरणम्—गूढाजीविनां रक्षा[1]

७९वां प्रकरण—गूढजीवी की रक्षा

अध्याय ४

समाहर्तृ[1]प्रणिधौ[2] जनपदरक्षणमुक्तम् ।

१. समाहर्तृ-प्रणिधि में जनपद रक्षण विधि कही गयी है ।

तस्य कण्टक[1]शोधनं वक्ष्यामः ।

२. उसका कण्टकशोधन कहेंगे ।

समाहर्ता[1]जनपदे सिद्ध[2]तापस[3]प्रव्रजित[4]चक्रचर[5]चारण[6]कुहक[7]प्रच्छन्दक[8]कार्तान्तिक[9]नैमित्तिक[10]मौहूर्तिक[11]चिकित्सक[12]उन्मत्त[13]मूक[14]बधिर[15]जड[16]अन्ध[17]वैदेहक[18]कारु[19]शिल्पि[20]कुशीलव[21]वेश[22]शौण्डिक[23]आपूपिक[24]पाक्व[25]मांसिक[26]औदनिकव्यञ्जनान्प्रणिदध्यात् ।

३. समाहर्ता जनपद में सिद्ध, तापस, प्रव्रजित, चक्रचर, चारण, कुहक, प्रच्छन्दक, कार्तान्तिक, नैमित्तिक, मौहूर्तिक, चिकित्सक, उन्मत्त, मूक, बधिर, जड़, अन्ध, वैदेहक, कारु, शिल्पी, कुशीलव, वेश, शौण्डिक, आपूपिक, पाक्य मांसिक, औदनिक वेशधारी गुप्तचरों को नियुक्त करे ।

पादटिप्पणी :

(१) गूढाजीविनां : द्र० २:२७:२५, ३:१:१०, ३:२०:२, गण० १:११ ।

१. (१) समाहर्तृ : इसका अर्थ यहाँ प्रशासक होगा । राजस्व आयुक्त भी अर्थ किया गया है । वह अपने गुप्तचरों द्वारा अवांछनीय तत्त्वों, अपराधियों एवं भ्रष्ट अधिकारियों की खबर तथा उनकी गतिविधियों पर, सतर्क दृष्टि रखता था । द्र० २:६:१, २:३५:१ ।

(२) प्रणिधि : विनियमन, प्रक्रिया, नियम । द्र० १:१६:१, ७:१:३२, गण० १:५६ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) कण्टक : कण्टक दो प्रकार के होते हैं । प्रकट तथा प्रच्छन्न । गण० १:२४७, २:११६ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) समाहर्ता : कण्टकशोधन का उत्तरदायी अधिकारी, प्रशासक प्रदेष्टा इसका अधीनस्थ अधिकारी था । इसका अन्य अर्थ रेवन्यू कमिश्नर भी किया गया है ।

(२) सिद्ध : सिद्धि प्राप्त व्यक्ति । द्र० १:११:१६, १३:३:७,११ । गण० १:१३९, ३:१७७ ।

(३) तापस : तपस्वी, साधना करने वाला । गण० १:५२ ।

(४) प्रव्रजित : संन्यासी, भिक्षु आदि ।

(५) चक्रचर : निरन्तर भ्रमणकारी । गण० २:७२, २:१३५ ।

(६) चारण : भ्रमणशील, नट, नर्तक, भांड़, भाट । मनु० १२:१४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ते ग्रामाणामध्यक्षाणां च शौचाशौचं विद्युः ।

४. वे ग्रामप्रमुखों एवं अध्यक्षों का शौचाशौच जानें ।

---

(७) कुहक : इन्द्रजालिक, मायायोगविद, वञ्चक । द्र० १:२०:१८, ४:१:६५ ।

(८) प्रच्छन्दक : घूर्णशील, आवारा. पर्यटक, स्वच्छन्दचर, स्वेच्छाचारी इसका अर्थ गुप्तचर या गुप्तप्रतिनिधि या मध्यस्थ भी होता है । द्र० ४:४:३ । गण० २:१३५ ।

(९) कार्तान्तिक : यमपट्ट दिखाकर जीविका चलाने वाले । आज भी सड़कों पर मुख्यतः दक्षिण भारतीय भिक्षुक समूह में चित्रपट दिखाकर भिक्षा माँगते हैं । द्र० १:१२:२८, गण० १:५५, ३:११९, ३:१५ ।

(१०) नैमित्तिक : विषय वक्ता, शकुन सूचक । द्र० १:१३:२३, गण० १:६५ ।

(११) मौहूर्तिक : ज्योतिषी । द्र० १:१९:२३, गण० १:६५,९५, ३:१०३,११७ ।

(१२) चिकित्सक : वैद्य, डाक्टर । गण० २:३५६, ३:११८ ।

(१३) उन्मत्त : पागल ।

(१४) मूक : गूंगा । गण० ३:२१६ ।

(१५) वधिर : बहरा ।

(१६) जड़ : मूर्ख । अग्नि० २५६:२७-२९, याज्ञ० २:१४०-१४१ ।

(१७) अन्ध : अन्धा ।

(१८) वैदेहक : व्यापारी ।

(१९) कारु : कारीगर । अग्नि० २५८:४०, गण० १:११ ।

(२०) शिल्पी : द्र० ३:१३:२० ।

(२१) कुशीलव : नट । मत्स्य० २२७:१२०-१२१ । गण० २:५८,५९, २:३५१ ।

(२२) वेश : वेश्यालयों में घूमने वाले या वेश्या वाटचर । गण० २:१३५ ।

(२३) शौण्डिक : सुरा जीवी, कलाल, शराब विक्रेता । गण० ३:१६९ ।

(२४) आपूपिक : अच्छा (स्वादिष्ट) पुआ बनाने वाला, ब्राह्मण के श्रौत सूत्रों में हवन सामग्री के एक वस्तु के रूप में इसका उल्लेख हुआ है । वेदों में देवों को यज्ञ में अपूप देने का निर्देश हुआ है । आज भी ग्रामदेवालयों में अपूप या पूआ या रोट देवताओं पर चढ़ाए जाते हैं । गण० २:३५६, ३:१६९ ।

(२५) पाक्वमांसिक : पकामांस बेचने वाला ।

(२६) औदनिक : पका अन्न बेचने वाला या भात बेचने वाला या रसोइया । गण ३:१२५ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) ग्रामाणाम् : गाँवों के मुखिया या ग्रामों में नियुक्त अधिकारी से तात्पर्य है ।

(२) अध्यक्षाणाम् : अधिकारियों या विभागीय अध्यक्षों से तात्पर्य है ।

समाहर्ता गुप्तचरों से इस बात का पता लगाए कि कहाँ तक अध्यक्षगण स्वामिभक्त तथा इमानदार हैं ।

पाठ भेद :

'गूढ़ाजीविनं' का पाठभेद तंजौर तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'गूढ़जीविनं' तथा 'सत्त्रिणापं' का तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'सत्त्रिसवर्णेनाप०' मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यं चात्र गूढाजीविनं शङ्केत तं सत्त्रिणापसर्पयेत् ।

५. इनमें, जिस पर, गूढाजीवी होने की शंका हो, उसे सत्त्री गुप्तचर के साथ प्रेषित करे।

धर्मस्थं विश्वासोपगतं सत्त्री ब्रूयात्—'असौ मे बन्धुरभियुक्तः, तस्यायमनर्थः प्रतिक्रियताम्, अयं चार्थः प्रतिगृह्यताम्' इति ।

६. विश्वस्त धर्मस्थ से सत्त्री इस प्रकार बोले 'यह मेरा बन्धु अभियुक्त है, इसका यह अपराध क्षमा कीजिये, और यह धन ग्रहण कीजिए'।

स चेत्तथा कुर्यादुपदाग्राहक इति प्रवास्येत ।

७. यदि वह वैसा करे तो, उसे उपदाग्राहक जानकर निर्वासित करे।

तेन प्रदेष्टारो व्याख्याताः ।

८. उक्त प्रकार से प्रदेष्टाओं के विषय में व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

ग्रामकूटमध्यक्षं वा सत्त्री ब्रूयात्—'असौ जाल्मः प्रभूतद्रव्यः, तस्यायमनर्थः, तेनैनमाहारयस्व' इति ।

९. ग्रामकूट अथवा अध्यक्ष से सत्त्री बोले, 'यह दुष्ट प्रचुर सम्पत्तिवाला है, इसका यह अपराध है, अतएव इसका अपहरण करा लीजिए'।

पादटिप्पणी :

५. (१) गूढ़ाजीवी : गुप्त स्रोत से अर्जन करने या गुप्त रूप से धन पैदा करने वाला। द्र० २:२७:२५, ३:१:१०, ३:२०:२ । गण० १:२२, ३:२५० ।

(२) सत्त्री : गुप्तचर, गुप्तअभिकर्ता। द्र० १:१०:३,५,२०, १:१०:१,१८, १:१२:१, गण० ३:६३, १:४८ ।

(३) अपसर्प : गुप्तचर। द्र० १:१२:१७,२५ । गण० १:२३, ३:१०५ ।

पाठ भेद :

'धर्मस्थं' के बाद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'प्रदेष्टारं वा' भी मिलता है।

पादटिप्पणी :

६. (१) धर्मस्थ : न्यायाधीश या जज। गण० १:९ ।

(२) सत्त्री : गुप्त प्रतिनिधि या एजेण्ट। द्र० १:१०:३,५,२०, १:११:१,१८, १:१२:१, ४:३:५ ।

(३) अनर्थ : दुर्भाग्य। गण० ३:८९,९८ ।

(४) प्रतिक्रियताम् : दूर करना, समाप्त करना।

(५) प्रतिगृह्यताम् : ग्रहण करें, ले लें।

पादटिप्पणी :

७. (१) उपदाग्राहक : उपहार (रिश्वत) लेने वाला, घूसखोर।

(२) प्रवास्येत : निर्वासित करे।

पादटिप्पणी :

९. (१) ग्रामकूट : गाँव में तुलामानादि का कूट करने वाला। वाराह० २०३:३५-३९ । कूट का अर्थ ठग, जालसाज होता है। वाराह० १९५:१६ । यह शब्द पुनः नहीं मिलता है। इसका अर्थ ग्रामिक भी हो सकता है। द्र० ३:४:९ । ग्रामकूट का अर्थ कुछ अनुवादकों ने ग्राम मुखिया ग्राम प्रधान भी लगाया है। कुछ अनुवादकों ने ग्राम की जनता लगाया है।

(२) जाल्म : दुष्ट, पापी। विष्णु० २:१३:७८ ।

(३) आहारयस्व : द्र० १:६:७ । गण० ३:१११ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स चेत्तथा कुर्यादुत्कोचक[1] इति प्रवास्येत ।

१०. यदि वह वैसा करे तो, उत्कोचक मानकर, उसे प्रवासित करे ।

कृतका[1]भियुक्तो वा कूटसा[2]क्षिणोऽभिज्ञातानर्थवैपुल्येनारभेत ।

११. कृत्रिम अभियुक्त बना सत्त्री अभिज्ञात कूट साक्षिकों को प्रचुर धन द्वारा आकृष्ट, प्रलोभित करे ।

ते चेत्तथा कुर्युः कूटसाक्षिण इति प्रवास्येरन् ।

१२. यदि वैसा करें तो, कूटसाक्षिकों को प्रवासित करें ।

तेन कूटश्रा[1]वणकारका व्याख्याताः ।

१३. उक्त प्रकार से कूट श्रावण कारकों की व्याख्या हो गई ।

यं वा मन्त्रयोगमूलकर्मभिः श्माशानिकैर्वा संवे[1]दनकारकं मन्येत तं सत्त्री ब्रूयात्—'अमुष्य भार्यां स्नु[2]षां दुहि[3]तरं वा कामये, सा मां प्रतिकामयताम्' अयं चार्थः प्रतिगृह्यताम्' इति ।

१४. अथवा जिसे मन्त्रयोग मूलकर्मों अथवा श्मशान की क्रियाओं द्वारा वशीकरणकर्ता जाने, उससे सत्त्री बोले 'अमुक व्यक्ति की भार्या, पुत्रवधू या कन्या को चाहता हूँ, वह मेरी कामना करे' यह धन लीजिए ।'

पादटिप्पणी :

१०. (१) उत्कोच : घूस, उत्कोच का अर्थ धन चूसने वाला या उद्दापक कर्ता भी होता है । पद्म० २:६७:९३-९४, शिव० ५:६:४१, स्कन्द० १:२:४१: ७३ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) कृतकाभियुक्तो : बनावटी या बना अभियुक्त या सत्त्री ।

(२) कूटसाक्षी : झूठी गवाही देने वाला । अग्नि० २२७:७-८, २५५:१२-१४, पद्म० ५:३३: ५९, नारद० उ० २३:७१ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) कूटश्रावणकारक : मिथ्या साक्षी देने वाला या साक्षी को मिथ्याबात बताकर, फुसलाने वाला । द्र० ३:१:४,१४ ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) संवदनकारक : वशीकरणकर्ता । अथर्व० ४:५:६, महा० भा० ३:१२२:५६-५७ । द्र० ४:५:१, ४:१३:२८ ।

अर्थशास्त्र में प्रायः उल्लेख किया गया है कि पुरुष किंवा स्त्रियों के वशीकरण या उनकी रुचि अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए, मन्त्रादि तथा पेय पदार्थों का प्रयोग करना चाहिए । द्र० ४:५:१ ।

(२) स्नुषां : पुत्रवधू या पतोहू ।

(३) दुहिता : कन्या ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स चेत्तथा कुर्यात् संवदनकारक इति प्रवास्येत ।

१५. यदि वह वैसा करे, तो उसे वशीकरणकर्ता जानकर प्रवासित करे ।

तेन कृत्योऽभिचारशीलौ व्याख्यातौ ।

१६. उक्त प्रकार से कृत्याशील एवं अभिचारशील जनों की व्याख्या हो गई ।

यं वा रसस्य कर्तारं, क्रेतारं, विक्रेतारं, भैषज्याहारव्यवहारिणं वा रसदं मन्येत तं सत्त्री ब्रूयात्—'असौ मे शत्रुः, तस्योपघातः क्रियताम्, अयं चार्थः प्रतिगृह्यताम्' इति ।

१७. अथवा जिस रस (विष) निर्माता, क्रेता, विक्रेता, अथवा भैषज्य एवं आहार व्यापारी को विषदाता जाने उससे सत्त्री बोले-'यह मेरा शत्रु है, उसका उपधात (हत्या) कीजिए यह धन लीजिए' ।

स चेत्तथा कुर्याद्रसद इति प्रवास्येत ।

१८. यदि वह वैसा करे, तो, उसे रसद जानकर प्रवासित करे ।

तेन मदनयोगव्यवहारी व्याख्यातः ।

१९. उक्त प्रकार से मदनयोगव्यवहारी की व्याख्या हो गयी ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) कृत्या : पिशाचादि आवेशनकारी । कृत्या एक देवी हैं, जिसकी यज्ञादि द्वारा पूजा की जाती है कि विनाशकारी एवं जादू-टोना के कार्यों में सफलता मिल सके । द्र० ४:१३:२७, प्रह्लाद के विनाश के लिए हिरण्यकश्यपु ने कृत्या उत्पन्न करायी थी । विष्णु० १:१५:१५,३१, १:१६:९, १:१७:५२, १:१८:९,३०,३५,३७ । म० भा० ३:२५१:२६,२८, १३:९३:५८ ।

(२) अभिचारशील : मन्त्रयोग या जप, होम आदि से मारणशील । गण० ३:११७ ।

पाठ भेद :

'कर्तारं' का पाठभेद तंजौर में 'वक्तारं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) रसस्य : विष का । द्र० ५:१:७, ३१, ११:१:२८, २:१२:९, गण० ३:१७३, १९८, २२२ ।

(२) भैषज्य : औषधि ।

(३) आहार : खाद्यपदार्थ । स्कन्द० ७:१: २०२,४७, नारदपु० १४:४६-४७, गण० ३:१११ ।

(४) रसद : विष देने वाला, निर्दयी, क्रूर, गुप्तचर । द्र० १:१२:३,९, गण० १:५७ ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) मदनौयोगव्यवहारी : मद जनक औषधि का व्यापारी या बेचने वाला या दाता । द्र० १४:१:१६,१७, ४:७:१०, ७:१७:४४ । चित्त में प्रेमोन्माद पैदा करने वाली या भ्रम में डालने वाली औषधि भी कुछ अनुवादकों ने अर्थ किया है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यं वा नानालोह[1]क्षा[2]राणाम् अङ्गार[3]भस्त्रा[4]संदंश[5]मुष्टिका[6]धिकरणी[7]बिम्ब[8]टङ्क[9]मूषा[10]णामभीक्ष्णक्रेतारं मषीभस्मधूमदिग्धहस्तवस्त्रलिङ्गं कर्मारोपकरणसंसर्ग[11] कूटरूप[12]कारकं मन्येत तं सत्त्री शिष्यत्वेन सं[13]व्यवहारेण चानुप्रवि[14]श्य प्रज्ञा[15]पयेत् ।

२०. अथवा जिस अनेक प्रकार के लोहों, क्षारों एवं अंगार, भस्त्रा, संदंश, मुष्टिका, अधिकरणी, बिम्ब, टङ्क, मूषा का बार-बार क्रयकर्ता और कालिख, भस्म धूम से चिह्नित हाथ एवं वस्त्र वाले जिस लोहाकार सामग्री से युक्त जिस व्यक्ति को कूटरूपकारक जाने, उसके विषय में शिष्य भाव से, व्यवहार द्वारा सब बातों को जानकर, राजा को ज्ञात कराये ।

प्रज्ञात[1]: कूटरूपकारक इति प्रवा[2]स्येत ।

२१. सम्यक् रूप से ज्ञात होने पर कूटरूपकारक जानकर प्रवासित करे ।

तेन रागस्यापहर्ता कूटसुवर्णव्यवहारी[1] च व्याख्यातः ।

२२. उक्त प्रकार से राग का अपहर्ता कूट सुवर्ण व्यापारी की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

पाठ भेद :

तंजौर में '–संदंशमुष्टिका०' का '–संदंशमूषिका०', '–बिम्बटङ्क–' का '–बबटङ्क–', 'अभीक्ष्णक्रेतारं' का 'अभीक्ष्णं क्रेतारं', 'मषीभस्म–' का 'मुषीभष्म–' तथा तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '–संसर्ग' का '–संवर्ग' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) लोह : लोहा ।

(२) क्षार : खाड़, चीनी आदि ।

(३) अङ्गार : कोयला ।

(४) भस्त्रा : धौंकनी, भापी ।

(५) संदंश : सड़सी ।

(६) मुष्टिका : हथौड़ी । ग० २:१३ ।

(७) अधिकरणी : निहाई । गण० १:२२८, २:१३७ ।

(८) बिम्ब : प्रतिमा या अक्षर का ठप्पा सांचा । इसका अर्थ चिह्न विशेष भी किया गया है । जिससे मुद्रा टंकित की जाती है । द्र० १३:२:१९, ४:१०;५, गण० २:१६५ ।

(९) टंक : छेनी ।

(१०) मूषा : गर्म करने का भाण्ड विशेष या घरिया ।

(११) संसर्ग : द्र० ४:६:२,१८, गण० २:१३७ ।

(१२) कूटरूपकारक : जाली मुद्रा बनाने वाला ।

(१३) संव्यवहार : द्र० १:९:३ ।

(१४) अनुप्रविश्य : द्र० १:१७:३९ ।

(१५) प्रज्ञापयेत् : भेद जान ले ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) प्रज्ञात : पहचान लिए जाने या विदित हो जाने पर ।

(२) प्रवास : परदेश, बाहर, विदेश, निर्वासन । गण० ३:९७ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) कूटसुवर्णव्यवहारी : नकली सोने का व्यापारी । स्कन्द० ४:८:७९, अग्नि० २५८:७५-७६, याज्ञ० २:२९७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आरब्धास्तु हिंसायां गूढाजीवास्त्रयोदश।
प्रवास्या निष्क्रयार्थं वा दद्युर्दोषविशेषतः॥

२३ हिंसाकारी तेरह गूढाजीवियों को प्रवासित किया जाय अथवा दोषानुसार उनपर अर्थ दण्ड अरोपित किया जाय अर्थात् वे अर्थ दण्ड दें।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे गूढाजीविनां रक्षा चतुर्थोऽध्यायः। आदित एकाशीतितमः।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टकशोधन में गूढाजीवियों की रक्षा से सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त। आदि से एक्यासीवां अध्याय समाप्त।

पादटिप्पणी :

२३. (१) गूढ़ाजीव : द्र० ४:४:५।

(२) त्रयोदश : १. धर्मस्थ, २. प्रदेष्टा, ३. ग्राममुखिया, ४. ग्राम का अध्यक्ष, ५. कूटसाक्षी, ६. कूटश्रावक, ७. वशीकरण या संवनन कर्ता, ८. कृत्या शील, ९. अभिचार शील, १०. विष देने वाला या रसद, ११. मदनयोग व्यवहर्ता, १२. कूट रूप कर्ता, १३. कूट सुवर्ण व्यवहारी।

(३) प्रवास : निर्वासन।

(४) निष्क्रय : दण्डरूप से निर्धारित हर्जाना या अपने छुटकारों के लिए धन अपराध की गम्भीरता के अनुसार दें।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः गूढाजीविनां रक्षा, आदित एकाशीतितमः।'

मैसूर संस्करण में—इति कण्टकशोधने गूढजीविनां रक्षा चतुर्थोऽध्यायः, आदित एकाशीतिः।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः गूढाजीविनां रक्षा, आदित एकाशीतितमः।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे गूढाजीविनां रक्षा चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥ आदित एकाशीतिः ॥८१॥'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अशीतितमं प्रकरणम्—सिद्धव्यञ्जनैर्माणवप्रकाशनम्

८०वां प्रकरण—सिद्धव्यञ्जनों द्वारा माणव प्रकाशन

अध्याय ५

सत्त्रिप्रयोगादूर्ध्वं सिद्धव्यञ्जना माणवान्माणवविद्याभिः प्रलोभयेयुः, प्रस्वापनान्तर्धानद्वारापोहमन्त्रेण प्रतिरोधकान्, संवदनमन्त्रेण पारतल्पिकान् ।

१. सत्री प्रयोग के पश्चात् सिद्धवेशधारी गुप्तचर माणवों (दुर्जनों) को माणव विद्याओं से एवं प्रस्वापन, अन्तर्धान एवं द्वारापोह (द्वार खोलना) के मन्त्र से प्रतिरोधकों (चोरों) तथा वशीकरण मन्त्र से पारतल्पिकों को प्रलोभित करें ।

तेषां कृतोत्साहानां महान्तं संघमादाय रात्रावन्यं ग्राममुद्दिश्यान्यं ग्रामं कृतकस्त्रीपुरुषं गत्वा ब्रूयुः—'इहैव विद्याप्रभावो दृश्यताम्, कृच्छ्रः परग्रामो गन्तुम्' इति ।

२. उन उत्साही दुर्जनों का समूह साथ लेकर, रात्रि में अन्य ग्राम में जाने का उद्देश्य करके, अन्य ग्राम में जहाँ संकेत प्राप्त स्त्री पुरुष पूर्व से स्थित हों, वहाँ जाकर कहें—'यही पर विद्या का प्रभाव देखिए, अन्य ग्राम में जाना कठिन है ।'

पाठ भेद :

'माणवान्' का पाठभेद तंजोर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि में 'माणवा', प्रस्वापना०' का तंजोर में 'प्रस्थापना०' और 'संवदन' का तंजोर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'संवनन–' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) माणव : दुष्ट युवक, अपराधी, डकैत, पर स्त्री गामी । गण० १:११, २:३९ ।

(२) माणवविद्या : सम्मोहन विद्या, पाणिनि पर पतंजालिभाष्य ४:१:१६ । जादू की विद्या जो डकैतों के लिए उपयोग होती है । पाणिनी भाष्य ।

(३) प्रस्वाप : निद्रा ।

(४) प्रतिरोधकान् : चोरों को ।

(५) संवदन : द्र० ४:४:१४ । गण० २:१३९।

(६) पारतल्पिक : पारदारिक, व्यभिचारी, दूसरे की शय्या या विस्तरे पर सोने वाला ।

पाठभेद :

'कृतकस्त्री–' का पाठभेद तंजोर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि के पादटिप्पणी में 'कृतकास्त्री–' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) कृतक : द्र० १:५:३ ।

(२) कृच्छ्र : कठिन, कष्टकर । मनु० ६:७८, स्कन्द० ६:५३:८३, भाग० १:१८:४९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ततो द्वारापोहमन्त्रेण द्वाराण्यपोह्य 'प्रविश्यताम्' इति ब्रूयुः ।

३. तत्पश्चात् द्वारापोह मन्त्र से द्वारों को खोलकर 'प्रवेश कीजिए' इस प्रकार कहें ।

अन्तर्धानमन्त्रेण जाग्रतामारक्षिणां मध्येन माणवानतिक्रामयेयुः ।

४. अन्तर्धान मन्त्र से जागते आरक्षी पुरुषों के मध्य से माणवों को निर्गत करें ।

प्रस्वापनमन्त्रेण प्रस्वापयित्वा रक्षिणः शय्याभिमणिवैः संचारयेयुः ।

५. प्रस्वापन मन्त्र से रक्षा पुरुषों को सुला कर शय्याओं के साथ उन्हें माणवों द्वारा संचरण करायें ।

संवदनमन्त्रेण भार्याव्यंञ्जनाः परेषां माणवैः संमोदयेयुः ।

६. संवदन मन्त्र द्वारा दूसरों की कृत्रिम भार्याओं को माणवों के साथ संगमसुख प्राप्त करायें ।

पादटिप्पणी :

३. (१) अपोह : हटाना, यहाँ द्वार खोलने से तात्पर्य है । गण० १:३४ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) अन्तर्धानमन्त्र : जिस मन्त्र के कारण दूसरे की दृष्टि से लोग अदृष्ट हो जाते हैं ।

(२) रक्षिणः : रक्षकों के मध्य से ।

सन् १९०५ के पश्चात जब भारत आजाद नहीं हुआ था भारत को आजाद कराने के लिए क्रान्तिकारियों के अनेक संघटन बने थे । अंग्रेजों को गोली मार दी जाय और मारने वाला अदृश्य रहे । इस विद्या का अध्ययन एक क्रान्तिकारी के द्वारा आरम्भ किया गया । सन् १९२३ की बात है । मैं जेल से लौटा था । बंगाल के एक क्रान्तिकारी बंगाली काशी आये थे । उन्होंने इस विद्या को जानने के लिए खोज आरम्भ किया । अस्सी पर एक तान्त्रिक श्री भागवत नामक रहते थे । मैं इनके साथ उनके वहाँ गया । उन्होंने कहा, यह एक विद्या है । पहले साधन की आवश्यकता है । साधन कठिन था । इसलिए क्रान्तिकारी सज्जन लौट गये ।

पादटिप्पणी :

५. (१) प्रस्वापन : निद्रित करना, सुला देना ।

(२) त्वा का प्रयोग १४ स्थानों पर कौटिल्य ने किया है । १. १:१८:१५, २. ४:५:५, ३. ४:१२:३६, ३८, ४. ५:२:४५, ५. ५:२:५२, ६. ५:२:५९, ७. ५:६:१६, ८. ७:१७:३३, ९. १२:४:४, १०. १३:२:१९, ११. ३:३:१६,२६, १२. १३:४:१९, १३:४:२०, १३. १२:४:३, १३:४:५०, १४. १४:३:३१,४५,५६ ।

पाठ भेद :

'संवदन-' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'संवेदन-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) संवदनमन्त्र : जादू-मन्त्र आदि द्वारा वश में करना ।

संवदन मन्त्र का प्रयोग प्रायः स्त्रियों के प्रेम को जीतने के लिए किया जाता था । द्र० ४:५:१-६ ।

(२) भार्याव्यञ्जना : छद्म वेष धारिणी पत्नी । गण० २:३५५ ।

(३) माणव : अपराधी । द्र० ४:५:१, गण० १:११, २:३९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपलब्धविद्याप्रभावाणां पुरश्चरणाद्यादिशेयुः अभिज्ञानार्थम् ।

७. विद्या का प्रभाव जान लेने वाले उन लोगों को अभिज्ञानार्थ पुरश्चरण आदि करने का आदेश दें ।

कृतलक्षणद्रव्येषु वा वेश्मसु कर्म कारयेयुः ।

८. अथवा चिह्नों से युक्त गृहों में उनसे कर्म (चोरी आदि) करायें ।

अनुप्रविष्टा वैकत्र ग्राहयेयुः ।

९. एक ही स्थान पर प्रविष्ट उन्हें पकड़वा दें ।

कृतलक्षणद्रव्यक्रयविक्रयाधानेषु योगसुरामत्तान्वा ग्राहयेयुः ।

१०. चिह्न युक्त द्रव्यों के क्रय, विक्रय एवं आधान के अवसर पर अथवा योगसुरा से प्रमत्त उन्हें (माणकों को) पकड़वायें ।

गृहीतान् पूर्वापदानसहायाननुयुञ्जीत ।

११. पकड़े गये उन लोगों से उनके पूर्वकृत दुष्कृत्यों (चोरी) एवं सहायकों के विषय में प्रश्न करें ।

पुराणचोरव्यञ्जना वा चोराननुप्रविष्टास्तथैव कर्मकारयेयुर्ग्राहयेयुश्च ।

१२. अथवा पुरातन चोर वेशधारी गुप्तचर चोरों में सम्मिलित होकर उनसे उसी प्रकार चौरकर्म करायें तथा उन्हें पकड़वायें ।

पादटिप्पणी :

७. (१) पुरश्चरण : आरम्भिक या दीक्षा-विषयककृत्य, किसी देवता के नाम का जप तथा हवन में आहुति । श० ब्रा० ४:६:७:२९ ।

किसी कार्य की सिद्धि के लिए पहले से ही उपाय सोचना और अनुष्ठान करना । हवनादि के द्वारा किसी विशिष्ट देवता का नाम जप, किसी मन्त्र-स्तोत्रादि को किसी अभीष्ट कार्य की सिद्धि के लिए किसी समय और परिमाण तक नियम पूर्वक जप या पाठ करना ।

(२) अभिज्ञान : पहचान, सीखना, बताना, परिचयपत्र, पहचान का कार्ड, पहचान की मुहर । द्र० २:२१:२,२६ ।

पादटिप्पणी :

८. (१) कृतलक्षणद्रव्येषु : स्वामी के चिह्न से अंकित द्रव्य । मत्स्य० २२७:२३-२४ ।

पाठ भेद :

'अनुप्रविष्टा' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'अनुप्रविष्टान्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) एकत्र : एक जगह ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) आधान : बन्धक, गिरो रखना । याज्ञ० २:२३८, अग्नि० २५८:३३ । गण० ३:१२२ ।

(२) योगसुरा : मिश्रित शराब या मादक द्रव्य ।

पादटिप्पणी :

११. (१) पूर्वापदान : पहले किए अपराध । द्र० २:३६:३६, ३:१२:३५ ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) पुराणचोरव्यञ्जन : पुराने चोर या तस्कर का वेष धारण करने वाला पूर्व तस्कर । मनु० २:२६७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गृहीतान् समाहर्ता पौरजानपदानां दर्शयेत्—'चोरग्रहणीं विद्यामधीते राजा, तस्योपदेशादिमे चोरा गृहीताः, भूयश्च ग्रहीष्यामि, वारयितव्यो वः स्वजनः पापाचारः' इति ।

१३. समाहर्ता गृहीत चोरों को, पौरजानपदों को दिखाये और इस प्रकार कहे—'राजा चोरग्रहणी विद्या जानता है, उसी के उपदेश से ये चोर पकड़े गये हैं, (पुनः ऐसे लोगों को) पकड़ूँगा, तुमलोग पापाचार से स्वजन को निवारित करना ।'

यं चात्रापसर्पोपदेशेन शम्याप्रतोदादीनामपहर्तारं जानीयात् तमेषां प्रत्यादिशेत् 'एष राज्ञः प्रभावः' इति ।

१४. गुप्तचर द्वारा जिसे शम्या एवं प्रतोद आदि का अपहरणकर्ता जाने उसे पौरादिजनों को बताये 'यह राजा का प्रभाव है ।'

पुराणचोरगोपालकव्याधश्वगणिनश्च वनचोराटविकाननुप्रविष्टाः प्रभूतकूटहिरण्यकुप्यभाण्डेषु सार्थव्रजग्रामेष्वेनानभियोजयेयुः ।

१५. पुरातन चोर, गोपालक, व्याध, श्वगणीजन (के वेश में गुप्तचर) वन चोरों एवं आटविकों में प्रविष्ट होकर (विश्वास प्राप्त कर) प्रचुर कूटहिरण्य एवं कुप्यभाण्ड युक्त सार्थव्रजों तथा ग्रामों में (चोरी के लिये) इन्हें उद्यत करें ।

पाठ भेद :

'पापाचारः' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'पापापचारः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) समाहर्ता : प्रशासक से यहाँ तात्पर्य है । गण० १:५० ।

(२) पौर : नागरिक ।

(३) जानपद : देश के लोगों से या जनपद के लोगों से । अग्नि० २५३:६२, याज्ञ० २:३६ ।

सूत्र का अभिप्राय यह है कि लोगों को सीधे मार्ग पर ले जाकर, राजा या राज्य या उसके शक्ति के प्रति विश्वास उत्पन्न कराया जाय । द्र० ४:५:१३, १४,१८ ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) अपसर्प : गुप्तचर या शत्रु देश में जाने वाला गुप्तचर । द्र० १:१२:१७,२५ । गण० १:२३, ३:१०५ ।

(२) शम्या : जुए की कील, डंडा या लकड़ी छड़ी या घूणी । गण० २:१४१ ।

(३) प्रतोद : बैल हांकने की छड़ी, पैना या पैनी या अंकुश, लम्बा चाबुक ।

(४) प्रत्यादिशेत : द्र० १:११:४ ।

(५) राज्ञः प्रभाव : राजा की शक्ति, राजा के अधिकार में ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) श्वगणि : शिकारी कुत्ते रखने वाले शिकारी ।

(२) सार्थ : कारवाँ, व्यापारियों का समूह, सौदागरों की टोली । म० भा० ३:६४:१११, रघु० १७:६४ । गण० ३:११३,१९८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभियोगे गूढबलैर्घातयेयुः, मदनरसयुक्तेन वा पथ्यदनेन ।

१६. अभियोग करने पर गूढबलों द्वारा अथवा मदनरसयुक्त पथ्य प्रदान द्वारा उन्हें मरवा दें।

गृहीतलोप्त्रभारानायतगतपरिश्रान्तान् प्रस्वपतः प्रहवणेषु योगसुराम-त्तान्वा ग्राहयेयुः ।

१७. चोरी का सामान लिए, दूर की यात्रा से परिश्रान्त शयन करते अथवा प्रहवणों में योगसुरा से प्रमत्त (उन्हें) पकड़वा दें।

पूर्ववच्च गृहीत्वैनान् समाहर्त्ता प्ररूपयेत् ।
सर्वज्ञख्यापनं राज्ञः कारयन् राष्ट्रवासिषु ॥

१८. उन्हें पकड़कर समाहर्ता पूर्ववत् राष्ट्रवासियों को दिखाये तथा राजा की सर्वज्ञता का ज्ञापन करें।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे सिद्धव्यञ्जनैर्माणवप्रकाशनम् पञ्चमो-ऽध्यायः । आदितो द्वयशीतितमः ।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टकशोधन में सिद्ध व्यञ्जनों द्वारा माणव प्रकाशन नामक पञ्चम अध्याय समाप्त। आदि से बयासीवां अध्याय समाप्त।

पाठ भेद :

'पथ्यदनेन' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'पथ्यादनेन' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) गूढबल : छिपे या गुप्त सैनिक।

(२) मदनरस : विषाक्तपेय, बेहोश करने वाली औषधि, पागलपन पैदा करने वाला पेय। द्र० १:१८:९, ४:३:३८। गण० २:१३२।

(३) पथ्यदनेन : यात्रा के लिए खाना, रसद आदि सामान या मार्ग व्यय। द्र० २:१६:२४, ७:१७:५९।

पाठ भेद :

'गृहीत–' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि के पादटिप्पणी में 'अनुगृहीत–' तथा '–लोप्त्र–' का त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि के पादटिप्पणी में '–लोप्तृ–' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१७. (१) लोप्त्र : चुरायी सम्पत्ति या सामान या माल। द्र० १३:३:५३, गण० ३:१९९।

(२) प्रस्वपतः : सोये हुए।

(३) प्रहवण : उत्सव, प्रीतिभोज। द्र० १:१०:९, १:२०:२८, गण० २:३५६, ३:१७७,१८५।

पादटिप्पणी :

१८. (१) सर्वज्ञ : यह कर्मवाच्य कृदन्त शब्द है परन्तु इसका प्रयोग कर्तृवाच्य भाव में किया गया है। द्र० १:८:६।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे पञ्चमोऽध्यायः सिद्धव्यञ्जनैर्माणवप्रकाशकम्, आदितो द्वयशीतितमः।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने सिद्धव्यञ्जनैर्माणवप्रकाशनं पञ्चमोऽध्यायः आदितो द्वयशीतिः।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे पञ्चमोऽध्यायः सिद्धव्यञ्जनैर्माणवप्रकाशनम्, आदितो द्वयशीतितमः।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे सिद्धव्यञ्जनैर्माणवप्रकाशनं पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥ आदितो द्वयशीतिः ॥८२॥'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एकाशीतितमं प्रकरणम्—शङ्कारूपकर्माभिग्रहः

८१वां प्रकरण—शङ्कारूपकर्माभिग्रह

अध्याय ६

सिद्धप्रयोगादूर्ध्वं शङ्कारूपकर्माभिग्रहः ।

१. सिद्ध प्रयोग के पश्चात् शङ्कारूप कर्माभिग्रह ।

क्षीणादायकुटुम्बम्, अल्पनिर्वेशं, विपरीतदेशजातिगोत्रनामकर्मापदेशं, प्रच्छन्नवृत्तिकर्माणं, मांससुराभक्ष्यभोजनगन्धमाल्यवस्त्रविभूषणेषु प्रसक्तम्, अति-

२. क्षीण सम्पत्ति एवं कृषि वाले, अल्पवैतनिक, विपरीत देश, जाति, गोत्र का विपरीत कथन करने वाले, प्रच्छन्नवृत्ति कर्मकर्ता, मांस, सुरा भक्ष्य-भोजन, गन्ध-माल्य-वस्त्र, आभूषण आदि में आसक्त, अतिव्ययशील, पुंश्चली, द्यूत एवं शौण्डिकों में प्रसक्त, अनेकशः प्रवासी, अज्ञात स्थान

पाठ भेद :

'–कर्माभिग्रहः' का पाठभेद तंजौर में '–कर्माभिग्रहं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) शंका : शंकितों की गिरफ्तारी । गण० २:१५४ ।

(२) रूप : चोरी गया सामान ।

(३) कर्म : चोरी का कार्य ।

(४) अभिग्रह : धर-पकड़, छीनना, लूटना, गिरफ्तारी । गण० १:१५ ।

(५) सिद्ध : इस शब्द का इस अध्याय से कुछ सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता । देवताओं का एक विशेष वर्ग है । यह उपदेव तथा देवयोनि वर्ग में आते हैं । अणिमा, महिमा आदि गुणों से युक्त विश्वावसु आदि इसमें सम्मिलित हैं । वायु पुराण के अनुसार इनकी संख्या ८८००० हैं । एक कल्प तक के लिए अमर कहे गये हैं । वायु० १००:२१० । द्र० २:१५:२४, २:८:१८,२१, २:६:१३,१५, १:११:१६, १३:२:७: १०, अमर० १:१:११:११, गण० १:१३९, ३:१७७ ।

पाठ भेद :

तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '-स्थानगमनम्' का पाठभेद '-स्थान गमनपण्यम्', '-प्रतीकारकारयितारम्' का '-प्रतीकार-यितारम्', 'छन्नकुड्यच्छाया-' का त्रिवेन्द्रम् में 'छन्नकुड्यच्छाया', 'नागरिकमहामात्र-' का तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि में 'नागरिकं महामात्र-', 'शस्त्रहस्तमनुष्य-' का मलयालय नागरी अनुलिपि में 'शस्त्रहस्तं मनुष्य-' और '-परप्रयोग-' का भाषाव्याख्यान में '-वरप्रयोग-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) क्षीणदायकुटुम्बम् : जिसकी पारिवारिक सम्पत्ति क्षीण होती जाती है ।

(२) अल्पनिर्वेश : अल्पवेतन ।

(३) विपरीत : अन्यथा, कल्पित ।

(४) अपदेश : कथन या घोषणा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्ययकर्तारं, पुंश्चलीद्यूतशौण्डिकेषु प्रसक्तम्, अभीक्ष्णंप्रवासिनम्, अविज्ञातस्थान-गमनम्, एकान्तारण्यनिष्कुँटविकालंचारिणं, प्रच्छन्ने सांमिषे वा देशे बहुम[10]न्त्रण-संनिपातं[11], सद्यःक्षतव्र[12]णानां गूढप्रतीकार[13]कारयितारम्, अन्त[14]र्गृहनित्यम्, अभ्य[15]धिगन्तारं, कान्तापरं, परपरिग्रहाणां परस्त्रीद्रव्यवेश्मनामभीक्ष्णप्रष्टारं, कुत्सितक[16]र्मशास्त्रोपकरणसंसर्गं, विरात्रे[17] छन्नकुड्य[18]च्छायासंचारिणं, विरूपद्रव्याणामदेशकालविक्रेतारं, जातवैराशयं, हीनकर्मजातिं, विगू[19]हमानरूपं, लिङ्गे[20]ना-

पर गमनकारी, एकान्त वन एवं गृहोद्यान में असमयविचरणकर्ता, प्रच्छन्न अथवा सम्पत्ति युक्त (गृह) स्थान पर बहुत चिन्तन करने वाले, ताजे घाव की गुप्त रूप से चिकित्सा कराने वाले, नित्य गृह के अन्दर रहने वाले, सहसा सामने से परावृत्त होने वाले, स्त्री प्रसक्त, दूसरों के परिजन, स्त्री-द्रव्य एवं गृह के विषय में बार-बार पूछने वाले कुत्सित कर्म सम्बन्धी शास्त्र एवं सहायक सामग्री से युक्त, अर्धरात्रि में गुप्त रूप से दीवाल की छाया में संचरणकर्ता, विकृत स्वरूप वाले द्रव्यों को अनुचित स्थान एवं समय पर विक्रय करने वाले, वैरभावयुक्त, हीन कर्म एवं जाति वाले, अपना स्वरूप छिपाने वाले, लिङ्गे नालिङ्गी अथवा भिन्नाचार युक्त लिङ्गी, पूर्व कृतापदान, स्वकर्मों से

---

(५) शौण्डिक : मद्य विक्रेता, महाभारत में एक जाति के लिये आया है। नारद० १४:१८, १३:३५, १७,१८, गण० ३:१६७।

(६) अभीक्ष्णप्रवासिनस् : निरन्तर प्रवासी या परदेश यात्रा करने वाला।

(७) निष्कुट : गृह उद्यान।

(८) विकाल : सन्ध्याकाल या असमय।

(९) सामिष : द्रव्यसहाय सम्पन्न।

(१०) बहुमन्त्र : बहुत प्रकार से मन्त्रणा करते हुए।

(११) संनिपात : मिलना।

(१२) सद्यः क्षतव्रण : ताजे घाव।

(१३) प्रतिकारकारयिता : द्र० २:३६:१०।

(१४) अन्तर्गृह : सर्वदा घर के अन्दर रहने वाला।

(१५) अभ्यधिगन्तारम् : इसका अर्थ निश्चित नहीं है। परन्तु श्रीमूल में अर्थ किया गया है कोई सहसा एक तरफ हो जाता है, जब कोई व्यक्ति, उसकी तरफ आता है। इसका अर्थ यह भी किया गया है कि जब कोई व्यक्ति चोरी से उसकी या उसके मकान की तरफ आता है।

(१६) कुत्सितकर्मशास्त्रोपकरण : कुत्सित ऐन्द्रिजालिक सम्प्रदाय या विद्या। स्कन्द० ६:२७: ९३-९४।

(१७) विरात्र : रात्रि में अनुचित समय।

(१८) छन्नकुड्यच्छाया : छिपकर दीवाल की छाया में।

(१९) विगूह : गुप्त, छिपाना।

(२०) लिङ्गेनालिङ्गनम् : साधू न होने पर।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिङ्गिनं, [२१]लिङ्गिनं वा भिन्नाचारं, पूर्वंकृता[२२]पदानं, स्वकर्म[२३]भिरपदिष्टं, नागरिक-महामा[२४]त्रदर्शने गूहमान[२५]मपसर[२६]न्तमनुच्छ्वासोपवेशिनमाविग्नं शुष्कभिन्नस्वर-मुखवर्णं, शस्त्रहस्तमनुष्यसंपातत्रासिनं, हिंस्रस्तेननिधिनिक्षेपापहार[२७]परप्रयोग[२८]गूढा[२९]-जीविनामन्यतमं शङ्केत ।

अपदिष्ट (कुख्यात), नागरिक महामात्र को देखने पर अपने को छिपाते, अपसृत होते हैं, बिना उच्छ्वास के बैठने वाले, उद्‌विग्न, शुष्क एवं भिन्न स्वर और मुखवर्ण वाले, शस्त्रधारी पुरुष के आगमन से भय युक्त व्यक्ति को हिंसक, चोर, निधि-निक्षेपापहरणकर्ता, क्रोधवश शस्त्र प्रयोगकर्ता एवं गूढ़ाजीवियों में किसी एक की शङ्का की जाय।

इति शङ्काभिग्रहः ।

शंकाभिग्रह समाप्त।

रूपाभिग्रहस्तु—नष्टापहृतमविद्यमानं तज्जातव्यवहारिषु निवेदयेत् ।

३. रूपाभिग्रह—नष्टापहृत वस्तु के न मिलने पर उसके व्यापारियों को सूचित किया जाय।

तच्चेन्निवेदितमासाद्य प्रच्छादयेयुः साचिव्यकरदोषमाप्नुयुः ।

४. यदि वे सूचना प्राप्त कर भोड़ से छिपायें तो सचिव्र कर दोष के भागी बनें।

---

(२१) लिङ्गी : ब्रह्मचारी प्रभृति चिह्नभूषित। इसका अर्थ यह भी होगा, जिसके कपाल पर लिङ्ग का चिह्न लगा हो।

(२२) पूर्वंकृतापदान : द्र० ४:८:२३६।

(२३) स्वकर्मभिरपदिष्ट : जो अपराध या कर्म करते समय नहीं पकड़ा जाता किन्तु जिसका कार्य संदेह जनक होता है।

(२४) महामात्र : गण० १:४९, १३३।

(२५) गूह मान : छिपना। द्र० मनु० ९:२५९।

(२६) अपसरण : भागना, पलायन।

(२७) अपहार : गूढ़ आजीविका या गुप्त धन से तात्पर्य है। इसके अन्तर्गत चोरी या स्तेय आता है इसे उपपातक माना गया है। भविष्य० १:१९०: ११। गण० १:१५४।

(२८) परप्रयोग : शत्रु द्वारा सेवा में रखा गया एक प्रतिनिधि या व्यक्ति। भाषा व्याख्यान में इसका अर्थ शस्त्रयुक्त किया गया है।

(२९) गूढ़ाजीव : जिसके पास गुप्त आमदनी का स्रोत है। या जो गुप्त रूप से धनार्जन करता है। द्र० २:२७:२५, ३:१:१०, ३:२०:२, ४:४:५-२३, नारद० १४:१८।

उक्त कार्य करने वालों के प्रति शंका उत्पन्न होती है कि वह या तो अपराध किया है या करने वाला है। अतएव उसको गिरफ्तार किया जा सकता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) रूपाभिग्रह : चोरी के सामान के साथ पकड़ा गया। जो व्यक्ति अपने को निर्दोष साबित न कर सके कि उसके पास सामान कहाँ से आया है, तो उसे चोर समझकर, दण्डित किया जा सकता है। द्र० ४:६:३:-१५।

पादटिप्पणी :

४. (१) साचिव्यकर : सहायक, उपसाधक, सह अपराधी या जो कोई अपराधी की सहायता करता है। गण० ३:१८४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अजानन्तोऽस्य द्रव्यस्योतिसर्गेण मुच्येरन् ।

५. न जानने वाले वह, द्रव्य देकर दण्ड से मुक्त हों ।

न चानिवेद्य संस्थाध्यक्षस्य पुराणभाण्डानामाधानं विक्रयं वा कुर्युः ।

६. संस्थाध्यक्ष को बिना निवेदित किये प्राचीन भाण्डों का आधान अथवा विक्रय न करें।

तच्चेन्निवेदितमासाद्येत, रूपाभिगृहीतमागमं पृच्छेत् 'कुतस्ते लब्धम्' इति ।

७. यदि वह निवेदित वस्तु प्राप्त हो तो, रूपाभिगृहीतजन से उसका आगम पूछे 'तुम्हें (यह वस्तु) कहाँ से प्राप्त हुई ?'

स चेद् ब्रूयात् 'दायाद्यादवाप्तम्, अमुष्माल्लब्धम्, क्रीतं कारितम्, आधिप्रच्छन्नम्, अयमस्य देशः कालश्चोपसंप्राप्तेः, अयमस्यार्घः प्रमाणं लक्षणं मूल्यं च' इति, तस्यागमसमाधौ मुच्येत ।

८. यदि वह कहे 'दायाद्य से प्राप्त किया, अमुक से प्राप्त किया, खरीदा, निर्मित कराया, धरोहर के कारण प्रच्छन्न था, यह उसका प्राप्ति स्थान तथा समय है, यह उसका मूल्य, प्रमाण, लक्षण और मूल्य है—उस प्रकार उसके आगम का उचित समाधान होने पर, वह दोष मुक्त किया जाय ।

पादटिप्पणी :

५. (१) अतिसर्गेण : (द्रव्य) देकर । द्र० ३:१६:१३ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) संस्थाध्यक्ष : बाजार का अध्यक्ष । गण० १:५५,६१ ।

(२) आधान : बन्धक, गिरवी, रेहन । अग्नि० २४८:३३, याज्ञ० २:२३८, द्र० ३:९:३४, गण० ३:१२२ ।

पाद टिप्पणी :

७. (१) रूपाभिगृहीत : माल के सहित पकड़ा जाना । द्र० ३:१६:१२, ४:६:३ ।

पादटिप्पणी :

८. (१) दायाद्यात् : उत्तराधिकार से ।

(२) अमुष्मा : अमुक व्यक्ति या स्थान से प्राप्त ।

(३) आधिप्रच्छन्न : गुप्त या छिपाकर रखा गया धरोहर । इसमें तथा आधितक में अन्तर है । द्र० २:१०:४१, ३:१२:८, ३:१४:१३ । गण० २:८७ ।

(४) अर्घ : विक्रय मूल्य । अग्नि० २५८:४०, याज्ञ० २:२४९ ।

(५) मूल्य : लागत मूल्य ।

(६) आगम : अभिग्रहण, अवाप्ति, प्राप्ति, उपलब्धि ।

(७) समाधौ : संपुष्ट करना, पुष्टीकरण । गण० २:३४७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नाष्टिकश्चेत्तदेव प्रतिसंदध्यात्, यस्य पूर्वो दीर्घश्च परिभोगः शुचिर्वा देशस्तस्य द्रव्यमिति विद्यात् ।

९. यदि नाष्टिक भी वही समाधान प्रस्तुत करे तो, जिसका पूर्वकाल में लम्बे समय तक उपयोग का अनुभव हो अथवा विश्वसनीय साक्षी हो, उसका द्रव्य माना जाय ।

चतुष्पदद्विपदानामपि हि रूपलिङ्गसामान्यं भवति, किमङ्ग पुनरेकयोनि-द्रव्यकर्तृप्रसूतानां कुप्याभरणभाण्डानामिति ।

१०. चतुष्पदों एवं द्विपदों में भी रूप, लिङ्ग की समानता होती है अतएव एक प्रकार के द्रव्यनिर्माता द्वारा निर्मित कुप्याभरणभाण्डों में समानता के विषय में कहना ही क्या ? अर्थात् उनमें समानता सम्भव है ।

स चेद्ब्रूयात् 'याचितकमवक्रीतकमाहितकं निक्षेपमुपनिधिं वैयावृत्यकर्म वाऽमुष्य' इति, तस्यापसारप्रतिसंधानेन मुच्येत ।

११. यदि वह कहे 'याचित, अवक्रीत, आहितक (बदले में लिया), निक्षेप (धरोहर या गिरवी में), उपनिधि (रक्षार्थ प्रदत्त) अथवा वैयावृत्यकर्म में अमुक से प्राप्त है' तो उसके (अपसार) प्राप्ति स्रोत व्यक्ति से उचित समाधान करने पर मुक्त करे ।

पादटिप्पणी :

९. (१) नाष्टिक : जिसने सामान खो दिया है ।

(२) देश : स्वामित्व का प्रमाण । द्र० ३:१६:२९, मनु० ११:१८८, गण० २:९७, ३:४५ ।

पाठ भेद :

'चतुष्पद-' का पाठभेद तंजौर में 'चतुष्पदानाम्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) चतुष्पद : चार पादों वाला । व्यवहार का एक विशेषण है । जिसके चार पाद—१. धर्म, २. लोकव्यवहार, ३. चरित्र एवं ४. राजशासन हैं । इनमें से धर्म सत्य पर, व्यवहार साक्षियों पर, चरित्र पुरुषों के संग्रह पर तथा राजशासन राजा की आज्ञा पर निर्भर कहा गया है । द्र० अग्नि० २५३:१-५ ।

(२) रूपलिंग : रूप एवं चिह्न ।

(३) एकयोनि : एक ही स्रोत या मूल ।

पाठ भेद :

'तस्यापसार-' का पाठभेद तंजौर की पादटिप्पणी में 'तस्यावसर-' एवं त्रिवेन्द्रम् तथा मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'तस्यापसर-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) याचितक : उधार लिया हुआ ।

(२) अवक्रीत : किराया पर लिया हुआ ।

(३) वैयावृत्यकर्म : सहायता देना, सेल एजेण्ट या दूसरे की तरफ से बेचना । द्र० ४:११:९, ३:१२:२५ ।

(४) अपसार : एक व्यक्ति का दूसरे को बेकसूर साबित करना । द्र० ३:१६:१५, ४:८:३, ७:८:१५, ८:४:१३, गण० २:३३७,३४०, ३:२६,१०७, १११ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'नैवम्' इत्यपसारो वा ब्रूयात्' रूपाभिगृहीतः परस्य दानकारणमात्मनः प्रतिग्रहकारणमुपलिङ्गनं वा दायकदापकनिबन्धकप्रतिग्राहकोपद्रष्टृभिरुपश्रोतृभिर्वा प्रतिसमानयेत् ।

१२. यदि अपसार पुरुष यह कहे 'ऐसा नहीं' तो रूपाभिगृहीत दूसरे के प्रदान कारण तथा अपना प्रतिग्रह कारण अथवा उपलिङ्गन दायक, दापक, निबन्धक, प्रतिग्राहक रूपद्रष्टा और उपश्रोताओं द्वारा उसका निरूपण कराये ।

उज्झितप्रनष्टनिष्पतितोपलब्धस्य देशकाललाभोपलिङ्गनेन शुद्धिः ।

१३. उज्झित, प्रनष्ट एवं निष्पतित की उपलब्धि की देश, काल एवं लाभ का उचित प्रमाण देने से शुद्धि हो ।

अशुद्धस्तच्च तावच्च दण्डं दद्यात् ।

१४. अशुद्ध होने पर वह, उतना और दण्ड दे ।

अन्यथा स्तेयदण्डं भजेत[2] ।

१५. अन्यथा चौर्यदण्ड का भागी बने ।

इति रूपाभिग्रहः ।

रूपाभिग्रह समाप्त है ।

पाठ भेद :

'० कोपद्रष्टृभिर्' का पाठभेद तंजोर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '०कोपदेष्टृगिर्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) उपलिङ्गनम् : प्रमाण । उदयवीर शास्त्री ने पूछताछ अर्थ किया है । द्र० ३:१२:५१, ३:१३:३७, ३:१९:२१ ।

(२) दायक : देने वाला । द्र० २:७:३१ ।

(३) दापक : जो देने के लिय कहे या दिलाये ।

(४) उपद्रष्टृभिर : व्यक्ति से जो कहता है कि सामान कब्जे में है या जिसने स्वयं प्रत्यक्ष साक्षी को देखा है या देखने वाला साक्षी । द्र० ३:११:३१ ।

(५) प्रतिसमानयेत् : निरूपण करे, अपने अधिकार को प्रमाणित करे, जो कहता है कि सामान उसके कब्जे में है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) उज्झित : त्यागी, छोड़ी ।

(२) प्रनष्ट : लुप्त ।

(३) निष्पतित : भगाना, फरार हो जाना, खो जाना । द्र० २:२७:२, ३:४:१, ३:१३:६८, गण० २:२६५ ।

(४) उपलिङ्गन : द्र० ४:६:१२ ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अन्यथा : नहीं तो ।

(२) द्र० याज्ञ० २:२६९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्माभिग्रहस्तु-मुषितवेश्मनः प्रवेशनिष्कसनमद्वारेण, द्वारस्य संधिना बीजेन वा वेधम्, उत्तमागारस्य जालवातायननीप्रवेधम्, आरोहणावतरणे च कुड्यस्य वेधम्, उपखननं वा गूढद्रव्यनिक्षेपणग्रहणोपायम्, उपदेशोपलभ्यम् अभ्यन्तरच्छेदोत्करपरिमर्दोपकरणम् अभ्यन्तरकृतं विद्यात् ।

१६. कर्माभिग्रह—चोरितगृह के अद्वार (पीछे के द्वार) से प्रवेश-निर्गमन, द्वार के सन्धि अथवा बीज से वेध, उत्तमागार (प्रोन्नत गृह) के जाल-वातायननीप्रवेध, आरोहण एवं अवतरण में दीवाल का वेध, उपखनन अथवा गुप्तद्रव्य निक्षेप ग्रहणोपाय युक्त, उपदेश द्वारा विज्ञेय, अन्दर की दीवाल छेदन की मिट्टी सम की गयी हो—इन स्थितियों से युक्त चोरी आन्तरिक जन से सम्बद्ध जाननी चाहिए ।

विपर्यये बाह्यकृतम्, उभयत उभयकृतम् ।

१७. इसके विपरीत स्थिति में बाह्यजन सम्बद्ध तथा दोनों स्थिति होने पर, दोनों प्रकार के व्यक्तियों से सम्बद्ध चोरी जाने।

अभ्यन्तरकृते पुरुषमासन्नं व्यसनिनं क्रूरसहायं तस्करोपकरणसंसर्गं, स्त्रियं वा दरिद्रकुलामन्यप्रसक्तां वा, परिचारकजनं वा तद्विधाचारम्, अतिस्वप्नं, निद्राक्लान्तम्, आविग्नं, शुष्कभिन्नस्वरमुखवर्णम्, अनवस्थितम्, अतिप्रलापिनम्,

१८. आन्तरिक जन सम्बद्ध चोरी होने पर आसन्न, व्यसनी, क्रूर सहाय, तस्कर सामग्री युक्त पुरुष, दरिद्रकुल की अथवा अन्यजनासक्त स्त्री एवं इसी प्रकार का आचरण वाला परिचारक, अतिनिद्रालु, निद्राक्लान्त, गीत, शुष्क एवं भिन्नस्वर और मुखवर्ण वाला पुरुष, अनवस्थित, अति-

---

पाठ भेद :

'-निक्षेपणग्रहणोपायम्' का पाठभेद तंजौर में '-निक्षेपग्रहणापायम्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) अभिग्रह : गिरफ्तारी । द्र० ४:६:१, गण० १:१५ ।

(२) मुषित : लूटा गया, चोरी किया गया । अपहृत ।

(३) संधि : जोड़, विवर, दरार, सेंध ।

(४) बीज : इसका अर्थ अनिश्चित है किन्तु उखाड़ना अर्थ भी हो सकता है ।

(५) वेध : छेद करना ।

(६) वातायन : खिड़की, गवाक्ष, झिलमिली ।

(७) नीप्र : रोशनदान ।

(८) गूढ़ द्रव्य : लूटा धन या द्रव्य ।

(९) उपदेशोपलभ्यम् : भीतर से प्रयास किया जा रहा है । इसी का संकेत प्रतीत होता है ।

पादटिप्पणी :

(१) उभयतः : दोनों ओर से । मनु० ८:३९५ ।

१७. (२) उभय : दोनों ।

पाठ भेद :

'निद्राक्लान्तम् आविग्नं' का पाठभेद तंजौर में 'निद्राक्लान्तमाविक्लान्तमाविग्नम्' और '०माविक्ला०' का भाषाव्याख्यान में '०माधिक्ला०', 'अनव०, का तंजौर में 'औप०', 'जातकिण-' का त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम्र नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'जातकिरण-' और '-केशनखं विलून-' का '-केशनखविलून-' पाठभेद तंजौर एवं त्रिवेन्द्रम् में मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उच्चारोहणसंरब्धगात्रं, विलूननिघृष्टभिन्नपाटितशरीरवस्त्रं, जातकिणसंरब्धहस्तपादं, पांसुपूर्णकेशनखं विलूनभुग्नकेशनखं वा, सम्यक्स्नातानुलिप्तं तैलप्रमृष्टगात्रं सद्योधौतहस्तपादं वा, पांसुपिच्छिलेषु तुल्यपादपदनिक्षेपं, प्रवेशनिष्कसनयोर्वा तुल्यमाल्यमद्यगन्धवस्त्रच्छेदविलेपनस्वेदं परीक्षेत ।

प्रलापी, उच्चारोहण में संरब्ध मात्र वाला, कटे-फटे, रगड़े गये, चीथड़े वस्त्र जिसके शरीर पर हों, घट्ठों (कड़े चिह्नों) से जिसके हाथ-पैर कठोर हों, केश और नख धूलियुक्त अथवा कटे, टेढे केश-नख हों, जो सम्यक् स्नान एवं अनुलेपयुक्त हो, शरीर पर तैल लेप किया हो अथवा सद्यः, हाथ-पैर धोये हों, धूलि एवं कीचड़ों में समान पद चिह्न वाला हो अथवा प्रवेश-निर्गम में समान माल्य-मद्य, गन्ध, समान वस्त्र खण्ड एवं समान विलेपस्वेद वाला हो—ऐसे जन की परीक्षा करें।

चोरं पारदारिकं वा विद्यात् ।

१९. तत्पश्चात् चोर अथवा पारदारिक जाने ।

सगोपस्थानिको बाह्यं प्रदेष्टा चोरमार्गणम् ।
कुर्यान्नागरिकश्चान्तदुर्गे निर्दिष्टहेतुभिः ॥

२०. गोप एवं स्थानिक के साथ प्रदेष्टा बाह्य चोर की तथा नागरिक निर्दिष्ट उपायों से अन्तदुर्ग में चोर की खोज करें।

पाद टिप्पणी :

१८. (१) संरब्ध : फूला या कड़ा हो जाना या अनम्य होना ।

(२) विलूनभुग्नकेशनख : जिसके बाल और नाखून कटे-फटे और बिखरे हों।

पाठ भेद :

'चोरं' का पाठभेद तंजौर में 'पौरं' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१९. (१) पारदारिक : व्यभिचारी, परदारगामी। याज्ञ० २:२९५ ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) गोप : नायबतहसीलदार, समकक्ष अधिकारी या इसका अर्थ दश गांवों का अधिकारी भी किया गया है। गण० १:११०,३४५ ।

(२) स्थानिक : तहसीलदार । गण० १:११०, ३५० ।

(३) प्रदेष्टा : मजिस्ट्रेट । गोप तथा स्थानिक प्रदेष्टा के सहायक थे । गण० १:५७,२:११६

(४) नागरिक : नागरिक अधिकारियों के पास भी उनके गुप्तचर होते थे, वे संदिग्ध व्यक्तियों की सूचना नागरिक को देते थे । नागरिक तथा प्रदेष्टा का कार्य क्षेत्र जहाँ तक अपराधियों के पता लगाने के सम्बन्ध हैं समान थे । नागरिकों का कार्यक्षेत्र नगर तक ही सीमित था । गण० २:३५६ ।

(५) निर्दिष्टहेतुभि : सन्देह में गिरफ्तार होने वाले व्यक्तियों के विषय में निर्देश से तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे शङ्कारूपकर्माभिग्रहः षष्ठोऽध्यायः। आदितस्त्र्यशीतितमः।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टक-शोधन में शंकारूप कर्माभिग्रह सम्बन्धित षष्ठ अध्याय समाप्त। आदि से तिरासीवां अध्याय समाप्त।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में -'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे षष्ठोऽध्याय : शङ्कारूपकर्माभिग्रहः, आदितस्त्र्यशीतितम :'

मैसूर संस्करण में-'इति कण्टकशोधने शङ्कारूपकर्माभिग्रह : षष्ठोऽध्याय : आदितस्त्र्यशीतिः।'

डॉ० वसाक संस्करण में-'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधनं चतुर्थाधिकरणे षष्ठोऽध्यायः शङ्कारुपकर्माभिग्रहः, आदितस्त्र्यशीतितम :।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में-'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे शङ्कारूपकर्माभिग्रहः षष्ठोऽध्यायः ।।६।। आदितस्त्र्यशीति :।।८३।।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्व्यशीतितमं प्रकरणम्—आशुमृतकपरीक्षा[1][2]

८२वां प्रकरण–आशुमृतक परीक्षा

अध्याय ७

तैला[3]भ्यक्तमाशुमृतकं परीक्षेत ।

१. तैल से लिप्त कर आशुमृतक की परीक्षा की जाय ।

निष्क्रीर्ण[1]मूत्रपुरीषं वातपूर्णकोष्ठं[2]त्वक्कं[3] शूनपादपाणि[4]मुन्मीलिताक्षं[5] सव्यंञ्ज[6]नकण्ठं पीठननिरुद्धोच्छ्वास[7]मर्हतं[8] विद्यात् ।

२. जिसका मूत्र-पुरोष निर्गत हो, उदर एवं त्वक् वायुपूर्ण हो, हाथ-पैर फूला हो, आँख खुली हो, कण्ठ चिह्न युक्त हो ऐसे व्यक्ति को गला दबाने कें कारण श्वाँस निरुद्ध होने से मरा हुआ जाना जाय ।

तमेव संकुचित[1]बाहु-सक्थि[2]मुद्बन्ध[3]हृतं विद्यात् ।

३. हाथ एवं जंघा के संकुचित होने पर उसे बाँधकर लटकाने से मरा हुआ जाने ।

पादटिप्पणी :

१. (१) आशुमृतक : आकस्मिक या अचानक मृत्यु या तुरन्त मृत ।

(२) परीक्षा : मृत्यु समीक्षा या शव परीक्षा, देश में प्रदेष्टा तथा बाहर में नागरिक करता था । द्र० ४:६:२० ।

यह प्राचीन शव परीक्षा आधुनिक पोस्ट मार्टम की तरह होती थी । आज भी दुर्घटना में मृत व्यक्ति की शव परीक्षा मृत्यु का कारण जानने के लिए की जाती हैं ।

(३) तैलाभ्यक्त : अपमृत्यु होने पर शरीर को तेल में रख देते थे, ताकि शरीर न बिगड़े । यह प्रथा बहुत प्राचीन है । राजा दशरथ का भी शरीर भरत के आने तक तैल द्रोणी में रखा गया था । पद्म० १:५१:११४ ।

पादटिप्पणो :

२. (१) निष्कीर्ण : बाहर निकला ।

(२) कोष्ठ : हृदय, फेफड़ा, उदर, आभ्यन्तर कक्ष । गण० १:,

(३) त्वक् : त्वचा, चमड़ा ।

(४) शूनपाद : प्रवृद्ध, सूजा, वर्धित पैर ।

(५) उन्मीलिताक्ष : नेत्रों का खुल जाना, मृतक के प्राण निकलते ही आंख खुल तथा पथरा जाती हैं ।

(६) सव्यञ्जन : चिह्नित । द्र० १.२१:७,२:२:१२. ।

(७) निरुद्धोच्छ्वास : श्वास रुक जाना ।

(८) हृतं : गला घोंटकर मारने से तात्पर्य है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) संकुचितवाहु : हाथ सिकुड़ जाना या ऐंठ जाना ।

(२) सक्थि : जंघा ।

(३) उद्‌बन्ध : फाँसी । भविष्य० ३:२:४:५६, नारद० पु० १४:२१-२२ । गरुड़ द्र० १२:८ ।

मैं फाँसी घर में लगभग ६ मास मथुरा जेल में राजनीतिक बन्दी के रूप में रहा हूँ । फाँसी जब लगती है तो, हाथ अनायास गले की तरफ उठता है मनुष्य अधोभाग अर्थात् जंघा आदि से जोर से उठने का प्रयास करता है । इस क्रिया में हाथ और जंघा ऊपर आकर संकुचित या सिकुड़ जाते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शूनपाणिपादोदरमपगताक्षमुद्वृत्तनाभिमवरोपितं विद्यात् ।

४. फूले हुए हाथ-पैर और उदर वाले, अन्दर दबी आँख, उद्वृत्त नाभिवाले व्यक्ति को शूली पर आरोपित करने से मरा जाने ।

निस्तब्धगुदाक्षं संदष्टजिह्वमाध्मातोदरमुदकहतं विद्यात् ।

५. निर्गत गुदा एवं आँख से युक्त, दाँत से जीभ दबाये तथा फूले उदर वाले आशुमृतक को जल से मरा जाने ।

शोणितानुसिक्तं भग्नभिन्नगात्रं काष्ठैरश्मभिर्वा हतं विद्यात् ।

६. रक्त लिप्त एवं टूटे-फूटे शरीरवाले आशुमृतक को काष्ठ या पत्थर प्रहार से मरा जाने ।

पादटिप्पणी :

४. (१) उदवृत्त : उठी हुई या भीतर धंसी हुई ।

(२) अवरोपित : शूल पर आरोपित करने की अनेक घटनाओं का उल्लेख पुराणों एवं राजतरंगिणी में मिलता है । माण्डव्य ऋषि का उदाहरण प्रसिद्ध है । शूल का अर्थ भाला बरछा, शूली, होता है । किन्तु जो लक्षण दिया गया है वह मध्यकालीन शूल पर आरोपित मृतक से नहीं मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) निस्तब्ध : बन्द हो आना, निश्चेष्टा ।

(२) संदष्ट : कटी । आदमी जब डूबने लगता है, तो प्राण रुकने लगता है । उस समय वह घबड़ाकर, जीभ दातों से दबा लेता है । उस समय जिह्वा दातों के दबाव से कट जाती है ।

(३) उदकहत : मुख्य लक्षण जल में डूबकर मरने या डूबने से पेट में पानी भर जाना होता है । जब जलके कारण श्वास रुक जाती है तो, डूबता व्यक्ति हाथ पैर फटकारता है । मुख खुल जाता है और पानी पेट में भरकर फूल जाता है ।

पाठभेद :

'काष्ठैरश्मभिर्' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि पाद टिप्पणियों एवं तेलगू अनुलिपि में 'काष्ठैरश्मिभिर' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) अनुसिक्त : रक्त लगाया छिटका जैसा या रक्त भीगा । लकड़ी या पत्थर से मारने पर गात्र भुथड़ जाते हैं । धारदार से आघात करने पर शरीर कट जाता है । खून बहता है । कटे और भुथड़े घाव में अन्तर है । भुथड़े घाव से त्वचा पर लाठी या पत्थर की मार से नीलापन आ जाता है ।

(२) भग्नभिन्न : अवयव हड्डियों के टूट जाने के कारण उखड़ जाते हैं, जैसे हाथ पैर टूट या उखड़ जाते हैं ।

(३) गात्र : अवयव । मनु० ३:२०९, ५:१०९ ।

(४) काष्ठ : लाठी या लकड़ी से मारना ।

(५) अश्म : पत्थर से मारना । कुछ अनुवादकों ने रस्सियों से मारना अर्थ किया है, जो त्रुटिपूर्ण प्रतीत होता है । यहां संगमरमर या पत्थर से मारना हीं अर्थ करना उचित है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संभग्नस्फुटितगात्रमवक्षिप्तं विद्यात् ।

७. संभग्न एवं स्फुटित गात्र वाले को अवक्षित (ऊपर से गिरने के कारण) मृतक जाने ।

श्यावपाणिपाददन्तनखं शिथिलमांसरोमचर्माणं फेनोपदिग्धमुखं विषहतं विद्यात् ।

८. कुछ कृष्णवर्ण हाथ-पैर और दन्त-नख तथा शिथिल मांस, रोम एवं चर्म से युक्त और फेन लिप्त मुखवाले मृतक को विषहत जाने ।

तमेव सशोणितदंशं सर्पकीटहतं विद्यात् ।

९. उक्त लक्षणयुक्त एवं कटे स्थान पर रक्तयुक्त को सर्प कीटहृत जाने ।

पाठ भेद :

'गात्रमवक्षितं' का पाठभेद तंजौर में '-गात्रम-विक्षिप्तं' एवं तेलगू अनुलिपि में '-गात्रं विक्षिप्तं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) स्फुट : फटना, मकान वृक्ष या ऊँचाई से गिरने पर शिर तथा शरीर जिस ओर पृथ्वी पर आदमी गिरता है, फट जाता है । मुख्यतः शिर अवश्य फटता है, क्योंकि शिरका भाग भारी होने से मनुष्य का शिर चुटैल होता है । इससे अवयव टूट जाते हैं । हड्डी कठोर होती हैं । वे टूट जाती हैं ।

(२) अवक्षित : प्रासाद आदि से गिराया हुआ अथवा ऊचे से गिराकर या ढकेलकर मारने से तात्पर्य है । गण० ३:१४७ ।

पादटिप्पणी :

८. (१) श्याव : कपिश रंग, गहरा भूरा रंग, काला, धुमैला रंग । गण० १:८० ।

(२) पाणिपाददन्त : हाथ, पैर, दाँत तथा नाखून ।

(३) शिथिलमांस : मांस ढीला पड़ जाना ।

(४) रोम : बाल :

(५) चर्म : त्वचा ।

(६) फेन : साधारणतया विषपान कर मरने वाले के मुख से गाज या फेन निकलता हैं परन्तु प्रत्येक विषका प्रभाव शरीर पर भिन्न-भिन्न पड़ता है । अफीम खाकर मरने वाले का शरीर धीरे-धीरे शान्त हो जाता है । शरीर कुछ काला पड़ जाता है।

(७) दिग्ध : सना हुआ, लिपा हुआ, पोता हुआ । मनु० ३:१३२ रघु० १६ : १५, विषाक्त कु० ४:२५ ।

(८) विषहत : विप पिला या खिला कर मारा गया ।

पाठ भेद :

यह सूत्र तेलगू अनुलिपि में नहीं है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) शोणित : जब तक रक्त में सर्प या कीट के विष का प्रवेश नहीं होता तब तक मृत्यु सम्भव नहीं हैं ।

(२) सर्पकीटहृत : सर्प या कीड़े के काटने से मरा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विक्षिप्तवस्त्रगात्रमतिवान्तविरिक्तं मदनयोगहतं विद्यात् ।

१०. बिखरे वस्त्र-गात्र वाले, अत्यधिक मूत्रपुरीष त्याग किये जन को मदनयोगहत जाने ।

अतोऽन्यतमेन कारणेन हतं हत्वा वा दण्डभयादुद्बद्धनिकृत्तकण्ठं विद्यात् ।

११. इनमें से किसी एक कारण से अथवा हत्या कर दण्ड भय से फांसी और गला काटकर मरा जाने ।

विषहतस्य भोजनशेषं वयोभिः परीक्षेत ।

१२. विषहत जन के अवशिष्ट भोजन की परीक्षा पक्षियों द्वारा करे ।

हृदयादुद्धृत्याग्नौ प्रक्षिप्तं चिटिचिटायदिन्द्रधनुर्वर्णं वा विषयुक्तं विद्यात्, दग्धस्य हृदयमदग्धं दृष्ट्वा वा ।

१३ हृदय का कुछ अंश निकालकर अग्नि में प्रक्षिप्त करने अथवा चिट्-चिट् शब्द एवं इन्द्र धनुष वर्णयुक्त अथवा मृतक के दग्ध होने पर भी हृदय भाग को अनदग्ध देखकर विषयुक्त जाने ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) वान्त : वमन, कै, उल्टी ।

(२) विरिक्तं : लाक्षणिक अर्थ मलमूत्र त्याग या दस्त होना ।

(३) मदनयोग : मादक योग अर्थात् धतूरा आदि विष से मरा हुआ । द्र० १४:१:१६-१७,४:४:१९:४:७:१०,७:१७:४४ । गण० १:९१ ।

पाठ भेद :

'उद्बद्ध-' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों तथा तेलगू अनुलिपि में 'उद्बन्ध-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) अतोऽन्यतमेन : अन्य कारण से ।

(२) दण्डभय : राजदण्ड अथवा अपमान भय के कारण लोग आत्महत्या कर लेते हैं । आयकर के भय या अधिक कर लग जाने पर न देने तथा समाज में अपमान के भय से अनेक धनिकों ने आत्महत्या कर ली है । कितने डाकू, हत्यारे, अपराधी पकड़े जाने के भय से आत्महत्या कर लेते हैं । जर्मनी के अधिनायक हिटलर ने आत्महत्या कर ली थी । जापान के प्रधानमन्त्री तोजो ने गिरफ्तारी के समय आत्महत्या करने का प्रयास किया था । परन्तु बच गये । उन्हें मृत्यु दण्ड दिया गया ।

(३) उदबद्ध : आत्महत्या, फांसी लगाकर या गला घोंटकर मारा गया ।

(४) निकृत्तकण्ठ : गला क्षतकर या गला काट कर, ।

पाठभेद :

'वयोभिः' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'पयोभिः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) भोजनशेष : मृत के पेटमें भोजन जो शेष रहता है, उसकी आज भी परीक्षा की जाती है । प्राचीनकाल में आधुनिक कालीन पोस्टमार्टम की व्यवस्था नहीं थी । मृत्यु का कारण जानने के लिए वैज्ञानिक उपाय था । भोजन आदि पक्षियों को खिलाकर, परीक्षा ली जाती थी कि वास्तव में विष है या नहीं है ।

(२) वयोभि : पक्षी आदि । द्र० १:२०:७-८ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) हृदय : दिल, कलेजा ।

(२) इन्द्रधनुर्वर्ण : इन्द्रधनुष में जिस तरह बहुत रंग होते हैं । उसी प्रकार अग्नि में पड़ने पर उसमें कई रंग प्रकट होते हैं ।

(३) अदग्ध : न जला ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्य परिचारकजनं वाग्दण्डपारुष्यातिलब्धं मार्गेत, दुःखोपहतमन्यप्रसक्तं वा स्त्रीजनम्, दायवृत्तिस्त्रीजनाभिमन्तारं वा बन्धुम् ।

१४. मृत जन के वाक्पारुष्य एवं दण्डपारुष्य पीडित परिचारक अथवा दुःखोपहत या अन्य प्रसक्त स्त्री अथवा उत्तराधिकार में उसका धन या स्त्री प्राप्त करने के लिये इच्छुक बन्धु की खोज करे ।

तदेव हतोद्बद्धस्य परीक्षेत ।

१५. उक्त प्रकार से मारकर लटकाये गये मृत की भी परीक्षा करे ।

स्वयमुद्बद्धस्य वा विप्रकारमयुक्तं मार्गेत ।

१६. अथवा स्वयं फांसी लगाकर आत्महत्या करने वाले मृतक का विप्रकार एवं अनुचित (पीड़न) का अन्वेषण करे ।

सर्वेषां वा स्त्रीदायाद्यदोषः कर्मस्पर्धा प्रतिपक्षद्वेषः पण्यसंस्थासमवायो वा विवादपदानामन्यतमद्वा रोषस्थानम् ।

१७. स्त्री, दायाद्य, कर्म स्पर्धा, प्रतिपक्ष द्वेष, पण्यसंस्था, समवाय अथवा विवाद स्थानों में कोई एक, सब लोगों के क्रोध का स्थान होता है ।

पाठ भेद :

'वाग्दण्ड-' का पाठभेद तंजौर की पाद टिप्पणी एवं त्रिवेन्द्रम् में 'वादण्ड-' और तेलगू अनुलिपि में 'वा दण्डा-', 'पारुष्यातिलब्धं' का तंजौर में '-पारुष्या-दतिलब्धं' तथा 'दायवृत्ति-' का तंजौर, त्रिवेन्द्र० एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों तथा तेलगू अनुलिपि में 'दायनिवृत्ति-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) दायवृत्ति : याज्ञ० २:२८१ । गण० १:९;१:३०२ ।

(२) अभिमन्ता : अभिलाषी, इच्छुक, आतुर । द्र० १:६:५ ।

पाठ भेद :

'हतोद्बद्धस्य' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों एवं तेलगू अनुलिपि में 'हतोद्बन्धस्य' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) हतो : फाँसी लगाने से तात्पर्य है ।

पाठ भेद :

'स्वयमुद्बद्धस्य' का पाठभेद तंजौर में 'स्वयमुद्बन्धस्य' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) स्वयमुद्बद्धस्य : फांसी लगाकर आत्महत्या :

(२) विप्रकार : अत्यधिक पीड़ा, अपमान, कटुवचन, तिरस्कार ।

पाठ भेद :

'सर्वेषां' के बाद का 'वा' तेलगू अनुलिपि में नहीं है ।

पादटिप्पणी :

दोष के कारण छः हैं ।

१७. (१) स्त्री : स्त्री ।

(२) दायादि : सम्पत्ति ।

(३) कर्मस्पर्धा : काम या पेशे की स्पर्धा ।

(४) प्रतिपक्ष द्वेष : विरोधी के प्रति द्वेष ।

(५) पण्यसंस्था : बाजार या उसके सम्बन्ध में यथा लेन देन, क्रय विक्रय । गण० २:३५६ ।

(६) विवादपद : अदालती मुकदमे किसी विषय को लेकर शत्रुता ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रोषनिमित्तो घातः ।

१८. रोष के कारण घात होता है ।

स्वयमादिष्टपुरुषैर्वा, चोरैरर्थनिमित्तं, सादृश्यादन्यवैरिभिर्वा हतस्य घातमासन्नेभ्यः परीक्षेत ।

१९. स्वयं अथवा आदिष्ट पुरुषों द्वारा अथवा धन के लिए चोरों द्वारा अथवा सादृश्य के कारण अन्य शत्रुओं द्वारा हत व्यक्ति के घात की आसन्नवर्ती लोगों से परीक्षा करे ।

येनाहूतः सहस्थितः प्रस्थितो हतभूमिमानीतो वा तमनुयुञ्जति ।

२०. जिसने बुलाया, जिसके साथ रहा, जिसके साथ गया अथवा जो हतस्थान पर ले गया उससे पूछ-ताछ की जाय ।

ये चास्य हतभूमावासन्नचरास्तानेकैकशः पृच्छेत् 'केनायमिहानीतो हतो वा, कः सशस्त्रः संगूहमान उद्विग्नो वा युष्माभिर्दृष्टः' । इति ।

२१. इसके हतभूमि पर जो लोग आस-पास हों, उनमें एक-एक से पूछा जाय 'इसको यहाँ कौन लाया अथवा कौन मारा, शस्त्रयुक्त अपने को छिपाते हुए अथवा उद्विग्न किस व्यक्ति को तुम लोगों ने देखा है ।'

ते यथा ब्रूयुस्तथाऽनुयुञ्जीत ।

२२. वे जैसा कहें तदनुसार प्रश्न पूछे ।

पाठ भेद :

'निमित्तो घातः' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों में '-निमित्तोपघातः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) घात : खून या हत्या करना ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) स्वयं : स्वयं मरा है ।

(२) आदिष्ट : आदेश प्राप्त, मारने के लिए धन देकर नियुक्त ।

(३) चौर . चोर द्वारा अर्थ के लिए मारा गया ।

(४) सादृश्य : किसी शत्रु द्वारा भूल से रूप-सादृश्यता के कारण ।

(५) आसन्न : सामीप्य या निकटवर्ती ।

पाद टिप्पणी :

२०. (१) येनाहूत : जिसके द्वारा बुलाया गया था ।

(२) सहस्थित : जिसके साथ रहा हो ।

(३) प्रस्थित : प्रस्थान किया हो ।

(४) हतभूमि : मृत स्थान या जायेवकुआ या मृत घटनास्थल ।

पाठ भेद :

तंजौर एवं तेलगू मदरास अनुलिपि में 'हतो' नहीं है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) आसन्नचर : हत के समीप जो उस समय घूमता या रहता था ।

(२) संगूहमान : छिपाता हुआ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) अनुयुञ्जीत : प्रश्न करे, पूछे । याज्ञ० २:२८० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनाथस्य शरीरस्थमुपभोगं परिच्छदम् ।
वस्त्रं वेषं विभूषां वा दृष्ट्वा तद्व्यवहारिणः ॥

२३. अनाथ मृतक के शरीर पर स्थित उपभोग, परिच्छद, वस्त्र, वेष अथवा विभूषा को देखकर उसके व्यापारी से—

अनुयुञ्जीत संयोगः निवासं वासकारणम् ।
कर्म च व्यवहारं च ततो मार्गणमाचरेत् ॥

२४. (उसके) संयोग, निवास, वासकारण, कर्म और व्यवहार के विषय में प्रश्न करे। तत्पश्चात् (घातक का) अन्वेषण करे ।

रज्जुशस्त्रविषैवऽपि कामक्रोधवशेन यः ।
घातयेत्स्वयमात्मानं स्त्री वा पापेन मोहिता ॥

२५. काम-क्रोध वश जो पुरुषरज्जु, शस्त्र या विष से आत्महत्या करे अथवा पाप-मोहित स्त्री (आत्महत्या करे)—

पादटिप्पणी :

२३. (१) अनाथ : असहाय ।

(२) उपभोग। माल्य-चन्दनादि, इसका अर्थ भोग, कब्जा आदि भी होता है। अग्नि० २५७:२२। याज्ञ० २:१७१ ।

(३) परिच्छद : छत्र, उपानह (जूता) आदि ।

(४) वेष : विशेष प्रकार का पहनावा ।

(५) विभूषा : आभूषण, अलंकार । कि० ७:५, रघु० ४:४५ ।

(६) व्यवहारी। व्यवहार करने वाले अर्थात् व्यापारी ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) संयोग : मिलना-जुलना, मिलाय ।

(२) निवास : रहने का स्थान ।

(३) कर्म : पेशा ।

(४) व्यवहार : लेन देन, कारबार, व्यापार आचरण । गण० १:१५३ ।

पाठ भेद :

'कामक्रोधवशेन' का पाठभेद तंजौर में 'कामाक्रोशवशेन' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) रज्जु : द्र० ३:६:३ ।

(२) शस्त्र : हथियार ।

(३) विष : जहर ।

(४) काम : द्र० १:६:१ ।

(५) क्रोध : द्र० १:६:१ ।

(६) स्त्री : पापी स्त्री से यहाँ तात्पर्य है ।

(७) पापमोहित : पाप से जड़ीभूत या प्रणयोन्मत्त ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रज्जुना राजमार्गे तांश्चण्डालेनापकर्षयेत् ।
न श्मशानविधिस्तेषां न संबन्धिक्रियास्तथा ॥

२६. उन्हें चण्डाल द्वारा राजमार्ग पर रस्सी बाँधकर अपकर्षित कराये (खिचवाये) उनकी श्मशान विधि तथा सम्बन्धित जन क्रिया न की जाय ।

बन्धुस्तेषां तु यः कुर्यात्प्रेतकार्यक्रियाविधिम् ।
तद्गतिं स चरेत्पश्चात्स्वजनाद्वा प्रमुच्यते ॥

२७. (आत्मघाती का) जो बन्धु उनकी प्रेतकार्य क्रियाविधि सम्पन्न करें वह बाद में उसकी गति प्राप्त करे अथवा स्वजन द्वारा परित्यक्त हो ।

संवत्सरेण पतति पतितेन समाचरन् ।
याजनाध्यापनाद्यौनात्तैश्चान्योऽपि समाचरन् ॥

२८. पतितजन से याजन अध्यापन एवं यौन सम्बन्ध करने वाला एक वर्ष में पतित हो जाता है। उक्तजनों के साथ भी उक्त सम्बन्ध करके अन्य जन भी वर्ष भर में पतित हो जाता है ।

पाठ भेद :

'रज्जुना' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू अनुलिपि में 'रज्जना' तथा 'तांश्चण्डा०' का तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयांलम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों तथा तेलगू अनुलिपि में 'तां चण्डा०'' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) चण्डाल : प्राचीन काल में भारत में भी प्रथा थी कि राजनीतिक विरोधी अथवा घोर अपराधी के शव को चाण्डाल पैर में रस्सी बाँधकर, सड़क पर घसीटता ले जाता था। मुस्लिम काल में भी यह प्रथा थी । पश्चिमी देशों तथा राजतरंगिणी में भी अनेक उदाहरण मिलते हैं । इटली के अधिनायक दिवंगत वेनितो मुसोलिनी को पहले गोली मारी गई, तत्पश्चात् उसकी लाश को उलटा कर लटका दिया गया, और जूतों से लाश को अपमानित किया गया ।

(२) सम्बन्धि क्रिया : निवपन अर्थात् श्राद्धादि जाति कार्य ।

पाठभेद :

२७. (१) 'स्वजनाद्वा' का पाठभेद तंजौर में तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों में 'सवनाद्वा' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) प्रेतकार्य : तर्पण आदि श्राद्धकर्म अथवा अन्तिम संस्कार ।

(२) तद्गति : आत्मघाती की दशा को, अर्थात् शरीर को सड़क पर घसीटकर तथा बिना संस्कार के अन्तिम क्रिया करना ।

(३) चरेत : प्राप्त करे ।

(४) पश्चात् : मरने पर ।

(५) प्रमुच्यते : छोड़ना या मुक्त करना ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) पतितेन : द्र० मनु० ११:१८९ ।

(२) यौनात् : विवाह सम्बन्ध से । यह श्लोक मनु० ११:८० में है, तथा कुछ परिवर्त्तन के साथ वशिष्ठ० १:२२ में भी मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे आशुमृतकपरीक्षा सप्तमोऽध्यायः। आदितश्चतुरशीतितमः।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टकशोधन में आशु मृतकपरीक्षा सम्बद्ध सप्तम अध्याय समाप्त। आदि से चौरासीवां अध्याय समाप्त।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण—'इति कौटिलीयार्थ-कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे सप्तमोऽध्यायः। आशु-मृतक परीक्षा, आदितन्चतुरशीतितमः।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने आशुमृतक-परीक्षा सप्तमोऽध्यायः, आदितश्चतुरशीतिः।

डा० वसाक संस्करण में-'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे सप्तमोऽध्यायः आशुमृ-तकपरीक्षा, आदितश्चतुरशीतितमः।'

उदयवीरशास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे आशुमृतकपरीक्षा सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ आदितश्चतुरशीतिः ॥ ८४ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्र्यशीतितमं प्रकरणम्—वाक्यकर्मानुयोगः[1,2]

८३वां प्रकरण—वाक्यकर्मानुयोग

अध्याय ८

मुषितसंनिधौ[3] बाह्यानामभ्यन्तराणां च साक्षिणामभिशस्तस्य[4,5] देशजाति-गोत्रनामकर्मसारसहायनिवासानुयुञ्जीत[6,7,8] ।

१. मुषित तथा बाहरी और आभ्यन्तर साक्षी जन के समक्ष अभिशस्त के देश, जाति, गोत्र, नाम, कर्म, सार, सहायक एवं निवास के विषय में प्रश्न किया जाय ।

तांश्चापदेशैः[1] प्रतिसमानयेत् ।

२. उन्हें उपायों से (युक्तिपूर्वक) पर्यालोचित करे ।

ततः पूर्वस्याह्नः[1] प्रचारं[2] रात्रौ निवासं चाग्रहणादित्यनुयुञ्जीत ।

३. ग्रहण काल तक उसके पूर्व दिन का प्रचार, रात्रि में निवास आदि के विषय में प्रश्न किया जाय ।

पाठ भेद :

'साक्षिणाम्' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू अनुलिपि में 'साक्षिणम्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) कर्म : इस अध्याय में कर्म शब्द का का प्रयोग ताड़ना देने, सताने (यातना देने) के अर्थ में किया गया है ।

(२) अनुयोग : प्रश्न, के उत्तर में दिया गया जबाब, अन्वेषण या तफतीश ।

(३) मुषितसंनिधौ : जिसके यहाँ चोरी हुई हो या लूटा गया हो, उसके सामने या पास । याज्ञ० २:२७१,२७२, ।

(४) साक्षिणाम् : साक्षी, गवाह । शंकालु व्यक्ति के सम्बन्ध में पूछताछ करने से तात्पर्य है ।

(५) अभिशस्त : जिस पर शंका हो, ऐसा व्यक्ति जिस पर किसी अपराध की शंका में आरोप लगाया गया या साबित हो । याज्ञ० २:२०,७० ब्रह्माण्ड ३:६३,६७, वायु० २६:६६,२५:१४०,३६:३८ ।

(६) कर्म : पेशा, व्यवसाय, यातना ।

(७) सार : औकात, सम्पत्ति, धन, ऐश्वर्य ।

(८) सहाय : सहयोगी, सहकारी ।

पादटिप्पणी :

२. (१) अपदेश : घोषणा या कथन या बयान देना । द्र० १५:१:२९ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) पूर्वस्याह्नः : पिछले दिन अर्थात् बीते दिन का ।

(२) प्रचार : कार्यकलाप, चेष्टा, गति । क० २,१,१९; २,५,१४; १:७:२,३,२४; २:८३; २:२८:१; ३:१४:२८; गण० १:१३९,१४५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्यापसारप्रतिसंधाने शुद्धः स्यात्, अन्यथा कर्मप्राप्तः ।

४. उसकी निर्दोषता प्रमाणित होने तक वह शुद्ध माना जाय अन्यथा ताड़ित किया जाय।

त्रिरात्रादूर्ध्वमग्राह्यः शङ्कितकः पृच्छाभावाद् अन्यत्रोपकरणदर्शनात् ।

५. तीन रात्रि व्यतीत हो जाने पर, सन्दिग्ध व्यक्ति पृच्छाभाव (पूर्व दिन क्रिया विस्मृति) के कारण पकड़ा न जाय, अन्य स्थिति में अपराध साधन सामग्री मिलने पर, पकड़ा जाय।

अचोरं चोर इत्यभिव्यवहारतश्चोरसमो दण्डः, चोरं प्रच्छादयतश्च ।

६. अचोर को चोर प्रमाणितकर्ता तथा चोर को छिपाने वाले व्यक्ति पर, चोर के समान दण्ड लगाया जाय।

चोरेणाभिशस्तो वैरद्वेषाभ्यामपदिष्टकः शुद्धः स्यात् ।

७. वैर-द्वेष वश चोर द्वारा अभिशस्त अपदिष्टक शुद्ध माना जाय।

शुद्धं परिवासयतः पूर्वः साहसदण्डः ।

८. शुद्ध जन को मुक्त न करने वाले अधिकारी पर पूर्व साहस दण्ड लगाया जाय ।

पाठ भेद :

'तस्यापसार-' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'तस्यावसार-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) अपसार : वह व्यक्ति जो किसी की निर्दोषिता साबित करता है। द्र० ३:१६:१५:४:६: ११,१२,। गण० २:३३३,३४०,३:२६,१०७।

(२) कर्म : यातना या ताड़ना देना। द्र० ४: ८:१४,१७,२३, ४:९:२३, गण० ३:१२७।

पादटिप्पणी :

५. (१) त्रिरात्र : विलम्ब तीन रात्रि हो जाने पर अपराध का पता लगाने में कठिनता होती है। फौजदारी मुकदमों में अविलम्ब थाने पर रिपोर्ट लिखाने का बहुत महत्त्व होता है। जितना ही विलम्ब होगा, उतना ही साक्षी तथा सफाई बनाने में अपराधी सफल होता है। इसी प्रकार वादी भी झूठा मुकदमा बनाने या गढ़ने में सफलता प्राप्त कर सकता है।

(२) शंकित : सन्दिग्ध, सन्देहात्मक ।

पाठ भेद :

'अचोरं चोर इत्य०' का पाठभेद तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'अचोरश्चोर इत्य०' मिलता है।

पादटिप्पणी :

७. (१) अभिशस्त : द्र० ८:१:१।

(२) अपदिष्टक : जिसके विषय में कथन (घोषणा) किया गया हो या जिसपर चार्ज शीट लगाई गई हो या जो फँसाया गया हो। इसका अर्थ कतिपय अनुवादकों ने पकड़ने वाला किया है।

पादटिप्पणी :

८. (१) शुद्धं : निरपराध।

(२) परिवासयतः : तफतीश कुनन्दा अधिकारी, जो अपने रक्षण में व्यक्ति या अपराधी को रखता है। कौटिल्य उनको दण्ड देने की सलाह देता है। आज यह कानून नहीं है। मजिस्ट्रेट यदि निरपराध को दण्ड देता है, तो भी उसका कुछ नहीं बिगड़ता। दण्डित व्यक्ति केवल अपील कर सकता है। जेल में बन्द व्यक्ति भी जेल से अपील दाखिल कर सकता है। सरकार इसकी व्यवस्था करती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शङ्कानिष्पन्नमुपकरणमन्त्रिसहायरूपवैयावृत्यकरान् निष्पादयेत् ।

९. सन्दिग्धजन से उपकरण, मन्त्री, सहायक, रूप (धन) एवं वैयावृत्यकर के सम्बन्ध में प्रश्न कर निष्कर्ष निकाला जाय ।

कर्मणश्च प्रवेशद्रव्यादानांशविभागैः प्रतिसमानयेत् ।

१०. प्रवेश, द्रव्य ग्रहण एवं भाग ग्रहण के विषय में पूछ कर, उनसे कर्म (चोर कर्म) की समानता की परीक्षा करे ।

एतेषां कारणानामनभिसंधाने विप्रलपन्तमचोरं विद्यात् ।

११. इन कारणों के प्रति परिचिन्तन न कर, विप्रलाप करते हुए व्यक्ति को चोर न जाना जाय ।

दृश्यते ह्यचोरोऽपि चोरमार्गे यदृच्छया संनिपाते चोरवेषशस्त्रभाण्डसामान्येन गृह्यमाणश्चोरभाण्डस्योपवासेन वा, यथाणिमाण्डव्यः कर्मक्लेशभयादचोरः 'चोरोऽस्मि' इति ब्रुवाणः ।

१२. ऐसा देखा जाता है, अचोर भी चोर मार्ग में आ जाने, चोर सदृश वेश, शस्त्र एवं भाण्डयुक्त होने से अथवा चोरी के सामान के समीप रहने से, गृहीत होता है, जैसे आणिमाण्डव्य चोर न होने पर भी दण्ड भय से 'चोर हूँ' इस प्रकार कहते हुए पकड़े गये ।

पादटिप्पणी :

९. (१) वैयावृत्यकर : सहापराधी या अपराध में सहायता करने वाला । द्र० ४:६:११ ।

(२) निष्पादयेत् : इसका तात्पर्य वृत्तांतानुमेय प्रमाणों (सर्कमस्टैन्सियल एविडेन्स) के द्वारा अर्थात् असलहा आदि उपकरण जिनसे अपराध किये जाते हैं, उससे निष्कर्ष निकालना है ।

पाठ भेद :

'प्रवेश-' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी तथा तेलगू अनुलिपि में 'प्रदेश-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) कर्मणः : शंकालु व्यक्ति यथा उसके साथियों के कार्य से तात्पर्य है ।

(२) प्रवेश : चोरी के लिए प्रवेश करना ।

पाद टिप्पणी :

११. (१) विप्रलपन्तमचोरम् : भयादि से स्वयं को चोर स्वीकार करने पर, भी अपने को अचोर समझे । आजकल भी पुलिस की मार या यातना से बचने के लिए निरपराधी भी तफतीश के दौरान में अपराध स्वीकार कर लेता है किन्तु अदालत में जाकर बदल जाता है । उस व्यक्ति को चोर न समझा जाय, जब तक उसका दोष प्रमाणित न हो जाय ।

पाठ भेद :

'गृह्यमाणः' के बाद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी तथा तेलगू अनुलिपि में 'दृष्टः' भी मिलता है तथा 'यथाणिमाण्डव्यः' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'यथा हि माण्डव्यः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) उपवासे : निकट या समीप ।

(२) माण्डव्य : एक आचार्य का नाम जो कौत्स के शिष्य थे । इन्होंने ऋग्वेद संहिता का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्मात्समाप्तकरणं नियमयेत् ।

१३. अतएव पुष्ट प्रमाण प्राप्त करने पर ही दण्ड दिया जाय ।

मन्दापराधं[1] बालं[2] वृद्धं[3] व्याधितं[4] मत्तमुन्मत्तं[5] क्षुत्पिपासाध्वक्लान्त[10] मत्याशि[11]-तमामकाशितं[12] दुर्बलं वा न कर्म कारयेत् ।

१४. मन्दापराध, बाल, वृद्ध, व्याधित, मत्त, उन्मत्त, क्षुधित, पिपासित, अध्वक्लान्त, अति-अजीर्णयुक्त, अथवा दुर्बल को (शरीर सम्बन्धी) दण्ड न दिया जाय ।

तुल्यशील[1]पुंश्चली[2]प्रापाविक[3]कथावकाश[4]भोजनदातृभिरपसर्पयेत् ।

१५. समानशील वाली स्त्री, पुंश्चली, प्रपाविक, मन्त्रदाता, अवकाशदाता एवं भोजन प्रदाता जनों द्वारा गुप्तचर कर्म कराये (तथा उन्हें जाने ।)

तात्त्विक अर्थ प्रतिपादन किया था । चोरी करने के अपराध में इनके विषय में विभिन्न कथायें प्राप्त हैं । चोरी के ही अपराध में राजा ने इन्हें दण्ड दिया । किन्तु असली चोर के पकड़े जाने पर, राजा ने इन्हें छोड़ दिया । प्रमोदिनी का विवाह माण्डव्य से हुआ था । इसका यम के साथ संवाद हुआ था । माण्डव्य ने नियम बनाया था कि १२ तथा १४ वर्षीय बालकों द्वारा नादानी में किये गये अशुभ कर्मों का पाप उन्हें नहीं भुगतना पड़ेगा । यह बड़ा ज्ञानी था । इसने विदेह राज जनक से तृष्णात्याग के विषय में प्रश्न किया था । उसका ग्रन्थ 'माण्डव्य संहिता' उपलब्ध है । आदि० १०६:२-३ तथा १०, मार्क० १६ गरुड़: १:१४२ पद्म० उ० ५१, १४१, सृ० ५२. स्कन्द० ५:३:१६९-१७ २, ६:१३, मत० आ० १३:१८:४६-४८ ।

(३) कर्म : यातना ताड़ना । ५:४:८:४

पादटिप्पणी :

१३. (१) करण : प्रमाण, साबूत, इसका अर्थ कार्यालय, न्यायालय में वादि प्रतिवादि का बयान लिखने वाला क्लर्क या पेशकार भी किया गया है । ड० ३:१२:३७, ३८, नारद० १:१, ४२ ।

पाठ भेद :

मन्दापराधं, का पाठभेद तंजोर तथा तेलगू अनुलिपि में 'मन्दावधानं' तथा 'आमकाशितं' का तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि में 'आत्मकाशितं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) मन्दापराधं : छोटा अपराध ।

(२) बालं : बालक नाबालिग ।

(३) वृद्धः वयोवृद्ध

(४) व्याधितं : रोगी

(५) मत्तं : नशा में

(६) उन्मत्तं : पागल

(७) क्षुधात् : भूख

(८) पिपासा : प्यास

(९) अध्व : यात्रा, मार्ग

(१०) क्लान्त : थका

(११) अत्याशित : ज्यादा खाया या जिसका भोजन पचा न हो ।

(१२) दुर्बल : कमजोर

पाठ भेद :

'प्रापाविक—' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'प्रावापिक—' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) तुल्यशील : समानशील सम्पन्न या समान वृत्त ।

(२) पुंश्चली : कुलटा या वेश्या ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवमतिसंदध्यात्, यथा वा निक्षेपापहारे व्याख्यातम् ।

१६. उक्त प्रकार से उन्हें प्रवञ्चित करे, अथवा निक्षेपापहार की व्याख्यानुसार करे ।

आप्तदोषं कर्म कारयेत्, न त्वेव स्त्रियं गर्भिणीं सूतिकां वा मासावर-प्रजाताम् ।

१७. दोष प्रमाणित होने पर दण्ड दे किन्तु गर्भिणी स्त्री अथवा एक मास से कम समय की प्रसूत स्त्री को दण्ड न दिया जाय ।

स्त्रियास्त्वर्धकर्म, वाक्यानुयोगो वा ।

१८. स्त्री को पुरुष दण्ड का आधा दण्ड अथवा परिपृच्छा दण्ड दिया जाय ।

ब्राह्मणस्य सत्त्रिपरिग्रहः श्रुतवतस्तपस्विनश्च ।

१९. (अपराधी) वेदज्ञ, ब्राह्मण एवं तपस्वी को सत्त्री द्वारा परिगृहीत कर, उसका प्रतिपृच्छा बयान लिया जाय ।

तस्यातिक्रम उत्तमो दण्डः कर्तुः कारयितुश्च कर्मणा व्यापादनेन च ।

२०. उक्त निमय का अतिक्रमण करने पर, दण्ड देने और दिलाने वाले पर । उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय तथा कर्म एवं व्यापादन करने पर भी उक्त दण्ड लगाया जाय ।

---

(३) प्रापाविक : प्याऊ परिचारक या पानी पिलाने वाला ।

(४) कथा : इसका अर्थ सुझाव, निर्देश या सूचना देना भी होता है ।

(५) अवकाश : आवास स्थान या जगह । मत्स्य : २२७:१२७ ।

(६) भोजन दातृ : भोजन देने वाले ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) निक्षेप : धरोहर । द्र० ४:३:१७, ३: १२:३३, ३८, ५०, २:१४:१५,

(२) अपहार : दुर्विनियोग, उठाले जाना, दूर ले जाना, चुरा लेना, नष्ट कर देना । गण० १:१५४

पादटिप्पणी :

१७. (१७) आप्तदोष : निश्चित अपराध वाले को, अर्थात् जब अपराध की धारणा ठोस होती है, परन्तु उसका निश्चयात्मक सबूत नहीं मिलता । भविष्य १:१३:१४,

(२) सूतिका : वह स्त्री जिसके हाल में बच्चा पैदा हुआ हो । नवप्रसूता स्त्री, इसका संस्पर्श दूषित बतलाया गया है ।

(३) मासावर : एक मास से कम ।

(४) कर्म : यहाँ अर्थ सन्देह पर, यातना देकर, अपराध स्वीकार कराना या समाचार जानना नहीं है बल्कि शारीरिक यातना या ताड़ना देने से है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) वाक्यानुयोग : परिप्रश्न या परिपृच्छा बयान लेने से तात्पर्य है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) सत्त्रि : गुप्तचर द्र० १:१०:३, ५, २०, १:११: १, १८

(२) श्रुतवत : वेदज्ञाता ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) कारयितुः : उच्च अधिकारी, जो कार्य का निर्देश करता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यावहारिकं[1] कर्मचतुष्कम्[2]—षड् दण्डाः[3], सप्त कशाः[4], द्वावुपरिनिबन्धौ[5], उदकनालिका[6] च ।

२१. चार व्यावहारिक दण्ड हैं— छः आघात, सात कोड़े, हाथ-पैर बाँधना (लटकाना) एवं नाक में जल डालना ।

परं पापकर्मणां नव वेत्रलताः[1], द्वादश कशाः[2], द्वावूरुवेष्टौ[3], विंशतिर्नक्त-मालतताः[4], द्वात्रिंशत्तलाः[5], द्वौ वृश्चिकबन्धौ[6], उल्लम्बने[7] च द्वे, सूची हस्तस्य, यवागू-पीतस्य एकपर्वदहनमङ्गुल्याः[10], स्नेहपीतस्य[11] प्रतापनमेकमहः, शिशिररात्रौ बल्वजाग्र[12]-शय्या च ।

२२ अत्यधिक पापकर्मियों पर नव वेंत प्रहार, बारह कोड़े, दो उरुवेष्टन, बीस नक्तमाल दण्ड प्रहार, बत्तीस चपेटा प्रहार, दो वृश्चिक बन्ध, दो उल्लम्बन, हाथ के नखमें सूई वेधना, यवागूपीत व्यक्ति की अंगुली का एक पोर जलाना, स्नेहपीत को एक दिन धूप में तपाना और शिशिर ऋतु की रात्रि में बल्वज शय्या पर शयन ।

---

(२) व्यापादन : द्रोह चिन्तन के द्वारा हत्या, बध, या विनाश ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) व्यावहारिक : लोकव्यवहार प्रसिद्ध ।

(२) कर्मचतुष्कम् : चार प्रकार की यातनाएं ।

(३) षड्दण्डाघात : छः लाठी मारना ।

(४) सप्तकशाघात : सात बेंत या कोड़े से मारना ।

(५) द्वावुपरिनिबन्धौ : दोनों हाथ ऊपर बाँधकर लटका देना ।

(६) उदकनालिका : पानी की नली, नासिका में यातना देकर, नलिका या नली से जल डालना । कुछ अनुवादकों ने नासिका में नमकीन पानी डालना भी अर्थ किया है ।

पाठभेद :

'द्वादशकशा' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों तथा तलगू अनुलिपि में 'दादशकं', 'द्वावूरुवेष्टौ' का तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों में 'द्वा ऊरौ वेष्टौ' तथा तेलगू अनुलिपि में 'द्वावूरौ वेष्टौ' और 'च द्वे' का तंजौर की पादटिप्पणी एवं तेलगू अनुलिपि में 'चले' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) वेत्रलता : वेत से तात्पर्य है । आज भी वेत मारने की सजा दी जाती है । लता हरी होती है । जेल में वेत को भिगो देते हैं । वेत नम हो जाता है । पीठ की ओर से बायां हाथ बायां पैर दाहिना हाथ दाएं पैर से बाँध कर, वृश्चिक आसन की भाँति बांधने पर वेंत लगाया जाता है । जिस पर मनुष्य बांधा जाता है, उसे तिकथी कहते हैं ।

(२) कशा : कोड़ा, चाबुक । भाग० ५:२६:१५,

(३ द्वावुरुष्टौ : दो उरुवेष्टन या बांधना, दो रस्सियों से अलग-अलग उरु को लपेटना । गण० ३:१५६ ।

(४) नक्तमाललता : करंज वेली, कटीली छड़ी ।

(५) तला : चपेटाघात । थप्पड़ मारना ।

(६) उल्लम्बने : हाथ बांधकर लटका देना तथा दोनों पैर बाँधकर उलटे लटकाना गण० २:१५६

(७) सूचीहस्तस्य: हाथ की उगंलीयों के नखमें सुई चुभाना । स्वाधीनतासंग्राम के समय गिरफ्तार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इत्यष्टादशकं कर्म ।

२३. ये अट्ठारह दण्ड कर्म हैं।

तस्योपकरणं प्रमाणं प्रहरणं प्रधारणमवधारणं च खरपट्टादागमयेत् ।

२४. उसका उपकरण, प्रमाण, प्रहरण प्रधारण एवं अवधारण खरपट्ट के शास्त्र से जाने।

दिवसान्तरमेकैकं च कर्म कारयेत् ।

२५. एक दिन के अन्तर पर एक-एक दण्ड कर्म कराये।

पूर्वकृतापदानं प्रतिज्ञायापहरन्तमेकदेशदृष्टद्रव्यं कर्मणा रूपेण वा गृहीतं राजकोशमवस्तृणन्तं कर्मवध्यं वा राजवचनात् समस्तं व्यस्तमभ्यस्तं वा कर्म कारयेत् ।

२६. पूर्वकालीन चोर, प्रतिज्ञा करके अपहरणकारी, नष्ट वस्तुके कुछ अंश के साथ देखा गया, कर्म करते अथवा रूप (द्रव्य) के साथ पकड़ा गया, राज कोश छिपाने वाला अथवा महापराधी—इनसे राजाज्ञानुसार समस्त, पृथक्-पृथक् अथवा बार-बार (क्रमशः) कर्म कराया जाय।

क्रान्तिकारियों के नाखून के अन्दर सुई चुभाकर, उनसे जानकारी हासिल करने का तरीका था।

(८) यवागूपीतस्य : भात के मांड़ की काजी पिला देना तथा लघुशंका करने न जाने देना। यवागू का अर्थ कहीं कहीं लपसी भी किया गया है। गण० २:१५६

(९) अंगुल्या : उंगली के एक पोर को आग में जला देने से तात्पर्य है।

(१०) स्नेहपीतस्य : घी या तेल पिला कर अग्नि के समीप बैठना।

(११) बल्वजाग्रशय्या : बगई की चटाई भिगोकर जाड़े में उसपर नंगे बदन सुलाना।

पादटिप्पणी :

२३. (१) अष्टादश : सूत्र २१ तथा सूत्र २२ में कुल मिलाकर १८ कर्म या यातनाएं होती हैं।

पाठ भेद :

—'पट्टादागमयेत्' का पाठभेद तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में '—पट्टादाहमयेत्' मिलता है।

पादटिप्पणी :

२४. (१) प्रधारणम् : मनुष्य की सहन शीलता की जाँच करना कि कितना वह सह सकता है।

(२) अवधारण : सताने की सीमा निश्चित करना।

(३) खरपट्ट : खरपट्ट नाम के शास्त्रकार, प्रसिद्ध चौर्यशास्त्र। गण० २:१५६

पादटिप्पणी :

२५. (१) दिवसान्तर : दण्डनीय व्यक्ति पर एक-एक दिन का अन्तर देकर यातना देनी चाहिए।

पाठ भेद :

'प्रतिज्ञायाप०' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'प्रतिज्ञाया अप०', '—देशदृष्टद्रव्यं' का तंजौर में '—देशदृष्टदृष्टव्यं' तथा तेलगू अनुलिपि में '—देशमदृष्टद्रव्यं' और 'अवस्तृणन्तं' का तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'अपस्तृणन्तं' मिलता है।

पादटिप्पणी :

२६. (१) पूर्वकृतापदान : पूर्व अपराधी, दोबारा कैदी हो जाना। द्र० ४:६:२, २:३६:३६

(२) अवस्तृणन्तम् : ढँकना, छिपाना। द्र० ४: १०:१३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वापराधेष्वपीडनीयो ब्राह्मणः ।

२७. समस्त अपराधों में ब्राह्मण को पीड़ित न किया जाय ।

तस्याभिशस्ताङ्को ललाटे स्याद् व्यवहारपतनाय, स्तेये श्वा, मनुष्यवधे कबन्धः, गुरुतल्पे भगम्, सुरापाने मद्यध्वजः ।

२८. व्यवहार में पतित करने के लिये उसके ललाट पर अपराध का चिह्न अङ्कित कर दिया जाय, चोरी करने पर श्वान, मनुष्य बध करने पर कबन्ध, गुरु तल्प गमन करने पर भग एवं सुरापान करने पर मद्यध्वज अंकित किया जाय ।

ब्राह्मणं पापकर्माणमुद्घुष्याङ्ककृतव्रणम् ।
कुर्यान्निर्विषयं राजा वासयेदाकरेषु वा ॥[2]

२९. राजा पापकर्मी ब्राह्मण को उक्त प्रकार से चिह्नित कर, और उसके दुष्कृत्य की घोषणा कर, देश से निकाल दे अथवा आकरों में बसाये ।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे वाक्यकर्मानुयोगः अष्टमोऽध्यायः ।
आदितः पञ्चाशीतितमः ।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टक शोधन में वाक्य कर्मानुयोग सम्बद्ध अष्टम अध्याय समाप्त । आदि से पचासीवां अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) ब्राह्मणः : सूत्र सं० २७, २८ के भाव को मनु ने श्लोक ९:२३७ में लिखा है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) तस्याभिशस्ताङ्कः : चिह्न । याज्ञ० २:४९ ।

(२) व्यवहारपतनाय : सब प्रकार से व्यवहार वर्जनार्थ ।

अपराध करने पर निम्नलिखित चिह्न मस्तक पर लगाया जाता था ।

१. चोरी में श्वान, २. मनुष्यवध में कबन्ध, ३. गुरुभार्यागमन में भग, ४. सुरापान करने पर सुरा विक्रयी की ध्वजा ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) कुर्यान्निर्विषय : स्वदेश से निष्कासन करे ।

(२) द्र० विष्णु ५:२:८ ।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे अष्टमोऽध्यायः वाक्यकर्मानुयोगः, आदितः पञ्चशीतितमः ।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने वाक्यकर्मानुयोगः अष्टमोऽध्याय; आदितः पञ्चाशीतिः ।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे अष्टमोऽध्यायः वाक्यकर्मानुयोगः आदितः पञ्चाशीतितमः ।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे वाक्यकर्मानुयोगः अष्टमोऽध्यायः ॥८॥ आदितः पञ्चाशीतिः ॥८५॥'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चतुरशीतितमं प्रकरणम्—सर्वाधिकरणरक्षणम्[1]

चौरासीवां प्रकरण—सर्वाधिकरण रक्षण

अध्याय ९

समाहर्तृप्रदेष्टारः[3] पूर्वमध्यक्षाणामध्यक्षपुरुषाणां च नियमनं कुर्युः।

१. समहर्ता एवं प्रदेष्टा सर्वप्रथम अध्यक्षों एवं अध्यक्ष पुरुषों का नियमन करें।

खनिसारकर्मान्तेभ्यः सारं रत्नं वाऽपहरतः शुद्धवधः।

२. खनिकर्म स्थानों एवं सार कर्म स्थानों से सार अथवा रत्न का अपहरण करने वाले को प्राणवध दण्ड दिया जाय।

फल्गुद्रव्यकर्मान्तेभ्यः फल्गु द्रव्यमुपस्करं वा पूर्वः साहसदण्डः।

३. फल्गुद्रव्य के कर्म स्थानों से फल्गुद्रव्य या उपस्कर, अपहृत कर्ता पर, पूर्व साहस दण्ड आरोपित किया जाय।

पाद टिप्पणी :

१. सर्वाधिकरण : शासन के सभी विभागों को देखने वाला या मुख्यमन्त्री।

(२) रक्षण : रक्षा करना, देखभाल करना। द्र० १:१७:२,३।

(३) समाहर्तृ प्रदेष्टारः : यह दोनों शुद्ध शासन के लिए उत्तरदायी थे। प्रदेष्टा, समाहर्ता (प्रशासक) के अधीन कार्य करता था। न्यायकर्ता भी उसके पर्यवेक्षण में था। द्र० २:४:४ :

(४) पूर्व : पहले विभाग के अध्यक्षों तथा उनके अधीनस्थ कर्मचारियों पर नियन्त्रण रखे। यहां अनुवादकों ने सब विभागों से अर्थ किया है। कुछ अनुवादकों ने कार्यारम्भ के पूर्व अर्थ किया है।

(५) नियमन : शासन में रखना या नियन्त्रण करना इसका अर्थ विधि तथा स्थिर नियम भी होता है। व्यवस्था करना भी अर्थ किया गया है।

पाद टिप्पणी :

२. (१) खनि : खान।

(२) सारवस्तु : रत्न आदि।

(३) कर्मान्त : कारखाना। द्र० २,१२:१८, २३,२७, २:१७, १७, २:१९:१, १:५, २:२३:१०, गण० १:५।

(४) अपहरतः : अमानत में खयानत करना, हजम कर जाना। लगभग चालीस प्रकार के अपहारों का उल्लेख मिलता है। (द्र० ३:८:४-२०) राज्य कर्मचारियों द्वारा अपहार का भी उल्लेख किया गया है। द्र० ४:९:३-२४।

(५) शुद्धवध : प्राणदण्ड, यहां बिना यातना या बिना कष्ट साधारण प्राणदण्ड से तात्पर्य है। द्र० ४:७:२-३।

पादटिप्पणी :

३, (१) फल्गु : असार वस्तु, कम कीमती सामान। द्र० २:५:८, २:७:२, २:११:१, २.२१:२९, ३०

(२) उपस्कर : उपकरण। याज्ञ० १:८३, २:१९३, मनु० ३:६८, १३:६६, ५:१५० अग्नि० २५७; ४३, ३७१:३७, गण० २:१५८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पण्यभूमिभ्यो वा राजपण्यं माषमूल्यादूर्ध्वमापादमूल्यादित्यपहरतो द्वादशपणो दण्डः, आ द्विपादमूल्यादिति चतुर्विंशतिपणः, आ त्रिपादमूल्यादिति षट्त्रिंशत्पणः, आ पणमूल्यादित्यष्टचत्वारिंशत्पणः, आ द्विपणमूल्यादिति पूर्वः साहसदण्डः आ चतुष्पणमूल्यादिति मध्यमः, आष्टपणमूल्यादित्युत्तमः, आ दशपणमूल्यादिति वधः ।

४. अथवा पण्यभूमि से एक माष मूल्य से लेकर चार माष मूल्य तक का (सामान) अपहरण करने वाले पर बारह पण, आठ माष तक अपहरण कर्ता पर चौबीस पण, बारह माष तक अपहरण कारी पर छत्तीस पण, एक पण तक अपहर्त्ता पर अड़तालीस पण, दो पण तक अपहरणकर्ता पर पूर्व साहस दण्ड, चार पण तक अपहरणकारी पर मध्यम साहस दण्ड, आठ पण तक अपहरणकर्ता पर उत्तम साहस दण्ड तथा दस पण तक अहरणकारी व्यक्ति पर प्राणवध दण्ड आरोपित किए जांय ।

कोष्ठ[1]पण्य[2]कुप्या[3]युधागारेभ्यः कुप्यभाण्डोपस्करापहारेष्वर्धमूल्येषु एत एव दण्डाः ।

५. कोठागार, पण्यागार, कुप्यागार एवं आयुधागारों से उक्त प्रकार के आधे मूल्य के कुप्य, भाण्ड एवं उपस्कर का अपहरण करने पर भी उक्त दण्ड दिए जांय ।

कोशभाण्डागाराक्षशालाभ्यश्चतुर्भागमूल्येषु एत एव द्विगुणा दण्डाः ।

६. कोशागार, भाण्डागार एवं अक्षशालाओं से चौथाई मूल्य तक अपहरण करने पर वही दण्ड दूना करके लगाये जांय ।

पाठ भेद :

त्रिवेन्द्रम एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'आ' ('द्विपणमूल्याद्' के पहले का) तथा 'आष्टपणमूल्यादित्युत्तमः' नही है ।

पादटिप्पणी :

इसमें सूत्र २:५:१६ का परिवर्तन या विक्रिया प्रतीत होती है ।

४. (१) पण्यभूमि : पण्यस्थान, :उत्पादनस्थान ।

पाठ भेद :

'—कुप्यायुधा०' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू अनुलिपि में '७—कुल्यायुधा०' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) कोष्ठागार : राजकीय अन्नादि संग्रह स्थान । मत्स्य : २२७:१७५ द्र० २:३५:१२; ७: १५:२० ।

(२) पण्यागार : राजकीय वस्तुओं के संग्रह का स्थान ।

(३) कुप्यागार : वन उत्पत्ति रखने का स्थान । द्र० १:१६:२९, २:१७:१, ८:४:२३, २४; ९:६: २८:२९ ।

(४) आयुधागार : राजकीय शस्त्रास्त्र रखने का स्थान । मत्स्य० २२७:१७५, अग्नि २६८:३६ गा०च० ४:५:३३ शिव : ५:६:५ ।

(५) कुप्यभाण्ड : संपत्ति । द्र० : १:१६: २९; २:१७:१ गण० : १:७, २२, २४६, ३:१५७

(६) अपहार : हजम कर जाना, दुर्विनियोग । द्र० २:९:१८, ३:१२:८, ४:९:२ गण० १:१५४ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) कोशागार : खजाना ।

(२) भाण्डागार : भण्डार, गोदाम ।

(३) अक्षशाला : सुवर्ण आदि के शोधन-स्थान से तात्पर्य है । गण० १:६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चोराणामभिप्रधर्षणे चित्रो[2] घातः ।

७. अभिप्रधर्षण करने पर चोरों को चित्रघात दण्ड दिया जाय ।

इति राजपरिग्रहेषु व्याख्यातम् ।

८. इति (इस) प्रकार राजपरिग्रह के विषय में व्याख्या सम्पन्न हुई ।

[1]बाह्येषु तु—प्रच्छन्नमहनि क्षेत्रखलवेश्मापणेभ्यः कुप्यभाण्डमुपस्करं वा माषमूल्यादूर्ध्वम् आ पादमूल्याद्‌व्यपहरतस्त्रिपणो दण्डः, गोमयप्रदेहेन वा प्रलिप्यावघोषणम्; आद्विपादमूल्यादिति षट्पण; गोमयभस्मना वा प्रलिप्यावघोषणम्; आ त्रिपादमूल्यादिति नवपणः, गोमयभस्मना वा प्रलिप्यावघोषणम्, शरावमेखलया[4] वा; आ पणमूल्यादिति द्वादशपणः, मुण्डनं प्रव्राजनं वा; आ द्विपणमूल्यादिति चतुर्विंशति पणः, मुण्डस्येष्टकाशकलेन प्रव्राजनं वा; आ चतुष्पणमूल्यादिति षट्त्रिंशत्पणः, आ

९. राजकीय क्षेत्रादि के अतिरिक्त अन्यत्र गुप्तरूप से दिन में क्षेत्र, खल, वेश्म एवं आपण से एक माष मूल्य की वस्तु से लेकर, चार माष मूल्य तक की वस्तु अपहृतकर्ता पर तीन पण, दण्ड लगाया जाय अथवा शरीर पर, गोबर लेप कर, घोषणा पूर्वक नगर भ्रमण कराया जाय । आठ माष मूल्य तक अपहरण करने पर छः पण दण्ड लगाया जाय अथवा गोबर की राख शरीर में प्रलिप्तकर, घोषणा पूर्वक नगर भ्रमण कराया जाय, बारह माष मूल्य तक अपहृत करने पर नव पण दण्ड लगाया जाय अथवा शरीर में गोबर की राख प्रलिप्तकर अथवा मिट्टी के कसोरे रस्सी में बांधकर गले में पहनाकर नगर भ्रमण कराया जाय, एक पण मूल्य तक का अपहरण करने पर बारह पण दण्ड लगाया जाय अथवा शिर मुण्डित कर देश निष्कासन किया जाय, दो पण मूल्य तक अपहृत करने पर चौबीस पण दण्ड लगाया जाय, अथवा शिरोमुण्डन पूर्वक ईंट के रोड़ों के साथ देश

पादटिप्पणी :

यह सूत्र २:५:२० की पुनरुक्ति है ।

७. (१) अभिप्रधर्षण : तोड़ना या तोड़कर ।

(२) चित्रघात : क्लेश यातना सहित मारना या वध । द्र० २:५:२० ।

पादटिप्पणी :

८. (१) राजपरिग्रह : राजकीय भूमि, भवन, सम्पत्ति या राजकीय प्रदेश, कोष्ठागार या पण्यागार या राजा के कब्जा की सम्पत्ति । द्र० २:३६: २२, २८, ३७, ४:३:४, ५:३:२६ ।

पाठ भेद :

तंजोर तथा तेलगू अनुलिपि में 'आ द्विपाद०.... प्रलिप्यावघोषणम्' ('शराव-' के पूर्व) तक नहीं मिलता है तथा 'आ द्विपणमूल्य-' के बाद 'त्रिपादमू० ....प्रव्राजनं वा आ द्विपणमूल्या०' पुनरुक्त है और 'आ चतुष्पण-' के पूर्व तेलगू अनुलिपि में 'आ त्रिपण-मूल्यादिति चत्वारिंशत्पणः मुण्डनमिष्टकाशकलेन प्रव्राजनं वा' पाठ अधिक मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) बाह्य : अन्य सम्पत्ति अर्थात् राजकीय सम्पत्ति के अतिरिक्त ।

(२) गोमय : गोबर ।

(३) शराव : मिट्टी का कसोरा ।

(४) मेखला : करधनी की तरह शकोरा पिरोकर उसके कमर या गले में लटकाने या बांधने से तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पञ्चपणमूल्यादित्यष्टचत्वारिंशत्पणः, आ दशपणमूल्यादिति पूर्वः साहसदण्डः; आ विंशतिपणमूल्यादिति द्विशतः; आ त्रिंशत्पणमूल्यादिति पञ्चशतः; आ चत्वारिंशत्पण-मूल्यादिति साहस्रः; आ पञ्चाशत्पणमूल्यादिति वधः ।

निष्कासन किया जाय, चारपण मूल्य तक अपहरण करने पर, छत्तीस पण, पाँच पण मूल्य तक अपहरण करने पर, अड़तालीस पण, दस पण मूल्य तक अपहरण करने पर, पूर्व साहस दण्ड, बीस पण मूल्य तक के अपहरण पर, दो सौ पण, तीस पण मूल्य तक अपहरण करने पर, पाँच सौ पण, चालीस पण मूल्य तक के अपहरण पर, एक हजार पण, पचास पण मूल्य तक का अपहरण करने पर, प्राणवध दण्ड आरोपित किया जाय ।

प्रसह्य दिवा रात्रौ वाऽन्तर्यामिकमपहरतोऽर्धमूल्येषु एत एव दण्डाः ।

१०. दिन अथवा रात्रि में पहरा के अन्तराल में बलात् अपहरण कर्ता के ऊपर आधे मूल्य के वस्तु पर भी उक्त दण्ड लगायें जांय ।

प्रसह्य दिवा रात्रौ वा सशस्त्रस्यापहरतश्चतुर्भागमूल्येषु एत एव द्विगुणा दण्डाः ।

११. दिन अथवा रात्रि में बलपूर्वक शस्त्रधारी अपहर्ता के ऊपर चतुर्थ भाग मूल्य की वस्तु पर उक्त के दूने दण्ड लगाये जांय ।

कुटुम्बिकाध्यक्षमुख्यस्वामिनां कूटशासनमुद्राकर्मसु पूर्वमध्यमोत्तमवधा दण्डाः, यथापराधं वा ।

१२. कुटुम्बिक, अध्यक्ष, मुख्य एवं स्वामी कूट शासन एवं कूट मुद्राकर्म करें, तो उनपर क्रमशः प्रथम साहस, मध्यम साहस, उत्तम साहस तथा वध दण्ड आरोपित किये जांय अथवा अपराधानुसार दण्ड लगाये जांय ।

पाठभेद :

'० न्तर्यामिकमपहरतो' का पाठभेद तंजोर में '०न्तर्यामिमेव हरतो' तथा तेलगू अनुलिपि में '०न्त-र्याममेंव' मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्प-णियों तथां तेलगू अनुलिपि में 'द्विगुणा दण्डाः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) प्रसह्य : बलात्, जबरदस्ती, बल-पूर्वक । शि० १:९७ ।

(२) अन्तर्यामिक : पहरा पड़ने के समय जब लोगों का चलना फिरना वर्जित रहता है । द्र० २: ३६:३४-३५ ।

पाठ भेद :

तंजोर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों तथा तेलगू अनुलिपि में 'द्विगुणा' नहीं मिलता है ।

पाठ भेद :

'कुटुम्बिका०' का पाठभेद तंजोर तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों में 'कुटुम्बिका०' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) कुटुम्बिक : गृहपति ।

(२) मुख्य : मुख्य अधिकारी । द्र० ५:१:३ ।

(३) स्वामी : राजा या पालक ।

(४) कूटशासन : कपटलेख, जाली दस्तावेज, जाली राज आज्ञा पत्र, जाली सिक्का भी अर्थ होगा । मत्स्य २२७:१६०-१६१; स्कन्द : १:२:४१:६२ । भविष्यः १:१९१:६, ४:५:५२, शिवः ५:६:२५; वराह १९५:१६-१९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धर्मस्थश्चेद्विवदमानं पुरुषं तर्जयति भर्त्सयत्यपसारयत्यभिग्रसते वा पूर्वमस्मै साहसदण्डं कुर्यात्, वाक्पारुष्ये द्विगुणम् ।

१३. यदि धर्मस्थ अधिकारी विवाद करते व्यक्ति को तर्जित, भर्त्सित, अपसरित अथवा अभिग्रसित करे, तो उस पर पूर्व साहस दण्ड लगाया जाय। कटु वाक्य प्रयोग करने पर, उक्त दण्ड का दूना दण्ड आरोपित किया जाय।

पृच्छ्यं न पृच्छति, अपृच्छ्यं पृच्छति, पृष्ट्वा वा विसृजति, शिक्षयति, स्मारयति, पूर्वं ददाति वा इति मध्यममस्मै साहसदण्डं कुर्यात् ।

१४. यदि धर्मस्थ अधिकारो पृष्टव्य नहीं पूछता है और अप्रव्यष्ट पूछता है अथवा पूछकर छोड़ देता है, सीख देता है, स्मरण दिलाता है, अथवा कथन को पूर्ण करता है तो उसके ऊपर मध्यम साहस दण्ड आरोपित किया जाय।

देयं देशं न पृच्छति, अदेयं देशं पृच्छति, कार्यमदेशेनातिवाहयति, च्छलेनातिहरति, कालहरणेन श्रान्तमपवाहयति, मार्गापन्नं वाक्यमुत्क्रमयति, मति

१५ जो देय-देश नहीं पूछता है, अदेय देश पूछता है, साक्षी के बिना निर्णय करता है, छल पूर्वक साक्षी को बहकाता है, समय बिताकर, श्रान्त साक्षी को पृथक् करता है, क्रम प्राप्त वाक्य को

---

(५) कूट मुद्रा : जाली सील मोहर।

(६) वध . मनु० ९:२३२।

पादटिप्पणी :

१३. (१) धर्मस्थ : विचारक, न्यायाधीश, जज। द्र० ३:१:१।

(२) तर्जना : धमकाना। ब्रह्मा० २:७:२०।

(३) भर्त्सना : बुरा भला कहना, झिड़कना।

(४) अपसार : भगा देना या बाहर निकाल देना। द्र० २:५:५. ८:४:१३, ७:१८:१५; १:२०:२। गण० २:३३७, ३४०, ३:२६, २०७, १११।

(५) अभिग्रसतें : भय दिखाना, आंख दिखाना। द्र० ४:४:६, ७।

(६) वाक्यपारुष्य : गाली गलौज या कठोर अपशब्द। गण० ३:१९।

पादटिप्पणी :

१४. (१) पृच्छ्यं : पूछने योग्य, जिससे पूछा जाय या प्रश्न किया जाय।

(२) पृष्ट्वा : पूछने या प्रश्न करने पर।

(३) विसृजति : खारिज करना, बर्खास्त करना।

(४) शिक्षयति : सिखलाना।

(५) स्मारयति : याद दिलाना, प्रोत्साहित या उद्‌बोधितकरण।

(६) पूर्वं ददाति : पहले दिया गया।

पाठ भेद :

'मार्गापन्नं' का पाठभेद तंजौर में तथा तेलगू अनुलिपि में 'मार्गपणं' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१५. (१) देशं : साक्षी, प्रमाण, या स्वामित्व का प्रकट प्रमाण। द्र० ३:१:१९। गण० २:९७, ३:४५।

(२) छलेनातिहरति : बहाना बनाकर खारिज करना। द्र० ३:२०:२२।

(३) अपवाहयति : अलग या घर ले जाना या अदालत में आने से रोकना। गण० २:३४६:, ३१०।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साहाय्यं साक्षिभ्यो ददाति, तारितानुशिष्टं कार्यं पुनरपि गृह्णाति, उत्तममस्मै साहस-दण्डं कुर्यात् ।

व्यतिक्रम युक्त करता है, साक्षियों को बुद्धि साहाय्य प्रदान करता है, निर्णीत को पुनः निर्णयार्थ उपस्थित करता है—ऐसे धर्मस्थ को उत्तम साहस दण्ड दिया जाय।

पुनरपराधे द्विगुणं स्थानाद्व्यवरोपणं च ।

१६. पुनः अपराध करने पर, दूना दण्ड लगाया जाय और स्थानच्युत किया जाय।

लेखकश्चेद् उक्तं न लिखति, अनुक्तं लिखति, दुरुक्तमुपलिखति, सूक्तमुल्लिखति, अर्थोत्पत्तिं वा विकल्पयति, इति पूर्वमस्मै साहसदण्डं कुर्याद्, यथापराधं वा ।

१७. यदि लेखक उक्त वाक्य नहीं लिखता है, अनुक्त लिखता है, दुरुक्त को ठीक लिखता है, अच्छे कथन को विकृत कर लिखता है अथवा अर्थ को बदलकर, लिखता है, तो उसपर पूर्व साहस दण्ड लगाया जाय अथवा अपराधानुसार दण्ड दिया जाय।

धर्मस्थः प्रदेष्टा वा हैरण्यदण्डमदण्ड्ये क्षिपति क्षेपद्विगुणमस्मै दण्डं कुर्यात्, हीनातिरिक्ताष्टगुणं वा ।

१८. धर्मस्थ अथवा प्रदेष्टा अदण्डनीय व्यक्ति पर हिरण्य दण्ड लगाता है, तो उस पर उस दण्ड का दूना दण्ड लगाया जाय, कम या अधिक दण्ड लगाने पर, उसका आठ गुना दण्ड उसपर, आरोपित किया जाय।

---

(४) मतिसाहाय्य : बुद्धि की सहायता। बयान देने में मदद करना।

(५) तारित : पूरा या निपटा हुआ। या अन्त तक ले जाना। मनु० ८१:२३३, द्र० ३:१:४३।

(६) अनुशिष्ट : फैसला हुआ या जिसमें निर्णय दिया जा चुका है। इसका अर्थ शिक्षा, अध्यापन आदेश एवं आज्ञा भी होता है।

पाठभेद :

'व्यवरोपणं' का पाठभेद तंजौर की पादटिप्पणी, मलयालम नागरी अनुलिपि एवं तेलगू अनुलिपि में 'व्यपरोपणं' मिलता है।

पाद टिप्पणी :

१६. (१) अवरोपण : हटाना, बरखास्त या पदच्युत करना।

पाठ भेद :

'अर्थोत्पत्ति वा' का पाठभेद तंजौर में 'अर्थो वा' और तेलगू अनुलिपि में 'अर्थाद्वा' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१७. (१) लेखक : लिपिक।

(२) दुरुक्तमुपलिखति : गलत को सही कर लिखना।

(३) सूक्तमुल्लिखति : ठीक कहेहुए को गलत लिखना।

(४) अर्थोत्पत्ति : जो कहा गया है उसके भाव को संशोधित या परिवर्तित कर लिखने से तात्पर्य है। बदल देना।

पाठभेद :

'हैरण्यदण्डमदण्ड्ये' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों में 'हैरण्यमदण्ड्यं' तथा तेलगू अनुलिपि में 'हैरण्यं दण्डं' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) धर्मस्थ : न्यायाधीश।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शारीरदण्डं क्षिपति शारीरमेव दण्डं भजेत, निष्क्रतद्विगुणं वा ।

१९. यदि शारीरिक दण्ड देता है, तो वह शारीरिक दण्ड का भागी बने अथवा शारीरिक दण्ड के बदले धन दण्ड देने की स्थिति में उसका दूना दण्ड वह दे ।

यं वा भूतमर्थं नाशयति अभूतमर्थं करोति तदष्टगुणं दण्डं दद्यात् ।

२०. जिस उचित अर्थ को नष्ट करता है अथवा अनुचित अर्थ को करता है ? उसका आठ गुना दण्ड उसपर लगाया जाय ।

धर्मस्थीये चारके बन्धनागारे वा शय्यासनभोजनोच्चारसंचाररोधबन्धनेषु त्रिपणोत्तरा दण्डाः कर्तुः कारयितुश्च ।

२१. धर्मस्थीय चारक अथवा बन्धनागार में शयन, आसन, भोजन, उच्चार, संचार एवं बन्धन कर्ता और कारयिता पर उत्तरोत्तर तीन पण दण्ड अधिक लगाया जाय ।

चारकादभियुक्तं मुञ्चतो निष्पातयतो वा मध्यमः साहसदण्डः, अभियोगदानं च, बन्धनागारात् सर्वस्वं वधश्च ।

२२. चारक से अभियुक्त को मुक्त अथवा पलायित करने वाले पर मध्यम॰ साहस दण्ड लगाया जाय तथा अभियोग दान लिया जाय, बन्ध नागर से उक्त कार्य करने वाले का सर्वस्वहरण तथा वध किया जाय ।

---

(२) प्रदेष्टा : मजिस्ट्रेट ।

(३) हिरण्य : मुद्रा या नगददण्ड । द्र० १:१३:६, १:१९:१२ ।

(४) द्विगुण : द्र० याज्ञ० २:३०५ ।

(५) हीनातिरिक्त : देय दण्ड से हीन या कम ।

(६) अतिरिक्त : जज पर नियमित जुर्माना से आठ गुना अतिरिक्त जुर्माना लगाने से तात्पर्य है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) शारीरदण्ड : कायदण्ड, दैहिकदण्ड ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) भूतमर्थं : अर्थ का यहाँ तात्पर्य दावे में जो मालियत रखी गई है, वह होगा। इसका अर्थ न्यायपूर्ण या उचित दावा से किया गया है । द्र० ३:११:४५ ।

(२) अभूतमर्थं : अनुचित दावा ।

पाठ भेद :

'धर्मस्थीय चारके बन्धनागारे वा' का पाठ भेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों तथा तेलगू अनुलिपि में 'धर्मस्थीयाच्चारकान्निः सारयतो बन्धनागाराद्वा' और '—संचाररोध—' का तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों में '—संचारं रोध—' तथा तेलगू अनुलिपि में '—संभारं रोध—' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) चारक : अदालत की हवालात । द्र० ४:९:२२,२७, गण० २:१६२ ।

(२) बन्धनागार : जेल, कारागार ।

(३) कर्तुः : जो करता है ।

(४) कारयितुः : उस अधिकारी से तात्पर्य है, जो करवाने का आदेश देता है या करवाता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) चारक : हवालात या हाजत या संरोध गृह । द्र० ४:९:२१,२७ ।

(२) मुञ्चतः : आजाद करना या मुक्त करना ।

(३) निष्पात : निकल भागना, बच निकलना ।

(४) अभियोग दान : जुर्माना सहित, अभियोग सम्बन्धी रूपया अदा करना । इसका सम्बन्ध कारागार अधिकारियों से है ।

अभियोग दो प्रकार का होता है ।

१—शंकाभियोग २—तत्वाभियोग ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बन्धनागाराध्यक्षस्य संरूद्धकमनाख्याय चोरयतश्चतुर्विंशतिपणो दण्डः, कर्म[2] कारयतो द्विगुणः, स्थाना[3]न्यत्वं गमयतोऽन्नपानं वा रुन्धतः षण्णवतिर्दण्डः, परिक्लेशयत[4] उत्कोटयतो[5] वा मध्यमः साहसदण्डः, घ्नतः साहस्रः ।

२३. बन्धनागाराध्यक्ष की स्वीकृति के बिना बन्दी को भ्रमण कराने वाले पर चौबीस पण, उससे कर्म कराने वाले पर, अड़तालीस पण, उसका स्थान परिवर्तित करने वाले अथवा अन्नपान अवरुद्ध करने वाले पर, छान्बे पण, परिक्लेश अथवा उत्कोट करने वाले पर, मध्यम साहस दण्ड, वध करने वाले पर, एक हजार पण दण्ड लगाया जाय ।

परिगृहीतां[1] दासीमाहितिकां[2] वा संरुद्धिकामधिचरतः[3] पूर्वः साहसदण्डः, चोरडामरिक[4]भार्यां मध्यमः, संरुद्धिकामार्यां[5]मुत्तमः ।

२४. परिगृहीता अथवा आहितिका दासी के बन्दी होने की स्थिति में उसके साथ दुराचारण करने वाले पर, पूर्व साहस दण्ड, चोर डामरिक की स्त्री के प्रति उक्त व्यवहार कर्ता पर, मध्यम साहस दण्ड तथा संरुद्ध धार्य स्त्री के प्रति उक्त कार्य कर्ता पर, उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय ।

पाठ भेद :

'संरुद्धकम्' का पाठभेद तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'संक्रुद्धकम्' तथा 'उत्कोटयतो' का भाषा-व्याख्यान में 'उत्कोचयतो' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) चारयत : कैदी को गति की स्वतंत्रता देना या पेरोल पर छोड़ना ।

(२) कर्म : यातना । द्र० ४:८:२१-२३ ।

(३) स्थानान्यत्व : इसका तात्पर्य केवल स्थान परिवर्तन नहीं अपितु श्रेणी या पद या प्रतिष्ठा परिवर्तन से भी है ।

(४) परिक्लेश : यन्त्रणा, सन्ताप, पीड़ा ।

(५) उत्कोटयतो : पंगु, विकलांग, या हीनांग करना ।

पाठ भेद :

'परिगृहीतां' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणियों में 'परिगृहीतानां' तथा '-डामरिक-' का तंजौर में '-धामरिका-' एवं तेलगू अनुलिपि में '-धामरिक-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) परिगृहीता : विवाहिता स्त्री ।

(२) आहितक : बन्धक रखे हुए । द्र० २:१: २५,३:१३:६:११ ।

(३) संरुद्धिका : दासी बन्दी के साथ व्यभिचार एवं दण्ड । द्र० २:९:२५, १३:४:२८ ।

(४) डामरिक : विप्लवकारी, उपद्रवी । द्र० २:६:२०, गण० १:१४० । काश्मीर में डामर शब्द हिन्दुओं में दर तथा मुसलमानों में दार रूप में प्रचलित है । डामरों के उपद्रव के कारण कश्मीर के राजा त्रस्त रहते थे ।

(५) आर्या : आर्य स्त्री ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संरुद्धस्य वा तत्रैव घातः ।

२५. अथवा संरुद्ध व्यक्ति का (उक्त कार्य पर) वहीं वध कर दिया जाय।

तदेवाक्षणगृहीतायामार्यायां विद्यात्, दास्यां पूर्वः साहसदण्डः ।

२६. अक्षण गृहीत आर्य स्त्री के प्रति उक्त व्यवहार करने वाले पर, वध दण्ड तथा दासी के प्रति उक्त व्यवहारकर्ता पर, पूर्व साहस दण्ड लगाया जाय ।

चारकमभित्वा निष्पातयतो मध्यमः, भित्वा वधः, बन्धनागारात् सर्वस्वं वधश्च ।

२७. चारक भेदन किए बिना बन्दी को पलायित करने वाले पर, मध्यम साहस दण्ड तथा उसका भेदन कर, पलायित कर्ता पर, वध दण्ड लगाया जाय, बन्धनागार से उक्त कार्य करने वाले का सर्वस्व हरण किया जाय तथा उसे वधदण्ड दिया जाय ।

एवमर्थचरान् पूर्वं राजा दण्डेन शोधयेत् ।
शोधयेयुश्च शुद्धास्ते पौरजानपदान् दमैः ।।

२८. राजा इस प्रकार पहले अर्थचर अधिकारियों को दण्ड द्वारा शुद्ध करे तदनन्तर परिशुद्ध वे अधिकारी दमन द्वारा पौर जानपदों को शुद्ध करें ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) संरुद्ध : कैदी, बन्दी ।

(२) तत्रैव घात : तुरन्त उसी जगह मार देना । यह आर्या कैदी के विषय में लागू होगा, न कि दासी आदि के ।

पाठभेद :

'तदेवाक्षणगृहीतायाम्' का पाठभेद भाषाव्याख्यान में 'तदेवाध्यक्षेण गृहीतायाम्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) अक्षणगृहीता : द्र० २:३६:३४, ३५, ४०१; ३:१२:४६।

(२) आर्यास्त्री : आर्य या कुलीन स्त्री ।

पादटिप्पणी :

२७. कैदी के भागने पर दण्ड । यह जेल के अधिकारियों पर नहीं बल्कि दूसरों पर लागू होता है ।

(१) चारक : हवालात । द्र० ४:९:२१, २२ ।

(२) भित्वा : बिना तोड़ या बिना तोड़कर ।

पाठभेद :

'दमैः' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'जनैः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) अर्थचरान् : द्र० : २:९:३२ । धन सम्बन्धी कार्यों पर नियुक्त अधिकारी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे सर्वाधिकरणरक्षणं नवमोऽध्यायः। आदितः षडशीतितमः।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टकशोधन में सर्वाधिकरण रक्षण सम्बद्ध नवम अध्याय समाप्त। आदि से छियासीवां अध्याय समाप्त।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोघने चतुर्थाधिकरणे नवमोऽध्यायः, सर्वाधिकरणक्षणरम्, आदितः षडशीतितमः।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने सर्वाधिकरणरक्षणं नवमोऽध्यायः आदितः षडशीतिः।'

डॉ० बसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे नवमोऽध्यायः सर्वाधिकरणरक्षणं, आदितष्षडशीतितमः।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे सर्वाधिकरणरक्षणं नवमोऽध्यायः ॥९॥ आदितः षडशीतितमः ॥८६॥'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १०

पञ्चाशीतितमं प्रकरणम्—एकाङ्गवधनिष्क्रयः

तीर्थघातग्रन्थिभेदोर्ध्वकराणां प्रथमेऽपराधे संदंशच्छेदनं चतुष्पञ्चाशत्पणो वा दण्डः, द्वितीये छेदनं पणस्य शत्यो वा दण्डः, तृतीये दक्षिणहस्तवधश्चतुःशतो वा दण्डः, चतुर्थे यथाकामो वधः ।

१. तीर्थघात, ग्रंथिभेद एवं ऊर्ध्वकर अपराधियों के प्रथम अपराध पर सन्दंशच्छेदन अथवा चौवनपण दण्ड लगाया जाय, द्वितीयबार अपराध करने पर, छेदन अथवा सौ पण दण्ड लगाया जाय, तृतीय अपराध पर, दक्षिणहस्तछेदन अथवा चार सौ पण दण्ड लगाया जाय, चतुर्थ अपराध पर, इच्छानुसार वध किया जाय।

पञ्चविंशतिपणावरेषु कुक्कुटनकुलमार्जारश्वसूकरस्तेयेषु हिंसायां वा चतुष्पञ्चाशत्पणो दण्डः, नासाग्रच्छेदनं वा, चण्डालारण्यचराणामर्धदण्डाः ।

२. पच्चीस पण से न्यून मूल्य वाले कुक्कुट, नकुल, मार्जार, श्वान एवं सूकर की चोरी या हिंसा करने पर, चौवनपण दण्ड लगाया जाय अथवा नासाग्रच्छेदन किया जाय, चाण्डाल के और अरण्य चर होने पर, आधा दण्ड लगाया जाय।

पाठभेद :

'-भेदोर्ध्व-' का पाठभेद तंजौर में '-भेदोद्ध-', त्रिवेन्द्रम् में '-भेदोद्ध्व-' और तेलगू अनुलिपि में '-भेदेर्थ-' तथा '-करायां-' का मलयालम नागरी अनुलिपि में '-करणानां' और तेलगू अनुलिपि में 'चरणां' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१. (१) एकाङ्गवध : किसी एक अंग या अवयव यथा हाथ, पैर, उंगली, कान आदि काटने से तात्पर्य है। याज्ञ० २:२७४।

(२) निष्क्रय : अनेक प्रकार के शारीरिक दण्ड चोरी तथा उसी प्रकार के अपराधों के लिए निश्चित किए गए थे। उनका स्थान कालान्तर में अर्थदण्ड ने ले लिया। मनु और याज्ञवल्क्य ने इस सूत्र का भाव एवं शब्दावली को अपने ग्रन्थों में लिखा है।

(३) तीर्थघात : तीर्थ स्थानों पर या पर्वादि के अवसरों पर-वस्तुओं की चोरी करने वाले। याज्ञ० २:२७४।

(४) ग्रन्थिभेद : पाकेटमार या गांठ काटने वाला गिरहकट। अग्नि, २५८:५२,६३, याज्ञ० २:२:४। गण० ३:१६४।

(५) ऊर्ध्वकर : छत काटकर चोरी करने वाला। गण० २:१६४।

(६) संदंशच्छेदन : संड़सी से मांस नोचने का दण्ड या कनिष्ठिका एवं अंगुष्ठ का छेदन। उ० २: २३, गण० १:२२३,१:३३।

(७) पण : इसका तात्पर्य हाथ की पाँचों अंगुलियों के काटने से है। उ० २:१४:१४, मनु० ९: २७७, याज्ञ० २:२७४।

(८) यथाकामो : साधारण मृत्युदण्ड अथवा दण्ड, जैसी न्यायाधीश की इच्छा हो।

पादटिप्पणी :

२. (१) कुक्कुट : मुर्गा।

(२) नकुल : नेवला।

(३) मार्जार : बिल्ली।

(४) श्व : कुत्ता या श्वान।

(५) सूकर : सूअर।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पाशजाल[1]कूटा[2]वपातेषु बद्धानां मृगपशुपक्षिव्यालमत्स्यानामादाने[3] तच्च तावच्च दण्डः।

३. पाश, जाल एवं कूटावपात में बद्ध, मृग, पशु, पक्षी, व्याल एवं मत्स्य के ग्रहण करने पर वह तथा उतना और दण्ड लिया जाय।

मृगद्रव्यवनान्मृगद्रव्यापहारे शत्यो दण्डः।

४. मृगवन तथा द्रव्यवन से मृग और द्रव्य का अपहरण करने पर, सौ पण दण्ड लगाया जाय।

बिम्ब[1]विहार[2]मृगपक्षिस्तेये हिंसायां वा द्विगुणो दण्डः।

५. बिम्ब, बिहार-मृग एवं विहार-पक्षी की चोरी या हिंसा करने पर, दूना दण्ड लगाया जाय।

कारु[1]शिल्पिकुशीलव[2]तपस्विनां क्षुद्रक[3]द्रव्यापहारे शत्यो दण्डः, स्थूलक[4]द्रव्यापहारे द्विशतः, कृषिद्रव्या[5]पहारे च।

६. कारु, शिल्पी, कुशीलव एवं तपस्वियों की छोटी वस्तु का अपहरण करने पर, सौ पण दण्ड लगाया जाय, बड़ी वस्तु का अपहरण तथा कृषि द्रव्य का अपहरण करने पर, दो सौ पण दण्ड लगाया जाय।

---

(६) हिंसा : हत्या, वध, मारना।

(७) नासाग्रच्छेदन : नाक के अग्रभाग का छेदन या काटना।

(८) अरण्यचर : वन के प्राणी।

पाठ भेद :

तंजौर तथा तेलगू अनुलिपि में '-कूटावपातेषु' का '-कूटापपात्रेषु' तथा 'बद्धानां' का 'बन्धानां' पाठ-भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) पाशजाल : पक्षियों या जन्तुओं के पकड़ने का जाल या फन्दा।

(२) कूटावपात : घास-फूस से ढका या छिपा हुआ गढ़ा जिसमें धोखे से पशु गिर कर फस जाते हैं।

(३) आदान : पकड़ना। गण० १:१३९।

पादटिप्पणी :

५. (१) बिम्ब : प्रदर्शन, इसका अर्थ कुछ अनुवादकों ने विचित्रवर्ण गिरगिट या रंगविरंग भी किया है :

(२) बिहार मृग : कृष्णसारमृग, क्रीडामृग, जो दिखाने, आमोद-प्रमोद या विहार के लिए रखे जाते हैं।

(३) विहारपक्षीं : शुक आदि पक्षी, जो खेल, आमोद-प्रमोद या विहार के लिए रखे जाते हैं।

यह सूत्र तत्कालीन सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालता है। लोगों में पशु-पक्षी पालने का विशेष शौक था। पक्षियों के पालने की प्रथा समस्त भारत में प्रचलित थी। कश्मीर में राजा शुकावली रखते। थे। आज भी तौता, मैना, शुक, लाल, काला तोता, तीतल, बुलबुल आदि लोग पालते हैं। हरिण समृद्धिशाली तथा जिनके पास खुली जमीन होती थी, वे पालते थे। आज यह प्रथा भूमि के अभाव में कम हो गयी है।

पादटिप्पणी :

६. (१) कारु : स्थूल शिल्पकारी, शिल्पी।

(२) कुशीलव : सूक्ष्म शिल्पकार्त, चारणादि।

(३) क्षुद्रक द्रव्य : छोटा द्रव्य।

(४) स्थूल द्रव्य : बड़ा द्रव्य।

(५) कृषि द्रव्य। कृषि का सामान या उपकरण, जैसे हल आदि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुर्गमकृतप्रवेशस्य प्रविशतः प्राकारच्छिद्राद्वा निक्षेपं गृहीत्वा पसरतः काण्डरावधो, द्विशतो वा दण्डः ।

७. दुर्ग में प्रवेश करने वाले अथवा प्राकार छिद्र से निक्षेप लेकर भागने वाले का कण्डरा वध किया जाय अथवा दो सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

चक्रयुक्तं नावं क्षुद्रपशुं वाऽपहरत एकपादवधः, त्रिशतो वा दण्डः ।

८. चक्रयुक्त नाव अथवा क्षुद्र पशु के अपहरणकर्ता का एक पादच्छेदन किया जाय अथवा तीन सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

कूटकाकण्यक्षारालाशलाकाहस्तविषमकारिण एकहस्तवधः, चतुःशतो वा दण्डः ।

९. कूटकाकणी, अक्ष, अराल एवं शलाका को हस्तकौशल द्वारा विषम करने वाले का एक हस्तच्छेदन किया जाय अथवा चार सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

स्तेनपारदारिकयोः साचिव्यकर्मणि स्त्रियाः संगृहीतायाश्च कर्णनासाच्छेदनं, पञ्चशतो वा दण्डः, पुंसो द्विगुणः ।

१०. स्नेह और पारदारिक के दूत कर्म में पकड़ी गयी स्त्री का कान-नाक काट लिया जाय अथवा पाँच सौ पण दण्ड लगाया जाय, पुरुष पर दूना दण्ड लगाया जाय ।

पाठभेद

'काण्डरा-' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'कन्धरा-' और भाषाव्याख्यान में 'कण्डरा-' मिलता है

पाद टिप्पणी :

७. (१) अकृत प्रवेश : विना अनुमति के प्रवेश द्र० २:२८:१९ ।

(२) प्राकारच्छिद्र : किले की चहार दिवारी में छेद करना या सेंध लगाना ।

(३) निक्षेप : जो किसी को धरोहर या सामान बनाने के लिए दिया गया हो ।

(४) काण्डरावध : काण्डरा का अर्थ मांस, रज्जु, स्नायु, पेशी, बन्धनी, शिरा, नस आदि होता है । पैर की नस काटने से तात्पर्य है । पैर के पीछे अस्थि सन्धि का बन्धन भी काण्डरा का एक अर्थ किया गया है ।

पाठ भेद :

'चक्रयुक्तं' का पाठभेद भाषाव्याख्यान में 'चक्रयुक्तां' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

८. (१) चक्रयुक्त : पहिये वाली गाड़ी । द्र० ३:१२:२ । ४:१३:२२ ब्रह्म वै० २:३०,१०२,१०३

पाठ भेद :

'०क्षाराला-' का पाठभेद भाषाव्याख्यान में '० क्षारला-' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

९. (१) कूटकाकणी : छलयुक्त कौड़ी या सोरही, जिससे आज भी लोग जूआ खेलते हैं ।

(२) अक्ष : पाशा ।

(३) अराल : जुआ खेलने का, चमड़े का पट्टा या चौकड़ी । द्र० ३:२०:१० ।

(४) शलाका : पतली चिकनी शुर्मा लगाने की शलाका । यहाँ जुआ खेलने की आयताकार हाथी दाँत की गोटी या पासा से तात्पर्य है । गण० २: ११३ ।

(५) हस्तवध : हाथकाटना, आज भी अरबदेशों में चोरी करने वालो का हाथ काट देते हैं । हाथ इसलिए काटा जाता है कि यह अपराध हाथ से ही किया जाता है ।

पाद टिप्पणी :

१०. (१) स्तेन : चोर, लुटेरा ।

(२) पारदारिक : परस्त्रीगामी ।

(३) साचिव्यर्म : दूत कर्म, कार्य में सहयोग ।

(४) संगृहता : व्यभिचारण ।

(५) पुंस : : पुरुष ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महापशुमेकं दासं दासीं वाऽपहरतः प्रेत[2]भाण्डं वा विक्रीणानस्य द्विपाद[3]वधः, षट्छतो वा दण्डः ।

११. महापशु, दास अथवा दासी का अपहरण करने वाले अथवा प्रेतभाण्ड का विक्रय करने वाले का दोनों पैर काटा जाय अथवा छः सौ पणदण्ड लगाया जाय ।

वर्णोत्तमानां गुरूणां च हस्तपादलङ्[2]घने राजयानवाहनाद्यारोहणे चैकहस्त[4]पादवधः, सप्तशतो वा दण्डः ।

१२. उत्तम वर्ण अथवा गुरु को हाथ-पैर से ताडन करने पर और राजयान एवं वाहन पर आरोहण करने पर, एक हाथ-पैर काट लिया जाय अथवा सात सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

शूद्रस्य ब्राह्मणवादिनो देवद्रव्यमवस्तृ[2]णतो राजद्विष्ट[3]मादिशतो द्विनेत्र[4]भेदिनश्च योगाञ्जनेनान्धत्वम्, अष्टशतो वा दण्डः ।

१३. ब्राह्मणवादी शूद्र, देवद्रव्यापहारी, नृपानिष्टभाषी एवं द्विनेत्रभेदी को योगाञ्जन से अंधा किया जाय अथवा आठ सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

पाद टिप्पणी :

११. (१) महापशु : अश्व, महिषादि । याज्ञ० २:३०२-३०४; मनु० ८:३२४ ।

(२) प्रेतभाण्ड : शव के पात्र या वस्तुयें । द्वितीय विश्व युद्ध सन् १९३९-१९४५ के मध्य समय में भारत में वस्त्र मिलना दुर्लभ हो गया था । उस समय कब्र से वस्त्र निकालने की घटना प्रायः समाचार में छपती थी । कितने शव पुराने वस्त्रों में लपेट कर गाड़े या जलाए जाते थे ।

(३) द्विपादवध : दोनों पैर काट देना या छेदन करना ।

पाद टिप्पणी :

१२. (१) वर्णोत्तम : अपने से उत्तम वर्ण । याज्ञ०, २:३०३ ।

(२) लङ्घन : मारना, या ताड़ना देना । लंघन का साधारण अर्थ उपवास या कूदने में शिक्षित होता है । द्र० ३:२:३०, ३२, ३६ ।

(३) राजयान : याज्ञ० २:३०३, गण० १: ३२५ ।

(४) एकहस्तपादवध : एक हाथ तथा पैर काटना या छेदन ।

पाठ भेद :

'अवस्तृणतो' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'अस्तृणतो' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

१३. (१) ब्राह्मणवादी : शूद्र अपने को यदि ब्राह्मण कहे । याज्ञ० २:३०४ ।

(२) अवस्तृणत : द्र० ४:८:२६ ।

(३) राजद्विष्ट : राज विरोधी या द्रोही । याज्ञ० २:३०४ ।

(४)द्विनेत्र : याज्ञ० २:३०४ ।

(५) योगाञ्जन : विषयुक्त सुरमा या अञ्जन । द्र० १४:१:१५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चोरं[१] पारदारिकं[२] वा मोक्षयतो[३] राजशासनमूनमतिरिक्तं[४] वा लिखतः कन्यां दासीं वा सहिरण्यमपहरतः[५] कूटव्यवहारिणो[६] विमांसविक्रयिणश्च[७] वामहस्तद्विपादवधो, नवशतो वा दण्डः ।

१४. चोर अथवा पारदारिक को मुक्त करने वाले, राजाज्ञा को न्यून या अधिक कर के लिखने वाले, धन (आभूषण) सहित कन्या या दासी का अपहरण करने वाले, कूट व्यवहारकर्ता, एवं अभक्ष्य मांस विक्रेता का बायां हाथ तथा दोनों पैर काट लिये जांय अथवा नव सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

मानुषमांसविक्रये[१] वधः ।

१५. मानुषमांस विक्रय करने पर वध किया जाय ।

देवपशुप्रतिमामनुष्य[१]क्षेत्र[२]गृहहिरण्यसुवर्णरत्नसस्यो[३]पहारिण उत्तमो दण्डः, शुद्धवधो[४] वा ।

१६. देवता से सम्वन्धित पशु, प्रतिमा, मनुष्य, क्षेत्र, गृह, हिरण्य, सुवर्ण, रत्न एवं सस्य (अन्न) का अपहरण करने वाले पर, उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय अथवा वध किया जाय ।

पुरुषं चापराधं च कारणं[१] गुरुलाघवम् ।
अनुबन्धं[२] तदात्वं च देशकालौ समीक्ष्य च ॥

१७. पुरुष, अपराध, कारण, गुरु-लाघव, अनुबन्ध, तात्कालिक पल और देश काल की समीक्षा करके—

पाद टिप्पणी :

१४. (१) चोर : याज्ञ० २:९५ ।

(२) पारदारिक : परस्त्रीगामी ।

(३) मोक्ष : याज्ञ० २:९५ ।

(४) राज शासन : याज्ञ० २:२८७:२९५ ।

(५) हिरण्य : इसका अर्थ मुद्रा होता है । यहाँ सुवर्ण से तात्पर्य नहीं है । द्र० ४:१२:२४ ।

(६) कूटव्यवहार : याज्ञ० २:२९७ ।

(७) विमांस : अभक्ष्यमांस, या अशुद्धमांस । याज्ञ० :२९७ । द्र० ३:६:१२ ।

पाद टिप्पणी :

१५. (१) मानुषमांस : मनुष्य का मांस बेचने वाले आततायी । कौटिल्य काल में मनुष्य का मास चोरी से बेचते थे । इसका पता इस सूत्र से लगता है । मनुष्य मांस जनरल इदी अमीन राष्ट्रपति घाना आधुनिक काल में खाता था ।

पाद टिप्पणी :

१६. (१) मनुष्य : मन्दिर से सम्बन्धित दास ।

(२) क्षेत्र : खेत ।

(३) सस्य : मन्दिर की कृषि ।

(४) शुद्धवध : अक्लेशकर वध । मन्दिर आदि की सम्पत्ति चोरी करने पर कठोर दण्ड की व्यवस्था की गयी है । कारण स्पष्ट है । यदि पवित्र स्थानों या सार्वजनिक हित के स्थानों की वस्तुएँ चुराने में जो नहीं हिचकता, तो अन्य सम्पत्ति लाने चोरी करने या लूटने में उसे क्या संकोच हो सकता है ।

पाद टिप्पणी :

१७. (१) कारणं : प्रयोजन, हेतु ।

(२) अनुबन्ध : परिणाम, इसका अनुवाद किसी दोषयुक्त उद्देश्य से प्रेरित होना भी किया गया है । द्र० १:१६:२९; ४:१०:१७; ७:६:१९; ९:४:२४; ९:७:१४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्तमावरमध्यत्वं प्रदेष्टा दण्डकर्मणि।
राज्ञश्चप्रकृतीनां च कल्पयेदन्तरा स्थितः॥

१८. राजा और प्रजा के मध्यस्थित प्रदेष्टा उत्तम, प्रथम और मध्यम दण्ड की व्यवस्था करे।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे एकाङ्गवधनिष्क्रयः दशमोऽध्यायः। आदितः सप्ताशीतितमः।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टक शोधन में एकाङ्गवध निष्क्रय नामक दसवां अध्याय समाप्त। आदि से सत्तासीवाँ अध्याय समाप्त।

पाठ भेद :

'अन्तरा स्थितः' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू अनुलिपि में 'अन्तरान्वितः' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) अवर : निम्न या निम्नतम। मनु० २:३८; ८:६०। याज्ञ० ३।६९।

(२) दण्ड : यमराज के दिव्यास्त्र का एकनाम। मनु० ८:१२६, याज्ञ० २:२७५। महा० ३:४१:२५, गण० १:१३:२३; ३:२७:२७, १३८:१९२:१९५।

(३) प्रकृति : प्रजा, नागरिक। गण० २:२२१, ३५९।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे दशमो अध्यायः एकाङ्गवधनिष्क्रयः, आदितः सप्ताशीतितमः॥'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने एकाङ्गवधनिष्क्रयो दशमोऽध्यायः, आदित सप्ताशीतिः।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे दशमोऽध्यायः एकाङ्गवधनिष्क्रयः, आदितः सप्ताशीतितमः।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे एकाङ्गवधनिष्क्रयो दशमोऽध्यायः॥१०॥ आदितः सप्ताशीतितमः॥८७॥'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ११

षडशीतितमं प्रकरणम्—शुद्धश्चित्रश्च दण्डकल्पः

छियालिसवां प्रकरण—शुद्ध एवं चित्र दण्डकल्प

कलहे[2] घ्नतः पुरुषं चित्रो[3] घातः ।

१. कलह में पुरुष का वध करने वाले व्यक्ति का चित्रघात किया जाय—

सप्त[1]रात्रस्यान्तर्मृते शुद्ध[2]वधः, पक्षस्यान्त[4]रुत्तमः, मास[5]स्यान्तः पञ्च[6]शतः समुत्था[7]नव्ययश्च ।

२. सात रात्रि के अन्दर मरने पर शुद्धवध दण्ड, पन्द्रह दिन में मरने पर, उत्तम साहस दण्ड, मास भर में मरने पर पाँच सौ पण दण्ड तथा समुत्थान व्यय (प्रहार कर्ता पर) आरोपित किया जाय।

शस्त्रेण[1] प्रहरत उत्तमो दण्डः ।

३. शस्त्र द्वारा प्रहारकर्ता पर उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय।

मदेन[1] हस्त[2]वधः, मोहेन[3] द्विशतः ।

४. मदवश प्रहार कर्ता का हाथ काटा जाय, मोहवश प्रहार करनेवाले पर दो सौ पणदण्ड लगाया जाय।

पादटिप्पणी :

१. (१) शुद्ध : सहज, अकष्ट, अक्लेशसाध्य, मृत्युदण्ड।

(२) कलह : झगड़ा, लड़ाई। मनु० ४:१२१।

(३) चित्रो घातः : कष्ट या यातना या शारीरिक यन्त्रणा सहित, क्लेश सहित मरण या मृत्युदण्ड। द्र० ३:५:२०।

पाठ भेद :

'अन्तर्मृते' का पाठभेद तंजौर की पादटिप्पणी एवं त्रिवेन्द्रम् में 'अन्तम्मृते' मिलता है।

पादटिप्पणी :

२. (१) सप्तरात्र : सात दिन। द्र० ११:१:१,

(२) शुद्धवध : बिना क्लेश के मारना या वध।

(३) पक्ष : पन्द्रह दिन के अन्दर मृत्यु।

(४) उत्तमदण्ड : पक्ष बीत जाने पर उत्तम दण्ड देना।

(५) मास : एक मास के अन्दर मरने पर।

(६) पञ्चशत : एक मास बीतने पर, पांचसौ पण दण्ड।

(७) समुत्थानव्यय : घायल के अच्छा होने पर चिकित्सा में जो व्यय हुआ हो। द्र० ३:१९:१४,२७, १३:५:१. गण० ३:२०९।

पादटिप्पणी :

३. (१) शस्त्र : शस्त्र से प्रहार करने से तात्पर्य है।

पाठ भेद :

तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'मोहेन द्विशतः' नहीं है।

पादटिप्पणी :

४. (१) मद : नशे में। द्र० १:६:१।

(२) हस्तवध : हाथ काटना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वधे वधः ।

५. वध करने पर वध किया जाय ।

प्रहारेण गर्भं पातयत उत्तमो दण्डः, भैषज्येन मध्यमः, परिक्लेशेन पूर्वः साहसदण्डः ।

६. प्रहार करके गर्भपात करने वाले पर, उत्तम साहस दण्ड, भेषज्य से गर्भपात कर्ता पर मध्यम साहस दण्ड, परिक्लेश द्वारा गर्भपात कर्तापर, पूर्व साहस दण्ड लगाया जाय ।

प्रसभस्त्रीपुरुषघातकाभिसारकनिग्राहकावघोषकावस्कन्दकोपवेधकान् पथिवेश्मप्रतिरोधकान् राजहस्त्यश्वरथानां हिंसकान् स्तेनान् वा शूलानारोहयेयुः ।

७. बलपूर्वक स्त्री-पुरुष का घात करने वाले, अभिसारक, निग्राहक, अवघोषक, अवस्कन्दक, उपवेधक, मार्ग एवं गृह के चोरों, राजकीय हाथी, अश्व, एवं रथ के हिंसकों अथवा चोरों को शूली पर आरोपित किया जाय ।

यश्चैनान् दहेदपनयेद्वा स तमेव दण्डं लभेत, साहसमुत्तमं वा ।

८. जो इनका दाह करे अथवा ले जाय, वह वही दण्ड प्राप्त करे अथवा उत्तम साहस दण्ड उसपर लगाया जाय ।

---

(३) मोह : मोह, क्रोध, भ्रम, धोखा से प्रहार करने पर २०० पण दण्ड ।

पादटिप्पणी :

५. (१) वध : वध करने वाले को प्राणदण्ड दिया जाय या उसका बध किया जाय ।

पादटिप्पणी :

गर्भपात के दण्ड

६. (१) प्रहार : द्र० याज्ञ० २:२७७ ।

(२) गर्भपात : प्रहार से हुए गर्भपात में उत्तम दण्ड ।

(३) भैषज्य : दवा से हुए गर्भपात में मध्यम दण्ड ।

(४) परिक्लेश : दुःखकर या कर्मानुष्ठान द्वारा गर्भपात होने पर, पूर्व साहस दण्ड, २५० पण ।

पाठ भेद :

'०काभिसारकः' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '०कावीसारक', '-वेश्मप्रतिरोधकान्' का तंजौर की पादटिप्पणी एवं तेलगू अनुलिपि में '-वेश्मप्ररोधकान्' और— 'आरोहयेयुः' का तेलगू अनुलिपि में 'आरोपयेयुः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) प्रसभ : बल, हिंसा, प्रचण्डता । नारद० १०:९ ।

(२) घातक : पीटने वाला, हिंसा करने वाला । नारद० १०:९ ।

(३) अभिसारक : दौड़ कर मारने वाला ।

(४) निग्राहक : नीचे गिराकर या पटक कर मारने वाला ।

(५) घोषका : मारूँगा ऐसा कह कर मारने वाला । द्र० ३:१९ ।

(६) अव स्कन्द : आक्रमण करना ।

(७) वेध : छेद करना, वींधना, छिद्र करना, गड़ाना ।

(८) पथि : सड़क ।

(९) वेश्म : घर ।

(१०) शूल : मांडव्य को शूली देने का उद्धरण पुराणों में विख्यात है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) अपनयेत् : (शूली पर से) हटावे । गण० १:२७, २:२३, ३:७३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हिंस्रस्तेनानां भक्तवासोपकरणाग्निमन्त्रदानवैयावृत्यकर्मसूत्तमो दण्डः, परिभाषणमविज्ञाते ।

९. हिंसकों एवं स्तेनों को भक्त, वास, उपकरण, अग्निदान, मन्त्रदान एवं वैयावृत्य कर्म करने पर उत्तम साहस दण्ड दिया जाय, ज्ञात न होने पर तिरस्कार मात्र किया जाय ।

हिंस्रस्तेनानां पुत्रदारमसमन्त्रं विसृजेत्, समन्त्रमाददीत ।

१०. हिंसकों एवं चोरों के स्त्री-पुत्र को उनके कर्म में सहायक न होनेपर मुक्त किया जाय, सहायक होने पर उन्हें निगृहीत कर दण्डित किया जाय ।

राज्यकामुकमन्तःपुरप्रधर्षकमटव्यमित्रोत्साहकं दुर्गराष्ट्रदण्डकोपकं वा शिरोहस्तप्रादीपिकं घातयेत् ।

११. राज्याकांक्षी, अन्तःपुर प्रघर्षक, अटवीचरों एवं शत्रुओं को उत्साहित करने वाले अथवा दुर्गवासी, राष्ट्रवासी एवं सेना को कुपित करने वाले का, उसके शिर और हाथ पर, अग्नि रखकर वध किया जाय ।

पाठ भेद :

'अविज्ञाते' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी तथा तेलगू अनुलिपि में 'अविज्ञाने' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

९. (१) हिंस्रस्तेनानाम् : हत्यारे चोरी करने वाले । याज्ञ० २:२७६ ।

(२) भक्त : भोजन । याज्ञ० २:२,६ ।

(३) वास : आश्रम, स्थान ।

(४) उपकरण : अपराध करने का उपकरण यथा सबरी हथियार आदि । गण० ३:१० ।

(५) अग्नि : आग ।

(६) मन्त्र : सलाह । द्र० १:१५:२;१:१९:१४ ।

(७) वैयावृत्तकर्म : अपराध में सहायता देना, सेवा करना । द्र० ४.६:११ ।

(८) परिभाषण : उपालम्भ, तिरस्कार, भर्त्सना ।

(९) अविज्ञात : अनजाने ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) असमन्त्र : परामर्श रहित, सम्मति रहित ।

(२) समन्त्र : मन्त्रणा से सहयोग, सहकारिता, परामर्श, या मन्त्रणा या सलाह में सम्मिलित होना ।

पादटिप्पणी :

११. (१) कामुक : कांक्षी, राज्य की कामना करने वाले ।

(२) अन्तःपुर : रनिवास, राजप्रासाद का जनाना स्थान । द्र० १:२०:१,४,१:२१:३,२:४:७, १०:१:२ ।

(३) प्रधर्ष : आक्रमण, बलात्कार ।

(४) अटव्य : बनवासी ।

(५) दण्ड : सेना ।

(६) कोप : विद्रोह, विरोध । द्र० १:१३:२०, १:१६:२९ ।

(७) शिरोहस्त : शिर व हाथ ।

(८) प्रादीपिकं : जलती अग्नि ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मणं तमः[1] प्रवेशयेत् ।

१२. उक्त कर्मी ब्राह्मण को अन्धकार युक्त कक्ष में प्रविष्ट कराया जाय ।

मातृपितृपुत्रभ्रात्राचार्यतपस्विघातकं वाऽत्वक्छिरः[1] प्रादीपिकं घातयेत् ।

१३, माता, पिता, पुत्र, भ्राता, आचार्य, अथवा तपस्वी को घात करनेवाले के चर्मरहित शिर पर अग्नि रखकर उसका वध किया जाय ।

तेषामाक्रोशे[1] जिह्वाच्छेदः[2], अङ्गाभिरदने[3] तदङ्गान्मोच्यः[4] ।

१४. उन्हें अप शब्द कहने पर जिह्वाच्छेद किया जाय, अङ्ग-भङ्ग (खरोच) करने पर वह अङ्ग काट दिया जाय ।

यदृच्छाघाते[1] पुंसः पशुयूथस्तेये च शुद्धवधः ।

१५. स्वेच्छा से घात करने तथा पशु यूथ की चोरी करने पर, शुद्ध वध किया जाय ।

दशावरं च यूथं[1] विद्यात् ।

१६. न्यूनतम दशपशु को यूथ जानना चाहिए ।

पाठ भेद :

'तमः' का पाठभेद तंजोर की पादटिप्पणी, त्रिवेन्द्रम् तथा तेलगू अनुलिपि में 'तमा' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) तम : अन्धकार, अँधेरी कोठरी या कालकोठरी । आपस्तम्ब० २:१०:२७, १६-१७।

पादटिप्पणी :

१३. (१) अत्वक्छिर : चमड़ा उधेर कर अग्नि रखना ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) आक्रोश : अपभाषण, गाली, निन्दा, रोषपूर्ण, आक्षेप । अग्नि० २५७:२७ ।

(२) जिह्वाच्छेद : जीभकाटना । भाग० ४:४: १७; अग्नि० : २२७:२५ । मत्स्य० : २२७:६९ ।

(३) अङ्गाभिरदने : चोट पहुँचाना या अंग तोड़ना । इसका अर्थ नखादि से अंगों पर लिखन भी है ।

(४) अङ्गान्मोच्य : अंग का भंग करना ।

पाठ भेद :

'० यूथातेये' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'यूथाश्वस्टेये' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) यदृच्छाघाते : हठात् हत्या या दुर्घटना से मृत्यु ।

(२) यूथाश्वस्तेये : पशुओं के यूथ या समूह को चुराने पर ।

पादटिप्पणी :

१६. यूथ : दश पशुओं के झुण्ड को यूथ कहते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उदक[1]धारणं सेतु[2] भिन्दतस्तत्रैवाप्सु[3] निमज्जनम्, अनुदकमुत्तमः साहस-दण्डः, भग्नोत्सृष्टकं मध्यमः ।

१७. उदक धारण करने वाले सेतु भग्न करने वाले को उसी में डुबा दिया जाय, जल रहित सेतु भङ्ग कर्ता पर, उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय, भग्न को और भग्न करने वाले पर, मध्यम साहस दण्ड लगाया जाय ।

विष[1]दायकं पुरुषं स्त्रियं[2] च पुरुषघ्नीमपः प्रवेशयेदगर्भिणीम्, गर्भिणीं मासावर[3]प्रजाताम् ।

१८. विषदाता पुरुष तथा पुरुषवधकर्त्री गर्भ रहित स्त्री को जल में डुबाया जाय, गर्भिणी होने पर बच्चा उत्पन्न होने के एक मास बाद उक्त दण्ड दिया जाय ।

पतिगुरु[1]प्रजाघातिकामग्निविषदां संधिच्छेदिकां[2] वा गोभिः[3] पाटयेत्[4] ।

१९, पति, गुरु, सन्तान की हत्या करने वाली, आग लगाने वाली, विष देनेवाली अथवा सन्धि काटने वाली स्त्री को गायों के पैरों से कुचलवाया जाय ।

विवीतक्षेत्र[1]खल[2]वेश्मद्रव्य[3]हस्तिवनादीपिक[4]मग्निना दाहयेत ।

२०. विवीत (चरागाह) क्षेत्र, खल, गृह, द्रव्यवन, हस्तिवन में आग लगाने वाले को आग में जला दिया जाय ।

पाद टिप्पणी :

१७. (१) उदकधारणम् : जलयुक्त सेतु तोड़ने वाले को जल में डुबो देना चाहिए ।

(२) सेतुभिन्दन : याज्ञ० २७८ ।

(३) आप : पानी । मनु० २:६० ।

(४) अनुदकसेतु : जलरहित बाँध का बन्धा । गण० १:३१३ ।

(५) भग्नोत्सृष्टकम् : पूर्व से टूटा हुआ या मरम्मतरहित या परित्यक्त । इसका अर्थ टूटे कूपों को ठीक करना भी किया गया है । द्र० ३:९:३३, ३:१०:२ ।

पाद टिप्पणी :

१८. (१) विष : याज्ञ० २:२७९ ।

(२) स्त्रियम् : याज्ञ० १:२७८ :

(३) मासावरप्रजाताम् : प्रसवानन्तर अर्थात् एक मास बीत जाने पर ।

पाठ भेद :

'पाय्येत्' का पाठभेद भाषाव्याख्यान में 'पादयेत्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) पतिगुरु : पति और गुरु । याज्ञ० २:२७९ ।

(२) संधिच्छेदिकां : सेन्ध लगाना । गण० १:१६, २:२३, ३४९, ३५६ ।

(३) गोभि : याज्ञ० २:२७९ ।

(४) पाटयेत् : फाड़ना, विदीर्ण करना, कुचलना ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) क्षेत्र : याज्ञ० २:२८२ ।

(२) खलः खलिहान । भविष्य० १:१२:४८; याज्ञ० २:२८२ ।

(३) द्रव्यवन : जिस वन में पदार्थ वस्तु या सामान या सम्पत्ति उत्पन्न होती है । गण० २:५० ।

(४) दीपिक : आग लगाने वाला, दीपन कर्ता । द्र० २:३६:२५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजाक्रोशकमन्त्रभेदकयोरनिष्टप्रवृत्तिकस्य ब्राह्मणमहानसावलेहिनश्च जिह्वामुत्पाटयेत् ।

२१. नृपाक्रोश, मन्त्र भेदकर्ता, अनिष्ट प्रचारक और ब्राह्मण की पाकशाला उच्छिष्ट करने वाले की जिह्वा उखाड़ ली जाय ।

प्रहरणावरणस्तेनमनायुधीयमिषुभिर्घातयेत् ।

२२. अशस्त्र जीवी व्यक्ति यदि प्रहरण एवं आवरण की चोरी करे तो उसका बाणों से वध किया जाय ।

आयुधीयस्योत्तमः ।

२३. शस्त्रजीवो को उत्तम साहस दण्ड दिया जाय ।

मेढ्रफलोपघातिनस्तदेव च्छेदयेत् ।

२४. मेढ्र फलोपघाती का वही अङ्ग भङ्ग किया जाय ।

पाठ भेद :

'–भेदकयोरनिष्ट-' का पाठभेद तंजौर तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद-टिप्पणी में '–भेदकयोनिष्ट-' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) आक्रोश : अपभाषण, कलंक, भर्त्सना अभिशाप, निन्दा । द्र० ४:११:१४, ३:१६:६, ३:१८:१२ ।

(२) मन्त्रभेद : मन्त्रणा को खोलना या बताना । द्र० १:१५:१३ ।

(३) अनिष्ट प्रवृत्ति : बुरी अफवाह फैलाने वाले ।

(४) महानस : र रसोई ।

(५) लेहिन : शाब्दिक अर्थ चाटना होता है । परन्तु यहां रसोई को जूठी या अपवित्र करना होगा ।

(६) जिह्वामुत्पाटयेत् : जीभ खींच लेना, या उखाड़ लेना ।

लिंग० १०७:४२, स्कन्द० ६:२६:२६, २७, याज्ञ० २:३०२ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) प्रहरण : आयुध, प्रहार करना या आक्रमण करना ।

(२) आवरण : कवच ।

(३) अनायुधी : अशस्त्र जीवी, असैनिक ।

(४) इषु : वाण या तीर ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) आयुधीय : आयुध धारक या सैनिक या आयुध जीवी द्र० २:३५:१, १:१९।१५ ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) मेढ्र : जननेंद्रिय एवं उपस्थ या अण्ड-कोश घातक को वही दण्ड देना चाहिए ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिह्वानाशोपघाते संदेशवधः ।

२५. जिह्वा एवं नाक का उपघात करने पर अंगुष्ठ एवं कनिष्ठिका अंगुली का उच्छेद किया जाय ।

एते शास्त्रेष्वनुगताः क्लेशदण्डा महात्मनाम् ।
अक्लिष्टानां तु पापानां धर्म्यः शुद्धवधः स्मृतः ।।

२६. महात्माओं के शास्त्रों में उन क्लेश दण्डों का विधान किया गया है, सामान्य पापों का दण्ड शुद्ध वध ही धर्म संगत है ।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे शुद्धश्चित्रश्च दण्डकल्पः एकादशोऽध्यायः आदितोऽष्टाशीतितमः ।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टक शोधन में शुद्ध और चित्र दण्ड कल्प सम्बद्ध ग्यारहवां अध्याय समाप्त । आदि से अट्ठासीवां अध्याय समाप्त ।

पाठ भेद :

'जिह्वानाशोप०' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में—

'जिघ्रन्नासोप०' और तेलगू अनुलिपि में—

'जिह्वानसो उप०' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) जिह्वानाश : जिह्वा एवं नासिका के घातक ।

(२) संदेश : द्र० ४:१०:१ ।

पाठ भेद :

'—दण्डा महात्मनाम्' का पाठभेद तंजौर की पादटिप्पणी एवं त्रिवेन्द्रम् में '—दण्डमहात्मनाम्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) क्लेशदण्ड : मनु आदि द्वारा अनुमोदित कड़ा दण्ड ।

(२) महात्मनाम् : कौटिल्य ने अपने पूर्ववर्ती महात्माओं के विचारों का यहाँ उल्लेख किया है ।

(३) शुद्धवध : बिना यातना के बध । द्र० ४:११:२ ।

पूर्वाचार्यों में से अनेकों ने क्लेशदण्ड का समर्थन किया है । परन्तु कौटिल्य का मत है कि शुद्धवध अर्थात् बिना क्लेश दिए, वध दण्ड देना अच्छा है ।

पाठ भेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे एकादशोऽध्यायः शुद्धश्चित्रश्च दण्डकल्पः, आदितो ऽष्टाशीतितमः ।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने शुद्धश्चित्रश्चदण्डकल्पः एकादशोऽध्यायः आदितो ऽष्टाशीतिः ।'

डॉ० जमाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे एकादशोऽध्यायः शुद्धश्चित्रश्च दण्डकल्पः, आदितो ऽष्टाशीतितमः ।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे शुद्धश्चित्रश्च दण्डकल्प एकादशोऽध्यायः ।।११।। आदितोऽष्टाशीतितमः ।।८८।।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १२

(सप्ताशीतितमं प्रकरणम्—कन्याप्रकर्म)

सत्तासीवां प्रकरण-कन्याप्रकर्म

सवर्णा[2]मप्राप्त[3]फलां क[4]न्यां प्र[5]कुर्वतो हस्त[6]वधः, चतुःशतो वा दण्डः।

१. सवर्णा एवं अपुष्पती (अरजस्वला) कन्या के साथ दुराचार करने पर, हाथ काट लिया जाय अथवा चार सौ पण दण्ड लगाया जाय।

मृता[1]यां वधः।

२. कन्या के मर जाने पर (पुरुष का) वध किया जाय।

प्राप्त[1]फलां प्रकुर्वतो मध्य[2]माप्रदेशिनी[3]वधो, द्विशतो वा दण्डः।

३. रजोधर्म युक्ता के साथ दुराचरण करने पर मध्यमा एवं तर्जनी अंगुलियाँ काट ली जाँय अथवा दो सौ पण दण्ड लगाया जाय।

पादटिप्पणी :

१. (१) कन्याप्रकर्म : कन्या के साथ बलात्कार या हठपूर्वक भोग। द्र० ३:१५:११, ४:१२:१५।

(२) सवर्णाब : अपनी जाति। गण० २:१७२। यात्र० २:२८८।

(३) अप्राप्तफलां : जो वयस्ककाल को न प्राप्त हो, अवयस्क, अप्राप्त रजस्वला, अप्राप्त यौवन।

(४) कन्यां : अविकसित (रजोधर्म रहित)।

(५) प्रकुर्वतो : योनिक्षत (शील भंग) करना!

(६) हस्वघ : हाथ काटना। याज्ञ० २:२८८, मनु० ८:३६७।

पादटिप्पणी :

२. मृतायाम् : (१) कन्या के मर जाने से तात्पर्य है।

पाठ भेद :

'मध्यमाप्रदेशिनी-' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'मध्यमप्रदेशिनी मिलता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) प्राप्तफला : युवती, व्रयस्क।

(२) मध्यमा : मध्यम अंगुली।

(३) प्रदेशिनी : तर्जनी अंगुली।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पितुश्चावहीनं दद्यात् ।

४. पिता को क्षतिपूर्ति करे ।

न च प्राकाम्यमकामायां लभेत ।

५. काम रहित कन्या में इच्छापूर्ति पुरुष न करे ।

सकामायां चतुष्पञ्चाशत्पणो दण्डः, स्त्रियास्त्वर्धदण्डः ।

६. सकामा के साथ यौन सम्पर्क करने पर पुरुष के ऊपर चौवन पण तथा स्त्री पर सत्ताईस पण दण्ड आरोपित किया जाय ।

परशुल्कावरुद्धायां हस्तवधः, चतुःशतो वा दण्डः, शुल्कदानं च ।

७. परशुल्कग्रहणवश, अवरुद्ध कन्या के प्रति उक्त आचरण करने पर हस्तवध किया जाय अथवा चार सौ पण दण्ड दे तथा शुल्क प्रदान करे ?

सप्तार्तवप्रजातां वरणादूर्ध्वमलभमानः प्रकृत्य प्राकामी स्यात्, न च पितुरवहीनं दद्यात् ।

८. सात ऋतुकाल पूर्ण होनेपर, कन्या को वरणानन्तर, न प्राप्त करने वाला पुरुष, स्वैच्छिक आचरण करे और पिता को क्षतिपूर्ति भी न दे ।

पाठ भेद :

'चावहीनं' का पाठभेद मलयालम नागरी अनुलिपि एवं तेलगू अनुलिपि 'चापहीनं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) पितुश्चावहीनं : पिता को क्षति पूर्ति की जाय ।

पादटिप्पणी :

५. (१) प्राकाम्य : इच्छापूर्ति की स्वतन्त्रता या विवाह या वरण करने का अधिकार दिया जाय । द्र० ३:१०:१२, ३:१४:२४, ४:१२:१३ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) सकामा : इच्छुक, कामनायुक्त, प्रेमपूरित । शकु० ४ ।

पाठभेद :

'शुल्कावरुद्धायां' का पाठभेद तंजौर में 'शुल्कावधायां' और तेलगू अनुलिपि में 'शुल्कोपधायां' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) अवरुद्ध : शुल्क, धन द्वारा रक्षित या रखी गई स्त्री । द्र० १:१०:११, २:३:५, २:२७:९, ८:५:७, २५, १५:४:२७ । याज्ञ० २:२९०, अग्नि० २५८:७२ गण० १:४, ४८, ९०; ३:१७६, २१० ।

पाठ भेद :

'वरणाद्' का पाठभेद तंजौर में 'वराणाम्' तथा तेलगू अनुलिपि में 'पराणाम्', 'अलभमानः' का तंजौर में 'अलभमानाः' तथा तेलगू अनुलिपि में 'अलभमानां' और 'अवहीनं' का तेलगू अनुलिपि में 'अपहीनं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) अलभमान : संगम के लिये न प्राप्त करता हुआ ।

(२) प्राकामी : इच्छापूर्वक भोग करने की स्वतंत्रता जिसे पिता की इच्छा के विरुद्ध विवाह की स्वतन्त्रता, प्राप्त हो । अपनी इच्छा से कन्या का भोग करने वाला, स्वेच्छाचारी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऋतुप्रतिरोधिभिः स्वाम्यादपक्रामति ।

९. ऋतु प्रतिरोधियों (तस्करों) द्वारा वह (पिता) स्वामित्व रहित कर दिया जाता है।

त्रिवर्षप्रजातार्तवायास्तुल्यो गन्तुमदोषः,, ततः परमतुल्योऽप्यनलङ्कृतायाः ।

१०. तीन वर्ष तक ऋतु धर्म युक्त कन्या के साथ सवर्ण पुरुष का गमन निर्दोष है, तदुपरान्त अनलंकृता कन्या को असवर्ण का ग्रहण भी दोषयुक्त नहीं है।

पितृद्रव्यादाने स्तेयं भजेत ।

११. पितृद्रव्य दिये बिना कन्या को ले जाने वाला चोर-कर्म का भागी होता है।

परमुद्दिश्यान्यस्य विन्दतो द्विशतो दण्डः ।

१२. अभीष्टजन बनकर, यदि अन्य पुरुष कन्या को प्राप्त करे, तो उसपर दो सौ पणदण्ड लगाया जाय।

न च प्राकाम्यमकामायां लभेत ।

१३. अकामा कन्या में पुरुष गमन न करे।

कन्यामन्यां दर्शयित्वाऽन्यां प्रयच्छतः शत्यो दण्डस्तुल्यायाम्, हीनायां द्विगुणः ।

१४. अन्य कन्या को दिखाकर, दूसरी सवर्णा कन्या देनेपर, सौ पण तथा छ सवर्णा (हीन-वर्णा) कन्या देने पर, दो सौ दण्ड लगाया जाय।

पाठ भेद :

मनु ने पूर्णतया इस सूत्र को उद्धृत किया है। मनु० ९:९३।

पादटिप्पणी :

९. (१) स्वाम्य : पिता का कन्या पर से अधिकार समाप्त हो जाता है।

पादटिप्पणी :

१० (१) त्रिवर्ष : तीन वर्ष।

(२) तुल्य : समवर्ण। द्र० १:३:९, ३:४:१८, ३:१८:४, ४:१२:१४।

(३) तत परम् : तत्पश्चात् यदि समवर्ण का पति न मिले तो कितने दिनों तक वह रुक सकती है, इसका उल्लेख नहीं किया गया है। मनु ९:९०, १०:९२।

पादटिप्पणी :

मिथ्यावादी को दण्ड देने का वर्णन।

पादटिप्पणी :

१३. (१) प्राकाम्य : चुनने या वरण की स्वतन्त्रता या अधिकार। द्र० ३:१०:१२, ३:१४:२४, ४:१२:५, ८।

पादटिप्पणी :

दूसरी कन्या दिखाकर दूसरे से विवाह करना।

१४. (१) दर्शयित्वा : मनु० ८:२०४।

(२) हीन : निम्न वर्ण।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकर्मण्यकुमार्याश्चतुष्पञ्चाशत्पणो दण्डः, शुल्कव्ययकर्मणी च प्रतिदद्यात् ।

१५. विवाह काल में कन्या के क्षतयोनि होनेपर, वह चौवन पण दण्ड तथा शुल्क एवं व्यय प्रदान करे ।

अवस्थाय तज्जातं पश्चात्कृता[२] द्विगुणं दद्यात् ।

१६. यदि वह क्षतयोनि होकर, पुनः अक्षतयोनि कहकर, विवाहित करे, तो दूना दण्ड दे ।

अन्यशोणितोपधाने द्विशतो दण्डः, मिथ्याभिशंसिनश्च पुंसः ।

१७. (क्षतयोनित्व प्रदर्शनार्थ) अन्य का रुधिर लगाने बाली स्त्री पर, तथा मिथ्यादोष लगाने वाले पुरुष पर, दो सौ पण दण्ड लगाया जाय ।

शुल्कव्ययकर्मणी च जीयेत ।

१८, शुल्क और व्यय भी वह दे ।

न च प्राकाम्यमकामायां लभेत ।

१९. (वह) अकामा में इच्छापूर्ति करने का अधिकार न हो ।

पाठभेद :

'व्ययकर्मणी' का तंजौर में 'व्ययकर्मणि' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

विवाहित कन्या का व्यभिचार ।

१५. (१) प्रकर्मण्य : यदि विवाह के समय वधू अक्षत योनि न पायी जाय । प्रकर्म अर्थ व्यभिचार या बलात्कार भी होता है । द्र० ३:१५:११ गण० १:१२ ।

पाद टिप्पणी :

१६. (१) अवस्थाय : प्रत्याभूत या भरणपोषण या सुरक्षित या कायम रखकर कहें । इसका अर्थ कतिपय अनुवादकों ने विवाह का प्रबन्ध करने वाला किया है ।

(२) पश्चात्कृता : अस्वीकार करना या भार्या का परित्याग करना या असफल या प्रत्याख्यात या परित्याग ।

पाद टिप्पणी

१७. (१) अन्यशोणित : दूसरे के रुधिर को प्रस्थापित करना ।

(२) मिथ्याभिशंसिनः : अक्षत योनि को क्षत-योनि कहना ।

पाठभेद :

'व्ययकर्मणी' का पाठभेद तंजौर में 'व्ययकर्मणि' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

१८. (१) शुल्क : दहेज ।

(२) व्यय : विवाह खर्च ।

पाद टिप्पणी :

१९. (१) प्राकाम्य : द्र० २:२९:४६, ३:१०:१२, ३:१४:२४, ४:१२:५ ।

(२) अकामा : अनिच्छुक । याज्ञ० २:१६१; अग्नि २५७:१३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्त्रीप्रकृता सकामा समाना द्वादशपणं दण्डं दद्यात्, प्रकर्त्री द्विगुणम् ।

२०. स्त्री द्वारा क्षतयोनित्व प्राप्त सकामा एवं समान वर्णा बारहपण दण्ड दे तथा वह स्त्री दूना दण्ड दे ।

अकामायाः शत्यो दण्ड आत्मरागार्थम्, शुल्कदानं च ।

२१. इच्छारहित होकर भी स्वतृप्त्यर्थ व्यभिचरित होने पर, सौंपण दण्ड दे और शुल्क दे ।

स्वयं प्रकृता राजदास्यं गच्छेत् ।

२२. स्वयं क्षतयोनिकर्त्री राजदासी बनायी जाय ।

बहिर्ग्रामस्य प्रकृतायां मिथ्याभिशंसने च द्विगुणो दण्डः ।

२३. ग्राम के बाहर क्षतयोनित्व होने तथा मिथ्याकथन पर, दूना दण्ड लगाया जाय ।

प्रसह्य कन्यामपहरतो द्विशतः, ससुवर्णामुत्तमः ।

२४. बलपूर्वक कन्याहरणकर्ता पर, दो सौ पण दण्ड लगाया जाय, सुवर्ण सहित कन्याहर्ता पर, उत्तम साहस दण्ड आरोपित किया जाय ।

पाठभेद :

तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'दण्ड' नहीं है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) प्रकृता : क्षतयोनि या कौमार्य भंग । द्र० ४:१२,२२,२३ ।

(२) सकामा : कामयुक्त, प्रेम में उन्मत्त । द्र० ४:१२:६ ।

(३) समाना : समान जाति वाली । इसका तात्पर्य है कि यदि कोई स्त्री दूसरी स्त्री से संभोग करे तो वह भी दण्डित होगी । परस्पर स्त्रियों के सम्भोग को चित्ती लड़ाना कहते हैं ।

(४) प्रकर्मी : अतिक्रमण करने वाली या जो स्त्री कन्या को क्षतयोनि करे या उसके साथ बलात्कार करे ।

पाठभेद :

'आत्मरागार्थम्' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू अनुलिपि में 'आत्मारागार्थम्' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२१. (१) अकामा : अनिच्छुक । द्र० ४: १२:१९ ।

(२) आत्मरागार्थम् : अपनी कामेच्छा की तृप्ति के लिए । मनु० ८:३६९, ३७० ।

(३) शुल्क : दहेज ।

पाठभेद :

'प्रकृता राज' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद टिप्पणी में 'प्रकृतराज' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२२. (१) स्वयं प्रकृता : स्वयं क्षतयोनि या कौमार्य भंग हुई ।

पाठभेद :

'शंसने' का पाठभेद तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'शंसिने' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२३. (१) प्रकृतायां : द्र० ४:१२:२० ।

(२) मिथ्याभिशंसने : मिथ्या अभियोग अथवा दोषारोपण करने पर । मनु० ८:२६८; याज्ञ० २: २८९, द्र० ४:१२:१७ ।

पाद टिप्पणी :

वर्ण के अनुसार धन देने का विधान याज्ञ० २:२८७ ।

२४. (१) प्रसह्या : बलपूर्वक, प्रचण्डता के साथ ।

(२) ससुवर्ण : स्वर्ण आभूषणों के सहित ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहूनां कन्यापहारिणां पृथग् यथोक्ता दण्डाः ।

२५. अनेक कन्यापहरणकर्ताओं में प्रत्येक पर, पूर्वोक्त दण्ड लगाये जायँ ।

गणिका[1]दुहितरं प्रकुर्वत[2]श्चतुष्पञ्चाशत्पणो दण्डः, शुल्कं मातुर्भोगः[3] षोडशगुणः ।

२६. गणिकापुत्री के साथ बलात् भोगकर्ता, चौवनपण दण्ड तथा उसकी माता को उसका सोलह गुना (या भोग दर का सोलह गुना) शुल्क दें ।

दासस्य[1] दास्या[2] वा दुहितरमदासीं प्रकुर्वत[3]श्चतुर्विंशतिपणो दण्डः शुल्का[4]बन्ध्यदानं च ।

२७. दास अथवा दासी की अदासी पुत्री के साथ बलात् गमन करने वाले पर, चौबीसपण दण्ड लगाया जाय और वह शुल्क एवं आभूषण प्रदान करे ।

निष्क्रया[1]नुरूपां दासीं प्रकुर्वतो[2] द्वादशपणो दण्डो वस्त्राबन्ध्यदानं च ।

२८. निष्क्रयानुरूप दासी के साथ गमनकारी पर, बारह पण दण्ड लगाया जाय तथा वह वस्त्र और आभूषण दें ।

साचिव्या[1]वकाशदाने कर्तृसमो दण्डः ।

२९. (द्रव्यत कर्म में) सहायता अथवा अवकाश देने वाले पर, कर्ता के समान दण्ड लगाया जाय ।

पाद टिप्पणी :

२५. (१) बहूनां कन्यापहारिणाम् : यदि बहुत से लोग मिलकर कन्या का अपहरण करें तो प्रत्येक को अलग-अलग जुर्माना देना होगा । याज्ञ० २:२९१ ।

पाठभेद :

'शुल्कं मातुर्' का पाठभेद तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'शुल्कमातुर्' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२६. (१) गणिकादुहितरम् : वेश्या की पुत्री ।

(२) प्रकुर्वतः : कौमार्य या सतीत्व भंग या दूषित करना ।

(३) भोग : प्रतिभोग के दर का सोलह गुना । द्र० २७:१० ।

पाठभेद :

'शुल्काबन्ध्य' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद टिप्पणी तथा तेलगू अनुलिपि में 'शुल्काबध्य' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२७. (१) दास : द्र० १:२१:१३ ।

(२) दास्या : दासी की पुत्री ।

(३) प्रकुर्वत : कौमार्य भंग या शीलभंग ।

(४) शुल्काबन्ध्यदान : शुल्क और आभूषण का दान । द्र० ३:२:१४-१५ ।

पाठभेद :

'वस्त्राबन्ध्य' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद टिप्पणी तथा तेलगू अनुलिपि में 'वस्त्राबध्य' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२८. (१) निष्क्रय : भरपाई, हरजाना, छुटकारा, विमोचन, मोक्ष, अर्थोपार्जन । द्र० २:२७:६, ३:१०:१४, ३:१३:५-७, ३:१३:१७, २१ ।

(२) प्रकुर्वतः : द्र० ४:१२:२६, २७ ।

पाद टिप्पणी :

२९. (१) साचिव्य : सहायता या प्रोत्साहन देना । या मैत्री, या सलाह देना या बहकाना । गण० ३:१८४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रोषित¹पतिकामपचरन्तीं² पतिबन्धुस्तत्पुरुषो³ वा संगृह्णीयात्⁴ ।

३०. असदाचरण करने वाली प्रोषितपतिका को पति का भाई अथवा उसका अन्य सेवक नियमित करे ।

संग्रहीता¹ पतिमाकाङ्क्षेत² ।

३१. सुरक्षिता वह स्त्री पति की प्रतीक्षा करे ।

पतिश्चेत्क्षमेत¹ विसृज्येतोभयम्² ।

३२, यदि पति क्षमा करे, तो दोनों को मुक्त कर दिया जाय अर्थात् दण्डित न किया जाय ।

अक्षमायां स्त्रियाः कर्णनासाच्छेदनम्, वधं जारश्च प्राप्नुयात् ।

३३. क्षमा न करने पर, स्त्री की नाक-कान काट ली जाय और जार का वध किया जाय ।

जारं चोर इत्यभिहरतः² पञ्चशतो दण्डः, हिरण्येन मुञ्चतस्तद्³अष्टगुणः ।

३४. जार को चोर कहने वाले पर, पाँच सौ पण दण्ड लगाया जाय, हिरण्य (धन) लेकर मुक्त करने वाले पर, उसका आठ गुना दण्ड लगाया जाय ।

पादटिप्पणी :

याज्ञवल्क्य ने २:३०१ में यथावत् इस सूत्र को लिखा है ।

३०. (१) प्रोषित : वह स्त्री जिसका पति बाहर या परदेश गया हो । द्र० २:३:११ ।

(२) अपचरन्ती : कदाचार करती हुई ।

(३) तत्पुरुषो : पति द्वारा नियुक्त रक्षक या सेवक ।

(४) संगृह्ण : रक्षा करे ।

३१. (१) संगृहीता : रक्षिता । द्र० ४:१३:३५,

(२) काङ्क्षेत : इच्छा, चाह । कुछ अनुवादकों ने प्रतीक्षा भी भावार्थ किया है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) क्षमेत : सहन करे, या क्षमा करे ।

(२) उभयम् : जार और जारिणी ।

पाठ भेद :

'अक्षमायां' का पाठभेद तंजौर एवं त्रिवेन्द्रम् में 'अक्षमाया' और मलयालम नागरी अनुलिपि में 'अक्षमायाः' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३३. (१) जार : उपपति, प्रेमी, यार, आशिक । पंच० ४:५४ । व्रह्म वै० १:१०:१६, द्र० ४:१२:३४।

पादटिप्पणी :

३४. (१) जारं चोर : याज्ञ० २:१०१ ।

(२) इत्यभिहरत : व्यभिचार को छिपाने के लिए जार को चोर कहते हुए ।

(३) तद् : हिरण्य, चोरी किये गये धन के लिए यहाँ प्रयुक्त हुआ है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

केशा[1]केशिकं संग्र[2]हणम्, उपलिङ्ग[3]नाद्वा शरीरोपभोगा[4]नां, तज्जा[5]तेभ्यः, स्त्रीव[6]चनाद्वा ।

३५. केशाकेशिक, शरीरोपभोगों के उपलिंगन, विशेषज्ञ जनों एवं स्त्रीकथन से जार कर्म जाना जाय।

परच[1]क्राटवी[2]हृतामोघ[3]प्रव्यूढामर[4]ण्येषु दुर्भिक्षे[5] वा त्यक्तां प्रेतभा[6]वोत्सृष्टां वा परस्त्रियं निस्तारयित्वा यथासंभा[7]षितं समुपभुञ्जीत ।

३६. शत्रु सेना से अपहृत, नदी से निष्कासित, अरण्य अथवा दुर्भिक्ष काल में परित्यक्त अथवा मृत जानकर, परित्यक्त परायी स्त्री का उद्धार करके, परस्पर सहमति से उसका समुपभोग किया जाय।

जाति[1]विशिष्टामका[2]मामपत्य[3]वतीं निष्क्र[4]येण दद्यात् ।

३७. विशिष्ट जाती या, इच्छारहित एवं सन्तान वाली स्त्री को उद्धार करके भी धन (मूल्य) लेकर उसके स्वामी को अर्पित करे।

पादटिप्पणी :

पर स्त्री गमन की पहचान—

३५. (१) केशाकेशिक : परस्पर केशग्रहण पूर्वक की गई आरब्ध रति क्रीड़ा। याज्ञ० २:२८३।

(२) संग्रहण : व्यभिचार, जार कर्म।

(३) उपलिंगनाद् : चिह्न, निदर्शन, लक्षण। द्र० ३:१२:५१, ३:१३.३७, ३:१९.२१, ४:६:१२।

(४) भोग : शरीर के भोग के लक्षण।

(५) तज्जातेभ्यः : अनुभवी, जो जानते हैं उनका निर्णय।

(६) स्त्रीवचनात् : स्त्री की बातों से।

पादटिप्पणी :

जब स्त्री को ग्रहण करने में पाप नहीं लगेगा।

३६. (१) परचक्र : शत्रु के सैनिकों द्वारा।

(२) अटवीहृता : आटविकों से हरी हुई।

(३) ओघप्रव्यूढा : नदी प्रवाह के निकाली या बचाई हुई।

(४) अरण्य : वन में छोड़ी हुई।

(५) दुर्भिक्ष : अकाल के समय त्रस्त।

(६) प्रेतभाव : मृत समझ कर छोड़ी गई।

(७) यथासम्भाषित : परस्पर हुई बातचीत के अनुसार, या जैसा परस्पर निश्चय हुआ हो।

पाठभेद :

'–विशिष्टाम्' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '–विश्लिष्टाम्' मिलता है।

पादटिप्पणी :

३७. (१) जातिविशिष्ट : अपने से ऊँची जाति।

(२) अकामा : अनिच्छुक।

(३) अपत्यवती : सन्तानवती।

(४) निष्क्रय : मोचन मूल्य, फिरौती पुरस्कार पारिश्रमिक या हर्जाना लेकर तथा परिश्रम के बदले प्राप्तधन भी अनुवादकों ने अर्थ किया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चोरहस्तान्नदीवेगाद्दुर्भिक्षाद्देशविभ्रमात् ।
निस्तारयित्वा कान्तारान्नष्टां त्यक्तां मृतेति वा ॥

३८. चोर के हाथ से, नदी प्रवाह से, दुर्भिक्ष एवं देश विप्लव से, कान्तार से, नष्ट अथवा मृत जानकर, त्यक्त स्त्री का उद्धार कर दें।

भुञ्जीत स्त्रियमन्येषां यथासंभाषितं नरः ।
न तु राजप्रतापेन प्रमुक्तां स्वजनेन वा ॥

३९. (परायी स्त्री का) पारस्परिक सहमति से पुरुष उपभोग करे किन्तु राजकोप अथवा स्वजन से प्रमुक्त स्त्री का उपभोग न करे।

न चोत्तमां न चाकामां पूर्वापत्यवतीं न च ।
ईदृशीं त्वनुरूपेण निष्क्रयेणापवाहयेत् ॥

४०. उत्तम कुलीन, इच्छारहित, पूर्वसन्तान युक्त, स्त्री का उद्धार करके भी भोग न करें, ऐसी स्त्री को अनुरूप निष्क्रय लेकर वापस करें।

पाठ भेद :

'कान्तारान्नष्टां' का पाठभेद तंजौर में 'कान्तारं नष्टां' मिलता है।

पाददिप्पणी :

३८ से ४० तक उक्त सूत्र ३६, ३७ के विचारों को व्यक्त करता है।

३८. (१) देशविभ्रम : राजविप्लव। द्र० ३: ११:१३; ३:१६:३०।

पाददिप्पणी :

३९. (१) यथासंभाषित : बातचीत से जैसा निश्चय हुआ हो।

(२) राजप्रताप : राजशक्ति द्वारा।

(३) स्वजनेन : सम्बन्धी जनों से।

पाठ भेद :

'त्वनुरूपेण' का पाठभेद तंजौर में 'च नुरूपेण' और तेलगू अनुलिपि में 'च न रूपेण' तथा 'निष्क्रयेणाप०' का तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'निष्क्रयेणोप०' मिलता है।

पाददिप्पणी :

४०. (१) उत्तम : उच्चवर्ण।

(२) अकामा : अनिच्छुक। भविष्य० ४:२०५: १२६, विष्णु० ३:११:१२४, मत्स्य० २२७:१२५।

(३) पूर्वापत्यवती : पहले से सन्तान युक्त।

(४) निष्क्रयेण : पुरस्कार, हर्जाना या, छुड़ाने का मूल्य। द्र० ४:१२:३७।

(५) अपवाहयेत् : उस स्त्री को लौटा देना, मोचनमूल्य या उद्धारमूल्य लेकर। याज्ञ० २:२९६। गण० २:३४६।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे कन्याप्रकर्म द्वादशोऽध्यायः । आदित एकोननवतितमः ।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कण्टक शोधन में कन्या प्रकर्म सम्बन्धित बारहवाँ अध्याय समाप्त । आदि से नवासीवां अध्याय समाप्त ।

पाठ भेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे द्वादशोऽध्यायः कन्याप्रकर्म, आदित एकोननवतितमः ।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने कन्याप्रकर्म द्वादशोऽध्यायः, आदित एकोननवतिः ।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे द्वादशोऽध्यायः कन्याप्रकर्म, आदित एकोननवतितमः ।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे कन्याप्रकर्म द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥ आदित एकोननवतितमः ॥८९॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अष्टाशीतितमं प्रकरणम्—अतिचारदण्डाः[1]

अठासीवां प्रकरण—अतिचारदण्ड

अध्याय १३

ब्राह्मणमपेयमभक्ष्यं[2] वा ग्रासयत उत्तमो दण्डः, क्षत्रियं मध्यमः, वैश्यं पूर्वः साहसदण्डः, चतुष्पञ्चाशत्पणो दण्डः ।

१. ब्राह्मण को अपेय अथवा अभक्ष्य खिलाने-पिलाने वाले व्यक्ति पर उत्तम साहस दण्ड, क्षत्रिय को खिलाने-पिलाने पर, मध्यम साहस दण्ड, वैश्य को खिलाने पर, पूर्व साहस दण्ड, शूद्र को खिलाने पर, चौवन पण दण्ड लगाया जाय ।

स्वयं ग्रसितारो निर्विषयाः कार्याः ।

२. स्वयं अपेय अथवा अभक्ष्य ग्रहण करने वाले, देश से निर्वासित किये जायँ ।

परगृहाभिगमने दिवा पूर्वः साहसदण्डः, रात्रौ मध्यमः ।

३. दिन में परगृहगमन करने पर पूर्वसाहस दण्ड तथा रात्रि में उक्त कार्य करने पर, मध्यम साहस दण्ड लगाया जाय ।

दिवा रात्रौ वा सशस्त्रस्य प्रविशत उत्तमो दण्डः ।

४. दिन अथवा रात्रि में सशस्त्र प्रवेश करने वाले पर, उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय ।

पाठ भेद :

'अपेयमभक्ष्यं' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'अपेयभक्ष्यं' तथा 'वा ग्रासयत' का तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में 'स ग्रासयत' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

याज्ञवल्क्य ने उक्त सूत्र को अपनी स्मृति (२:२९६) में उद्धृत किया है ।

१. (१) अतिचार : दाम्पत्य सम्बन्ध में गड़बड़ी । मर्यादा का उल्लंघन ।

(२) अपेयमभक्ष्य : अविहित पेय एवं नखाने पीने योग्य भोज्य ।

पद्म० : ७:१७:१५८ कूर्म० उ० : १९:९६ स्कन्द० : ६:२६:४१

पादटिप्पणी :

२. (१) निर्विषया : देशभ्रष्ट, विषय या जिला से निर्वासित कर दिया जाय । विषय का अर्थ समय समय पर बदलता रहा है । कश्मीर में विषय जिला को कहते थे ।

पादटिप्पणी :

३. (१) अभिगमन : जाना, अतिक्रमण, संभोग । द्र० ३:१०:१९ । ने है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भिक्षुक[1]वैदेहकौ[2] मत्तोन्मत्तौ[3][4] बलादापदि[5] चातिसंनिकृष्टाः[6] प्रवृत्तप्रवेशा-[7]श्चादण्ड्या, अन्यत्र प्रतिषेधात् ।

५. भिक्षुक, वैदेहक, मत्त, उन्मत्त एवं अति निकटवर्ती जन बलात्कार के कारण और आपत्ति में प्रविष्ट होने पर तथा सौहार्दवश प्रवेश करने वाले दण्डनीय नहीं हैं, यदि उन्हें निषिद्ध न किया गया हो ।

स्ववेश्मनो विरात्रादूर्ध्वं[1] परिवार्यमारोहतः[2] पूर्वः साहसदण्डः, परवेश्मनो मध्यमः, ग्रामारामवाटभेदिनश्च ।

६. अर्धरात्रि के बाद अपने घर के प्राकार पर, चढ़ने वाले पर, पूर्वसाहस दण्ड, परगृह के प्राकार पर आरोहण करने वाले पर, तथा ग्राम एवं उपवन का घेरा तोड़ने वाले पर मध्यम साहस दण्ड लगाया जाय ।

ग्रामेष्वन्तः सार्थिका[1] ज्ञातसारा[2] वसेयुः ।

७. सार्थिक जन सारद्रव्य (ग्राम प्रमुखादि को) सूचित कर ग्राम के अन्दर निवास करें ।

मुषितं प्रवासितं[1] चैषामनिर्गतं रात्रौ ग्रामस्वामी[2] दद्यात् ।

८. रात्रि में उनके ग्राम से बिना निर्गत हुए मुषित और वासित होने पर, ग्रामस्वामी (धन) प्रदान करे ।

पादटिप्पणी :

५. (१) भिक्षुक : बौद्ध भिक्षुक या साधु या भिक्षा माँगने वाला ।

(२) वैदेहक : व्यापारी । द्र० १:११:१, । ३:१२३९, ३:१३:२८

(३) मत्त : सुरासेवन से विकृत बुद्धि वाला ।

(४) उन्मत्त : पागल, स्वयं भ्रान्त ।

(५) बलादापदि : बल तथा आपदा ।

(६) अति संनिकृष्टा : अत्यन्तनिकटवर्ती या पड़ोसी ।

(७) प्रवृत्त प्रवेश : जिसका प्रवेश रीति के अनुसार या रुढ़िगत हो ।

पादटिप्पणी :

६. (१) विरात्र : अर्धरात्रि के पश्चात कुसमय । द्र० ४:६:२ ।

(२) परिवार्य : घेरा या प्राकार, घर की चहारदीवारी, या वाड़ा या कुड्यादि, द्र० १:१०: ७, १:१२:४ ।

पाठ भेद :

'ग्रामेष्वन्तः' का पाठ भेद तंजौर में 'ग्रामेन्यन्तः', तेलगू अनुलिपि में 'ग्रामेन्यतः' और त्रिवेन्द्रम् तथा मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'ग्रामेघन्तः' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

७. (१) सार्थिका : कारवा या व्यापारी संघ के व्यापारी गण, वणिज व्यापार के लिए विदेश यात्री व्यापारी भी अर्थ होता है ।

(२) सार : मूल्यवान सामान ।

पाद टिप्पणी :

८. (१) प्रवासित : निर्वासित या मारा हुआ । द्र० १:१४:२; ४:१३:९, ४:१३:२० । याज्ञ० २: २८१ :

(२) ग्रामस्वामी : गाँव का जमींदार, जागीरदार या गाँव का मालिक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ग्रामान्तरेषु वा मुषितं प्रवासितं विवीताध्यक्षो दद्यात् ।

९. अथवा ग्रामान्तरों में मुषित और प्रवासित होने पर विवीताध्यक्ष दें ।

अविवीतानां चोररज्जुकः ।

१०. अविवीत क्षेत्र में उक्त घटना होने पर, चोररज्जुक दें ।

तथाप्यगुप्तानां सीमावरोधेन विचयं दद्युः ।

११. उस प्रकार सुरक्षित न होने की स्थिति के सीमावरोधपूर्वक अन्नेवेषण करें ।

असीमावरोधे पञ्चग्रामी दशग्रामी वा ।

१२. सीमावरोध न होने पर पंचग्रामी अथवा दशग्रामी (धन) दें ।

पाठ भेद :

'ग्रामान्तरेषु' का पाठ भेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'ग्रामान्तेषु' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) ग्रामान्तरेषु : ग्रामों के बीच । द्र० २:३४:६ । अग्नि २५३:६५ ४:१३:८,९ ।

(२) प्रवासित : मारा गया । द्र० १:१४:२, ४:१४:८,९ ।

(३) विवीताध्यक्ष : ग्रामों के मध्य चोरी या मारे गये का उत्तरदायी होता था । गण० ११८, ११६, ३४१ ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) अविवीतानाम् : विना चारागाह का क्षेत्र ।

(२) चोररज्जुक : चोर को पकड़ने वाला राजपुरुष या अधिकारी, जो ग्राम के बाहर चोर पकड़ने का कार्य करता है । द्र० २:६:३ । यदि बिबीताध्यक्ष के अधिकार सीमा की बाहर हानि होती थी तो चोर रज्जुक अधिकारी की जिम्मेदारी उसे पूरी करनी होती थी ।

पाठ भेद :

'सीमावरोधेन विचयं' का पाठ भेद त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'सीमावरोधविचयं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) सीमावरोध : सीमा का निर्देश या जैसी हदबन्दी सीमा निश्चित की गयी है । द्र० २:३५-३ ।

पाठ भेद :

'०वरोधे पञ्च–' का पाठ भेद तंजौर में '०रवोध पञ्च–' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) पञ्चग्रामी : यह गोपों के कार्य सीमा के अन्दर आता है । इसका अर्थ पाँच गावों का कर वसूल करने वाला होता है । अर्थ पाँच ग्रामों का समूह भी किया गया है । द्र० ३:३५:२ । याज्ञ० २:२७२ ।

(२) दशग्रामी : यह भी गोपों की सीमा में आता है । इसका अर्थ दस ग्रामों का समुदाय भी कुछ अनुवादकों ने किया है । याज्ञ० २:२७२, २७२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुर्बलं[१] वेश्म शकटमनुत्तब्धमूर्धस्तम्भं[२] शस्त्रमनपाश्रयमप्रतिच्छन्नं[३] श्वभ्रं कूपं कूटावपातं[५] वा कृत्वा हिंसायां दण्डपारुष्यं विद्यात् ।

१३. दुर्बल गृह, ऊपर स्तम्भरहित शकट, अनाच्छादित शस्त्र, अनाच्छन्न गर्त, कूप, अथवा कूटावपात निर्मित करके हिंसा की जाने पर दण्डपारुष्यविहित दण्ड दिया जाय ।

वृक्षच्छेदने दम्यरश्मिहरणे[१][२] चतुष्पदानामदान्तसेवने वाहने वा काष्ठ-[३] लोष्ठपाषाणदण्डबाणबाहुक्षेपणेषु याने[४] हस्तिना[५] च संघट्टने 'अपेहि' इति प्रक्रोशन्नदण्ड्यः ।

१४. वृक्ष काटने के समय, दम्य वैलादि की रस्सी ग्रहण करने पर, चतुष्पदों में अप्रशिक्षित चतुष्पद के प्रथम प्रयोग अथवा सवारी के समय पारस्परिक कलह में काष्ठ, ढेला, पाषाण, दण्ड, वाण एवं बाहु प्रक्षेप काल में, यान और हाथी की सवारी के समय चोट लगने पर 'दूर हट जाओ' इस प्रकार कहने वाला सम्बद्ध व्यक्ति दण्डनीय नहीं है ।

हस्तिना रोषितेन हतो द्रोणान्नं मद्यकुम्भं माल्यानुलेपनं दन्तप्रमार्जनं च पटं दद्यात् ।

१५. क्रुद्ध हाथी द्वारा (मार्ग में पड़कर) मारा गया व्यक्ति द्रोण भर अन्न, मद्यकुम्भ, मा , अनुलेपन, दन्त प्रमार्जन, वस्त्र (हाथी के लिए दे) स्वयं मरने की इच्छा से हाथी के मार्ग में पड़कर, यदि कोई मरता है, तो उसके सम्बन्धी उक्त सामग्री दें ।

पाठ भेद :

'–मूर्धस्तम्भं शस्त्रन्' का पाठभेद तंजौर तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में '–मूर्धस्तस्भशस्त्रम्' और तेलगू अनुलिपि में '–मूर्ध्वस्जम्भशस्त्रम्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) दुर्बलवेश्म : कमजोर, लड़खड़ाता मकान ।

(२) शकट : गाड़ी ।

(३) अनपाश्रय : बिना खोली के या खुला । या बिवर ।

(४) अनपाछन्नश्वभ्र : बिना ढका या खुला गर्त

(५) कूटावपात : खोदा गया प्रच्छन्न गढ्ढा । द्र० २:३:१५, ४:१०:३, १०:१:१२, १२, ५:१५ ।

पाठ भेद :

तंजौर की पादटिप्पणी तथा तेलगू अनुलिपि में 'वाहने' और त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'वा' नहीं मिलता है, तथा 'हस्तिना' का पाठभेद तंजौर की पादटिप्पणी एवं तेलगू अनुलिपि में 'हस्तिने', 'संघट्टने' 'अपेहि' का तंजौर में 'संघट्टेनापेहि' और त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'संघण्टेनापेहि' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) दम्य : शिक्षार्थी । सिखाड़ी अर्थ भी किया गया है । द्र० २:३१:१, ४; ३:२२:१, २; २:२९:८ ।

(२) रश्मि : नाक की डोरी, रास से तात्पर्य है ।

(३) काष्ठलोष्ठ : याज्ञ० २:२९८ ।

(४) यान : शकट, गाड़ी । द्र० १:२१:१८ ।

(५) हस्ति : हाथी ।

पाठ भेद :

'द्रोणान्नं मद्यकुम्भं' का पाठभेद तंजौर में 'द्रोणन्नमाद्यकुम्भं', त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'द्रोणोनमद्यकुम्भं' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) मद्यकुम्भ : मदिरा का घड़ा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अश्वमेधावभृथस्नानेन तुल्यो हस्तिना वध इति पादप्रक्षालनम् ।

१६. अश्वमेधावभृथस्नान के समान हस्ती द्वारा वध होता है अतएव उसका पाद प्रक्षालन किया जाय।

उदासीनवधे यातुरुत्तमो दण्डः ।

१७. सामान्यजन का वध होने पर, महावत पर, उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय।

शृङ्गिणो दंष्ट्रिणा वा हिंस्यमानममोक्षयतः स्वामिनः पूर्वः साहसदण्डः, प्रतिक्रुष्टस्य द्विगुणः ।

१८. सींग वाले अथवा दांतवाले पशु द्वारा हिंसित होते जन को मुक्त न करने वाले पशु स्वामी पर, पूर्व साहस दण्ड लगाया जाय, रक्षार्थ आवाज देने पर भी रक्षा न करने पर उसके स्वामी पर, दूना दण्ड लगाया जाय।

शृङ्गिदंष्ट्रिभ्यामन्योन्यं घातयतस्तच्च तावच्च दण्डः ।

१९. सींग और दांतवाले पशु यदि एक दूसरे को मारे, तो वह (मृतपशु) और उतना मूल्य दण्ड लगाया जाय।

देवपशुमृषभमुक्षाणं गोकुमारीं वा वाहयतः पञ्चशतो दण्डः, प्रवासयत उत्तमः ।

२०. देवता से सम्बन्धित पशु, ऋषभ, उक्ष अथवा वछिया की सवारी (हरण) करने वाले पर पांच सौ पण दण्ड लगाया जाय और उन्हें प्रवासित करने वाले पर, उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय।

पादटिप्पणी :

१६. (१) अवभृथस्नान : मुख्य यज्ञ की समाप्ति पर शुद्धि के लिए किया जाने वाला स्नान, यज्ञानुष्ठान की समाप्ति पर किया जाने वाला स्नान।

(२) पादप्रक्षालन : अतिथियों को आने पर पाद्य एवं अर्घ्य दिया जाता है। चलकर आए हुए लोगो के लिए पैर धोना पैर पर पड़े धूल को साफ करना आवश्यक है। अतिथि सत्कार पादप्रक्षालन से प्रारम्भ होता है।

पादटिप्पणी :

१७. (१) उदासीन : अनिच्छुक मरने वाला, अर्थात् जो मरना न चाहे।

(२) यातु : चालक, सारथी, महावत। द्र० ४:१३:२२, २५।

पादटिप्पणी :

१८. (१) शृङ्गिणा : सींग वाले पशु। द्र० याज्ञ० २:३००।

(२) दंष्ट्रिणा : दाँत वाले पशु।

(३) प्रतिक्रुष्ट : दयनीय रक्षा के लिये बुलाया गया।

पाद टिप्पणी :

२०. (१) देवपशु : देवता पर चढ़ाया गया या मन्दिर का पशु। काशी आदि तीर्थ स्थानों में प्रथा है कि वृषभ महादेव (शिव) पर चढ़ा दिया जाता है। वृषभोत्सर्ग श्राद्ध की एक क्रिया है, जिसमें एक वृषभ छोड़ दिया जाता है। मैंने भी अपने पिता के मामा स्व० ठाकुर विश्वनाथ सिंह के मरने पर इसी प्रकार एक वृषभ छोड़ा था। द्र० ३:१:२४।

(२) ऋषभ : गर्भाधानादि से भिन्न कृषि आदि कार्य करने वाले बैल या श्रेष्ठ।

(३) उक्षा : गर्भाधान के लिए छोड़े गये साँड़। द्र० २:२९:८, ३:१०:२४।

(४) गोकुमारी : जो गाय व्यायी न हो।

(५) प्रवासयत : मारने पर या मरने पर। द्र० ४:१३:८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लोमदोहवाहनप्रजननोपकारिणां क्षुद्रपशूनामादाने तच्च तावच्च दण्डः, प्रवासने च, अन्यत्र देवपितृकार्येभ्यः ।

२१. लोमप्रद, दोहनोपयोगी, वाहनोपयोगी, प्रजननोपकारी क्षुद्र पशुओं का अपहरण करने पर, वह पशु तथा उतना और दण्ड लगाया जाय, देवपितृ कार्य के अतिरिक्त अन्यत्र प्रवासित करने पर, भी उक्त दण्ड लगाया जाय ।

छिन्ननस्यं भग्नयुगं तिर्यक्प्रतिमुखागतं प्रत्यासरद्वा चक्रयुक्तं याता पशुमनुष्यसंबाधे वा हिंसायामदण्ड्यः ।

२२. शकट वाही बैल की नाथ टूट जाने पर, जुआ भग्न होनेपर, तिर्यक् गामी और अभिमुखागत होनेपर, पीछे चलने पर, अथवा पशुओं एवं मनुष्य की भीड़ होनेपर, मनुष्य या पशु की हिंसा होने की स्थिति में चालक दण्डभागी न हो ।

अन्यथा यथोक्तं मानुषप्राणिहिंसायां दण्डमभ्यावहेत् ।

२३. अन्य स्थिति में मनुष्य पशु की हिंसा होने पर, वह दण्ड का भागी बने ।

अमानुषप्राणिवधे प्राणिदानं च ।

२४. मानुषेतर प्राणिवध होनेपर, वैसा प्राणी (जीव) प्रदान करे ।

पादटिप्पणी :

२१. क्षुद्रपशु : छोटे पशु ।

(२) प्रवासन : मारने पर ।

(३) अन्यत्र : धार्मिक कार्य के लिए छोड़े गये छोटे पशु ।

पाठ भेद :

'–नस्यं भग्न–' का पाठभेद तंजौर एवं तेलगू अनुलिपि में '–नस्यमभग्न–' और 'याता पशु–' का तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद टिप्पणी में 'यातपशु–' तथा तेलगू अनुलिपि में 'यानपशु–' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) छिन्ननस्य : बैल के नाक का टूटा नथना या नाथी । मनु ने इस सूत्र की शब्दावली तथा भाव को ८:२९१ में उद्धृत किया है । याज्ञ० २:२९९ ।

(२) युगं : बैल के कन्धा का जुआ ।

(३) प्रत्यासरद्वा : अचानक पीछे हटने वाला ।

पाठ भेद :

'०वहेत्' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पाद टिप्पणी तथा तेलगू अनुलिपि में '०भवेन्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) अभ्यावहेत् : द्र० २:२८:२६ ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) अमानुष : मानवेतर जीव ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाले यातरि[1] यानस्थः स्वामी दण्ड्यः, अस्वामिनि यानस्थः, प्राप्तव्यव[2]हारो वा याता ।

२५. (हिंसा की स्थिति में) चालक बालक होनेपर, यान में स्थित स्वामी दण्ड भागी हो, स्वामी न होनेपर, यानस्थ व्यक्ति अथवा प्राप्त व्यवहार चालक दण्डनीय हो ।

बालाधिष्ठितमपुरुषं वा यानं राजा हरेत् ।

२६. बालक युक्त अथवा पुरुष रहित यान को राजा ग्रहण करे ।

कृत्या[1]भिचारा[2]भ्यां यत्परमापादयेत् तदा[3]पादयितव्यः ।

२७. कृत्या एवं अभिचार द्वारा जो दूसरे को जिस प्रकार विपन्न करे, उसे भी उसी प्रकार विपन्न किया जाय ।

कामं[1] भार्यायामनिच्छन्त्यां कन्यायां वा दारार्थिनो भर्तरि भार्याया वा संवे[2]दनकरणम् ।

२८. भार्या अथवा कन्या की कामेच्छा न होने पर, दारार्थि जन (स्त्री को चाहने वाले) तथा भर्ता की कामेच्छा न होने पर भार्या वशीकरण करें ।

अन्यथा हिंसायां मध्यमः साहसदण्डः ।

२९. अन्यस्थिति में हिंसा की जाने पर मध्यम साहस दण्ड लगाया जाय ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) यातरि : चालक । द्र० ४:१३:१७, २२, २५ ।

(२) प्राप्तव्यवहार : वयस्क; बालिग । द्र० ३:३:१, ३:५:१९ ।

पाद टिप्पणी :

२७. (१) कृत्या : विनाश करने वाली एक देवी, जिसका आवाहन आभिचारिक कृत्यों में होता है । प्रह्लाद के विनाश के लिए कृत्या का आवाहन किया गया किन्तु निष्पाप प्रह्लाद को छोड़कर कृत्या ने राक्षसों के पुरोहितों को मार डाला । विष्णु० १:१५:१५३, १:१६९; १:१७:५२, १:१८.९३७; गण० ३:११,

(२) अभिचार : मनुष्य की मृत्यु के कारणों में से एक । पद्म० २:६६:१२५ । मन्त्रादि को बुरे कर्मों या मारण-मोहन आदि के लिए प्रयोग करना ।

(३) तदापादयितव्य : जो दूसरों के साथ करता है, उसे वही मिलता है, तात्पर्य है ।

पाठभेद :

'दारार्थिनो' का पाठभेद तंजौर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि में 'दारार्थिनां' और 'संवदन–' का इन सब में 'संवनन–' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२८. (१) काम : इच्छा, रति, कामना आदि । द्र० १:७:२ ।

(२) संवदन : वशीकरण, जादू-मंत्र के द्वारा वश में करना । यद्यपि संवदन विद्या को मान्यता नहीं दी गई है किन्तु पत्नी का पति और पति का पत्नी का प्रेम प्राप्त करने के लिए अपवाद मान लिया गया है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मातापित्रोर्भगिनीं[1] मातुलानी[2]माचार्याणीं[3] स्नुषां[4] दुहितरं[5] भगिनीं[6] वाऽधिचरतस्[7]त्रिलिङ्ग[8]च्छेदनं वधश्च ।

३०. माता पिता की बहिन, मामी, आचार्य की स्त्री, पुत्रवधू, पुत्री अथवा बहिन के साथ व्यभिचार करने वाले का त्रिलिङ्गच्छेदन पूर्वक प्राणवध किया जाय।

सकामा[1] तदेव लभेत, दास[2]परिचारका[3]हितक[4]भुक्ता[5] च ।

३१. स्त्री सकाम होने पर, उसे स्तनभगच्छेदन पूर्वक प्राण वध दण्ड दिया जाय, दास, परिचारक और आहितक भी उक्त स्थिति (व्यभिचार) में उक्त प्रकार से दण्ड प्राप्त करें।

ब्राह्मण्यामगुप्तायां[1] क्षत्रियस्योत्तमः[2], सर्वस्वं वैश्यस्य, शूद्रः कटाग्निना[3] दह्येत ।

३२. संरक्षणरहित ब्राह्मणी के साथ व्यभिचार करने पर, क्षत्रिय पर उत्तम साहस दण्ड लगाया जाय, वैश्य का सर्वस्वहरण किया जाय, शूद्र को कटाग्नि से दग्ध किया जाय।

सर्वत्र राजभार्यागमने[1] कुम्भीपाकः ।

३३. प्रत्येक स्थिति में राजभार्यागमन करने पर, कुम्भीपाक दण्ड दिया जाय।

पाठभेद :

'वाऽधिचरतस्' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'वाभिचरतस्' मिलता है।

पाद टिप्पणी :

३०. (१) माता पित्रोर्भगिनी : माता और पिता की बहन, फूआ।

(२) मातुलानी : मामी।

(३) आचार्याणी : आचार्य की स्त्री। द्र० १:१९:२३।

(४) स्नुषा : पुत्रवधू।

(५) दुहिता : कन्या।

(६) भगिनी : बहन।

(७) अधिचरतः : कामुक या इन्द्रिय भोग की भावना से जाय।

(८) त्रिलिङ्ग : शिश्न तथा दोनों अण्डकोश। स्त्रियों का स्तन एवं दोनों भगनासा याज्ञ० ३:२३२, २३३।

पाद टिप्पणी :

३१. (१) सकामा : काम परायण।

(२) दास : द्र० १:२१:१३।

(३) परिचारक : सेवक।

(४) आहितक : बंधक रखा हुआ व्यक्ति या बँधुआ। द्र० २:१२५, ३:१:३:११।

(५) भुक्त : उपभुक्त, भोगा हुआ।

पाद टिप्पणी

३२. (१) अगुप्ता : संरक्षणरहित स्त्री। मनु० ८:३७४-७८। मत्स्य २२८:१३९।

(२) उत्तमसाहस दण्ड : ब्राह्मणी स्त्री के साथ क्षत्रिय के व्यभिचार करने पर, उत्तम साहस दण्ड वैश्य के साथ ब्राह्मण स्त्री के सम्बन्ध होने पर, सर्वस्व हरण।

(३) कटाग्नि : ब्राह्मणी का शूद्र से संपर्क होने पर, तृण या कट की अग्नि, भूसी की आग से जला दे। अग्नि० २२८:६७-६३; २५८:६३ मत्स्य० २२८:२०१ याज्ञ० २:२८२ मनु० ८:३८८।

पाठ भेद :

'कुम्भीपाक' का पाठ भेद तंजौर तथा तेलगू अनुलिपि में 'कुम्भीपातः' मिलता है।

पाद टिप्पणी

३३. (१) राजभार्या : द्र० याज्ञ० २:२८३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्वपाकीगमने कृतकबन्धाङ्कः परविषयं गच्छेत्, श्वपाकत्वं वा शूद्रः।

३४. शूद्र के श्वपाकी के साथ गमन करने पर, उसे कबन्धाङ्कित कर, देश से निष्कासित कर दिया जाय अथवा श्वपाक बना दिया जाय।

श्वपाकस्यार्यागमने वधः, स्त्रियाः कर्णनासाच्छेदनम्।

३५. श्वपाक के आर्यस्त्री के साथ गमन करने पर, उसका वध किया जाय, स्त्री की नाक-कान काट ली जाय।

प्रव्रजितागमने चतुर्विंशतिपणो दण्डः।

३६. प्रव्रजित स्त्री के साथ गमन करने पर, चौवीस पण दण्ड लगाया जाय।

सकामा तदेव लभेत।

३७. सकामा प्रव्रजिता यदि वैसा करे तो, उसे भी वही दण्ड दिया जाय।

---

(२) कुम्भीपाक : कुम्भ में जीवित जला देना या घड़ा में पकाना, खौलते हुए जलपात्र में उबालना, जलते हुए भाड़ में झोंकना या भून देना। मुस्लिम काल के इतिहास में ऐसे बहुत से प्रमाण मिलते हैं, जब कि महल में रानी के साथ व्यभिचार करने वाला बड़े देग के पानी में उबालकर या भूनकर मार डाला जाता था।

कुम्भीपाक का अर्थ कुछ अनुवादकों ने खौलते तेल में भूनकर, मार डालना किया है।

पादटिप्पणी :

३४. (१) कृतकबन्धाङ्क : मस्तक पर कबन्ध के चिह्न से अंकित या छाप करना।

(२) श्वपाक : जातिच्युत या बहिष्कृत, श्वपाक कहा जाता था। श्वपाक एवं चाण्डाल में अन्तर है। चाण्डाल क्रूर एवं दुष्कर्मी तथा अपराधियों को मारने या बध का काम करते थे। शुद्र पिता एवं ब्राह्मणी माता से उत्पन्न पुत्र को चाण्डाल कहा गया है। इसे प्रतिलोमज कहते हैं। जार दोष से उत्पन्न अधम श्रेणी में गिना गया है। विक्रीत कन्या, शूद्रा में ब्राह्मण द्वारा उत्पन्न पुत्र चाण्डाल कहा जाता है। अमरकोशकार ने चाण्डाल को श्वपाक का पर्याय माना है, किन्तु दोनों में अन्तर है। चाणक्य ने दोनो शब्दों का प्रयोग भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न अर्थों में किया है। चाण्डाल जन्मना एवं कर्मणा दोनो होते थे। कौटिल्य ने श्वपाक को आर्यो की सीमा के बाहर माना है। स्कन्द० ६:२७:४५, अग्नि० १५१: ११,१४, गरुड़० पू० ९६:४, ब्रह्मवै० १;१०:१०२, १:२०;२८, पद्म० ७:२०:१२९,१३०।

(३) शूद्र : याज्ञ० २:२९४।

पाठ भेद :

'श्वपाकस्यार्यागमने' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'श्वपाकस्या भार्यागमने' मिलता है।

पादटिप्पणी :

३५. (१) आर्या : आर्यस्त्री के साथ गमन करने पर, श्वपाक को वध और स्त्री का नाक-कान काटने का दण्ड दिया जाता था। आर्या का सामान्य अर्थ ब्राह्मण-क्षत्रिय, वैश्यकी स्त्री से होता है।

(२) कर्ण : याज्ञ० २:२८६।

पादटिप्पणी :

३६. (१) प्रव्रजिता : ग्राहस्थ्य धर्मत्याग कर, प्रव्रज्या ग्रहण करने वाली स्त्री, साधुनी या सन्यासिनी। द्र० २:३३:२।

पादटिप्पणी :

३७. (१) सकामा : तरुणी, कामेच्छुक स्त्री। द्र० ४:१२;६।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूपाजीवायाः प्रसंह्योपभोगे द्वादशपणो दण्डः ।

३८. रूपाजीवा का बलात् उपभोग करने पर, बारह पण दण्ड लगाया जाय।

बहूनामेकामधिचरतां पृथक् चतुर्विंशतिपणो दण्डः ।

३९. एक स्त्री के साथ अनेक पुरुषों के उपभोग करने पर प्रत्येक पर चौवीस पण दण्ड लगाया जाय।

स्त्रियमयोनौ गच्छतः पूर्वः साहसदण्डः, पुरुषमधिमेहतश्च ।

४०. स्त्री के अयोनि में और पुरुष में उपभोग करने पर, पूर्वसाहस दण्ड लगाया जाय।

मैथुने द्वादशपणस्तिर्यग्योनिष्वनात्मनः ।
दैवतप्रतिमानां च गमने द्विगुणः स्मृतः ॥

४१. तिर्यक् योनियों में मैथुन करने पर दुष्टात्मा पर बारह पण तथा देव प्रतिमायों से वैसा करने पर दूना दण्ड लगाया जाय।

अदण्ड्यदण्डने राज्ञो दण्डस्त्रिंशद्गुणोऽम्भसि ।
वरुणाय प्रदातव्यो ब्राह्मणेभ्यस्ततः परम् ॥

४२. अदण्डनीय को दण्ड देने पर राजा के ऊपर दण्ड का तीस गुना दण्ड लगाया जाय और वह धन वरुण देव को अर्पित किया जाय तदनन्तर ब्राह्मणों को दिया जाय।

पादटिप्पणी :

३८. (१) रूपाजीवा : अपने रूप या सौन्दर्य का व्यापार करने वाली स्त्री। द्र० : १:२०:२०, २:४:११, २:३३:२, २:२७:२७, २:३६:९, ३:२० १५, १०:१:१०।

(२) प्रसह्य : बलपूर्वक, जबरदस्ती। शिशु० १:२७। इसका अर्थ अत्यन्त या अत्यधिक भी होता है। गण० २:३५५, भर्तृ० २:४।

पाठ भेद :

'एकामधिचरतां' का पाठभेद तंजौर तथा त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी में 'एकमधिचरतां' मिलता है।

पादटिप्पणी :

३९. (१) बहूनाम् : एक ही स्त्री के साथ सम्बन्ध करने वाले बहुतों को अलग-अलग दण्ड दिया जाय।

(२) अधिचरतः : कामुक, कामज, वैवाहिक, दैहिक भावना। द्र० ४:९; २४, ४:१३:३०, ५:१: १४, ११:१:४५, ३:२०:१६।

(३) चतुर्विंशति : याज्ञ० २:२९१ :

पादटिप्पणी :

४०. अयोनि : स्त्री-योनि के अतिरिक्त अन्य स्थान पर, भोग करना। विष्णु० ३:११:११९ याज्ञ० २:२९३।

पादटिप्पणी :

४१. (१) तिर्यग्योनि : पशु-पक्षी। मत्स्य : २२७:१४४-४५ मनु० ४:२००। ब्रह्माण्ड : २४: ६८, ४३-४४।

(२) दैवतप्रतिमा : देवप्रतिमा के साथ कामेच्छा की पूर्ति करने वाला। द्र० : १३:२:२५-२७।

पादटिप्पणी :

४२. (१) अदण्ड्यदण्डने : निरपराधी को दण्ड देने पर राजा को दण्ड दिया जाता था। राजा को भी न्याय एवं कानून का सामना करना पड़ता था। वह राजा है—इसलिए नहीं छोड़ा जाता था। हिन्दू विधि अपराध के विषय में राजा और रंक में भेद नहीं मानती थी। पश्चिमी सभ्यता में राजा के विषय में कहा गया है कि वह कोई अपराध या गलती नहीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन तत्पूयते पापं राज्ञो दण्डापचारजम् ।
शास्ता हि वरुणो राज्ञां मिथ्या व्याचरतां नृषु ॥

४३. उस प्रकार से राजा का दण्डापचार जन्य पाप शुद्ध हो जाता है। मनुष्यों पर मिथ्याचार करने वाले नृपों का शासक वरुण देव हैं।

इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे अतिचारदण्डाः त्रयोदशोऽध्यायः । आदितो नवतितमः ।

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य कण्टकशोधनं चतुर्थमधिकरणं समाप्तम् ।

चतुर्थ अधिकरण के अन्तर्गत कष्टक शोधन में अतिचार सम्बद्ध तेरहवाँ अध्याय समाप्त। आदि से नवतितम अध्याय समाप्त।

इतने में कौटिलीय अर्थशास्त्र में कण्टक शोधन चतुर्थ अधिकरण समाप्त हुआ।

करता। अतः उसे दण्ड नहीं दिया जा सकता। भारतीय विधि में स्पष्ट कहा गया है कि यदि राजा अपराध करता है तो, वह दण्डनीय है। आज कितने ही निरपराधी दण्ड पाते हैं किन्तु उसका कोई निराकरण नहीं हैं।

भाग० : ६:२:२, अग्नि० : २२७:१४।

(२) राज्ञा : याज्ञ० : २:३०७।

(३) ततःपरम् : वरुण को चढ़ाया गया, चढ़ावा पाने का अधिकारी ब्राह्मण होता था।

पाठभेद :

'राज्ञा' का पाठभेद तंजोर, त्रिवेन्द्रम् एवं मलयालम नागरी अनुलिपि की पादटिप्पणी तथा तेलगू अनुलिपि में 'राजा' मिलता है।

पादटिप्पणी :

४३. (१) पूयते : शोधित हो जाता है।

(२) वरुण : वैदिक मान्यता के अनुसार वरुण सम्पूर्ण भुवनों का राजा है। देवताओं तथा मृत्युशील प्राणी का भी राजा हैं। ऋग० ५:८५:३, ८:८२:१, २:२७:१०। वरुण समुद्र का प्रतीक है। नैतिक एवं भौतिक नियमों का सर्वोच्च प्रतिपालक है। मानव जाति का अवलोकन करता है। इसका गृह स्वर्ण निर्मित है। द्युलोक में रहता है। उसके गृह में सहस्र द्वार हैं। वरुण के गुप्तचर सहस्र नेत्रों के होने के कारण सम्पूर्ण संसार का निरीक्षण करते हैं। इसे समस्त संसार का राजा कहा गया है। यह जल का स्वामी है। महाभारत के अनुसार चौथा लोकपाल है। द्वादश आदित्यों में एक है। इसे पश्चिम दिशा, जल एवं नागलोक का अधिपति कहा गया है। इसकी ज्येष्ठ पत्नी का नाम देवी (ज्येष्ठा) है, जो शुक्राचार्य की कन्या थी। इसकी अन्य पत्नी का नाम—वारुणी (गौरी) तथा तीसरी का शीततोया था।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कण्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे त्रयोदशोऽध्यायः अतिचारदण्डः, आदितः नवतितमः।

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य कण्टकशोधनं चतुर्थमधिकरणं समाप्तम्।'

मैसूर संस्करण में—'इति कण्टकशोधने अतिचरण दण्डः त्रयोदशोऽध्यायः, आदितः नवतिः।

एतावताकौटलीयस्यार्थ शास्त्रस्य कण्टकशोधनं चतुर्थमधिकरणं समाप्तम्।'

डॉ० वसाक संस्करण में—'इति कौटिलीयार्थशास्त्रे कष्टकशोधने चतुर्थाधिकरणे त्रयोदशोऽध्यायः अतिचारदण्डः, आदितः नवतितमः।

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य कण्टकशोधनं चतुर्थमधिकरणं सयाप्तम्।'

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—'इति कण्टकशोधने चतुर्थेऽधिकरणे अतिचारदण्डः त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ आदितः नवतितमः ॥९०॥

एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य कण्टकशोधनं चथुर्थमधिकरणं समाप्तम् ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

योगवृत्तम्—पञ्चममधिकरणम्

योगवृत्त—पंचम अधिकरण

अध्याय १

एकोननवतितमं प्रकरणम्—दण्डकार्मिकम्

नवासीवाँ प्रकरण—दण्ड कर्मिक

[2]दुर्गराष्ट्रयोः [3]कण्टकशोधनमुक्तम् ।

१. दुर्ग और राष्ट्र का कण्टकशोधन कहा गया।

राजराज्ययोर्वक्ष्यामः ।

२. राजा और राज्य का (कण्टक शोधन) कहेंगे।

राजानमवगृह्योपजीविनः शत्रुसाधारणा वा ये मुख्यास्तेषु गूढपुरुषप्रणिधिः कृत्यपक्षोपग्रहो वा सिद्धिः यथोक्तं पुरस्ताद्, उपजापोऽपसर्पो वा यथा पारग्रामिके वक्ष्यामः ।

३. राजा को नीचा करने वाले उपजीवी अथवा उभय वैतनिक मन्त्रि-पुरोहिताहि प्रमुखों के ऊपर पूर्वोक्त (गूढ पुरुष प्रणिधि प्रकरणोक्त) प्रकार से गूढ पुरुष प्रणिधि अथवा कृत्यपक्षोपग्रह किया जाय, उपजाप अथवा अपसर्प का प्रयोग पारग्रामिक में कहेंगे।

पादटिप्पणी :

१. (१) दण्डकार्मिक : सजा देना। गण० १:२३०।

(२) राष्ट्र : द्र० १:१५:२२, १:१३:१५,

(३) कण्टकशोधन : दमन, या दण्ड द्वारा अनुशासित करना। विष्णु० ३२, द्र० ५:३; १५-१९, गण० १:२४७, २:११६।

पाद टिप्पणी :

२. (१) राजा : द्र० ८:२:१, गण० १:७।

(२) राज्ययोः : अमात्यादि राजप्रकृति।

पाठभेद :

'राजानमवगृह्यो' का देवनागरी अनुलिपि में 'राजानमवध्योप' तथा 'उपजापो' का तंजौर में 'अपजापो' देवनागरी अनुलिपि में 'अपसजापो' पाठ-भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

इस सूत्र में राज कण्टक का वर्णन है।

३. (१) अवगृह्य : द्र० १:८:२१, १:१४:३७, ५:११:३१, ७:१८:१०, ८:३:१७; २२, ९:३:२२, २४।

(२) मुख्य : मन्त्री, सेनापति, युवराज आदि मुख्य अधिकारी। द्र० १:१२:२५, ३:१६:७, ३:१८:१३, ३:६:७, ५:६:३०।

(३) गूढपुरुष : गुप्तचर, द्र० ३:१:१२, ३:१:१६, २४, ३३, १:१४:१, गण० १:५६।

(४) प्रणिधि : नियोग, वृत्ति, प्रयोग। द्र० १:१६:१, ७:१:३२।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राज्योपघातिनस्तु वल्लभाः संहता वा ये मुख्याः प्रकाशमशक्याः प्रतिषेद्धुं दूष्याः तेषु धर्मरुचिरुपांशु दण्डं प्रयुञ्जीत ।

४. राज्योपधात करने वाले राजप्रिय अध्यक्ष अथवा संहत मुख्य अमात्यादि, जो प्रकट रूप से निषेध करने योग्य नहीं होते और दूष्य होते हैं, उनपर धर्मबुद्धि राजा, उपांशु दण्ड का प्रयोग करे।

दूष्यमहामात्रभ्रातरमसत्कृतं सत्री प्रोत्साह्य राजानं दर्शयेत् ।

५. सत्री (गुप्तचर) दूष्य महामात्र के असत्कृत भ्राता को प्रोत्साहित कर राजा को दिखाये।

तं राजा दूष्यद्रव्योपभोगातिसर्गेण दूष्ये विक्रमयेत् ।

६. राजा उसे दूष्य (दुष्ट अधिकारी) के द्रव्योपभोग के अतिसर्ग द्वारा उस पर (दूष्यपर) पराक्रम करने के लिए नियुक्त करे।

---

(५) कृत्यपक्षोपग्रह : अपने पक्ष में करना। द्र० ३:१:१३, गण० ३:१४५, १९४।

(६) उपजाप : गुप्त रूप से उकसाना या गुप्त रूप से उत्तेजित करना, या गुप्त उपोद्घात या फुसलाना। द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२।

(७) अपसर्प : गुप्त प्रतिनिधि या कारक। द्र० १३:३:१२, १:१२:१७, २५, १३:३:१२, गण० १:२३, ३:३, १०५।

(८) पारग्रामिक : शत्रु के नगर को विजय करने के लिए उपयोगी। द्र० १:१८:१०, ९:३:१८।

पाठ भेद :

'संहता' का पाठभेद तंजोर में 'संहता वा' मिलता है।

पादटिप्पणी :

इस सूत्र में राज्य कण्टकों का वर्णन है।

४. (१) उपघात : प्रहार मनु० २:१७९; याज्ञ० २:२५६।

(२) वल्लभ : कृपा पात्र: पंच० १:५३।

(३) संहत : संगठित, मिलकर।

(४) दूष्या : जो प्रदूषितनष्ट, या खराब किया जा सके। सन्देह की दृष्टि से देखने योग्य धोखेबाज, विश्वासघाती, राजद्रोही द्र० १:११:२८, ३:१४:२७

(५) धर्मरुचि : राजा की मंगल कामना। गण० ३:१५०, १७०

(६) उपांशु : प्रच्छन्न, चुपचाप, गुप्त रूप से, दण्ड देना। १:१३:२०, १:१७:६।

पाठ भेद :

'भ्रातरमसत्कृतं' का पाठभेद तंजोर में 'भ्रातरं सत्कृतं' मिलता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) महामात्र : उच्च अमात्य या अधिकारी। गण० १:५९, १३०।

(२) असत्कृतं : सम्मान न पाया हुआ।

(३) सत्री : गुप्तचर या गुप्तप्रतिनिधि। १:१०:३, ५, २०, १:११:१, २८। गण० ३:६३, १४८।

पादटिप्पणी :

६. (१) अतिसर्गेण : अधिकारी को मृत्यु के पश्चात् प्रतिज्ञा करना कि सम्पत्ति प्रदान कर दी जायगी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शस्त्रेण रसेन वा विक्रान्तं तत्रैव[1] घातयेद् 'भ्रातृघातकोऽयम्' इति ।

७. शस्त्र अथवा रस से (विष) भ्राता पर पराक्रम प्रयुक्त कर्ता उसे उसी आरोप में "यह भ्रातृ घातक है" यह आक्षेप लगाकर घातित करा दे।

तेन पारशवः[1] परिचारिकापुत्रश्च[2] व्याख्यातौ ।

८. उक्त प्रकार से पारशव और परचारिकापुत्र की व्याख्या हो गयी।

दूष्यमहामात्रं वा सत्त्रिप्रोत्साहितो भ्राता दायं याचेत ।

९. अथवा सत्त्री द्वारा प्रोत्साहित भ्राता दूष्य महामात्र से दाय की याचना करे।

तं दूष्यगृहप्रतिद्वारि रात्रावुपशयानमन्यत्र[1] वा वसन्तं तीक्ष्णो[2] हत्वा ब्रूयाद् 'हतोऽयं दायकामुकः' इति ।

१०. दूष्यगृह के द्वार पर, रात्रि में शयन करते अथवा अन्यत्र रहते, उसकी हत्या कर, तीक्ष्ण कहे—"दायकांक्षी यह मार डाला गया"

ततोहतपक्षमुपगृह्येतरं[1] निगृह्णीयात्[2] ।

११. तत्पश्चात् हत व्यक्ति के आत्मीय जनों को पक्ष में लेकर दूसरे को दण्डित करे।

दूष्यसमीपस्था वा सत्त्रिणो भ्रातरं दायं याचमानं घातेन परिभर्त्सयेयुः।

१२. अथवा दूष्य के समीपस्थ सत्त्री दाय भाग की याचना करने वाले व्यक्ति को हत्या करने की बात कहकर, तर्जित करें।

पादटिप्पणी :

७. (१) तत्रैव : भ्रातृ हत्या के आरोप में।

पादटिप्पणी :

८. (१) पारशव : नीच वर्ण स्त्री से उत्पन्न समान। गण० २:१८४।

(२) परिचारिकापुत्र : दासीपुत्र या सेविका का पुत्र। द्र० ३:६:२१, ३:७:२२।

पाठ भेद :

'वसन्तं तीक्ष्णो' का पाठभेद 'वसन्तं तं तीक्ष्णो' तेलगू अनुप्रतिलिपि में मिलता है।

पादटिप्पणी :

१०. (१) उपशयानम् : द्वार पर अपने माँग की पूर्ति होने तक बैठा रहना तथा उपवास भी करने से तात्पर्य है।

(२) तीक्ष्ण : वधिक, घातक, हत्यारा साहसी। १:११:२, १:१२:२, १:१४:५, २:१२:१५, २४, २:१३:४, ५८, ९:६:३५।

पाठभेद :

'उपगृह्येतरं' का तंजौर में 'उपरिगृह्य' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपरिगृह्य' मिलता है।

पादटिप्पणी :

११. (१) उपगृह्य : सहायता या उपहार देना समर्थन करना। द्र० ७:२:१९, ७:१:३२, अग्नि० २५८:२८३।

(२) निगृहीत : दमनं। द्र० ३:९:३, १४, ३:२०:३८। अग्नि० : २५८:३८३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तं रात्रौ इति सर्मानम् ।

१३. उसे रात्रि में तीक्ष्ण मार दे ।

दूष्यमहामात्रयोर्वा यः पुत्रः पितुः पिता वा पुत्रस्य दारानधिंचरति, भ्राता वा भ्रातुः, तयोः कांपटिकमुखः कलहः पूर्वेण व्यांख्यातः ।

१४. दूष्य अथवा महामात्र का पुत्र पिता के अथवा पिता पुत्र के अथवा भ्राता भ्राता के स्त्रियों के प्रति दुराचरण करता है, तो उन दोनों का कापटिक द्वारा कलह उत्पन्न कर, पूर्ववत् वध करा दे ।

दूष्यमहामात्रमात्मसंभावितं वा सत्त्री 'राजपुत्रस्त्वं, शत्रुभयादिह न्यस्तोऽसि' इत्युपंजपेत् ।

१५. अथवा दूष्य महामात्र के स्वाभिमानी पुत्र को सत्त्री 'तुम राजपुत्र हो, शत्रुभय से यहां रखे गये हो' उस प्रकार का कर प्रोत्साहित करे ।

प्रतिपन्नं राजा रहसि पूजयेत् 'प्राप्तयौवराज्यकालं त्वां महामात्रभयान्नाभिषिञ्चामि' इति ।

उपस्थित होने पर, राजा उसे यह कहकर, पूजित करे 'तुम युवराज के योग्य हो गये हो, तुम्हें महामात्र के भय से अभिषिक्त नहीं कर रहा हूँ' ।

तं सत्त्री महामात्रवधे योजयेत् ।

१७. सत्त्री उसे महामात्र के वधार्थ नियुक्त करे ।

विक्रान्तं तत्रैव घातयेत् 'पितृघातकोऽयम्' इति ।

१८. पराक्रम दिखाने पर (पितृ वध करने पर) उसका उसी प्रकरण में यह कहकर, वध करादे 'यह पितृघातक' है ।

पाद टिप्पणी :

१३. (१) द्र० ५:१:१०-११ ।

पाद टिप्पणी :

१४. (२) अधिचर : कायिक या दैहिक सम्बन्ध, कामुक, विषय सुख । द्र० ३:२०:१६, ४:९:२४, ४:१३:३०, ३९, ५:१:१३, ११:१:४५,

(२) कापटिक : एक प्रकार का गुप्तचर; १:११:१,२, ५:१:१४, १:१०:११ गण० १:५२ ।

(३) व्याख्यात : कथित, वर्णित ।

पाठभेद :

'महामात्रपुत्रम्' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'महामात्रमपुत्रम्' तथा 'उपजपेत' का त्रिवेन्द्रम में 'उपचेरत्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) उपजाप : फोड़ता हुआ, उसकाता हुआ, सुझाव देता हुआ । द्र० १:१०:७, ११, १:१४, ६:१०:३:५, परकृत्य मुद्रा० २ । भड़काना, शि० २:९९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भिक्षुकी वा दूष्यभार्यां सांवदनिकीभिरौषधीभिः संवास्य रसेनातिसंदध्यात् ।

१९. अथवा भिक्षुकी, दूष्य की भार्या को वशीकरण औषधियों की जानकार के रूप में अपना परिचय देकर, बाद में उसे धोखा दे अर्थात् उसके द्वारा (औषधि के व्याज से) विष से दूष्य का वध करादे ।

इत्याप्यप्रयोगः ।

२०. यह आप्य प्रयोग है ।

दूष्यमहामात्र अटवीं परग्रामं वा हन्तुं कान्तारव्यवहिते वा देशे राष्ट्रपालमन्तपालं वा स्थापयितुं नागरस्थानं वा कुपितमवग्रहीतुं सार्थातिवाह्यं प्रत्यन्ते वा सप्रत्यादेयमादातुं फल्गुबलं तीक्ष्णयुक्तं प्रेषयेत् ।

२१. थोड़ी सेना और तीक्ष्ण के साथ दूष्य महामात्र को अटवीपाल अथवा शत्रु ग्राम को नष्ट करने के लिये अथवा दुर्गमवन से तिरोहित देश (स्थान) में राष्ट्रपाल या अन्तपाल को स्थापित करने के लिये अथवा कुपित नागरिकों को नियन्त्रित करने के लिये अथवा परराष्ट्र सीमा पर पुनः प्राप्त करने योग्य सार्थातिवाह्य स्थल को प्राप्त करने के लिये प्रेषित करे ।

पाठभेद :

'सांवदनिकी' का पाठभेद तंजोर में 'सांवदनकी' देवनागरी अनुलिपि में 'सांपादनकी' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सांववननकी' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) सांवदनिकीभि : किसी के प्रेम की अभिलाषा करना । द्र० ४:४:१४, ५:१:१९:११:१:४०, १२:२:१४, १६ ।

(२) संवास्य : मिलकर रहना, समाजमण्डली । पंच,–१:२५० ।

(३) रस : विष । द्र० । ५:१:७; ३१, ११:१:३८ । गण० ३:१२३, १७३, १९८, २३३ ।

पाठभेद :

'आप्यप्रयोग' का पाठभेद तजोर में 'आप्यप्रयोगं' देवनागरी अनुलिपि में 'आप्यःप्रयोगः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आयप्रयोगः' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) आप्य प्रयोग : द्रोही को उसके सम्बन्धी द्वारा समाप्त करना, दुष्ट अधिकारियों का उसके सम्बन्धी द्वारा मरवा देना । वंचन कार्य को आप्यप्रयोग कहते हैं ।

पाठभेद :

'अवग्रहीतुं' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपगृहीतुं' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'अपग्रहीतु' 'फल्गुबलंतीक्ष्ण' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'फल्गुबल तीक्ष्णे तथा देवनागरी अनुलिपि 'तीक्ष्ण युक्तः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) सार्थातिवाह्य : कारवा की रक्षा करना, जिसके बदले धन लिया जाता है । द्र० २:३४:१२ ।

(२) प्रत्यादेय : लौटा लेना, प्राप्त करना, जुए में जो चीज हारी जाती है, वह पुनः प्राप्त की जा सकती है । द्र० ८:३:५३, ९:४:५, ६, गण० : ३:९७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिवा रात्रौ वा युद्धे प्रवृत्ते तीक्ष्णाः प्रति[1]रोधकव्यञ्जना वा हन्युः 'अभियोगे[2] हतः' इति ।

२२. युद्ध प्रवृत्त होने पर, दिन अथवा रात्रि में प्रतिरोधक की तीक्ष्ण हत्या कर दे और प्रसिद्धि कर दें 'अभियोग में मारा गया'

यात्राविहारगतो वा दूष्यमहामात्रान् दर्शनायाह्वयेत् ।

२३. अथवा यात्रा विहारार्थ निर्गत राजा दूष्य महामात्र को देखने के लिये बुलाये ।

ते गूढशस्त्रैस्तीक्ष्णैः सहप्रविष्टा मध्यमकक्ष्यायामात्मविचयमन्तःप्रवेशनार्थं दद्युः ।

२४. गुप्त रूप से शस्त्र साथ रखने वाले तीक्ष्णों के साथ प्रविष्ट वे मध्यम कक्ष्या में अन्दर प्रवेशार्थ तलाशी दें ।

ततो दौवारिकाभिगृ[1]हीतास्तीक्ष्णाः 'दूष्यप्रयुक्ताः स्मः' इति ब्रूयुः ।

२५. तदनन्तर दौवारिक द्वारा गृहीत होने पर, वे कहें हम लोग दूष्यजनों द्वारा प्रयुक्त किये गये हैं ।

ते तदभिविख्याप्य दूष्यान् हन्युः ।

२६. उस बात को प्रसिद्ध करके वे दूष्यों का वध कर दें ।

तीक्ष्णस्थाने चान्ये वध्याः ।

२७ तीक्ष्णों के स्थान पर, अन्यजनों का वध किया जाय ।

बहिर्विहारगतो वा दूष्यानासन्नावसानान् पूजयेत् ।

२८. अथवा बाहर विहारार्थ निर्गत राजा आसन्न वहीं आवास वाले दूष्यों को सम्मानित करे ।

तेषां देवीव्यञ्जना वा दुः[1]स्त्री रात्रावावासेषु गृह्येत इति समानं पूर्वेण ।

२९. रानी का वेष धारण करने वाली आचारहीन स्त्री को रात्रि में उनके आवासों में प्रेषित कर, पुनः उन्हें वहाँ गृहीत करे तथा रानी का कामुकत्व दोष लगाकर, पूर्ववत् दूष्यों का वध करे ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) प्रतिरोधक : लुण्ठनकारी, दस्यु विघ्न या रुकावट डालने वाला । द्र० ३:१२:२ गण० १ : ८७ ।

(२) अभियोगे हत : अपराध का आरोप, अभियोग दो प्रकार का होता है । शंकराभियोग तथा तत्वाभियोग । अग्नि० २५३:१० ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) यात्रा : धार्मिक यात्रा या उत्सव से तात्पर्य है । द्र० : १:१६:२९, २:१:२६, ७:१५:३२ ९:१:३४, १२:५:१२, १३:७:४५ । गण० १:१८।

पाठभेद :

'प्रविष्टा' का पाठभेद तंजौर में 'प्रदिष्ठा' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अभिगृहीता : गिरफ्तार, पकड़ना, आबद्ध करना ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) दुःस्त्री : दुष्ट स्त्री, आचरणहीन स्त्री ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्यमहामात्रं वा 'सूदो भक्षकारो वा ते शोभनः' इतिस्तवेन भक्ष्यभोज्यं याचेत्, बहिर्वा क्वचिदध्वगतः पानीयम् ।

३०. अथवा राजा बाजार मार्ग में दूष्य महामात्र से 'आपका सूद अथवा भक्षकार उत्तम है' इस प्रकार प्रशंसा करके भक्ष्यभोज्य की या जल की याचना करे।

तदुभयं रसेन योजयित्वा प्रतिस्वादने तावेवोषयोजयेत् ।

३१. उन दोनों को विषयुक्त कर, प्रतिस्वाद के लिये उसे पहले दे।

तदभिविख्याप्य 'रसदौ' इति घातयेत् ।

३२. विष प्रदान की बात प्रसिद्ध कर, इन दोनों का वध करा दे।

अभिचारशीलं वा सिद्धव्यञ्जनो 'गोधाकूर्मकर्कटककूटानां लक्षण्यानामन्यतमप्राशनेन मनोरथानवाप्स्यसि' इति ग्राहयेत् ।

३३. अथवा सिद्धव्यञ्जन गुप्तचर अतिचार क्रिया में विश्वास रखने वाले, दूष्य महामात्र को उत्तम लक्ष्य युक्त गोह, कछुआ, कर्कट एवं भग्नश्रृंगमृग में किसी एक को खाने से तुम्हारे मनोरथ सिद्ध होंगे इस प्रकार कह कर खिलाये।

प्रतिपन्नं कर्मणि रसेन लोहमुसलैर्वा घातयेत् 'कर्मव्यापदा हतः' इति ।

३४. उक्त कर्म में संलग्न होने पर विष अथवा लौह मुसल से उसकी हत्या करा दे और प्रसिद्ध कर दे 'कर्म दोष से मारा गया'।

चिकित्सकव्यञ्जनो वा दौरात्मिकसाध्यं वा व्याधिं दूष्यस्य स्थापयित्वा भैषज्याहारयोगेषु रसेनातिसंदध्यात् ।

३५ अथवा चिकित्सक व्यञ्जन गुप्तचर दूष्य, महामात्र के दौरात्मिक साध्य या व्याधि को सिद्धकर औषधि या आहार में विष मिश्रित कर, उसकी हत्या कर दे।

पाठभेद :

'कर्कटक' का पाठभेद तंजौर तथा नागरी अनुलिपि में 'कर्कट' तथा 'अन्यतमप्राशनेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अन्यतमप्रकाशनेन' एवं 'अवाप्स्यसि' का तंजौर में 'अवाप्यतीति' मिलता है।

पाददिप्पणी :

३३. (१) अभिचार : मनुष्य के मृत्यु के कारणों में से एक। पद्म : २:६६:१२५, द्र० ४:१३:२७।

(२) कूट : टूटी सींग का बैल, द्र० ८:१:१८, ८:५:१८। इसका अर्थ उदयवीर शास्त्री ने टूटे सींग का हिरण किया है। रामतेज शास्त्री ने हरिण विशेष किया है।

(३) अन्यतम : अभिचार के द्वारा पाक क्रिया हुआ।

(४) प्राश : भोजन। द्र० १३:५:४३।

पादटिप्पणी :

३४. (१) मुसल : मूसल या मूसर। मुद्रा० : १:४, मनु० ६:५६।

पाठभेद :

'दौरात्मिक' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दौरामिकं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३५ (१) दौरात्मिक : घातक, दुराचार से उत्पन्न, दुःसाध्य या मारक बीमारी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूदारालिकव्यञ्जना वा प्राणिहिता दूष्यं रसेनातिसंदद्युः ।

३६. अथवा सूद एवं आरालिक वेषों में नियुक्त गुप्तचर विष द्वारा दूष्य का वध करें।

इत्युपनिषत्प्रतिषेधः ।

३७. उपनिषत् प्रतिषेध समाप्त।

उभयदूष्यप्रतिषेधस्तु ।

३८. दो दूष्यों का प्रतिषेध वर्णित किया जा रहा है।

यत्र दूष्यः प्रतिषेद्धव्यस्तत्र दूष्यमेवफल्गुबलतीक्ष्णयुक्तं प्रेषयेत्, गच्छ, अमुष्मिन् दुर्गे राष्ट्रे वा सैन्यमुत्थापय हिरण्यं वा, बल्लभाद्वाहिरण्यमाहारय; बल्लभकन्यां वा प्रसह्यानय, दुर्गसेतुवणिक्पथशून्यनिवेशखनिद्रव्यहस्तिवनकर्मणामन्यतमाद्वा कारय राष्ट्रपाल्यमन्तपाल्यं वा; यश्च त्वा प्रतिषेधयेन्न वा ते साहाय्यं दद्यात् स बन्धव्यः स्यात् इति ।

३९. जहाँ दूष्य को नष्ट करना हो, वहाँ थोड़ी सेना एवं तीक्ष्णों के साथ दूष्य को ही भेजे 'जाओ, उस दुर्ग अथवा राष्ट्र में सैन्य अथवा हिरण्य संग्रह करो, अथवा प्रियजन (अध्यक्ष) से हिरण्य लाओ, अथवा प्रियजन (अध्यक्ष) की कन्या को बलात् ले आओ, दुर्ग, सेतु, वणिक्पथ, शून्यनिवेश, खनि, द्रव्यवन, हस्तिवनों में किसी एक कार्य को सम्पन्न कराओ अथवा राष्ट्रपाल या अन्तपाल का कार्य कराओ, जो तुम्हें निवारित करे अथवा जो तुम्हारी सहायता न करे, उसे बन्दी बनाओ।'

तथैवेतरेषां प्रेषयेद् 'अमुष्याविनयः प्रतिषेद्धव्यः' इति ।

४०. उसी प्रकार अन्य के पास सूचना प्रेषित करे—'उसका अविनय निवारित किया जाय'।

पादटिप्पणी :

३६. (१) सूद : मांसपाचक, रसोइया, भोजन बनाने वाला।

(२) आरालिक : चावल पकाने वाला। भोजन परोसने वाला। २:४:७। द्र० १:१२:९। गण० १:५८, २:३५५।

पादटिप्पणी :

३७. (१) उपनिषद् : गुप्तदवाव, प्रतिकार, गुप्तरहस्य। द्र० ७:१:३२, ९:२:५५।

(२) प्रतिषेध : नियन्त्रण, रुकावट, हटाना, दवाना, किसी के आने का निषेध।

पाठभेद :

देवनागरी अनुलिपि में 'दद्यात्' के पश्चात् 'स' लुप्त है।

पाददिप्पणी :

३९. (१) फल्गुबल : कमजोर सेना। द्र० ५:१:२१,५४, १०:५:४३, ४५, ४६।

(२) वणिक्पथ : व्यापारियों के आवागमन के मार्ग।

(३) शून्यनिवेश : सूनी जगह को आबाद करना, शून्य स्थान में गृहादिक निवेश बनाना।

(४) द्रव्य वनकर्म : कीमती लकड़ियों को छांटनेवाला। द्र० २:२:४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तमेतेषु कलहस्थानेषु कर्मप्रतिघातेषु वा विवदमानं[1] तीक्ष्णाः शस्त्रं पातयित्वाप्रच्छन्नं हन्युः ।

४१. इन कलह स्थानों पर अथवा कर्म व्याघात होने पर, उस विबादकारी दूष्य का तीक्ष्ण जन गुप्त रूप से शस्त्र द्वारा वध कर दें ।

तेन दोषेणेतरे नियन्तव्याः

४२. उस दोष के आधार पर, दूसरों को दण्डित किया जाय ।

पुराणां ग्रामाणां कुलानां[1] वा दुष्याणां सीमा[2]क्षेत्रखलवेश्ममर्यादासु द्रव्यो-पकरण[3]सस्यवाहनहिंसासु प्रेक्षाकृत्यो[4]त्सवेषु वा समुत्पन्ने कलहे तीक्ष्णैरुत्पादिते वा तीक्ष्णाः शस्त्रं पातयित्वा ब्रूयुः 'एवं क्रियन्ते येऽमुना कलहायन्ते' इति ।

४३. दूष्य पुरों, ग्रामों अथवा कुलों की सीमा, क्षेत्र, खल (खलिहान) और गृह के विषय में, द्रव्य, उपकरण, सस्य और वाहन की हिंसा (क्षति) होने पर, प्रेक्षा एवं विवाहादि उत्सवों पर, कलह उत्पन्न हो जाने अथवा तीक्ष्णों द्वारा कलह उत्पन्न कर दिये जाने पर, तीक्ष्ण शस्त्र द्वारा हत्या कर, उस प्रकार कहे 'जो इसके साथ कलह करते हैं, उनकी यही दशा होती है' ।

तेन दोषणेतरे नियन्तव्याः ।

४४. उस दोष से अन्य दूष्यों को दण्डित किया जाय ।

येषां वा दूष्याणां जातमूलाः कलहास्तेषां क्षेत्रखलवेश्मान्यादीपयित्वा[1] बन्धु[2]संबन्धि[3]षु वाहनेषु वा तीक्ष्णाः शस्त्रं पातयित्वा तथैव ब्रूयुः 'अमुना प्रयुक्ताः स्मः' इति ।

४५. अथवा तीक्ष्ण जन जिन दूष्यों का कलह बद्धमूल हो, उनके क्षेत्र, खल एवं गृह में आग लगाकर अथवा बन्धुओं और सम्बन्धियों या वाहनों पर, शस्त्रपात करके, उस प्रकार कहे 'अमुक द्वारा नियुक्त किये गये हैं ।'

पादटिप्पणी :

४१. (१) विवदमान : विवाद करने वाले ।

पाठ भेद :

'क्षेत्रखल' का तंजौर में 'क्षेत्रपल' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'क्षेत्रफल' तथा त्रिवेन्द्रम में 'येऽमुना' के स्थान पर 'यमुनां' पाठभेद मिलता है

पादटिप्पणी :

४३. (१) कुल : वंश, परिवार, मनु० ७:५४: ६२ ।

(२) सीमा : ग्रामों तथा खेतों के मध्य की हद । द्र० ३:९:१०—३३ ।

(३) द्रव्योपकरण : सम्पत्ति, तैलादि, यन्त्रादि । द्र० १:१७:३१ ।

(४) प्रेक्षाकृत्य : किसी प्रकार का मेला, नाट-कादि । द्र० २:२७:२६, ३:३:, २१, ३:१०:३७, १३:२:४, ४५ गण० ३:१८५, १९० ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) दीपयित्वा : आग लगा कर ।

(२) बन्धु : रिस्तेदार ।

(३) सम्बन्धी : सम्बन्धी तथा एवं बन्धु में अन्तर है । सम्बन्धी विवाह से सम्बन्धित होते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन दोषणेतरे नियन्तव्याः ।

४६. उस दोष से दूसरों को दण्डित किया जाय ।

दुर्गराष्ट्रदूष्यान् वा सत्त्रिणः परस्परस्यावेशनिकान् कारयेयुः ।

४७. अथवा दुर्ग और राष्ट्र के दूष्यों को सत्त्री मैत्री कराकर एक दूसरे के घर अतिथि बना दें ।

तत्र रसदा रसं दद्युः ।

४८. वहाँ विष प्रदान कर्ता विष प्रदान करें ।

तेन दोषणेतरे नियन्तव्याः ।

४९. उस अपराध में दूसरों को दण्डित किया जाय ।

भिक्षुकी वा दूष्यराष्ट्रमुख्यं 'दूष्यराष्ट्रमुख्यस्य भार्यास्नुषादुहितावा कामयते' इत्युपजपेत ।

५०. अथवा भिक्षुकी दूष्य राष्ट्र मुख्य से 'दूष्यराष्ट्र मुख्य की भार्या, स्नुषा अथवा दुहिता प्रेमभाव से चाहती है' इस प्रकार कहे ।

प्रतिपन्नस्याभरणमादाय स्वेस्वामिने दर्शयेत 'असौ ते मुख्यो यौवनोत्सिक्तो भार्यां स्नुषां दुहितरं वाऽभिमन्यते' इति ।

५१. उक्त बात स्वीकार करने पर उसका आभूषण लेकर स्वामी को दिखाये 'वह यौवनोन्मत मुख्य अधिकारी तुम्हारी भार्या, स्नुषा अथवा दुहिता की कामना करता है' ।

तयोः कलहो रात्रौ इति समानम् ।

५२. रात्रि में उन दोनों का कलह होने पर, पूर्ववत् वध करा दें ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) आवेशनिक : अतिथि जो निवासी के मकान में रहता है ।

पाठ भेद :

'उपजपेत्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि तथा त्रिवेन्द्रम् में 'उपाजपेत' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५०. (१) भिक्षुकी : बौद्धभिक्षुकी भिखारिन, संन्यासिनी ! मनु० ३:९४, ६:५१ । गण० १:५२ ।

(२) राष्ट्रमुख्य : उच्चपद का व्यक्ति ।

पाठभेद :

'स्वामिने' का पाठभेद देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम में 'स्वामिनो' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) स्वामिने : पति, ससुर, पिता, घर के मालिक को ।

(२) अभिमन्यते : अभिलाषा, लिप्सा, दूषित इच्छा करता है । द्र० १:६:५, ७:१६:२६, ३०, ३२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्यदण्डोपनतेषु तु–युवराजः सेनापतिर्वा किंचिदपकृत्यापक्रान्तो विक्रमेत ।

५३. युवराज अथवा सेनापति दण्डोपनत दूष्यों का कुछ उपकार करके, पृथक् रहकर, पराक्रम दिखाता रहे ।

ततो राजा दूष्यदण्डोपनतानेव प्रेषयेत्फल्गुबलतीक्ष्णयुक्तान् इति समानाः सर्व एव योगाः ।

५४. तत्पश्चात् राजा अन्य दण्डोपनत दूष्यों को थोड़ी सेना तथा तीक्ष्णों के साथ उन्हें (पूर्व दूष्यों को) नियन्त्रित करने के लिए प्रेषित करे ।

तेषां च पुत्रेष्वनुक्षियत्सु यो निर्विकारः स पितृदायं लभेत ।

५५. उनके उत्तर जीवी पुत्रों में जो निर्विकार (तटस्थ) हो, वही पिता का उत्तराधिकार प्राप्त करे ।

एवमस्य पुत्रपौत्राननुवर्तते राज्यमपास्तपुरुषदोषम् ।

५६. इस प्रकार राजा का राज्य पुरुष दोष रहित होकर, पुत्र-पौत्र पर्यन्त प्रचलित रहता है ।

स्वपक्षे परपक्षे वा तूष्णीं दण्डं प्रयोजयेत् ।
आयत्यां च तदात्वे च क्षमावानविशङ्कितः ॥

५७. इस प्रकार क्षमावान् नृपति शंकारहित होकर वर्तमान तथा भविष्य में स्वपक्ष तथा परपक्ष पर, गुप्तदण्ड का प्रयोग करे ।

पाठभेद :

'किंचिदपकृत्या' का पाठभेद तेलगू अनुप्रतिलिपि तथा त्रिवेन्द्रम् में 'किंचिदुपकृत्य' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५३. (१) दण्डोपनत : किसी की सेना का आत्मसमर्पण । द्र० ७:२:९, ७:३:६, ७:१५:३०, ७:१६:२९, गण० ३६४ ।

पाठभेद :

'राजा दूष्य' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'राजदूष्य' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद

'अनुक्षियत्सु' का पाठभेद तेलगू प्रतिलिपि में 'अनुक्षिपत्सु' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५५, (१) अनुक्षिय : उत्तर जीवी, या पश्चात् जीवी । द्र० १३:५:१७ ।

(२) निर्विकार : राजद्रोह की चिन्ता से रहित, कुकृत्यों से पराङ्मुख ।

पादटिप्पणी :

५६. (१) अस्य : राजा के ।

(२) पुरुषदोष : राजद्रोहादि या मनुष्यों के दोष ।

पाठभेद :

'आयत्यां' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू प्रतिलिपि में 'आयन्त्यां' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५७. (१) आयत्यां : भविष्य में प्रवरित दिखाना, भविष्य का परिणाम ध्यान में रखना, तुरन्त का परिणाम ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इतियोगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे दाण्डकर्मिकं प्रथमो ध्यायः । आदित एकन-विततमः ।

पञ्चम अधिकरण के अन्तर्गत योगवृत्त में दण्डकर्मिक सम्बन्धित प्रथम अध्याय समाप्त आदि से एक्यान्बे अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

श्री गणपति शास्त्री संस्कर में—इति कौटिलीलार्थशास्त्रव्याख्यायां योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः दाण्डकर्मिकम्, आदित एकनवतितमः ॥

मैसूर संस्करण में—इति योगवृत्ते दण्डकर्मिकं प्रथमोऽध्यायः आदित एकनवतिः ।

डॉ० वसाक संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः, दाण्डकार्मिकम्, आदितः एकनवतितमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—इति योगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे दाण्डकर्मिकं प्रथमोऽध्यायः ॥१॥ आदित एकनवतिमः ॥९१॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय २

नवतितमं प्रकरणम्–कोशाभिसंहरणम्

नब्बेवां प्रकरण–कोशाभिसंहरण

कोशमकोशः प्रत्युत्पन्नार्थकृच्छ्रः संगृह्णीयात् ।

१. राजा अल्पकोश एवं अर्थ संकट उपस्थित होने पर कोश संग्रह करे ।

जनपदं महान्तमल्पप्रमाणं वाऽदेवमातृकं प्रभूतधान्यं धान्यस्यांशं तृतीयं चतुर्थं वा याचेत, यथा सारं मध्यमवरं वा ।

२. राजा महान् या अल्प प्रमाण वाले जल सौविध्य सम्पन्न हो और प्रचुर धान्ययुक्त जनपद से धान्य का तृतीय या चतुर्थ भाग याचनापूर्वक प्राप्त करे । प्रमाणानुसार मध्यम अथवा अवर जनपद से भाग प्राप्त करे ।

दुर्गसेतुकर्मवणिक्पथशून्यनिवेशखनिद्रव्यहस्तिवनकर्मोपकारिणं प्रत्यन्तमल्पप्रमाणं वा न याचेत् ।

३. दुर्ग, सेतु, वणिक्पथ, शून्य, खान, द्रव्यवन, एवं हस्तिवन द्वारा उपकार करने वाले, सीमावर्ती अथवा अल्प प्रभाव वाले जनपद से अंश याचना न करे ।

पाठ भेद :

'प्रत्युत्पन्नार्थ' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम में 'प्रत्युपपन्नार्थ' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) कोश : खजाना, अग्नि० २२३।१४ ।

(२) प्रत्युत्पन्नार्थकृच्छ्र : जो आर्थिक कष्ट से या किसी अर्थ में कठिनता का अनुभव करता है । द्र० ७:८:५ ।

(३) कृच्छ्र : कष्टप्रद व पीड़ाकर । मनु० ६:७८ । कठिनाई, स्कन्द ६:५३:८३ । आपातकाल, भागवत ११:८:४८ ।

पाद टिप्पणी :

२. (१) धान्य : १८ प्रकार के अन्न जो दान कर्म के काम में आते हैं । मत्स्य—२७६:७, २७७:११ । गण० ३:२१८ ।

(२) अंश : मान एवं अंश में अन्तर है, मान काल का हिस्सा माना जाता है ।

(३) तृतीयं चतुर्थं : आपद काल या कोश के खाली हो जाने पर राजा उन क्षेत्रों से तृतीयांश चतुर्थांश क्षेत्र की उपज के अनुसार अन्न लेकर कोश को भरे ।

(४) सारं : भूमि का गुण या लक्षण या प्रकार तथा उसकी उत्पत्ति । द्र० : १:१६।९, २:५:८, ३:५:६, ४६, ८:१:६१, १०:५:४३, ४६, ४९ ।

पाठ भेद :

'प्रत्यन्त' का देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम् में 'व्यत्यन्तम्' तथा 'अल्पप्रमाणं' का तेलगू प्रतिलिपि में 'अल्पप्राणं' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३. (१) प्रत्यन्त : सीमावर्ती । द्र० १:१७:४३ गण० ३:१६६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धान्य पशुहिरण्यैादिनिविशमानाय दद्यात् ।

४. नवीन निवास करने वाले को धान्य, पशु एवं हिरण्यादि दिया जाय ।

चतुर्थमंशं धान्यानां वीजभक्तशुद्धं च हिरण्येन क्रीणीयात् ।

५. राजा धान्य का चतुर्थ भाग और बीज-भोजन से अवशिष्ट धान्य द्वारा क्रय करे ।

अरण्यजातं श्रोत्रियस्वं च परिहरेत् ।

६. अरण्योत्पन्न और श्रोत्रिय के धान्य को छोड़ दे ।

तदप्यनुग्रहेण क्रीणीयात् ।

७. अनुग्रह पूर्वक उसका भी क्रय करे ।

तस्याकरणे वा समाहर्तृपुरुषा ग्रीष्मेकर्षकाणामुद्वापं कारयेयुः ।

८. अथवा श्रोत्रिय के कृषि न करने पर समाहर्ता पुरुष ग्रीष्म में कृषकों से उसकी जुताई बुवाई करायें ।

प्रमादावस्कन्नस्यात्ययं द्विगुणमुदाहरन्तो बीजकाले बीजलेख्यं कुर्युः ।

९. प्रमाद करने से विनष्ट का दूना दण्ड लिखकर, बीज काल में बीज सम्बन्धी लेख करें ।

पाद टिप्पणी :

४. (१) हिरण्य : नकद रुपया आदि ।

पाद टिप्पणी :

५. (१) भक्त : भोजन, भत्ता ।

पादटिप्पणी :

६. (१) अरण्यजात : अरण्य में स्वयं उत्पन्न, जैसे 'तिन्नी का चावल आदि' वन की उत्पत्ति ।

पाठ भेद :

'तस्याकरणे' का पाठ भेद त्रिवेन्द्रम् में 'तस्याः कारणे' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) तस्य अकरण : उसके कृषि कर्म न करने पर ।

(२) समाहर्तृ : गोप तथा स्थानिक । द्र० २:३५:१:६ । गण० १:१३६ ।

(३) पुरुष : कर्मचारी ।

(४) उद्वापम् : बोने के लिए खेत तैयार करना ।

पाठभेद :

'प्रमादा' का पाठभेद त्रिवेन्द्रम तथा तेलगू प्रतिलिपि में 'प्रमदा' 'वस्कन्नस्य' का पाठभेद देवनागरी तथा तेलगू अनुलिपि में 'पन्नस्य' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

९. (१) बीज : ईश्वर से बीज का उद्गम होता है । क्षेत्रज्ञ बीज कहा जाता है । प्रकृति को योनि कहते हैं । वायु० १०१:१२८ ।

(२) बीजकाले : बीज बोने के समय ।

(३) बीजलेख्य : बीज का लेखा जोखा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निष्पन्ने हरितपक्वादानं वारयेयुः, अन्यत्र शाककटभङ्गमुष्टिभ्यां देवपितृपूजादानार्थं गवार्थं वा ।

१०. फसल तैयार होने पर हरी या पकी फसल ग्रहण करने से उन्हें रोका जाय, देव-पितृ पूजा निमित्त अथवा गो निमित्त शाकमुष्टि और कट मुष्टि न निवारित किया जाय।

भिक्षुकग्रामभृतकार्थं च राशिमूलं परिहरेयुः ।

११. भिक्षुक और ग्रामभृतकों के लिये राशि के नीचे का भाग छोड़ दें।

स्वसस्यापहारिणः प्रतिपातोऽष्टगुणः ।

१२. अपने सस्य का अपहरण करने वाले पर अपहृत का आठ गुना दण्ड लगाया जाय।

परसस्यापहारिणः पञ्चाशद्गुणः सीतात्ययः स्ववर्गस्य, बाह्यस्य तु वधः ।

१३. दूसरे का सस्य अपहृत कर्ता स्व वर्गीय जन पर अपहृत का पचास गुना दण्ड लगाया जाय किन्तु यदि वह बाहरी व्यक्ति हो, तो उसका वध किया जाय।

पाठ भेद :

'वारयेयुः' का पाठभेद देवनागरी ता तेलगू अनुलिपि में 'वरयेयुः' मिलता है।

पादटिप्पणी :

१०. (१) कटभङ्ग : हाथ से फसल काट कर दवांई करना, पुआल। गण २:१९३।

११. (१) ग्रामभृतक : नापित रजक आदि ग्राम या राज्य के कर्मकर। द्र० २:१:११, ३:११: २९, ५:३:३२। गण २:३०५।

(२) राशिमूलं : धान्य, राशि का बचा अन्न। बाइबिल में उल्लेख मिलता है कि जो अन्न खेत में गिर जाता है, उसे मालिक को नहीं लेना चाहिए। वह गरीबों का अंश होता है। यहूदी लोग इस प्रथा का आज भी पालन करते हैं। उत्तर-भारत में जो अन्न की बाली आदि खेतों में लवनी के बाद बच जाती है, उसे गाँव की गरीब प्रजा लेती है। गण० २:१९३।

(३) परिहरेयुः : द्र० २:२४:३०।

पादटिप्पणी :

१२. (१) सस्य : खड़ी फसल।

(२) प्रतिपात : हरजाना। द्र० २:२६:८। गण० २:१९३।

पादटिप्पणी :

१३. (१) सीतात्यय : कृषि जात सम्बन्धी, राजकीय खेती में उत्पादित, कृषि सामान लेने पर, फसल आदि से बेचने वाली हानि। द्र० २:२१:२४, गण० २:१९३।

(२) स्ववर्ग : यदि वह स्वयं कृषि कर्म करने वाला हो।

(३) वाह्य : बाहरी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चतुर्थमंशं धान्यानां षष्ठं वन्यानां तूललाक्षाक्षौमवल्ककार्पासरौमकौशेयकौषधगन्धपुष्पफलशाकपण्यानां काष्ठवेणुमांसवल्लूराणां च गृह्णीयुः, दन्ताजिनस्यार्धम् ।

१४. धान्य का चतुर्थांश तथा वनोत्पन्न तूल, लाक्षा, क्षौम, वल्कल, कार्पास, रौम, कौशेय, औषधि, गन्ध, पुष्प, फल, शाक, काष्ठ, वेणु, मांस एवं वल्लूर का षष्ठांश तथा हाथी दांत और अजिन का आधा भाग कर स्वरूप ग्रहण करें।

तदनिसृष्टं विक्रीणानस्य पूर्वः साहसदण्डः ।

१५. उक्त कर बिना दिये विक्रय करने वाले पर, पूर्व साहस दण्ड लगाया जाय ।

इति कर्षकेषुप्रणयः ।

१६. कृषकों पर प्रणय प्रकरण समाप्त ।

सुवर्णरजतवज्रमणिमुक्ताप्रवालाश्वहस्तिपण्याः पञ्चाशत्कराः ।

१७. सुवर्ण, रजत, वज्र (हीरा), मणि, मुक्ता, प्रवाल, अश्व एवं हाथी के मूल्य का पचासवां भाग कर निर्धारित किया जाय ।

पाठभेद

'कार्पास' का देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम में 'कर्पास' 'कौशेयकौषध' का पाठभेद देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम् में 'कौशेयकौषड्' एवं तेलगू प्रतिलिपि में 'कौशेयकाश' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) **क्षौम** : एक प्रकार का रेशमी वस्त्र या सन जूट आदि से बना वस्त्र । गरुड़ पू० १०६:२१-२३, ब्रह्म १०८:९५ मार्कण्डे० १५:२७-२८ ।

(२) **बल्क** : वृक्षत्वक् ।

(३) **कौशेयक** : रेशम, रेशम से निर्मित । अग्नि० २५७:३६ ।

(४) **गन्ध** : चन्दनादि, सुगन्धित द्रव्य ।

(५) **वल्लूर** : सूखा मांस ।

(६) **दन्त** : हाथी का दांत ।

(७) **अजिन** : चर्म ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) **प्रणय** : कर एवं विष्टी तथा प्रणय में अन्तर है । प्रणय विशेष प्रकार का कर या लेवी है । प्रार्थना, राजा की ओर से करना, या याचना, या मांग या डिमाण्ड ।

पाठ भेद :

'प्रवालाश्वहस्ति' का त्रिवेन्द्रम में 'प्रवालाश्चहस्ति' पाठभेद मिलती है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) **पंचाशत्करा** : पचासपण कर से तात्पर्य है । मनु० ७:१३०

सूत्र १२-२५ तक सुवर्ण, रजत, आदि पर कर तथा नर्तक, गायक, एवं वेश्या पर भी उनकी आय का आधा कर स्वरूप देना पड़ता था । आज भी सिनेमा के टिकटों पर १०० से १६० प्रतिशत कर उत्तर प्रदेश में लगता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूतवस्त्रताम्रवृत्तकंसगन्धभैषज्यशीधुपण्याश्चत्वारिंशत्कराः ।

१८. सूत, वस्त्र, ताम्र, वृत्त, कांसा, गन्ध द्रव्य, भैषज्य एवं शीधु का चालीसवां अंश कर लिया जाय।

धान्यरसलोहपण्याः शकटव्यवहारिणश्च त्रिंशत्कराः ।

१९. धान्य, रस लोह एवं शकट व्यापारी पर, तीसवाँ भाग कर लगाया जाय।

काचव्यवहारिणो महाकारवश्च विंशतिकराः ।

२०. कान्च के व्यापारी एवं महाकारु से बोसवाँ भाग कर ग्रहण किया जाय।

क्षुद्रकारवो बन्धकीपोषकाश्च दशकराः ।

२१. क्षुद्र कारु एवं बन्धकी पोषक से दसवां भाग कर लिया जाय।

काष्ठवेणुपाषाणमृद्भाण्डपक्वान्नहरितपण्याः पञ्चकराः ।

२२. काष्ठ, वेणु, पाषाण, मृद्भाण्ड, पक्वान्न एवं हरे शाकादि पर पाँचवाँ भाग कर ग्रहण ग्रहण किया जाय।

कुशीलवा रूपाजीवाश्च वेतनार्धं दद्युः ।

२३. कुशीलव एवं रूपाजीवा वेतन का आधा कर दें।

पादटिप्पणी :

१८. (१) वृत्त : धातु विशेष ।
(२) शीधु : मदिरा, अंगूरी शराब ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) रस : तरल पदार्थ-तेल घृतादि । गण० ३:१७३, १९८, २२२ ।

(२) शकटव्यवहारिणश्च : गाड़ी पर व्यापार करने वाले ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) कारव : निर्माता, कर्ता या रचयिता, जैसे कुम्भकार, स्वर्णकार आदि ।

पाठभेद :

'बन्धकीपोषकाश्च' का त्रिवेन्द्रम एवं तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'वर्धाकिपोषकाश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) बन्धकीपोषकाः : गणिका पण्य स्त्री रखने वाला, कुलटा स्त्री को घर में रखने वाला । द्र० ५:२:२८, ११:१२, ३४, १२:३३:११, गण० ३:१४८ ।

पाठभेद :

'वेतनार्धं' का तंजौर एवं त्रिवेन्द्रम में 'वेतनम्' तथा तेलगू प्रतिलिपि में 'वेतनार्थं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) कुशीलव : नट, नर्तक आदि, इसमें भांट, नट, गवैया, वादक आदि कर्म करने वाले आते हैं । द्र० १:१२:९, २:१:३४, २:२७:७, गण० १:३८, ५९, ६०, २:३५१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हिरण्यैकरं कर्मण्यानाहारयेयुः, न चैषां कंचिदपराधं परिहरेयुः ।

२४. कर्मरत वणिक् आदि हिरण्य कर प्रदान करें, उनका कोई अपराध उपेक्षित न किया जाय।

तेह्यपरिगृहीतमभिनीय विक्रीणीरन् ।

२५. वे अन्य का पण्य कहकर, विक्रय करते हैं।

इति व्यवहारिषु प्रणयः ।

२६. व्यापारियों पर. प्रणय प्रकरण समाप्त ।

कुक्कुटसूकरमर्धं दद्यात्, क्षुद्रपशवः षड्भागम्, गोमहिषाश्वतरखरोष्ट्राश्च दश भागम् ।

२७. कुक्कुट और शूकर पालक उनके मूल्य का आधा, क्षुद्र पशुओं का पालक षष्ठांश, गो, भैंस, खच्चर, गर्दभ और ऊँट का पालक दसवाँ भाग राजकीय कर दें।

वन्धकीपोषका राजप्रेष्याभिः परमरूपयौवनाभिः कोशं संहरेयुः ।

२८. वन्धकी पोषक राजप्रेष्या रूपयौवन सम्पन्ना वेश्याओं से राजकोश पूर्ण करें।

---

(२) रूपाजीवा : वेश्या, अपने रूप से जीविकार्जन करने वाली । द्र० १:२०:२०, २:४:११ २:२३:२, गण० २:३५५ ।

(३) वेतनार्धं : वेतन का आधा ।

पाठ भेद :

'करंकर्मण्यानां' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू प्रतिलिपि में 'करकर्मण्यान्' तथा त्रिवेन्द्रम् एवं देवनागरी अनुलिपि में 'करमकर्मण्यान्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) हिरण्य : सुवर्णमुद्रा ।

पाठभेद

'अपरिगृहीतम्' का पाठ भेद भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूला में 'अपरगृहीतम्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) प्रणय : याचना या माँग या डिमाण्ड या राजकर । द्र० ५:२:१६, २६, २९, ७:८:४, २३, २४, ९:९।३९ ।

पाठभेद :

'कुक्कुट' का त्रिवेन्द्रम् में 'कक्कट' देवनागरी अनुलिपि में 'कर्कट' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) अर्धं : कुक्कुटादि समूह या संग्रह का आधा ।

सूत्र २७-३९ पशु आदि के साथ राजभवन की सुन्दरी दासियों द्वारा गणिकागार या वार सेवा स्थान, से लिये गये करों से कोश भरा जाय । पशुओं से राज्य को व्यापार तथा कृषि की अपेक्षा बहुत कम आय होती थी ।

(२) क्षुद्रपशु : छागादि, छोटे जानवर ।

पाठभेद :

'पोषका' का पाठभेद देवनागरी अनुलिपि में पोषकाः मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) वन्धकी : कुलटा स्त्री या वेश्या । द्र० ५:२:२१ ।

(२) राजप्रेष्या : राज किंकरी, राजदासी या सेविका ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति [1]योनिपोषकेषु प्रणयः[3]।

२९. योनिपोषकों पर प्रणय, प्रकरण समाप्त।

सकृदेव न द्विः[1]प्रयोज्यः।

३०. एक बार कर ग्रहण किया जाय, दो बार नहीं।

तस्याकरणे[1] वा समाहर्ता कार्यमपदिश्य पौरजानपदान् भिक्षेत।

३१. अथवा उस प्रकार कर ग्रहण न होने पर, समाहर्ता किसी कार्य को ब्याज बनाकर, पौर जनपदों से कर याचना करे।

योगपुरुषाश्चात्र[1] पूर्वमतिमात्रं दद्युः।

३२. योग पुरुष पहले उस विषय में अधिक धन दें।

एतेन प्रदेशेन राजापौरजानपदान् भिक्षेत्।

३३. इस प्रकार राजा पौर जनपदों से धन याचना करे।

कापटिकाश्चैनानल्पं प्रयच्छः कुत्सयेयुः।

३४. कापटिक अल्प धन देने वालों की निन्दा करें।

सारतो वा हिरण्यमाढ्यान् याचेत यथोपकारं[1] वा, स्ववशा वा यदुपहरेयुः।

३५. अथवा सामर्थ्यानुसार धनिकों से धन याचना करे अथवा उपकारानुसार धन माँगे अथवा स्वाधीन धन जो दें, उसे ग्रहण करे।

पादटिप्पणी :

२९. (१) योनि : पुराणों के अनुसार ८४ लाख योनियाँ होती हैं उनका वर्गीकरण, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज, जरायुज किया गया है। जलज—९ लाख, पक्षी १० लाख, स्थावर २० लाख; पशु ३० लाख; कृमि ११ लाख, मनुष्य—४ लाख। गण० ३:२१०।

(२) योनिपोषक : पशु तथा पक्षी आदि के गर्भाधान कराने वाले जिनको कुलधारक भी कहा जाता है। द्र० ५:३:२२।

(३) प्रणय : राज्यार्थ याचना या माँग।

पादटिप्पणी :

३०. (१) द्वि : तात्पर्य है कि दूसरी बार न लिया जाय।

पादटिप्पणी :

३१. (१) तस्याकरणे : द्र० ५:२:८।

पादटिप्पणी :

३२. (१) योगपुरुष : गूढ़ पुरुष या गुप्तचर। द्र० २:२१:२९। गण० ३:२२१।

पादटिप्पणी :

३४. (१) कापटिक : इसका अर्थ छद्म वेषधारी व्यक्ति या छिपा राजपुरुष होता है। द्र० १:१०-११; १:११:१२; ५:१:२४।

पादटिप्पणी :

३५. (१) यथोपकार : किए हुए अनुग्रह के अनुरूप।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थाने[1]च्छत्रवेष्टन[2]विभूषा[3]श्चैषां हिरण्येन प्रयच्छेत् ।

३६. इन्हें धन द्वारा स्थान, छत्र, वेष्टन एवं विभूषा प्रदान करें।

पाषण्ड[1]संघद्रव्यमश्रोत्रियोपभोग्यं देवद्रव्यं[2] वा कृत्यकरा[3]: प्रेतस्य दग्ध-गृहस्य वा हस्ते न्य[4]स्तमित्युपहरेयुः ।

३७. पाखण्ड द्रव्य, संघ द्रव्य, श्रोत्रिय भोग्य के अयोग्य देव द्रव्य, मृतक अथवा दग्ध गृह वाले व्यक्ति के हाथ न्यास का धन कहकर, लाने वालों का धन राजार्पित करें।

देवताध्यक्षो दुर्गराष्ट्रदेवतानां यथा[1]स्वमेकस्थं कोशं कुर्यात्, तथैव चोप-हरेत् ।

३८. देवताध्यक्ष दुर्ग देवता, राष्ट्र देवता का धन एकत्र कर उसे राजा को अर्पित करे।

पादटिप्पणी :

३६. (१) स्थान : अवस्था भार, स्थिति, पद।

(२) वेष्टन : पगड़ी या बाँधने की चीज। भर्तृ०-२:७; त्रि०-७:५।

(३) विभूषा : अलंकार आदि। धन या रुपया लेकर उपाधि से नागरिकों को विभूषित करना आज भी प्रचलित है। ब्रिटेन में कितने लोग धन देकर लार्ड की उपाधि ग्रहण करते हैं। भारत में भी ब्रिटिश शासन काल में धन देकर लोग राज्य उपाधि से विभूषित किये जाते थे।

पाठभेद :

'अश्रोत्रियोपभोग्यं' तेलगू प्रतिलिपि में 'अश्रोत्रियभोग्यं' तथा 'दग्धगृहस्य' का तंजौर में 'दद्धगृहस्य' एवं देवनागरी अनुलिपि में 'दग्धहृदयस्य' पाठ भेद मिलता है।

सूत्र ३७,३८ में संघ की देवोत्तर सम्पत्ति कैसे राज्य को लेनी चाहिए इसका उल्लेख किया गया है। वायु ७:३०, विष्णु० : ३:१८:३२।

पादटिप्पणी :

३७ (१) पाषण्डसंघ : नास्तिकों का समूह या संघ। कलयुग का एक अनीश्वर बादी मत, निर्ग्रन्थ ये लोग नंगे भी रहते थे। ब्रह्मा० ४:३३:६० मत्स्य: १९९:१४:१४४:४०, विष्णु: ३:१८:२२ वायु० ७:३० गण० १:९२।

(२) देवद्रव्य : मन्दिर की सम्पत्ति।

(३) कृत्यकरा : प्रशासक—यह राज्य कर्मचारी थे। वे राज्य से प्रभावित होते थे।

(४) न्यस्त : जमा करना।

पाठभेद :

'चोपहरेत्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चाहरेत्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३८. (१) यथास्वमेकस्थं : दुर्ग देवता की सम्पत्ति एक स्थान पर राष्ट्र देवता की सम्पत्ति दूसरे स्थान पर।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दैवतचैत्यं सिद्धपुण्यस्थानमौपपादिकं वा रात्रावुत्थाप्य यात्रासमाजाभ्यामाजीवेत् ।

३९. अथवा रात्रि में सिद्ध पुण्यस्थान पर, सहसा देवचैत्य उत्पन्न कराकर, यात्रियों और सामाजिकों से धन प्राप्य करे ।

चैत्योपवनवृक्षेण वा देवताभिगमनमनार्तवपुष्पफलयुक्तेन ख्यापयेत् ।

४०. अथवा चैत्य-उपवन, वृक्ष पर बिना ऋतु के पुष्प-फल प्रदर्शित कर, देवता का प्रभाव प्रख्यात करे ।

मनुष्यकरं वा वृक्षे रक्षोभयं प्ररूपयित्वा सिद्धव्यञ्जनाः पौरजानपदानां हिरण्येन प्रतिकुर्युः ।

४१. अथवा सिद्ध व्यञ्जन (गुप्तचर) वृक्ष पर, राक्षस का भय दिखाकर, मनुष्य कर, की याचना कराये तथा पौर जानपदों के धन से उसका प्रतीकार करें ।

सुरुङ्गायुक्ते वा कूपे नागमनियतशिरस्कं हिरण्योपहारेण दर्शयेत् ।

४२. अथवा सुरंगयुक्त कूप में अनियत शिर वाले (तीन या पाँच शिर वाले) नाग को धन प्राप्त कर, दिखाये (और वह धन राजा को दे) ।

पाठभेद

'स्थानमौपपादिकं' का देवनागरी अनुलिपि में 'स्थान भौमवादिकं' पाठभेद मिलता है ।

सूत्र ३९-४५ में जनता की श्रद्धाभक्ति की भावना का आश्रय लेकर, किस प्रकार राज्य को धन अर्जन करना चाहिए यह उल्लेख किया गया है ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) औपपादिक : अचानक उत्पन्न या उठा हुआ । गण० १:४८ ।

(२) यात्रा : उत्सवादि । द्र० १:१६:१९,

(३) समाज : मन्दिरस्थ देवताओं के लिए किया गया मेला या पर्व, सभा, उत्सव आदि । द्र० १:२१:२८ गण० ३:१०५ ।

पाददिप्पणी :

४१. (१) मनुष्यकरं : व्यक्ति का प्रतिदिन दिया जाने वाला कर । मनुष्य की सृष्टि राजस् तत्त्व से हुई है । विष्णु १३६:५७

पाठभेद :

'हिरण्योपहारेण' का तंजौर एवं तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'हिरण्योपहारणे' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) सुरुङ्गा : सुरंग, जमीन के अन्दर छिपा हुआ रास्ता या भूमिगत मार्ग । एक मत है कि सुरुङ्ग शब्द यूनानी है । इसका सर्व प्रथम प्रयोग यूनानी लेखक पोलिवीयस ने १८० बी० सी० में किया है किन्तु कौटिल्य का काल पोलिवीयस से लगभग एक शत वर्ष प्राचीन है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नागप्रतिमायामन्तश्छन्नायां चैत्यच्छिद्रे वल्मीकच्छिद्रे वा सर्पदर्शनमाहारेण प्रतिबद्धसंज्ञं कृत्वा श्रद्दधानानां दर्शयेत् ।

४३. अन्तःछन्न नाग प्रतिमा में, चैत्य छिद्र अथवा वल्मीक छिद्र में भोजन द्वारा निरुद्ध गति वाले साँप को श्रद्धालुजनों को दिखाये ।

अश्रद्दधानानामाचमनप्रोक्षणेषु रसमुपचार्य देवताभिशापं ब्रूयात्, 'अभित्यक्तं वा दंशयित्वा' ।

४४. अश्रद्धालुजनों के आचमन, प्रोक्षण में विष मिश्रण करके, देवता शाप का प्रभाव कहे अथवा बध योग्य व्यक्ति को दंशित कराकर, प्रभाव दिखाये ।

योगदर्शनप्रतीकारेण वा कोशाभिसंहरणं कुर्यात् ।

४५. अथवा योगदर्शन प्रतीकार द्वारा कोश वर्धन करे ।

वैदेहकव्यञ्जनो वा प्रभूतपण्यान्तेवासी व्यवहरेत् ।

४६. अथवा वैदेहक व्यञ्जन (गुप्तचर) प्रचुर पण्य एवं सहायकों के साथ व्यापार करे ।

पाठ भेद :

'अन्तश्छन्नायां' का पाठभेद तेलगू प्रतिलिपि में 'अन्तश्छिद्रायां' तथा 'दर्शनमाहारेण' का भाषा व्याख्यान में 'भाषा आहारेण' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) नागप्रतिमा : नाग पंचमी के दिन नाग की प्रतिमा की पूजा होती है ।

(२) वल्मीक : दीमक, विमौटा या विल ।

(३) सर्प दर्शन : साँप दिखाना ।

(४) आहारेण : भोजन से ।

(५) प्रतिबद्ध : पकड़ना रोकना ।

पाठ भेद :

'उपचार्य' का तंजोर में 'अपचाय्य' देवनागरी अनुलिपि में 'अवचाय्य' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उपचाय्य' तथा भाषा व्याख्यान एवं श्री मूल में 'अवपाय्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी

४४. (१) आचमन : पूजा के १६ उपचारों में एक उपचार है । दाहिने हाथ में थोड़ा जल लेकर मन्मोच्चारण के पश्चात् जल पीया जाता है । याज्ञ० १:२४२

(२) प्रोक्षण : पानी छिड़कना । याज्ञ० १:१८४ वायु० ७९:४०, ४७ मनु० ५:१८ ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) योगदर्शन : अलौकिक या दुर्बोध या प्रच्छन्न प्रदर्शन । सूत्र की पुनरावृत्ति १३:२:३८ में की गई है ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) अन्तेवासी : सहायक, सहकर्मी । द्र० १:११:५, १५; १:१२:११; याज्ञ० १:१८४ अग्नि० २५७:३३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स यदा पण्यमूल्ये[1] निक्षेप[2]प्रयोगैरुपचितः स्यात्तदैनं रात्रौ मोषयेत्[3] ।

४७. जब वह निक्षेप धन से प्रचुर पण्य मूल्य वाला हो जाय, उसी समय रात्रि में उसकी चोरी करा दे ।

एतेन रूपदर्शकः[1] सुवर्णकारश्च व्याख्यातौ ।

४८. इस प्रकार रूपदर्शक और सुवर्णकार की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

वैदेहकव्यञ्जनो वा प्रख्यातव्यवहारः प्रहवणनिमित्तं याचितकमवक्रीतकं वा रूप्यसुवर्णभाण्डमनेकं गृह्णीयात् ।

४९. अथवा वैदेहक व्यंञ्जन गुप्तचर अपना व्यवहार प्रसिद्ध कर, उत्सव निमित्त याचितक अथवा अवक्रीतक प्रचुर रूप्य-सुवर्ण भाण्ड संगृहीत करे ।

समाजे वा सर्वपण्यसंदोहेन प्रभूतं हिरण्यसुवर्णमृणं गृह्णीयात्, प्रतिभाण्ड[2]मूल्यं च ।

५०. अथवा समाज में समस्त पण्य प्रदर्शित कर, ऋण रूप में प्रचुर हिरण्य सुवर्ण तथा देय वस्तु का मूल्य प्राप्त करे ।

तदुभयं रात्रौ मोषयेत् ।

५१. दोनों की रात्रि में चोरी करा दे ।

[1]साध्वीव्यञ्जनाभिः स्त्रीभिर्दूष्यानुन्मादयित्वा तासामेव वेश्मस्वभिगृह्य सर्वस्वान्यहारेयुः ।

५२. साध्वी वेषवाली स्त्रियों से दूष्यों को उन्मादयुक्त कर, उन्हीं स्त्रियों के घर में उन्हें पकड़ कर, (उनका) सर्वस्व ग्रहण किया जाय ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) पण्यमूले : न्यास या कर्ज के जमानत में रखना ।

(२) पण्य : प्राचीन कालीन एक ताम्र मुद्रा । मत्स्य० २२७:१४ ।

(३) मोषयेत् : चुरा लेना ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) रूपदर्शकः : मुद्रापरीक्षक । द्र० २:५:१०, २:१२:२०५, २:९:२८, ४:१:४४, गण० १:१३४, १६४, २०६ ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) याचितक : किराया या उधार पर लेना ।

पादटिप्पणी :

५०. (१) सर्वपण्यसंदोहेन : समस्त पण्य का प्रदर्शित था ।

(२) प्रतिभाण्डमूल्यं : प्रति वस्तु की कीमत ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) उभय : दोनों, ऋण तथा मूल्य ।

पाठ भेद :

'उज्मादयित्वा' का तेलगू अनुलिपि में 'उन्मन्दयित्वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

सूत्र ५२-६९ में द्रोह सम्बन्धी अपराध तथा उनके दण्ड के विषय में वर्णन किया गया है ।

५२. (१) साध्वी : विदुषी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्यकुल्यानां वा विवादे प्रत्युत्पन्ने रसदाः प्रणिहिता रसं दद्युः ।

५३. अथवा दुष्कुल्यों का विवाद उपस्थित होने पर, नियुक्त विषप्रद विष प्रदान करें।

तेन दोषेणेतरे पर्यादातव्याः ।

५४. उस दोष के आधार पर अन्यों का सर्वस्व ग्रहण कर लिया जाय।

दूष्यमभित्यक्तो वा श्रद्धेयापदेशं पण्यं हिरण्यनिक्षेपमृणप्रयोगं दायं वा याचेत ।

५५. अथवा अभिव्यक्त जन दूष्य व्यक्ति से विश्वास योग्य पण्य, हिरण्य निक्षेप, ऋण या दाय की याचना करे।

दासशब्देन वा दूष्यमालम्बेत, भार्यामस्य स्नुषां दुहितरं वा दासीशब्देन भार्याशब्देन वा ।

५६. अथवा दूष्य को दास कहे या उसकी भार्या, पुत्रवधू अथवा पुत्री को दासी या भार्या कह कर, अपमानित करे।

तं दूष्यगृहप्रतिद्वारि रात्रावुपशयानमन्यत्र वा वसन्तं तीक्ष्णो हत्वा ब्रूयात् 'हतोऽयमर्थकामुकः' इति ।

५७. दूष्य के द्वार पर, सोये अथवा अन्यत्र रहते हुए, उसका वध कर तीक्ष्ण कहे—'यह अथ कामी मारा गया'।

तेन दोषेणेतरे पर्यादातव्या ।

५८. उस दोष के आधार पर, अन्य दूष्य लोगों का सर्वस्व ग्रहण किया जाय।

पादटिप्पणी :

५३. (१) दूष्यकुल्य : दुष्ट पुरुषों या बुरे, लोगों या कलंकित कुल।

पादटिप्पणी :

५४. (१) पर्यादातव्याः : दूसरे अपनी सम्पत्ति से वंचित किए जायँ।

पादटिप्पणी :

५५. (१) अभित्यक्त : वध्य, बध्य की सजा पाया हुआ व्यक्ति। द्र० २:५:४, ५:२; ४४। गण० ३:१६८, १६९, १९३।

पाठ भेद :

'अयमर्थकामुकः' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'यमित्थं कामुकः' पाठभेद मिलता है।।

पादटिप्पणी :

५७. (१) अर्थकामुकः : सम्पत्ति का लोभ या कामना करने वाला। द्र० ५:१:१०।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिद्धव्यञ्जनो वा दूष्यं जम्भकविद्याभिः प्रलोभयित्वा ब्रूयात् 'अक्षय[1]-हिरण्यं राजद्वारिकं स्त्रीहृदयमरिव्याधिकरमायुष्य[2]ं पुत्रीय[3]ं वा कर्म जानामि' इति ।

५९. अथवा सिद्ध वेशधारी गुप्तचर जम्भक विद्याओं से लुभाकर, दूष्य से कहे—'अक्षयहिरण्य करने वाला, राजद्वारिक (राजा को वश में करना या उसका द्वार खोलना), स्त्री हृदय को आकृष्ट करने वाला, शत्रु को व्याधि करने वाला, आयुवर्धक अथवा पुत्रोत्पादक कर्म जानता हूँ ।'

प्रतिपन्नं चैत्यस्थाने रात्रौ प्रभूतसुरामांसगन्धमुपहारं कारयेत् ।

६०. विश्वस्त उस दूष्य द्वारा रात्रि में चैत्य स्थान पर, प्रचुर सुरा, मांस, गन्ध का उपहार आदि करावे ।

एकरूपं[1] चात्र हिरण्यं पूर्वनिखातं प्रेताङ्गं[2] प्रेतशिशुर्वा[3] यत्र निहितः स्यात् ततो हिरण्यमस्य दर्शयेद् 'अत्यल्पम्' इति च ब्रूयात् ।

६१. जहाँ प्रेताङ्ग या शिशु गड़ा हो वहाँ से पहले रखा हुआ एक हिरण्य उसे निकालकर दिखाये और कहे 'यह अत्यल्प है' ।

'प्रभूतहिरण्यहेतोः पुनरुपहारः कर्तव्य इति स्वयमेवैतेन हिरण्येन श्वोभूते प्रभूतमौपहारिकं क्रीणीहि' इति ।

६२. 'प्रचुर हिरण्य के लिये पुनः उपहार अर्पित करो, स्वयं इस हिरण्य से कल प्रचुर उपहार खरीदो ।'

स तेन हिरण्येनोपहारिकक्रये गृह्येत[1] ।

६३. वह उपहार क्रय काल में उस हिरण्य के साथ पकड़ा जाय ।

पाठभेद :

'अक्षयहिरण्यं' का पाठभेद तेलगू अनुलिपि में 'अक्षयं हिरण्यं' तथा 'पुत्रीयं' का देव नागरी अनुलिपि में 'पुत्री' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी

५९. (१) अक्षयहिरण्यं : प्रचुर धन ।

(२) आयुष्य : लम्बा जीवन ।

(३) पुत्रियं : पुत्र उत्पन्न करना ।

पाठभेद :

'पूर्वनिखातं' का पाठभेद तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पूर्वे निखातं' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

६१. (१) एकरूपं : नकद एक रुपया, एक मुद्रा ।

(२) प्रेताङ्ग : शव का एक अंग ।

(३) प्रेतशिशु : मृतशिशु ।

पाठ भेद

'औपहारिकं' का पाठभेद तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'औपचारिकं' मिलता है ।

पाठ भेद :

'स' तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में लुप्त है ।

पादटिप्पणी :

६३. (१) गृह्येत : गिरफ्तार करना, अपहरण करना । द्र० ४:४:१४-१६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मातृव्यञ्जनया[1] वा 'पुत्रो मे त्वया हतः' इत्यवरूपितः स्यात् ।

६४. अथवा मातृवेश धारिणी गुप्तचरस्त्री यह आरोप लगाये—'तुमने मेरे पुत्र की हत्या की है।'

संसिद्धमेवास्य[1] रात्रियागे[2] वनयागे[3] वनक्रीडायां वा प्रवृत्तायां तीक्ष्णाविशस्याभित्यक्तमतिनयेयुः[4] ।

६५. उसके रात्रि याग, वन याग अथवा वन क्रीडा प्रारम्भ होने पर, तीक्ष्ण पुरुष वध्य का वधकर वहाँ रख दें।

दूष्यस्य[1] वा भृतकव्यञ्जनो वेतनहिरण्ये कूटरूपं[2] प्रक्षिप्य प्ररूपयेत ।

६६. अथवा दूष्य का मृतक वेशी गुप्तचर, वेतन हिरण्य में कूटरूप रखकर, उस पर आरोप लगाये।

कर्मकरव्यञ्जनो वा गृहे कर्म कुर्वाणः स्तेनकूटरूपकारकोपकरणमुपनिदध्यात्, चिकित्सकव्यञ्जनो वा गरमगदापदेशेन[1] ।

६७. अथवा उसका काम करने वाला सेवक वेशी गुप्तचर उसके घर में चोरी करने या कूट मुद्रा बताने की सामग्री रख दे अथवा चिकित्सक वेशी गुप्तचर रोग नाशक औषधि के ब्याज से विष रख दे।

पाठभेद :

'व्यञ्जनया' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्यञ्जनाया' 'अवरूपितः' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अवरूपिता' तथा देव नागरी में 'अवकुपिता' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६४. (१) मातृव्यञ्जनया : माता के वेष में गुप्तचरी।

पाठभेद :

'रात्रियागे' का तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'रात्रियोगे' एवं 'प्रवृत्तायां' का तेलगू अनुप्रतिलिपि तथा त्रिवेन्द्रम में 'प्रवृत्तायास्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६५. (१) संसिद्ध : काम करने के लिए तत्पर।

(२) याग : यज्ञ, हवन।

(३) वनयाग : वन में किया जाने वाला हवन या यज्ञ।

(४) अतिनयेयु : : छुप कर शव को यज्ञ में प्रस्तुत करें।

पादटिप्पणी :

६६. (१) दूष्य : राजद्रोही विश्वासघाती। द्र० १:११:१७, ३:१:२४, ३७। गण० ३:१५०, १७०।

(२) कूटरूपं : जाली मुद्रा या सिक्का।

पाठभेद :

'गरमगदा' का पाठभेद तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'गदमगदा' तथा भाषा व्याख्यान एवं श्रीमूल में 'गरमगरा' मिलता है।

पाद टिप्पणी :

६७. (१) गरमगदापदेशेन : रोगनाशक औषधि के बहाने विष देना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रत्यासन्नो[1] वा दूष्यस्य सत्त्री प्रणिहितमभिषेकभाण्डममित्रशासनं च कापटिकमुखेनाचक्षीत, कारणं च ब्रूयात् ।

६८. अथवा दूष्य का निकटवर्ती सत्त्री गुप्तचर उसको अभिषेक सामग्री और शत्रु लेख को कापटिक द्वारा सूचित करे और उसका कारण भी कह दे ।

एवं दूष्येष्वधार्मिकेषु च वर्तेत, नेतरेषु ।

६९. राजा उस प्रकार का आचरण दूष्यों एवं अधार्मिकों के प्रति करे, अन्य लोगों के प्रति नहीं ।

पक्वं पक्वमिवारामात्फलं राज्यादवाप्नुयात् ।
आत्मच्छेदभयारामं वर्जयेत्कोपकारकम् ॥

७०. राजा उद्यान से परिपक्व फल के समान राज्य से (अधार्मिक का) धन प्राप्त करे, अपने विनाश के भय से कोपकारी अपक्व फल सदृश धार्मिक का धन न ले ।

इति योगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे कोशाभिसंहरणं द्वितीयोऽध्यायः । आदितो द्विनवतितमः ।

पंचम अधिकरण योगवृत्त में कोशाभिसंहरण नामक द्वितीय अध्याय समाप्त । आदि से बान्बे अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

६८. (१) सत्त्री : गुप्तचर विशेष । द्र० १:१०:३, ५, २०, १:११:१, १८, ९:३:२६ ।

(२) अभिषेकभाण्ड : अभिषेक सामग्री या वस्तु या वर्तन । द्र० २:३:३३, २:५:३ । याज्ञ० २:११० । अग्नि० २५५:४७, २६९:३८ ।

पाठभेद :

'आत्मच्छेद' का पाठभेद तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आमच्छेद' मिलता है ।

पाद टिप्पणी

७०. (१) आत्मच्छेद : अपना नाश ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः कोशाभिसंहरणम्, आदितो द्विनवतितमः ॥

मैसूर संस्करण में—इतियोगवृत्ते काशाभिसंहरणं द्वितीयोऽध्यायः आदितो द्विनवतिः ।

वसाक संस्कर० में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः कोशाभिसंहरणं, आदितो द्विनवतितमः ।

उदयवीर शास्त्री में—इति योगवृत्ते पंचमेऽधिकरणे कोशाभिसंहरणं द्वितीयोऽध्यायः ।।२।। आदितो द्विनवतिः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ३

(एकनवतितमं प्रकरणम्—भृत्यभरणीयम्)

एकनवतितमप्रकरण–भृत्यभरणीय

दुर्गजनपदशक्त्या भृत्यकर्म समुदयपादेन स्थापयेत्, कार्यसाधनसहेन वा भृत्यलाभेन।

१. दुर्ग शक्ति—जनपदशक्ति के आधार पर, आय के चतुर्थांश धन से अथवा कार्य साधन में समर्थ भृत्य प्राप्ति के अनुरूप, धन व्यय से भृत्यकर्म स्थापित करे।

शरीरमवेक्षेत, न धर्मार्थौ पीडयेत्।

२. शरीर पर ध्यान रखे, धर्म-अर्थ को पीड़ित न करे।

ऋत्विगाचार्यमन्त्रिपुरोहितसेनापति युवराजराजमातृराजमहिष्योऽष्टचत्वारिंशत्साहस्राः।

३. ऋत्विक्, आचार्य, मन्त्री, पुरोहित, सेनापति, युवराज, राजमाता, राजरानी को अड़तालीस सहस्र पण दिया जाय।

एतावता भरणेनानास्पद्यत्वमकोपकं चैषां भवति।

४. इतने द्रव्य से भरण करने पर, इनके अनास्पद्यत्व एवं अकोप की स्थिति बनी रहेगी।

पाठभेद :

'समुदायपादेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'समुदायवादेन' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

१. (१) समुदयपादेन : एक चौथाई भाग राजस्व का। द्र० २:३:३, २:६:२८, २:७:१३।

(२) भृत्यलाभ : नौकर के द्वारा प्राप्त धन। द्र० २:६:२३।

पाद टिप्पणी

२. (१) शरीरम् : आय स्रोत, आमदनी का जरिया। भौतिक लाभ। द्र० २:६:१-९।

(२) धर्मार्थौ : धार्मिक गुणों या अर्थों।

पादटिप्पणी :

३. (१) अष्टचत्वारिंशत्साहस्राः : चार हजार आठ सौ ४८०० पण। वार्षिक वेतन दिया जाय।

पाठभेद :

'स्पद्यत्वमकोपकं' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वद्यत्वकोपकं' देवनागरी अनुलिपि में 'स्वपद्यत्वं कोपकं' भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'स्वाद्यत्वमकोपकं' मिलता है।

पादटिप्पणी :

४. (१) अनास्पद्यत्व : अविकारी, भावोपेक्षक, अगमनीय।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दौवारिकान्तर्वंशिकप्रशास्तृसमाहर्तृसंनिधातारश्चतुर्विंशतिसाहस्राः ।

५. दौवारिक, आन्तर्वंशिक, प्रशास्ता, समाहर्ता, और सन्निधाता को चौबीस सहस्र पण दिया जाय ।

एतावता कर्मण्या भवन्ति ।

६. इतने द्रव्य से वे कर्मशील होते हैं ।

कुमारकुमारमातृनायकपौरव्यावहारिककार्मान्तिकमन्त्रिपरिषद्राष्ट्रान्तपालाश्च द्वादशसाहस्राः ।

७. कुमार, कुमारमाता, नायक, पौरव्यावहारिक, कार्मान्तिक, मन्त्रिपरिषद्, राष्ट्रपाल एवं अन्तपाल को बारहसहस्र पण दिया जाय ।

पादटिप्पणी :

५. (१) दौवारिक : द्वारपाल, द्वार रक्षक । द्र० १:१२.६, ५:३:५, ५:६:५ ।

(२) आन्तर्वंशिक : अन्तःपुर का रक्षक । द्र० १:१२।६, १:२१:१२, ५:३:५, ५:६:५ ।

(३) प्रशास्तृ : समाहर्ता तथा सन्निधाता से ऊँचा अधिकारी था । द्र० १:१२:६ । गण० १:५७. ३:१०५ ।

(४) समाहर्तृ : राजा के लिए धन जुटाने वाला । द्र० २:६:१ ३:३५:१ । गण० १:५० ।

(५) संनिधाता : भण्डार का निर्देशक । द्र० २:५:१, २१ । उक्त अधिकार का उल्लेख १:१३:६ में किया गया है ।

पाठ भेद :

'नायकपौर' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नायकापौर' तथा 'न्तपालाश्च' का देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिदि में 'न्तपालान्तपालाश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) कुमार : युवराज, राजपुत्र ।

(२) कुमारमातृ : महादेवी, पटरानी के अतिरिक्त रानियाँ ।

(३) नायक : सेनानायक । द्र० १०:१:१९ १०:२:४, १०:५:२ १०:६:४५ । गज० : १:५७, ३:१०३, १०७, १२७, १४२

(४) पौर व्यावहारिक : नगराधिकारी या पुरवासियों का अध्यक्ष, या जज या मुन्सिफ । गण० १:५७ ।

(५) कार्मान्तिक : कृषि प्रभृतिक कर्मान्त अधिकारी या कारखाने का निरीक्षक । द्र० २:१२:१८, २३, २७, २:१७:१७, २:१९:१, २:२३:१०, गण० १:५७ ।

(६) मन्त्रिपरिषद् : यहीं इसका उल्लेख मिलता है । इसमें १२ सदस्य होते थे । कश्मीर में यह परिषद महाभारत काल से सन् १३३९ ई० तक चलती थी । द्र० १:१५:४७:५५, ५७ ।

(७) राष्ट्रपाल : केवल यहीं उल्लेख मिलता है । सम्पूर्ण पुलिस का मुख्य अधिकारी ।

(८) अन्तपाल : सीमारक्षक । गण० १:५७ ३:३८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वामिपरिबन्धबलसहाया ह्येतावता भवन्ति ।

८. इतने से वे स्वामी के परिबन्धबल बनते हैं और सहायक होते हैं ।

श्रेणीमुख्या हस्त्यश्वरथमुख्याः प्रदेष्टारश्चाष्टसाहस्राः ।

९. श्रेणीप्रमुख, हस्तिप्रमुख, अश्वप्रमुख, रथप्रमुख एवं प्रदेष्टा आठ सहस्र पण प्राप्त करें।

स्ववर्गानुकर्षिणो ह्येतावता भवन्ति ।

१० उतने से वे अपने वर्ग को आकृष्ट करने में सक्षम होते हैं।

पत्त्यश्वरथहस्त्यध्यक्षा द्रव्यहस्तिवनपालाश्च चतुःसाहस्राः ।

११. पत्त्यध्यक्ष, अश्वाध्यक्ष, रथाध्यक्ष, हस्त्यध्यक्ष, द्रव्यवनपाल एवं हस्तिवनपाल चार सहस्र पण प्राप्त करें।

रथिकानीकस्थचिकित्सकाश्वदमकवर्धकयो योनिपोषकाश्च द्विसाहस्राः ।

१२. रथिक, अनीकस्थ, चिकित्सक, अश्वदमक, वर्धकी, योनिपोषक दो सहस्र पण प्राप्त करें।

पादटिप्पणी :

८. (१) परिबन्ध : परिचारकगण, कण्टक शोधन के लिए नियुक्त अधिकारी या दण्डाधिकारी । गण० २:२०३ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) श्रेणीमुख्या : निगम या प्रतिष्ठान के अध्यक्ष या प्रतिपाल या प्रशासक या नियुक्त मुख्य अधिकारी । सजातीय शिल्पियों का निरीक्षक । द्र० २:४:६, ४:१:२:३, ४:४:४७ ।

(२) प्रदेष्टा : मजिस्ट्रेट । कण्टकशोधन के लिए नियुक्त अधिकारी, या दण्डाधिकारी । गण० १:५, २:११६ ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) स्ववर्गानुकर्षिणी : अधीनस्थ लोगों की निष्ठा तथा आज्ञानुसरण प्राप्त करना ।

पाठ भेद :

तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'च' लुप्त है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) पत्ति : पदाति, एक जाति का नाम भी है । या सेना का अधिकारी विशेष । भीष्मपर्व० ९:६७, आदि० २:१९ ।

(२) पत्यश्वर ध्यक्ष : पदाति । निरीक्षक, मालिक, स्वामी, पैदल घोड़े आदि की सेना का स्वामी।

पादटिप्पणी :

१२. (१) रथिका : रथ चर्या शिक्षक । रथ युद्ध करने वाला । द्र० २:३३:६ ।

(२) अनीकस्थ : हस्ति शिक्षा निपुण । द्र० २:१:७, २:३५:६, २:३६:४, १३:२:६, १३, गण० १:११० ।

(३) वर्धक : द्र० १०:१:१, १७ ।

(४) योनिपोषक : कुक्कुट, शूकरादि पालकों का अध्यक्ष, जानवरों को पालने वाला । गाभिन या गर्भाधान कराने वाला । आज भी यह लोग पेशेवर होते हैं । द्र० ५:२:२९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कार्तान्तिकनैमित्तिकमौहूर्तिकपौराणिकसूतमागधाः पुरोहितपुरुषाः सर्वाध्यक्षाश्च साहस्राः ।

१३. कार्तान्तिक, नैमित्तिक, मौहूर्तिक, पौराणिक, सूत, मागध, पुरोहितपुरुष और समस्त अध्यक्ष एकसहस्र पण प्राप्त करें।

शिल्पवन्तः पादाताः संख्यायकलेखकादिवर्गश्च पञ्चशताः ।

१४. शिल्पवन्त, पादात, संख्यायक एवं लेखक वर्ग पाँच सौ पण प्राप्त करें।

कुशीलवास्त्वर्धतृतीयशताः, द्विगुणवेतनाश्चैषां तूर्यकराः ।

१५. कुशीलव दो सौ पचासपण तथा, तूर्यवादक उनका दूना प्राप्त करें।

कारुशिल्पिनो विंशतिशतिकाः ।

१६. कारु एवं शिल्पी एक सौ बीस पण प्राप्त करें।

पादटिप्पणी :

१३. (१) कार्तान्तिक : भाग्य वक्ता, हस्तरेखा विद्। द्र० १:१२:२८। गण० १:३५, ३:११६, १४७।

(२) नैमित्तिक : शकुनविद्याविद्। द्र० १: १३:२३।

(३) मौहूर्तिक : ज्योतिषी त्रिकालवृत्तज्ञ। द्र० १:१९:२३। गण० १।६५, ९२, ३:१०३, १२७ १९०।

(४) पौराणिक : पुराण कथा वाचक, पुराणज्ञ, सूत का नाम, जो पुराण कथा वाचक हो। ब्रह्मांड पु० ३:८०:८३, मत्स्य० ११४:३। ब्रह्म० ३:४०।

(५) सूत : सारथी। गण० ३:११७।

(६) मागध : स्तुतिपाठक। ३:६:१४, भाग० ४:१५:२०-२६।

(७) पुरुष : पुरोहित का भृत्य। गण० ३: ११७।

पाद टिप्पणी :

१४, (१) शिल्पवन्तः : शिल्पी से भिन्न है।

(२) पादाता : शिक्षित पैदल सैनिक।

(३) संख्यायक : मुनीम, हिसाब किताब रखने वाला गुणक। ३:१२:२९। गण० १:११०

पादटिप्पणी :

१५. (१) कुशीलव : नट, नर्तकी, अभिनय कर्ता। द्र० १:१२:९, २:१:३४, ३:१३:३०, ४: १:५८, ४:४:३।

(२) अर्ध तृतीय शता : इसका साढ़े तीन सौ भी अर्थ किया गया है।

(३) तूर्यकरा : तूर्य बजाने वाला, प्रधानवादक।

पाद टिप्पणी :

१६. (१) कारुशिल्पी : कारीगर, चित्रकारी करने वाला। द्र० ३:१३:३०।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चतुष्पदद्विपदपरिचारकपारिकर्मिकौपस्थायिकपालकविष्टिबन्धकाः षष्टिवेतनाः, आर्ययुक्तारोहकमाणवकशैलखनकाः सर्वोपस्थायिनश्च ।

१७. चतुष्पद परिचारक, द्विपद परिचारक, उनका प्रधान, औपस्थायिक, पालक, विष्टिबन्धक तथा आर्यप्रसव, आरोहक, माणवक, शैलखनक एवं समस्त औपस्थायी साठपण प्राप्त करें।

आचार्या विद्यावन्तश्च पूजावेतनानि यथार्हं लभेन् पञ्चशतावरं सहस्रपरम् ।

१८. आचार्य एवं विद्यावन्त (विद्वान्) योग्यतानुसार पाँच सौ पण से एक सहस्र पण तक पूजावेतना प्राप्त करें।

दशपणिको योजनेदूतो मध्यमः, दशोत्तरे द्विगुणवेतन आ योजनशतादिति।

१९. मध्यम दूत एक योजन से दश योजन तक गमन करने पर, प्रतियोजन दश पण तथा दश योजन से अधिक सौ योजन तक गमन करने पर, प्रतियोजन बीस पण वेतन प्राप्त करे।

समानविद्येभ्यस्त्रिगुणवेतनो राजा राजसूयादिषु क्रतुषु ।

२० राजा राजसूयादि यज्ञों के अवसर पर, समान विद्यावालों को तीनगुना वेतन दे।

पाठ भेद :

'कौपस्थायिक' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कोपस्थायिक' तथा 'आर्ययुक्ता' का 'कार्ययुक्ता' पाठभेद मिलता है। तथा 'च' अन्त में नहीं है।

पादटिप्पणी :

१७. (१) चतुष्पद : गाय, भैंस आदि जानवर ९:६:३ ।

(२) द्विपद : मनुष्य पक्षी :

(३) पारिकर्मिक : रक्षक। द्र० २:२:१०, गण० १:११७ ।

(४) औपस्थायिक : कर्मचारी या उपचारक।

(५) पालक : चौकीदार रक्षक।

(६) विष्टिबन्धक : मजदूरों को जुटाने वाले, कर्मकर संग्रहकारी।

(७) आर्य युक्तारोहक : दुर्दान्त अश्वादि आरोहक, लड़ैत, घोड़ों आदि पर, सवारी करने वाला।

(८) आरोहक : चढ़ने वाले, सवारी पर बैठने वाले, राज कर्मचारी।

(९) माणवक : दुष्ट युवक अपराधी, डकैत। द्र० ४:५:१, गण० १:१८१ ।

(१०) शैलखनक : पत्थर तोड़ने वाले। प्रस्तर शिल्पी।

पादटिप्पणी :

१९. (१) दशपणिको : सन्देश वाहक।

(२) दूत : धावक।

(३) मध्यम : औसत, मध्यमान।

(४) योजन : आठ मील या चार कोस का एक योजन होता है।

पादटिप्पणी :

२०. (१) राजा : अध्वर्यु। आप० २०:२:१२:३ बौधा० १५:४

(२) राजसूय : राजसूय यज्ञ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राज्ञः सारथि[१]ः साहस्रः ।

२१. (उक्त अवसर पर) राजा का सारथि एक सहस्र पण प्राप्त करे ।

काप[१]टिकोदास्थि[२]तगृह[३]पतिकवैदे[४]हकताप[५]सव्यञ्जनाः साहस्राः ।

२२. कापटिक, उदास्थित, गृहपतिक, वैदेहक, तापस वेष वाले गुप्तचरों को एक सहस्र पण दिये जांय ।

ग्रामभृत[१]कसत्त्रितीक्ष्णरसदभिक्षुक्य[२]ः पञ्चशताः ।

२३. ग्रामभृतक, सत्त्री, तीक्ष्ण, रसद, भिक्षुकी वेषधारी गुप्तचरों को पाँच सौ पण दिये जांय ।

चार[१] संचा[२]रिणोऽर्धतृतीयशताः, प्रयासवृद्धवेतना वा ।

२४. चार एवं संचारी गुप्तचरों को दो सौ पचास पण अथवा प्रयासानुरुप अधिक वेतन दिया जाय ।

शतवर्ग सहस्रवर्गाणामध्यक्षा भक्तवेतनलाभमादेशं विक्षेप[१] च कुर्युः ।

२५. शतवर्ग अथवा सहस्र वर्गों के अध्यक्ष उन्हें भत्ता एवं वेतन दें तथा आदेश एवं विक्षेप से क्रियान्वित करें ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) सारथि : रथवाहक, राजा को यज्ञ स्थान तक ले जानेवाला सारथी ।

पाद टिप्पणी :

२२. (१) कापटिक : द्र० १:१०:११, १:१०: १:२ । ५:१.१४, १:१७:३७, गण० १:५२ ।

(२) उदस्थित : द्र० १:११:१, ४, १:१३:३२ गण० १:५२ ।

(३) गृहपतिक व्यंजन : गृहपति बना जासूस । गण० १:५२

(४) वैदेहक व्यंजन : वणिक वेषधारी गुप्तचर द्र० १:१६:२५, गण० १:५३:५३, ३:१८७

(५) तापसव्यञ्जन : तपस्वी वेषधारी गुप्तचर द्र० १:११:२, १:१६:२०, गण० १:५२

पादटिप्पणी :

२३. (१) ग्रामभृत : धोबी, नापित, बढ़ई, लोहार या गांव का सरकारी नौकर, गांव की परजा । द्र० २:१:११, ३:११:२९, ५:३:११, गण० २:२०५

(२) भिक्षुक : परिव्राजक आदि । साधू के रूप में काम करने वाला गुप्तचर ।

पाठभेद :

'संचारिणोऽर्धतृतीय' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'संचारिणस्तृतीय' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) चार : गुप्तचर । मनु० ७:१८४, ९:२६१

(२) संचारिण : गुप्तचर विभाग का निम्नस्तरीय कर्मचारी भ्रमणशील, पर्यटक ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) विक्षेप : विकिरण, नौकरी समाप्ति से अर्थ है । सेवा निवृत्ति, हस्तान्तरित । द्र० ७:९:२२, २:१५:१०, २:८:२१, २:१६:१, २:६:२१, ३:८:११ गण० १:१५५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अविक्षेपो[1] राजपरिग्रहदुर्गराष्ट्ररक्षावेक्षणेषु[3] च ।

२६. राजपरिग्रह, दुर्गरक्षा, राष्ट्ररक्षा एवं अवेक्षण के विषय में विक्षेप (सेवानिवृत्ति) न हो ।

नित्य[1]मुख्याः स्युरनेकमुख्या[2]श्च ।

२७. प्रधान स्थायी एवं इस प्रकार के अनेक मुख्य हो ।

कर्मसु[1] मृतानां पुत्रदारा भक्तवेतनं लभेरन् ।

२८. कर्मों में मृतकर्मचारियों के स्त्री, पुत्र भत्ता वेतन प्राप्त करें ।

बालवृद्धव्याधिताश्चैषामनुग्राह्याः ।

२९ इनके बालक, वृद्ध व्याधित को अनुगृहीत किया जाय ।

प्रेत[1]व्याधिसूतिकाकृत्येषु चैषामर्थमानकर्म कुर्यात् ।

३०. उनके मृत्यु, व्याधि, सूतिका कार्यों के अवसरों पर अर्थदान एवं सम्मान कर्म किया जाय ।

अल्प[1]कोशः कुप्य[2]पशुक्षेत्राणि दद्यात्, अल्पं च हिरण्यम् ।

३१. राजा कोश अल्प होने पर कुप्य, पशु, क्षेत्र प्रदान करे, हिरण्य अल्पमात्रा में दे ।

शून्यं वानिवेशयितुमभ्युत्थितो हिरण्यमेव दद्यात्, न ग्रामं ग्रामसंजात[2]-व्यवहारस्थापनार्थम् ।

३२. अथवा शून्य स्थान को निवासानुरूप करने के लिये उद्यत राजा हिरण्य ही दे, ग्राम संजात व्यवस्था स्थापित करने के लिये ग्राम न दे ।

पाठभेद :

'अविक्षेपो' का भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'अविक्षेपे' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) अविक्षेप : काम ठीक न होनेपर ।

(२) राजपरिग्रह : राजकीय सम्पत्ति, राजमहल।

(३) अवेक्षण : निरीक्षण, देखभाल ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) नित्य : चिरस्थायी । द्र० ५:३:२७,

(२) अनेकमुख्य : अनेक प्रमुख । द्र० २:४:२९:३०

पाद टिप्पणी :

२८. (१) कर्मसुभृतानां : राज्य कर्मचारियों के काम करते हुए मर जाने पर ।

पाद टिप्पणी :

३०. (१) प्रेत : पुराणों के अनुसार मृत्यु के बाद प्राप्त होनेवाला शरीर । द्र० २:१३:८

(२) अर्थमान कर्म : सहायतादि देना ।

पाद टिप्पणी :

३१. (१) अल्प : थोड़ा ।

(२) कुप्य : वनसम्पदा स्वर्ण एवं रजत के अतिरिक्त धातु । द्र० १:१६:२९, २:१७:२१, अग्नि० : १६८:३६, भवि० : ४:५:३३, शिव : ५:६:५, गण० : १:७, ३२, २१६, ३:१३७

पाठ भेद :

'ग्रामसंजात' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ग्रामसजात' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३२. (१) ग्राम : वेतन के एवज में भूमि देने का विधान है परन्तु पूरा ग्राम एक अधिकारी को देना उचित नहीं माना गया है ।

(२) ग्राम संजात : ग्राम की प्राचीन व्यवस्था को नवीन से व्यवधान न पहुँचे ऐसा प्रतीत होता है । सजात का अर्थ उत्पत्ति भी होता है । द्र० २:२९:१, २:३५:८, २:१६:१४, २७, २:७:२, ४:२:२३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एतेन भृतानामभृतानां च विद्याकर्मभ्यां भक्तवेतनविशेषं च कुर्यात् ।

३३. इस प्रकार स्थायी और अस्थायी कर्मचारियों के विद्या एवं कर्म के अनुसार उन्हें विशेष भत्ता एवं वेतन दिया जाय।

षष्टिवेतनस्याढकं कृत्वा हिरण्यानुरूपं भक्तं कुर्यात् ।

३४. साठ पण वेतन पर, एक आढक अन्न देने का नियम निश्चित कर, हिरण्य के अनुसार भत्ता दिया जाय।

पत्त्यश्वरथद्विपाः सूर्योदये बहिः संधिदिवसवर्जं शिल्पयोग्याः कुर्युः ।

३५. सन्धि दिवस को छोड़कर अन्य दिनों में सूर्योदय होने पर, पत्ति, अश्व, रथ एवं द्विप बाहर जाकर, शिक्षाभ्यास करें।

तेषु राजा नित्ययुक्तः स्यात्, अभीक्ष्णं चैषां शिल्पदर्शनं कुर्यात् ।

३६. राजा उन पर, सदैव ध्यान रखे, बार बार उनकी शिल्प कला देखता रहे।

कृतनरेन्द्राङ्कं शस्त्रावरणमायुधागारं प्रवेशयेत् ।

३७. वह राजकीय चिन्हाङ्कित शस्त्र-आवरण आयुधागार में प्रविष्ट कराये।

अशस्त्राश्चरेयुः, अन्यत्र मुद्रानुज्ञातात् ।

३८. सशस्त्र सञ्चरण का आदेश प्राप्त लोगों के अतिरिक्त, अन्य जन बिना शस्त्र के विचरण करें।

नष्टं विनष्टं वा द्विगुणं दद्यात् ।

३९. नष्ट अथवा विनष्ट होने पर, उसके मूल्य का दूना दे।

पाद टिप्पणी :

३३. (१) अभृतानां : जो नियमित रूप से सेवा करने में नहीं रहते हैं।

(२) भक्त : भत्ता, केवल खाने का वेतन भोजन या भात। द्र० २:२४:२८। गण० ३:१०७

पादटिप्पणी :

३४. (१) षष्टिवेतन : साठ पण वेतन। द्र० २:२४:२८

(२) आढक : अनाज की नाप, चौथाई द्रोण। द्र० २:१५:४७ एक आढक अनाज एक व्यक्ति के चार समय में भोजन के लिए पर्याप्त माना गया है।

पाद टिप्पणी :

३५. (१) संधिदिवस : अमावस्यादि।

पाद टिप्पणी :

३७. (१) आवरण : कवच, वर्म।

(२) आयुधागार : हथियार या अस्त्रशस्त्र रखने के स्थान या मैगजीन। द्र० ४:९:५

(३) प्रवेशभेत् : यह आयुधगाराध्यक्ष का विषय है।

पाद टिप्पणी :

३८. (१) अशस्त्र : इसका सम्बन्ध साधारण नागरिकों से है। लोग बिना हथियार के चले।

पाद टिप्पणी :

३९. (१) नष्ट : खो जाना, लुप्त होना।

(२) विनष्ट : विलुप्त, ध्वंश, उच्छिन्न, बरबा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विध्वस्त[1]गणनां च कुर्यात् ।

४०. और विध्वस्त (शस्त्रादि) की गणना की जाय ।

सार्थिकानां[1] शस्त्रावरण[2]मन्त[3]पालारगृह्णीयुः, समुद्रमवचारयेयुर्वा ।

४१. अन्तपाल सार्थिकों के शस्त्र और आवरण ग्रहण कर ले अथवा उन्हें मुद्राङ्कित कर ले जाने दे ।

यात्राम[1]भ्युत्थितो वा सेनामुद्योजयेत् ।

४२. अथवा युद्धयात्रा के लिये उद्यत राजा सेना को समुद्यत करे ।

ततो वैदेहकव्यञ्जनाः सर्वप[1]ण्यान्यायुधये भ्यो यात्रा[2]काले द्विगुणप्रत्यादे[3]-यानि दद्युः ।

४३. तदनन्तर वैदेहक वे गुप्तचर समस्त पण्य सामग्री आयुधीयों (सिपाहियों) को यात्राकाल में दूना वापस लेने की शर्त पर दें ।

एवं राजपण्ययोगवि[1]क्रयो वेतन[2]प्रत्यादा[3]नं च भवति ।

४४. इस प्रकार राजकीय पण्य का विक्रय होगा और वेतन की पुनः प्राप्ति होगी ।

पाद टिप्पणी :

४०. (१) विध्वस्त : बरबाद, नाश, छितराया हुआ, टूटे या नष्ट हुए ।

पाद टिप्पणी :

४१. (१) सार्थ : कारवाँ ।

(२) आवरण : कवच ।

(३) अन्तपाल : सीमानिरीक्षक अधिकारी, राज्यसीमाधिकारी, प्रधान पुरुष ।

पाद टिप्पणी :

४२. (१) यात्रा : अभियान, सेना प्रयाण या मार्च । द्र० १:१६:२९, ९:१:३४, ७:१५:३२, १२:५:१, १३:७:४५, गण० १:१८

पाठभेद :

'पण्यान्यायुधीभ्यो' का देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम में 'पण्यानायुधीयेभ्यो' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

४३. (१) सर्वपण्य : सब सामान, वस्तु ।

(२) यात्राकाल : प्रयाण, अभियान, प्रस्थान, समय ।

(३) द्विगुणप्रत्यादेयानि : अभियान के अन्त में साधारण मूल्य का दुगुना मूल्य प्राप्त होता है ।

पाठभेद :

'राजपण्ययोगविक्रयो' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'राजपण्यविक्रयो' पाठ भेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

४४. (१) योग : गण० ३:२३०; ३:१७२, १८२; १:१३, २३, २७, ३६, ५४, ८२, ८४, १४३

(२) योगविक्रय : चालाकी से बेचना, गुप्तरूप से बेचना, प्रतारणा, वंचना ।

(३) वेतनप्रत्यादान : वेतन वापस लेना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवमेवक्षितायव्ययः कोशदण्डव्यसनं नावाप्नोति ।

४५. इस प्रकार आय व्यय की समीक्षा करने वाला राजा, धन और सैन्य के विषय में दारिद्र्य दोष को नहीं प्राप्त करता ।

इति भक्तवेतनविकल्पः ।

४६. भक्त वेतन विकल्प समाप्त ।

सत्त्रिणश्चायुधीयानां वेश्याः कारुकुशीलवाः ।
दण्डवृद्धाश्च जानीयुः शौचाशौचमतन्द्रिताः ॥

४७. सर्वदा सावधान सत्त्रि, वेश्यायें, कारु-कुशीलव, प्राचीन सेनापुरुष आयुधीयों के शौचाशौच को जानें ।

इति योगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे भृत्यभरणीयं तृतीयोऽध्यायः ।
आदितस्त्रिनवतितमः ।

पंचम अधिकरण योगवृत्त में भृत्यभरणीय नामक तीसरा अध्याय समाप्त ।
आदि से तिरान्वे अध्याय समाप्त ।

पाद टिप्पणी :

४५. (१) व्यसन : आपदा, आपत्ति द्र० १:१४:४, ३:१६:३०, ८:१:१ गण० ३:२

पाद टिप्पणी :

४६ (१) विकल्प : गण० २:३४४, ३:१००

पाद टिप्पणी :

४७. (१) कारु : कारीगर

(२) शौच : चरित्र शुद्धि, सच्चाई, निष्ठा, निष्ठा से यहाँ तात्पर्य है ।

(३) अशौच : चरित्रभ्रष्टता ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः भृत्यभरणीयम्, आदितस्त्रिनवतितमः ।

मैसूर संस्करण में—इति योगवृत्ते भृत्यभरणीयं तृतीयोऽध्यायः आदितस्त्रिनवतिः ।

वसाक संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे तृतीयोऽध्यायः भृत्यभरणीयम् आदितस्त्रिनवतितमः ।

उदयवीर शास्त्री में—इतियोगवृत्ते पंचमेऽधिकरणे भृत्यभरणीयं तृतीयोऽध्यायः ।३। आदितस्त्रिनवतितमः ॥९३॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ४

द्विनवतितमं प्रकरणम्—अनु[1]जीविवृत्तम्

बान्वे प्रकरण—अनुजीविवृत्त

लोक[2]यात्राविद् राजानमा[3]त्मद्रव्य[4]प्रकृ[5]तिसंपन्नं प्रियहितद्वारेणाश्रयेत[6] ।

१. लोकयात्राविद् व्यक्ति आत्म, द्रव्य एवं प्रकृति संपन्न राजा का आश्रय, उसके प्रिय एवं हितकर के जन माध्यम से प्राप्त करे।

यं वा मन्येत 'यथाहमाश्रयेप्सुरेवमसौ विनयेप्सुराभिगामिकगुणयुक्तः' इति ।

२. अथवा जिसे ऐसा माने कि जिस प्रकार मैं आश्रयाकांक्षी हूँ उसी प्रकार यह विद्या-वृद्धाकांक्षी तथा आभिगामिक गुण (महाकुलीन) युक्त हैं (उसका आश्रय ग्रहण करे।)

अनात्मवान् हि नीतिशा[2]स्त्रद्वेषादनर्[3]थ्यसंयोगाद्वा प्राप्यापि महदै[4]श्वर्यं न भवति ।

३. आत्म सम्पदा रहित राजा नीति शास्त्र के प्रति द्वेषभाव के कारण अथवा धन कर्म संयोग वश राज्यैश्वर्य प्राप्त कर भी नष्ट कर देता है।

पादटिप्पणी :

१. (१) अनुजीवि : मन्त्री पद के इच्छुक से तात्पर्य है दरबारी भी अर्थ किया गया है।

(२) लोकयात्राविद् : लौकिक व्यवहार में निपुण । द्र० १:२:५, ५:४:१, १:४:४, ५,

(३) आत्म द्रव्य : महान कुलीन एवं दैवी बुद्धियुक्त । द्र० ६:१:६ ।

(४) द्रव्य : वस्तु, सामग्री ।

(५) प्रकृति संपन्न : अमात्यादि पंच द्रव्यादि योग्य गुण युक्त । १:१७:३१, ६:१:३–६, ८–११।

(६) आश्रय : आश्रय या शरण स्थान । द्र० १.१६: ४।

पादटिप्पणी :

२. (१) अभिगामिक गुण : द्र० ६:१:३।

पादटिप्पणी :

३. (१) अनात्मवान् : आत्मसम्पत्ति होना ।

(२) नीतिशास्त्र : राजनीति विज्ञान, राजनीति शास्त्र, वह शास्त्र जिसमें आचार सम्बन्धी नियमों का विधान है।

(३) अनर्थ्य : हानि प्रद । १:१७:३३, १:७:२, २:३५:१०, ७:५:२३, ७७:६२ गण० ३:१९ ।

(४) महदैश्वर्य : महाशक्ति, प्रभुत्व, विभव एवं सर्वव्यापकता आधिपत्य, सत्ता ये आठ हैं— १. अणिमा, २. महिमा, ३. गरिमा, ४. लघिमा, ५. प्राप्ति, ६. प्राकाम्य, ७. ईशित्व, ८. वशित्व।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आत्मवति[1] लब्धावकाश:[2] शास्त्रानुयोगं[3] दद्यात् ।

४. आत्म सम्पन्न राजा को अवसर प्राप्त कर, अर्थशास्त्रादि विषयक प्रश्नोत्तर दे।

अविसंवादाद्धि[1] स्थानस्थैर्यमवाप्नोति ।

५. शास्त्र सम्मत उत्तर होने पर, वह स्थायी स्थानाधिकार प्राप्त करता है।

मतिकर्मसु[1] पृष्टस्तदात्वे[2] चायत्यां च धर्मार्थसंयुक्तं समर्थं[3] प्रवीणवद-परिषद्भीरुः कथयेत् ।

६. बौद्धिक कर्म के विषय में पूछे जाने पर, तत्काल तथा भविष्य में धर्मार्थ सम्पन्न एवं समर्थ वचन, प्रवीण जनतुल्य सभा में निर्भय होकर कहे।

ईप्सित:[1] पणेत[2] 'धर्मार्थानुयोगमविशिष्टेषु[3] बलवत्संयुक्तेषु[4] दण्डधारणं-मत्संयोगे तदात्वे[5] च दण्डधारणमिति न कुर्याः, पक्षं वृत्ति गुह्यं[6] च मे नोपहन्याः, संज्ञया[7] च त्वां कामक्रोध[8]दण्डनेषु वारयेयम्' इति ।

७. राजा द्वारा वांछित होने पर, वह राजा को प्रतिज्ञा बद्ध करे, 'अविशिष्ट जनों से धर्मार्थ विषय प्रश्न, सबल के प्रति दण्ड प्रयोग, मेरे प्रति सद्यः दण्ड प्रयोग न करना, मेरे पक्ष, जीविका और गोपनीय का विनाश न करना, काम-क्रोध वश दण्डोद्यत तुम्हें संकेत से निवारित करूंगा'।

पादटिप्पणी :

४. (१) आत्मवति : आत्मसम्पन्न :

(२) लब्धावकाश : जिसे किसी बात का अवसर मिल गया है ।

(३) अनुयोग : प्रतिप्रश्न, प्रतिपृच्छा, द्र० २; ८:२७, ३:१:४६, ३:११:४४, १४:३:२०, भवि० १:१८४:३ !

पादटिप्पणी :

५. (१) अविसंवाद : जो अपनी प्रतिज्ञा या इकरार नहीं तोड़ता, जो धोखा नहीं देता। इसका सम्बन्ध शास्त्र से है। द्र० १:१८:६, ३:११:४६, ६:१:३, १३:५:६ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) मतिकर्म : विचारणीय कर्मों या विषयों ।

(२) पृष्टस्तदात्वे : पृच्छा ।

(३) समर्थं : कार्य करने योग्य।

पाठभेद :

'मत्संयोगे' का पाठभेद तंजौर में 'वत्सयोगे' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बलवत्संयोगे' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) ईप्सित : वाञ्छित ।

(२) पणेत : अनुबन्ध करना, शर्त करना। द्र० ७:७:८।

(३) अविशिष्ट : अप्रख्यात, अप्रसिद्ध, अलक्षित ।

(४) बलवत्संयुक्तेषु : बलवान् ।

(५) मत्संयोगे तदात्वे : अपने लोगों को तुरन्त दण्ड न देना ।

(६) गुह्य : गोपनीय। द्र० १:८:९, १:१५:६०, मनु० १२:१२७, गण० १:४१ ।

(७) संज्ञया : संकेत ।

(८) क्रोध : कोप, गुस्सा। द्र० १:६:१, अग्नि २५३:९-१०, भाग० ११:१७:२०। मत्स्य० २२०: १४, स्कन्द० १:२:४४:२५-२७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदिष्टः प्रदिष्टायां भूमावनुज्ञातः प्रविशेत्, उपविशेच्च पार्श्वतः संनिकृष्टविप्रकृष्टः परासनम् ।

८. पद प्राप्त करने के पश्चात् अनुमति पूर्वक निर्दिष्ट स्थान पर, प्रवेश करे तथा पास में न अति निकट न अति दूर अन्य आसन पर बैठे ।

विगृह्य कथनमसभ्यमप्रत्यक्षमश्रद्धेयमनृतं च वाक्यमुच्चैरनर्मविहासं वातष्ठीवने च शब्दवतीन कुर्यात् ।

९. साक्षेप कथन, असभ्य, अप्रत्यक्ष, अश्रद्धेय एवं मिथ्या वचन तथा अनवसर उच्चहास शब्द युक्त वातोत्सर्जन और थूत्कार न करे ।

मिथः कथनमन्येन, जनवादे द्वन्द्वकथनं, राज्ञो वेषम् उद्धतकुहकानां च, रत्नातिशयप्रकाशाभ्यर्थनम्, एकाक्ष्योष्ठनिर्भोगं भ्रुकुटीकर्म वाक्यावक्षेपणं च ब्रुवति, बलवत्संयुक्तविरोधं, स्त्रीभिः स्त्रीदर्शिभिः सामन्तदूतैर्द्वेष्यपक्षावक्षिप्तानर्थ्यैश्च प्रतिसंसर्गमेकार्थचर्यां संघातं च वर्जयेत् ।

१०. (राजा के समीप) अन्य के साथ गोपनीय बात, जनवादे में द्वन्द्व कथन, राजा और उद्धत पाषण्डियों का वेषधारण, राजोचित श्रेष्ठरत्न, अपने लिए स्पष्ट रूप प्रार्थना, (किसी के बोलते समय) एक आँख और ओठ कुटिल करना, भौंह टेढ़ा करना, बात को बीच में काटना, बलवान के सम्बन्धीजनों से विरोध, स्त्रियों, स्त्री दर्शकों, सामन्त दूतों, शत्रु पक्षीयों, अवक्षिप्तों, अनर्थकारी जनों की संगति तथा एकार्थ चर्या और संघात त्याग देना चाहिए ।

पाठ भेद :

'आदिष्टः प्रदिष्टायां' का भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'आयुक्तप्रदिष्टायां' पाठभेद मिलता है। तथा 'संनिकृष्टविप्रकृष्टः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'संनिकृष्टः विप्र' तथा 'परासनम्' का तंजौर में 'वरासनम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) आदिष्ट : आदेश या अनुमति प्राप्त ।

(२) प्रदिष्ट : निश्चित । द्र० १:११:५, १०, १२ ।

(३) पार्श्वतः : राजा के आसपास या बगल में ।

(४) संनिकृष्ट विप्रकृष्ट : न अति दूर न अति समीप ।

(५) परासनम् : दूसरे आसन पर ।

पाठ भेद :

'असम्यमप्रत्यक्षम' का पाठभेद तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'असम्यप्रत्यक्षम्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) विगृह्य : युद्धप्रिय, विवाद प्रिय ।

(२) ष्ठीवन : थूक, खखार, लार, थूकना, डकारना ।

पाठ भेद :

'द्वेष्यपक्षा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'द्वेष्यापक्षा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) मिथः : परस्पर, आपस की या गोपनीय बात । मनु० २:१४७ ।

(२) जनवाद : अफवाह ।

(३) द्वन्द्वकथन : कष्ट या कलह पूर्ण बातें। द्र० १:१३:२ ।

(४) कुहक : मायावी, मायायोग, इन्द्रजालिक, जादूगर, ठग, धूर्त । भविष्य० १:८:२५, ४:१;६५, ४:४:३, १:२०:१८ :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अहीनकालं राजार्थं स्वार्थं प्रियहितैः सह ।
परार्थं देशकाले च ब्रूयाद्धर्मार्थसंहितम् ॥

११. राजा के लाभ की बात अविलम्ब कहनी चाहिए। अपने लाभ के विषय में राजप्रिय एवं उसके हितैषी जनों से कहना चाहिए। दूसरे के लाभ के विषय में देशकाल देखकर कहना चाहिए। जो कुछ कहे सब धर्मार्थं संगत हो।

पृष्टः प्रियहितं ब्रूयान्न ब्रूयादहितं प्रियम् ।
अप्रियं वा हितं ब्रूयाच्छृण्वतोऽनुमतो मिथः ॥

१२. राजा के पूछने पर अनुमति प्राप्त कर, उसके श्रवणरत होने पर, प्रिय और हितकर बचन बोले, अहितकर प्रिय बचन न बोले, अप्रिय होने पर भी हितकर वचन अवश्य बोले।

तूष्णीं वा प्रतिवाक्ये स्याद्द्वेष्यादींश्च न वर्णयेत ।
अप्रिया अपि दक्षाः स्युस्तद्भावाद्ये बहिष्कृताः ॥

१३. अथवा उत्तर प्रदान करने में (भय होने पर) मौन हो जाय, राजद्वेषीजनों का वर्णन न करे, राजा की इच्छा का अनुसरण न करने वाले दक्ष पुरुष भी अप्रिय हो जाते हैं।

अनर्घ्याश्च प्रिया दृष्टाश्चित्तज्ञानानुवर्तिनः ।
अभिहास्येष्वभिहसेद्घोरहासांश्च वर्जयेत् ॥

१४. राजा की चित्त वृत्ति को जानने वाले अनर्घ्यजन भी प्रिय होते देखे गये हैं। राजा के हास के समय हँसना चाहिए, अट्टहास का त्याग करना चाहिए।

---

(५) अतिशय : विशेष अनुग्रह, उपकार, या अनुकूलता।

(६) स्त्रीभि : अन्तःपुर की स्त्रियाँ।

(७) अवक्षिप्त : लांछन, निन्दा, बदनामी करना। द्र० १:१०:२। शिव० द्र० १४७।

(८) एकार्थं : अपने किसी एक बात पर अड़ जाने की आदत।

(९) संघात : आघात।

पादटिप्पणी :

११. (१) अहीनकाल : विलम्ब काल।

पादटिप्पणी :

१२. (१) पृष्ट : पूछा हुआ, द्र० ५:४:६।

(२) शृण्वतो : सुनने हुए के।

(३) मिथ : परस्पर। मनु० २:१४७।

पाठ भेद :

'वर्णयेत' का देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम् में 'वर्जयेत' पाठभेद मिलता है।

सूत्र १३ द्वितीय पद तथा १४ का प्रथम पद मिलकर दशकुमारचरितम् का श्लोक अध्याय ८ का श्लोक बनता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) प्रतिवाक्य : उत्तर।

पाठभेद : 'दृष्टाश्चित्त' का देवनागरी अनुलिपि में 'दुष्टाश्चित्त' तथा तेलगू अनुप्रतिलिषि में 'दुष्ट्वा चित्ता' तथा 'चित्त ज्ञाना' का तेलगू अनुप्रति लिपि एवं तंजौर में 'चित्ताज्ञाना' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१४. (१) अभिहास्य : हँसना।

(२) घोर हास्य : अट्टहास। ठहाका लगाना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परात्संक्रामयेद्घोरं[1] न च घोरं परे वदेत् ।
तितिक्षेतात्मनश्चैव[2] क्षमावान् पृथिवीसमः ।।

१५. भयावह वृत्तान्त अन्य के द्वारा राजा के पास भेजे, स्वयं भयावह बात न कहे। वह घोर वृत्तान्त अपना हो, तो पृथिवी सदृश क्षमाशील होकर सहन करे।

आत्मरक्षाहि सततं पूर्वं[1] कार्या विजानता ।
अग्नाविव हि संप्रोक्ता[2] वृत्ती राजोपजीविनाम् ।।

१६. चतुर पुरुष को सदैव पहले अपनी रक्षा करनी चाहिए। राजोपजीवियों की वृत्ति अग्नि सेवन तुल्य कही गयी है।

एकदेशं[1] दहेदग्निः शरीरं वा परं गतः[2] ।
सपुत्रदारं राजा तु घातयेदर्धयेत वा ।।

१७. अग्नि शरीर के एक भाग को अथवा पूर्ण शरीर को जलाता है किन्तु राजा स्त्री पुत्र सहित विनष्ट कर देता है अथवा संवर्धित करता है।

इति योगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे अनुजीविवृत्तं चतुर्थोऽध्यायः ।
आदितश्चतुर्नवतितमः ।

पंचम अधिकरण योग वृत्त में अनुजीवि वृत्त सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त।
आदि से चौरान्वे अध्याय समाप्त।

पाठभेद :

भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'परे' के स्थान पर 'स्वयं' का प्रयोग है।

पादटिप्पणी :

१५. (१) घोरं : डरावना, राजा द्वारा घोर वचन का कहना, उग्र कर्म। शिव० ५:८:४।

(२) तितिक्षा : सहिष्णुता, सहनशीलता, सहन शक्ति।

पादटिप्पणी :

१६. (१) विजानता : चतुर।

(२) संप्रोक्ता : कथित, घोषित।

पाठ भेद :

'घातयेदर्ध' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'घातयेद्वध' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१७. (१) एकदेशं : एक स्थान।

(२) परंगत : जब वह दूसरे के पास पहुँचता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पाठभेद :

गणपति शास्त्री में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः अनुजीविवृत्तम्, आदितश्चतुर्नवतितमः।

मैसूर संस्करण में—इति योगवृत्ते अनुजीविवृत्तं चतुर्थोऽध्यायः आदितश्चतुर्नवतिः।

वसाक संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः अनुजीविवृत्तम् आदितश्चतुर्नवतितमः।

उदयवीर शास्त्री में—इति योगवृत्ते पंचमेऽधिकरणे अनुजीविवृत्तं चतुर्थोऽध्यायः ।४। आदितश्चतुर्नवतितमः ॥९२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ५

त्रिनवतितमं प्रकरणम्-समयाचारिकम्[1]

तिरान्वे प्रकरण—समयाचारिक

नियुक्तः कर्मसु व्ययविशुद्धमुदयं[2] दर्शयेत् ।

१. कर्म स्थानों पर नियुक्त अधिकारी पुरुष व्यय विशुद्ध आय प्रदर्शित करे।

आभ्यन्तरं वाह्यं गुह्यं प्रकाश्यमात्ययिकमुपेक्षितव्यं वा कार्यम् 'इदमेवम्' इति विशेषयेच्च ।

२. आभ्यन्तर, वाह्य, गुह्य, प्रकाश्य, आत्ययिक, अथवा उपेक्षितव्य कार्य की 'यह इस प्रकार है' (राजा के समक्ष) व्याख्या करे।

मृगयाद्यूतमद्यस्त्रीषु प्रसक्तं नैनमनुवर्तेत प्रशंसाभिः ।

३. मृगया, द्यूत, मद्य एवं स्त्री में आसक्त राजा का प्रशंसापूर्वक अनुगामी न बने।

आसन्नश्चास्य व्यसनोपघाते प्रयतेत, परोपजापातिसंधानोपधिभ्यश्च रक्षेत् ।

४. आसन्नवर्ती होकर इसका व्यसन दूर करने का प्रयास करे, शत्रु प्रयुक्त उपजाप, अति सन्धान और उपधि से रक्षा करे।

पाद टिप्पणी :

१. (१) समयाचारिकम् : अपने कार्यों को सम्पन्न करते रहना। द्र० ७:१५:२१, गण० २:२१२।

(२) उदय : लाभ, आय। द्र० २:९:४, २:१६:१८,१९, २:१८:२, ३, ३:१२:२, २६, २७, ३०।

पाठ भेद :

तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बिशेषयेच्च' के स्थान पर 'शेषयेच्च' का प्रयोग मिलता है।

पाद टिप्पणी

२. (१) आभ्यन्तर : नगर तथा राजप्रासाद से सम्बन्धित। भीतरी क्षेत्र द्र० २:५:२२।

(२) वाह्यं : बाहरी क्षेत्र से सम्बन्धित। द्र० ९:५।

(३) आत्ययिक : नाशकारी, अमंगल कर, अपरिहार्य, अत्यावश्यक, शीघ्र करणीय। १:१५:५८, १:१९:२९:३०, २:१३:२६, ३१, ३५, ७:३:३८।

(४) उपेक्षितव्यं : उदासीनता, लापरवाही, अवहेलना करना। शिव० ७:१:३१:४०, १:२:५१:८ स्कन्द १:२:५१:१६।

पाठभेद :

'नैनमनु' का तंजीर में 'चैवानु' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'चैवमनु', तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वा अनु', भाषा व्याख्यान में 'चानु' पाठभेद मिलता है।

पाठभेद :

'नोपधिभ्यश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नोपाधिश्यश्च' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४. (१) उपघात : प्रहार। मनु० २:१७९, याज्ञ० २:२५६, अग्नि० २५३:२८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इङ्गिताकारौ चास्य लक्षयेत् ।

५. इसके इङ्गित और आकार को देखता रहे।

कामद्वेषहर्षदैन्यव्यवसायभयद्वन्द्वविपर्यासमिङ्गिताकाराभ्यां हि मन्त्रसंवरणार्थमाचरति प्राज्ञः ।

६. प्राज्ञजन मन्त्र की गोपनीयता के लिए काम, द्वेष, हर्ष, दैन्य, व्यवसाय, भय एवं द्वन्द्व के विपर्यास इङ्गित और आकार से प्रकट करते हैं।

दर्शने प्रसीदति, वाक्यं प्रतिगृह्णाति, आसनं ददाति, विविक्तो दर्शयते, शङ्कास्थाने नातिशङ्कते, कथायां रमते, परिज्ञाप्येष्ववेक्षते, पथ्यमुक्तं सहते, स्मयमानो नियुङ्क्ते, हस्तेन स्पृशति, श्लाघ्ये नोपहसति, परोक्षं गुणं ब्रवीति, भक्ष्येषु स्मरति, सह विहारं याति, व्यसनेऽभ्युपपद्यते तद्भक्तीन्पूजयति गुह्यमाचष्टे, मानं वर्धयति, अर्थं करोति, अनर्थं प्रतिहन्ति–इति तुष्टज्ञानम् ।

७. देखने पर प्रसन्न होता है, कथन श्रवण करता है, आसन देता है, एकान्त में भी दर्शन का अवसर देता है, शङ्का का अवसर होने पर भी अधिक शंका नही करता है, कथा में रुचि लेता है, अन्य द्वारा ज्ञात विषय में प्रियजन की अपेक्षा करता है। कहे पथ्य को स्वीकार करता है, मुस्कराहट के साथ कार्य में नियुक्त करता है, हाथ से स्पर्श करता है, प्रशंसनीय का उपहास नहीं करता, परोक्ष में गुण का वर्णन करता है, भोज्य के समय स्मरण करता है, साथ में विहारार्थ जाता है, विपत्ति में दुःख दूर करने के लिए उद्योग करता है, उसके प्रति निष्ठावान् जनों का सम्मान करता है, गोपनीय बात उससे कहता है, सम्मान में वृद्धि करता है, धन प्रदान करता है, अनर्थ नष्ट करता है—इस प्रकार राजा की प्रसन्नता का ज्ञान करना चाहिए।

---

(२) उपजाप : भेदनीति, कुत्सितमन्त्रणा द्वारा भेद या फूट डालना, शत्रु के बहकावे में आ जाना। द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२।

(३) अतिसंधान : षड्यन्त्र छल, धोखा अथवा प्रवंचना।

(४) उपधि : छल प्रयोग २११:९।

पाद टिप्पणी :

५. (१) इङ्गित : संकेत।

(२) आकार : मुख का भाव या व्यञ्जक या मुखरागादि पर अंगसंधान आकृति की संज्ञा। द्र० १:१५:७, ९।

पाठ भेद :

'आचरति प्राज्ञः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आचरति प्रज्ञादर्शने' भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूला 'आचरन्ति प्राज्ञाः' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

६.(१) काम : अनुराग। द्र० १:७:३,४:१३: ८।

(२) द्वेष : विराग। द्र० ३:३:१६।

(३) दैन्य : दयनीय, दरिद्रावस्था, दुर्दशा, दुर्बलता, उत्साह हीनता।

(४) व्यवसाय : कार्य का निश्चय।

(५) द्वन्द्व : सुख दुःख द्वन्द्वों के कारण विचलित भाव।

(६) आकार : द्र० ५ ५:५, गण० १:६, ७१।

पाठभेद :

'विविक्त' का भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूला में 'विविक्ते', तंजौर में 'नातिशङ्कते' का 'नातिशङ्केत', 'परोक्षं' का भाषा व्याख्यान में 'परोक्षे', 'भ्युपपद्यते' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'भ्यवपद्यते' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

७. (१) प्रसीदति : प्रसन्न होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एतदेव विपरीतमतुष्टस्य, भूयश्च वक्ष्यामः ।

८. इसके विपरीत असन्तुष्ट राजा का लक्षण है, और आगे कहेंगे ।

संदर्शने कोपः, वाक्यस्याश्रवणप्रतिषेधौ[1], आसनचक्षुषोरदानम्, कर्णस्वर[2]-भेदः, एकाक्षिभ्रुकुट्योष्ठनिर्भोगः, स्वेदश्वासस्मितानामस्थानोत्पत्तिः, परमन्त्रणम्, अकस्मात्व्रजनम्, वर्धनमन्यस्य, भूमिगात्रविलेखनम्-अन्यस्योपतोदनम्, विद्यावर्ण-देशकुत्सा[3], समदोषनिन्दा, प्रतिदोषनिन्दा[4], प्रतिलोमस्तवः[5], सुकृतानवेक्षणम्, दुष्कृता-नुकीर्तनम्, पृष्ठावधानम्[6], अतित्यागः[7], मिथ्याभिभाषणम्[8], राजदर्शिनां च तत्वृत्तान्यत्वम् ।

९. देखने पर क्रोध करता है, कथन श्रवण नहीं करता और निषेध करता है, आसन नहीं देता, दृष्टि नहीं डालता, उसके वर्ण और स्वर भेद होता है, एक आँख, भ्रुकुटि और ओठ टेढ़ा करता है, असमय में स्वेद, श्वास एवं स्मित प्रकट होते हैं, अन्यजन से बात करने में लीन हो जाता है, सहसा चला जाता है, अन्य के प्रति आदर प्रकट करता है, भूमि और शरीर कुरेदने लगता है, अन्य को प्रताड़ित करता है, तत्सम विद्या, वर्षा एवं देश की निन्दा करता है, तत्सम दोष की निन्दा करता है, प्रति दोष की निन्दा करता है, प्रतिलोम की प्रशंसा करता है, जाने पर उसके पीछे ध्यान देता हैं, उसे दूर हटाता है, मिथ्या भाषण करता है, राजसेवकों और उसके प्रति व्यवहार में भेद करता है ।

वृत्तिविकारं[1] चावेक्षेताप्यमानुषाणाम्[2] ।

१०. पशु-पक्षियों के भी वृत्ति विकार को अवलोकन करना चाहिए ।

---

(२) प्रतिगृह्णाति : ग्रहण करना । या ध्यान पूर्वक सुनना ।

(३) पथ्यमुक्तं : कल्याणकारी बात ।

(४) श्लाघ्ये : प्रशंसनीय, आदरणीय, श्रद्धेय ।

(५) अभ्युपपद्यते : सहायता करना । द्र० २: १०:२४, १२:३:२० ।

(६) तद्भक्ति : मन्त्री के प्रति निष्ठावान् या वफादार ।

(७) प्रतिहन्ति : निवारण करना ।

(८) तुष्ट : प्रसन्न ।

पाठभेद :

'भ्रुकुट्योष्ठनिर्भोगः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भ्रुकुट्योष्ठनिर्भेदः', 'स्वेदश्वाथ' का 'स्वेदश्चश्वास', 'परमन्त्रणम्' का 'परिमन्त्रणम्', 'गात्र विलेपनम्' तथः 'पृष्ठावधानम्' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रति लिपि में 'प्रमिष्ठावधानः' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

९. (१) प्रतिषेध : दूर हटाना, निषेध करना, निवारण करना । अस्वीकृत करना ।

(२) स्वरभेद : भिन्न स्वर ।

(३) कुत्सा : निन्दा ।

(४) प्रतिदोषनिन्दा : दूसरों पर दोषारोपण कर उसकी निन्दा करना ।

(५) प्रतिलोमस्तव : ब्याज स्तुति ।

(६) पृष्ठावधानम् : पीठ की या पीछे की ओर ध्यान देना ।

(७) अतित्याग : दूर हटा देना ।

(८) मिथ्या : भावशून्य या सारहीन ।

पाद टिप्पणी :

१०. (१) वृत्ति : चर्या, आचरण, व्यवहार जीविका १:७:१, ३:१:३०, ३:१५:६, नारद ९:५ ।

(२) अमानुष : पशुपक्षी आदि ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'अयमुच्चैः सिञ्चति' इति कात्यायनः[2] प्रवव्राज; 'क्रौञ्चोऽपसव्यम्' इति कणिङ्को भारद्वाजः, 'तृणम्' इति दीर्घश्चारायणः, 'शीताशाटी' इति घोटमुखः, 'हस्ती-प्रत्योक्षीत' इति किञ्जल्कः, 'र[10]थाश्वं प्राशंसीत्' इति पिशुनः[11], प्रतिर[12]वणे शुनः पिशुन[13] पुत्रः ।

• ११: 'यह ऊपर से सींचता है' अतएव कात्यान ने परिव्रजन किया, 'क्रौञ्च वाम भाग से गया' अतः भारद्वाज कणिङ्क ने, 'तृण' जानकर दीर्घ चारायण ने, 'शीतशाटी' सुनकर घोटमुख ने, 'हाथी ने पानी छीटा' उस कारण किञ्जल्क ने 'रथ के अश्व की प्रशंसा करता है' इससे पिशुन ने 'श्वान के प्रति शब्द करने से' पिशुन पुत्र ने राजा का त्याग कर दिया ।

पाठभेद :

'प्रतिरवणे शुनः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतिवरणेशूनम्' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में बाद में 'इति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) अयमुच्चैःसिञ्चति : ऊँचे स्थान पर से पानी छिड़कना ।

(२) कात्यायन : पौण्ड्र देश में सोमदत्त नामक राजा था । उसके पुत्र ने कोई अपराध किया था । अपने मन्त्री कात्यायन के साथ बन्दी बनाने के लिए राजा ने मन्त्रणा की । राजपुत्र के पक्षपातियों ने राजकुमार को सुरक्षित स्थान पर रख दिया । राजा को सन्देह हो गया । उसके मन्त्री कात्यायन ने यह भेद खोल दिया । जल सिंचक भृत्य ने यह रहस्य जान लिया । कात्यायन, उस ओर आ रहा था, तो वह ऊपर से ही जल डालकर, सींचता रहा । मन्त्री जल सिंचक का यह विपरीत कार्य देखकर, शांत हो हो गया । राजा के क्रोध की वात जानकर, उसके मन में तत्काल सन्देह हो गया । और वह राज्य छोड़कर चला गया ।

(३) क्रौंचोऽपसव्यम् : कौंच पक्षी का वाँई ओर से चला जाना ।

(४) कणिङ्कभारद्वाज : नीति निपुण था । कोशलदेशीय परन्तप राजा का मन्त्री था । वह राजा के समीप जब जाता था, तो उसके दाहिनी दिशा से क्रौंच नामक पक्षी उड़कर जाता था । एक दिन पक्षी बायीं ओर से उड़कर निकला । इस कार्य विपर्यय से राजा के क्रोध का अनुमान कर, उसने राजा का परित्याग कर दिया । राजा के कुपित होने का कारण था । राजा अन्तःपुर में था । उस समय कणिङ्क बहाँ आया । राजा मन्त्री की इस बात से क्रुद्ध हो गया । महाभारत १२:१३८ ।

(५) तृण : घास । गण० २:२१ ।

(६) दीर्घश्चारायण : मगध के एक बालक राजा का मन्त्री चारायण गोत्रीय दीर्घ आचार्य था । जिस समय वह अन्तःपुर में आता था, राजमाता उसकी सेवा करती थीं । वयस्क होने पर, राजा ने अपनी माता से पूछा । इतनी सेवा वह क्यों करती हैं ? माता ने उत्तर दिया । वह विद्वान आचार्य है, अतः सेवा की जाती है । दीर्घ चारायण को तिनकों से भरा हुआ अन्न दिया गया । आचार्य इसे अपना अपमान जानकर, वहाँ से चला गया ।

(७) शीतशाटी : ठण्डा वस्त्र ।

(८) घोटमुख : अंशुमान अवन्ति नगर का राजा था । राजा ने अपने पुत्र को नीति पारंगत बनाने के लिए घोटमुख आचार्य को रखा था । राजा किसी बात पर, उससे अप्रसन्न हो गया । राजकुमार ने संकेत से गुरु को अप्रसन्नता की बात बताई । प्रतिदिन स्नान के पश्चात् वस्त्र निचोड़ कर कन्धे पर रखकर ले जाता था । किन्तु कपड़ा ठण्डा है, उसे वहीं छोड़कर चला गया । घोटमुख ने इस संकेत से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थमानावक्षेपे च परित्यागः ।

१२. धन और सम्मान की हानि करने पर राजा को छोड़ देना चाहिए ।

स्वामिशीलमात्मनश्च किल्बिषमुपलभ्य वा प्रतिकुर्वीत ।

१३. अथवा स्वामी का शील और अपना दोष विचार कर प्रतीकार करे ।

मित्रमुपकृष्टं वाऽस्य गच्छेत् ।

१४. अथवा उसके समीपस्थ मित्र का आश्रय प्राप्त करे ।

समझ लिया । राजा के मन में विकार उत्पन्न हो गया है । उसने राज्य छोड़ दिया ।

(९) हस्ती प्रत्यौक्षीत : हाथी का पानी डालना या छिड़कना ।

(१०) किंजल्क शतानन्द : यह बंगाल का राजा था । किंजल्क आचार्य उनके यहाँ रहता था । वह प्रतिदिन राज हस्ती के प्रति स्नेह प्रगट कर राजकुल में जाया करता था । एक दिन हाथी पर आरुढ़ राजा ने मन्त्री के आचार के विरुद्ध द्रोह पूर्वक बातें की । दूसरे दिन आचार्य जब आया, तो हाथी ने आचार्य के ऊपर सूँड़ से जल फेंक दिया । आचार्य को शंका हो गई । राजा के मन में उसके प्रति विकार उत्पन्न हो गया है । वह राज्य छोड़कर चला गया ।

(११) रथाश्वंप्राशंसीत् : रथ एवं अश्व की प्रशंसा करना । गण० २:२११ ।

(१२) पिशुन : उज्जयिनी के राजा प्रद्यूत ने अपने पुत्र को राजनीति विद्या पढ़ाने के लिए आचार्य पिशुन को रखा था । अध्ययन समाप्त हो जाने पर, राजा ने पिशुन के धन अपहरण करने की मन्त्रणा अपने पुत्र से की । पुत्र ने दूसरे दिन योजित रथ को आचार्य के सम्मुख खड़ा करके, बोला घोड़े शीघ्रगामी हैं ? एक दिन में ३०० योजन जा सकते हैं, आचार्य पिशुन में संकेत समझ कर, तत्काल राज्य छोड़ दिया । द्र० १:८:११ गण० १:४३, २१६। श्री कांगले ने पिशुन को शकुन्तला में वर्णित दुष्यन्त का एक मन्त्री था, लिखा है ।

(१३) प्रतिरवणे शुनः : कुत्ते का भूकना ।

(१४) पिशुनपुत्र : पिशुनपुत्र बाल्यकाल से ही राजनीति का ज्ञाता था, राजा की सेवा करता था, राजा ने विचार किया कि युवा होने पर यह कहीं चला जायगा । राजा की मन्त्रणा जान कर एक कुत्ता पिशुन पुत्र के सम्मुख भूँकने लगा, राजा के चित्त के विकार का अनुमान कर उसने राज्य त्याग दिया । द्रष्टव्यः नन्दी सूत्र कलकत्ता संस्करण सन् १८८०; गण० २:२१६ ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) अर्थमान : सम्पत्ति एवं सत्कार ।

(२) अवक्षेप : अपहरण, नाश, हानि । गण० १:२२८, २:२६३ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) किल्विष : पाप, त्रुटि, अपराध, दोष, बीमारी । मनु० ४:२४३, ८:२३५ स्कन्द० १:२:३३:३३ पद्म० २:३३:८ भाग० १०:४४:१० ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) उपकृष्ट : राजा के समीप, निकट । गण० ३:२११ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तत्रस्थो दोषनिर्घातं[1] मित्रैर्भर्तरि चाचरेत् ।
ततो भर्तरि जीवे[2] वा मृते वा पुनराव्रजेत् ॥

१५. वहाँ रहकर मित्रों द्वारा स्वामी के प्रति अपना निर्दोष भाव सिद्ध करे, तत्पश्चात् स्वामी के जीवित रहते अथवा मरने पर पुनः आये ।

इति योगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे समयाचारिकं पञ्चमोऽध्यायः आदितः पञ्चनवतितमः ,

पञ्चम अधिकरण योग वृत्त में समयाचारिक सम्बद्ध पञ्चम अध्याय समाप्त ।
आदि से पंचान्वे अध्याय समाप्त है ।

पाठभेद :

'जीवे वा' का भाषाव्याख्यान तथा श्रीमूल में 'जीवेद्वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) दोषनिर्घात : अपराध की सफाई करने से तात्पर्य है ।

(२) जीवे : जीवित ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री में—इति कौटलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे पञ्चमोऽध्यायः समयाचारिकम्, आदितः पञ्चनवतितमः ॥

मैसूर संस्करण में—इति योगवृत्ते समयाचारिकं पञ्चमोध्यायः आदितः पञ्चनवतिः ।

वसाक संस्करण में—इति कौटिलीर्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे ५ञ्चमोध्यायः समयाचारिकम् आदितः पञ्चनवतितमः ।

उदयवीर शास्त्री में—इतियोगवृत्ते पंचमेऽधिकरणे समयाचारिकं पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥ आदितः पंचनवतितमः ॥९६॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ६

चतुर्नवतितमं प्रकरणम्—राज्यप्रतिसंधानम्

चौरान्बे प्रकरण—राज्यप्रतिसंधान

पञ्चनवतितितम् प्रकरणम्—एकैश्वर्यम्

पंचान्बे प्रकरण—एकैश्वर्य

राज्यव्यसनमेवममात्यः प्रतिकुर्वीत ।

१. इस प्रकार अमात्य राज्यव्यसना दूर करे ।

प्रागेव मरणबाधभयाद् राज्ञः प्रियहितोपग्रहेण मासद्विमासान्तरं दर्शनं स्थापयेद् 'देशपीडापहममित्रापहमायुष्यं पुत्रीयं वा कर्म राजा साधयति' इत्यपदेशेन ।

२. मरण, वाधाभय के पूर्व राजप्रिय एवं हितकर जन के साथ एक मास या दो मास पश्चात् राजा के दर्शन का दिन निश्चित करे और यह कारण प्रदर्शित करे, 'राजा देश की पीडापह, अमित्रापह, आयुष्कर अथवा पुत्रकर कर्म सिद्ध कर रहा है ।'

राजाव्यंञ्जनमरुपवेलायां प्रकृतीनां दर्शयेत्, मित्रामित्रदूतानां च ।

३. अरूप बेला में राजचिन्ह युक्त पुरुष का दर्शन प्रकृति, मित्र एवं अमित्र के दूतों को कराये ।

पादटिप्पणी :

१. (१) राज्यव्यसनं : गम्भीर बीमारी या राजा की मृत्यु, या राजा पर आई हुई विपत्ति ।

(२) प्रतिकुर्वीत : प्रतीकार करना ।

पादटिप्पणी :

२. (१) प्रागेव : मृत्यु व्याधि के भय के पूर्व राजा वेष में, राजचिन्ह युक्त, नकली बना राजा, जो राजा के रूप में प्रकट होता है या किया जाता है ।

(२) अपग्रह : शान्ति, सन्धि अपने पक्ष में मिलाना या अपनी तरफ कर लेना । अग्नि० २५८: ८३ ।

पाठभेद :

'अपरूप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अनुरूप' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) राजाव्यञ्जन : राजा के रूप में बना दूसरा व्यक्ति । हिटलर भी अपने साथ अपने रूप के व्यक्ति को रखता था । ताकि राजा की मृत्यु न होकर, उसके प्रतिरूप व्यक्ति की मृत्यु हो जाय । द्र० १०:३:४२

(२) अरूप वेलायां : वेला, समय, अवसर, जब शरीर का रूप ठीक से नहीं दिखाई दे । गण० : २:३५५ ।

(३) प्रकृति : राज्य की प्रकृति या अंग से यहाँ तात्पर्य है । राजा की प्रजा पौरगण होते हैं । भाग० ४:१७:२, ब्रह्म० ३:४९,७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तैश्च यथोपचितां संभाषाममात्यमुखो गच्छेत् ।

४. उनके साथ वह अमात्य के माध्यम से यथोचित सम्भाषण करे ।

दौवारिकान्तर्वंशिकमुखश्च यथोक्तं राजप्रणिधिमनुवर्तयेत् ।

५. पूर्वोक्त प्रकार से दौवारिक एवं आन्तर्वंशिक के माध्यम से राजप्रणिधि का अनुवर्तन करे ।

अपकारिषु चैहेडं प्रसादं वा प्रकृतिकान्तं दर्शयेत्, प्रसादमेवोपकारिषु ।

६. अपकारियों पर अमात्य की सम्मति से हेड अथवा प्रसाद तथा उपकारियों पर प्रसाद प्रदर्शित करे ।

आप्तपुरुषाधिष्ठितौ दुर्गप्रत्यन्तस्थौ वा कोशदण्डावेकस्थौ कारयेत्, कुल्यकुमारमुख्यांश्चान्यापदेशेन ।

७. अथवा दुर्ग एवं सीमा प्रान्तस्थ कोश एवं सेना को विश्वस्तजन के अधिकार में एकत्र करे तथा किसी व्याज से कुलीन राजकुमारों को एकस्थ करें ।

यश्च मुख्यः पक्षवान् दुर्गाटवीस्थो वा वैगुण्यं भजेत तमुपग्राहयेत् ।

८. अथवा दुर्ग एवं अटवी में स्थित स्वपक्षीय जो प्रमुख व्यक्ति प्रतिकूल हो जाय, उसे अनुकूल किया जाय ।

पादटिप्पणी :

५. (१) दौवारिक : द्वारपाल । द्र० १:१२:६, ५:३:५, १:१२:६, १:२१:१२ ।

(२) आन्तर्वंशिक : अन्तःपुर का अध्यक्ष । अन्तःपुर का अधिकारी । द्र० १:१२:६ ।

(३) यथोक्त : जैसा कहा गया है । द्र० १:१:९ ।

(४) राजप्रणिधि : राजा का दैनिक कृत्य या नियमत या शासन या कर्तव्य । द्र० १:२:९, ८:२:१५ ।

पाठ भेद :

'प्रकृतिकान्तं' का तंजोर में 'प्रतिक्रान्तं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) हेड : निग्रह, अप्रसन्नता, क्रोध करना द्र० १:१३:१० ।

(२) प्रसाद : प्रसन्नता ।

(३) कान्त : प्रिय ।

(४) अपकारिषु : उपकार करने वाले ।

पाठ भेद :

'कुल्यकुमार' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तुल्यकुमार' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) आप्तपुरुष : विश्वसनीय । द्र० १:२१:१८, भवि० ११:१३:१४, १:१४:१, १:२५:१, १:१८:७, २:१०:३४ ।

(२) प्रत्यन्त : सीमावर्ती । ३:१६६,१७० ।

(३) दण्ड : सेना । १:५:१ ।

(४) कुल्य : यहां राजकुमार न होकर राजकुल में उत्पन्न व्यक्ति से तात्पर्य है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) उपग्राहयेत : अपनी तरफ मिला लेना । समर्थन प्राप्त करना, अनुकूल बनाना । द्र० २:२३:११, २:२९:२०, ५:१:३, ५:६:२, १३, ९:३:३८, ८:४:१५, २९, ९:७:२५, २८ । गण० २:२६३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह्वाबाधां वा यात्रां प्रेषयेत्, मित्रकुलं वा ।

९. अथवा उसे अतिवाधायुक्त अभियान पर या मित्र कुल के सहायतार्थ प्रेषित करे।

यस्माच्च सामन्तादाबाधं पश्येत् तमुत्सवविवाहहस्तिबन्धनाश्वपण्यभूमिप्रदानापदेशेनावग्राहयेत् स्वमित्रेण वा ।

१०. अथवा जिस सामन्त से अपने लिये भय देखे, उसे उत्सव, विवाह, हस्तिबन्धन, अश्वपण्य, भूमि प्रदान के व्याज से 'बुलाकर' अपने मित्र के माध्यम से अनुकूल करे ।

ततः संधिमदूष्यं कारयेत् ।

११. तत् पश्चात् अदूष्य सन्धि कराये ।

आटविकामित्रैर्वा वैरं ग्राहयेत् ।

१२. अथवा उससे (सामन्त से) आटविक एवं शत्रुओं से वैर करा दे ।

तत्कुलीनमपरुद्धं वा भूम्येकदेशेनोपग्राहयेत् ।

१३. अथवा उसी कुल के अपरुद्ध को भूमि का कुछ भाग देकर, उसके द्वारा उस सामन्त का दमन करे ।

कुल्यकुमारमुख्योपग्रहं कृत्वा वा कुमारमभिषिक्तमेव दर्शयेत् ।

१४. राजकुमारों एवं प्रमुख जनों को अनुकूल कर, राजकुमार को अभिषिक्त प्रदर्शित करे ।

पाठ भेद :

'बह्वावाधां' का तंजौर में 'बाह्वाबाधां' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बाह्यावाधां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) वह्वावाधा : अनेक खतरों या बाधाओं से युक्त, बहुत बाधा ।

(२) यात्रा : अभियान । द्र० १:१६:२९, ९:१:३ ।

पाठभेद :

'अवाधं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रति लिपि में 'आवाधां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) सामन्त : द्र० १:२१:२४, २:९:३-१०, गण० १:४८ ।

(२) आबाध : पीड़ा, क्षति, कष्ट, विपत्ति, खतरा, १:८:१०, १:१६:११ ।

(३) अपदेश : घोषणा, विज्ञप्ति, युक्तिपूर्वक जिरह करना भी अर्थ किया गया है । द्र० ४:८:२ ।

११. (१) अदूष्य : जिसको दूषित अथवा जिसका अतिक्रमण न किया जा सके । अद्रोही द्र० १:१२:१७, ३:१४:२, ५:१:४ ।

पाद टिप्पणी :

१३. (१) तत्कुलीन : द्र० १:१०:३ ।

(२) अपरुद्ध : उपेक्षित, नजरबन्द राजकुमार । द्र० १:१३:१८, १:१८:१३ ।

पाठ भेद :

'कुल्यकुमार' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तुल्य कुमार' पाठभेद मिलती है ।

पाद टिप्पणी :

१४. (१) उपग्रह : समर्थन प्राप्त करना । द्र० १:१८:११, ९:७:२५, २८ गण० १:६७, २:२५१, ३:९३ ।

(२) अभिषिक्तमे : राजा की मृत्यु की घोषणा के पूर्व अभिषेक या राजतिलक कर दिया जाय । अग्नि० २६९:३८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दाण्डकर्मिकवद्वा राज्यकण्टकानुद्धृत्य राज्यं कारयेत् ।

१५. अथवा दाण्ड कार्मिक की तरह राज्य कण्टकों का उन्मूलन कर राज्य कराये।

यदि वा कश्चिन्मुख्यः सामन्तादीनामन्यतमः कोपं भजेत तम् 'एहि, राजानं त्वा करिष्यामि' इत्यावाहयित्वा घातयेत् ।

१६. यदि सामन्तों में कोई प्रमुख क्रुद्ध हो, तो उसे 'आओ तुम्हें राजा बनाऊँगा' उस प्रकार बुलाकर वध करा दे।

आपत्प्रतीकारेण वा साधयेत् ।

१७. अथवा आपत्प्रतीकार की रीति से उसका दमन करे।

युवराजे वा क्रमेण राज्यभारमारोप्यराज्यव्यसनं ख्यापयेत ।

१८. अथवा युवराज पर, क्रमशः राज्यभार डालकर, राज्यव्यसन प्रख्यात करे।

परभूमौ राजव्यसने मित्रेणामित्रव्यंञ्जनेन शत्रोः संधिमवस्थाप्यागच्छेत् ।

१९. अन्य राष्ट्र में राजव्यसन होने पर, अमित्रव्यंजन मित्र के साथ शत्रु की सन्धि करा-कर, आजाय।

सामन्तादीनामन्यतमं वाऽस्यं दुर्गे स्थापयित्वाऽपगच्छेत् ।

२०. अथवा सामन्तादि में किसी एक को उसके दुर्ग में रखकर, चला आये।

पाठ भेद :

'दाण्डकर्मिक' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दाण्ड-धार्मिक' पाठभेद मिलता है।

पाद टिपणी :

१५. (१) दण्डकार्मिकवत : द्र० ५:१ पंचम अधिकरण प्रथम अध्याय। द्र० ५:६:४८, ७:१६: २५, ९:५:२९, ९:६:५।

पाद टिप्पणी :

१६. (१) कोपं : कुपित हो जाना, विद्रोह करना। द्र० १:१३:२०, १:१६:२९, विष्णु० १:१७ ५१।

पाद टिप्पणी :

१७. (१) आपत्प्रतिकार : आपत्ति के विरुद्ध उपाय या आपत्ति का सामना। द्र० ९:५।

पाद टिप्पणी :

१८. (१) राज्यभारं आरोप्य : बिना अभिषेक किए, राज्य का भार देना। यह आज भी होता है।

(२) राज्यव्यसन : राज्य आपदा, राजा की विपत्ति। द्र० १:१७:५३।

पाद टिप्पणी :

१९. (१) राजव्यसन : राजा के मरण रूप विपत्ति की कथा।

(२) अमित्रेण मित्रव्यञ्जनेन : बनावटी शत्रु बने मित्र के साथ।

(३) अमित्र व्यञ्जन : अमित्र बना मित्र। द्र० १:१७:५३, ५:६:१८, २:२:१२।

पाद टिप्पणी :

२०. (१) सामन्त : द्र० १:१०:३, १:२१:३४, २:९:३, १०, ३:२०:१४, ३:८:१, ३:९:२४। ७:१३:२४।

(२) अस्य : तात्पर्य है कि राजा का दुर्ग राजा को मृत्यु के पूर्व विजय कर लिया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुमारमभिषिच्य वा प्रतिव्यूहेत[2] ।

२१. अथवा राजकुमार को अभिषिक्त कर, प्रतिव्यूहन करे ।

परेणाभियुक्तो वा यथोक्तमापत्प्रतीकारं कुर्यात् ।

२२. अथवा शत्रु द्वारा आक्रान्त होने पर, यथोक्त रीति से आपत्प्रतीकार करे ।

एवमेकैश्वर्यममात्यः कारयेदिति कौटिल्यः ।

२३. इस प्रकार अमात्य राजपुत्र का एकैश्वर्य सम्पन्न करायें—यह कौटिल्य का मत है ।

'नैवम्' इति भारद्वाजः ।

२४. 'ऐसा नहीं' यह भारद्वाज का मत है ।

प्रम्रियमाणे वा राजन्यमात्यः कुल्यकुमारमुख्यान् परस्परं मुख्येषु वा विक्रमयेत् ।

२५. अथवा अमात्य राजा के मरणासन्न होने पर, उसके वंशजों, कुमार एवं राष्ट्रप्रमुखों में परस्पर अथवा प्रमुखों में युद्धरत करा दे ।

विक्रान्तं प्रकृतिकोपेन घातयेत ।

२६. विक्रान्त का प्रजाकोप के कारण बध करा दे ।

पाद टिप्पणी :

२१. (१) कुमारं अभिषिच्य : यह शत्रु के दुर्ग में राजकुमार का अभिषेक किया जाता है ।

(२) प्रतिव्यूहेत : विरोधी प्रमाण करे या युद्ध में मुकाबला करे, शत्रु के साथ युद्ध करे । द्र० १२:१:२७ ।

पाद टिप्पणी :

२२. (१) आपत्प्रतिकार : द्र० (९ अधिकरण ३ अध्याय) ।

पाठ भेद :

'अमात्यः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अमात्यं' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२३. (१) एकैश्वर्य : एकराज वंश का आधिपत्य एकाधिकार । द्र० ३:६:१४ ।

पाद टिप्पणी :

२४. (१) भारद्वाज : द्र० १:१७:४-६, गण० १:४१ ।

पाठभेद :

'कुल्यकुमार' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तुल्यकुमार' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) प्रम्रियमाणेः मरना या मरणासन्न ।

(२) विक्रमः आक्रमण करना युद्ध करता निकालना ।

पाद टिप्पणी

२६. (१) विक्रान्तः योद्धा, विजयी, पराक्रमी ।

(२) प्रकृतिकोपः जनता या प्रजा का विद्रोह । द्र० : ६: १: ११, ७: ३: ११, १२: ३: १५,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुल्यकुमारमुख्यानुपांशुदण्डेन वा साधयित्वा स्वयं राज्यं गृह्णीयात् ।

२७. अथवा वंशजों, कुमार एवं राष्ट्र प्रमुखों पर, उपांशु दण्ड आरोपित कर, स्वयं राज्य ग्रहण करे ।

राज्यकारणाद्धि पिता पुत्रान् पुत्राश्च पितरमभिद्रुह्यन्ति, किमङ्ग पुनरमात्यप्रकृतिर्ह्येकप्रग्रहो राज्यस्य ।

२८. राज्य के लिए पिता पुत्र से, पुत्र पिता से, द्रोह करते हैं, फिर अमात्य के विषय में कहना ही क्या, जो राज्य का एक सूत्र होता है ।

तत्स्वयमुपस्थितं नावमन्येत ।

२९. वह स्वयं उपस्थित राज्य की उपेक्षा न करे ।

'स्वयमारूढा हि स्त्री त्यज्यमानाऽभिशपति' इति लोकप्रवादः ।

३०. "भोगार्थं स्वयं उपस्थित स्त्री त्यक्त होने पर शाप देती है" यह लोकप्रसिद्धि है ।

'कालश्च सकृदभ्येति यो नरं कालकाङ्क्षिणम् ।
दुर्लभः स पुनस्तस्य कालः कर्मचिकीर्षतः ॥'

३१. समय की प्रतीक्षा करने वाले पुरुष के पास समय एक बार आता है (उसकी उपेक्षा करने पर) कर्म करने के लिए इच्छुक व्यक्ति को पुनः वह समय दुर्लभ हो जाता है ।

प्रकृतिकोपकमधर्मिष्ठमनैकान्तिकं चैतदिति कौटिल्यः ।

३२. यह कार्य प्रजा को क्रुद्ध करने वाला, अधार्मिक एवं सुनै कान्तिक है—ऐसा कौटिल्य का मत है ।

पाठभेद

'कुल्यकुमार' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रकृतिकुमार' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) उपांशुदण्ड : चुपचाप दण्ड देना या मारना । द्र० १:१३:२०, १:१७:६, गण० ३:१३६, १४४, १९४ ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) अभिद्रुह्यन्ति : शत्रु होकर लड़ते हैं ।

(२) अमात्य : मुख्य मन्त्री ।

(३) एकप्रग्रह : एक समर्थक, एक सहायक या एक ही वंश भी अर्थ किया गया है । द्र० १:१०:३, गण० १:४८ ।

पादटिप्पणी

२९. (१) तत् : राज्य ।

(२) अवमन्येत : उपेक्षा या तिरस्कार न करना । विष्णु० २:१३:४२ ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) स्त्री : राज्यश्री, आलंकारिक भाषा में अर्थ किया गया है ।

(२) लोकप्रवाद : कहावत ।

३१. (१) भारद्वाज : भारद्वाज का उद्धरण यहाँ समाप्त होता है । यह श्लोक किंचित् परिवर्तन के साथ महाभारत तथा तन्त्राख्यायिका में मिलता है । महा० १२: १०४:२० । गण० १:४१ ।

पाठ भेद :

'कोपकमधर्मिष्ठमनै' का तंजौर में 'कोपकर्मधर्मिष्टमानै', देवनागरी अनुलिपि में 'कोपधर्मिष्ठमनै', तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कोपकमधर्मिष्ठमनै' पाठभेद मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजपुत्रमात्मसंपन्नं राज्ये स्थापयेत् ।

३३. आत्मसम्पन्न राजपुत्र के राज्य पर स्थापित करे।

संपन्नाभावेऽव्यसनिनं[1] कुमारं राजकन्यां गर्भिणीं देवीं[2] वा पुरस्कृत्य महामात्रान्[3] संनिपात्य ब्रूयात् 'अयं वो निक्षेपः[4], पितरमस्यावेक्षध्वं सत्त्वाभिजनमात्मनश्च, ध्वजमात्रो[5]ऽयं भवन्त एव स्वामिनः[6], कथं वा क्रियताम्' इति ।

३४. आत्मसम्पन्न राजपुत्र के अभाव में अव्यसनी राजकुमार, राजकन्या अथवा गर्भिणी देवी (रानी) को आगे करके, महामात्यों को एकत्र कर उनसे कहे—"यह आप लोगों के पास निक्षेप है, उसके पिता तथा अपना पराक्रम और कुल देखना, यह ध्वजमात्र है, आपलोग ही स्वामी हैं, अथवा (इस स्थिति में) क्या किया जाय।"

तथा ब्रुवाणं योगपुरुषा[1] ब्रूयुः 'कोऽन्यो भवत्पुरोगादस्माद्राज्ञश्चातुर्वर्ण्य-[2]मर्हति पालयितुम्' इति ।

३५. इस प्रकार कहने वाले अमात्य से योगपुरुष कहें—'आप से अधिष्ठित इसके अतिरिक्त अन्य कौन राजा के चारों वर्ण का पालन करने में समर्थ हो सकता है।'

'तथा' इत्यमात्यः कुमारं राजकन्यां गर्भिणीं देवीं वाऽधिकुर्वीत, बन्धुसंबन्धिनां मित्रामित्रदूतानां च दर्शयेत् ।

३६. 'ऐसा हो' इस प्रकार कहकर अमात्य राजकुमार, राजकन्या अथवा गर्भिणी देवी को अधिकार सम्पन्न करे और बन्धुओं, सम्बन्धियों, मित्रों, शत्रु एवं दूतों को उसका दर्शन कराये।

भक्तवेतन[1]विशेष[2]ममात्यानामायुधीयानां च कारयेत्, 'भूयश्चायं वृद्धः करिष्यति' इति ब्रूयात् ।

३७. अमात्यों एवं आयुधीयों के भक्तवेतन में वृद्धि कराये और कहे—'बड़ा होकर यह पुनः वृद्धि करेगा।'

पाठभेद :

'व्यसनिनं' का भाषाव्याख्यान एवं श्रीमूल में 'व्यसनिनं' तथा 'क्रियताम्' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'क्रियाम्' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी

३४. (१) व्यसनिनः : दुर्व्यसन ग्रस्तादि द्र० १:१४:४।

(२) देवी : रानी।

(३) महामात्र : महामात्य एवं अष्टादश तीर्थ में महामन्त्री।

(४) निक्षेप : धरोहर। मनु० ९:२२५।

(५) ध्वजमात्र : नाम के लिए राजा। गण०

(६) स्वामिनः : वास्तविक राजा।

पाठभेद :

'पालयितुम' का देवनागरी अनुलिपि में 'चालयितुम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३५. (१) योगपुरुष : गुप्तचर। द्र० १:२१:२९, ५:२:३२।

(२) चातुर्वर्ण्य : चारों वर्ण, ब्राह्मण आदि।

पाठ भेद :

'बन्धु संबन्धिनां' का देवनागरी अनुलिपि एवं त्रिवेन्द्रम में 'बन्धु संवन्धिना' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३७. (१) भक्त वेतन : भत्ता और वेतन।

(२) विशेष : अधिक।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं दुर्गराष्ट्रमुख्यानाभाषेत, यथार्हं च मित्रामित्रपक्षम् ।

३८. इसी प्रकार दुर्ग प्रमुखों एवं राष्ट्रप्रमुखों से कहे और यथोचित रूप से मित्र-शत्रुपक्ष से बात करे ।

विनयकर्मणि च कुमारस्य प्रयतेत ।

३९. कुमार के विनयकर्म के प्रति प्रयत्नशील हो ।

कन्यायां समानजातीयादपत्यमुत्पाद्य वाऽभिषिञ्चेत् ।

४०. अथवा समान जातीय पुरुष से कन्या में सन्तान उत्पन्न कराकर उसे अभिषिक्त करे ।

मातुश्चित्तक्षोभभयात्कुल्यमल्पसत्त्वं छात्रं च लक्षण्यमुपनिदध्यात् ।

४१. माता के चित्तक्षोभभयवश, उसके पास कुलीन, अल्पसत्त्व, सौम्य छात्र को नियुक्त कर दे ।

ऋतौ चैनां रक्षेत् ।

४२. ऋतुकाल में उसकी रक्षा करे ।

न चात्मार्थं कंचिदुत्कृष्टमुपभोगं कारयेत् ।

४३. अपने लिए कोई उत्कृष्ट उपभोग सामग्री सम्पन्न न कराये ।

राजार्थं तु यानवाहनाभरणवस्त्रस्त्रीवेश्मपरिवापान् कारयेत् ।

४४. राजा के लिए यान, वाहन, आभरण, वस्त्र, स्त्री, वेश्म एवं शयनासन की उत्तम व्यवस्था कराये ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) मुख्य : मुख्य कर्मचारी, अधिकारी ।

३९. (१) विनय : अनुशासन, नैतिक प्रशिक्षा । द्र० १:५:२, ३, २:१४:५१, ५२ ।

(२) प्रयतेत : प्रयत्नशील होना, नियन्त्रित करना, शिक्षा देना ।

पाद टिप्पणी :

४१. (१) मातुश्चित्त : माता का मन, चित्त का विचार ।

(२) अल्पसत्त्व : अनुत्साही कुटुम्ब का सदस्य ।

(३) छात्रं : कुल से भिन्न छात्र, इसका तात्पर्य युवक या लड़का से है ।

(४) लक्षण्य : चिह्न युक्त ।

पाठभेद :

'ऋतौ का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ऋतेन' का पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणो :

४२. (१) ऋतु : ऋतु काल ।

पाठभेद :

'कांचिद' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कश्चिद' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) भरण : आभरण ।

(२) परिवाप : व्यक्तिगत सम्पत्ति या पिता की सम्पत्ति । द्र० १:१६:५, २:२४:२८, २:२६:१, ३:३:३, ३:६:६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यौवनस्थं च याचेत विश्रमं चित्तकारणात् परित्यजेदतुष्यन्तं तुष्यन्तं चानुपालयेत् ।

४५. राजकुमार के युवक होने पर, उसका मनोगत अभिप्राय जानने की इच्छा से उससे अपने कार्य से विश्राम की याचना करे, असन्तुष्ट होने पर अर्थात् जाने की स्वीकृति देने पर, उसे त्याग दे तथा सन्तुष्ट होने पर अर्थात् अवकाश न देने पर, उसका पालन करे ।

निवेद्य पुत्ररक्षार्थं गूढ़ सारपरिग्रहान् ।
अरण्यं दीर्घसत्त्रं वा सेवेतारुच्यतां गतः ।।

४६. राजा की अपने प्रति अरुचि होने अथवा अपनी ही अमात्यकर्म में अरुचि हो जाने पर, पुत्र के रक्षार्थ (उसके पिता द्वारा स्थापित) गूढ पुरुषों, मूलवल एवं गुप्तनिधि को उसे बता कर अरण्य में चला जाय या दीर्घकालीन यज्ञ का सेवन करे ।

मुख्यैरवगृहीतं वा राजानं तत्प्रियाश्रितः ।
इतिहासपुराणाभ्यां बोधयेदर्थशास्त्रवित् ।।

४७. अथवा मातुलादि प्रमुखजनों के वशीभूत राजा को अर्थशास्त्र वेत्ता अमात्य, उसके प्रियजनों के आश्रय में रहकर, इतिहास पुराणों से तत्त्वज्ञान कराये ।

सिद्धव्यञ्जनरूपो वा योगमास्थाय पार्थिवम् ।
लभेत लब्ध्वा दूष्येषु दाण्डकर्मिकमाचरेत् ।।

४८. अथवा वह सिद्ध व्यंजन स्वरूप धारण कर, कपट का आश्रय लेकर, राजा को स्वाधीन करे, तत् पश्चात् दूष्यों पर, दाण्डकार्मिक नीति का प्रयोग करे ।

पाठ भेद :

'यौवनस्थं' को तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यौवनं च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) यौवनस्थ : युवावस्था प्राप्त होने पर ।

पाठभेद :

'गूढसार' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'गूढासार' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) सार : द्र० १०:५:४३, ४९, २:५:८, २:७:२, २:१२:१ ।

(२) परिग्रह : परिचायक से यहाँ तात्पर्य है ।

(३) अरुच्यता : नापसन्द करना ।

पाठभेद :

'इतिहासपुराणाभ्यां' का तंजौर में 'इतिवृत्तपुराणाभ्यां' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'इतिपूरणाभ्यां' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'इतिवृत्तपुराणाभ्यां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) सिद्धव्यञ्जन : सिद्ध पुरुष का भेष बनाकर । द्र० १:११:१६, २:१५:२४, २:६:१३, १५, २:८:१८, २१, १३:२:७, १२ । गण० १:११:

(२) योग : गुप्त उपाय या कपट । द्र० १:१६: ३४, ५:१:३४, ७:६:४१, ९:१; १५, १२:४:३१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति योगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे राज्यप्रतिसंधानम् एकैश्वर्यं च षष्ठोऽध्यायः । आदितः षण्णवतितमः ।

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य योगवृत्तं पञ्चममधिकरणं समाप्तम् ।

पंचम अधिकरण में योगवृत्त के अन्तर्गत राज्य प्रतिसंधान और एकैश्वर्य सम्बद्ध षष्ठ अध्याय समाप्त। आदि से छानवे अध्याय समाप्त। यहाँ कौटिलीय अर्थशास्त्र का योगवृत्त एवं पंचम अधिकरण समाप्त।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री में—इति कौटलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमाधिकरणे षष्ठोऽध्यायः राज्यप्रतिसन्धानम् एकैश्वर्यम्, आदितः षण्णवतितमः। गएतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य योगवृत्तं पञ्चममधिकरणं समाप्तम्।

मैसूर संस्करण में—इति योगवृत्ते राज्यप्रतिसन्धानं एकैश्वर्यं च षष्ठोध्यायः आदितष्षण्णवतिः एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य योगवृत्तं पञ्चममधिकरणं समाप्तम्।

वसाक संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे योगवृत्ते पञ्चमेऽधिकरणे षष्ठोऽध्यायः राज्यप्रतिसन्धानं एकैश्वर्यम्। आदितष्षण्णवतिः। एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य योगवृत्तं पञ्चमधिकरणं समाप्तम्।

उदयवीर शास्त्री में—इति योगवृत्ते पंचमेऽधिकरणे राज्यप्रतिसंधानम् एकैश्वर्यम् षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ आदितः षण्णवतितमः ॥९६॥ एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य योगवृत्तं पंचममधिकरणं समाप्तम् ॥५॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १

मण्डलयोनिः षष्ठमधिकरणम्

षण्णवतितमं प्रकरणम्–प्रकृतिसंपदम्

छान्बे प्रकरण–प्रकृतिसम्पद्

स्वा[1]म्यमा[2]त्यजन[3]पद[4]दुर्ग[5]कोश[6]दण्ड[7]मित्राणि प्रकृतयः ।

१. स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश, दण्ड, मित्र ये (सप्त) प्रकृतियाँ है ।

तत्र स्वामिसंपत्[1] ।

२. उनमें स्वामी की सम्पदा ।

महा[1]कुलीनो दैव[2]बुद्धि[3]सत्वसंपन्नो[4] वृद्ध[5]दर्शी धार्मिक[6]ः सत्य[7]वागविसंवादक[8]ः कृतज्ञ[9]ः स्थूल[10]लक्षो महोत्सा[11]होऽदीर्घसूत्र[12]ः शक्य[13]सामन्तो दृढ़[14]बुद्धिरक्षु[15]द्रपरिषत्को विनय[16]काम इत्याभिगामिका गुणाः ।

३. महाकुलीन, दैव सम्पन्न, बुद्धिसम्पन्न, सत्वसम्पन्न, वृद्धदर्शी, धार्मिक, सत्यवाक्, अविसंवादक, कृतज्ञ, स्थूललक्ष, महोत्साही, अदीर्घसूत्री, शक्यसामन्त, दृढ़बुद्धि अक्षुद्रपरिषद्वाला, विनयेच्छुक—ये स्वामी के आभिगामिक गुण हैं ।

पादटिप्पणी :

छठे अधिकरण में राजा के मण्डल तथा उनकी प्रकृतियों का वर्णन किया गया है । मण्डलयोनि षाड्गुण्य का आधार है । द्र० ७:१:१, सूत्र १-६ में आदर्श जनपद का वर्णन कौटिल्य ने किया है ।

१. (१) स्वामि : राजा ।

(२) अमात्य : मन्त्री । द्र० ६:१:८:१, २:२:२९; स्कन्द० ६:४:१३ ।

(३) जनपद : भूमि राज्य या राष्ट्र । द्र० १:९: १, ३ ।

(४) दुर्ग : ६ प्रकार के दुर्ग कहे गए हैं—(१) धन्व दुर्ग, (२) महीदुर्ग (३) नर दुर्ग (४) वृक्षदुर्ग (५) अंबुदुर्ग (६) गिरिदुर्ग । द्र० २:४:१–३२ । वायु० ८:९:१०८, ब्रह्माण्ड० २:७:९२, मत्स्य० १०:३२, महा० १२:५६:३५, गण० १:१२ ।

(५) कोश : खजाना । द्र० १:२०:२, ८:४:४९ अग्नि० २:२३:१४ ।

(६) दण्ड : सेना, द्र० १:५:१, अग्नि० २२३:१

(७) मित्र : मित्र तीन प्रकार के होते हैं । (१) वंशपरंपरागत मित्र (२) शत्रु का शत्रु मित्र एवं (३) कृत्रिम मित्र ।

पादटिप्पणी :

आदर्श राजा का वर्णन कौटिल्य ने सूत्र २-६ में किया है ।

२. (१) स्वामि संपत् : राजा की गुण सम्पदा । द्र० १:१५, ३:११: ५०, ४:९:४३, ६:१:१ ।

पाठ भेद :

'दैवबुद्धिसत्त्व' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दैव-बुद्धिःसत्त्व' तथा 'स्थूललक्षों' का तंजौर में 'स्थूल-दक्षो', तथा 'हठबुद्धिरः' का भाषा व्याख्यान में 'दृढ़-भक्तिर्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) महाकुलीन : उच्चकुल में सम्भूत, जायमान । द्र० १:१३:१८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शुश्रूषाश्रवणग्रहणधारणविज्ञानोहापोहतत्त्वाभिनिवेशाः प्रज्ञागुणाः ।

४. शुश्रूषा, श्रवण, ग्रहण, धारण, विज्ञान, ऊह, अपोह, एवं तत्त्वाभिनिवेश प्रज्ञागुण हैं।

शौर्यममर्षः शीघ्रता दाक्ष्यं चोत्साहगुणाः ।

५. शौर्य, अमर्ष, शीघ्रता और दाक्ष्य ये उत्साह गुण हैं।

---

(२) दैवसम्पन्न : दैवीबुद्धि, शुभ कर्मयुक्त या विशिष्ट । द्र० १:९:९; २:१०:४४।

(३) बुद्धिसम्पन्न : शुच या जायमान, जनित बुद्धियुक्त।

बुद्धि महत् का बोधक शब्द है। इसके चार अंग हैं, (१) ज्ञान, (२) वैराग्य, (३) ऐश्वर्य (४) धर्म। वायु० १:२:२१. ४:३४, ४९, ७४।

(४) सत्त्वसम्पन्न : विपत्ति तथा सम्पत्ति में धैर्यशाली। द्र० २:१०:१६, गण० ३:१३२ ।

(५) वृद्धदर्शी : विद्या वृद्धजनों का सेवक, ज्ञानादि विषयों में अभिज्ञजन के मतों का ग्रहण करने में समर्थ।

(६) धार्मिक : धार्मिक, धर्मात्मा, धर्मशील।

(७) सत्यवाक् : सत्यवादी।

(८) अविसंवादक : सत्य प्रतिज्ञ, कर्म एवं वचन की एकरूपता, जो वचन से प्रकट हो।

(९) कृतज्ञ : परोपकार का स्मरण करनेवाला।

(१०) स्थूललक्ष : महान दाता, बहुप्रद या महादाता।

(११) महोत्साही : असाधारण उत्साही, प्रकृष्ट व्यवसायशील या कार्य उत्साही।

(१२) शक्यसामन्त : सरलता से आर्यों की सम्पत्ति को वश में करने वाला। सहज सामन्त गण को वश करके सरलता से जिया जा सके। दुर्बल। द्र० ६:१:८, ७:१०:९, १३:४:६।

(१३) हठबुद्धि : हठ, निश्चयी।

(१४) अक्षुद्रपरिषत्को : गुणी अमात्यादि परिषदों से युक्त।

(१५) विनय : नई-नई शिक्षा पाने का इच्छुक द्र० १:५:२:३।

(१६) अदीर्घसूत्र : द्रुतगति या क्षिप्र कार्य करना।

पाठभेद :

'भिनिवेशाः' का देवनागरी अनुलिपि में 'भिनिवेशः' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

प्रज्ञा के गुण ८ हैं।

४. (१) शुश्रूषा : शास्त्र श्रवण की अभिलाषा, इच्छा। द्र० १:५:५, गण० १०:१:३४ ।

(२) श्रवण : किसी की बात को ध्यान से सुनना, शब्द का श्रवण या बोध। द्र० ३:११:८।

(३) ग्रहण : बात सुनकर हृदयंगम करना अर्थ का अवगम या बोध। शब्द का अर्थ समझना प्रत्येक बात को समझना।

(४) धारण : सुनी बात को स्मरण रखना। गृहीत विषय का अर्थ स्मरण। सभी बातों को स्मरण रखना। वायु० ३०:५४, ११:३३:६४ । गण० १:२४।

(५) विज्ञान : किसी विषय का विशेष ज्ञान।

(६) ऊह : किसी विषय को समझने के लिए तर्क करना। गण १:३४।

(७) अपोह : दूषित काम का परित्याग या तर्क बुद्धि द्वारा शंका निवारण।

(८) तत्वाभिनिवेश : सत्य के प्रति निष्ठा। गण० १:३३, द्र० १:१०:७, ३:११:४३।

पादटिप्पणी :

५. (१) शौर्य : निर्भीकता या भयरहित पराक्रम।

(२) अमर्ष : पापाचार में असहिष्णुता या असहनशीलता। द्र० १:१४:७, विष्णु० ४:४:४८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाग्मी[1] प्रगल्भः[2] स्मृतिर्[3]मतिर्[4]बलवान्[5]उदग्रः[6] स्ववग्रहः[7] कृतशिल्पो[8]ऽव्यसनो[9] दण्डनाय्युपका[10]रापकारयो[11]र्दृष्टि[12]प्रतीकारी [13]ह्रीमानापत्कृत्योर्वि[14]नियोक्तादीर्घदूरदर्शी देशकालपुरुषकारकार्यप्रधानः संधिविक्रमत्यागसंयमपणपरच्छिद्रविभागी संवृतोऽदीनाभिहास्यजिह्मभ्रुकुटीक्षणः कामक्रोधलोभस्तम्भचापलोपतापपैशुन्यहीनः शुक्लः स्मितोदग्राभिभाषी वृद्धोपदेशाचार इत्यात्मसंपत् ।

६. वाग्मी, प्रगल्भ, स्मृतिमान्, मतिमान्, बलवान्, उदग्र स्ववग्रह, कृतशिल्प, अव्यसनी, दण्डनायी, उपकारापकार में दृष्टप्रतीकारी, ह्रीमान्, आपत्कृत्यों में समुचित विनियोक्ता, दीर्घदूरदर्शी, देश, काल, पुरुषकार एवं कार्य को महत्त्व देने वाला, संधि, विक्रम, त्याग, संयम, पणपर एवं परच्छिद्र का विभाजन करने में समर्थ, संवृत, दीनों का उपहास न करने वाला, अकुटिल, सौम्यदर्शी, काम, क्रोध, लोभ, स्तम्भ, चापल, अवताप एवं पेशुन्य रहित, प्रियंवद, स्मितपूर्वक उदारभाषी तथा वृद्धोपदेशानुसार आचरणशील होना—आत्मसंपदा है ।

वायु० ८६: २११ । ब्रह्मा० ३:६४: २१९, आग० ९:१२, ६:१७ ।

(३) शीघ्रता : तत्परता, कार्य साधन या कार्य सम्पादन में तत्परता, शीघ्रकारी ।

(४) दाक्ष्यं : नैपुण्य, सभी कार्यों में निपुणता ।

पाठभेद :

'वाग्मी प्रगल्भः' का तंजोर में 'पग्मिप्रगल्भः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रज्ञाप्रगल्भः' एवं 'ऽव्यसनो' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्यसने' पाठभेद मिलता है । 'दण्डनाप्युप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दण्डनाडुप' 'संवृतोऽदीना' का संवृतादीना' तथा 'शुक्लःस्मितो' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शक्यस्मितो', देवनागरी अनुलिपि में 'शुक्लस्मितो', त्रिवेन्द्रम में 'शवलस्मितो' पाठभेद मिलता है ।

६. (१) वाग्मी : अर्थयुक्त भाषण करने में समर्थ ।

(२) प्रगल्भ : भाषण करते समय न घबड़ाने वाला । साहसी निःशंक, सभा में भाषण करते समय कम्प रहित । द्र० १:११:७, १:१२:४ ।

(३) स्मृति : अतीत के कार्यों को स्मरण रखने वाला ।

(४) मतिमान् : भविष्य की बातों को सोचने वाला । आगामी विषय का मनन करना ।

(५) बलवान् : शारीरिक बल सम्पन्न, ।

(६) उदग्र : उन्नत विचारयुक्त, उन्नत चित्त । गण० २:२२६ ।

(७) स्ववग्रह : सहज ही कुकृत्य से लौट पड़ने वाला । सहज से अकार्य होने पर निवारण योग्य, संयम । गण० १:४५, २:३२५ ।

(८) कृतशिल्प : हाथी आदि पर चढ़ने, आयुधादि धारण आदि कला में अभ्यस्त या निपुण, जिसने शिल्प की शिक्षा लिया है ।

(९) व्यसन : अपने तथा शत्रु पर आए हुए संकट को व्यसन कहते हैं । द्र० १:१४:४, २:१६:३०, गण० ३:२ ।

(१०) दण्डनायी : अपना तथा अपनी सेना का रक्षक तथा सेना द्वारा संकट शमन करने में समर्थ ।

(११) उपकार : अनुग्रह. आभार, याज्ञ० ३:२८४, २८ ।

(१२) अपकार : उपकार के विरुद्ध, अग्नि० २५८:२८ ।

(१३) ह्रीमान : लज्जा शील, कुकृत्यके सम्बन्ध में लज्जालु अकरणीय कार्य में लज्जालु ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अमात्यसंपदुक्ता पुरस्तात् ।

७. अमात्य सम्पदा पहली कही गयी है।

मध्ये चान्ते च स्थानवानात्मधारणः परधारणश्चापदि स्वारक्षः स्वाजीवः शत्रुद्वेषी शक्यसामन्तः पङ्कपाषाणोपरावर्षमकण्टकश्रेणीव्यालमृगाटवीहीनः कान्तः

८. मध्यभाग तथा सीमा में दुर्गयुक्त होना, स्वदेशीय एवं परदेशीयजन के भरण-पोषण में सक्षम, आपत्तिकाल में रक्षावान्, उचित जीविका युक्त, राजशत्रु द्वेषी जनयुक्त, दुर्बल सामन्त

---

(१४) अपकृत्याविनियोग : दुर्भिक्षादि विपत्तियाँ।

(१५) दीर्घ : दूरदर्शी या दूर तक सोचने वाला। गण० २:२१५।

(१६) देश काल पुरुषकार कार्यप्रधान : नियुक्ति के समय देश काल और पुरुषार्थ को समझकर कार्य करने वाला।

(१७) सन्धिविभागी : शत्रु के साथ सन्धि करने में निपुण या शत्रु के साथ सन्धि प्रयोग के विषय में चतुर।

(१८) विक्रमविभागी : शत्रु के साथ युद्ध करने में कुशल या शत्रु के साथ विग्रह विषय में जानकार या प्रकाश युद्ध में समर्थ।

(१९) त्यागविभागी : सुपात्र को दान देने वाला।

(२०) संयम विभागी : कुकृत्य से आत्म संयम करने में समर्थ।

(२१) पणविभागी : प्रतिज्ञा या सन्धि पालक।

(२२) परछिद्रविभागी : शत्रु के व्यसन आदि पर लक्ष्यकारी या निगाह रखने वाला।

(२३) संवृत : मन्त्रणा को गोपनीय रखने में समर्थ या गूढ़ मन्त्रादि रक्षक।

(२४) दीनाभिहास्य : दीनों की दीनता सहन में असमर्थ, या उनकी दीनता पर हँसने वाला।

(२५) जिह्म : वक्र।

(२६) भ्रुकुटीक्षण : वक्र भृकुटी से न देखने वाला।

(२७) काम : कामना, इच्छा, अनुराग, विषय भोग की इच्छा। द्र० १:६:१।

(२८) क्रोध : कोप, अमर्ष, दोष।

(२९) लोभ : लोलुपता, लालच, लिप्सा।

(३०) स्तम्भ : गर्व। द्र० १:९:१, ३, ८:४:३० गण० ३:१२१।

(३१) चापल : बिना सोचे समझे कार्य करना, अस्थिरता, चंचलता, अविवेक के साथ कार्य करना।

(३२) उपताप : प्रजा के प्रति द्रोहाचरण या प्रजा को तंग करना।

(३३) पैशुन्यहीन : खल पुरुष के व्यवहार से हीन, खल व्यवहार से शून्य। मनु ७:४८; ११:५५।

(३४) शुक्ल : प्रियभाषी या प्रियवादी।

(३५) स्मितोदग्राभिभाषी : कर्कश विषय पर भी मुस्कराहट के साथ कार्य करने वाला।

(३६) वृद्धोपदेशचार : विद्या वृद्ध पुरुषों के उपदेश पर चलने वाला।

(३७) आत्मसंपत् : व्यक्तिगत गुण।

पादटिप्पणी :

७. (१) पुरस्तात् : पहले, पूर्व। द्र० १:९:२।

पाठभेद :

'गव्यः पौरुषेयो' का देवनागरी अनुलिपि में 'गम्यपौरुषेयो' तथा 'दण्डकर''''वर्णप्रायो' पर्यन्त तक का भाग तेलगू अनुप्रतिलिपि में नहीं है।

पाद टिप्पणी :

८. (१) स्थान : शक्ति की अवस्था दुर्ग आदि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सीताखनिद्रव्यहस्तिवनवान् गव्यः पौरुषेयो गुप्तगोचरः पशुमानदेवमातृको वारिस्थलपथाभ्यामुपेतः सारचित्रबहुपण्यो दण्डकरसहः कर्मशीलकर्षकोऽबालिशस्वाम्यवरवर्णप्रायो भक्तशुचिमनुष्यइति जनपदसंपत् ।

वाला, पङ्क, पाषाण, ऊऊर विषम कण्टक, श्रेणी, व्याल मृग एवं अटवीरहित होना, रमणीय, सीता, खनि, द्रव्यवन, हस्तिवनयुक्त, गोहितकर, पुरुषहितकर, सुरक्षित गोचरयुक्त, पशुमान् अदेवमातृक, वारिपथ एवं स्थलपथयुक्त, बहुमूल्य अनेक प्रकार के पण्यसमूहवाला, दण्ड-कर सहनशील, कर्मशील कृषकयुक्त, बुद्धिमान स्वामीयुक्त, अधमवर्ण बाहुल्यवाला, भक्तिमान् एव पवित्र मनुष्य वाला होना—जनपदसंपत् है ।

दुर्गसंपदुक्ता पुरस्तात् ।

९. दुर्गसंपदा पहले कही गई है ।

धर्माधिगतः पूर्वैः स्वयं वा हेमरूप्यप्रायश्चित्रस्थूलरत्नहिरण्यो दीर्घामप्यापदमनायतिं सहेतेति कोशसंपत् ।

१०. पूर्वजों अथवा स्वयं द्वारा धर्ममार्ग से अर्जित धनयुक्त, प्रचुर हेम एवं रूप्ययुक्त, बहुविध स्थूल रत्नों एवं हिरण्य से पूर्ण, दीर्घकालीन सम्पदा एवं अनायति को सहने में सक्षम होना—कोशसंपत् है ।

---

(२) कण्टक : चोर आदि । गण० १:२४७, २:११६ ।

(३) सीता : कृषियोग्य भूमि । गण० १:७, २३०, २:३५० ।

(४) द्रव्यवन : काष्ठादि । गण० १:५० ।

(५) देवमातृका : वर्षा जल पर ही निर्भर रहने वाला ।

(७) दण्ड : जुर्माना ।

(८) बालिश : बच्चे जैसा, मूर्ख मनु० ३:१७६ ।

(९) स्वामी : राजा द्र० ७:१०:२३,२५ ।

(१०) अवरवर्ण : शूद्र द्र० २:१:२ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) दुर्ग : द्र० दुर्गविधान प्रकरण ।

(२) पुरस्तात् : द्र० ६:१:२,३ ।

१०. (१) धर्माधिगत : धैर्यपूर्वक , प्राप्त संचित ।

(२) पूर्वैः : पूर्वजों से ।

(३) स्वयं : निज ।

(४) हेम : सोना गण० ३:२१५ ।

(५) रूप्य : चाँदी ।

(६) स्थूलरत्न : बड़े जवाहिरात ।

(७) हिरण्य : नगद ।

(८) दीर्घ : लम्बाकाल ।

(९) अनायति : आय का न होने की स्थिति या धन का व्यय होना । द्र० २:९:१०,११ गण० २:२३ ।

(१०) सहेतेति : सहन करना ।

(११) कोशसंपत् : राजकोष के गुण हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पितृपैतामहो नित्यो वश्यस्तुष्टभृत्यपुत्रदारः प्रवासेष्वविसंवादितः सर्वत्राप्रतिहतो दुःखसहो बहुयुद्धः सर्वयुद्धप्रहरणविद्याविशारदः सहवृद्धिक्षयिकत्वादद्वैध्यः क्षत्रप्राय इति दण्डसंपत् ।

११. पिता-पितामह की परम्परा से प्राप्त. नित्य, वश्य, सन्तुष्ट भृत्य-पुत्रदारयुक्त, प्रवास में भी अविसंवादित सर्वत्र अप्रतिहत, दुःख सहने में सक्षम, बहुयुद्ध परिचित, समस्त युद्धों एवं प्रहरणविद्या में चतुर, स्वामी के समान हानिलाभ का भागी होने से भेदरहित एवं प्रचुर क्षत्रिययुक्त होना—दण्डसंपत् है ।

पितृपैतामहं नित्यं वश्यमद्वैध्यंमहल्लघुसमुत्थमिति मित्रसंपत् ।

१२. पितृपितामह की परम्परा से प्राप्त, नित्य वश्य, अद्वैध्य, प्रभु-मन्त्रोत्साह युक्त, सद्यः सहाय्य हेतु उद्यत होना—मित्रसंपदा है ।

अराजबीजी लुब्धः क्षुद्रपरिषत्को विरक्तप्रकृतिरन्यायवृत्तिरयुक्तो व्यसनी निरुत्साहो दैवप्रमाणो यत्किंचनकार्यगतिरननुबन्धः क्लीबो नित्यापकारी चेत्यमित्रसंपत् ।

१३. अराजबीजी, लुब्ध, क्षुद्रपरिषद्युक्त, विरक्त प्रकृति, अन्यायवृत्ति, अयुक्त, व्यसनी, निरुत्साही, देवप्रमाण, यत्किचनंकारी, अशरण, अननुबन्ध, क्लीब एवं नित्य अपकारी होना—अमित्र संपत् है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) भृत्य : यहाँ सैनिक से तात्पर्य है मुख्यतः पेशेवर या किराए पर, लाए गए सैनिक । द्र० ९:३:३ ।

(२) प्रवास : अभियान । गण० ३:९७ ।

(३) विसंवादित : निराश, विफलीकृत धोखा देने वाला, धूर्त ।

(४) प्रतिहत : मारा हुआ, पकड़ा हुआ ।

(५) प्रहरण : प्रहार करना आक्रमण करना । गण० ३:१३५,१४२ ।

(६) अद्वैध्यं : अपना कोई अलग स्वार्थ न होने पर द० ७:९:४३ ।

(७) क्षत्र : क्षत्रिय जाति ।

१२. (१) वश्य : वंशग्रह, नियन्त्रण ।

(२) अद्वैध्यं : द्र० ७:१:११, गण० २:२२८ ।

(३) मित्रसंपत् : द्र० ७:९:९,३८ ।

पाठभेद :

'अराजवीजीलुब्धः' का तंजौर में 'अराजवीजलुब्धः' तथा 'अननुबन्धः' का देवनागरी अनुलिपि में 'अनुबन्धः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) अराजवीजी : अराजवंशीय । गण० ३:३१० ।

(२) लुब्ध : लोभी ।

(३) अयुक्त : निष्ठावान न हो ।

(४) दैवप्रमाण : भाग्यवादी । द्र० ३:२०:१७ ।

(५) अगति : बिना सहायता या समर्थन के ।

(६) अनुबन्ध : बिना साथियों के या बिना अनुकरण वालों से सम्बन्धहीन । अनुबन्ध का अर्थ बन्धन भी होता है । द्र० ९:७:१४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं भूतो हि शत्रुः सुखः समुच्छेत्तु[1] भवति ।

१४. इस प्रकार का शत्रु सुखोच्छेद्य होता है ।

अरिवर्जाः प्रकृतयः सप्तैताः स्वगुणोदयाः ।
उक्ताः प्रत्यङ्गभूतास्ताः प्रकृता राजसंपदः ॥

१५. शत्रु को छोड़कर अन्य स्वगुण युक्त सात प्रक्रतियों का कथन किया गया। परस्पर उपकार गुणयुक्त होने के कारण वे प्रत्यङ्गभूत हैं अतः अपनी प्रक्रिया में लगी हुई वे राजसंपदा कही गई है।

संपादयत्यसंपन्नाः प्रकृतीरात्मवान्नृपः ।
विवृद्धाश्चानुरक्ताश्च प्रकृतिर्हन्त्यनात्मवान् ॥

१६. आत्मवान् नृपति गुण रहित प्रकृति को गुणयुक्त बना देता है और अनात्मवान् नृपति गुणयुक्त एवं अनुरक्त प्रकृति को विनष्ट कर देता है ।

ततः स दुष्टप्रकृतिश्चातुरन्तोऽप्यनात्मवान् ।
हन्यते वा प्रकृतिभिर्याति वा द्विषतां वशम् ॥

१७. उसी दोष के कारण अनात्मवान् दुष्ट प्रकृति राजा चारों समुद्र पर्यन्त पृथ्वी का शासक होकर, भी प्रकृति द्वारा मार डाला जाता है अथवा शत्रुओं के वश में कर दिया जाता है।

आत्मवांस्त्वल्पदेशोऽपि युक्तः प्रकृतिसंपदा ।
नयज्ञः पृथिवीं कृत्स्नां जयत्येव न हीयते ॥

१८. आत्मवान एवं नीतिज्ञ राजा स्वल्पदेश का स्वामी होकर भी प्रकृति सम्पदा से युक्त होने के कारण सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत लेता है। कभी क्षीण नहीं होता।

पादटिप्पणी :

१४. (१) उच्छेत्तुं : नष्ट या नाश करने के लिए।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अरिवर्जं : शत्रु के अतिरिक्त ।

(२) राजसंपद : राजा के गुण या समृद्धि ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) आत्मसंपन्न : आत्मवान शब्द से प्रतीत होता है कि यह सूत्र वृहस्पति से लिया गया है।

(२) प्रकृति : राजप्रकृति !

पादटिप्पणी :

१७. (१) दुष्ट प्रकृति : दोषयुक्त, राज्य की प्रकृति से तात्पर्य है।

(२) चतुरन्त : चारों समुद्र तक विस्तृत । द्र० १:६:४ ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) आत्मवांन् : द्र० १:२१:२९ ।

(२) स्वल्पदेश : छोटाराज्ज ।

(३) कृत्स्नां : सम्पूर्ण ।

(४) हीयते : कभी नहीं क्षीणता प्राप्त करना। उक्त विचार कामन्दक ने से लिखा है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति मण्डलयोनौ षष्ठेऽधिकरणे प्रकृतिसंपदः प्रथमोऽध्यायः। आदितः सप्तनवतितमः।

षष्ठ अधिकरण के अन्तर्गत मण्डलयोनि में प्रकृति सम्पदा सम्बद्ध प्रथम अध्याय समाप्त।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री में—इति कोटलीयार्थशास्त्रे-मण्डलयोनौ षष्ठाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः प्रकृतिसम्पदः, आदितः सप्तनवतितमः ॥

मैसूर संस्करण में—इति मण्डलयोनौ षष्ठेऽधिकरणें प्रकृतिसम्पदः प्रथमोऽध्यायः आदितस्सप्तनवतितमः।

वसाक संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे-मण्डलयोनौ षष्ठेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः प्रकृतिसम्पदः, आदितस्सप्तनववतितमः।

उदयवीर शास्त्री में—इति मण्डलयोनौ षष्ठेऽधिकरणे प्रकृतिसंपदः प्रथमोऽध्यायः ॥१॥ आदितः सप्तनतितयः ।९७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय २

(सप्तनवतितमं प्रकरणम्–शमव्यायामिकम्)

सत्तानवे प्रकरण–शमव्यायामिक

शम[1]व्यायामौ योग[3]क्षेम[4]योर्योनिः[5] ।

१. क्षेम का शम तथा योग का व्यायाम कारण होता है ।

कर्मारम्भाणां योगाराधनो व्यायामः ।

२. स्वदेश में दुर्गादि तथा अन्य देश में सन्ध्यादि का कुशल पुरुषों एवं सहायक सामग्रियों के साथ सम्बन्ध साधक व्यायाम होता है ।

कर्मफलोपभोगानां क्षेमाराधनः शमः ।

३. कर्मफलोपभोगों का क्षेमाराधन (विघ्नविघात का साधक) शम होता है ।

शमव्यायामयोर्योनिः षाड्[2]गुण्यम् ।

४. शम, व्यायाम की योनि षाड्गुण्य होता है ।

क्षय[1]: स्थान[2]ं [3]वृद्धिरित्युदया[4]स्तस्य ।

५. क्षय, स्थान एवं वृद्धि उसके उदय (फल) होते हैं ।

पादटिप्पणी :

राज्य के मण्डल की प्रकृति पर इस अध्याय में विचार किया गया है ।

१. (१) शम : शान्ति, शान्त होना । मनु० २:९४ द्र० ७:१७:१, २ गण० १:१४, १६४, २:२३०, २४९; २:१२७ ।

(२) व्यायाम : कर्मोद्योग; २:१:३०, १:१६:३९, ६:३:३, १०:४:१६, गण० १:१४; ३:२३०: ३:२५ ।

(३) योग : अप्राप्त वस्तु का लाभ । द्र० १:८:९, १:४:३, २:५:२, ८:२:७ ।

(४) क्षेम : प्राप्त वस्तु का यथावत् उपयोग कुशल, कल्याण । गण० १:२१५ । मनु० २:१२७; स्कन्द ७:१:३३६ ।

(५) योनि : स्रोत, उद्गम । द्र० २:१०:५०, ४:७:२८, गण० ३:२१० ।

पादटिप्पणी :

२. (१) आराधन : प्रसन्नता, सन्तोष, सेवा, उपासना, क्रियाशीलता । द्र० ६:२:३, ७:१७:१२ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) योनि : स्रोत, उद्गम ।

(२) षाड्गुण्यम् : (१) सन्धि, (२) विग्रह, (३) यान, (४) आसन (५) संश्रय, (६) द्वैधीभाव, द्र० ७:१:२, गण० २:२३ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) क्षय : अवनति ।

(२) स्थान : उसी अवस्था में रहना, स्थिरता, यथावत् ।

(३) वृद्धि : उन्नति ।

(४) उदय : फल या परिणाम । द्र० २:९:४, ३:१६:१८, १९, ३:१२:२५, २६, २७, ३० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानुषं नयापनयौ, देवमयानयौ ।

६. नय, अपनय मानवकर्म तथा अय एवं अनय दैवकर्म होते हैं।

दैवमानुषं हि कर्म लोकं यापयति ।

७. दैव-मानुष कर्म लोकयात्रा सम्पन्न कराते हैं।

अदृष्टकारितं दैवम् ।

८. अदृष्ट (भाग्य या धर्माधर्म) द्वारा सम्पादित कर्म दैव होता है।

तस्मिन्नष्टेन फलेन योगोऽयः, अनिष्टेनानयः ।

९. उसके सम्पन्न होने पर अभीष्ट फल प्राप्ति अय तथा अनिष्ट फल प्राप्ति अनय कहा जाता है।

दृष्टकारितं मानुषम् ।

१०. दृष्ट (प्रभु मन्त्रादि) द्वारा सम्पादित कर्म मानुष होता है।

तस्मिन् योगक्षेमनिष्पत्तिर्नयः, विपत्तिरपनयः ।

११. उसके सम्पन्न होने पर, योग क्षेम की सिद्धि; नय तथा विपत्ति आने पर अपनय कहा जाता है।

पाठभेद :

'मानुषं नयाप' का देवनागरी अनुलिपि में 'मानुष-नयाप' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६. (१) मानुष : मानुष कर्म या नीति।

(२) नय : नीति। द्र० १:२:११, ६:१:१८, ६:२:११। गण० १:२७, २:२३।

(३) अपनय : दुर्नीति। द्र० ८:१:२, ९:५:३, ९:७:१, ११:१:१३। गण० १:२७:२: २३१, ३:७३।

(४) देव : अप्रत्यक्ष, अदृश्य जैसे भाग्य।

पाठ भेद :

'यापयति' का तंजौर में 'यावति' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अवति' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

७. (१) यापयति : कराना, या चलाते रहना। द्र० ७:१४:१०।

जनपद सम्मत गुण का विवेचन।

पादटिप्पणी :

८. (१) अदृष्ट : अदृश्य, अज्ञात, नियति, प्रारब्ध।

पाठ भेद :

'तस्मिन्नष्टेन' का पाठभेद तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'तस्मिनष्टेन' मिलता है, तथा 'अनिष्टेनानयः' इसमें लुप्त है।

पादटिप्पणी :

९. (१) अय : उत्तमभाग्य वांछनीय फल के साथ सम्बन्ध। रघुवंश ४:२६, गण० २:२३१।

(२) अनय : प्रतिकूल फल के साथ सम्बन्ध, अभाग्य। द्र० ६:२:६, ८:१:२। गण० २:२३१।

पादटिप्पणी :

११. (१) अपनय : अनुचित नीति, दुष्टनीति। द्र० ६:२:६, १:२:११, ८:१:२, ९:५:१।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तच्चिन्त्यम् अचिन्त्यं दैवम् ।

१२. मानुष कर्म चिन्तनीय तथा दैवकर्म अचिन्तनीय होता है ।

राजा आत्मद्रव्यप्रकृतिसंपन्नो नयस्याधिष्ठानं विजिगीषुः ।

१३. आत्मवान्, द्रव्यप्रकृति सम्पन्न, नय का अधिष्ठान राजा विजिगीषु है ।

तस्य समन्ततोमण्डलीभूता भूम्यन्तरा अरिप्रकृतिः ।

१४ उसके सब ओर अव्यवहित भूमि के स्वामी को अरिप्रकृति कहा जाता है ।

तथैव भूम्येकान्तरा मित्रप्रकृतिः ।

१५. उसी प्रकार एक भूमि अन्तर पर स्थित भूमि का स्वामी मित्रप्रकृति कहा जाता है ।

अरिसंपद्युक्तः सामन्तः शत्रुः, व्यसनी यातव्यः, अनपाश्रयो दुर्बलाश्रयो वोच्छेदनीयः, विपर्यये पीडनीयः कर्शनीयो वा ।

१६. शत्रु सम्पत्तियुक्त सामन्त शत्रु होता है, व्यसनी शत्रु आक्रमणयोग्य होता है, अनपाश्रय अथवा दुर्बलाश्रय शत्रु उच्छेदनीय होता हैं, उसके विपरीत होने पर, पीडनीय अथवा कर्शनीय होता है ।

इत्यरिविशेषाः ।

१७. ये चार विशेष प्रकार के शत्रु हैं ।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'इति' अन्त में और जोड़ा गया है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) विजिगीषुः : जीतने की इच्छा रखने वाला राजा, या विजय प्राप्ति का अभिलाषी राजा।

पादटिप्पणी :

१४. (१) समन्ततो : हरदिशा में, चतुर्दिक । उन सभी राजाओं की भूमि या क्षेत्र से सम्बन्ध है जो बिजिगीषु के राज्य की सीमा से मिले हों ।

(२) अरिप्रकृति : देश की सीमा पर देश को चारों ओर से घेरे देश के राजा को अरिप्रकृति कहते हैं ।

पाद टिप्पणी :

१५. (१) मित्रप्रकृति : सीमावर्ती राजा या भूमि से परे राजा को मित्र प्रकृति कहते हैं ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) यातव्य : राजा जिसके विरुद्ध अभियान करना आवश्यक है । ७:५:१, ७:१३:३१, गण० १:१५, १६, ३:२७५ ।

(२) अनपाश्रय : आश्रय हीन, मित्र या दुर्ग से रहने से तात्पर्य है ।

(३) दुर्बलाश्रयो : कमजोर आश्रय वाला।

(४) उच्छेदनीय : नष्ट करने योग्य, पीडनीय तंग करने योग्य । ७:१०:२६, २७, ७:१८:१४।

(५) विपर्यय : जब उसे शक्तिशाली समर्थन प्राप्त होता है ।

(६) पीड़नीय : तंग करना । द्र० ७:१०:२६, ७:१८:१५, मनु० ४:६७, २३७, ४७:२९ ।

(७) कर्शन : कमजोर करना, धन एवं दण्ड की कृशता सम्बन्धी । राज्य के धनिकों पर अधिक कर लगाना । इसके चार प्रकार के हैं । (१) यातव्य (२) उच्छेदनीय (३) पीड़नीय (४) कर्शनीय ७:३:१६, ७:४:१०, ७:८:३, ७:१०:४, १३:४:७। गण० ३:२८० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्मान्मित्रमरिमित्रं मित्रमित्रमरिमित्रमित्रं चानन्तर्येण प्रसज्यन्ते पुरस्तात् पश्चात् पार्ष्णिग्राह[3] आक्रन्दः[3] पार्ष्णिग्राहासार आक्रन्दासारः[4] ।

१८. तदनन्तर, मित्र, अरिमित्र, मित्रमित्र एवं अरिमित्र मित्र क्रमशः अव्यवधानपूर्वक विजिगीषु के समक्ष तथा पीछे पार्ष्णिग्राह आक्रन्द, पार्ष्णिग्राहासार एवं आक्रन्दसार आते हैं ।

भूम्यनन्तरः प्रकृत्यमित्रः तुल्याभिजनः सहजः[2], विरुद्धो विरोधयिता वा कृत्रिमः[3] ।

१९ स्वभूमि के अव्यवहित भूमि का स्वामी प्रकृत्यमित्र तथा तुल्याभिजन सहज शत्रु होते हैं, विरुद्ध अथवा विरोधयिता कृत्रिम शत्रु होता है ।

भूम्येकान्तरं प्रकृतिमित्रं मातापितृसंबद्धं सहजं, धनजीवितहेतोराश्रितं कृत्रिमम् ।

२०. स्वभूमि के एक भूमि के बाद स्थित भूस्वामी प्रकृतिमित्र तथा माता-पिता से सम्बद्ध (ममेरा-फुफेरा भाई) सहज मित्र होते हैं, धन एवं उपजीवन हेतु आश्रित जन कृत्रिम मित्र होता है ।

पाठ भेद :

'प्रसज्यन्ते' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रसज्यते' पाठ भेद मिलता हैं, तथा 'इति' बाद में और जोड़ा गया है ।

पाद टिप्पणी :

१८. (१) तस्मात् : मण्डल १० का होता है— (१) शत्रु (२) मित्र (३) अरिमित्र (४) मित्र के मित्र (५) अरिमित्र के मित्र (६) पार्ष्णिग्राह (७) आक्रन्द (८) पार्ष्णिग्राहासार (९) आक्रन्दासार (१०) विजिगीषु ।

(२) पार्ष्णिग्राह : युद्धकाल में पीछे से आक्रमण करता है । पृष्ठस्थित शत्रु । मत्स्य० २४०:२,४, ब्रह्माण्ड० ३:६१:३२, विष्णु० ४:६:२, गण० ४: २३२ ।

(३) आक्रन्द : चिल्लाना । द्र० १:१६:२९, गण० १:८१; २:२३२, ३:१९२ ।

(४) आसार : मित्र, आगे जाता है, सहायता या बचाने के लिए । द्र० ७:६:८, ७:७:२, १:१६:२९, ८:१:३८, ५४, ९:६:४४, १०:२:७ । गण० १: २२, ३:५३, १०७, १०८, १२३, १७१ २०४ ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) प्रकृत्यमित्र : अमित्र की श्रेणी में आता है । स्वाभाविक शत्रु । पुस्तकों में प्रकृति मित्र छपा है जो असंगत है, जिस-जिस राजा का क्षेत्र दूसरे राजा के क्षेत्र से बिल्कुल लगा होता है, वह प्राकृतिक अमित्र की श्रेणी में आता है ।

(२) सहज : जो रक्त सम्बन्धी हो ।

(३) कृत्रिम : परिस्थितियों द्वारा विरोधी बना, अमित्र ।

पाठ भेद :

'पितृसंबद्ध' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पितृसंबन्ध' पाठ भेद मिलता है तथा 'इति' अन्त में और जोड़ा गया है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) आश्रित : शरणागत ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अरिविजिगीष्वोर्भूम्यन्तरः संहतासंहतयोरनुग्रहसमर्थो निग्रहे चासंहतयोर्मध्यमः ।

२१. अरि और विजिगीषु की भूमि के अव्यवहित भूमि का स्वामी उनके सन्धियुक्त और विग्रहयुक्त होने पर अनुग्रह करने में समर्थ तथा विग्रह की स्थिति में निगृहीत (दण्डित) करने में समर्थ होने के कारण मध्यम कहा जाता है ।

अरिविगीषुमध्यमानां वहिःप्रकृतिभ्यो वलवत्तरः संहतासंहतानामरिविजिगीषुमध्यमानामनुग्रहसमर्थो निग्रहे चासंहतानामुदासीनः ।

२२. अरि, विजिगीषु एवं मध्यम की प्रकृति से बाहर तथा सबल और उनके (अरि-विजिगीषु-मध्यम) सन्धियुक्त एवं विग्रहयुक्त होने पर अनुग्रह करने में समर्थ तथा विग्रह की स्थिति में दण्डित करने में सक्षम नृप उदासीन कहा जाता है ।

इति प्रकृतयः ।

२३. ये (राज) प्रकृतियाँ हैं ।

विजिगीषुर्मित्रं मित्रमित्रं वाऽस्य प्रकृतयस्तिस्रः ।

२४. विजिगिषु एवं उसका मित्र तथा मित्रमित्र ये तीन प्रकृतियाँ हैं ।

ताःपञ्चभिरमात्यजनपददुर्गकोशदण्डप्रकृतिभिरेकैकशः संयुक्ता मण्डलमष्टादशकं भवति ।

२५. वे (विजिगीषु आदि तीन) अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश एवं दण्ड इन पांच प्रकृतियों से पृथक्-पृथक् संयुक्त होते हैं तब अष्टादशमण्डल (अट्ठारह का मण्डल) बनता है ।

पाद टिप्पणी :

२१. (१) मध्यम : विजिगीषु तथा शत्रु की सटी भूमि का शासक होने के कारण, जो दोनों पर अनुग्रह प्रदर्शन कर, उनपर दया कर, सके उसे मध्यम राजा कहते हैं । गण० २:३५९ ।

पाठ भेद :

'अनुग्रहसमर्थो' का पाठ भेद तेलगू अनुप्रति लिपि तथा तंजोर में 'अनुग्रहे समर्थो' मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२२. (१) उदासीन : अनिच्छुक, निरपेक्ष, मण्डल का सर्व शक्तिशाली राजा । द्र० ४:१३:१७, गण० २:३५९, ३:१०८ ।

पाठ भेद :

देवनागरी अनुलिपि में 'ताः' लुप्त है ।

पाद टिप्पणी :

२५. (१) अमात्य : द्र० १:८:१, २९ ।

(२) जनपद : द्र० १:९:१ ।

(३) दुर्ग : किला ।

(४) कोश : खजाना ।

(५) दण्ड : सेना । द्र० १:५:१ ।

(६) मण्डल : द्र० २:१९:१३, गण० १:१४, १७, २२; २:३५९, ३:१३५, २०७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनेन मण्डलपृथक्त्वं व्याख्यातमरिमध्यमोदासीनानाम् ।

२६. इसी प्रकार से अरि, मध्यम एवं उदासीन की पृथक् मण्डल की व्याख्या सम्पन्न हो गयी।

एवं चतुर्मण्डलसंक्षेपः ।

२७. इस प्रकार संक्षेप में चार मण्डल का कथन किया गया।

द्वादश राजप्रकृतयःषष्टिर्द्रव्यप्रकृतयः, संक्षेपेण द्विसप्ततिः ।

२८. बारह राज प्रकृतियाँ एवं साठ द्रव्य प्रकृतियाँ होती हैं। संक्षेप में बहत्तर प्रकृतियाँ कही गयी हैं।

तासां यथास्वं संपदः ।

२९. उनकी यथानुरूप सम्पत्तियाँ कही गयी हैं।

शक्तिः सिद्धिश्च ।

३०. शक्ति और सिद्धि भी होती हैं।

बलं शक्तिः ।

३१. शक्ति बल है।

सुखं सिद्धिः ।

३२. सिद्धि सुख है।

पादटिप्पणी :

२६. (१) मण्डल : द्र० २:१९:१३।

(२) अरि : शत्रु, द्र० ६:२:२१, कूर्म०, १६:९३।

(३) मध्यम : द्र० ६:२:२२।

(४) उदासीन : द्र० ६:२:२०।

पाठ भेद :

'षष्टिर्द्रव्यप्रकृतयः' देवनागरी अनुलिपि में छूट गया है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) राजप्रकृति : राज्य के १२ मूलभूत १२ अंगों को बारह प्रकृति कहेंगे।

(२) द्रव्यप्रकृति : साठ होती हैं। द्र० ५:५:१, २, ९:७:४९।

(३) द्विसप्तति : राज्य की कुल इस प्रकार ७२ प्रकृतियाँ होती हैं। द्र० कामन्दक सर्ग आठ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) शक्ति : ज्ञान, बल, मन्त्र।

(२) सिद्धि : सुख। परिभाषा ३२, वाँ सूत्र।

आठ सिद्धियाँ होती हैं।

योगानुसार : (१) अणिमा (२) महिमा (३) गरिमा, (४) लघिमा, (५) प्राप्ति (६) प्राकाम्य (७) ईशित्व (८) वशित्व।

पुराणानुसार : (१) अंजन (२) गुटिका (३) पादुका (४) धातुभेद (५) बेताल (६) वज्र (७) रसायन (८) योगिनी।

सांख्यानुसार : (१) तार (२) सुतार (३) तारतार (४) प्रमोद, (५) प्रमुदित, (६) प्रमोदमान (७) सदामुदित।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शक्तिस्त्रिविधा—ज्ञानबलं मन्त्रशक्तिः, कोशदण्डबलं प्रभुशक्तिः, विक्रमबलमुत्साहशक्तिः ।

३३. शक्ति तीन प्रकार की होती है—ज्ञानबल मन्त्रशक्ति, कोशदण्डबल प्रभुशक्ति एवं विक्रमबल उत्साह शक्ति है।

एवंसिद्धिस्त्रिविधैव–मन्त्रशक्तिसाध्या मन्त्रसिद्धिः, प्रभुशक्तिसाध्या प्रभुसिद्धिः, उत्साहशक्तिसाध्या उत्साहसिद्धिः ।

३४. उसी प्रकार सिद्धि तीन प्रकार की होती है—मन्त्रशक्तिसाध्य मन्त्रसिद्धि, प्रभुशक्तिसाध्य प्रमु सिद्धि, तथा उत्साहशक्तिसाध्य उत्साहसिद्धि होती है।

ताभिरभ्युच्चितो ज्यायान् भवति, अपचितो हीनः, तुल्यशक्तिः समः ।

३५. उन शक्तियों से परिपूर्ण राजा श्रेष्ठ, उनसे रहित हीन तथा तुल्य शक्ति वाला सम (मध्यम) होता है।

तास्माच्छक्तिं सिद्धिं च घटेतात्मन्यावेशयितुम, साधारणो वा द्रव्यप्रकृतिष्वानन्तर्येण शौचवशेन वा ।

३६. अतः राजा अपने में शक्ति और सिद्धि प्रवृद्ध करने का प्रयत्न करे, शक्तिसिद्धिवर्धन में असमर्थ नृप यथाक्रम अथवा शौच (पवित्रता) वश द्रव्य प्रकृतियों में शक्तिसिद्धि वर्धित करे।

पाद टिप्पणी :

शक्ति ३ प्रकार की होती हैं।

३३. (१) मन्त्रशक्ति : ज्ञान, बल, स्कन्द० २१५:४८, ५२, २२०:३३, ३७।

(२) प्रभुशक्ति : कोश, दण्ड, बल, भौतिक बल का साधन।

(३) उत्साहशक्ति : विक्रमबल व्यूह रचनादि १:१७:२८,१:१९:१६,१३:३:१५,५:६:२५,७:३१।

पाठ भेद :

तेलगू अनुप्रति लिपि में 'इति' और बाद में जुड़ा है।

पादटिप्पणी :

सिद्धि तीन प्रकार की होती हैं।

३४. (१) मन्त्रसिद्धिः मन्त्रशक्ति द्वारा साध्य।

(२) प्रभुसिद्धि : प्रभुशक्ति द्वारा साध्य।

(३) उत्साह सिद्धि : उत्साह शक्ति द्वारा साध्य। ६:१:५, ६:२:३३।

पाठ भेद :

' 'अभ्युच्चितो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभ्युच्छ्रितो' पाठ भेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

३५. (१) ज्यायान् : श्रेष्ठ। मनु० ४:८, ३:१३७।

(२) अपचित : हानि, प्रायश्चित भी इसका अर्थ होता है। भाग० १०:७८:३७ :

(३) हीन : छोटा, निम्न, गुणहीन, सदोष, मनु० ३:२४२, २:१९४।

(४) तुल्यशक्ति : समान या बराबर की शक्ति।

(५) सम : समान। मनु० ९:३११।

पाद टिप्पणी :

३६. (१) साधारण : विजिगीषु तथा शत्रु दोनों व्यक्तिगस गुणों से युक्त होते हैं।

(२) शौच : १:१०:१, २, १:८:१, ३६, गण० १:४३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्यामित्राभ्यां वाऽपक्रष्टुं यतेत ।

३७. अथवा दूष्य एवं अमित्र द्वारा शत्रु की शक्ति-सिद्धिहीन करने का प्रयत्न करे ।

यदि वा पश्येत् 'अमित्रो मे शक्तियुक्तो वाग्दण्डपारुष्यर्थदूषणैः प्रकृतीरुपहनिष्यति, सिद्धियुक्तो वा मृगयाद्यूतमद्यस्त्रीभिः प्रमादं गमिष्यति, सविरक्तप्रकृतिरुपक्षीणः प्रमत्तो वा साध्यो मे भविष्यति; विग्रहेऽभियुक्तो वा सर्वसंदोहेनैकस्थोऽदुर्गस्थो वा स्थास्यति, स संहतसैन्यो मित्रदुर्गवियुक्तः साध्योमे भविष्यति; 'बलवान् वा राजा परतः शत्रुमुच्छेत्तुकामः तमुच्छिन्द्याद्' इति बलवता प्रार्थितस्य मे विपन्नकर्मारम्भस्य वा साहाय्यं दास्यति; मध्यमलिप्सायां च, इत्येवमादिषु कारणेष्वमित्रस्यापि शक्तिं सिद्धिं चेच्छेत् ।

३८. यदि राजा देखे कि "शक्तियुक्त मेरा शत्रु वाक्पारुष्य, दण्डपारुष्य एवं अर्थदूषणों से प्रकृतियों को पीड़ित करेगा, अथवा सिद्धियुक्त होकर मृगया, द्यूत, मद्य एवं स्त्रीवश प्रमाद करेगा, विरक्त प्रकृति, असहाय अथवा प्रमत्त वह मेरे द्वारा विजित होगा अथवा मेरे द्वारा विग्रहभियुक्त (आक्रान्त) होने पर गर्ववश एकाकी अथवा दुर्गस्थ रहेगा संहत सैन्य वाला, मित्र दुर्गरहित वह शत्रु मेरे द्वारा जीत लिया जायेगा, अथवा बलवान् राजा अन्य शत्रु का उच्छेद करना चाहता है अतः उसका उच्छेद करेगा, अथवा बलवान् के साथ युदध करके मेरे विपन्न होने की स्थिति में प्रार्थना करने पर और मध्यम की अपेक्षा होने पर वह मेरी सहायता करेगा—इस प्रकार सकारण होने पर अमित्र के भी शक्ति-सिद्धि की कामना करे ।

पाद टिप्पणी :

३७. (१) अपक्रष्टुं : हीन एवं निम्न व्यक्ति । मार्क० ३४:८५ ।

पाठभेद :

'दुर्गस्थो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दुर्गस्थो' तथा 'संहतसैन्यो' का 'संहितसैन्यो' तथा 'उच्छिन्द्याद्' का 'उच्छिद्यमानम्' तथा त्रिवेन्द्रम् में 'उच्छिन्यात्' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३८. (१) वाग्दण्ड : यह कोपज व्यसन है । वाग—वाक्पारुष्य, दण्ड—दण्डपारुष्य, अर्थ—अर्थ धारण । द्र० ८:३:२३ ।

(२) मृगया : कामज व्यसन है । ८:३:३८ ।

(३) उपक्षीण : बलहीन, असहाय ।

(४) विग्रह : युद्ध की स्थिति । गण० २:२३ ।

(५) अभियुक्त : आक्रमण द्र० ७:५:६ ।

(६) सर्वसंदोह : सब सेना को एक जगह एकत्रित करना या युद्ध के लिए सेना को एकत्रित करना । द्र० ७:४:७, १२, १४, ७:१३:५, ९:६:५५, १२:१:३, १३:३:२३ ।

(७) बलवान : बली ।

(८) मध्यम लिप्सायां : यह वह विजिगीषु है, जो मध्यम राजा को जीतना चाहता है । द्र० ६:२: २१, ७:१:३२, ७:१३:२६, ७:१८:५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेमिमेकान्तरान् राज्ञः कृत्वा चानन्तरान्तरान् ।
नाभिमात्मानमायच्छेन्नेता प्रकृतिमण्डले ॥

३९. नेता राजा प्रकृति मण्डल में स्वभूमि के व्यवहित भूपालों को नेमि अनन्तर (समीपस्थ) नृपों को धर तथा स्वयं को नाभि कल्पित करे।

मध्ये ह्यु पहितः शत्रुर्नेतुर्मित्रस्य चोभयोः ।
उच्छेद्यः पीडनीयो वा बलवानपि जायते ॥

४०. नेता विजिगीषु राजा और मित्र के मध्य पड़कर बलवान् भी शत्रु उच्छेदनीय अथवा पीडनीय हो जाता है।

इति मण्डलयोनौ षष्ठेऽधिकरणेशमव्यायामिकं द्वितीयोऽध्यायः आदितोऽष्टनवतितमः। एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य मण्डलयोनिः षष्ठमधिकरणं समाप्तम् ।

षष्ठ अधिकरण के अन्तर्गत शमव्यायाकिक सम्बद्ध द्वितीय अध्याय समाप्त। आदि से अट्ठानवे अध्याय समाप्त। कौटिलीय अर्थशास्त्र में 'मण्डलयोनि सम्बद्ध षष्ठ अधिकरण समाप्त।

पाठभेद :

'एकान्तरान्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'एकान्तराद्राज्ञः' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

३९. (१) नेमि : परिघ, पहिएका घेरा।

(२) अरा : पहिए की तीलियाँ।

(३) नाभि : पहिए के मध्य गोलाकार का वह अंग जिसमें धुरी पहनायी जाती है।

(४) नेता : विजिगीषु। नारद० ९:१५।

पाठभेद :

'मध्येह्यु पहितः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मध्येऽस्युप' देवनागरी अनुलिपि में 'मध्येव्युप' तथा 'नेतुर्मित्रस्य' का तंजौर तथा देवनागर अनुलिपि में 'नेतुंमित्रस्य' 'बलवातपि' का तंजौर में 'बलवानिव' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बलवानिव' पाठ भेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

४०. (१) उपहित : दुःख स्थिनि।

(२) उच्छेद : दुर्बल या नष्ट करना।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री में—इति कौटलीयार्थशास्त्रे मण्डलयोनौ षष्ठाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः शमव्यायामिकम्, आदितोऽष्टनवतितमः। एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य मण्डलयोनिः षष्ठमधिकरणं समाप्तम्।

मैसूर संस्करण में—इति मण्डलयोनौ षष्ठेऽधिकरणे शमव्यायामिकं द्वितीयोऽध्यायः आदितोऽष्टनवतितमः एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य मण्डलयोनिः षष्ठमधिकरणं समाप्तम्।

वसाक संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे मण्डलयोनौ षष्ठेऽधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः शमव्यायामिकम्, आदितोऽष्टनवतितमः। एताबता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य मण्डलयोनिः षष्ठमधिकरणं समाप्तम्।

उदयवीर शास्त्री में—इति मण्डलयोनौ षष्ठेऽधिकरणे शमव्यायामिकं द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ आदितोऽष्टवतितमं ॥९८॥ एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य मण्डलयोनिः षष्ठमधिकरणं सभाप्तम् ॥६॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७

षाड्गुण्यम्-सप्तममधिकरणम्

अध्याय १

[अष्टनवतितमं प्रकरणम-षाड्गुण्यसमुद्देशः, नवनवतितमं प्रकरणम्-क्षयस्थानवृद्धिनिश्चयः]

अट्ठान्बे प्रकरण—षाड्गुण्य समुद्देश, निन्यान्बे प्रकरण—क्षयस्थानवृद्धिनिश्चय

षाड्गु[1]ण्यस्य प्रकृति[2]मण्डलं[3] योनिः[4]।

१. सन्धि आदि (छः) गुणों का कारण प्रकृति-मण्डल है।

'[1]संधिविग्र[2]हासनयान[4]संश्र[5]यद्वै[6]धीभावाः षाडगुण्यम्' इत्याचार्याः।

२. "संधि, विग्रह, आसन, यान, संश्रय एवं द्वैधीभाव छः गुण हैं" ऐसा आचार्यों का कथन है।

पादटिप्पणी :

सातवाँ अधिकरण ६ उपायों का वर्णन करता है। राष्ट्र अपनी परराष्ट्र नीति के सम्बन्ध में उनका प्रयोग कर सकता है। गुण आदर्श किंवा उपाय का पारिभाषिक अर्थ भी होता है।

प्रकरण ९८ में १-१९ सूत्र तथा ९८ में २० से ३८ तक के सूत्र हैं।

१. (१) षाडगुण्यं : परराष्ट्र नीति के ६ उपाय मा प्रमाण, मान। षाड्गुण्य—(१) सन्धि (२) विग्रह (३) आसन (४) यान (५) संश्रय (६) द्वैधीभाव। द्र० ६:१:१०, ११, ६:२:४:१०, गण० २:२३।

(२) प्रकृति : प्रकृति सात ह। राजा तथा उनके घटक, जिनका उल्लेख ६:२:१३-२९ में किया गया है।

(३) मण्डल : २:१९:२३, गण० १:१४, १७ २२, २:३५९, ३:७५, २०।

(४) योनि : मूल कारण, स्रोत। गण० ३:२१०।

पादटिप्पणी :

२. (१) सन्धि : परिभाषा, द्र० ७:१:६, गण० २:३।

(२) विग्रह : परिभाषा, द्र० ७:१:७, गण० २:२३।

(३) आसन : परिभाषा, द्र० ७:१:६, गण० २:२३७, २५५, ३:१०।

(४) यान : परिभाषा, द्र० ७:२:९, गण० २:२३।

(५) संश्रय : परिभाषा, द्र० ७:१:२२, गण० २:२३।

(६) द्वैधीभाव : परिभाषा, द्र०७:१:२२, गण० २;२३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'द्वैगुण्यम् इति' वातव्याधिः ।

३. 'दो गुण हैं' ऐसा वातव्याधि का मत है ।

'संधिविग्रहाभ्यां हि षाड्गुण्यंसंपद्यते' इति ।

४. 'संधि विग्रह से छः गुणों का कार्य सम्पन्न हो जाता है ।'

षाडगुण्यमेवैतद् अवस्थाभेदादिति कौटिल्यः ।

५. अवस्था भेद से छः गुण ही मान्य हैं, ऐसा कौटिल्य का मत है ।

तत्र पणबन्धः संधिः ।

६. उनमें पणबन्ध सन्धि है ।

अपकारो विग्रहः ।

७. अपकार विग्रह है ।

उपेक्षणमासनम् ।

८. उपेक्षा आसन है ।

अभ्युच्चयो यानम् ।

९. अभ्युच्चय यान है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) द्वैगुण्य : दो उपाय (१) सन्धि (२) विग्रह ।

(२) वातव्याधि : उद्धव । द्र० १:७:२० ।

पादटिप्पणी :

४. (१) संधिविग्रह : मौलिक नीति है । तथा अन्य उनके परिवर्तन या भेद, विकार या विक्रिया या रूपान्तर मात्र है । उनके अवस्था भेद के कारण ६ गुण होते हैं ।

पाद टिप्पणी :

५. (१) अवस्था भेद : भिन्न अवस्थाओं में ६ विभाग आवश्यक माने गये हैं । कामन्दक० ११:४ ।

पाद टिप्पणी :

६. (१) पणबन्ध : शर्त निश्चित तथा निश्चित धाराओं के साथ सन्धि को औपचारिक रूप देना । द्र० ५:४:७, ७:७:७, दो राजाओं के बीच, भूमि, कोश, दण्ड, दानादि, शर्त या पणबन्ध का नाम सन्धि है । द्र० ५:४:७; ७:७:७, पण प्राचीन काल में ताम्र मुद्रा होती थी । मत्स्य० २२७:१४, द्र० २:१३:२४, २:१४:१४ ।]

पाद टिप्पणी :

७. (१) विग्रह : शत्रु के प्रति अपकार या द्रोहाचरण का नाम विग्रह है । युद्ध की स्थिति । गण० २:२३ ।

पादटिप्पणी :

८. (१) उपेक्षा : अवहेलना, उदासीनता । गण० २:२५४ ।

(२) आसन : उपेक्षा या अनास्था, चुप चाप रहने का नाम आसन है । द्र० ९:७:५०, गण० २: २३, २५४, ३:१० ।

पादटिप्पणी :

९. (१) अभ्युच्चय : शक्ति संचय । गण० २: ३२५ ।

(२) यान : अभियान । गण० २:१३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परार्पणं संश्रयः ।

१०. परार्पण संश्रय है ।

संधिविग्रहोपादानं द्वैधीभावः ।

११. सन्धि-विग्रह का उपादान द्वैधीभाव है ।

इति षड्गुणाः ।

१२. ये छः गुण निरूपित किये गये ।

परस्माद्धीयमानः संदधीत ।

१३. शत्रु से हीन होने वाला (नृप) सन्धि करे ।

अभ्युच्चीयमानो विगृह्णीयात् ।

१४. अभ्युच्चयीयमान होने पर विग्रह करे ।

'न मां परो नाहं परमुपहन्तुं शक्तः' इत्यासीत ।

१५. 'न मुझे शत्रु और न मैं शत्रु को उपहत करने में समर्थ हूँ' ऐसा मानकर उपेक्षा करे ।

गुणातिशययुक्तो यायात् ।

१६. गुणातिशययुक्त होने पर यान गुण का आश्रय ले ।

पादटिप्पणी

१०. (१) संश्रय : शरण, राजा के समीप समर्पण । मनु० ७:१६०, गण० २:२३ ।

पादटिप्पणी

११. (१) सन्धिविग्रहोपादान : यह एक राजा के साथ सन्धि अर्थात् शान्ति और दूसरे के साथ युद्ध करना है । द्र० ७:१:३७, गण० १:१६, २:२३, ३४ ।

(२) उपादान : अभिग्रहण, अवाप्ति । मनु० ८:४१७ ।

(३) द्वैधीभाव : सन्धि एवं विग्रह का एक साथ प्रयोग द्वैधीभाव है । दो बलवान शत्रुओं के सम्मुख केवल वाक्य द्वारा निज का समर्पण द्वैधीभाव है । इसका अर्थ छल या कपट भी होता है । दो प्रकार की अवस्था या प्रकृति । मनु० ७:१७३, याज्ञ० १:३४, गण० २:२३ ।

पादटिप्पणी

१२. (१) षड्गुणा : गण० २:२३ ।

पादटिप्पणी

१३. (१) हीयमान : दूसरे राजा की अपेक्षा अपने को हीन निर्बल समझना या अहीयमान अर्थात् अपने को निर्बल या कमजोर समझना ।

पादटिप्पणी

१४. (१) अभ्युच्चीयमान : शक्ति संचय या उन्नति या वृद्धि या उत्कर्ष होने पर, विग्रह करना । द्र० ७:१:९, गण० २:३५४ ।

पादटिप्पणी

१६. (१) यायात् : आक्रमण, अभियान, मार्च करे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शक्तिहीनः संश्रयेत् ।

१७. शक्तिहीन होने पर संश्रय स्वीकार करे।

सहाययसाध्ये कार्ये द्वैधीभावं गच्छेत् ।

१८. सहायक द्वारा सिद्धि करने योग्य कार्य में द्वैधीभाव ग्रहण करे।

इतिगुणावस्थापनम् ।

१९. गुण अवस्थापन सम्पन्न हुआ।

तेषां यस्मिन् वा गुणे स्थितः पश्येत् 'इहस्थः शक्ष्यामि दुर्गसेतुकर्मवणिक्पथशून्यनिवेशखनिद्रव्यहस्तिवनकर्माण्यात्मनः प्रवर्तयितुं परस्य चैतानि कर्माण्युपहन्तुम्' इति तमातिष्ठेत् ।

२०. उनमें जिस गुण में स्थित होकर, देखे कि 'उस गुण का आश्रय लेकर दुर्ग, सेतु, कर्म, वणिक्पथ, शून्यनिवेश, खनि, द्रव्यवन एवं हस्तिवन कार्य सम्पन्न कर सकूँगा तथा शत्रु के इन कर्मों को विनष्ट करने में समर्थ रहूँगा, तो उसी गुण का आश्रय ग्रहण करे।

पादटिप्पणी

१७. (१) संश्रय : आश्रय या शरण द्र० ७:७:१०, गण० २:२३।

पाठभेद :

'सहायसाध्ये कार्ये' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सहायसाध्यकार्ये' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी

१८. (१) सहायसाध्ये कार्ये : सहायता की अपेक्षा होने पर।

(२) द्वैधीभाव : सहायता की अपेक्षा होने पर द्वैधीभाव अर्थात् सन्धि एवं विग्रह का ग्रहण एक साथ करना। ७:१:२, ७:१:११, गण० २:२३।

पादटिप्पणी

१९. (१) गुण : प्रतिमान, उपाय। विदेशी या परराष्ट्र नीति का एक उपाय या साधन। ७:१:२२, गण० १:२:५।

पादटिप्पणी

२०. (१) शक्ष्यामि : सक्षम समर्थ होऊंगा।

(२) दुर्ग : दुर्ग या किला ६ प्रकार के होते हैं।

(१) धन्व दुर्ग (२) मही दुर्ग (३) नरदुर्ग, (४) वृक्ष दुर्ग (५) अंबुदुर्ग (६) गिरिदुर्ग। वायु ८:९८; १०८, मत्स्य० १०:३२, २१७:६, ८, भाग० ५:६:८, ब्रह्म २:७:९२, १०१, द्र० ७:१२:२, ३, ७:१:२०, २४, गण० १:१२।

(३) सेतु : बन्ध। द्र० ७:१:२०, २४, गण० १:१३६।

(४) वणिक्पथ : व्यापारी मार्ग द्र० २:१:१९, ३८, २:६:८, २:४:५, ८:३।

(५) शून्यनिवेश : खाली जमीन पर नवीन आबादी बसाना।

(६) खनि : खान।

(७) द्रव्यवन : बन सम्पत्ति।

(८) हस्तिवनकर्म : वन में हाथियों की रक्षा की व्यवस्था। गण० १:५०।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सा वृद्धिः ।

२१. वह वृद्धि है अर्थात् उक्त प्रकार से गुणों का आश्रय लेने से वृद्धि अवश्य होती है।

'आशुतरा मे वृद्धिर्भूयस्तरावृद्ध्युदयतरा वा भविष्यति, विपरीता परस्य इति ज्ञात्वा परवृद्धिमुपेक्षेत ।

२२. 'मेरी वृद्धि शीघ्र, अधिक तथा वर्धनशील (उत्कर्षयुक्त) होगी और शत्रु की वृद्धि उसके विपरीत होगी' ऐसा जानकर शत्रु की वृद्धि की उपेक्षा करे।

तुल्यकालफलोदयायां वा वृद्धौ संधिमुपेयात् ।

२३. (शत्रु की भी वृद्धि) तुल्यकाल एवं फलवाली होने पर सन्धि करे।

यस्मिन् वा गुणे स्थितःस्वकर्मणामुपघातं पश्येन्नेतरस्य तस्मिन्न तिष्ठेत ।

२४. जिस गुण का आश्रय ग्रहण करने से अपने कर्मों का उपघात देखें और शत्रु के कर्मों का नहीं, उस गुण का आश्रय न ले।

एष क्षयः ।

२५. यह क्षय है, अर्थात् इस प्रकार के आश्रय से क्षय होता है।

'चिरतरेणाल्पतरं वृद्ध्युदयतरं वा क्षेष्ये, विपरीतं परः' इतिज्ञात्वा क्षयमुपेक्षेत ।

२६. 'मेरा क्षय अधिक समय में, बहुत कम एवं प्रगतिकारी होगा तथा शत्रु का (क्षय) उसके विपरीत होगा' ऐसा जान कर, अपने क्षय की उपेक्षा करे।

तुल्यकालफलोदये वा क्षये संधिमुपेयात् ।

२७. दोनों का क्षय तुल्यकाल एवं फल वाला होने पर सन्धि करे।

पादटिप्पणी

२१. (१) वृद्धि : बढ़ना, उत्कर्ष, प्रगति । द्र० ६:१:२२ ।

पादटिप्पणी

२२. (१) वृद्ध्युदयतरा : अत्यन्त उन्नति । द्र० ९:४:४, गण० ३:६, उदय का अर्थ लाभ तथा फल होता है । द्र० ३:१२:२५, २६, २७, ३० ।

पाठ भेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वा' लुप्त है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) तुल्यकाल : समान समय । द्र० १:३:९, ३:४:१८; ३:१८:४, ४:१३:२०, १४ ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) उपघात : नाश, कष्ट, आघात, आक्रमण । द्र० २:१६:६, ४:२:३२ ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) क्षय : हानि, नाश, गिराव पतन, ह्रास, अर्थ हानि ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) वृद्धयुदयतरं : अधिक प्रगति या उत्कर्ष । द्र० ७७१:२२, गण० २:६७ ।

(२) क्षयमुपेक्षेत : क्षय की उपेक्षा करे ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) तुल्य : १:३:९, ३:४:६, ३:१८:४, ४:१२:१०, १४ ७:१:२३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यस्मिन् वा गुणे स्थितः स्वकर्मवृद्धिं क्षयं वा नाभिपश्येदेतत्स्थानम्।

२८. जिस गुण में स्थित होकर स्वकर्म वृद्धि अथवा क्षय न देखे, वह स्थान है।

'ह्रस्वतरं वृद्ध्युदयतरं वा स्थास्यामि, विपरीतंपरः' इति ज्ञात्वा स्थानमुपेक्षेत।

२९. 'मेरा स्थान अल्पकाल अथवा प्रगतिशील होगा और शत्रु का उसके विपरीत,' ऐसा जान कर स्थान की उपेक्षा करे।

'तुल्यकालफलोदये वा स्थाने संधिमुपेयाद्' इत्याचार्याः।

३०. (दोनों का) 'स्थान तुल्यकाल—फल वाला होने पर सन्धि करें' ऐसा आचार्यों का मत है।

नैतद्विभाषितमिति कौटिल्यः।

३१. यह कोई विशिष्ट कथन नहीं है, ऐसा कौटिल्य मानते हैं।

यदि वा पश्येत् 'सन्धौ स्थितो महाफलैः स्वकर्मभिः परकर्माण्युपहनिष्यामि; महाफलानि वा स्वकर्माण्युपभोक्ष्ये, परकर्माणि वा; संधिविश्वासेन वा योगोपनिषत्प्रणिधिभिःपरकर्माण्युपहनिष्यामि; सुखं वा सानुग्रहपरिहारसौकर्यं फललाभभूयस्त्वेन स्वकर्मणां परकर्मयोगावहं जनमास्रावयिष्यामि; बलिनाऽतिमात्रेण वा संहितः परः स्वकर्मोपघातं प्राप्स्यति, येन वा विगृहीतो मया संधत्ते तेनास्य विग्रहं दीर्घं करिष्यामि; मया वा संहितस्य मद्द्वेषिणो जनपदंपीडयिष्यति; परोपहतो वाऽस्य जनपदो मामाग-

३२. अथवा यदि वह राजा देखे 'सन्धि करके महाफल प्रद स्वकर्मों से शत्रु के कर्मों का नाश करूँगा अथवा स्वकर्मों का महाफल अथवा शत्रु के कर्मों का महाफल भोगूँगा अथवा सन्धिजन्य विश्वास के कारण योग एवं उपनिषत्प्रयोगों द्वारा शत्रु कर्मों का विनाश कर सकूँगा, अथवा अनुग्रह एवं छूट की सुविधा प्रदान कर, अपने कर्मो में अधिक लाभ देकर, शत्रु कर्म में कुशल जनों को अनायास आकृष्ट कर लूँगा, अथवा अत्यधिक बली शत्रु के साथ सन्धि करके, मेरा शत्रु अपनी कर्महानि करेगा, अथवा अपने जिस शत्रु से निग्रहीत होकर, मेरे साथ सन्धि कर रहा है, उसके

पादटिप्पणी :

२८. (१) स्थानम् : स्थायित्व को स्थिति, दृढ़ता, स्थैर्य, ७:४:२, ३, ८:२:२६, गण० १:१४३, २२, २४०, २५४, ३:२०७, १२४, १४२।

पादटिप्पणी :

२९. (१) ह्रस्वतर : अल्प काल, थोड़े दिन।

(२) वृद्ध्युदय : द्र० ७:१:२६: गण० ३:६७।

पादटिप्पणी :

३०. (१) फलोदय : परिणाम।

(२) आचार्य : द्र० १:१९:२३, वायु० ५९, ३९, ३०, लिंग० १०:२२, १६, २०:२०।

पादटिप्पणी :

३१. (१) विभाषितं : विवादित, विशिष्ट कथन।

पाठभेद :

'स्वकर्माण्युप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वकर्मणां' तथा 'योगावहंजनम' का तंजौर और तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'योगावहजनम्' पाठभेद मिलता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मिष्यति, ततः कर्मसु वृद्धिं प्राप्स्यामि; विपन्नकर्मारम्भो वा विषमस्थः परः कर्मसु न मे विक्रमेत; परतः प्रवृत्तकर्मारम्भो वा ताभ्यां संहितः कर्मसु वृद्धिं प्राप्स्यामि; शत्रुप्रतिबद्धं वा शत्रुणा संधिं कृत्वा मण्डलं भेत्स्यामि, भिन्नमवाप्स्यामि दण्डानुग्रहेण वा शत्रुमुपगृह्य मण्डललिप्सायां विद्वेषं ग्राहयिष्यामि, विद्विष्टं तेनैव घातयिष्यामि, इति संधिना वृद्धिमातिष्ठेत ।

साथ इसका युद्ध दीर्घकालीन करूँगा, अथवा मेरे साथ सन्धिकर्ता मेरे शत्रु का जनपद यह पीड़ित करेगा, अथवा शत्रुपीडित इसका जनपद मेरे वश में हो जायेगा, उससे मेरे कर्मों में वृद्धि होगी, अथवा विपन्न कार्य वाला शत्रु विषमस्थिति में है या अन्य की सहायता से स्वकार्य में प्रवृत्त है, मेरे कर्मों का विनाश नहीं करेंगे अथवा इन दोनों के साथ सन्धि करके, मेरे कर्मों में वृद्धि होगी, अथवा शत्रु से सन्धि करके, शत्रु प्रतिबद्ध मण्डलको भिन्न करूँगा, भिन्न होते उसे अपना लूँगा, अथवा दण्डानुग्रह द्वारा शत्रु को उपकृत करके मण्डललिप्सा से उसमें द्वेष उत्पन्न कर दूँगा, द्वेष हो जाने पर, उसी से उसका नाश कर दूँगा' इस प्रकार की स्थिति होने पर सन्धि करके वृद्धि करे।

यदि वापश्येत् 'आयुधीयप्रायः श्रेणीप्रायो वा मे जनपदः शैलवननदीदुर्गैकद्वारारक्षो वा शक्ष्यति पराभियोगं प्रतिहन्तुम्; विषयान्ते दुर्गमविषह्यमपाश्रितो वा शक्ष्यामि परकर्माण्युपहन्तुम्; व्यसनपीडोपहतोत्साहो वा परः संप्राप्तकर्मोपघातकालः विगृहीतस्यान्यतो वा शक्ष्यामि जनपदमपवाहयितुम्' इति विग्रहे स्थितो वृद्धिमातिष्ठेत् ।

३३. अथवा यदि यह देखे—'मेरे जनपद में आयुधीयों एवं श्रेणीजनों का बाहुल्य है अथवा शैल दुर्ग, बन दुर्ग, नदी दुर्ग, तथा प्रवेश-निर्गम का केवल एक द्वार है, अतः सुरक्षित है, शत्रु का आक्रमण विफल करने में समर्थ होगा, अथवा राज्य की सीमा पर, सुदृढ़ दुर्ग का आश्रय लेकर, शत्रु कर्मों का विनाश करने में सक्षम होऊँगा, अथवा शत्रु व्यसनपीडा से हतोत्साहित है, इसके कर्मोपघात का उचित अवसर है, अथवा विगृहीत शत्रु का जनपद अन्य मार्ग से आक्रान्त करने में समर्थ होऊँगा' ऐसी स्थिति में विग्रह करके वृद्धि करे।

पाठभेद :

'अपाश्रितो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपाकृतो' पाठ भेद मिलता है तथा 'प्रतिहन्तुम्'—उपहन्तुम् तथा घात कालः के बाद और है।

पादटिप्पणी :

३३. (१) आयुधीय : आयुध जीवी। द्र० ३:३५:१, १:१९:१५।

(२) श्रेणी : द्र० २:४:१६, ४:११:२, ८:४:७२; ६:१:८, ५:३:९, ७:१४:२।

(३) पराभियोग : दूसरे का आक्रमण।

(४) विषयान्ते : राज्य या विषय की सीमा पर।

(५) उपहन्तु : नाश। द्र० २:७:४४, ३:८:२२ ९:११२,

(६) व्यसन : पीड़ा विपत्ति, आपदा। द्र० १:१४:४:, २:१६: ३०।

(७) उपघात : द्र० २१:६:६।

(८) अपवाहयितु : द्र० २:१:१, ८:२:८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि वा मन्येत 'न मे शक्तः परः कर्माण्युपहन्तुं नाहं तस्य, कर्मोपघाती वा; व्यसनमस्य, श्ववराहयोरिव कलहे वा, स्वकर्मानुष्ठानपरो वा वर्धिष्ये' इत्यासनेन वृद्धिमातिष्ठेत् ।

३४. अथवा यदि यह माने—शत्रु मेरे कर्मों का अथवा मैं उसके कर्मों का विनाश करने में समर्थ नहीं हूँ, इस पर संकट है, अथवा कलह की स्थिति समान बलवाले कुत्ता और वराह की स्थिति होगी, अथवा मैं अपने कम का अनुष्ठान करके प्रगति करूँगा' ऐसी स्थिति में आसन द्वारा वृद्धि करे ।

यदि वा मन्येत 'यानसाध्यः कर्मोपघातः शत्रोः, प्रतिविहितस्वकर्मारक्षश्चास्मि' इति यानेन वृद्धिमातिष्ठेत् ।

३५. अथवा यदि यह माने—'शत्रु के कर्मों का विनाश यानसाध्य है और मैंने अपने कर्मों की सुरक्षा सम्पन्न करली है'—इस स्थिति में यान द्वारा वृद्धि करे ।

यदि वा मन्येत 'नास्मि शक्तः परकर्माण्युपहन्तुं, स्वकर्मोपघातं वा त्रातुम्' इति, बलवन्तमाश्रितः स्वकर्मानुष्ठानेन क्षयात्स्थानं स्थानाद्वृद्धिं चाकाङ्क्षेत ।

३६. अथवा यदि यह माने—'शत्रु कर्म का विनाश करने अथवा अपने कर्म के विनाश की रक्षा करने में समर्थ नहीं है' ऐसी स्थिति में बलवान् का आश्रय लेकर, स्वकर्म सम्पादन द्वारा क्षय से स्थान और से स्थान वृद्धि की आकांक्षा करे ।

पाठभेद :

'कलहे वा' का तंजोरमें 'कलहो वा' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) उपहन्तुं : नाश, करने को । द्र० २:७:४, ५; ९:१:१२; ३:८:२२ ।

(२) उपघाती : द्र० २:१६:६; ४:२:३२ ।

(३) व्यसन : द्र० १:१४:४, ३:१४:२ ।

(४) श्व : कुत्ता, श्वान ।

(५) वराह : सूअर ।

(६) कलह : ईर्ष्या, झगड़ा । द्र० ९:२:६, मनु० ४:१२१ ।

(७) अनुष्ठान : कार्य या, धर्म कृत्यकार्य करना ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) यान : शत्रु के विरुद्ध अभियान या मार्च या प्रयाण । द्र० १:२१:१८, मनु० ४:१२०, ७:७५, गण० १:२३७ ।

पाठभेद :

'बलबन्तमाश्रितः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वलवत्तमाश्रितः' तथा 'स्थानाद्वृद्धिं' का तंजौर एवं त्रिवेन्द्रम् में 'स्थानावृद्धि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) वलवन्त : बली ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि वा मन्येत 'संधिनैकतः[1] स्वकर्माणि प्रवर्तयिष्यामि, विग्रहैणैकतः परकर्माण्युपहनिष्यामि' इति द्वैधी[2]भावेन वृद्धिमातिष्ठेत् ।

३७. अथवा यदि यह माने—'एक ओर शत्रु से सन्धि करके, स्वकर्म प्रवर्तित करूँगा और दूसरी ओर विग्रह करके, शत्रु कर्म का विनाश करूँगा' ऐसी स्थिति में द्वैधीभाव का आश्रय लेकर, अपनी वृद्धि करे ।

एवं षड्भिर्गुणैरेतैः स्थितः प्रकृतिमण्डले ।
पर्येषेत क्षयात्स्थानं स्थानाद्वृद्धिं च कर्मसु ।।

३८. इस प्रकार प्रकृति मण्डल में स्थित विजिगीषुराजा इन छः गुणों से कर्मों में क्षय से स्थान तथा स्थान से वृद्धि की आकांक्षा करे ।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे षाड्गुण्यसमुद्देशः क्षयस्थानवृद्धिनिश्चयश्च.
प्रथमोऽध्यायः । आदितो नवनवतितमः ।

सप्तम अधिकरण के अन्तर्गत षाड्गुण्य षाड्गुण्यसमुद्देश और क्षय स्थान वृद्धिनिश्चय सम्बन्धित प्रथम अध्याय समाप्त । प्रारम्भ से निन्यानबेवाँ ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) एकतः : एक के साथ ।

(२) द्वैधीभाव : द्र० ७:३:१९, ७:७:३ ।

पाठभेद :

३८. 'पर्येषेत' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पर्येष्येत' तथा 'स्थानाद्वृद्धि' का तंजौर में 'स्थानावृद्धि' पाठभेद मिलता है ।

पाठ भेद :

गणपतिशास्त्रीसंस्करण में—इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः षाड्गुण्यसमुद्देशः क्षयस्थानवृद्धिनिश्चयश्च, आदितो नवनवतितमः ।।

मैसूर संस्करणमें—इति षाड्गुण्ये षाड्गुण्यसमुद्देशः क्षयस्थानवृद्धिनिश्चयश्च प्रथमोऽध्यायः, आदितो नवनवतितमः ।

डा० वसाक संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः षाड्गुण्यसमुद्देशः क्षयस्थानवृद्धिनिश्चयश्च आदितो नवनवतितमः ।

उदरवीरशास्त्रीसंस्करण में—इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे षाड्गुण्यसमुद्देशः क्षयस्थानवृद्धिनिश्चयश्चप्रथमोऽध्यायः ।।१।। आदितो नवनवतितमः ।।९९।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय २

शततमं प्रकरणम्-संश्रयवृत्तिः

सौवां प्रकरण—संश्रयवृत्ति

संधिविग्रहयोस्तुल्यायां वृद्धौ संधिमुपेयात् ।

१. सन्धि एवं विग्रह दोनों स्थिति में समान वृद्धि (लाभ) होने पर, संधि करनी चाहिए।

विग्रहे हि क्षयव्ययप्रवासप्रत्यवाया भवन्ति ।

२. विग्रह करने पर, क्षय, व्यय, प्रवास एवं प्रत्यवाय अवश्य होते हैं ।

तेनासनयानयोरासनं व्याख्यातम् ।

३. उसी प्रकार आसन-यान में आसन ग्रहण व्याख्यात हो गया ।

द्वैधीभावसंश्रययोर्द्वैधीभावं गच्छेत् ।

४. द्वैधीभाव एवं संश्रय में द्वैधीभाव ग्रहण करना चाहिए ।

पादटिप्पणी :

आश्रय दाता राजा के आश्रय में अपनी शक्ति मजबूत करना है । सौवां प्रकरण वास्तव में सूत्र छ से आरम्भ होता है ।

१.(१) संश्रय : द्र० ७:१:१०, १७, ९:३:३०, गण० ३:९० ।

पाद टिप्पणी :

२. (१) क्षय : क्रमशः कर्म का नाश, अल्प आय अधिक व्यय का अर्थ भी क्षय होता है । गण० १:१४३, २:२३९, ३:६, ३:९ ।

(२) व्यय : धन धान्यादि का व्यय, धनादि का खर्च । गण० ३:६७ ।

(३) प्रवास : परदेश यात्रा, परदेश में रहना या जाना । द्र० १:१४:२, १:१८:१५, ७:७:१३, ७:८:२, ९:७:५५, गण० ३:९७ ।

(४) प्रत्यवाय : शत्रु के द्वारा किये गये, विष प्रयोग आदि के द्वारा उत्पन्न होने वाले कष्ट । शेष रोग, सेना का पुनः व्यूह में मिलाना । ऐसा व्यूह जिसमें पैदल सेना अधिक हो । द्र० १:१४:२, १:१८:१५, ७:८:२०, १०:२:२६, गण० ३:१३० ।

पादटिप्पणी :

३.(१) आसन : शान्त रहना । द्र० ७:१:८, ९:७:५०, गण० २:२३७, २५४, ३:१०७ ।

(२) यान : आक्रमण ।

जहाँ यान एवं आसन द्वारा समान लाभ की सम्भावना होती है वहाँ आसन ही अच्छा होता है । द्र० १:२१:१८, ७:१:३५, गण० २:२३७ ।

४. (१) द्वैधीभाव : दोहरी या दुरंगी नीति । द्र० ७:१:११ गण० २:२३७ ।

(२) संश्रय : आश्रय शरण । द्र० २:३:३०, ७:१०:३२, १०:२:१४, गण० २:२३७ ।

(३) गच्छेत् : ग्रहण करने से यहा तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वैधीभूतो हि स्वकर्मप्रधान आत्मन एवोपकरोति संश्रितस्तु परस्योपकरोति, नात्मनः ।

५. द्वैधीभाव ग्रहण कर्ता नृपति स्वकर्म प्रधान होने के कारण अपना ही उपकार करता है और संश्रित होकर, अन्य का उपकार करता है अपना नहीं ।

यद्बलः सामन्तस्तद्विशिष्टबलमाश्रयेत ।

६. जितना बलशाली सामन्त हो, उससे अधिक बली का आश्रय ले ।

तद्विशिष्टबलाभावे तमेवाश्रितः कोशदण्डभूमीनामन्यतमेनास्योपकर्तुमदृष्टः प्रयतेत ।

७. इससे अधिकबली के अभाव में उसी का आश्रय ले और अदृष्ट रहकर, कोश, दण्ड एवं भूमि में कोई एक प्रदान कर, उसका उपकार करने का प्रयत्न करे ।

महादोषो हि विशिष्टबलसमागमो राज्ञाम्, अन्यत्रारिविगृहीतात् ।

८. राजाओं के लिए विशिष्ट बलशाली से मिलना महादोषकारी होता है किन्तु यदि वह बली राजा शत्रु द्वारा विग्रहीत (आक्रान्त) हो, तो दोष नहीं होता ।

अशक्ये दण्डोपनतवद्वर्तेत ।

९. समागम के बिना यदि उसकी सेवा सम्भव न हो, तो दण्डोपनत तुल्य व्यवहार करे ।

यदा चास्य प्राणहरं व्याधिमन्तःकोपं शत्रुवृद्धिं मित्रव्यसनमुपस्थितं वा तन्निमित्तामात्मनश्च वृद्धिं पश्येत् तदासंभाव्य व्याधिधर्मकार्यापदेशेनापयायात् ।

१०. और जब उसका प्राणहारी व्याधि, अन्तःकोप, शत्रुवृद्धि अथवा मित्रव्यसन उपस्थित देखे तथा उसी अपनी वृद्धि देखे, तो सम्भाव्य व्याधि या धर्मकार्य के व्याज से निर्गत हो जाय ।

पादटिप्पणी :

५(१) द्वैधीभूत : दो रंगी चाल चलने वाला । द्र० ७:३:१९, ७:७:३ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) सामन्त : पड़ोसी । द्र० ३:९:३, १०, ३:२०:१५, ७:१३:२४, ३:८:१, ३:९:२४, १:१०:३, ७:१८:२९, गण० १:४८ ।

पादटिप्पणी :

७. (१) अदृष्ट : स्वयं शत्रु से दूर, आखों से ओझला रहकर, आत्म समर्पण न करना ।

पाठभेद :

अरिविगृहीतात्' का तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'अरिगृहीतात्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) महादोष : अनिष्ट । द्र० १:१५:३९, १:१७:३० ।

(२) विशिष्टबल : विलक्षण, विशेष एवं असामान्य शक्ति का बल ।

(३) अन्यत्रारिविगृहीतात् : जब बली राजा किसी के साथ युद्धरत हो, तो उसे दुर्बल राजा के समर्थन के प्रति अनुगृहीत होना चाहिए ।

पाठ भेद :

'अशक्ये' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अशक्यो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) अशक्य : जब पड़ोसी बली राजा दण्ड स्वीकार न करें या असमर्थता प्रकट करे । द्र० ७:१५:२१ ।

(२) दण्डोपनत : सेना प्रदान पूर्वक सम्बन्ध सूत्र से आबद्ध । द्र० ५:१:५३, ७:३:६, ७:१५:३०, ७:१६:२९ गण० २,३६४ ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) प्राणहर : प्राणान्तकारी व्याधि ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वविषयस्थो वा नोपगच्छेत् ।

११. अथवा स्वदेश में स्थित होने पर, समीप न जाय ।

आसन्नो वाऽस्य च्छिद्रेषु प्रहरेत् ।

१२. अथवा आसन्न होने पर, उसके निर्बल स्थानों पर, प्रहार करे ।

बलीयसोर्वा मध्यगतस्त्राणसमर्थमाश्रयेत, यस्य वाऽन्तर्धिःस्यात्, उभौ वा ।

१३ दो प्रबल राजाओं के मध्य होने पर, रक्षा में सक्षम का अथवा जो समीपस्थ हो अथवा दोनों का आश्रय ले ।

कपालसंश्रयस्तिस्तष्ठेत्, मूलहरमितरस्येतरमपदिशन् ।

१४. कपाल सन्धिवत् (दोनों का) आश्रय लेकर एक दूसरे से दूसरे को मूलहरणकारी कह कर मिला रहे ।

भेदमुभयोर्वा परस्परापदेशं प्रयुञ्जीत, भिन्नयोरुपांशुदण्डम् ।

१५. अथवा दोनों में एक दूसरे को अपकारी कहकर, भेद उत्पन्न करे, भिन्न होने पर, दोनों के प्रति उपांशु दण्ड का प्रयोग करे ।

---

(२) कोप : विद्रोह, कुपित होना । द्र० १:१३:२०, १:१६:२९, ७:१६:२०, ८:२:२, ९:४:८, १४:२:४५ ।

(३) मित्रव्यसन : मित्रपर विपत्ति ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) च्छिद्रेषु : निर्बल, रक्षा में शैथिल्य के स्थान । द्र० २:३:६ ७:६:२८, ९:८:२३ । गण० ३:१८३ ।

पाठ भेद :

'वाऽन्तर्धि' : का भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'वानन्तर्धि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. अन्तर्धि : दो के बीच स्थित या दो के मध्य में । इस राजा की परिभाषा ७:१३:२५ में की गयी है । इसे बफर स्टेट कहते हैं । जैसे, नैपाल, भूटान स्विटजर लैण्ड । द्र० ७:९ । ४५; ७:१६:२७ गण० २:२९८, ३६४ ।

पाठभेद :

'अपदिशन्' का तंजौर में 'अपदिशत्' तथा तेलगु अनुप्रतिलिपि में 'अपदिशेत्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) कपाल संश्रयत : कपालसन्धि के सन्दर्भ में शायद कहा गया है । द्र० ७:२:१४, ७:३:३०, ६:८:१० । कपाल का अर्थ मानव खोपड़ी भी होती है । वह सन्धि जिसमें बहुत माँग की जाती है । पद्म० ३:५२:४० गण० २:२५२ ।

(२) मूलहर : जो अपनी पैतृक सम्पत्ति नष्ट करता है । द्र० २:९:२०, २१; ७:८:७, ७:१३:१३, ८:३:६६, गण० १:१६३ ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अपदेश : इसका अर्थ मिथ्या घोषणा या बयान तथा मिथ्या रूप से सम्बन्धित करना भी किया गया है । द्र० ४:८:१ ।

(२) उपांशुण्ड : चुपचाप दण्ड देना । द्र० १:१३:२०, १:१७;६; गण० ३:१३६, १४४, १९४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पार्श्वस्थो[1] वा बलस्थयोरासन्नभयात्प्रतिकुर्वीत ।

१६. दो प्रबलों में जिससे भय आसन्न हो, उसका समीपवर्ती होकर, आत्मरक्षा का उपाय करे ।

दुर्गापाश्रयो वा द्वैधीभू[2]तस्तिष्ठेत् ।

१७. अथवा दुर्ग का आश्रय लेकर, द्वैधीभूत होकर रहे ।

संधिविग्रहक्रमहेतुभिर्वा चेष्टेत् ।

१८. अथवा सन्धि एवं विग्रह के अनुसार चेष्टा करे ।

दूष्यामित्राटविकानुभयोरुपगृह्णीयात् ।

१९. दोनों के दूष्य, अमित्र एवं आटविकों को उपगृहीत करे ।

एतयोरन्यतरं गच्छंस्तैरेवान्यतरस्य व्यसने प्रहरेत् ।

२०. इनमें किसी एक से युद्धरत होता हुआ, उन दूष्यादिकों द्वारा उसके दुर्बल स्थानों पर, प्रहार करे ।

द्वाभ्यामुपहतो वा मण्डलापाश्रयस्तिष्ठेत्, मध्यमु[2]दासीनं[3] वा संश्रयेत ।

२१. अथवा दोनों द्वारा उपहत होने पर, मण्डल का आश्रय ले अथवा मध्यम या उदासीन का आश्रय ग्रहण करे ।

तेन[1] सहैकमुपगृह्येतरमुच्छिन्द्यो[2]द्, उभौ वा ।

२२. उसके साथ एक को उपगृहीत कर अन्य का अथवा दोनों का उच्छेद करे ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) पार्श्वस्थ : द्र० २:६:२०; २:१५:३ १२:५:२७ गण० १:४० ।

पाठभेद :

'दुर्गपाश्रयो' का तंजौर में (दुर्गपालश्रयो) तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में (दुर्गपालाश्रयो) पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) द्वैधीभूत : दुर्ग में आश्रय लेना या दोहरी युद्ध नीति अपनाना । द्र० ७:२:५:७:३:१९, ७:७:३ ।

पाद टिप्पणी :

१९. (१) दूष्य : विद्रोही, द्रोही, षड्यन्त्र कारी । द्र० १:११:१७, ३:१४:२७, ५:१:४, गण० ३: १५०, १७० ।

पाठ भेद :

'उपहतो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उपहितो' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी

२१. (१) उपहत : कष्टापन्न, कृच्छ्रगत, पीड़ित व्यक्ति या पीडा देकर धन जिससे एकत्रित किया जाता है । द्र० २:८:३४, ४:३:४३, १:१४:३ ।

(२) मध्यमः द्र० ६:२:२१, १३:२:६ ।

(३) उदासीन : द्र० ४:१३:१७, ६:२:२२, ७:९:४४, ७:१३:२८, ९:७:१६ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) तेन : मध्यम एवं उदासीन राजा के लिए प्रयुक्त किया गया है ।

(२) उच्छिन्न : उच्छेद । द्र० ७:३:३३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वाभ्यामुच्छिन्नो वा मध्यमोदासीनयोस्तत्पक्षीयाणां वा राज्ञां न्यायवृत्तिमाश्रयेत ।

२३. अथवा दोनों द्वारा उच्छिन्न किये जाने पर मध्यम एवं उदासीन अथवा उनके पक्ष के राजाओं में जो न्यायी हो, उसका आश्रय ग्रहण करे ।

तुल्यानां वा यस्य प्रकृतयः सुख्येयुरेनं, यत्रस्थो वा शक्नुयादात्मानमुद्धर्तुं, यत्र वा पूर्वपुरुषोचिता गतिरासन्नः सम्बन्धो वा, मित्राणि भूयास्यतिशक्तिमन्ति वा भवेयुः ।

२४. अथवा समान न्यायी राजाओं में जिसकी प्रकृतियाँ अपने साथ मैत्री करे अथवा जिसका आश्रय लेकर, अपना उद्धार करने में समर्थ हो अथवा जिसके साथ पूर्व पुरुषोचित गति अथवा आसन्न सम्बन्ध हो अथवा जिसके शक्तिमान प्रचुर मित्र हों, उसका आश्रय ग्रहण करे ।

प्रियो यस्य भवेद् यो वा प्रियोऽस्य कतरस्तयोः ।
प्रियो यस्य स तं गच्छेदित्याश्रयगतिः परा ॥

२५. जो जिसका प्रिय है उनमें कौन किसके लिये प्रिय नहीं होता अर्थात् उनमें दोनों एक दूसरे को प्रिय होते हैं । जिसको जो प्रिय हो वह उसी का आश्रय ले यही उत्तम आश्रय है ।

पाठभेद :

'वा राज्ञां' का तंजौर तथा त्रिवेन्द्रम् में 'वा राज्ञा', देवनागरी अनुलिपि में 'वाज्ञा', तथा 'न्यायबृत्तिम्' तंजौर में 'न्यायवृद्धिम' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) मध्यम : द्र० ६:२:२१ गण० २: ३१९ ।

(२) उदासीन : विरक्त, निरपेक्ष । द्र० ४:१३: १७, ६:२:२२, गण० २:३५९, ३:१०८ ।

(३) न्यायवृत्ति : न्यायानुकूल, न्यायानुमोदित पथ का अवलम्बन आदि । न्याय शास्त्र वेदों का मूल कहा गया है । द्र० ४:१:४०, ४२, ४५ मत्स्य० ३:४, ५३:५०, वायु० २:३२:६१, ७:८:१०४:८५, विष्णु० ३:३:२७, ५:१:३८ ।

पाठभेद :

'भूयांस्यतिशक्ति' का तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'भूयांसीति शक्ति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) तुल्य : तुल्यशील, समान ।

(२) पूर्वपुरुष : पूर्वज ।

पाठभेद :

'प्रियोऽस्य कतरस्' का तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'प्रियेऽस्य कतरस्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) आश्रय : शरण । द्र० १:१६:३४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे संश्रयवृत्तिः द्वितीयोऽध्यायः ।
आदितः शततमः ।

सप्तम अधिकरण के अन्तर्गत षाड्गुण्य में आश्रयवृत्ति सम्बन्धित द्वितीय अध्याय समाप्त। आदि से सौवाँ अध्याय समाप्त।

पाठ भेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—इति कौटलीयार्थ-शास्त्रेषाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः संशय-वृत्तिः, आदितः शततमः ।।

मैसूरसंस्करण में—इति षाड्गुण्ये संशयवृत्तिः द्वितीयोऽध्यायः आदितः शततमः ।।

वसाक संस्करण में—इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः संशयवृत्तिः आदितः शततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—इति षाड्गुण्ये-सप्तमेऽधिकरणे संशयवृत्तिः द्वितीयोऽध्यायः ।।२।। आदितः शततमः ।।१००।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ३

एकशततमं प्रकरणम्—समहीनज्यायसां गुणाभिनिवेशः, द्विशततमं प्रकरणम्—हीनसंधयः

एक सौ एक प्रकरण—सम, हीन एवं ज्यायस् अवस्थाओं में गुणों का प्रयोग; एक सौ दो प्रकरण—हीन सन्धियां

विजिगीषुः शक्त्यपेक्षः षाड्गुण्यमुपयुञ्जीत ।

१. विजिगीषु शक्ति की अपेक्षाकर, षाड्गुण्य का प्रयोग करे।

समज्यायोभ्यां संधीयेत, हीनेन विगृह्णीयात् ।

२. सम एवं ज्यायस् (प्रवल) के साथ सन्धि तथा हीन के साथ विग्रह करना चाहिए।

विगृहीतो हि ज्यायसा हस्तिना पादयुद्धमिवाभ्युपैति ।

३. प्रवल के साथ युद्धरत (राजा) हस्ती के साथ पदातियुद्ध सदृश नाश को प्राप्त होता है।

समेन चामं पात्रमामेनाहतमिवोभयतः क्षयं करोति ।

४. सम के साथ युद्ध, कच्चे घट से कच्चे घट के टकराने के समान, दोनों का नाश करता है।

पादटिप्पणी :

एक सौ एकवां प्रकरण ९-३० तथा एक सौ दोवां प्रकरण २१-३६ सूत्रों में है।

१. (१) सम : बराबर, समान, तुल्य। द्र० ६:२:३५।

(२) हीन : दुर्बल, अशक्त, कमजोर, क्षीणबल, अशक्य, सुपराजय। द्र० ६:१:३५।

(३) ज्यायस् : बली, प्रबल, समर्थ, अर्थात अधिक शक्ति युक्त। द्र० ६:२:३५, ७:५:४०, ९:७:१२।

(४) विजिगीषु : द्र० ६:२:१३।

(५) षाड्गुण्य : द्र० ६:२:४, गण० २:२३७।

पादटिप्पणी :

२. (१) संघि : सुलह मेल। हीन के साथ युद्ध करने का सुझाव दिया गया है। द्र० ७:१:२, ६, ७ गण० १:१६, २:२३७, ३४९।

पाद टिप्पणी :

३. (१) पाद : पैदल सैनिक या सेना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुम्भेनेवाश्मा हीनेनैकान्तसिद्धिमवाप्नोति ।

५. हीन के साथ युद्ध, कच्चे घट से पत्थर के टकराने के समान, सिद्धिप्रद होता है।

ज्यायांश्चेन्न संधिमिच्छेद्दण्डोपनतवृत्तमाबलीयसं वा योगमातिष्ठेत् ।

६. यदि प्रबल राजा सन्धि के लिये इच्छुक न हो, ऐसी स्थिति में दण्डोपनत अथवा आबलीयस प्रकारणोक्त उपाय का आश्रय लिया जाय ।

समश्चेन्न संधिमिच्छेद्यावन्मात्रमपकुर्यात्तावन्मात्रमस्य प्रत्यपकुर्यात् ।

७. समान शक्तिवाला यदि सन्धीच्छुक न हो, तो वह जितनी हानि करे, उतनी हानि उसकी करे।

तेजो हि संधानकारणम् ।

८. तेज ही सन्धि का कारण होता है।

नातप्तं लोहं लोहेन संधत्त इति ।

९. अतप्त लोह अन्य लोह के साथ संयुक्त नहीं होता है।

हीनश्चेत्सर्वत्रानुप्रणतस्तिष्ठेत् संधिमुपेयात् ।

१०. सब प्रकार से प्रणत, हीन के साथ सन्धि की जाय।

आरण्योऽग्निरिव हि दुःखामर्षजं तेजो विक्रमयति ।

११. वनाग्नि सदृश दुःख एवं अमर्ष जन्य तेज, विक्रम उत्पन्न करता है।

पाठभेद :

'नैकान्तसिद्धिम्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नैकान्त सिद्धि' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

५. (१) एकान्तसिद्धि : पूर्ण सफलता, जहाँ सफलता निश्चित होती है । हीन के साथ क्यों युद्ध करना चाहिए, इसका कारण कौटिल्य उपस्थित करता है। द्र० ७:३:५; ७:७:११, २२ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) दण्डोपनतवृत्तम् : द्र० ७:२:९, ७:३:६, ७:१५:२१, ३०, ७:१६:२९। गण० ३:१७४।

(२) आबलीयसं वा योगम् : शक्तिशाली आक्रामक के प्रति दुर्बल राजा का व्यवहार तथा दुर्बल राजा को क्या करना चाहिए, उसका वर्णन । अधिकरण १२ का नाम । द्र० ३:३:६, ५, ७:१४:२८, गण० ३:१५४।

पाद टिप्पणी :

७. (१) अपकुर्यात् : अपकार, हानि करना।

(२) प्रत्यपकुर्यात् : अपकार के बदले किया जाने वाला अपकार।

पाद टिप्पणी :

८. (१) तेज : गर्मी, अग्नि, प्रकाश, पंच महाभूतों में से एक है। मत्स्य० ३:२४। गण० ३:१३२ ।

(२) संधान : सन्धि, मिलन।

पाद टिप्पणी :

९. (१) अतप्त : ठण्डा।

पादटिप्पणी :

१०. (१) हीन : हीन शक्ति, कमजोर, द्र० ७:३:२।

(२) प्रणत : नम्र। झुका, प्रणाम करना।

पादटिप्पणी :

११. (१) आरण्य अग्नि : घनजात वह्नि, दावाग्नि।

(२) अमर्ष : असहिष्णुता।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मण्डलस्य चानुग्राह्यो भवति ।

१२. वह मण्डल का अनुग्रहपात्र बनता है।

संहितश्चेत् 'परप्रकृतयो लुब्धक्षीणापचरिताः प्रत्यादानभयाद्वा नोपगगच्छन्ति' इति पश्येद्धीनोऽपि विगृह्णीयात् ।

१३. यदि सन्धि करनेवाला (हीन) विजिगीषु देखे कि शत्रु की प्रकृतियाँ लुब्ध, क्षीण एवं अपचरित हैं अथवा प्रत्यादान भय से (मुझे) अपना नहीं रहे हैं' ऐसी स्थिति में विग्रह करे।

विगृहीतश्चेत् 'परप्रकृतयो लुब्धक्षीणापचरिता विग्रहोद्विग्ना वा मां नोपगच्छन्ति' इति पश्येज्ज्यायानपि संधीयेत, विग्रहोद्वेगं वा शमयेत् ।

१४. यदि प्रबल विजिगीषु देखे "शत्रु के अमात्य लुब्ध, क्षीण एवं अपचरित हैं अथवा युद्धोद्विग्न हे (मुझे) अपनाते नहीं हैं" ऐसी स्थिति में वह भी सन्धि करे, अपना विग्रह का उद्वेग शान्त करे।

व्यसनयौगपद्येऽपि 'गुरुव्यसनोऽस्मि, लघुव्यसनः परः सुखेन प्रतिकृत्य व्यसनमात्मनोऽभियुञ्ज्याद्' इति पश्येज्ज्यायानपि संधीयेत ।

१५: एक साथ दोनों में व्यसन होने पर भी मैं अधिक व्यसन वाला हूँ, शत्रु अल्प व्यसन वाला है, शत्रु अपना व्यसन आसानी से दूर कर, मुझसे युद्ध करेगा" ऐसी स्थिति देखकर, अधिक शक्ति सम्पन्न राजा भी सन्धि करे।

पादटिप्पणी :

१२. (१) मण्डल : द्र० अधिकरण ६ ।

(२) अनुग्रह : कृपा, दान से उपकार, दानरूप उपकार। द्र० २:१:१५, २:३५:३१, १३:४:२, मत्स्य० १८८:५३, गण० १:११३, ३:-०० ।

पाठभेद :

'परप्रकृतयो' का देवनागरी अनुलिपि में 'प्रकृतयो' पाठभेद मिलता है। तथा 'पचरिताः' का 'षचितिकाः', त्रिवेन्द्रम में 'पचविताः', तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पचारिता' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

१३. (१) लुब्ध : लोभी। द्र० ३:४:२२।

(२) क्षीण : भययुक्त, भयाकुल । नारद० २४:८० ।

(३) अपचरित : दोष, दुष्कृत्य, दुष्कर्म, विद्रोही, चरित्रहीन। द्र० ७:३:१४, ७:४:७, ७:५: १२, १५, गण० २:२४९।

पाठ भेद :

'पचरिता' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'पचारिताः' पाठभेद मिता है ।

पाद पिप्पणी :

१४. (२) विग्रहोद्वेगा : युद्ध, उद्विग्न। गण० २:२३ ।

पाठभेद :

तंजौर में 'ऽपि' लुप्त है। तथा 'प्रतिकृत्य-व्यसन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रकृत्यव्यसनम्' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

१५. (१) व्यसनयौगपद्येऽपि : एकही समय होने वाली आपदाएँ ।

(२) गुरुव्यसन : बड़ी आपदा या विपत्ति।

(३) लघुव्यसन : छोटी आपत्ति या आपदा।

(४) प्रतिकृत्य : प्रतिशोधित, प्रतिकार किया हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संधिविग्रहयोश्चेत्परकर्शनमात्मोपचयं वा नाऽभिपश्येज्ज्यायानप्यासीत ।

१६. यदि अधिक शक्ति सम्पन्न विजिगीषु सन्धि और विग्रह में शत्रु की हानि तथा अपनी वृद्धि न देखे, तो वह भी आसन गुण का आश्रय ले।

परव्यसनमप्रतिकार्यं चेत्पश्येद्धीनोऽप्यभियायात् ।

१७. यदि शत्रु व्यसन अप्रतिकार्य देखे, तो हीन भी अभियान करे।

अप्रतिकार्यासन्नव्यसनो वा ज्यायानपि संश्रयेत ।

१८. अप्रति कार्य अथवा आसन्न व्यसन वाला अधिक शक्ति सम्पन्न भी संश्रय ग्रहण करे।

संधिनैकतो विग्रहेणैकतश्चेत्कार्यसिद्धिं पश्येज्ज्यायानपि द्वैधीभूतस्तिष्ठेत् ।

१९. यदि एक के साथ संधि से तथा एक के साथ विग्रह से कार्य सिद्धि देखे, तो ऐसी स्थिति में अधिक शक्ति सम्पन्न भी द्वैधीभूत का आश्रय ले।

एवं समस्य षाड्गुण्योपयोगः ।

२०. इस प्रकार सम का षाड्गुण्य प्रयोग प्रदर्शित किया गया।

तत्र तु प्रतिविशेषः ।

२१. इनमें हीन के प्रति विशेष स्थिति वर्णित है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) कर्शन : कमजोर या क्षीण करना। द्र० ७:४:१०, ७:१०:४, १३:४:१, मनु० ७:११२।

(२) ज्यायान् : द्र० ६:२:३५, ९:७:२०।

पादटिप्पणी :

१७. (१) परव्यसन : शत्रु या दूसरे की आपदा या विपत्ति।

(२) अभियायात् : आक्रमण या चढ़ाई करना।

पादटिप्पणी :

(१) अप्रतिकार्य : दुःसाध्य।

(२) ज्यायान् : द्र० ७:३१६, ६:१:३५, ७:७:२०।

(३) संश्रय : शरण या आश्रय। द्र० ७:१:१०।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'इति' बाद में और हैं। यहाँ प्रथम प्रकरण समाप्त होता है।

पाद टिप्पणी :

२०. (१) सम : सम या बराबर शक्ति।

पाद टिप्पणी :

२१. (१) तत्र : षाड्गुण्योपयोग से सम्बन्धित न कि सम से।

(२) प्रतिविशेष : विशेष बातें यह हैं से तात्पर्य है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रवृत्तचक्रेणक्रान्तो राज्ञा बलवताऽबलः ।
[१]संधिनोपनमेत्तूर्णं कोश[२]द[३]ण्डात्मभूमिभिः ॥

२२. सेना द्वारा प्रवृत्त प्रबल राजा द्वारा आक्रान्त निर्बल राजा कोश, दण्ड, स्वयं एवं भूमि अर्पित कर, शीघ्र सन्धि करके प्रणत हो जाय ।

स्वयं संख्यातदण्डेन दण्डस्य विभवेन वा ।
उपस्थातव्यमित्येष संधिरात्मामिषो मतः ॥

२३. निर्दिष्ट दण्ड अथवा शक्ति के अनुरूप धन के साथ स्वयं उपस्थित हो । इस प्रकार की सन्धि 'आत्मामिष' कही गयी है ।

सेनापतिकुमाराभ्यामुपस्थातव्यमित्ययम् ।
पुरुषान्तरसंधिः स्यान्नात्मनेत्यात्मरक्षणः ॥

२४. सेनापति एवं राजकुमार शत्रु के समीप उपस्थित किया जाय । इसे 'पुरुषान्तर' संधि अथवा आत्मरक्षण संधि कहा जाता है ।

एकेनान्यत्र यातव्यं स्वयं दण्डेन वेत्ययम् ।
अदृष्टपुरुषः संधिर्दण्डमुख्यात्मरक्षणः ॥

२५. स्वयं एकाकी अथवा सेना शत्रु कार्य साधनार्थ जायेगी । इस प्रकार की जानेवाली संधि 'अदृष्ट पुरुष संधि या दण्डमुख्यात्मरक्षण' संधि कही जाती है ।

पाठभेद :

'बलवताऽबल' का तंजौर में 'बलवता बल' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२२. (१) संधि : संधियाँ १६ प्रकार की कही गई है । (१) आत्मार्मिष संधि, (२) पुरुषान्तर सन्धि (३) अदृष्ट पुरुष सन्धि, (४) परिक्रम संधि (५) उपग्रह सन्धि । (६) सुवर्ण सन्धि, (७) कपाल सन्धि, (८) आदिष्ट संधि, (९) उच्छिन्न सन्धि, (१०) अवक्रय सन्धि, (११) पर दूषण सन्धि मुख्य है । गण० १:१६, २:२३, २:३४९ । यहाँ से ३६ तक पद्य में लिखा गया है ।

(२) कोश : खजाना । द्र० ८:१:१४, ९:४: १८ ।

(३) दण्ड : सेना । १:५:१ ।

(४) आत्म : स्वयं समर्पण ।

(५) भूमि : देश या जनपद । द्र० ७:९:१, ३१ ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) दण्डस्य विभवेन : सेना की शक्ति के अनुसार ।

(२) उपस्थातव्य : राजा को स्वयं आत्म समर्पण करने से तात्पर्य है ।

(३) आत्मामिष : आत्म समर्पण करना स्वयं भक्षी के समान बना लेना । गण० २:२५० ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) पुरुषान्तर सन्धि : शत्रु के समीप राजा न जाकर, युवराज मा सेनापति के प्राध्यम से संधि करता है । इस सन्धि को आत्म रक्षण संधि भी कहते हैं । द्र० ७:१:१८:१६, २०, गण० २:२५१ ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) एकेन : राजा अथवा अकेली सेना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुख्यस्त्रीबन्धनं कुर्यात्पूर्वयोः पश्चिमे त्वरिम् ।
साधयेद्गूढमित्येते दण्डोपनतसन्धयः ॥

२६. पूर्व की दो संधियों में प्रमुखजनों की कन्याओं से विवाह सम्बंध स्थापित किया जाय तथा अंतिम संधि में शत्रु को गूढ विधि से (विषादि से) वश में करे। ये दण्डोपनत संधियाँ कही गयी हैं।

कोशदानेन शेषाणां प्रकृतीनां विमोक्षणम् ।
परिक्रयो भवेत्सन्धिः स एव च यथासुखम् ॥

२७. कोशदान प्रदान करके शेष प्रकृतियों को मुक्त करना परिक्रय सन्धि होती हैं। वही सन्धि सूखपूर्वक की जा सकती है।

स्कन्धोपनेयो बहुधा ज्ञेयः सन्धिरुपग्रहः ।
निरुद्धो देशकालाभ्यामत्ययः स्यादुपग्रहः ॥

२८. खण्डशः अनेक बार धन देकर सम्पन्न हो तो उपग्रह सन्धि कही जाती है। देश-काल द्वारा प्रति बन्धित उपग्रह अत्यय कहा जाता है।

---

(२) अन्यत्र : जहाँ शत्रु नहीं स्थित है अर्थात् दूसरी जगह।

(३) यातव्य : राजा जिसके विरुद्ध आक्रमण किया जाता है। द्र० ६:२:१६, ८:५:१, ७:१३:२१, गण १:१५, १६, २:२८५।

(४) स्वयं : राजा जहाँ स्वयं जाता हैं।

(२) दण्ड : राजा जहाँ सेना, सेनापति कुमार, अथवा अन्य अधिकारी के नेतृत्व में सेना भेजता है।

(६) अदृष्टपुरुष : राजा एक स्थान पर तथा दूसरे स्थान पर शत्रु के दृष्टिगत न होकर कार्य करता है। द्र० ७:२:७, गण० २:२५१।

पादटिप्पणी :

२६. (१) मुख्य : सेनापति या कुमार, या सरदार।

(२) स्त्रीबन्धन : बली राजा से विवाह सम्बन्ध।

(३) साधयेद्गूढ़ : हत्या करा दे।

(४) दण्डोपनत : जहाँ सेना आत्म समर्पण करती है। या बल से दबती है। द्र० ५:१:५३, ७:२:९; ७:३:६, ७:१५:३, गण० २:३६४।

पाद टिप्पणी :

२७. (१) परिक्रय : क्रीत या क्रय खरीदी गई सन्धि, जो धनादि देकर की जाती है। गण० २:२५१।

पाद टिप्पणी :

२८. (१) स्कन्धोपनेयो : किश्त में देना इसका शाब्दिक अर्थ होगा। कन्धे पर ले जाना। गण० २:२५१।

(२) अत्यय : एक सन्धि का नाम है। द्र० २:१२; २६, ३२, ३५, गण० १:१३७, २०४, ३:३९।

(३) उपग्रह : उपग्रह सन्धि, सहायता, सहयोग समर्थन। द्र० १:१४:५, १:१५:१, १:१८:७, २:१०:७ ४१:२३:११, ५:१:३, ५:६:२, १४ ८:४:१५, २३, २४, २९ ९:७:२४, २८। गण० १:६, २:२५१ ३:९।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषह्यदानादायत्यां क्षमः स्त्रीबन्धनादपि ।
सुवर्णसन्धिर्विश्वासादेकीभावगतो भवेत् ॥

२९. वह अनुकूल दान के कारण भविष्य में सुखप्रद होने से कन्यादान सन्धि तथा विश्वासवश एक रूप होने के कारण सुवर्ण सन्धि भी कही गयी है ।

विपरीतः कपालः स्यादत्यादानाभिभाषितः ।
पूर्वयोः प्रणयेत्कुप्यं हस्त्यश्वं वागरान्वितम् ॥

३०. इनसे विपरीत सन्धि जिसमें अधिक धन तत्काल दिया जाय कपाल सन्धि कही गयी है । पूर्व की दो सन्धियों में कुप्य अथवा विषान्वित हाथी-घोड़ा दे ।

तृतीयेप्रणयेदर्थं कथयन् कर्मणां क्षयम् ।
तिष्ठेच्चतुर्थ इत्येते कोशोपनतसन्धयः ॥

३१. तृतीय सुवर्ण सन्धि में कर्महानि की बात कह कर कुछ धन दे । चतुर्थ कपाल सन्धि में मध्यम या उदासीन भाव का आश्रय लेकर कालयापन करे । इन्हें कोशोपनत सन्धि कहा गया है ।

भूम्येकदेशत्यागेन शेषप्रकृतिरक्षणम् ।
आदिष्टसन्निधत्रेष्टो गूढस्तेनोपघातिनः ॥

३२. भूमि का एक भाग प्रदान कर शेष प्रकृति का रक्षण आदिष्ट सन्धि कही गयी है। गूढजनों एवं चोरों द्वारा उपघात करने में समर्थ के लिए यह सन्धि अभीष्ट होती है ।

पाठभेद

'क्षमः स्त्री' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्त्री' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२९. (१) सुवर्ण सन्धि : पारस्परिक सद्भावना या विश्वास के साथ सन्धि को सुवर्ण सन्धि कहते हैं । गण० २:३५१ ।

पाठभेद :

'दानाभिभाषितः' का त्रिवेन्द्रम में 'दानाभाषितः', भाषाव्याख्यान तथा श्रीमूला में 'दानादभाषितः, तथा 'वागरान्वितम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वागुरान्वितम्' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३०. (१) कपाल : धन देकर, सन्धि के लिए भिक्षा मांगने से तात्पर्य है । द्र० ७:३:१४ पद्म० ३:५२:४०, गण० २:२५२ ।

(२) वा गरान्वितम् : द्र० १२:१:२५ ।

पाठ भेद :

'अर्थं' का तंजौर, तेलगू अनुप्रति लिपि, श्रीमूला में 'अर्थं' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३१. (१) अर्थ : कुल द्रव्य परिमाण, संख्या ।

(२) कोशोपनत संधि : द्रव्य या धन या कोश देकर सन्धि करना । गण० २:२५२ ।

पाठ भेद :

'शेष प्रकृति' का तंजौर में 'शेप्रकृति' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'देशप्रकृति' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३२. (१) आदिष्ट सन्धि : कुछ देश की भूमि का भाग देकर जो सन्धि की जाती है । गण० २:२५२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूमीनामात्तसाराणां मूलवर्जं प्रणामनम् ।
उच्छिन्नसन्धिस्तत्रेष्टः परव्यसनकाङ्क्षिणः ॥

३३. राजधानी एवं दुर्ग को छोड़कर, गृहीतसार वाली भूमि प्रदान कर, की गयी सन्धि 'उच्छिन्न' सन्धि होती है । यह सन्धि शत्रु-व्यसनकांक्षी के लिए श्रेष्ठ है ।

फलदानेन भूमीनां मोक्षणं स्यादवक्रयः ।
फलातिमुक्तो भूमिभ्यः सन्धिः सपरिदूषणः ॥

३४. भूमि का उत्पन्न फल प्रदान कर की गयी सन्धि 'अवक्रय' सन्धि तथा भूमि से उत्पन्न फल के अतिरिक्त और कुछ प्रदान कर की गयी सन्धि 'परिदूषण' सन्धि कही गयी है ।

कुर्यादवेक्षणं पूर्वौ पश्चिमौ त्वाबलीयसम् ।
आदाय फलमित्येते देशोपनतसंधयः ॥

३५. पूर्व की दो सन्धियों में शत्रुव्यसन की प्रतीक्षा की जाय । अन्तिम दो में भूमि-फल लेकर आबलीयसप्रकरणोक्तविधि से शत्रुद्रोह किया जाय । ये 'देशोपनत' सन्धियाँ कही गयी हैं ।

---

(२) गूढ़स्तेन : गूढ़ पुरुष तथा चोर । द्र० १: ११:१, १:१६:२४, ३३, याज्ञवल्क्य ३:१२९:१७० ।

पाठ भेद :

'तत्रेष्टः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तत्रेधगूढ़' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३३, (१) मूल : राजधानी, केन्द्र । द्र० ७: २:१४, ७:८:५, १:९:२०, मत्स्य० १:१३७, ३: १९१, २१८।

(२) उच्छिन्न सन्धि : सार को लेकर जो सन्धि की जाती हैं उसे उच्छिन्न सन्धि करते हैं । द्र० गण० २:२५२ ।

पाठ भेद :

'अवक्रयः' का त्रिवेन्द्रम तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपक्रयः' 'फलातियुक्तो' का तंजौर तथा तेलगू अनुलिपि में 'फलातिभुक्तो', 'परिदूषण,' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'परिभूषण', पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३४. अवक्रय सन्धि : भूमि को बचाकर उत्पादन देकर जो सन्धि की जाती है, उसे अवक्रय या किराया या भाड़े की सन्धि कहते हैं । द्वितीय-विश्वयुद्ध में लीज एण्ड लेण्ड इसी के अन्तर्गत आती हैं । द्र० ४:१४:१, १७, ३:८:२५, ३:९:३४, ३: २०:१०, गण० २·११२, २५३, अग्नि० १५८:३३ ।

(२) परिदूषण सन्धि : कुछ अतिरिक्त धन देकर अपनी भूमि वापस ले लेना । जिससे भूमि का उत्पादन पूर्णतया समर्पण कर दिया जाता है ।

पाठभेद :

'अवेक्षणं' का तंजौर में 'अवेक्षं' 'पूर्वौ' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पूर्वं', पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) देशोपनत संधि : उत्पादन लेकर जो सन्धि की जाती है, उसे देशोपनत सन्धि कहते हैं । इसे भूम्युपनत सन्धि सहते हैं । गण० २:२३३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वकार्याणां वशेनैते देशे काले च भाषिताः ।
आवलीयसिकाः कार्यास्त्रिविधा हीनसन्धयः ॥

३६. प्रबल राजा अपने कार्यवश देश कालानुसार—इन तीन प्रकार की हीन, सन्धियों का प्रयोग करें।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे समहीनज्यायसां गुणाभिनिवेशो हीनसंधयश्च तृतीयोऽध्यायः । आदित एकशततमः ।

सप्तम संधिकरण षाड्गुण्य के अन्तर्गत सम-हीनज्यायसगुणाभिनिवेद और हीनसंधि सम्बद्ध तृतीय अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ एक अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

'देशे काले' का त्रिवेन्द्रम में 'देशकाले' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३६. (१) हीन सन्धि : (१) दण्डोपनत, (२) कोशोपनत, (३) देशोपनत सन्धियाँ हीन कही जाती है। गण० २:२५३

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्र षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः समहीनज्यायसांगुणाभिनिवेशो हीनसन्धयः आदित एकशततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये समहीन ज्यायसां गुणाभिनिवेशो-सन्धयश्च तृतीयोध्यायः आदित एकशततमः ।

वसाकसंस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये तृतीयोध्यायः समहीनज्यायसां गुणाभिनिवेशोहीनसन्धयः आदित एकशततमः ।

उदयवीरशास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे समहीन ज्यायसां गुणाभिनिवेशोहीनसंधयः नृतीयोऽध्यायः ॥३॥ आदित एकाधिक सतमोऽध्यायः ॥१०१॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ४

[त्रिशततमं प्रकरणम्—विगृह्यासनम्;
चतुःशततमं प्रकरणम्—संधायासनम्;
पञ्चशततमं प्रकरणम्—विगृह्ययानम्;
षट्छततमं प्रकरणम्—संधाययानम्;
सप्तशततमं प्रकरणम्—संभूयप्रयाणम्]

एक सौ तीसरा प्रकरण—विग्रह करके आसन, एक सौ चौथा प्रकरण—सन्धि करके आसन, एक सौ पांचवां प्रकरण—विग्रह करके यान, एक सौ छठा प्रकरण—सन्धि करके यान, एक सौ सातवां प्रकरण—एक साथ होकर प्रयाण।

संधिविग्रहयोरासनं यानं च व्याख्यातम्[1]।

१. संधि एवं विग्रह में आसन और यान की व्याख्या की गयी।

स्थानमासनमुपेक्षणं[1] चेत्यासनपर्यायाः[2][3]।

२. स्थान, आसन एवं उपेक्षण आसन के पर्याय हैं।

पादटिप्पणी :

पाचों प्रकरण सूत्र १-१२, १३, १७, १८, १९—२२ में वर्णित किए गए हैं।

१. (१) व्याख्यातम् : नीति का इस अध्याय में व्याख्या की गयी है। आसन एवं यान सन्धि तथा विग्रह के अन्तर्गत आते हैं।

पादटिप्पणी :

२. (१) स्थान : स्थिर या निश्चित रहना स्थान एवं उपेक्षा आसन के तुल्यार्थक हैं। द्र० ७:४:३, ८:२:२६, गण० १:४३, २:२४०, २५४, ३:१०७, १२४, १४२।

(२) आसन : शान्त रहना। परिभाषा द्र० ७:४:३, ७:१:८ गण० २:२३७, २५४, ३:१०७।

(३) उपेक्षण : उदासीन या निरपेक्ष रहना। द्र० ७:४:३, गण० २:२५४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशेषस्तु—गुणैकदेशे[1] स्थानम्[3] स्ववृद्धिप्राप्त्यर्थम् आसनम् उपायानामप्रयोग उपेक्षणम् ।

३. इनमें वैशिष्टय इस प्रकार है—शत्रुकृत अपकार का प्रत्यपकार करने की शक्ति के अभाव में स्थान, अपनी वृद्धि के लिये आसन एवं उपायों का प्रयोग न करना उपेक्षण, कहा जाता है।

अतिसंधानकामयोरविजिगीष्वोरुपहन्तुमशक्तयोर्विगृह्यासनं संधाय वा ।

४. संधि के लिये इच्छुक शत्रु एवं विजिगीषु परस्पर अपकार करने में असमर्थ होने पर, विग्रह करके अथवा संधि करके आसन का आश्रय लें।

यदा वा पश्येत् 'स्वदण्डैर्मित्राटवीदण्डैर्वा समं ज्यायांसं वा कर्शयितुमुत्सहे' इति तदा कृतबाह्याभ्यन्तरकृत्यो[4] विगृह्यासीत ।

५. यदि देखे—'अपनी सेना से, मित्रसेना अथवा अटवी सेना से सम अथवा ज्यायस शत्रु का पराभूत करने में समर्थ हूँ' ऐसी स्थिति में बाह्य एवं आभ्यन्तर कृत्य सम्पन्न कर विग्रह करके आसन ग्रहण करें।

पाठ भेद :

असनम्, का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आसनमासनम्' तथा 'उपायानम्' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'अपायानाम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) गुण : समुदय या घटक का गुण । द्र० ६:१:१५, ७:१:१२, १६, १९, गण०, १:२१५ ।

(२) एकदेश : शक्ति की अल्पता या गुण का केवल एक भाग उपस्थित रहता है।

(३) स्थान : स्थिर या शान्त रहना । द्र० ७: ४:२, गण० १:१४३, ३:१४२, २:२४० ।

पाठ भेद :

'संधान' के पूर्व तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उपेक्षणमिति' पाठ मिलता है। तथा 'कामयोरविजि' का तंजोर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कामयोरपिविजि' पाठ भेद मिलता है।

४. (१) अतिसंधान : मेल करना, सन्धि करना।

पादटिप्पणी :

५. (१) ज्यायांसं : श्रेष्ठतर, योग्यतर, मनु० ४:८

(२) कृतबाह्य . बाह्य जनपद गत ।

(३) आभ्यन्तर : दुर्गादि अन्तरगत, दुर्गादिगत या दुर्ग का अन्तर्भाग ।

(४) कृत्य : जो किया जाना चाहिए । मनु० २:२३७, ७:६७ !

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदा वा पश्येत् 'उत्साहयुक्ता मे प्रकृतयः संहता विवृद्धाः स्वकर्माण्यव्याहताश्चरिष्यन्ति परस्य वा कर्माण्युपहनिष्यन्ति' इति तदा विगृह्यासीत ।

६. यदि देखे—'मेरी उत्साह सम्पन्न प्रकृति संहत एवं विवृद्ध हैं तथा स्वकर्म बिना रुकावट के करेंगे अथवा शत्रुकर्म की हानि करेंगे,' ऐसी स्थिति में विग्रह करके आसन स्वीकार करें।

यदा वा पश्येत् 'परस्यापचरिताः क्षीणा लुब्धाः स्वचक्रस्तेनाटवीव्यथिता वा प्रकृतयः स्वयमुपजापेन वा मामेष्यन्ति; संपन्ना मे वार्ता, विपन्ना परस्य, तस्य-प्रकृतयो दुर्भिक्षोपहता मामेष्यन्ति; विपन्ना मे वार्ता, संपन्ना परस्य, तं मे प्रकृतयो न गमिष्यन्ति, विगृह्य चास्य धान्यपशुहिरण्यान्याहरिष्यामि; स्वपण्योपघातीनि वा पर-पण्यानि निवर्तयिष्यामि, परवणिक्पथाद्वा सारवन्ति मामेष्यन्ति विगृहीते, नेतरम्;

७. अथवा यदि देखे—'शत्रु के प्रकृतिजन अपचरित, क्षीण, लुब्ध अथवा अपनी सेना, चोर एवं आटविकों से पीड़ित हैं, वे स्वयं अथवा भेद के कारण मेरे पास आयेंगे, मेरी वार्ता (कृष्यादि) सफल तथा शत्रु की विफल है, उसके दुर्भिक्ष पीड़ित प्रकृतिजन मेरे पास आयेंगे, मेरी वार्ता विपन्न शत्रु की सम्पन्न है, उसके पास मेरे प्रकृतिजन नहीं जायेंगे, और विग्रह करके इसके धान्य, पशु एवं हिरण्य का हरण करूँगा अथवा अपने पुण्य की हानि करने वाले परदेशीय पण्य (शत्रु के पण्य) का निवारण करूँगा अथवा विग्रह करने पर शत्रु के वणिक्पथ से सारवती वस्तुएँ मेरे पास आयेंगी शत्रु के पास नहीं जायेंगी अथवा विग्रह करने पर शत्रु अपने दूष्य, अमित्र एवं आटविकों का निग्रह

पाठभेद :

'स्वकर्माण्य' का देवनागरी अनुलिपि में 'स्वकर्मणि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) संहत : मिलकर आघात करना ।

(२) स्वकर्म : अपना काम ।

(३) अव्याहत : बिना रोक या रुकावट या बिना विरोध ।

(४) पर : शत्रु ।

(५) कर्माण्युपहनिष्यति : कर्म समूल नष्ट करना ।

(६) विग्रह : युद्ध

पाठभेद :

'पचरिताः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में पचारिताः तथा 'मित्रभाव्यभिप्रयातो' का 'मित्रभाव्यप्रपातो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) अपचरित : विद्रोह, दोष, वह राजा जिसकी प्रजा अत्याचार से उद्विग्न हो। द्र० ७:३: १३, १४, ७:५:१२, १५, गण० २:२४९

(२) स्वचक्र : अपनी सेना ।

(३) प्रकृतयः : अपनी प्रकृति का । गण० १: १४।

(४) उपजाप : गुप्त प्रोत्साहन । द्र० १:१३: २६, १:१६:२६, ३:६:३२ ।

(५) वार्ता : कृषि पशुपालन आदि । गण० १:२६ ।

(६) सार : हाथी प्रभृति मूल्यवान द्रव्य समूह ।

(७) नेतरम् : इतर, शत्रु ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्यामित्राटवीनिग्रहं वा विगृहीतो न करिष्यति, तैरेव वा विग्रहं प्राप्स्यति; मित्रं मेमित्रभाव्यभिप्रयातो बह्वल्पकालं तनुक्षयव्ययमर्थं प्राप्स्यति, गुणवतीमादेयां वा भूमिम्; सर्वसंदोहेन वा मामनादृत्य प्रयातुकामः कथं न यायाद्' इति परवृद्धिप्रतिघातार्थं प्रतापार्थं च विगृह्यासतीत ।

करने में समर्थ नहीं रहेगा अथवा उन्हीं से आक्रान्त होगा । मेरे भावी मित्र पर, आक्रमण करके यह शत्रु अत्यल्पकाल में थोड़े सैन्य एवं जल्यल्प धन व्यय से अधिक धन लाभ प्राप्त करेगा, अथवा गुणवती एवं अत्युपयोगी भूमि प्राप्त करने के लिये मेरा अनादर करके, समग्र सैन्य के साथ अभियान करना चाहता है, अतः किस उपाय से यह अभियान न करे, इस प्रकार की स्थिति में शत्रु की वृद्धि की हानि के लिये तथा अपना प्रताप आविष्कृत करने के लिये, निग्रह करके आसन स्वीकार करें ।

'तमेव हि प्रत्यावृत्तो ग्रसते' इत्याचार्याः ।

८. 'वह लौटकर, उसी को ग्रसित करता है' यह आचार्यों का कथन है ।

नेति कौटिल्यः ।

९. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है ।

कर्शनमात्रमस्य कुर्यादव्यसनिनः, परवृद्धया तु वृद्धः समुच्छेदनम् ।

१०. वह (शत्रु) व्यसन रहित को थोड़ा पोड़ित मात्र कर सकता है किन्तु विजय की वृद्धि से सबल होकर मूलोच्छेद करने में समर्थ होता है ।

---

(८) दूष्य : विश्वासघाती, विद्रोही । द्र० १: ११:१७, ५,१:४, ७:६:८ ।

(९) मित्रभाव्य : सम्बन्धियों से मिला या सम्बन्धियों से सिद्ध करने योग्य । गण० २:३६४ ।

(१०) क्षय : सैन्यादि का क्षय ।

(११) व्यय : अर्थ का व्यय । गण० ३:६७, ९७ ।

(१२) वृद्धि : द्र० ७:१२:२९, ९:७:५, गण० १:१४३, २:२३९ ।

(१३) प्रताप : शक्ति, बल, ऊर्जा, उत्साह ।

पादटिप्पणी :

८. (१) प्रत्यावृत्त : पीछे हटने पर या उलट कर हमला करने से तात्पर्य है । गण २:२५६

(२) ग्रसते : ग्रास करना, पराजित करना । द्र० १:४:१४, गण० ३:११२ ।

पाठभेद :

'परवृद्धया' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'परिवृद्धया' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) कर्शन : कमजोर या क्षीण करना । ७:३:१६, ७:८:८, ७:१०:४, १३:४:१ । गण० ३२० ।

(२) परवृद्धया : विजिगीषु या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं परस्य यातव्योऽस्मै साहाय्यमविनष्टः प्रयच्छेत् ।

११. इस प्रकार शत्रु का यातव्य (आक्रमण) अविनष्ट होकर, इसे सहायता प्रदान करेगा।

तस्मात्सर्वसंदोहंप्रकृतं विगृह्यासीत ।

१२. अतः सर्व संदोहपूर्वक अभियान कर्ता के साथ विग्रह करके आसन ग्रहण करे।

विगृह्यासनहेतुप्रातिलोम्ये संधायासीत ।

१३. विग्रह करने पर, आसनहेतुओं की विपरीत स्थिति होने पर, संधि करके, आसन ग्रहण करे।

विगृह्यासनहेतुभिरभ्युच्चितः सर्वसंदोहवर्जं विगृह्य यायात् ।

१४. विग्रह करके, आसनहेतुओं से प्रवृद्ध होकर, वह सर्व सन्दोहपूर्वक अभियानकर्ता को छोड़कर, अन्य से विग्रह कर, अभियान करे।

पादटिप्पणी :

११. (१) एवं : जब विजिगीषु युद्ध की घोषणा करता है।

(२) परस्य यातव्य : राजा जिसके विरुद्ध आक्रमण करना आवश्यक हो। विजिगीषु के शत्रु का शत्रु। द्र० ६:२:१६, ७:५:१, ७:१३:२१।

पाठभेद :

'प्रकृतं विगृह्या' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रकृतविगृह्या' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१२. (१) संदोह : सैन्यसज्जीकृत या मोबेलाईजेसन करना। द्र० ६:१:३८, ७:४:७, १४, ७:१३:५ ९:७:६, २२, १२:१:३, १३:३, २३।

पाठभेद :

'सनहेतुप्राति' का तंजौर में 'सनेनेतु प्राति' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सनेतुप्राति' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) विगृह्यासन : शत्रु का प्रतिष्ठान नष्ट करना और अपना बढ़ाना। गण० २५४।

(२) संस्थायासन : अपने प्रतिष्ठान को केवल बढ़ाना या शान्त रहना।

पाद टिप्पणी :

१४. (१) अभ्युच्चित : ७:४।१४ नियमित प्रचलित प्रथा के अनुरूप।

(२) सर्वसन्दोह : सब एक साथ लाना। जब शत्रु अपनी सब सेना का मोबेलाईजेसन या सज्जीकरण करता है, से तात्पर्य है। द्र०६:२:३८, ७:४:१२, १४, ७:१३:५, ९:६:५५, १२:१:३; १३:३:२३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदा वा पश्येत् 'व्यसनी परः, प्रकृतिव्यसनं वाऽस्य शेषप्रकृतिभिरप्रतिकार्यम्; स्वचक्रपीडिता विरक्ता वाऽस्य प्रकृतयः कर्शिता निरुत्साहाः परस्पराद्वा भिन्नाः शक्या लोभयितुम्; अग्न्युदकव्याधिमरकदुर्भिक्षनिमित्तं क्षीणयुग्यपुरुषनिचयरक्षाविधानः परः' इति तदा विगृह्य यायात् ।

१५. अथवा जब यह देखे 'शत्रु व्यसनी है अथवा इसकी प्रकृति का व्यसन शेष प्रकृतियों द्वारा दूर नहीं किया जा सकता है, अथवा चक्र पीड़ित एवं विरक्त इसकी प्रजा दुःखी, उत्साह-रहित एवं परस्पर भिन्न (भेदयुक्त) है, सरलरीति से प्रलोभित की जा सकती है, अग्नि, जल, व्याधि, मरक एवं दुर्भिक्ष के कारण युग्य, कर्म कर, कोश, रक्षाविधान क्षीण हो गया है' उस स्थिति में उस समय विग्रह करके अभियान करे ।

यदा वा पश्येत् 'मित्रमाक्रन्दश्च मे शूरवृद्धानुरक्तप्रकृतिः, विपरीतप्रकृतिः, परः पार्ष्णिग्राहश्चासारश्च, शक्ष्यामि मित्रेणासारमाक्रन्देन पार्ष्णिग्राहं वा विगृह्य यातुम्' इति तदा विगृह्य यायात् ।

१६. अथवा जब देखे 'मेरे मित्र एवं आक्रन्द शूरवृद्धों से युक्त तथा अनुरक्त प्रकृति वाले हैं, शत्रु की स्थिति उसके विपरीत है, पाणिग्राह एवं आसार की उक्त स्थिति है अतएव मित्र से आसार का अथवा आक्रन्द से पार्ष्णिग्राह का विग्रह कराकर, शत्रु पर अभियान करने में सक्षम हो सकूंगा' ऐसी स्थिति में विग्रह कर, अभियान करे ।

पाठभेद :

'परस्पराद्वा' का तंजौर में 'परस्पराला' तेलगू अनुलिपि में 'परस्पराद्' तथा 'निमित्तं' का तंजौर में 'निमन्त्रं' तेलगू अनुलिपि में 'निमंग्न' एवं देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम् में 'तदा' लुप्त है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) मरक : महामारी । द्र० ८:४:१, गण० २:२५ ।

(२) युग्य : जोड़ी या वह वाहन जिसमें घोड़े या बैल दो पशु एक साथ जुते हों । द्र० ७:५:३३, ७:१५:८ ।

(३) निचय : संग्रह, ढेर, समुच्चय । द्र० ७:१५:१० ।

(४) चक्र : सेना । द्र० ७:४:१५ । गण० २:७२

पादटिप्पणी :

१६. (१) आक्रन्द : पृष्ठ भाग का मित्र या आमंत्र मित्र । द्र० १:१६:२९, ६:३:१८, गण० १:८१, २:२२३, ३:१९२ ।

(२) वृद्ध : अनुभवी ।

(३) पार्ष्णिग्राह : पृष्ठ भाग का शत्रु । द्र० ६:२:१६, ७:१३:२, विष्णु० ४:८:१२, मत्स्य० २४०:२४ । ब्रह्म० ३:६५:३२, ४:२५:१४ । गण० २:२३२ ।

(४) आसारम् : सैनिक सहायता, मित्र की सेना, सैन्य वर्धक दल । द्र० १:१६:२९, ६:२:१८, ७:६:८, ७:७:२, ८:१:५४, ९:६:४४; ८:१:३१, १०:२:७, गण० १:२२. ३:५३, २०६, १८८, ३३३ १७१, २९२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदा वा फलमेक[1]हार्य[2]मल्पकालं पश्येत् तदा पार्ष्णिग्राहासाराभ्यां विगृह्य-यायात् ।

१७. अथवा जब फल एकाकी तथा अल्पकाल में सिद्ध होने वाला देखे, उस समय पार्ष्णि-ग्राह एवं आसार के साथ स्वयं विग्रह करके, अभियान करे ।

विपर्यये[1] संधाय[2] यायात्[3] ।

१८. विपरीत स्थिति में संधि करके, अभियान करे ।

यदा वा पश्येत् 'न शक्यमेकेन यातुमवश्यं च यातव्यम्' इति तदा सम-हीनज्यायोभिः सामवायिकैः[1] संभूय यायाद्, एकत्र[2] निर्दिष्टेनांशेन, अनेकत्रा[3]निर्दिष्टे-नांशेन ।

१९. अथवा जब देखे—'एकाकी अभियान नहीं किया जा सकता और अभियान अवश्य करना है' ऐसी स्थिति में सम ज्यायस् एवं हीन शक्ति वाले राजाओं के साथ सामूहिक रूप से अभियान करे, एक स्थान पर भाग का निर्देश करके तथा अनेक स्थानों पर भाग का बिना निर्देश किये अभियान करे ।

तेषामसमवाये[1] दण्डमन्यतस्मान्निर्विष्टांशेन[2] याचेत ।

२०. सम-हीनादि राजाओं का समवाय (समूह) सिद्ध न होने पर, उसे कुछ भाग देना स्वीकार कर, सैन्ययाचना करे ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) एक : अकेले ।

(२) हार्य : हरण, लूट या पकड़े जाने योग्य । मनु० ८:४१७ ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) विपर्यय : वैपरीत्य, विपरीत ।

(२) संधाय : सन्धि या शक्ति का अभियान करना ।

(३) यायात् : द्र० ७:१:१६, ७:५:११, ७:७:२, ७:६:१ ।

पाद टिप्पणी :

१९. (१) सामावयिक : प्रयाण या आक्रमण काल का बना संघ । द्र० ७:५:३८, ४९, गण० १:१५ २:२६५ ।

(२) एकत्र : केवल एक उद्देश्य से अभियान करना ।

(३) अनेकत्र : एक से अधिक उद्देश्यों से आक्र-मण करना या अनेक स्थानों से आक्रमण करना ।

पाठभेद :

'अन्यतस्मन्नि' का तंजौर में 'अन्यतस्मान' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अन्यतरस्मिन्' भपाव्याख्यान तथा श्रीमूला में 'अन्यतरस्मिन्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) समवाय : संयोग, मिला, समृद्ध एक होना संग्रह । द्र० ७:५:३८

(२) निविष्ट : स्थित, निश्चय, नियंत्रित, व्य-वस्थित ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संभूयाभिगमनेन वा निर्विंश्येत, ध्रुवे लाभे निर्दिष्टेनांशेन, अध्रुवे लाभांशेन।

२१. अथवा 'मैं भी आपके अभियान में साथ दूँगा' इस आधार पर, उसे साथ ले, स्थिर लाभ में निर्दिष्ट भाग तथा अस्थिर लाभ में लाभांश प्रदान करे।

अंशो दण्डसमः पूर्वः प्रयाससम उत्तमः।
विलोपो वा यथालाभं प्रक्षेपंसम एव वा॥

२२. सेना के अनुसार लाभ होना प्रथम पक्ष, प्रयास के अनुसार लाभ होना उत्तम पक्ष लूट-पाट से प्राप्ति के अनुसार लाभ होना अथवा धनव्यय के अनुसार न्यूनाधिक लाभ होना चाहिए।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे विगृह्यासनं संधायासनं विगृह्ययानं संधाययानं संभूयप्रयाणं च चतुर्थोऽध्यायः। आदितो द्विशततमः।

सप्तम अधिकरण के अन्तर्गत षाड्गुण्य में विगृह्यासन, संधायासन, विगृह्ययान, संधाययान, संभूयप्रयाण सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ दो अध्याय समाप्त।

पाठ भेद :

'अध्रवे' का तंजौर में 'ध्रुवे' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

२२. (१) पूर्व : प्रथम था प्रथम पक्ष या प्रथम प्रकार।

(२) प्रक्षेप : मूलधन, धनविनियोग, पूँजी। द्र० २:९:४, ३:१३:१७, ४:२:३६, गण० १:१६०, ३:२५९।

गलपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रेषाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः विगृह्यायसनंसन्धायासनंविगृह्ययानं-सन्धाययानं सम्भूयप्रमाणम् आदितो द्विशततमः॥

मैसूरसंस्करण में—

इति षाड्गुण्येविगृह्यासनंसन्धायासनंविगृह्ययानं सन्धाययानं सम्भूयप्रयाणम् च चतुर्थोऽध्यायः आदितो द्विशततमः।

वसाक संस्करण में—

इतिकौटिलीयार्थशास्त्रेषाड्गुण्येसप्तमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः विगृह्यासनं सन्धायासनं विगृह्ययानं सन्धाययानं सम्भूय प्रयाणम् आदितो द्विशततमः॥

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इतिषाड्गुण्येसप्तमेऽधिकरणेविगृह्यासनं संधायासनंविगृह्यासनंसंधाययासनंसंभूय प्रयाणम् चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥ आदितोद्व्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१०२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ५

[अष्टशततमं प्रकरणम्—यातव्यामित्रयोरभिग्रहचिन्ता; नवशततमं प्रकरणम्—क्षयलोभाविरागहेतवः प्रकृतीनाम्; दशशततमं प्रकरणम्—सामवायिकविपरिमर्शः]

एक सौ आठवां प्रकरण—यातव्य एवं अमित्र के अभिग्रह की चिन्ता। एक सौ नवां प्रकरण—प्रकृतियों के क्षय, लोभ एवं विराग के हेतु। एक सौ दशवां प्रकरण—सामवायिक विमर्श।

तुल्यसामन्तव्यसने यातव्यंममित्रं वेत्यमित्रमभियायात्, तत्सिद्धौ यातव्यम्।

१. यातव्य एवं अमित्र में समान व्यसन होने पर, यातव्य अथवा अमित्र पर, अभियान किया जाय ? इस स्थिति में सर्वप्रथम अमित्र पर, अभियान करना चाहिए, उसकी सिद्धि होने पर, यातव्य पर।

अमित्रसिद्धौ हि यातव्यः साहाय्यं दद्यान्नामित्रो यातव्यसिद्धौ।

२. अमित्र के विजित होने पर, यातव्य सहायता कर सकता है, किन्तु यातव्य के वशीभूत होने पर, अमित्र सहायप्रद नहीं होगा।

प्रकरण १०८ : १–१८ सूत्र (१) यातव्य एवं अमित्र के आक्रमण विषय का सम्प्रधारण।

प्रकरण १०९ : १९–३७ सूत्र (२) प्रकृति वर्ग के क्षय, लोभ एवं विराग के भेद के कारण।

प्रकरण ११० : ३८–३९ सूत्र (३) समवाय वद्ध राज गण का विचार।

पाद टिप्पणी :

१. (१) यातव्य : राजा जिसके विरुद्ध अभियान करना आवश्यक या हितकर है। द्र० ६:२:१६, ७:५:१, ७:१३:२१, गण० १:१५,१६, २:२८५।

(२) अभियायात् : अभियान, प्रयाण या मार्च करना। गण० ३:१३५।

(३) सिद्ध : सफल होने पर, वश में करने पर। द्र० २:१५:२४, २:८:१८, २१; ३:६:१३; १५; १३:२:१७, २८, गण० १:१३९, ३:११९।

पाठभेद :

तंजोर तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हि' के लिए 'स' का प्रयोग है।

पादटिप्पणी :

२. (१) अमित्रसिद्धौ : शत्रुओं को जीतने या उन पर सफल होने पर।

(२) यातव्य : द्र० ७:५:१।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुरुव्यसनं यातव्यं लघुव्यसनममित्रं वेति 'गुरुव्यसनं सौकर्यतो यायाद्' इत्याचार्याः ।

३. गुरुव्यसनी यातव्य पर, अथवा लघुव्यसनी अमित्र पर, आक्रमण किया जाय ? इस स्थिति में 'सुख साध्य होने के कारण गुरुव्यसनी यातव्य पर, अभियान किया जाय' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

४. कौटिल्य का ऐसा मत नहीं है।

लघुव्यसनममित्रं यायात् ।

५. लघुव्यसनी अमित्र पर अभियान किया जाय।

लघ्वपि हि व्यसनमभियुक्तस्य कृच्छ्रं भवति ।

६. आक्रान्त का लघुव्यसन भी कष्ट कर होता है।

सत्यं गुर्वपि गुरुतरं भवति ।

७. यद्यपि आक्रान्त का गुरुव्यसन गुरुतर हो जाता है।

अनभियुक्तस्तु लघुव्यसनः सुखेन व्यसनं प्रतिकृत्यामित्रो यातव्यमभिसरेत्, पार्ष्णिं वा गृह्णीयात् ।

८. अनभियूक्त लघुव्यसनी शत्रु सुखपूर्वक अपना व्यसन दूर कर, यातव्य का अनुसरण कर सकता है अथवा पार्ष्णिग्राह बन कर, आक्रमण कर सकता है।

पाद टिप्पणी :

३. (१) गुरु व्यसन : बड़ी आपदा या आपत्ति।

(२) लघु व्यसन : छोटी आपदा।

(३) सौकर्य : सुकर, आसान, सरल।

पाद टिप्पणी :

५. (१) यायात् : अभियान, आक्रमण करे। द्र० ७:१:१६।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हि' लुप्त है तथा देवनागरी अनुलिपि 'कृच्छ्रं' के स्थान पर 'तुध्रुवं' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

६. (१) अभियुक्त : आक्रान्त, आक्रमण करने पर। द्र० ७:५:१६।

(२) कृच्छ्र : कष्टमय, कठिन, प्रायश्चित्त, एक तपस्या या व्रत है। द्र० ५:३:१, ७:५:३३, कूर्म ११:२१, नारद० उ० २३:१७।

पाठभेद :

'प्रतिकृत्यामित्रो' का तंजौर में 'प्रतिकृतामित्रो' पाठभेद मिलता है तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वा' लुप्त है।

पाद टिप्पणी

८. (१) अभिसरेत् : बचाने, उद्धार करने या रक्षा प्राप्त करने वाला। द्र० ४:३:९,३१, ७:५:८।

(२) पार्ष्णि : सेना के पीछे या पीठ का भाग पृष्ठ या पृष्ठ भाग, पश्चाद् भाग। द्र० ७:१:३७, मत्स्य० २४०:२, ४, ब्रह्मा० ३:६५:३२, ४:२५:१४. विष्णु० ४:६:१२, गण० ३:११८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यातव्ययौगपद्ये गुरुव्यसनं न्यायवृत्तिं लघुव्यसनमन्यायवृत्तिं विरक्तप्रकृतिं वेति विरक्तप्रकृतिं यायात् ।

९. गुरुव्यसनी न्यायवृत्ति, लघुव्यसनी अन्यायवृत्ति एवं विरक्त प्रकृति यातव्य पर, आक्रमण करने की स्थिति में सर्वप्रथम विरक्त प्रकृति वाले यातव्य पर, अभियान करना चाहिए।

गुरुव्यसनं न्यायवृत्तिमभियुक्तं प्रकृतयोऽनुगृह्णन्ति, लघुव्यसनमन्यायवृत्तिमुपेक्षन्ते, विरक्ता बलवन्तमप्युच्छिन्दन्ति ।

१०. गुरुव्यसनी न्यायवृत्ति वाले अभियुक्त का प्रकृतिजन अनुगमन करते हैं, लघुव्यसनी अन्यायवृत्ति वाले की उपेक्षा करते हैं, विरक्त प्रकृतिजन बलवान का भी उच्छेदन कर देते हैं।

तस्माद्विरक्तप्रकृतिमेव यायात् ।

११. इसलिये विरक्त प्रकृति वाले यातव्य पर सर्वप्रथम अभियान करना चाहिए।

क्षीणलुब्धप्रकृतिमपचरितप्रकृतिं वेति 'क्षीणलुब्धप्रकृतिं यायात् क्षीणलुब्धा हि प्रकृतयः सुखेनोपजापं पीडां वोपगच्छन्ति, नापचरिताः प्रधानावग्रहसाध्याः' इत्याचार्याः ।

१२. क्षीण एवं लुब्ध प्रकृति वाले अथवा अपचरित प्रकृति वाले यातव्य पर, आक्रमण करने की स्थिति में 'क्षीण-लुब्ध प्रकृति वाले यातव्य पर, पहले अभियान करना चाहिए, क्षीण एवं लुब्ध प्रकृतिजन सुखपूर्वक, उपजाप अथवा पीड़ा को प्राप्त होते हैं, अपचरित प्रकृतिजन ऐसा नहीं करते क्योंकि वे प्रधान पुरुष द्वारा साध्य होते हैं।

पादटिप्पणी :

९. (१) यातव्य : तीन प्रकार के होते हैं।

(२) न्यायवृत्ति : न्याय पूर्वक प्रजा पालनकारी किन्तु गुरु व्यसनयुक्त ।

(३) अन्यायवृत्ति : अन्यायपूर्वक पालनकारी किन्तु लघु व्यसनयुक्त।

(४) विरक्तप्रकृति : प्रकृति वर्ग से विरक्त राजा। विरक्त प्रकृति के तीन विकल्प होते हैं–विरक्त, उदासीन, चित्तवृत्ति में परिवर्तन, असन्तोष, असंतृप्त एवं स्नेह शून्यता।

पादटिप्पणी :

१०. (१) गुरुव्यसन : द्र० ७:५:३ ।

(२) न्यायवृत्ति : न्यायाचरण ।

(३) लघुव्यसन : द्र० ७:५:३ ।

(४) अन्यायवृत्ति : अन्यायपूर्ण आचरण ।

(५) उपेक्षन्ते : जिसके प्रति अनुराग एवं विरागकिसी का भी प्रदर्शन न किया जाय अर्थात् उपेक्षावृत्ति । गण० २:५४ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) यायात् : अभियान या आक्रमण करे। द्र० ७:१:१६, ८:५:१२ ।

पाठभेद :

'प्रधानावग्रह' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में, 'प्रधाना अवग्रह' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१२. (१) अपचरित : विरक्त। अनाहत, दुश्चरित्र, तिरस्कृत। द्र० ७:३:१३, १४, ७:४:७, १५, ७:५:१५ । गण० २:२४५ ।

(२) उपजाप : गुप्तरूप से बहकाना, गुप्तरूप से प्रोत्साहित करना या गुप्तरूप से फुसलाना। द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, ३:८:३२, गण० ३:२ ।

(३) पीडां वोपगच्छन्ति : सुगमता पूर्वक उत्पीड़ित किया जा सके।

(४) प्रधान : मुख्यप्रवर्तक, अग्रसर, नायक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेति कौटिल्यः ।

१३. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है ।

क्षीणलुब्धा हि प्रकृतयो भर्तरि स्निग्धा भर्तृहिते तिष्ठन्ति, उपजापं वाविसंवादयन्ति, अनुरागे सार्वगुण्यमिति ।

१४. क्षीण-लुब्ध प्रकृतिजन स्वामी के प्रति स्नेहशील होते हैं और स्वामी का हित सिद्ध करते हैं अथवा भेद को नहीं प्राप्त होते, स्वामी के प्रति अनुराग, सब गुण मानते हैं ।

तस्मादपचरितप्रकृतिमेव यायात् ।

१५. अतएव अपचरित प्रकृतिजन वाले यातव्य पर अभियान करना चाहिए ।

बलवन्तमन्यायवृत्तिं दुर्बलं वा न्यायवृत्तिमिति बलवन्तमन्यायवृत्तिं यायात् ।

१६. अन्यायवृत्ति वाले बलवान् अथवा न्यायवृति वाले दुर्बल यातव्य पर अभियान की स्थिति होने पर, अन्यायवृत्ति वाले यातव्य पर आक्रमण करे ।

बलवन्तमन्यायवृत्तिमभियुक्तं प्रकृतयो नानुगृह्णन्ति, निष्पातयन्ति, अमित्रं वाऽस्य भजन्ते ।

१७. आक्रान्त अन्यायवृत्ति वाले बलवान् यातव्य के प्रकृतिजन उसका अनुगमन नहीं करते अपितु उसे निष्पातित करते हैं अथवा इसके शत्रु का आश्रय ग्रहण कर लेते हैं ।

दुर्बलं तु न्यायवृत्तिमभियुक्तं प्रकृतयः परिगृह्णन्ति, अनुनिष्पतन्ति वा ।

१८. आक्रान्त न्यायवृत्ति वाले दुर्बल यातव्य के प्रकृतिजन उसके सहायक बनते हैं और निर्गत होने पर, उसका अनुगमन करते हैं ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) अनुरागे सार्वगुण्यम् : द्र० ८:२:२४, गण० १:१३ ।

पाठ भेद :

'बलवन्तमन्यायवृत्ति यायात्' तेलगू अनुप्रतिलिपि में छूट गया है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) यायात् : आक्रमण करना, सैनिक अभियान, प्रस्थान, प्रयाण ।

पाठ भेद :

'प्रकृतयो नानुगृह्णन्ति' का देवनागरी अनुलिपि में 'प्रकृतयोनुगृह्णति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) निष्पात : भागना । द्र० ३:१:३३, ४७ । गण० २९:९५ ।

पाठभेद :

'परिगृह्णन्ति' का देवनागरी अनुलिपि में 'प्रगृह्णन्ति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) अभियुक्तं : आक्रान्त । मुद्रा० ३:२५, अग्नि० २५३:३९ । याज्ञ० २:९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अवक्षेपेण हि सतामसतां प्रग्रहेण च ।
अभूतानां च हिंसानामधर्म्याणां प्रवर्तनैः ॥

१९. सज्जनों का अपमान, दुर्जनों का सम्मान अनुचित एवं अधार्मिक हिंसा प्रवर्तित करने से—

उचितानां चरित्राणां धर्मिष्ठानां निवर्तनैः ।
अधर्मस्य प्रसङ्गेन धर्मस्यावग्रहेण च ॥

२०. धर्मिष्ठ, एवं उचित आचरण का परित्याग अधर्म में आसक्ति एवं धर्म का त्याग करने से—

अकार्याणां च करणैः कार्याणां च प्रणाशनैः ।
अप्रदानैश्च देयानामदेयानां च साधनैः ॥

२१. अकार्यों के करने, कार्यों के विनष्ट करने, देयों को प्रदान न करने एवं अदेयों को प्रदान करने से—

पाठभेद :

'अवक्षेपेण' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपक्षेपेण' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

१९. (१) सतां : अच्छा गुण ।

(२) असतां : अगुणी, अधार्मिक, दुराचारी ।

(३) हिंसानाम् : सामान्य रूप से घायल करना न कि मारना या हत्या करना ।

मेरे मत से श्लोक १९ से २७ तक कौटिल्य-प्रणीत नहीं है । निम्नलिखित आठ श्लोकों में प्रकृति वर्ग के रूप, लोभ और विराग के निवारण के उपायों का उल्लेख किया गया है ।

श्लोक : १. में सज्जन के प्रति अवज्ञा, २. में असज्जन के प्रति अनुग्रह, ३. में अनुचित एवं अधर्मयुक्त हिंसाकार्य, प्रवर्तन, ४. में धर्म युक्त कार्यो का विवर्तन, ५. में अधार्मिक कार्यों के प्रति आसक्ति एवं ६.में अधर्म कार्यों के प्रति प्रत्याधान किया गया है ।

पाठ भेद :

'चरित्राणां' के स्थान पर देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम में 'च मित्राणां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. इसमें धर्म कार्य के प्रति कहा गया है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) अकार्य : अनुचित कार्य ।

(२) करणैः : करने से ।

(३) कार्याणाम् : उचित कार्यों को ।

(४) प्रणाशने : नष्ट या उन्मूलन करना या बिगाड़ देना ।

(५) देयानाम् : देने योग्य या सुपात्रों को ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अदण्डनैश्च दण्ड्यानामदण्ड्यानां च दण्डनैः ।
अग्राह्याणामुपग्राहैर्ग्राह्याणां चानभिग्रहैः ॥

२२. दण्डनीयों को दण्डित न करने, अदण्डनीयों को दण्डित करने, अग्राह्यजनों को गृहीत करने एवं ग्राह्यजनों अगृहीत करने से—

अनर्थ्याणां च करणैरर्थ्याणां च विघातनैः ।
अरक्षणैश्च चोरेभ्यः स्वयं च परिमोषणैः ॥

२३. अनर्थ पूर्ण कृत्यों को करने, सार्थककृत्यों का विघात करने, चोरों से रक्षा न करने एवं स्वयं चौरकर्म करने से—

पातैः पुरुषकाराणां कर्मणां गुणदूषणैः ।
अपघातैः प्रधानानां मान्यानां चावमाननैः ॥

२४. पुरुषार्थीजनों के त्याग, कर्मों के गुणों में दोषारोपण, प्रधान पुरुषों का अपकर्ष एवं मान्यजनों का अपमान करने से—

विरोधनैश्च वृद्धानां वैषम्येणातन्तेन च ।
कृतस्याप्रतिकारेण स्थितस्याकरणेन च ॥

२५. वृद्धों के प्रति विरोध, वैषम्यभाव, मिथ्यावचन, अकृतज्ञता एवं निश्चित कर्म करने से-

---

पाठभेद :

तंजौर में 'अदण्डयानां' लुप्त है तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अदण्डयानां च दण्डनैः' । के स्थान पर 'दण्डयानां चण्डदण्डनैः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) उपग्राह : पकड़ना, गिरफ्तार करना। गण० २:२६३ ।

पाठ भेद :

'स्वयं च' का तंजौर में 'स्व च' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वानां च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) गुणदूषण : दोषारोपण करना न कि केवल निन्दा करना ।

(२) उपघात : प्रहार । अग्नि० २५३:२८।

(३) मान्य : आदरणीय ।

(४) अवमान : तिरस्कार ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अप्रतिकार : प्रत्यर्पण का अभाव ।

(२) स्थितस्य : नित्यकर्म, निश्चित रिवाज ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राज्ञः प्रमाद[1]आलस्या[2]भ्यां योग[3]क्षेम[4]वधेन वा ।
प्रकृतीनां[5] क्षयो लोभो वैराग्यं चोपजायते ॥

२६. राजा के प्रमाद-आलस्य, योग-क्षेम की हानि से प्रकृतिजनों का क्षय, उनमें लोभ और राजा के प्रति वैराग्य भाव उत्पन्न हो जाता है ।

क्षीणाः प्रकृतयो लोभं लुब्धा यान्ति विरागताम् ।
विरक्ता यान्त्यमित्रं वा भर्तारं[1] घ्नन्ति[2] वा स्वयम् ॥

२७. क्षीण प्रकृतियाँ लोभी बन जाती हैं, लुब्ध होकर, विरक्त हो जाती हैं, विरक्त होकर, शत्रु के पास चली जाती हैं अथवा स्वयं स्वामी का वध कर देती है ।

तस्मात्प्रकृतीनां क्षयलोभविरागकारणानि नोत्पादयेत्, उत्पन्नानि वा सद्यः प्रतिकुर्वीत[1] ।

२८. अतएव प्रकृतिजनों में क्षय, लोभ एवं विराग के कारण न उत्पन्न करे अथवा उत्पन्न होने पर सद्यः उनका प्रतीकार करे ।

क्षीणा[1] लुब्धा[2] विरक्ता[3] वा प्रकृतय इति ।

२९. क्षीण, लुब्ध अथवा विरक्त प्रकृतियाँ क्रमशः उत्तरोत्तर प्रबल होती है ।

क्षीणाः पीडन[1]उच्छेदन[2]भयात् सद्यः संधिं युद्धं निष्पतनं[3] वा रोचयन्ते ।

३०. क्षीण प्रकृतिजन पीड़न-उच्छेदन भय से शीघ्र ही सन्धि, युद्ध अथवा निष्पतन स्वीकार कर लेते हैं ।

पाठभेद :

'योगक्षेमवधेन वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'योगक्षेमविधावपि' तथा भाषाव्याख्यान एवं श्रीमूल में 'वधेन च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) प्रमाद : द्र० १:१५:११ ।

(२) आलस्य : सुस्त, काहिल, ढीलाढाला ।

(३) योग : प्राप्ति ।

(४) क्षेम : प्राप्त की रक्षा ।

(५) प्रकृति : अमात्यादि । गण० २१:२२:, ३५९ ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) भर्तारं : भरण करने वाला, स्वामी, पति, नायक ।

(२) घ्नन्ति : हत्या या मारना ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) प्रतिकुर्वीत : निष्फल करे या उनका प्रतीकार करे ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) क्षीण : द्र० ७:५:३० ।

(२) लुब्ध : द्र० ७:५:३१ ।

(३) विरक्त : असंतुष्ट, उदासीन, विनष्ट । द्र० ७:५:३२ ।

पाठ भेद :

'संधि' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सिद्धि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) पीडनं : क्लेश, खेद, संताप उद्वेग । द्र० ८:४:१,४९,५०, गण० ३:२५ ।

(२) उच्छेदन : उखाड़ देना ।

(३) निष्पतन : पलायन । द्र० ३:४:१६, ३:१२:४ । गण० २:२६५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लुब्धा लोभेनासंतुष्टाः परोपजापं लिप्सन्ते ।

३१. लुब्ध प्रकृतिजन लोभवश असन्तुष्ट होने के कारण शत्रु द्वारा भेद को प्राप्त होते हैं।

विरक्ताः पराभियोगमभ्युत्तिष्ठन्ते ।

३२. विरक्त प्रकृतिजन शत्रु के अभियान में सम्मिलित हो जाते हैं।

तासां हिरण्यधान्यक्षयः सर्वोपघाती कृच्छ्रप्रतीकारश्च, युग्यपुरुषक्षयो हिरण्यधान्यसाध्यः ।

३३. उन प्रकृतिजनों के हिरण्य-धान्य का क्षय सर्वोपघाती तथा कष्ट पूर्वक प्रतीकार योग्य होता है, युग्य-पुरुष का क्षय हिरण्य एवं धान्य से प्रतीकार योग्य होता है।

लोभ एकदेशिको मुख्यायत्तः परार्थेषु शक्यः प्रतिहन्तुमादातुं वा ।

३४. लोभ एकदेशीय, मुख्य के अधीन, ग्रहण करना, या न ग्रहण करना शत्रुधन पर निर्भर करता है।

विरागः प्रधानावग्रहसाध्यः ।

३५. विराग प्रधान पुरुष को वश में करने पर ही साध्य होता है।

पादटिप्पणी :

३१. (१) उपजाप : गुप्तरूप से बहकाना, या प्रोत्साहित करना या गुप्त प्रस्ताव। द्र० १:१३:२६,

पादटिप्पणी :

३२. (१) विरक्त : द्र० ७:५:१०,२९।

(२) अभियोग : उद्यम, प्रयत्न। द्र० ८:१:३९, स्कन्द० ६:५३:८३, भाग० ११:१८:४९, गण० ३:११०।

पादटिप्पणी :

३३. (१) कृच्छ्र : प्रायश्चित्त, पीड़ा, कष्ट। मनु० ६:७८, द्र० ५:३:१।

(२) युग्य : बैल, खच्चरादि जुतने वाले वाहन। द्र० ७:४:१५, ७:५:३३, ७:१५:८।

पाठभेद :

'मुख्यायत्तः' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मुख्यायुक्तः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३४. (१) एकदेशिक : एक भाग तक सीमित। द्र० ३:५:४;१७, ८:४:७।

(२) मुख्य : मुख्य अधिकारी। द्र० १:१२:२५, १:१६:७, १:१८:२३, ५:६:७।

(३) आदातुम् : लोभी के सन्तोष के लिए कुछ दे देना।

पाद टिप्पणी :

३५. (१) विराग : स्नेहाभाव, असन्तुष्ट, अरुचि वितुष्ट, विरक्ति। मुद्रा० १:१:१७, ४०।

(२) अवग्रह : निग्रह, नियन्त्रण, दमन। द्र० ७:५:१२, २०, ७:१४:२९, १:९:३। गण० १:४५, २:२६३, ३:२०६।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निष्प्रधाना[1] हि प्रकृतयो भोग्या भवन्त्यनुपजाप्याश्चान्येषाम्, अनापत्सहास्तु ।

३६. निष्प्रधान प्रकृतिजन वशवर्ती एवं भेद को न प्राप्त होने वाले होते हैं। किन्तु आपत्ति सहन करने में समर्थ नहीं होते।

प्रकृतिमुख्य[1]प्रग्रहै[2]स्तु बहुधा[3] भिन्ना गुप्ता भवन्त्यापत्सहाश्च ।

३७. प्रधान पुरुष के नियन्त्रण में रहकर, शत्रु द्वारा अभेद्य, सुरक्षित एवं आपत्ति सहन करने में सक्षम होते हैं।

सामवायिका[1]नामपि संधिविग्रहकारणान्यवेक्ष्य शक्तिशौचयुक्तैः[2] संभूय यायात् ।

३८. सामवायिकों के भी सन्धि-विग्रह के कारणों को देख कर, शक्ति, शौचयुक्त उनके साथ अभियान करे।

शक्तिमान् हि पार्ष्णि[1]ग्रहणे यात्रासाहाय्यदाने वा शक्तः, शुचिःसिद्धौ चासिद्धौ च यथास्थि[2]तकारीति ।

३९. शक्तिमान् होने पर, वह पार्ष्णिग्राह के निवारण अथवा युद्ध यात्रा में सहायता प्रदान करने में समर्थ होता है, शुचि होने पर, सफलता और असफलता में यथोचितकारी होता है।

पाद टिप्पणी :

३६. (१) निष्प्रधान : नेता रहित ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) प्रकृतिमुख्य : जन नेता या प्रकृतियों के प्रधान ।

(२) प्रग्रह : समर्थन या अनुकूल करना । द्र० ७:५:१९, ८:३:६५, गण० १:४८, २६३, २६५ ।

(३) बहुधाभिन्न : अनेक वर्गों या समुदायों या दलों में विभाजित ।

पाठभेद :

'शौचयुक्तैः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शौचयुक्तो' तथा श्रीमूला में 'शौचयुक्तेन' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३८. (१) सामवायिक : आक्रमण काल में बनाया गया संघ, समुच्चय, समिश्रण, मिलाप । द्र० ७:४:१९, ७:५:३६, गण० १:१५, २:२५९ ।

(२) शक्तिशौचयुक्तैः : शक्ति और पवित्रता युक्त । द्र० १:८:१, ३६ ।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हि' लुप्त है। तथा नागरी अनुलिपि में 'पार्ष्णिग्रहणे का 'पार्ष्णिग्राहेण' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३९. (१) पार्ष्णि : पीछे पृष्ठभाग में । द्र० ७:५:८, ७:१३:१, गण० ३:१०८ ।

(२) स्थित : निश्चय किया या स्वीकृत किया हुआ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेषां ज्यायसैकेन द्वाभ्यां समाभ्यां वा संभूय यातव्यमिति द्वाभ्यां समाभ्यां श्रेयः ।

४०. उनमें श्रेष्ठ शक्तिशाली एक के अथवा समान शक्तिशाली दो के साथ अभियान करे, समान शक्ति वाले दो के साथ अभियान श्रेष्ठ है ।

ज्यायसा ह्यवगृहीतश्चरति, समाभ्यामतिसंधानाधिक्ये वा ।

४१. ज्यायस् के साथ वशीभूत होकर चलना पड़ता है, दो समान शक्ति वालों के साथ अभियान करने पर, अतिसंधान के कारण या उनके अधिक बली होने की स्थिति में—

तौ हि सुखौ भेदयितुम्, दुष्टश्चैको द्वाभ्यां नियन्तुं भेदोपग्रहं चोपगन्तुमिति ।

४२. उनमें सुखपूर्वक भेद उत्पन्न किया जा सकता है, एकाकी दुष्ट को दोनों नियन्त्रित और भेदोपग्रह करने में समर्थ हो सकते हैं ।

समेनैकेन द्वाभ्यां हीनाभ्यां वेति द्वाभ्यां हीनाभ्यां श्रेयः ।

४३. समान शक्ति वाले एक या दो हीन बल वाले के साथ अभियान करे—उस स्थिति में दोनों हीन के साथ अभियान श्रेयस्कर होता है ।

तौ हि द्विकार्यसाधकौ वश्यौ च भवतः ।

४४. वे दोनों द्विकार्य साधक एवं वशीभूत होते हैं ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) ज्यायस : श्रेष्ठतर, योग्यतर; अधिक शक्तिशाली । मनु० ३:१३, ४:८, भाग० ३:१:८ ।

पादटिप्पणी

४१. (१) संधान : योग, मिलाना, मिश्रण ।

पाठ भेद :

'चोपगन्तुम्' का तंजोर में 'चे गन्तुम्' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'च गन्तुम्', पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) भेदोपग्रह : राजा का अपने पक्ष की ही अनेकता या भेद के कारण पकड़ जाना, इसका अर्थ पकड़ना भी होता है । गण० ३:२६६ ।

पाठभेद :

'तौहिद्विकार्य' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तौ द्विद्विकार्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी

४४. (१) वश्य : नियन्त्रण या वश में किया जाने योग्य या वश में किया दास या आश्रित ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कार्यसिद्धौ तु—

कृतार्थाज्ज्यायसो गूढ़ः सापदेशमपस्रवेत् ।
अशुचेः शुचिवृत्तात्तु प्रतीक्षेताविसर्जनात् ॥

४५. कार्यसिद्धि होने पर—

कृतार्थ, अधिक शक्ति सम्पन्न के अशुचि होने पर, व्याजपूर्वक गुप्त रूप से (अन्य राजा) चला जाय और उसके शुचि सम्पन्न होने पर, विसर्जित किये जाने तक, प्रतीक्षा करे ।

सत्त्रादपसरेद्यत्तः कलत्रमपनीय वा ।
समादपि हि लब्धार्थाद्विश्वस्तस्य भयं भवेत् ॥

४६. प्रयत्नशील राजा स्त्री आदि को हटाकर, पलायित हो जाय, लब्धार्थ समशक्ति वाले से भी विश्वस्त को भय हो सकता है ।

ज्यायस्त्वे चापि लब्धार्थः समोऽपि परिकल्पते ।
अभ्युच्चितश्चाविश्वास्यो वृद्धिश्चित्तविकारिणी ॥

४७. लब्धार्थ सम भी श्रेष्ठ (ज्यायान्) हो जाता है अर्थात् लब्धार्थ प्रबल या समान बल दोनों विपरीत हो जाते हैं, वृद्धि प्राप्त जनविश्वनीय नहीं होता । वृद्धि चित्त को विकृत कर देती है ।

पाठभेद :

'कृतार्थाज्ज्यायसो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कृतार्थाज्यायसो' पाषभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) कृतार्थ : सफलमनोरथ । द्र० ७:८:३१ ।

(१) अशुचि : कपटी, अस्पष्टवादी, अपवित्र ।

पाठभेद :

'सत्रादद्रसरेद्यतः' का तंजौर में 'सत्रादवसरेम्यत्तः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सत्राद्यवसरेम्यत्ताः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) सत्रादय : निभृत स्थान, शत्रु पर-आक्रमण हेतु छिपने का स्थान, अचानक आक्रमण के लिए छिपना, शत्रु पर आक्रमण करने के लिए छिपना। द्र० ७:१६:५६, १०:३:२४, १०:२:१५, ८:४:४ । इसका अर्थ घना जंगल भी होता है । द्र० १०:३:१५, १८, २४, १३:१.३६, ५०, १४:१:३ ।

पाठभेद :

'समोऽपिपरिकल्पते' का तंजोर में 'समोरिपवीतल्पते' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'समोऽपि परिकल्प्यते' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) ज्यायस् : श्रेष्ठतर, योग्यतर । द्र० ७:५:४०, मनु० ४:८, ३:१३७ ।

(२) चित्त : विचारित अन्तः करण की चिंता।

(३) अभ्युच्चित : नियमित, प्रचलित प्रथा के अनुरूप । द्र० ७:१:१४, ७:४:१४, गण० २:२५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशिष्टादल्पमप्यंशं लब्ध्वा तुष्टमुखो व्रजेत् ।
अनंशो वा ततोऽस्याङ्के प्रहृत्य द्विगुणं हरेत् ॥

४८. विशिष्ट बली से अल्प भाग भी प्राप्त कर अथवा कुछ बिना प्राप्त किये प्रसन्न वदन चला जाय, तदनन्तर दुर्बल स्थान पर, प्रहार कर दूना धन ग्रहण करे।

कृतार्थस्तु स्वयंनेता विसृजेत्सामवायिकान् ।
अपि जीयेत न जयेन्मण्डलेष्टस्तथा भवेत् ॥

४९. स्वयं नेता कृतार्थ राजा सामवायिक राजाओं को सत्कारपूर्वक विसर्जित करे, स्वयं अल्पांश प्राप्त करके भी सामवायिकों को न्यूनांश न दे, ऐसा करके, वह मण्डलप्रिय हो जाता है।

इतिषाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे यातव्यामित्रयोरभिग्रहचिन्ता क्षयलोभविरागहेतवः प्रकृतीनां सामवायिकविपरिविमर्शश्च पञ्चमोऽध्यायः । आदितः त्रिशततमः ।

सप्तम अधिकरण में षाड्गुण्य के अन्तर्गत यातव्य-अमित्र के अभिग्रह चिन्ता प्रकृतियों के क्षय लोभ विरागहेतु सामवायिकविपरिविमर्श सम्बद्ध पञ्चम अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ तीन अध्याय समाप्त।

पाठभेद :

'दल्पमप्यंशं' का तंजौर में 'दमप्यंशं' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दमंशं'। तथा 'प्रहृत्य' का 'प्रगृह्य' पाठभेद मिमलता है।

पादटिप्पणी :

४८. (१) अनंश : भाग का न दिलाना।

(२) अङ्के : गोद में, मर्मस्थान पर।

(३) प्रहृत्य : प्रहार किया गया, पीटा गया, घायल किया गया। द्र० १:१८:१२, गण० २:१०६।

पाठभेद :

'नेता' का देवनागरी अनुलिपि 'नेतान्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४९. (१) नेता : विजिगीषु से तात्पर्य है। द्र० ६:२:३९।

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इयि कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे पञ्चमोऽध्यायः यातव्यामित्रयोरभिग्रहचिन्ताक्षयलोभविरागहेतवः प्रकृतीनांसामवयिक विपरिमर्शः आदितस्त्रिशततमः।

मैसूरसंस्करण में—

इतिषाड्गुण्ये यातव्यामित्रयोरभिग्रहचिन्ताक्षयलोभविरागहेतवः प्रकृतीनांसामवायिकविपरिमर्शश्चपञ्चमोऽध्यायः आदितस्त्रिशततमः।

वसाकसंस्करण में—

इतिकौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे पञ्चमोध्यायः यातव्यामित्रयोरभिग्रहचिन्ताक्षयलोभविरागहेतवः प्रकृतीनां सामवायिक विपरिमर्शः आदितस्त्रिशततमः।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे यातव्यामित्रयोर भिग्रहचिन्ताक्षयलोभविरागहेतवः प्रकृतीनां सामवायिकविपरिमर्शः पञ्चमोध्यायः ॥५॥ आदितस्त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१०३॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ६

एकादशशततमं प्रकरणम्—संहितप्रयाणिकम्,
द्वादशशततमं प्रकरणम्—परिपणितापरिपणितापसृताः संधयः

एक सौ ग्यारहवां प्रकरण—संहित प्रयाणिक
एक सौ बारहवां प्रकरण—परिपणित, अपरिपणित एवं अपसृत सन्धियां

विजिगीषु[1]र्द्वितीयां[2] प्रकृतिमेवमपि संदध्यात् ।

१. विजिगीषु द्वितीय प्रकृति को इस प्रकार प्रवञ्चित करे ।

सामन्तं[1] संहित[2]प्रयाणे योजयेत् 'त्वमितो याहि, अहमितो यास्यामि, स[3]मानो लाभः' इति ।

२. सामन्त को संहित प्रयाण में यह कहकर लगाये 'तुम इधर से अभियान करो मैं इधर से अभियान करूँगा, लाभांश समान होगा ।'

लाभसाम्ये संधिः, वैषम्ये[1] विक्रमः[2] ।

३. समान लाभ की स्थिति में सन्धि अधिक लाभ में विक्रम दिखाये ।

प्रकरण १११—सूत्र १-३ ।
प्रकरण ११२—सूत्र ४-४१ ।

पादटिप्पणी :

१. (१) विजिगीषु : विजयेच्छुक या विजेता । द्र० ६:२:१३, ७:३:६ ।

(२) द्वितीयप्रकृति : राजमण्डल के द्वितीय प्रकृति का घटक । द्र० ६:३:१४ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) सामन्त : पड़ोसी, पड़ोसीराज्यः करद, राजा । द्र० ३:८:१, ३:९:२४, ७:१८:३९, १:१०:३ । गण० १:१८ ।

(२) संहितप्रयाण : विजिगीषु तथा अरि का सन्धिपूर्वक अभियान या प्रयाण । द्र० ७:९:१ । गण० २:२६९ ।

(३) समानलाभ : शक्ति के या अनुपात के अनुसार लाभ या भाग । गण० २:२६९ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) वैषम्य : असमता, विजिगीषु को अनुपात से अधिक लाभ होने का तात्पर्य है । द्र० ६:६:१२ । गण० १:१५७ ।

(२) विक्रम : युद्ध करना, आक्रमण करना । द्र० १:१७:२८, १२:३:१५, ७:३:११ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संधिः परिपणितश्चापरिपणितश्च ।

४. परिपणित और अपरिपणित सन्धि ।

'त्वमेतं देशं याहि, अहमिमं देशं यास्यामि' इति परिपणितदेशः ।

५. तुम इस देश को प्रस्थान करो, मैं इस देश को प्रस्थान करूँगा, इस प्रकार की सन्धि परिपणित देश, सन्धि है ।

'त्वमेतावन्तं कालं चेष्टस्व, अहमेतावन्तं कालंचेष्टिष्ये' इतिपरिपणितकालः ।

६. 'तुम इतने समय तक चेष्टा करो, मैं इतने समय तक चेष्टा करूँगा' इस प्रकार की सन्धि 'परिपणित काल' सन्धि है ।

'त्वमेतावत्कार्यं साधय, अहमिदं कार्यं साधयिष्यामि' इतिपरिपणितार्थः ।

७. 'तुम इतना कार्य सिद्ध करो, मैं यह कार्य सिद्ध करूँगा' इस प्रकार की सन्धि 'परिपणितार्थ' सन्धि है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) परिपणित : शर्त या संविदा या सन्धि के साथ, शर्तयुक्त संधि । द्र० ७:६:४ गण० २:२६९ ।

(२) अपरिपणित : बिना शर्त के, देशकाल कार्य के अनुसार संधि । द्र० ७:६:११ । गण० २:२७१ ।

पादटिप्पणी

५. (१) देश : देश या क्षेत्र सम्बन्धी संधि । द्र० ३:१:१५, १९; ४:९:१५, ३; १६:२९, ४:६:९ । गण० २:९७, ३.४५ ।

(२) परिपणितदेश : देशसंधि आप इस देश जायं मैं दूसरे देश जाऊँगा इस प्रकार इकरार कर संधि कर अभियान करना । द्र० ७:६:४ । गण० २:२६९ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) काल : समय । मनु० ५:१५३ ।

(२) परिपणितकाल : आप इतने समय तक कार्य करें और मैं इतने समय तक कार्य करूंगा, इस शर्त के साथ की गयी संधि ।

पाठभेद :

'त्वमेतावत्' का तंजौर में 'त्वमेव तावत्' तथा 'अहमिदं' का तंजौर में 'अहदं' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

७. (१) परिपणितार्थसन्धि : आप इतना कार्य करें और मैं इतना कार्य करूंगा, इस प्रकार के शर्त को परिपणितार्थ सन्धि कहते हैं । द्र० ७:७:२; ८:१५:१४, ९:६:४४, १०:२:६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि वा मन्येत 'शैलवनननदीदुर्गमष्टाव्यवहितं छिन्नधान्यपुरुषवीवधासारमयवसेन्धनोदकमविज्ञातं प्रकृष्टमन्यदेशीयं वा सैन्यव्यायामानामलब्धभौमं वा देशं परो यास्यति, विपरीतमहम्' इत्येतस्मिन् विशेषेपरिपणितदेशं संधिमुपेयात् ।

८. अथवा यदि यह देखे कि देश शैल, दुर्ग, वनदुर्ग, नदी दुर्ग एवं अटवी से युक्त है और धान्य, पुरुष, बीबध एवं आसार की प्राप्ति दुर्लभ है, तृण, इन्धन तथा जल प्राप्य नहीं है, अपरिचित दूर एवं स्वामिभक्त जनरहित है अथवा सैन्य व्यामोपयोगी भूमि रहित है, ऐसे देश की ओर दूसरा (सामन्त) जायेगा तथा इसके विपरीत स्थिति वाले देश की ओर मैं जाऊँगा' इस स्थिति विशेष में परिपणित देश सन्धि अङ्गीकार करना चाहिये हैं ।

यदि वा मन्येत 'प्रवर्षोष्णशीतमतिव्याधिप्रायमुपक्षीणाहारोपभोगं सैन्यव्यायामानां चौपरोधिकं कार्यसाधनानामूनमतिरिक्तं वा कालं परश्चेष्टिष्यते, विपरीतमहम्' इत्येतस्मिन्विशेषे परिपणितकालं संधिमुपेयात् ।

९. अथवा यदि यह माने कि 'अतिवृष्टि, अतिउष्मा, अतिशीत, व्याधिबहुल, आहारोपभोग, द्रव्यरहित, सैन्य के व्यायामोपरोधयुक्त, कार्य साधन के लिए अपर्याप्त अथवा अधिक समय में शत्रु (सामन्त) चेष्टा करेगा, मैं इस विपरीत समय में चेष्टा करूँगा' इस विशेष काल में परिपणित काल में सन्धि करनी चाहिए ।

पाठभेद

देवनागरी अनुलिपि में 'अहम्' लुप्त हैं ।

पादटिप्पणी :

८. (१) शैल : पर्वत या पहाड़ । गण० ३:११४ ।

(२) वन : जंगल ।

(३) नदी : सरिता ।

(४) दुर्ग : पुराणों के अनुसार ६ प्रकार के दुर्ग होते हैं। १. धनुषदुर्ग, २. महीदुर्ग, ३. नरदुर्ग, ४. वृक्षदुर्ग, ५. जलदुर्ग, ६. गिरिदुर्ग । गण० १:१० ।

(५) वीवध : अन्न की पूर्ति । द्र० ७:६:८, ७:७:२, ८:५:१४, ९:६:४४, १०:२:६ । गण० ३:१०७, १२३, १७१, २०४ ।

(६) आसार : द्र० १०;२:७ ।

(७) प्रकृष्ट : विस्तीर्ण, बढ़ाया हुआ । द्र० ७:९:२१, ४७ ।

(८) देश : देश में रहने वाले जिन पर आक्रमण किया जाना है । गण० २:९७, ३:४५ ।

(९) व्यायाम : सैनिक उपयोगिता, कार्यशक्ति, उत्साह शक्ति । द्र० १:१६:२९, ६:३:१२, १०:४:१६ । गण० १:१४, २३०, ३:१२५ । विष्णु० ३:१२:१४ ।

पाठ भेद :

'प्रवर्षोष्ण' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रहर्षोष्ण' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

९. (१) परिपणितकालसन्धि : शर्त के निश्चित समयानुसार । द्र० ७:६:६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि वा मन्येत 'प्रत्यादेयंप्रकृतिकोपकं दीर्घकालं महाक्षयव्ययमल्पमनर्थानुबन्धमकल्यमधर्म्यं मध्यमोदासीनविरुद्धं मित्रोपघातकं वा कार्यं परः साधयिष्यति, विपरीतमहम्' इत्येतस्मिन् विशेषे परिपणितार्थं संधिमुपेयात् ।

१०. अथवा यदि यह माने कि 'प्रत्यादेय, प्रकृति को एक दीर्घकालिक, अधिकक्षय-व्ययकारी, अनर्थकारी, कष्टकारी, अधर्मयुक्त, मध्यम एवं उदासीन के विरुद्ध, अथवा मित्रोपघाती कार्य अन्य करेगा और मैं इसके विपरीत कार्य को करूँगा' इस विशेष परिस्थिति में परिपणितार्थ सन्धि करे ।

एवं देशकालयोः कालकार्ययोर्देशकार्ययोर्देशकालकार्याणां चावस्थापनात्सप्तविधः परिपणितः ।

११. इस प्रकार देश-काल, कालकार्य, देश-कार्य एवं देशकालकार्यों के अवस्थापन से सात प्रकार की परिपणित सन्धि होती है ।

तस्मिन् प्रागेवारभ्य प्रतिष्ठाप्य च स्वकर्मणि परं कर्मसु विक्रमेत ।

१२. इस परिपणित सन्धि के पूर्व स्वकार्यारम्भ एवं पूर्ण कर शत्रु के कर्मों पर उपघात करे ।

व्यसनत्वरामानालस्ययुक्तमज्ञं वा शत्रुमतिसंधातुकामो देशकालकार्याणामनवस्थापनात् 'संहितौ स्वः' इति संधिविश्वासेन परच्छिद्रमासाद्य प्रहरेदित्यपरिपणितः ।

१३. व्यसन, त्वरा, अवमान एवं आलस्ययुक्त अथवा अज्ञ शत्रु को अतिसंधित करने के लिये इच्छुक नृपति देश-काल-कर्मों की बिना अवस्थापना किये 'हम दोनों कृत सन्धि हैं' इस प्रकार की सन्धि का विश्वास उत्पन्न कर, शत्रु छिद्र (दुर्बल स्थान) प्राप्त कर, प्रहार करे, यह अपरिपणित सन्धि है ।

पाठ भेद :

'प्रकृतिकोपकं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रकृतिकोपं' तथा 'अधर्म्यंमध्यमों' का तंजौर में 'अधर्म्यमध्यमो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :-

१०. (१) प्रत्यादेयं : पुनः प्राप्ति । पुनः लौटा लेना । द्र० ८:३:५३, ९:४:५-६, ९:४:१६, २२ । गण० ३:९७ ।

(२) परिपणितार्थसन्धि :द्र० ७:६:४ ।

पाद टिप्पणी :

११. (१) सप्तविधःपरिपणितसन्धि : सात प्रकार की परिपणित सन्धि ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) प्राग् : प्रथम, पहले ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) व्यसन : दोष, न कि आपदा से यहाँ तात्पर्य है । द्र० १:१:४:४, गण० ३:२ ।

(२) च्छिद्र : दोष, दुर्बल या कमजोर, या रक्षा शैथिल्य स्थान । द्र० २:३:६, ७:६:२८ ।

(३) अपरिपणितसन्धि : सन्धि बिना शर्त के ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तत्रैतद्भवति ।

१४. इस सन्धि में यह कर्तव्य होता है ।

सामन्तेनैव सामन्तं विद्वानायोज्य विग्रहे ।
ततोऽन्यस्य हरेद्भूमिं छित्वा पक्षं समन्ततः ॥

१५. विद्वान् विजिगीषु राजा सामन्त से सामन्त को युद्धरत कराकर, सब ओर से यातव्य का पक्ष उच्छिन्न करके, तदनन्तर अन्य यातव्य की भूमि अपहृत करे ।

संधेरकृतचिकीर्षा कृतश्लेषणं कृतविदूषणमवशीर्णक्रिया च ।

१६. सन्धि के चार धर्म होते हैं—अकृतचिकीर्षा, कृतश्लेषण, कृतविदूषण एवं अवशीर्ण क्रिया ।

पाठभेद :

सूत्र १४-१५ का पूर्वा पर से कोई सम्बन्ध नहीं प्रतीत होता क्योंकि संधि का कोई उल्लेख नहीं मिलता । यह सूत्र ७:४:१६ में बैठ सकता है । बाहर से प्रक्षिप्त किया गया है ।

पाठभेद :

'छित्वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'जित्वा' 'पक्षं समन्ततः' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पक्षसमन्तत :' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) सामन्त : पड़ोसी राजा, करद राजा । १:१०:३, १:२१:३४, ३:९:३, १०,२४, ३:२०:१५ ७:१३:२४, ७:१८:२९, गण० १:२८ ।

(२) अन्यस्य :यहाँ अरिसे तात्पर्य है ।

(३) छित्वा : उच्छिन्न या काटना या नष्ट करना ।

(४) पक्ष : पक्षपातीगण । गण० ३:२६ ।

पाद टिप्पणी :

संधि के चार धर्म—

१६. (१) अकृतचिकीर्षा : अभिलाषा या इच्छा सामादि उपायों द्वारा नवीन सन्धि करना । द्र० ७:७ २० गण० २:२७२ ।

(२) कृतश्लेषण : मिलाप, संगम, सम्पर्क, जुड़ना मित्रोंको मध्यस्थ रखकर, की जाने वाली सन्धि । द्र० ७:६:२०, गण० २:३७२ ।

(३) कृतविदूषण : मलिनीकरण, भ्रष्टाचार, दुर्वचन शत्रुपर संधिभंग का दोष सिद्धकर, सन्धि भंग करना । द्र०७:६:२१,२२, गण० २:२७२, ३:२९ ।

(४) अवशीर्णक्रिया : विरक्त मित्र या राज्य का कोई अपराध करने के कारण निकालेगए या पलायनकारी व्यक्ति के साथ पुनः सन्धि करना या छिन्न सम्बन्ध पुनः स्थापित करना । द्र० ७:६:१६, गण० २:२७२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विक्रमस्य प्रकाशयुद्धं कूटयुद्धं तूष्णींयुद्धम् ।

१७. विक्रम के तीन धर्म हैं—प्रकाशयुद्ध, कूटयुद्ध एवं तूष्णींयुद्ध ।

इति संधिविक्रमौ ।

१८. इस प्रकार सन्धि-विक्रम का विभाजन हुआ ।

अपूर्व स्यसंधेः सानुबन्धैः सामादिभिः पर्येषणं समहीनज्यायसां च यथाबलमवस्थापनमकृतचिकीर्षा ।

१९. अकृत पूर्व सन्धि का अनुबन्ध (दानादि) सहित सामादि पूर्वक अनुष्ठान तथा सम-हीन-अधिकबली राजाओं का बलानुसार अवस्थापन करना 'अकृतचिकीर्षा' सन्धि है ।

कृतस्य प्रियहिताभ्यामुभयतः परिपालनं यथासंभाषितस्य च निबन्धनस्यानुवर्तनं रक्षणं च 'कथं परस्मान्न भिद्येत' इति कृतश्लेषणम् ।

२०. पूर्वकृत सन्धि का दोनों पक्ष से प्रिय एवं हितकारी आचरण से परिपालन, यथाकथित और निबन्धन का अनुवर्तन तथा रक्षण एवं 'जिस प्रकार शत्रु द्वारा भेद न उत्पन्न किया जा सके' ऐसा करना 'कृतश्लेषण' सन्धि है ।

पादटिप्पणी :

विक्रम के तीन धर्म होते हैं ।

१७. (१) प्रकाशयुद्ध : निश्चित देश कालमें किया जाने वाला युद्ध । गण० २:२,२ ।

(२) कूटयुद्ध : चातुर्ययुद्ध, गुप्तयुद्ध, द्र० १०: ३:२, ७:६:४१, १२:१:७ अनिश्चित काल में छल या कपट युद्ध । गण० २:२३ ।

(३) तूष्णींयुद्ध : विषआदि के प्रयोग या गुप्तचरों द्वारा प्रच्छन्न युद्ध, चुपचाप युद्ध, गुप्त साधनों द्वारा विष, औषधि आदि के प्रयोग से गुप्तपुरुषों द्वारा राजा का नाश । द्र० ७:६:४१, गण० २:२७३ ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) सामादि : साम, दान, भेद दण्ड : (१) दानयुक्त साम (२)सामयुक्त दानादि ।

(२) पर्येषण : जांच के द्वारा खोजना या अन्वेषण करना । द्र० ७:१:३८ । गण० २:२७२ ।

(३) अकृतचिकीर्षासन्धि : प्रारम्भिक जांच, जो सन्धि करने के पूर्व की जाती है । द्र० ७:६ १६ । गण० २:२७२ ।

पाठ भेद :

'निबन्धनस्य' का देवनागरी अनुलिपि में 'निबन्धस्य' तथा 'स्यनुवर्तन' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्यावर्तन' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२०. (१) निबन्धन : शर्त का बन्धन ।

(२) कृतश्लेषणम् : द्र० ७:६:१६, गण० २:२७२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परस्यापसंधेयतां दूष्यातिसंधानेन स्थापयित्वा व्यतिक्रमः कृतविदूषणम् ।

२१. दूष्यातिसंधान के कारण शत्रु का सन्धि भङ्ग सिद्धकर स्वयं सन्धि का उल्लंघन करना 'कृतविदूषण' सन्धि है ।

भृत्येन मित्रेण वा दोषापसृतेन प्रतिसंधानमवशीर्णक्रिया ।

२२. दोष के कारण अन्य पक्ष में गये भृत्य या मित्र के साथ सन्धि करना 'अवशीर्ण क्रिया' सन्धि है ।

तस्यां गतागतश्चतुर्विधः—कारणाद्गतागतो ,विपरीतः कारणाद्गतोऽकारणादागतो, विपरीतश्चेति ।

२३. उसमें (अवशीर्ण क्रिया में) गतागत चार प्रकार का होता है—कारण वश जाना तथा तथा आना, अकारण जाना तथा आना, कारण वश जाना तथा अकारण आना, अकारण जाना तथा कारणवश आना ।

स्वामिनो दोषेण गतो गुणेनागतः परस्य गुणे नगतो दोषेणागत इति कारणाद्गतागतः संधेयः ।

२४. स्वामी के दोष से गमन और उसके गुणवश आगमन, शत्रु के गुणवश गमन तथा उसके दोष से आगमन—इस कारण से गतागत सन्धियोग्य होता है ।

पाठ भेद :

'परस्याप' का तंजोर में 'परस्याव' तथा 'संधेयतां' का 'संधेयता का पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) दूष्य : दूष्यशक्ति सन्धि । विद्रोही, राजद्रोहात्मक, विश्वासघाती । द्र० १:११:१७; ३:१४:२७; ५:१:४ ।

(२) कृतविदूषणम् : द्र० ७:६:१६, गण० २:२७२, ३:२९ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) अवशीर्ण क्रिया : अवशीर्ण क्रिया सन्धि । विरक्त मित्र या राज्य का कोई अपराध करने के कारण निकाले गए व्यक्ति के साथ पुनः सन्धि या मित्रता करना । द्र०७:६:१६ गण०२:२८२

पादटिप्पणी :

२३. (१) गतागत : एक बार जाकर पुनः लौटना । अवशीर्ण क्रिया चार प्रकार की होती है—

(१) किस कारण से पलायन हुआ तथा किस कारण से पुनः मिला ।

(२) उसका विपरीत कारण ।

(३) अकारण पुनरागम ।

(४) उसका विपरीत कारण ।

पाठभेद :

'गतं संधेयः' का तंजोर में 'गन्तःसंधेय' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'गतोऽनुसंधेय' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

(१) स्वामी : प्रभु या राजा ।

(२) दोषेण गतो : स्वामी के दोष से पृथक ।

(३) गुणेनागत : गुण के कारण लौट आना ।

(४) परस्य गुणेनगत : शत्रु के गुण के कारण पृथक ।

(५) दोषेण गत : शत्रु के दोषों को जानकर, पुनः स्वामी के पास आना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वदोषेण गतागतो गुणमुभयोः परित्यज्य अकारणाद्गतागतः चलबुद्धिरसंधेयः ।

२५. अपने दोष के कारण गत तथा उसी के कारण आगत दोनों (स्वामी-शत्रु) के गुण को छोड़कर, अकारण गतागत करने वाला चपल बुद्धि सन्धियोग्य नहीं होता है।

स्वामिनो दोषेण गतः परस्मात्स्वदोषेण ग'त इति कारणाद्गतोऽकारणादागतः तर्कयितव्यः 'परप्रयुक्तः स्वेन वा दोषेणापकर्तुकामः, परस्योच्छेत्तारंमित्रं मे ज्ञात्वा प्रतिघातभयादागतः, परं वा मामुच्छेत्तुकामं परित्यज्यानृशंस्यादागतः' इति।

२६. स्वामी के दोष से गत एवं अपने दोष से शत्रु पक्ष से आगत, कारणवश गत एवं अकारण आगत पर, इस प्रकार विचार किया जाय, 'शत्रु द्वारा नियुक्त होकर अथवा यह स्वयं अपने दोष के कारण मेरा उपकार करना चाहता है, अथवा शत्रु पक्ष का उच्छेद करने वाले मेरे मित्र को जानकर, अपने प्रतिघात भय से आया है अथवा मेरा उच्छेद करने के लिये इच्छुक शत्रु को छोड़कर स्नेह वश आया है।'

ज्ञात्वा कल्याणबुद्धिं पूजयेद्, अन्यथाबुद्धिमपकृष्टं वासयेत् ।

२७. कल्याण बुद्धि जानकर, उसे पूजित करे अन्यथा बुद्धि होने पर, दूर निवासित करे।

स्वदोषेण गतः परदोषेणागत इत्यकारणाद्गतः तर्कयितव्यः 'छिद्रं मे पूरयिष्यति, उचितोऽयमस्य वासः, परत्रास्य जनो न रमते, मित्रैर्मे संहितः, शत्रुभिर्विगृहीतः, लुब्धक्रूरादाविग्नः शत्रुसंहिताद्वा परस्मात् इति ।

२८. स्वदोष से गत, शत्रु दोष से आगत इस प्रकार अकारण गत (और कारणवश आगत) पर, इस तरह विचार करना चाहिए, 'क्या यह मेरा छिद्र पूर्ण करेगा, अथवा यहाँ उसका निवास उचित है, अन्यत्र उसके आत्मीयजनों का मन नहीं लगता, मेरे मित्रों से सन्धि कर लिया है, शत्रुओं द्वारा तिरष्कृत हुआ है, लुब्ध एवं क्रूर शत्रु से उद्विग्न हुआ है, अथवा शत्रु के साथ सन्धिकर्ता की अन्य शत्रु क्रूरतादि से खिन्न हुआ है।

पादटिप्पणी :

२५. (१) चलबुद्धि : चंचल बुद्धि।

पादटिप्पणी :

२७. (१) कल्याणबुद्धि : उदार बुद्धि या उत्तम-बुद्धि युक्त। द्र० ७:६:२१, ७:८:९,१४, ९:६:२२।

(२) अपकृष्ट : खराब, घटिया, हराया हुआ, नष्ट हुआ, गिराया हुआ।

पाठभेद :

'आविग्नः' का तंजौर में 'आविग्नं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) छिद्र : कमजोर या दुर्बल स्थान।

(२) शत्रु : सेना त्यागी, भगोड़ा, भगोड़े का शत्रु।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ज्ञात्वा यथाबुद्ध्यवस्थापयितव्यः ।

२९. वह जान कर, बुद्धि के अनुसार उनकी व्यवस्था करे ।

'कृतप्रणाशः शक्ति[1]हानिर्विद्या[2]पण्यत्वमाशानिर्वेदो[3] देश[4]लौल्य[5]मविश्वासो बलवद्वि[6]ग्रहो वा परित्यागस्थानम्' इत्याचार्याः ।

३०. 'अकृतज्ञता, शक्तिहीनता, विद्यापण्यत्व, आशाभङ्गता, देशलौल्य, अविश्वास, अथवा बलवान् के साथ विग्रह स्वामी के परित्याग का हेतु' आचार्यों द्वारा माना गया है ।

भयं[1]वृत्ति[2]रमर्ष[3] इति कौटिल्यः ।

३१. भय, वृत्ति एवं अमर्ष को कौटिल्य परित्याग हेतु मानते हैं ।

इहाप[1]कारी त्याज्यः, पराप[2]कारीसंधेयः, उ[3]भयापकारी तर्कयितव्य इति समानम् ।

३२. केवल अपना अपकारकर्ता त्याज्य, केवल शत्रु का अपकारी सन्धि करने योग्य तथा दोनों का अपकारकर्ता परीक्षण योग्य होता है ।

असंधेयेन त्ववश्यं संधातव्ये यतः[1] प्रभावस्ततः प्रतिविदध्यात् ।

३३. सन्धि करने के अयोग्य के साथ अवश्य सन्धि करने की स्थिति में जो शत्रु से प्रभावित करने वाला तत्त्व हो, उसे दूर करे ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) शक्तिहानि : अपचय, ह्रास, क्षय, इसका सम्बन्ध भगोड़े या सेना त्यागी से है न कि राजा से ।

(२) विद्यापण्यत्व : विद्या को एक वस्तु या द्रव्य या क्रय वस्तु समझने की भावना ।

(३) निर्वेद : अपने प्रति अवज्ञा, घृणा जुगुप्सा, विवाद, अवसाद । गण० ३:२०१ ।

(४) देश : द्र० ३:१:१५, ४:९:१५, २:१६:३९, ४:६:९ । गण० २:९७, ३:४५ ।

(५) लौल्य : चंचलता, अस्थिरता ।

(६) विग्रह : राजा का संघर्ष, कलह, युद्ध । गण० २:३३७ ।

पादटिप्पणी

३१. (१) भय : डर ।

(२) वृत्ति : आजीविका । द्र० १:८:१ । गण० ३:११ ।

(३) अमर्ष : क्रोध रोष, असहिष्णुता । द्र० १:७:७ ।

पाद टिप्पणी :

३२. (१) इहापकारी : अपनी हानि पहुचाने वाला ।

(२) परापकारी : शत्रु को हानि पहुँचानेवाला ।

(३) उभयापकारी : दोनों को हानि पहुचाने वाला ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सोपकारं व्यवहितं गुप्तमायुः क्षयादिति ।
वासयेदरिपक्षीयमवशीर्णक्रियाविधौ ॥

३४. अवशीर्ण क्रिया विधि में अपने उपकारी शत्रुपक्षीय जन को यावत् जीवन व्यवहित एवं गुप्त रूप से निवासित करे ।

विक्रमयेद् भर्तारं वा सिद्धं वा दण्डचारिणम् ।
कुर्यादमित्राटवीषु प्रत्यन्ते वाऽन्यतः क्षिपेत् ॥

३५. शत्रु प्रमाणित होने पर, उसे स्वामी के समीप किया जाय, 'अथवा वहाँ शुद्ध होने पर, सैन्य कर्म में लगाया जाय, अमित्रों, अटवी अथवा अन्यत्र प्रयत्न दूरवर्ती स्थान पर नियुक्त कर दिया जाय ।

पण्यं कुर्यादसिद्धं वा सिद्धं वा तेन संवृतम् ।
तस्यैव दोषेणादूष्यं परसंधेयकारणात् ॥

३६. इस कार्य में असफल होने पर, पण्य विक्रेता बनाकर, शत्रु देश भेजे, वहाँ शत्रु के साथ सन्धि करने का दोष उस पर, प्रमाणित कर, उसी के दोष से उसे मार दिया जाय ।

अथ वा शमयेदेनमायत्यर्थमुपांशुना ।
आयत्यां च वधप्रेप्सुं दृष्ट्वा हन्याद्गतागतम् ॥

३७. अथवा भविष्य का लाभ ध्यान में रखकर, उसे उपांशु दण्ड दे, भविष्य में वधकारी गतागत को देखकर, उसका वध करा दे ।

पाठ भेद :

'असंधेयेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'असंधेयत्वेन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) अरिपक्षीय : शत्रु का पक्षपाती ।

(२) अवशीर्ण : द्र० ७:६:१६, गण० ३:२७२ ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) विक्रम : युद्ध । द्र० १:१७:२८, १:१९:१५, ७:३:१२ ।

(२) भर्तारं : यह अरि के लिए प्रयुक्त किया गया है ।

(३) सिद्धं : जिसकी निष्ठा में किसी प्रकार का का संदेह न हो ।

(४) दण्ड : सेना ।

(५) अमित्राटवीषु : भगोड़े को जंगल में लड़ने के लिए भेजा जाय ।

(६) प्रत्यन्त : सीमावर्ती क्षेत्र । गण० ३:१३६

पादटिप्पणी

३६. (१) पण्यंकुर्यात् : बेचदेना ।

(२) सिध्दं : अभय, सुरक्षित, दृढ़ । द्र० ७:६:३५ गण० १:१३९ ।

(३) दूष्य : विश्वासघाती, विद्रोही । द्र० १:११: १७, ३:४:२७, ५:१:७ गण० ३:१५०,१७० ।

पाठ भेद :

'वधप्रेप्सुदृष्ट्वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वधप्रेप्सुदृष्ट्वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) उपांशु : चुपचाप या मौन रहना । द्र० १:१४:३, गण० ३:१३६, १४४, १९५ ।

(२) हन्याद् : खुले आम मरवाना या दण्ड देना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अरितोऽभ्यागतो [1]दोषः शत्रुसंवासकारितः ।
सर्पसंवासधर्मित्वान्नित्योद्वेगेन दूषितः ॥

३८. शत्रु के समीप से आगतजन शत्रु के साथ रहने के कारण दोष सम्पन्न होता है, सर्प के साथ रहने के समान नित्य उद्वेग करने वाला होता है।

जायते प्लक्षबीजाशात्कपोतादिव [2]शाल्मलेः ।
उद्वेगजननो नित्यं पश्चादपि भयावहः ॥

३९. 'प्लक्षबीज भोजी कपोत जिस प्रकार शल्मली वृक्ष के लिये दुःखद होता है उसी प्रकार वह गतागत पुरुष राजा के लिये नित्य उद्वेगकारी तथा अन्त में भी भयावह सिद्ध होता है।

प्रकाशयुद्धं निर्दिष्टे[2] देशे काले च विक्रमः[3] ।
विभीषणमवस्कन्दः प्रमादव्यसनार्दनम् ॥

४०. निर्दिष्ट देश काल में, युद्ध करना प्रकाश युद्ध है, भय उत्पन्न करना, अवस्कन्द प्रमाद-व्यसन के अवसर पर, पीड़ित करना।

पाठभेद :

'अरितो' का तंजौर में 'आरितो' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आदित्तो' पाठभेद मिलता हैं।

पाद टिप्पणी :

३८. दोष : खतरे का स्रोत।

(२) सर्पसंवास : सर्प के साथ वास निवास, या रहना।

(१) दूषित : निन्दित।

पाद टिप्पणी :

३९. (१) प्लक्षबीज : गोदा, वट का गोदा। गण० ३:१६।

(२) शाल्मली : सेमल का वृक्ष, यह सब वृक्षों का अधिपति माना गया है। मत्स्य० ८:८७, १०: २९।

पाठभेद :

'निर्दिष्टे' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'निर्दिष्टो' तथा 'चविक्रमः' का 'चविभ्रमः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४०. (१) प्रकाश युद्ध : कहकर या खुले आम युद्ध करना।

(२) निर्दिष्ट : द्र० १०:३:२६।

(३) विक्रम : द्र० १:१७:२८, १:१९:१५।

(४) विभीषण : अत्यन्त भयानक। गण० २:७७

(५) अवस्कन्द : अकस्मात आक्रमण करना। द्र० ७:१०:२९, गण० २:७७, ३:११४,१३५, १४७ १७४, १७७, १९४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एकत्र[१] त्यागघातौ च कूट[२]युद्धस्य मातृ[३]का ।
योगगूढोपजापार्थं तूष्णींयुद्ध[४]स्य लक्षणम् ।।

४१. एक स्थान पर युद्ध त्याग अन्यत्र युद्धारम्भ, क्रूर युद्ध है, योग-गूढ़पुरुष-उपजाप द्वारा शत्रुद्रोह तुष्णीं युद्ध है।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे संहिताप्रयाणिकं परिपणितापरिपणितापसृताश्च संधयः षष्ठोध्यायः ।

आदितः चतुःशततमः ।

सप्तम अधिकरण में षाड्गुण्य के अन्तर्गत संहिता प्रयाणिक, परिपणित-अपरिपणित-अपसृत सन्धि सम्बद्ध षष्ठ अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ चार अध्याय समाप्त ।

पाद टिप्पणी :

४१. (१) एकत्रत्यागपातौ : द्र० १०:३:४६ ।

(२) कूटयुद्ध : एक स्थान त्यागकर अन्यत्र प्रकट होकर युद्ध करना। द्र० १०:३:२, ७:६:१७, ४१,१२:१:१७, गण० २:२७२ ।

(३) मातृका : श्रोत, गर्भ । द्र० २:२७:५ ।

(४) तूष्णींयुद्ध : शान्ति युद्ध या भेद द्वारा या उपजाप द्वारा युद्ध करना । द्र० १:२२:१६, गण० २:२७२ ।

गणपति शास्त्री संस्करण में—इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधि कणेषष्ठोऽध्यायः संहितप्रयाणिकं परिपणितापरिपणितापसृताश्च सन्धयः आदिश्चतुश्शटतमः ।

मैसूर संस्करण में—

इतिषाड्गुण्ये संहितप्रयाणिकं परिपणितापरिपणितायसृताश्च षष्ठोऽध्यायः आदितश्चतुश्शततमः ।

वासाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे षष्ठोऽध्यायः संहितप्रयाणिकं परिपणितापरिपणिताप सृताश्च सन्धयः आदितश्चतुश्शततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे संहितप्रयाणिकं परिपणितापरिपपितापसृताश्च संधयः षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ आदितश्चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥१॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ७

[त्रयोदशशतं प्रकरणम्-द्वैधीभाविकाः संधिविक्रमाः]

एक सौ तेरहवां प्रकरण–द्वैधीभाविक सन्धिविक्रम

विजिगीषुर्द्वितीयां[1] प्रकृतिमेवमुपगृह्णीयात्[2] ।

१. विजिगीषु द्वितीय प्रकृति का समर्थन ले ।

सामन्तं[1] सामन्तेन संभूय यायात्[2], यदि वा मन्येत पार्ष्णिं मे न ग्रहीष्यति, पार्ष्णिग्राहं वारयिष्यति, यातव्यं नाभिसरिष्यति, बलद्वैगुण्यं मे भविष्यति, वीवधा-[3]सारो मे प्रवर्तयिष्यति, परस्य वारयिष्यति, बह्वाबाधे मे पथि कण्टकान्[4]मर्दयिष्यति, दुर्गाटव्यपसारै[5]र्दण्डेन[6] चरिष्यति, यातव्य[7]मविषह्ये दोषे संधौ वा स्थापयिष्यति, लब्धलाभांशो वा शत्रूनन्यान्मे विश्वासयिष्यति ।

२. पार्श्ववर्ती सामन्त के साथ यातव्य सामन्त पर अभियान करे अथवा यदि यह जाने कि 'अनुकूलकृत सामन्त मेरा पार्ष्णिग्राह नहीं बनेगा, अन्य पार्ष्णिग्राह का निवारण करेगा, यातव्य का पक्ष नहीं लेगा, मेरा बल दो गुना हो जायेगा, मेरे वीवध एवं आसार का प्रवर्तन करेगा, शत्रु का वीवधासार वाधित करेगा, मेरे अति संकट पूर्ण मार्ग में कण्टकों का मर्दन करेगा, दुर्ग एवं अटवी में अपसरण करने पर सैन्यवल से सहायक बनेगा अथवा असह्य दोष उपस्थित होने पर यातव्य शत्रु का सन्धिवद्ध कर सकेगा, अथवा लाभांश लेकर मेरे अन्य शत्रुओं को विश्वस्त करेगा ।

पादटिप्पणी :

१. (१) द्वितीयां प्रकृतिं : द्र० ७:६:१, भाग० ६:१४:१७, १८ ।

(२) उपगृह्णीयात् : समर्थन प्राप्त करने से तात्पर्य है ।

पाठ भेद :

'पार्ष्णिग्राहं वारयिष्यति' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पार्ष्णिग्राहं वयिष्यति' लुप्त है । तथा 'बलद्वैगुण्यं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बल-वद्वैगुण्यं' पाठभेद मिलता है । 'मे पथिकण्टकान्' का तंजौर में 'मे पनि कण्टकान्' तथा तेलगू अनुप्रति-लिपि में 'मेऽवनिकण्टकान्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) सामन्त : पड़ोसी राजा । यह तीसरा राजा है जिसके विरुद्ध विजिगीषु उसके शत्रुओं के साथ आक्रमण करता है । द्र० १:२१:१०, २४, २:९:३, ७:१८:२९ ।

(२) यायात् : द्र० ७:१.१६, ७:५:११ ।

(३) वीवध : धान्यादि को पूर्ति अथवा अबाध आयात । द्र० ७:६:८, ८:५:१४, ८:६:४४, १०:२:६, गण० ३:१०७, २२३, १७१, २०० ।

(४) कण्टक : कांटा । गण १:२४७, २:१६६ ।

(५) अपसार : परावर्तन, परावर्तन का स्थान । द्र० २:३:२, ७:१५:१०, १२, १८, ७:१६:१, १९:२:८, २० ।

(६) दण्ड : सेना ।

(७) यातव्य : राजा जिसके विरुद्ध अभियान किया जाता है । द्र० ६:२:१६, ७:५:१, ७:१३:२१, गण० २८५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वैधीभूतो वा कोशेन दण्डं दण्डेन कोशं सामन्तानामन्यतमाल्लिप्सेत ।

३. अथवा द्वैधीभूत में स्थित होकर, सामन्तों में किसी एक से कोश द्वारा दण्ड या दण्ड द्वारा कोश प्राप्त करे।

तेषां ज्यायसोऽधिकेनांशेन समात्समेन हीनाद्धीनेनेति समसंधिः ।

४. उसमें अधिकबली को अधिक समबल को समान तथा हीनबल को न्यून भाग देकर, सन्धि करना 'समसन्धि' है।

विपर्यये विषमसंधिः ।

५. उसके विपरीत 'विषम सन्धि' है।

तयोर्विशेषलाभादतिसंधिः ।

६. उनमें विशेष लाभ की स्थिति में 'अतिसन्धि' कही जाती है।

व्यसनिनमपायस्थाने सक्तमनर्थिनं वा ज्यायांसं हीनो बलसमेन लाभेन पणेत ।

७. व्यसनी विनाश स्थान में प्रसक्त अथवा अनर्थ युक्त अधिक बली के साथ हीन बली राजा बलानुसार लाभ देकर सन्धि करे।

पादटिप्पणी :

३. (१) द्वैधोभूत : अपने शत्रु के साथ सन्धि करना ताकि दूसरे राजा पर आक्रमण किया जा सके। द्र० ७:१:११, ७:३:१९।

पादटिप्पणी :

४. (१) ज्यायस : द्र० ७:५:४०, ९:७:१२।

(२) समसंधि : बराबरी की शर्त पर होने वाली सुलह। सम शक्तिशाली को बराबर, हीन को कम, और अधिक शक्तिशाली को अधिक भाग दिया जाय, उसे सम संधि कहते हैं। द्र० ७:९:४, गण० २:७९।

पादटिप्पणी :

६. (१) अतिसंधि : विशेष लाभ प्राप्त करना या जो संधि किसी के लिए अधिक लाभप्रद होती है। शक्ति से अधिक सहायता देने की प्रतिज्ञा या एक मित्र की सहायता दूसरे मित्र या सहायक की प्राप्ति। द्र० ७:९:६, ७:१२:१५, गण० २:२७३।

पादटिप्पणी :

७. (१) अनर्थिनं : ९:७:७। गण० ३:८९।

(२) बलसमेन : अनुपात के अनुसार सेना की आवश्यकता प्रकट करना। गण० १:१८।

(३) लाभ : तीन प्रकार का होता है : (१) बलसम, (२) बलाधिक (३) बलहीन। गण० २:६९।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पणितस्तस्यापकारसमर्थो विक्रमेत, अन्यथा संदध्यात् ।

८. उक्त रूप से सन्धिबद्ध होकर, उसका उपकार करने में समर्थ होने पर, विक्रम करे अन्यथा सन्धि कर ले ।

एवंभूतो वा हीनशक्तिप्रतापपूरणार्थं संभाव्यार्थाभिसारी मूलपार्ष्णित्राणार्थं वा ज्यायांसं हीनो बलसमाद्विशिष्टेन लाभेन पणेत ।

९. अथवा उक्त रूप से व्यसनादि पीड़ित हीन बली राजा क्षीण शक्ति एवं प्रताप की पूर्ति सम्भाव्य प्रयोजन सिद्धि हेतु अथवा मूल-पार्ष्णि के रक्षार्थ बल की अपेक्षा अधिक लाभ देकर, अधिक बली से सन्धि करे ।

पणितः कल्याणबुद्धिमनुगृह्णीयात्, अन्यथा विक्रमेत ।

१०. सन्धिबद्ध अधिक बली कल्याण बुद्धि जान कर उसे अनुगृहीत करे अथवा विक्रम करे ।

पादटिप्पणी :

८. (१) पणित : शर्त के साथ संधि । द्र० ७:७:१२ ।

(२) विक्रम : आक्रमण करना । द्र० १:७:२८, १:१९:१५, ५:६:२५, ७:३:११, १२:३:१५ ।

(३) संदध्यात् : संधि करना ।

पाठभेद :

तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वा' लुप्त है। तथा 'भूतो वा हीन' का देवनागरी अनुलिपि में 'भूतो माहीन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) एवंभूतो : वासना के कारण अभिभूत । द्र० ७:७:७ ।

(२) संभाव्यार्थ : एक उद्देश्य, जो प्राप्त किया जाता है ।

(३) मूल : राजधानी, दुर्ग, केन्द्र । उत्तराधिकार प्राप्त राज्य या राजधानी । द्र० ७:२:१४, ७:३:३३, ७:८:५, ६:३:२४, गण० १:१३, ३:१९३, ३१२ ।

(४) ज्यायांस : द्र० ७:५:४, ७:७:४ ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) कल्याण बुद्धि : शुभभावना, इमानदारी । द्र० ७:६:२७, ९:३:४०, ९:६:२२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जातव्यसनप्रकृतिरन्ध्रमुपस्थितानर्थं वा ज्यायांसं हीनो दुर्गमित्रप्रतिष्टब्धो वा ह्रस्वमध्वानं यातुकामः शत्रुम् अयुद्धमेकान्तसिद्धिं वा लाभमादातुकामो बलसमाहीनेन लाभेन पणेत ।

११. दुर्ग एवं मित्र बल से गर्वित अथवा समीपवर्ती शत्रु पर अभियान के लिए इच्छुक अथवा बिना युद्ध के अवश्य सफलता वाले लाभ को प्राप्त करने की इच्छा वाला हीन बली राजा, व्यसनी प्रकृतिरन्ध्र एवं अन्नर्थयुक्त अधिकबली सामन्त को बल की अपेक्षा न्यून लाभ देकर, उसके साथ सन्धि करे ।

पणितस्तस्यापकारसमर्थो विक्रमेत, अन्यथा संदध्यात् ।

१२. सन्धिवद्ध अधिकवली उसका उपकार करने में समर्थ होने पर, विक्रम करे अन्यथा सन्धि।

अरन्ध्रव्यसनो वा ज्यायान् दुरारब्धकर्माणं भूयः क्षयव्ययाभ्यां योक्तुकामो दूष्यदण्डं प्रवासयितुकामो दूष्यदण्डमावाहयितुकामो वा पीडनीयमुच्छेदनीयं वा हीनेन व्यथयितुकामः संधिप्रधानो वा कल्याणबुद्धिर्हीनं लाभं प्रतिगृह्णीयात् ।

१३. अथवा रन्ध्र—व्यसन रहित विरुद्धकर्मी शत्रु को पुनः क्षय-व्यय युक्त करने की इच्छा रखने वाला, अपने दूष्य दण्ड को प्रवासित अथवा शत्रु के दूष्य दण्ड को आहूत करने की इच्छा वाला पीडनीय या उच्छेदनीय शत्रु को हीन द्वारा व्यथित करने के लिए इच्छुक अथवा सन्धि प्रधान एवं कल्याण बुद्धि अधिकबली सामन्त हीन लाभ ग्रहण करे ।

पाठभेद :

'एकान्तसिद्धि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में' एकान्तसिद्ध' पाठभेद मिलता है तथा 'लाभम्' के पूर्व 'वा' लुप्त' है।

पादटिप्पणो :

११. (१) जातव्यसन : उत्तपन्न, आपत्ति या आपदा । द्र० ३:१४:२, १८, ७:७:१८ ।

(२) प्रकृतिरन्ध्र : जनता का दोष या दुर्बलता या कमजोरी । द्र० ६:१:१ ।

(३) अनर्थं : अनुपयुक्त, निरर्थक, हानिकारक, अर्थहीन । गण० ३:५९ ।

(४) दुर्ग मित्र : दुर्ग स्थित मित्र । गण० १:१२९ ।

(५) एकान्तसिद्धि : एक पूर्ण सफलता या जहाँ सफलता निश्चित होती है । द्र० ७:३:५, ७:२२ ।

पादटिप्पणो :

१२. (१) पणित : शर्त या सन्धि किया हुआ। द्र० ७:७:८ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) अरन्ध्रव्यसन : बिना कमजोरी का व्यसन ।

(२) ज्यायान् : द्र० ६:२:३५ ।

(३) प्रवास : मारना, वध करना, या निर्वासन, द्र० १:१४:२, १:१८:१५, गण० ३:५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कल्याणबुद्धिना संभूयार्थं लिप्सेत, अन्यथा विक्रमेत ।

१४. कल्याण बुद्धि के साथ मिलकर, अर्थ प्राप्ति करे, अन्यथा विक्रम करे।

एवं समः सममतिसंदध्यादनुगृह्णीयाद्वा ।

१५. उसी प्रकार सम शक्ति वाला सम शक्ति वाले के साथ विग्रह अथवा अनुग्रह करे।

परानीकस्य प्रत्यनीकमित्राटवीनां वा, शत्रोर्विभूमीनां देशिकं मूलपार्ष्णि-त्राणार्थं वा समो बलसमेन लाभेन पणेत ।

१६. शत्रु सेना अथवा शत्रु के मित्राटविकों से युद्ध करने में समर्थ, शत्रु के विभूमियों के निर्देशक सम शक्ति बाले सामन्त को मूल-पार्ष्णिकी रक्षा के लिए सम शक्ति वाला राजा बलानुरूप लाभ देकर सन्धि करे।

पणितः कल्याणबुद्धिमनुगृह्णीयात्, अन्यथा विक्रमेत ।

१७. सन्धियुक्त वह, उसे कल्याण बुद्धि जानकर, अनुगृहीत करें अन्यथा विक्रम करे।

जातव्यसनप्रकृतिरन्ध्रमनेकविरुद्धमन्यतो लभमानो वा समो बलसमाद्धीनेन लाभेन पणेत ।

१८. समवली के व्यसन एवं प्रकृतिकोपयुक्त और एक अनेक विरोधियों से युक्त होने पर अथवा अन्य सहायक से कार्य सिद्धि होने की स्थिति में सम शक्ति वाला राजा सम शक्ति वाले के साथ उसने वल को अपेक्षा न्यून लाभ देकर सन्धि करे।

पाद टिप्पणी :

१४. (१) कल्याणबुद्धि : सम्माननीय या माननीय, विचार, भाव। द्र० ७:६:२७, ७:७:१०, ७:१:१४; ९:३:४०, ९:६:२२।

पाठभेद :

'सममतिसं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सममतिः सं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१५. एवं : इस प्रकार से तात्पर्य है। द्र० सूत्र १३ तथा १४।

पाठ भेद :

'देशिकंमूल' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'देशिकमूल, तथा वलसमेन' का 'समवलेन' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) परानीक : शत्रु की सेना, द्र० २:३१:१।

(२) विभुमि : अनुपयोगी प्रदेश।

(३) देशिक : एक निर्देशक रूप से कार्य करने वाला मार्ग दर्शक। उपदेशक-स्थान परिचित व्यक्ति।

(४) बल : शक्ति, सेना। गण० १:१८।

पादटिप्पणी :

१७. (१) पणित : द्र० ७:७:८।

(२) कल्याणबुद्धि : द्र० ७:७:९।

पाठभेद :

'बलसमाद्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'समवलाद्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) जातव्यसन : मृगया आदि जात-उद्भूत या पैदा की गई आपदा। ७:७:११।

(२) प्रकृतिरन्ध्र : प्रकृति का कमजोर स्थान या प्रकृति कोप भी अर्थ होता है। द्र० ७:७:११।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पणितस्तस्यापकारसमर्थो विक्रमेत, अन्यथा संदध्यात् ।

१९. सन्धि करके उसका अपकार करने में समर्थ होने पर, विक्रम करे अन्यथा सन्धि करे ।

एवंभूतो वा समः सामन्तायत्तकार्यः कर्तव्यबलो वा बलसमाद्विशिष्टेन लाभेन पणेत ।

२०. अथवा उक्त प्रकार का अथवा सामन्ताधीन कार्य सिद्धि वाला अथवा कर्तव्यबल वाला सम शक्ति सम्पन्न राजा (समबली के साथ) बल को अपेक्षा अधिक लाभ देकर सन्धि करे ।

पणितः कल्याणबुद्धिमनुगृह्णीयात् अन्यथा विक्रमेत ।

२१. सन्धि सम्पन्न होकर, वह कल्याण बुद्धि जानकर, उसे अनुगृहीत करे अन्यथा विक्रम करे ।

जातव्यसनप्रकृतिरन्ध्रमभिहन्तुकामः स्वारब्धमेकान्तसिद्धिं वाऽस्य कर्मोपहन्तुकामो मूले यात्रायां वा प्रहर्तुकामो यातव्याद्भूयो लभमानो वा ज्यायांसं हीनं समं वा भूयो याचेत ।

२२. व्यसन—प्रकृति कोपयुक्त को विनष्ट करने के लिए इच्छुक अथवा उसके प्रारम्भ किये गये निश्चित सफलता वाले कर्म को नष्ट करने की कामना वाला अथवा अभियान करने पर, मूल (दुर्गादि) पर, प्रहारेच्छुक अथवा (उसकी अपेक्षा) यातव्य से अधिक धन प्राप्त करने वाला ज्यायान् सम अथवा हीन राजा ज्यायान् (अधिक बली) सम अथवा हीन राजा से अधिक धन की याचना करे।

पादटिप्पणी :

२०. (१) कर्तव्यबलो : सेना की तैयारी करना या सेना बनाना । कर्तव्य का अर्थ विहित कर्म होता है । गरुड़ उ० ३१:७ ।

पाठभेद :

'एकान्तसिद्धि' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'एकान्त सिद्ध' पाठभेद मिलता है :

पादटिप्पणी :

२२. (१) जातव्यसन : द्र० ७:७:११ ।

(२) प्रकृतिरन्ध्र : द्र० ७:७:११, ६:१:२ ।

(३) यातव्याद् : द्र० ६:२:१६; ७:५:१; ७: १३:३१ ।

(४) ज्यायांस : द्र० ७:५:४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूयो वा याचितः स्वबलरक्षार्थं दुर्धर्षमन्यदुर्गमासारमटवीं वा परदण्डेन मर्दितुकामः प्रकृष्टेऽध्वनि काले वा परदण्डं क्षयव्ययाभ्यां योक्तुकामः परदण्डेन वा विवृद्धस्तमेवोच्छेत्तुकामः परदण्डमादातुकामो वा भूयो दद्यात् ।

२३. स्वबल रक्षार्थं अथवा अन्य की सेना से शत्रु के दुर्धर्ष दुर्ग, आसार (मित्रबल) अथवा आटविकों को नाश करने की इच्छावाला अथवा अधिक दूर अधिक समय तक सामन्त सेना को क्षयव्यययुक्त करने के लिए इच्छुक अथवा परकोय सेना से प्रवृद्ध होकर, उसी का पुनः उच्छेद करने की कामना वाला अथवा शत्रुदण्ड को अधिकृत करने की इच्छा वाला अधिक धन याचित, वह (ज्यायान्, सम या हीन) अधिक धन दे ।

ज्यायान् वा हीनं यातव्यापदेशेन हस्ते कर्तुकामः परमुच्छिद्य वा तमेवोच्छेत्तुकामः, त्यागं वा कृत्वा प्रत्यादातुकामो बलसमाद्विशिष्टेन लाभेन पणेत ।

२४. यातव्य के व्याज से हीन को वश में करने की इच्छा अथवा शत्रु का उच्छेदकर, पुनः उसी का उच्छेदन करने की कामना अथवा अधिक धन देकर, पुनः ले लेने की इच्छा होने पर, ज्यायाम् उसके वल की अपेक्षा अधिक धन देकर, उससे सन्धि करे ।

पणितस्तस्यापकारसमर्थोविक्रमेत, अन्यथा संदध्यात् ।

२५. सन्धियुक्त होकर, वह उसका उपकार करने में समर्थ होने पर, विक्रम करे अन्यथा सन्धि कायम रखे ।

यातव्यसंहितो वा तिष्ठेत्, दूष्यामित्राटवीदण्डं वाऽस्मै दद्यात् ।

२६. अथवा यातव्य से सन्धिकर, स्थित रहे अथवा दूष्य अमित्र आटविक सेना को अधिक शक्ति सम्पन्न, उसे दे दें ।

जातव्यसनप्रकृतिरन्ध्रो वा ज्यायान् हीनं बलसमेन लाभेनपणेत ।

२७. अथवा व्यसन दुर्बल स्थान जानकर हीन को वल समान लाभ देकर, सन्धि करें ।

पाठभेद :

प्रकृष्टि—योक्तुकाम तक का भाग तेलगू अनुप्रतिलिपि में छूट गया है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) दुर्धर्ष : दुर्गम, अगम्य, भयंकर, डरावना ।

(२) अटवी : यातव्य शत्रु से तात्पर्य है ।

(३) प्रकृष्ट : विस्तीर्ण, व्यापक, प्रकर्षयुक्त, उत्कृष्ट, उत्तम, प्रधान, मुख्य द्र० ७:९:२१,४०, द्रव्य गण० २,२९८ ।

पाठभेद :

'ज्यायान् वा हीनं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ज्यायांसं वा हीनं वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) ज्यायान् : द्र० ६:१:३५ ।

(२) यातव्यापदेशेन : द्र० ६:१:१६ ।

(३) त्याग : अधिक लाभ के लिये त्याग करना ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) व्यसन : द्र० ७:७:२२ ।

(२) प्रकृतिरन्ध्र : द्र० ७:७:१२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पणितस्तस्यापकारसमर्थो विक्रमेत, अन्यथा संदध्यात् ।

२८. सन्धि करके, उसका अपकार करने में समर्थ होने पर, विक्रम करे अन्यथा सन्धि में स्थित रहे ।

एवंभूतं हीनं ज्यायान् बलसमाद्धीनेन लाभेन पणेत ।

२९. ज्यायान् उक्त दोषयुक्त हीन को बल की अपेक्षा न्मून लाभ देकर सन्धि करे ।

पणितस्तस्यापकारसमर्थो विक्रमेत, अन्यथा संदध्यात् ।

३० सन्धि करके उसका अपकार करने में समर्थ होने पर, विक्रम करे अन्यथा सन्धि में स्थित रहे ।

आदौ बुध्येतपणितः[1] पणमानश्च[2] कारणम्[3] ।
ततोवितर्क्योर्भयतो[4] यतो श्रेयस्ततोव्रजेत् ॥

३१ पणित और पणमान प्रारम्भ में कारण को जाने, तदनन्तर दोनों ओर तर्क वितर्क करके जिस ओर श्रेय (लाभ) हो उसका अनुसरण करे ।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे द्वैधीभाविकाः संधिविक्रमाः सप्तमोऽध्यायः आदितः पञ्चशततमः ।

सप्तम अधिकरण में षाड्गुण्य के अन्तर्गत द्वैधीभाविक सन्धि विक्रम सम्बद्ध सप्तम अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ पाँचवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

'आदौ' का न्याय चन्द्रिका में 'अतो' तथा श्री मूल में 'आतो' पाठभेंद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) पणित : सन्धि शर्त से आबद्ध ।

(२) परमाणत : सन्धि या शर्त करने वाला ।

(३) कारण : इसी पक्ष को प्रेरणा या प्रोत्साहन या प्रयोजन ।

(४) उभय : दोनों पक्ष ।

पाठभेद :

गणपाते शास्त्रीसंस्करण में—

वति कौटलीयार्थशास्त्रेवाड्गुण्येसप्तमाधिकरणे सप्तमोऽध्याय: द्वैधीभाविका: सन्धिविक्रमा: ।

आदित:पञ्नशततम: ।

मैसूर संस्करणमें—

इतिषाड्गुण्येद्वैधींभाविकास्सन्धि विक्रमा:सप्तमोऽध्याय: आदित:पञ्चशत: ॥

वसाक संस्करणमें—

इति कौटिलोयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमोऽध्याय: द्वैधी भाविका: सन्धि विक्रमा: आदित: पञ्चशततम:।

उदयवीरशास्त्रीसंस्करणमें—

इतिषाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे संहितप्रयाणिकं द्वैधिभावका: संधिविक्रमा: सप्तमोऽध्याय: ॥७॥ आदित: पंचाधिक शततमोऽध्याय: ॥१०५॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ८

[चतुर्दशशततमं प्रकरणम्—यातव्यवृत्तिः
पञ्चदशशततमं प्रकरणम्—अनुग्राह्यमित्रविशेषः]

एक सौ चौदहवां प्रकरण—यातव्य वृत्ति
एक सौ पन्द्रहवां प्रकरण—अनुग्राह्य मित्रविशेष

यातव्योऽभियास्यमानः संधिकरणमादातुकामो विहन्तुकामो वा सामवायिकानामन्यतमं लाभद्वैगुण्येन पणेत ।

१. अभियास्यमान (अभियान करने वाला) यातव्य सन्धिकरण स्वीकार करने अथवा उसे विनष्ट करने की इच्छा से सामवायिक सामन्तों में किसी एक के साथ दूना लाभांश प्रदान करके सन्धि करे।

पणमानः क्षयव्ययप्रवासप्रत्यवायपरोपकारशरीबाधाश्चास्य वर्णयेत् ।

२. सन्धिकर्ता उससे क्षय, व्यय, प्रवास, प्रत्यवाय, परोपकार एवं शरीर वाधा का वर्णन करे।

पाठ भेद :

'यातव्योऽभियास्य' का तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'यातव्यो हि यास्य' तथा 'विहन्तुकामोवासाम' का तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'विहन्तुकामो साम' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

प्रकरण—११४ : सूत्र १-४ ।

प्रकरण—११५ : सूत्र ११-३४ ।

सूत्र ५—१० किसी अन्य प्रकरण से सम्बन्धित नहीं है किन्तु अध्याय ७ के प्रकरण १३ के पश्चात् उसके क्रम में आता है ।

१. (१) यातव्य वृत्ति : यातव्य का आचरण ।

(२) अनुग्राह्य : विभिन्न प्रकार के मित्र जिनकी सहायता की जा सकती है ।

(३) संधि कारकम् : सन्धि क्यों की जाती हैं तथा उससे लाभ ।

(४) आदातुकाम : लेने या पाने या हटाने वाला प्रकार ।

(५) विहन्तुकाम : सूत्र ४ में व्याख्या की गयी है । गण० २:११८ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) पण : शर्त, इकरार, सौंदा करने वाला । द्र० ७:७:३१ याज्ञ० २:१८

(२) क्षय : हानि, नाश । द्र० ७:२:२ ।

(३) व्यय : धन व्यय, खर्च । द्र० ७:२:८ ।

(४) प्रवास : प्रयाण या निर्वासन । द्र० १:२४:३; १:१८:१५; ७:७:१३ ।

(५) प्रत्यवाय : न्यूनता, ह्रास, अवरोध या वैपरीत्य । मनु० ४:२४५ ।

(६) परोपकार : शत्रु के स्थान में प्रवेश कर । उसका उपकार करना ।

(७) शरीरवाधा : शरीर की पीड़ा या शरीर के लिए खतरा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रतिपन्नमर्थेन योजयेत् ।

३. स्वीकृत कर्ता को धन प्रदान करे।

वैरं वा परैर्ग्राहयित्वाविसंवादयेत् ।

४. अथवा विपरीत स्थिति में दूसरे से बैर कराकर सन्धि तोड़ दे।

दुरारब्धकर्माणं भूयः क्षयव्ययाभ्यां योक्तुकामः स्वारब्धां वा यात्रासिद्धिं विधायितुकामो मूले यात्रायां वा प्रहर्तुकामो यातव्यसंहितः पुनर्याचितुकामः प्रत्युत्पन्नार्थकृच्छ्रस्तस्मिन्नविश्वस्तो वा तदात्वे लाभमल्पमिच्छेत्, आयत्यां प्रभूतम् ।

५. अनुचित कार्यारम्भकारी को अधिक क्षय,व्यय युक्त करने के लिए इच्छुक अथवा स्वारब्ध यात्रा को अनिवार्य सफलता नष्ट करने के लिए इच्छुक अथवा यात्रा में मूल (दुर्गादि) पर प्रहारेच्छुक, यातव्य से सन्धि करके पुनः धनयाचना करने वाला, तात्कालिक अर्थ कष्ट वाला अथवा उस पर अविश्वासकर्ता उस समय अल्प लाभ की तथा भविष्य में अधिक लाभ की इच्छा करे।

मित्रोपकारममित्रोपघातमर्थानुबन्धमवेक्षमाणः पूर्वोपकारकं कारयितुकामो भूयस्तदात्वे महान्तं लाभमुत्सृज्यायत्यामल्पमिच्छेत् ।

६. अन्य फल से सम्बद्ध मित्रोपकार और अमित्र की हानि देखकर तथा पूर्वोपकारी का पुनः उपकार कराने की इच्छा करके, उस समय महान् लाभ त्यागकर, भविष्य में भी अल्प लाभ की इच्छा करे।

पादटिप्पणी :

३. (१) प्रतिपन्न : उपलब्ध, प्राप्त, अनुष्ठित, स्वीकार, निष्फल कार्यान्वित या निष्पक्ष किया गया।

पादटिप्पणी :

४. (१) विसंवादयेत् : भेद उत्पन्न करना। द्र० ७:१४:४; ८:२:२४।

पाठभेद :

'स्वारब्धां वा यात्रा सिद्धि' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वारब्धं वा यात्रासिद्ध' तथा 'प्रहर्तु' का 'प्रतिहर्तु' देवनागरी अनुलिपि में 'प्रतिकर्तु' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) स्वारब्धा : यह शब्द यात्रा के साथ जायगा न कि सिद्धि के साथ। द्र० ७:७:२२।

(२) प्रहर्तुकाम : प्रहार या आक्रमण की रक्षा। द्र० ७:७:२२।

(३) प्रत्युत्पन्न : पुनरुत्पादित, उद्यत, तस्कर। द्र० ५:२:३।

पादटिप्पणी :

६. (१) अर्थानुबन्ध : अविच्छेद लाभ, फल या परिणाम। यह मित्रोंप्रकारम् तथाअमित्रोपघातम् का का विशेषण है।

(२) कारयितुकामो : उपकार फिर करने से तात्पर्य है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्यामित्राभ्यां मूलहरेण वा ज्यायसां विगृहीतं[२] त्रातुकामस्तथाविधमुपकारं[३] कारयितुकामः संबन्धापेक्षी[४] वा तदात्वे चायत्यां च लाभं न प्रतिगृह्णीयात् ।

७. दूष्य एवं शत्रु द्वारा अथवा प्रबल मूलहर सामन्त द्वारा विगृहीत मित्र की रक्षा करने की कामना वाला, इस प्रकार का उपकार कराने की इच्छा वाला अथवा सम्बन्ध देखने वाला, उस समय तथा भविष्य में लाभ न ग्रहण करे ।

कृतसंधिरतिक्रमितुकामः परस्य प्रकृतिकर्शनं[२] मित्रामित्रसंधिविश्लेषणं वा कर्तुकामः पराभियोगाच्छङ्कमानो[३] लाभमप्राप्तमधिकं[४] वा याचेत[५] ।

८. पूर्वकृत सन्धि को तोड़ने की इच्छा वाला, शत्रु का प्रकृति कर्शन अथवा मित्रामित्र की सन्धि छिन्न करने की कामना वाला, पराभियोग की आशङ्का वाला, अप्राप्त लाभ अथवा अधिक लाभ की याचना करे ।

तमितरस्तदात्वे चायत्यां च क्रममवेक्षेत ।

९. अन्य सामन्त भी उस समय और भविष्य में (लाभहानि) उस क्रम को देखें ।

तेन पूर्वे व्याख्याताः ।

१०. उससे पूर्व की व्याख्या हो गयी ।

पादटिप्पणी :

७. मूल : राजधानी, दुर्गादि । द्र० २:९:२०, ७:२:१४, ७:३:३३. ७:८:५ ।

(२) विगृहीत : विभक्त, भग्न, विघटित, विग्रह किया ।

(३) तथाविधमुपकारम् : अपने को इसलिए बचाना कि भविष्य में शायद आवश्यकता पड़े ।

(४) संबंधापेक्षी : सम्बन्ध का इच्छुक ।

पादटिप्पणी :

८. (१) प्रकृति : जनता या प्रजा ।

(२) कर्शन : दुर्बल, अल्पीकृत करना, सामर्थ्य क्षय, वित्तनाश करना । द्र० ७:३:१६, ७:४:१०, ७:१०:४, १३:४.१ ।

(३) पराभियोग : शत्रु का आक्रमण परशत्रु, अभियोग, प्रयास, उद्यम, आक्रमण । द्र० ७:५:३१ ।

(४) अप्राप्तम् : न मिला हुआ ।

(५) याचित : प्रार्थित, माँगा गया ।

पाठभेद :

'अवेक्षेत' का त्रिवेन्द्रम् तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अतेक्षेत' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (३) क्रमम् अवेक्षेत : वर्तमान तथा भविष्य के क्रम पर क्या योग्य होगा :

पादटिप्पणी :

१०. (१) पूर्वे : पहले जो सूत्र ५-७ के सम्बन्ध में कहा गया है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अरिविजिगीष्वोस्तु स्वं स्वं मित्रमनुगृह्णतोः शक्यकल्पभव्यारम्भिस्थिरकर्मानुरक्तप्रकृतिभ्यो विशेषः ।

११. अपने-अपने मित्र पर अनुग्रह कर्ता अरि एवं विजिगीषु शक्यारम्भी, कल्पारम्भी, भव्यारम्भी, स्थिर कर्मा एवं अनुरक्त प्रकृति वाले मित्रों पर विशेष अनुग्रह करना चाहिए ।

शक्यारम्भी विषह्यं कर्मारभते, कल्पारम्भी निर्दोषम्, भव्यारम्भी कल्याणोदयम् ।

१२. शक्यारम्भी विषह्य (शक्त्यनुसार) कल्पारम्भी निर्दोष एवं भव्यारम्भी कल्याणोदय कर्म आरम्भ करता है ।

स्थिरकर्मा नासमाप्य कर्मोपरमेत ।

१३. स्थिरकर्मा कर्म बिना समाप्त किए विराम नहीं करता ।

अनुरक्तप्रकृतिः सुसहायत्वादल्पेनाप्यनुग्रहेण कार्यं साधयति ।

१४. अनुरक्त प्रकृति सुसहायत्व के कारण अल्प अनुग्रह से भी कार्य सिद्ध करता है ।

त एते कृतार्थाः सुखेन प्रभूतं चोपकुर्वन्ति ।

१५. वे सब कृतार्थ होकर, सुखपूर्वक प्रचुर उपकार करते हैं ।

पाद टिप्पणी :

११. (१) स्वं स्वं : अपने-अपने ।

पाठभेद :

'कर्मारभते' का तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'कर्मारभेत' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

१२. (१) शक्यारम्भी : शक्ति के अनुरूप कार्य करने वाला । गण० २:२८८ ।

(२) कल्पारम्भी : जो दोष रहित कार्य आरम्भ करता है । गण० २:२८८ ।

(३) भव्यारम्भी : भविष्य के कल्याण फल उत्पादक कार्य आरम्भ करना । गण० २:२८८ ।

पाद टिप्पणी :

१३. (१) स्थिरकर्मा : कृत निश्चय, धीर, जो कार्य समाप्त किए बिना नहीं छोड़ा जाता । गण० ३:२८८ ।

पाठ भेद :

'सुसहाय' का तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'ससहाय' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) अनुरक्तप्रकृति : अनुरक्त जो निष्ठावान जनता या प्रकृति ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अतः प्रतिलोमा नानुग्राह्याः ।

१६. उसके विपरीत मित्रों पर अनुग्रह न करे।

तयोरेकपुरुषानुग्रहे यो मित्रंमित्रतरं वाऽनुगृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

१७. उन दोनों के एक पुरुष पर, अनुग्रह करने की स्थिति में जो मित्र अथवा अति मित्र पर, अनुग्रह करता है वह विशेष लाभ भाजन बनता है।

मित्रादात्मवृद्धिं हि प्राप्नोति, क्षयव्ययप्रवासपरोपकारानितरः ।

१८. मित्र से आत्मवृद्धि प्राप्त करता है, अन्य पर अनुग्रहकारी क्षय, व्यय, प्रवास एवं परोपकार (शत्रूपकार) का भागी बनता है।

कृतार्थश्चशत्रुर्वैगुण्यमेति ।

१९ कृतार्थ शत्रु निश्चय ही वैगुण्य को प्राप्त होता है अर्थात् विरोधी बन जाता है।

पाठभेद :

'प्रतिलोमा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतिलोमे' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

१६. (१) प्रतिलोम : उलटे, विपरीत, अनुलोम का उलटा। द्र० ७:१६:१८, ८:१:३, ९:७:१२, १०:५:४३, १५:१:३६।

(२) नानुग्राह्यः अनुग्रह या सहायता न करना। द्र० २:१:१५:२१, २२, २५, मत्स्य ११८८:५३।

पादटिप्पणी :

१७. (१) मित्रमित्रतरं : दोनों का मित्र, पुराणों के अनुसार मित्र ३ प्रकार के होते हैं—(१) वंशपरम्परागत, (२) शत्रुओं के शत्रु (३) कृत्रिम। मत्स्य० ९२०, १७, १८ :

(२) अनुगृह्णाति : सहायता, उपकार या कृपा। गण० १:१२१, ३:२।

पादटिप्पणी :

१८. (१) आत्मवृद्धि : अपनी उन्नति।

(२) क्षय : द्र० ७:२:२, ७.८:२।

(३) व्यय : द्र० ७:८:२।

(४) प्रवास : द्र० १:१४:२, १:१८:१५; ७:७ १३, ७:८:२, ७:८:२१, ९:७:५५।

(५) परोपकार : अनुग्रह, दूसरे की भलाई।

पाद टिप्पणी :

१९. (१) शत्रु : दूसरे पक्ष का मित्र या विपक्षी।

(२) वैगुण्य : अमित्रता विरोध या बिगड़ जाना, से तात्पर्य है। द्र० ५:६: ८, ११, ८:१:१, ९:४:८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मध्यमं[1] त्वनुगृह्णतोर्यो मध्यमं मित्रं मित्रतरं[2] वाऽनुगृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

२०. शत्रु एवं विजिगीषु के मध्यम पर अनुग्रह करने की स्थिति में जो मध्यम मित्र अथवा मध्यम अतिमित्र पर अनुग्रह करता है, वह लाभभाजन होता है ।

मित्रादात्मवृद्धिं[1] हि प्राप्नोति, क्षयव्ययप्रवासपरोपकारानितरः ।

२१. मित्र से आत्मवृद्धि प्राप्त करता है, अन्योपकारी क्षय, व्यय, प्रवास एवं परोपकार का भागी बनता है ।

मध्यमश्[1]चेदनुगृहीतो विगुणः[2] स्यादमित्रोऽतिसंधत्ते ।

२२. अनुगृहीत मध्यम के विरोधी होने पर, अमित्र का लाभ होता है ।

कृतप्रयासं[1] हि मध्यमा[2]मित्रमपसृतमेका[3]र्थोपगतं[4] प्राप्नोति ।

२३. पहले प्रयास पूर्वक मित्रभूत तदनन्तर, उसका अमित्र बनकर अपसृत मध्यम समान उद्देश्य वाले का पक्ष ग्रहण करता है ।

तेनोदासीनानुग्रहो व्याख्यातः ।

२४. उक्त रूप से उदासीनानुग्रह व्याख्यायित हो गया ।

पाठभेद :

'मध्यमंत्स्वनु' का तंजौर में 'मध्यमं चानु' पाठ भेद मिलता है :

पादटिप्पणी :

२०. (१) मध्यम : द्र० ६:२:२१, गण० २:३५ ।

(२) मित्रतर : बहुत अच्छा मित्र होना ।

पाठ भेद :

'मित्रादात्मवृद्धि' का तंजौर में 'मित्रात्मवृद्धि' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

२१. (१) आत्मवृद्धि : द्र० ७:८:१८ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) मध्यम : मध्यवर्ती राजा । द्र० ६:२:३१, गण० ३:१३ ।

(२) विगुण : गुण हीन विरोधी होने से तात्पर्य है । द्र० ११:३:४६, ५३ ।

पाद टिप्पणी :

२३. (१) कृतप्रयास : प्रयास करना राजा की मदद करना ।

(२) मध्यम : द्र० ६:२:२१, ७:७:८, ८:२१:२२।

(३) अपसृत : त्यागना, भागना, पलायित भगोड़ा । द्र० ७:६:२२, ७:१६:५, ८:५:८।

(४) एकार्थो : एक ही उद्देश्य से तात्पर्य है। द्र० ५:४:१०; ७:८:२९; ९:२:१६ ।

पादटिप्पणी :

२४. उदासीन : अनिच्छुक, निरपेक्ष । द्र० ४:१३:१७; ६:२:२२ । गण० २:३५, ३:१०८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मध्यमोदासीनयोर्बलांशदाने यः शूरं[1] कृतास्त्रं[2] दुःखसहमनुरक्तं[3] वा दण्डं[4] ददाति सोऽतिसंधीयते ।

२५. मध्यम एवं उदासीन को सैन्यबल प्रदान के विषय में जो शूर, कृतास्त्र, दुःखसह अथवा अनुरक्त सेना देता है, वद प्रतारित होता है (ठगा जाता है)।

विपरीतोऽतिसंधत्ते ।

२६. उसके विपरीत स्थिति में लाभ भागी बनता है।

यत्र तु दण्डः प्रतिहस्तं वा चार्थमन्यांश्च साधयति तत्र मौलभृतश्रेणी-मित्राटवीबलानामन्यतममुपलब्धदेशकालं दण्डं दद्यात् अमित्राटवीबलं वा व्यवहितदेश-कालम् ।

२७. जहाँ सैन्यबल प्रतिहत हुआ हो, उस अर्थ को और अन्य कार्यार्थं मौलबल, भृतबल, श्रेणीबल, मित्रबल एवं अटवीबलों में उपलब्ध किसी एक को देशकालानुसार प्रदान करें, अथवा व्यवहित देश-काल होने पर, अमित्रबल अथवा अटवीबल ही दे।

यं तु मन्येत 'कृतार्थो मे दण्डं गृह्णीयाद्, अमित्राटव्यभूम्यनृतुषु वा वासयेद् अफलं वा कुर्याद्' इति, दण्डव्यासङ्गापदेशेन नैनमनुगृह्णीयात् ।

२८ जिसको (मध्यम या उदासीन को) 'यह माने कि यह कृतार्थ होकर, मेरी सेना हस्तगत कर लेगा, अथवा सेना को अमित्र के पास, आटविक के समीप, अभूमि में या प्रतिकूल ऋतु में रखेगा अथवा विजय लाभ नहीं देगा, इस स्थिति में सेना को अन्यत्र व्यस्त होने का व्याज दिखा-कर, उसे अनुगृहीत न करे।

पादटिप्पणी :

२५: (१) शूर : पराक्रमी वीर।

(२) कृतास्त्रं : अस्त्र चलाने में अभ्यस्त।

(३) दुःखसह : दुःख सहनशील।

(४) अनुरक्त : प्रभुभक्त, निष्ठावान, संतुष्ट, अनुराग युक्त।

पाठभेद :

'प्रतिहस्तं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतिहत-स्तं' तथा 'मुपलब्ध' का तंजौर में 'मुललब्ध' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मूललब्ध' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२७. (१) मौलबल : बंश परम्परा गत या आनुवंशिक सैनिक ९।२:२, २४, १। गण० ३:५।

(२) भृतबल : नौकर या पेशेवर रुपये लेकर काम करने वाले सैनिक। द्र० ३:२:३।

(३) श्रेणीबल : पंक्ति या पाश बद्ध सैनिक द्र० ९:२:४। गण० ३:५२।

(४) मित्रबल : मित्रों की सेना या शक्ति। द्र० ३:९:२,५। गण० ३:५२।

(५) अटवीबल : वनवासियों या बहेलियों की सेना। द्र० ९:२:७। गण० ३:५४।

(६) उपलब्ध : परिचित ज्ञात, मिला हुआ, प्राप्त। द्र० ७:८:२७।

पाठ भेद :

'पदेशेन' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'देशेनैनम्' देवनागरी अनुलिपि में 'देशनेनैनम्' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) अफलं : द्र० ४:११:२४, ९:२:११।

(२) अपदेश : कष्ट, बहाना, ब्याज, छल। द्र० ४:८:२।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवमवश्यं त्वनुग्रहीतव्ये तत्कालसहमस्मै दण्डं दद्यात् ।

२९. यदि उसे अवश्य अनुगृहीत करना हो, तो उसे तत्कालानुरूप समर्थ सेना दे ।

आ समाप्तेश्चैनं वासयेद् योधयेच्च बलव्यसनेभ्यश्च रक्षेत् ।

३०. कार्य समाप्त होने तक इस सेना को उचित स्थान पर रखे, युद्ध कराये तथा बल व्यसन से रक्षा करें ।

कृतार्थाच्च सापदेशमपस्रावयेत् ।

३१. कृतार्थ (मध्यम या उदासीन) से व्याजपूर्वक सेना वापस कर ले ।

दूष्यामित्राटवीदण्डं वाऽस्मै दद्यात् ।

३२. अथवा उसे दूष्यसेना, अमित्रसेना अथवा अटवी सेना प्रदान करे ।

यातव्येन वा संधायैनमतिसंदध्यात् ।

३३. अथवा यातव्य के साथ सन्धि करके, उससे अधिक लाभ ग्रहण करें ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) तत्कालसहम् : उसे उस ऋतु में लाने का अभ्यस्त या समर्थ ।

(२) दण्ड : सेना ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) वासयेद् : वसाना, निवास कराना । द्र० ७:६:२ ।

(२) बलव्यसन : सैनिक आपदा । द्र० ८:५:१, १०:३:३, गण० ३:३६, १:१० ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) कृतार्थ : कृतकार्य, सफल मनोरथ, सन्तुष्ट ।

(२) अपदेश : द्र० ४:८:२, ५:६:१० ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) दूष्य : विश्वासघाती या विद्रोही, कपटी या छली । द्र० १:११ १७, ३:१४:२७, ५:१:४, गण० ३:१५०, १७० ।

(२) अमित्र : शत्रु ।

(३) आटविक : वनसेना, जंगली सेना, कालान्तर में इन्हें बहेलिया कहा जाता था । द्र० १:१०:३, ८:४:४१, ४३, गण० १:५७, ३:१७०, १९३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समे[1] हि लाभे संधिः स्याद्विषमे[2] विक्रमो मतः ।
समहीन[3]विशिष्टा[4]नामित्युक्ताः संधिविक्र[5]माः ॥

३४. सम लाभ में सन्धि, न्यूनाधिक लाभ में युद्ध करना उचित है। सम-हीन-विशिष्ट राजाओं के सन्धि-विक्रम कहे गये।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकणेयातव्यवृत्तिः अनुग्राह्यमित्रविशेषाश्च अष्टमोध्यायः । आदितः षटछततमः ।

सप्तम अधिकरण में षाड्गुण्य के अन्तर्गत यातव्य वृत्ति, अनुग्राह्य मित्र विशेष से सम्बद्ध अष्टम अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ छठां अध्याय समाप्त।

पाठभेद :

'युक्ताःसन्धि विक्रमाः' का तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'उक्तः सन्धिविक्रमः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३४. (१) सम : समान के साथ सन्धि, बराबर बरावर लाभ के लिए की गयी सन्धि। द्र० ७:७:४, ७:९:४।

(२) विषम : असमानों में सन्धि या एक सन्धि जो असमान लाभ के लिए की जाती है। द्र० ७:७:४, ७:९:५, गण० २:२७९।

(३) हीन : हीन सन्धि। द्र० ७:३:३६।

(४) विशिष्ट : विलक्षण, विशेषगुण सम्पन्न, सर्वोत्तम या श्रेष्ठ। गण० २:२७९।

(५) विक्रम : आक्रमण करना। द्र० १:१७:२८, १:१९:१५, ५:६:२५, ७:३:१३, ९:१:५, १२:३:१५, १४:३:६।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे अष्टमोऽध्यायः यातव्यवृत्तिरनुग्राह्यमित्रविशेषाः आदितः षट्छततमः ॥

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये यातव्यवृत्तिरनुग्राह्यमित्र विशेषाश्च अऽटमोऽध्यायः आदितः षट्छततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरण अष्टमोऽध्यायः यातव्यवृत्तिरनुग्राह्यमित्रविशेषाः आदितः षट्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्येसप्तमेऽधिकरणेयातव्यवृत्तिरनुग्राह्यमित्रविशेषा अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

आदितः षड्धिकशततमोऽध्यायः ॥१०६॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ९

[षोडशशततमं प्रकरणम्—मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधयः; तत्र मित्रसंधिः हिरण्यसंधिश्च]

एक सौ सोलहवां प्रकरण—मित्र, हिरण्य भूमि कर्म सन्धियां, उनमें मित्र सन्धि और हिरण्यसन्धि ।

संहित[1]प्रयाणे मित्रहिरण्यभूमिला[2]भानामुत्तरोत्तरो लाभः श्रेयान् ।

१. संहित प्रयाण में मित्र, हिरण्य एवं भूमि के लाभों में उत्तरोत्तर का लाभ उत्तम है।

मित्रहिरण्ये[1] हि भूमिला[2]भाद्भवतः, मित्रं हिरण्यलाभात् ।

२. भूमि लाभ से मित्र एवं हिरण्य लाभ होते हैं और हिरण्य लाभ से मित्र लाभ होता है।

यो वा लाभः सिद्धः शेषयोरन्यतरं साधयति ।

३. अथवा जो सिद्ध लाभ शेष दो में किसी एक को सिद्ध करे, वह श्रेष्ठ है।

'त्वं[1] चाहं च मित्रं लभावहे' इत्येवमादिः सम[2]सन्धिः ।

४. 'तुम और मैं मित्र लाभ करें' इस प्रकार की सन्धि 'सम' सन्धि होती है।

एक सौ सोलहवां प्रकरण अध्याय ९,१०,११, १२, तक विस्तृत है।

पादटिप्पणी :

१. (१) संहितप्रयाण : मिलकर या साथ मार्च या अभियान करना। गण० २:३:६९।

(२) लाभ : द्र० ३:६:२५, २:७:३२।

(३) भूमि : द्र० ७:९:३१, भाग० ३:३:६ गण० १:१२७।

पाठभेद :

'मित्रं हिरण्यलाभात्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मित्रहिरण्यलाभात्' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

२. (१) हिरण्य : द्रव्य, नगद मुद्रा द्र० १:१३:६, १:१९:१२।

(२) भूमि लाभ : द्र० २:६:२५, २:७:३२।

पाठभेद :

'इत्येवमादिः' का देवनागरी अनुलिपि में 'इत्येवमादिभिः पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४. (१) त्वं चाहं च मित्रं : एक ही राजा दो राजाओं का मित्र नहीं हो सकता। प्रत्येक राजा भिन्न राजा को अपना मित्र चुनता है।

(२) समसन्धि : इसमें दोनों पक्षों को बराबर भाग दिया जाता है। परिभाषा ७:७:४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'त्वं मित्रम्' इत्येवमादिर्विषमसंधिः ।

५. 'तुम मित्र लाभ करो (और मैं हिरण्य) इस प्रकार की सन्धि 'विषम' सन्धि है ।

तयोर्विशेषलाभादतिसंधि ।

६. उनमें विशेष लाभ होने पर 'अति' सन्धि होती है ।

समसंधौ तु यः संपन्नंमित्रं मित्रकृच्छ्रे वा मित्रमवाप्नोति सोऽतिसंधत्ते ।

७. समसन्धि में जो सम्पन्न मित्र अथवा विपन्न मित्र प्राप्त करता है, वह विशेष लाभ में रहता है ।

आपद्धि सौहृदस्थैर्यमुत्पादयति ।

८. आपत्ति मैत्री को स्थिर करती है ।

मित्रकृच्छ्रेऽपि नित्यमवश्यमनित्यं वश्यं वेति 'नित्यमवश्यं श्रेयः, तद्धि अनुपकुर्वदपि नामकरोति' इत्याचार्याः ।

९. मित्र की विपन्न दशा में भी नित्य अवशवर्ती अथवा अनित्य वशवर्ती मित्र उत्तम होता है। नित्य अवशवर्ती श्रेष्ठ होता है । क्योंकि वह उपकार न करने पर भी अपकार नहीं करता है। ऐसा आचार्यों का मत है ।

पाठभेद :

'इत्येवमादि' का देवनागरी अनुलिपि में 'इत्ये-वमादिभिः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) विषमसन्धि : समशक्ति के विपरीत है। द्र० परिभाषा ७:७:५ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) अतिसंधि : जब निश्चित से अधिक या विशेष लाभ हो । द्र० ७:७:६, ७:९:६, गण० २:२७:९ ।

पादटिप्पणी :

७. (१) संपन्नम् : मित्र सम्पद से सम्पन्न । द्र० ६:१:१२ ।

(२) मित्र कृच्छ्रे : जब एक राजा जिससे मित्रता की जाने वाली है, विपत्ति या संकट में हो । द्र० ५:२:१, ७:९:३० ।

पादटिप्पणी :

८. (१) आपद् : संभ्रम, संताप, पीड़ा, दुःख, आपत्ति । द्र० ९:७:२, ९:७:४ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) कृच्छ्र : कठिनाई, कठिनता, कष्टकर कष्टसाधना । द्र० ५:२:१, ७:९:८ ।

(२) नित्य : निरन्तर, चिरस्थायी, शाश्वत । मनु० २:२०६ ।

(३) अवश्य : अनियन्त्रिणीय, न वश में होने योग्य, भाग० २:६४०, ७:५:४४ ।

४ श्रेय : अपेक्षाकृत अच्छा, श्रेष्ठतर । द्र० ३:४:८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेति कौटिल्यः ।

१०. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है।

वश्यमनित्यं श्रेयः ।

११. अनित्य वशवर्ती श्रेष्ठ होता है।

यावदुपकरोति तावन्मित्रं भवति. उपकारलक्षणं मित्रमिति ।

१२. जब तक उपकार करता है, तब तक मित्र रहता है। उपकार करना ही मित्र का लक्षण है।

वश्ययोरपि महाभोगमनित्यमल्पभोगं वा नित्यमिति 'महाभोगमनित्यं श्रेयः, महाभोगमनित्यमल्पकालेन महदुपकुर्वन्तं महान्ति व्ययस्थानानि प्रतिकरोति' इत्याचार्याः ।

१३. वशवर्ती दो मित्रों में अनित्य (अल्पकाल में) महाभोग अथवा नित्य अल्पभोग प्रदान कर्ता मित्र श्रेष्ठ है ? अनित्य महाभोग श्रेष्ठ है, अनित्य महाभोग देने वाला मित्र अल्पकाल में महान उपकार करते हुए, बड़े व्ययस्थानों का प्रतीकार करता है—ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

१४. कौटिल्य का मत यह नहीं है।

नित्यमल्पभोगं श्रेयः ।

१५. नित्य अल्पभोग श्रेष्ठ है।

महाभोगमनित्यमुपकारभयादपक्रामति उपकृत्य वा प्रत्यादातुमीहते ।

१६. अनित्य महाभोगकारी मित्र उपकार भय से अपक्रान्त हो जाता है अथवा उपकार करके उसका फल प्राप्त करना चाहता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) भोग : सेवा; उपयोग, सहायता, लाभ, फल। द्र० ७:९:२६, ७:११:१०। गण० २:२९३, २:२९७।

(२) महाभोग : प्रचुर अधिक सहायता अधिक सेवा, उपयोग, लाभ। द्र० ७:९:२६, ७:११:१०, गण० ३:१३७, १३९, २१०।

(३) व्ययस्थान : खर्च का मद। गण० ३:१३, १३९:२८०।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अल्पभोग : अल्प या कम सहायता।

पादटिप्पणी :

१६. (१) महाभोग : द्र० ७:९:१३।

(२) उपकारभयाद् : उपकार के भय से।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नित्यमल्पभोगं सातत्यादल्पमुपकुर्वन्महता कालेन महदुपकरोति ।

१७. नित्य अल्पभोग कारी मित्र स्थिरता के कारण थोड़ा उपकार करते हुए, अधिक समय तक महान् उपकार करता है ।

गुरुसंमुत्थं[1] महन्मित्रं लघुसंमुत्थमल्पं[2] वेति 'गुरुसंमुत्थं[3] महन्मित्रं प्रतापकरं[4] भवति, यदा चेत्तिष्ठते तदा कार्यं साधयति' इत्याचार्याः ।

१८. अधिक प्रयास से तैयार महान् (प्रबल) मित्र अथवा अल्प प्रयास से तैयार छोटा (दुर्बल) मित्र श्रेष्ठ है ? "अति प्रयास से प्राप्त महान् मित्र प्रतापकारी होता है, जब उत्थान करता है, तो कार्य सिद्ध करता है" ऐसा आचार्यो का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

१९. कौटिल्य ऐसा नहीं मानता ।

लघुसमुत्थमल्पं श्रेयः ।

२०. अल्प से प्रयास प्राप्त छोटा (दुर्बल) मित्र श्रेष्ठ होता है ।

लघुसमुत्थमल्पं मित्रं कार्यकालं नातिपातयति दौर्बल्याच्च यथेष्टभोग्यं भवति, नेतरत्प्रकृष्टं[1] भौमम् ।

२१. अल्प प्रयास प्राप्त, दुर्बल मित्र कार्यकाल नष्ट नहीं करता, दुर्बलता के कारण इच्छानुसार भोग्य होता है, दूरस्थ भूभाग वाला प्रबल मित्र ऐसा नहीं होता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) गुरुसमुत्थं : सेना सज्जीकृत करने में अधिक समय लगने से यह तात्पर्य है । मनु० ८:४:२८, याज्ञ० २:३२१, गण० ३:२९४ ।

(२) लघु समुत्थ : कम समय में सेना का सज्जीकरण करना ।

(३) समुत्थं : सैनिक उत्साह, उद्योगिता । सैन्य सज्जीकृत या सैन्य संग्रह ।

(४) प्रताप : गौरव, प्रतिभा, भाव, मर्यादा साहस, पराक्रम, शौर्य पंच० १:१०७, द्र० १:६:३३ ७:४:७, ९:७:१५:३६ ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) श्रेय : वरीयता; अपेक्षाकृत अच्छा ! देहनर ।

पाठभेद :

'लघु समुत्थमल्पं' का तंजौर तथा तेलगु अनुप्रतिलिपि में 'लघुसमुत्थाल्पं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) प्रकृष्ट भौमम् : दूर, विस्तारयुक्त, विस्तृत भूमि । द्र० ७:६:८, ७:७:२३,, ७:९:४, गण० २:२९४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विक्षिप्तसैन्यमवश्यं वेति 'विक्षिप्तं सैन्यं शक्यं प्रतिसंहर्तुं वश्यत्वाद्' इत्याचार्याः

२२. विक्षिप्त तथा वशवर्ती सैन्य वाला अथवा अवशवर्ती सैन्य वाला मित्र श्रेष्ठ होता है। 'विक्षिप्त सैन्य वश्य होने के कारण एकत्रित किया जा सकता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

२३ कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है।

अवश्यसैन्यं श्रेयः ।

२४. अवशवर्ती (तथा समीप) सैन्य वाला मित्र श्रेष्ठ होता है।

अवश्यं हि शक्यं सामादिभिर्वश्यं कर्तुम्, नेतरत्कार्यव्यासक्तं प्रतिसंहर्तुम् ।

२५. अवशवर्ती सैन्य, साम आदि उपायों से वश में किया जा सकता है, अन्य कार्य में प्रसक्त अन्य सैन्य एकत्रित नहीं किया जा सकता है।

पुरुषभोगं हिरण्यभोगं वा मित्रमिति 'पुरुषभोगं मित्रं श्रेयः, पुरुषभोगं मित्रं प्रतापकरं भवति, यदा चोत्तिष्ठते तदा कार्यं साधयति' इत्याचार्याः ।

२६. पुरुष भोग अथवा हिरण्य भोग मित्र उत्तम होता है ? 'पुरुषभोग मित्र उत्तम होता है, पुरुषभोगमित्र प्रतापकारी होता है, जब उद्यत होता है, तो कार्य सम्पन्न करता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

२७. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है।

पादटिप्पणी :

२२. (१) विक्षिप्तसैन्यम् : बिखरी हुई सेना। द्र० ७:१५:१२, ८:५:१५, ९:२:११। गण० २:२९४।

पादटिप्पणी :

२४. (१) अवश्य : अनियन्त्रित। द्र० ७:९:९ गण० २:२९।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अवश्यं : अनियन्त्रित। द्र० ७:९:९

(२) कार्यव्यासक्तं : अपने कार्य में लीन, सैनिकों के शान्ति के व्यवसाय करने से तात्पर्य है।

पादटिप्पणी :

२६. (१) पुरुषभोग : पुरुष या सैनिकों द्वारा सहायता या उपकार। द्र० २:३३:३, गण० २:२९।

(२) हिरण्यभोग : नकद द्रव्य द्वारा सहायता या उपकार। द्र० १:१३:६, १:१९:१३, गण० २: २९५।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हिरण्यभोगं[1] मित्रं श्रेयः ।

२८. हिरण्य भोग मित्र उत्तम होता है।

नित्यो हि हिरण्येन योगः[1] कदाचिद्दण्डेन[2] ।

२९. हिरण्य प्राप्त करने का संयोग सदैव रहता है, सैन्य का कभी कभी ।

दण्डश्च हिरण्येनान्ये च कामाः[1] प्राप्यन्त इति ।

३०. हिरण्य से सैन्य एवं अन्य काम प्राप्त किए जाते हैं।

हिरण्यभोगं[1], भूमिभोगं[2] वा मित्रमिति 'हिरण्यभोगं गतिमत्त्वात्सर्व-व्ययप्रतीकारकरम्' इत्याचार्याः ।

३१. हिरण्य भोग मित्र अथवा भूमि भोग मित्र उत्तम होता है ? 'हिरण्य भोग गतिमान होने के कारण सब व्यय पूरा करने वाला होता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

३२. कौटिल्य का ऐसा मत नहीं है।

मित्राहिरण्ये हि भूमिलाभाद्भवतइत्युक्तं पुरस्तात् ।

३३. भूमि लाभ से मित्र-हिरण्य प्राप्त होते हैं, यह पहले कहा गया है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) हिरण्यभोग : हिरण्य या धन या नगद द्रव्य द्वारा उपकारी मित्र । द्र० ७:९:२६ :

पादटिप्पणी :

२९. (१) योग : मिलना, उपयोग, ग्रहण, उपभोग, वृत्ति । द्र० १:१८:९, १३:३:५४, ५६, ७:६:४१, ९:१:१५, १२:४:२९, गण० १:१३, २३, २७, ३८ ५४, ८२, १४२, २:२३०, ३:६२, १८२ ।

(२) कदाचिद्दण्डेन : कभी-कभी सेना का भी ।

पाठभेद :

'हिरण्येनान्येच' का देवनागरी अनुलिपि में 'हिरण्येनान्येन च' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३०. (१) कामा : इच्छा, कामना, अभिलषित, गण० १:३७ ।

पाठ भेद :

'गतिमत्त्वात् का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मतिमत्त्वात्' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

३१. (१) हिरण्यभोग : हिरण्य द्वारा सहायता, उपकार ।

(२) भूमिभोग : भूमि द्वारा सहायता या उपकार ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) पुरस्तात् : पहले, आगे, सामने प्रथम पूर्व । द्र० ७:९:३३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्माद्भूमिभोगंमित्रं श्रेयं[1] इति ।

३४. अतएव भूमि भोग प्रद मित्र, श्रेष्ठ होता है ।

तुल्यपुरुषभोगे[1] विक्रमः[2] क्लेशसहत्वमनुरागः[3] सर्वबललाभो[4] वा मित्र-कुलाद्विशेषः ।

३५. समान पुरुष भोग की स्थिति में विक्रम, क्लेशसहत्व, अनुराग अथवा सर्व बल लाभ जिसमें हो वह मित्र वर्ग में विशिष्ट होता है ।

तुल्ये हिरण्यभोगे प्रार्थितार्थता प्राभूत्यमल्पप्रयासता सातत्यं[1] च विशेषः ।

३६. तुल्य हिरण्य भोग होने पर, प्रार्थित धन प्रदान शीलता, प्रचुर धन युक्तता, अल्प प्रयास से कार्य साधकता और निरन्तर उपकार कर्तृत्व जिसमें हो वह उत्तम है ।

तत्रैतद्भवति ।

३७. उसमें, उस प्रकार का निरूपण होता है ।

नित्यं वश्यं लघूत्थानंपितृपैतामहं महत् ।
अद्वैध्यं चेतिसंपन्नं मित्रं षड्गुणमुच्यते[1] ॥

३८. नित्य, वश्य, लघुत्थान, पितृपैतामह, महत् और अद्वैध्य इन छः गुणों के भेद से मित्र के छः भेद हो जाते हैं ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) श्रेय : बेहतर, हितकर, अपेक्षाकृत अच्छा । द्र० ७:९:३४ ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) पुरुषभोग : द्र० ७:९:२६ ।

(२) विक्रम : आक्रमण शौर्य । द्र० १:१७:२८, १:१९:१५, १२:३:१५, ५:६:२५, ७:३:११ ।

(३) क्लेशसहत्व : क्लेश की सहनशीलता ।

(४) अनुराग : द्र० ७:५:१४, ८:२:२४ ।

(५) सर्वबललाभो : सब प्रकार की सेवा का लाभ ।

पाठ भेद :

'सातत्यं च' का तंजौर में 'सतत्याच्च' तथा देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सातत्याच्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) सातत्यं : निरन्तरता, अविच्छिन्नता स्थायित्व । गण० २:२९६ ।

पाठ भेद :

'षड्गुणम्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'षड्गुण्यम्' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) सूत्र ६ : १:१२, की पुनरुक्ति है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऋते यदर्थं प्रणयाद्रक्ष्यते यच्च रक्षति ।
पूर्वोपचितसम्बन्धं तन्मित्रं नित्यमुच्यते ॥

३९. पूर्व सम्बन्ध के बिना ही प्रेमवश जिसकी रक्षा की जाती है और जो स्वयं इस प्रकार रक्षा करता है, वह 'नित्य मित्र' कहा जाता है।

सर्वचित्रमहाभोगं त्रिविधं वश्यमुच्यते ।
एकतो भोग्यमुभयतः सर्वतोभोगि चापरम् ॥

४०. वश्यमित्र सर्वभोग, चित्रभोग एवं महाभोग के भेद से तीन प्रकार के तथा एकतो भोगी, उभयतो भोगी एवं सर्वतो भोगी भेद से तीन प्रकार के होते हैं।

आदातृ वा दातृपि वा जीवत्यरिषु हिंसया ।
मित्रं नित्यमवश्यं तद्दुर्गाटव्यपसारि च ॥

४१. शत्रुओं में हिंसा करके आदान-प्रदान कर; जो जीवन यापन करता है और दुर्ग एवं अटवी में अपसरणशील होने वाला वह 'नित्य अवश्य' मित्र होता है।

पाठभेद :

'यच्च रक्षति' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यश्च रक्षति' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३९. (१) प्रणय : प्रेम, प्रीति । द्र० ५:२:२६, ८:४:२३ ।

(२) रक्षति : मित्र द्वारा रक्षित ।

(३) नित्य : निरन्तर, सदा, अक्षर, अविनाशी, चिरस्थाई । मनु० २:२०६, गण० २:२९६ ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) सर्वभोग : सब सहायता करना । गण० २:२९७ ।

(२) चित्रभोग : सार असार वस्तुओं द्वारा सहायता करना । द्र०७:९:१३, गण० २:२९ ।

(३) महाभोग : सेना तथा कोश द्वारा उपकार करना । द्र० ७:९:१३ ।

(४) वश्य मित्र : तीन प्रकार के होते हैं । (१) सर्वभोग मित्र (२) चित्रभोग मित्र (३) महाभोग मित्र ।

(५) एकतोभोग्य : एक पक्ष की सहायता या उपकार करना । गण० २:२९, ३४५ ।

(६) उभयतः भोग : दोनों पक्षों की सहायता अथवा उपकार करना । गण० २:३४४ ।

(७) सर्वतोभोग : सब ओर या सब तरफ से या सब तरह से उपकार या सहायता करना । गण० २:३९, ३४५ ।

सर्वभोग—दण्ड-कोश-भूमि से उपकार कर्ता

चित्रभोग—रत्न, सार, द्रव्यवनादि से उपकार करने वाला ।

महाभोग—दण्ड-कोश से उपकार कर्ता ।

पाठ भेद :

'व्यपसारिच' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्यवसायि च' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४१. (१) नित्य : द्र० ७:९:९ ।

(२) वश्य : द्र० ७:९:९, ३८, गण० २:२९७

(३) दुर्गाटव्यपसार : द्र० ७:७:२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्यतो विगृहीतं यल्लघुव्यसनमेव वा ।
संधत्ते चोपकाराय तन्मित्रं वश्यमध्रुवम् ॥

४२. अन्य शत्रु से विगृहीत अथवा लघु व्यसन वाला, जो मित्र उपकार के लिये सन्धि करता है, वह अनित्य 'वश्य' मित्र होता है।

एकार्थेनाथ संबद्धमुपकार्यविकारि च ।
मित्रभावि भवत्येतन्मित्रमद्वैध्यमापदि ॥

४३. जो सुख-दुःख में समान, उपकारी, अविकारी, मित्रभावी एवं आपत्ति में भी भिन्न न होने वाला हो, वह 'अद्वैध्य' मित्र होता है।

मित्रभावाद् ध्रुवं मित्रं शत्रुसाधारणाच्चलम् ।
न कस्यचिदुदासीनं द्वयोरुभयभावि तत् ॥

४४. जो मित्र भाव के कारण नित्य तथा शत्रु का भी मित्र होने के कारण अनित्य और दोनों (विजिगीषु और शत्रु) में किसी का उपकारक न होने से उदासीन हो, उसे 'उभयभावी' मित्र कहा जाता है।

पाठ भेद :

'विगृहीतं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विगृहीतं वा' देवनागरी अनुलिपि में 'विगृहीतं च' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी

४२. अध्रुवम् : अस्थिर। मनु० ७:२०, स्कन्द० ६:५३:८३, भाग० १०:१८:४९ ।

पाठ भेद :

'एकार्थेनाथसंबद्धम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'एकार्येनार्थसंवन्धम्' तथा न्याय चन्द्रिका व श्रीमूल में 'एकार्थानर्थसंबन्धम्' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

४३. (१) एकार्थ : समान अर्थ वाला या एक उद्देश्य वाला। द्र० ५:४:१०, ७:८:२३, ७:१८:२९, ९:२:१६,१७ :

(२) मित्रभावि : मित्र भावापन्न। द्र० ७:४:७ ७:१८:२९, गण० ३:३६४ ।

(३) अद्वैध्य : द्वैधीभाव रहित मित्र अर्थात् आपत्ति में साथ न त्यागने वाला अवंचक किसी दूसरे स्वार्थ से रहित। द्र० ६:१:११, १२, ७:९:३८, गण० २:२९७ ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) ध्रुव : स्थिर मित्र, एक मित्र। मनु० ७:९:४२ ।

(२) चल : अस्थिर मित्र, द्र० ७:१०:९; ७:१३:७, ८; ७:१४:१०, ९:७:३८ । गण० २:३२१ ।

(३) उदासीन : द्र० ४:१२:१७, ६:३:२२, गण० ३:३५९, ३:२०८ ।

(४) उभयभावि : उभयभावि तथा उदासीन में अन्तर है। दोनों के प्रति मित्रा मित्र भावना, या जो शत्रु एवं मित्र दोनों का उपकार तथा अनुपकार करें। द्र० ७:९:४८, गण० ३:२९८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विजिगीषोरमित्रं यन्मित्रमन्तर्धितां गतम् ।
उपकारेऽनिर्विष्टं वाऽशक्तं वाऽनुपकारि तत् ॥

४५. विजिगीषु का शत्रु, विजिगीषु एवं शत्रु के मध्यगत जो मित्र उपकार की इच्छा वाला होकर भी असमर्थ अथवा उपकार रहित होता है, वह उभयभावी मित्र होता है।

प्रियं परस्य वा रक्ष्यं पूज्यं संबद्धमेव वा ।
अनुगृह्णाति यन्मित्रं शत्रुसाधारणं हि तत् ॥

४६. जो मित्र शत्रु का प्रिय अथवा रक्ष्य एवं पूज्य सम्बन्ध वाला है और दोनों (विजिगीषु और शत्रु) को अनुगृहीत करता है, वह उभयभावी मित्र कहा जाता है।

प्रकृष्टभौमं संतुष्टं बलवच्चालसं च यत् ।
उदासीनं भवत्येतद्व्यसनादवमानितम् ॥

४७. दूरदेशस्थ, सन्तुष्ट, बली, आलसी एवं व्यसनतिरस्कृत मित्र 'उदासीन' कहा जाता है।

अरेर्नेतुश्च यद्वृद्धिं दौर्बल्यादनुवर्तते ।
उभयस्याप्यविद्विष्टं विद्यादुभयभावि तत् ॥

४८. जो दुर्बलता के कारण शत्रु और विजिगीषु दोनों की वृद्धि चाहता है दोनों के प्रति द्वेष भाव नहीं रखता, वह 'उभयभावी मित्र' होता है।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ऽनि' लुप्त है।

पादटिप्पणी :

४५. (१) अन्तर्धिताम् गतम् : द्र० ७:१३:२५, गण० २:३९८, ३६४।

(२) उपकारेऽनिविष्टं : किसी प्रकार के बंधन या उपकृतत्व में न होना। द्र० ७:१८, ३७।

पाठभेद :

'पूज्यं संबद्धम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पूज्यं संबन्धम्' तथा न्याय चन्द्रिका वा श्रीमूल में 'पूज्य-संबन्धम्' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४६. (१) पूज्यं : माननीय, आदरणीय।

पादटिप्पणी :

४७. (१) प्रकृष्टभौम : अति विस्तृत भूमि। द्र० ३:७:९:२१, गण० २:२९८।

(२) व्यसन : आपदा, विजिगीषु की आपदा। गण० ३:२।

(३) अवमानित : तिरस्कृत, अपमानित।

पादटिप्पणी :

४८. (१) उभयभाविमित्र : दोनों के प्रति मित्र भावना जो सूत्र ४४-४८ तक में वर्णित है। द्र० ७:९:४४, ७:१८:३४, ७:१८:३९, गण० ३:२९८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कारणाकारणध्वस्तं[1] कारणाकारणागतम् ।
यो मित्रं समुपेक्षेत स मृत्युमुपगूहति[2] ।।

४९. विना कारण गत तथा बिना कारण आगत मित्र को स्वीकार कर लेता है वह मृत्यु का आलिंगन करता है ।

क्षिप्रमल्पो लाभश्चिरान्महानिति वा 'क्षिप्रमल्पो लाभः कार्यदेशकाल-संवादकः श्रेयान्' इत्याचार्याः ।[2]

५०. शीघ्र होने वाला अल्पलाभ अथवा अधिक समय से होने वाला महान् लाभ श्रेष्ठ है ? 'कार्य देश एवं काल का सूचक होने कारण शीघ्र होने वाला अल्पलाभ उत्तम होता है' ऐसा आचार्यों का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

५१. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है ।

चिरादविनिपाती बीजसधर्मा[1] महाँल्लाभः श्रेयान्, विपर्यये[2] पूर्वः ।

५२. चिरकाल में अवश्य होने वाला बीज सदृश धर्म वाला महान् लाभ श्रेष्ठ होता है, उसके विपरीत होने पर पूर्व लाभ उत्तम होता है ।

एवं दृष्ट्वा ध्रुवे लाभे लाभांशे च गुणोदयम् ।
स्वार्थसिद्धिपरो यायात्संहितः समवायिकैः ।।

५३. इस प्रकार निश्चित लाभ और समांश होने पर गुणोदय का विचार कर, स्वार्थ सम्पादन में तत्पर राजा सामवायिकों के साथ सन्धि करे ।

पाठभेद :

'कारणकारध्वस्तं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'करणध्वस्तं' तथा 'करणागतम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) कारणाकारण : द्र० ७:६:२३ ।

(२) मृत्युमुपगूहति : मृत्यु का आलिंगन करता है ।

पाठभेद :

'कालसंवादकः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कालसंपादकः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५०. क्षिप्र : तेज, शीघ्रगमी, तुरन्त, लचीला । मनु० ३:१७ ।

(२) हिरण्य संधि के विषय में कहा गया है । सूत्र ५०, ५१ एवं ५२ ।

पादटिप्पणी :

५२. (१) वीजसधर्मं : बीज की प्रकृति ।

(२) विपर्यय : उल्टे या अन्यथा, वैपरीत्य ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधौ मित्रसंधिः हिरण्यसंधिश्च: नवमोऽध्यायः आदितः सप्तशततमः ।

सप्तम अधिकरण में षाड्गुण्य के अन्तर्गत मित्र हिरण्य भूमि कर्म सन्धि में मित्रसन्धि और हिरण्यसन्धि सम्बद्ध नवां अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ सातवां अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे नवमोऽध्यायः मित्रहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ मित्रसन्धिः, हिरण्यसन्धिः आदितः सप्तशततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये मित्रहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ मित्रसन्धिः हिरण्यसन्धिश्च नवमोऽध्यायः आदितस्सप्तशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे नवमोऽध्यायः मित्राहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ मित्रसन्धिः हिरण्यसन्धि । आदितः सप्तशततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधौ मित्रसंधिः हिरण्यसंधिः नवमोऽध्यायः ॥९॥ आदितः सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥१०७॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १०

(षोडशशततमं प्रकरणम्—मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधयः, तत्र भूमिसंधिः)

एक सौ सोलहवां प्रकरण—मित्र-हिरण्य-भूमि कर्म सन्धियां, उनमें भूमिसन्धि ।

'त्वं चाहं च भूमिं लभावहे' इति भूमिसंधिः ।

१. 'तुम और मैं भूमि प्राप्त करें' इस प्रकार की सन्धि भूमि सन्धि है।

तयोर्यः प्रत्युपस्थितार्थः संपन्नां भूमिमवाप्नोति सोऽतिसंधत्ते ।

२. उनमें आवश्यक कर्तव्य करने वाला जो सम्पन्न भूमि प्राप्त करता है, वह लाभान्वित होता है।

तुल्ये संपन्नालाभे यो बलवन्तमाक्रम्य भूमिमवाप्नोति सोऽतिसंधत्ते ।

३. समान रूप से सम्पन्न लाभ होने पर भी जो बलवान् पर आक्रमण कर, भूमि प्राप्त करता है, वह लाभभाजन बनता है।

भूमिलाभं शत्रुकर्शनंप्रतापं च हि प्राप्नोति ।

४. भूमिलाभ, शत्रुदमन एवं प्रताप-प्रसार करने वाला बनता है।

पादटिप्पणी :

१. (१) भूमिसंधि : भाग० ३:३:६, गण० २:३०१, ३:२५७।

पाठभेद :

'स्थितार्थः संपन्नां' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्थितार्थसंपन्नां' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२. (१) संपन्नां : जनपद के गुणों से युक्त या सम्पद युक्त भूमि। द्र० ६:१:८।

पाद टिप्पणी :

४. (१) शत्रुकर्शन : उस शत्रु को दुर्बल बनाना जिसकी भूमि जीती गयी है। द्र० ७:३:१६, ७:४:१०, ७:८:८, १३:४:१।

(२) प्रताप : द्र० १:१६:३३, ७:४:७, ७:७:९, ९:१:१८, २६, ९:२:९।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुर्बलाद्भूमिलाभे सत्यं सौकर्यं भवति ।

५. दुर्बल से भूमि लाभ वास्तव में सुखकर होता है ।

दुर्बल एव च भूमिलाभः, तत्सामन्तश्च मित्रममित्रभावं गच्छति ।

६. इस प्रकार भूमि लाभ निकृष्ट होता है, उसका सामन्त जो कि विजिगोषु का मित्र होता है वह शत्रु बन जाता है ।

तुल्ये बलीयस्त्वे यः स्थितशत्रुमुत्पाद्य भूमिमवाप्नोति सोऽतसंधत्ते ।

७. दोनों के समानबली होने पर, जो स्थायी शत्रु को उत्पादित कर, भूमि प्राप्त करता है, वह लाभवान् होता है ।

दुर्गावाप्तिर्हि स्वभूमिरक्षणममित्राटवीप्रतिषेधं च करोति ।

८. दुर्ग की प्राप्ति से स्वभूमि रक्षण तथा शत्रु और आटविकों का प्रतिषेध हो जाता है ।

चलामित्राद् भूमिलाभे शक्यसामन्ततो विशेषः ।

९. अस्थायी शत्रु से भूमि लाभ की स्थिति में दुर्बल सामन्त होने पर, लाभ उत्तम होता है ।

पाठभेद :

'सौकर्य' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सौन्दर्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) सौकर्य : सुकरता, आसानी, साध्यता, दक्षता ।

पाद टिप्पणी :

६. (१) सामन्त : पड़ोसी राजा । द्र० १:२१:१०, २४, २:९:३, १०, ३:२०:१५, ७:१३:२४, गण० १:४८ ।

पाठभेद :

'स्थितशत्रुम्' का त्रिवेन्द्रम् में 'स्थितश्शत्रुम्' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

७. (१) स्थितशत्रु : स्थाई शत्रु, शत्रु जिसके पास दुर्ग होता है या परिखा से रक्षित शत्रु । द्र० ७:१३:८, २३, ९:६:५३, गण० ३:१३५ ।

पाठभेद :

'रक्षणमित्रा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रक्षणे-मित्रा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) अमित्र : शत्रु ।

(२) अटवी : जंगली जाति या वन वासियों की सेना ।

(३) प्रतिषेधं : निषेध, नियन्त्रण करना, विग्रह, दमन । द्र० १:१२:१३, १६, २:८:७, ५:१:३७, ३८, ५:५:९, ८:१:३७ ।

पादटिप्पणी :

९ (१) चलामित्र : अस्थिर अमित्र जिसके पास दुर्ग नहीं होता या घुमन्तू शत्रु । द्र० ७:१३:७, ८, ७:१४:१०, ९:७:२८, गण० २:३२१ ।

(२) शक्य : दुर्बल जिस पर सरलता पूर्वक विजय प्राप्त किया जा सके । द्र० ६:१:३८, १३: ४:६० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुर्बलसामन्ता हि क्षिप्राप्यायनयोगक्षेमा भवति ।

१०. दुर्बल सामन्त युक्त भूमि, शीघ्र योग-क्षेम कारिणी होती है ।

विपरीता बलवत्सामन्ता कोशदण्डावच्छेदनी च भूमिर्भवति ।

११. इसके विपरीत बलवान् सामन्त का भी भूमि, कोश-दण्ड का नाश करने वाली होती है।

संपन्ना नित्यामित्रामन्दगुणा वा भूमिरनित्यामित्रेति 'संपन्ना नित्यामित्रा श्रेयसी भूमिः; संपन्ना हि कोशदण्डौ संपादयति, तौ चामित्रप्रतिघातकौ' इत्याचार्याः ।

१२. सम्पन्न तथा नित्य-शत्रु युक्त भूमि अथवा असम्पन्न एवं अनित्य-शत्रु युक्त भूमि श्रेष्ठ होती है ? सम्पन्न तथा नित्य-शत्रु युक्त भूमि कल्याणकारिणी होती है क्योंकि सम्पन्न भूमि कोश और दण्ड में वृद्धि करती है, वे दोनों (कोश-दण्ड) शत्रु विनाश करते हैं, ऐसा आचार्यों का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

१३. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है ।

पाठ भेद :

'भवति' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भवन्ति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) क्षिप्र : शीघ्रता पूर्वक, तत्काल, शीघ्रगति । द्र० ७:९:५० ।

पाठभेद :

'वच्छेदनी च भूमिर्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'च्छेदेननीच भूमिर्' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

११. (१) अवच्छेदनी : अनर्थकर, बाधक, घातक, नाशक ।

(२) भूमि : इसका सर्वत्र एक वचन में प्रयोग किया गया है । द्र० ७:९:१, ७:९:३१, ७:१०:१, गण० १:१२ ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) संपन्न : सम्पदयुक्त, समृद्धिशाली, उन्नतिशील, धनी । द्र० ६:१:८, ७:९:२, १२ ।

(२) नित्यामित्र : सदा शत्रु बना रहने वाला । द्र० ७:७९ ।

(३) श्रेय : बेहतर, अपेक्षाकृत अच्छा, हितकर, उपयुक्त । द्र० ७:९:३४ ।

(४) प्रतिघातको : उच्छेद, या नाशक, प्रतिघात करने वाला । द्र० २:८:२९, ७:६:२६, ७:१३:२५, ९:६:२७, ९:७:५५, गण० २:३६४, ३:८२ ।

पाद टिप्पणी :

१३. (१) नेति : यह मत कौटिल्य को स्वीकार नहीं है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नित्यामित्रालाभे भूयान् शत्रुलाभो भवति ।

१४. नित्य-शत्रु वाली भूमि का लाभ होने पर प्रचुर शत्रु-वृद्धि हो जाती है।

नित्यश्च शत्रुरुपकृते चापकृते च शत्रुरेव भवति, अनित्यस्तु शत्रुरुपकारादनपकाराद्वा शाम्यति ।

१५. नित्य-शत्रु उपकार या अपकार करने पर शत्रु ही रहता है, किन्तु अनित्य शत्रु उपकार करने पर, अपकार नहीं करता, शान्त रहता है।

यस्या हि भूमेर्बहुदुर्गाश्चोरगणैर्म्लेच्छाटवीभिर्वा नित्याविरहिताः प्रत्यन्ताः सा नित्यामित्रा, विपर्यये त्वनित्यामित्रा ।

१६. जिस भूमि के सीमान्त दुर्ग चोरगणों म्लेच्छों अथवा आटविकों से नित्य भरे रहते हैं, वह भूमि नित्य-शत्रुभूमि होती है, इसके विपरीत अनित्य शत्रुभूमिं।

अल्पा प्रत्यासन्ना महती व्यवहिता वा भूमिरिति अल्पा प्रत्यासन्ना श्रेयसी ।

१७. समीपस्थ अल्पभूमि उत्तम होती है अथवा दूरस्थ अधिक भूमि ? आसन्न (समीपस्थ) अल्पभूमि श्रेयस्कर होती है।

पाठभेद :

'नित्यामित्रालाभे' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नित्यामित्रलाभे' पाठभेद मिलता है।

पाठ भेद :

'चापकृते च' तेलगू अनुप्रतिलिपि में तथा 'दनपकारा' देवनागरी अनुलिपि में लुप्त है।

पादटिप्पणी :

१५. (१) उपकृते : जिसका उपकार किया हो, एहसान मन्द ।

(२) अपकृते : जिसका अपकार किया गया हो ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) म्लेच्छ : कांगले का मत है कि म्लेच्छ शब्द यहाँ अटवीं का विशेषण है। द्र० १:१२:२१, ३:१३:३ ७:१४:२७ ।

(२) प्रत्यन्त : सीमा, द्र० ३:१७:४२, गण० ३:१६६ ।

(३) नित्यामित्र : सार्वकालिक शत्रु, स्थाई अमित्र या शत्रु, गण० २:३०३ ।

(४) अनित्य : अस्थाई आदि गण० २:३०३ ।

पाठभेद :

'व्यवहिता' का तंजौर में 'व्यवहितों' पाठभेद मिलता है :

पादटिप्पणी :

१७. (१) प्रत्यासन्न : समीप, या अति निकट

(२) महती : बड़ी ।

(३) व्यवहिता : अलग, पृथक, दूरका, द्र० १:१५:२८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुखा हि प्राप्तुं पालयितुमभिसारयितुं च भवति ।

१८. क्योंकि वह, भूमि प्राप्त करने, पालन करने तथा विपन्नावस्था में आश्रय ग्रहण करने में सुविधाजनक होती है ।

विपरीता व्यवहिता ।

१९. व्यवहित भूमि इसके विपरीत दुःखप्रद होती है ।

व्यवहितयोरपि दण्डधारणाऽऽत्मधारणा वा भूमिरिति आत्मधारणा श्रेयसी।

२०. व्यवहित एवं अव्यवहित भूमि में भी दण्डधारणा अथवा आत्मधारणा (स्वयं सुरक्षित) इन दोनों में आत्मधारणा भूमि उत्तम होती है ।

सा हि स्वसमुत्थाभ्यां कोशदण्डाभ्यां धार्यते ।

२१. वह भूमि स्वयं के कोश दण्ड से धारण की जाती है ।

विपरीता दण्डधारणा दण्डस्थानम् ।

२२. उसके विपरीत दण्डधारणा भूमि दण्ड स्थान मात्र होती है ।

बालिशात्प्राज्ञाद्वा भूमिलाभ इति बालिशाद्भूमिलाभः श्रेयान् ।

२३. मूर्ख अथवा प्राज्ञ से भूमि लाभ उत्तम होता है ? मूर्ख से भूमि लाभ श्रेष्ठ होता है।

सुप्राप्यानुपाल्या हि भवति, अप्रत्यादेया च ।

२४. वह भूमि सुखपूर्वक प्राप्य एवं पालनीय होती है और उसका पुनः प्रत्यावर्त्तन करने योग्य नहीं होती ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) अभिसार : विपक्षी को बचाने के लिये जाना । आपद काल में शरण के लिये जाना या उद्धार, तारण, द्र० ७:१३:२२, ३८, ३९ ।

पाठभेद :

'व्यवहितयोर्' का न्यायचन्द्रिका में 'व्यवहिता-व्यवहितयोर्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) व्यवहित : द्र० १:१५:२८ ।

(२) दण्डधारणा : सेना से धारण की गयी भूमि या सेना का स्कन्धावार या शिविर ।

(३) आत्मधारणा : स्वयं धारण की हुई भूमि, गण० २:३०३ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) दण्डस्थानम् : स्कन्धावार की भूमि, सेना के ठहरने की भूमि, कैम्पिग ग्राउण्ड ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) बालिश : मूर्ख या लड़कपना, द्र० ३:१२:४६ ।

(२) प्राज्ञ : बुद्धिमान चतुर ।

पाद टिप्पणी :

२४. (१) अप्रत्यादेव : वापस लेना, द्र० ६१ ३:५३, गण० ३:६७, १५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विपरीता प्राज्ञादनुरक्ता ।

२५. प्राज्ञ से प्राप्त अनुरक्त प्रज्ञावाली भूमि उसके विपरीत होती है।

पीडनीयोच्छेदनीययोरुच्छेदनीयाद्भूमिलाभः श्रेयान् ।

२६. पीडनीय और उच्छेदनीय शत्रु में उच्छेदनीय शत्रु से भूमि लाभ श्रेयस्कर होता है।

उच्छेदनीयोह्यनपाश्रयो दुर्बलापाश्रयो वाऽभियुक्तः कोशदण्डावादायापसर्तुकामः प्रकृतिभिस्त्यज्यते, न पीडनीयो दुर्गमित्रप्रतिष्टब्धः ।

२७. आश्रयहीन अथवा दुर्बलाश्रय उच्छेदनीय शत्रु आक्रान्त होने पर, कोश-दण्ड लेकर, पलायन करने वाला होता है, अतः प्रज्ञा द्वारा त्याग दिया जाता है, किन्तु दुर्ग-मित्रों द्वारा प्रतिबन्धित पीडनीय शत्रु प्रजा द्वारा त्यक्त नहीं होता है।

दुर्गप्रतिष्टब्धयोरपि स्थलनदीदुर्गीयाभ्यां स्थलदुर्गीयाद्भूमिलाभः श्रेयान् ।

२८. दुर्गों से आरक्षितों में भी स्थलदुर्गीय एवं नदीदुर्गीय में स्थलदुर्गीय से भूमि लाभ श्रेष्ठ है।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अनुरक्त : निष्ठावान्, वफादार ।

पाद टिप्पणी :

२६. (१) पीडनीय : द्र० ६:२:१६ ।

(२) उच्छेदनीयं : उन्मूलन, उत्पाटन, नष्ट करने योग्य । द्र० ६:२:१६, ७:१०:२, ७:१८:१४ ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) अपाश्रय : निराश्रय, निष्कलंक, असहाय, आश्रयहीन । बिना सहायता के । गण० २:३१० ।

(२) अभियुक्त : आक्रान्त द्र० ७:५:६ ।

(३) प्रकृति : प्रजा, जनता ।

(४) प्रतिष्टब्ध : रोका हुआ, रुकावट डाला गया, द्र० २:६:१६, ७:७:१२, ७:१७:२७, ९:३:२४ ।

पाठभेद :

'भूमिलाभः श्रेयान्' का तंजौर में 'भूमिपालः श्रेयान्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) स्थलदुर्ग : स्थलदुर्ग युक्त, द्र० ३:९:२५, ३२ ।

(२) नदीदुर्ग : नदी दुर्ग युक्त, द्र० ७:१०:३० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थालेयं हि सुरोधावमर्दावस्कन्दमनिःस्रावि शत्रु च ।

२९. स्थल सम्बद्ध दुर्ग सुखपूर्वक अवरोध, अवमर्द एवं अवस्कन्द करने योग्य होता है तथा शत्रुनिःसरणकारी नहीं होता ।

नदीदुर्गं तु द्विगुणक्लेशकरम्, उदकं च पातव्यं वृत्तिकरं चामित्रस्य ।

३०. नदी दुर्ग दूना दुःखकारी होता है, पेयजल-युक्त होने के कारण शत्रु को वृत्ति प्रदान करता है ।

नदीपर्वतदुर्गीयाभ्यां नदीदुर्गीयाद्भूमिलाभः श्रेयान् ।

३१. नदीदुर्गीय एवं पर्वतदुर्गीय में नदीदुर्गीय से भूमि लाभ उत्तम होता है ।

नदी दुर्गं हि हस्तिस्तम्भसंक्रमसेतुबंधनौभिः साध्यमनित्यगाम्भीर्यमवस्राव्युदकं च ।

३२. नदीदुर्ग हाथी एवं स्तम्भ द्वारा निर्मित सेतु बन्धों एवं नौकाओंसे सुखपूर्वक तरणीय, अनित्य गाम्भीर्य वाला तथा निकालने योग्य जल वाला होता है ।

पाठभेद :

'स्थालेयं' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्थलेयं' श्रीमूल में 'स्थलीयं' तथा 'वमर्दावस्कन्द' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वमर्दास्कन्द' 'अनिःस्रा.वि' का 'अनिस्रावि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) सुरोध : जिसमें आसानी या सरलता से घेरा डाला जा सके ।

(२) अवमर्द : कुचलना, वर्बादी, रौंदना, द्र० १३:४:२५, गण० ३:२००:२०३ ।

(३) अवस्कन्द : अचानक, आकस्मिक, आक्रमण, द्र० ६०:६:४० ।

(४) अनिस्रावि : शत्रुओं को न निकलने या भागने देना, गण० १:७१, २:२७२, ३:१२४, १२५, १४७, १७०, १७७ ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) उदक : पानी, पीने योग्य जल ।

(२) पातव्यम् : रक्षा करने योग्य, पीने योग्य ।

(३) वृत्तिकर : जीविका का स्रोत या जीविका प्रदान करने वाला ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) पर्वतदुर्ग : पहाड़ी किला ।

पाठ भेद :

'अवस्राव्यु' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपस्राव्यु' देवनागरी अनुप्रतिलिपिमें 'अप्रस्राव्यु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) स्तम्भसंक्रमसेतु : लकड़ी के खम्भे, पर बना पुल, द्र० १०:२:१४, १:९:१३, ६:१:६, ८:५:३० ।

(२) अवस्राव्युदक : जहाँ से पानी बाहर बहने दिया जा सके ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पार्वतं तु स्वारक्षं दुरुपरोधि[1] कृच्छ्रारोहणम्[2], भग्ने[3] चैकस्मिन्न सर्ववधः, शिलावृक्षप्रमोक्षश्च महापकारिणाम्।

३३. पर्वत दुर्ग आरक्षित, दुःख पूर्वक अवरोध योग्य, तथा कठिनाई से आरोहण योग्य होता है, एक भाग टूटने पर भी पूर्णनष्ट नहीं होता, अपकारियों पर शिला, वृक्ष आदि गिराकार प्रतीकारकारी होता है।

निम्नस्थलयोधिभ्यो निम्नयोधिभ्यो भूमिलाभः श्रेयान्।

३४. निम्नयोधी एवं स्थलयोधी में निम्नयोधी से भूमि लाभ श्रेष्ठ होता है।

निम्नयोधिनो ह्युपरुद्धदेशकालाः, स्थलयोधिनस्तु सर्वदेशकालयोधिनः।

३५. निम्नयोधी विशेष प्रकार के देश-काल अधीन युद्ध करने में सफल होते हैं किन्तु स्थलयोधी सब प्रकार के देश काल में सफल युद्धकारी होते हैं।

खनका[1]काश[2]योखधियः खनकेभ्यो भूमिलाभः श्रेयान्।

३६. खनकयोधी एवं आकाश योधियों में खनकयोधी से भूमि लाभ उत्तम होता है।

पाठभेद :

'दुरुपरोधि' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दुरवरोधि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३३. (१) दुरुपरोधि : घेरा डालने में कठिन, जिसको सरलता से जीता न जा सके, द्र० १३:५:९ १३:३:३७।

(२) कृच्छ : कठिनाई, द्र० ५:२:१।

(३) भग्न : किलेबन्दी का एक भाग टूट जाता है।

पाठभेद :

'भूमिलाभः श्रेयान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भूलाभः श्रेयान्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३४. (१) निम्न योधी : जल या आर्द जलपूर्ण क्षेत्र। नौकादि में स्थित होकर जल प्रहार करना। गण० २:३०५, ३:१२१।

(२) स्थल योधी : भूमि पर लड़ना। गण० २:३०५।

पादटिप्पणी :

३६. (१) खनका : खान या ट्रेन्च युद्ध, पैगम्बर मुहम्मद साहब के ओहद का युद्ध ट्रैन्च से किया था, द्र० १०:६४:२।

(२) आकाश योधि : आकाश अर्थात् खुले में प्रहार करने वाले। आकाश योधि को कुछ लोग हवाई जहाज से लड़ने वाली एयर फोर्स के सैनिक कहते हैं। यह केवल कल्पना मात्र है, द्र० १०:४:२।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खनका हि खातेन[१] शस्त्रेण चोभयथा युध्यन्ते, शस्त्रेणैवाकाशयोधिनः[२]।

३७. खनकयोधी खात और शस्त्र दोनों होने पर, युद्ध करते हैं और आकाश योधी केवल शस्त्र से ही युद्ध करने में सफल होते हैं।

एवंविधेभ्यः पृथिवीं लभमानोऽर्थशास्त्रवित्, संहितेभ्यः परेभ्यश्च विशेषमधिगच्छति।

३८. अर्थशास्त्र वेत्ता राजा इस प्रकार सन्धियुक्त राजाओं तथा अन्य शत्रुओं से भूमि लाभ करता हुआ उन्नति शील होता है।

इति सप्तमेऽधिकरणे मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधौ भूमिसंधिः दशमोऽध्याय आदितोऽष्टशततमः।

सप्तम अधिकरण में मित्र-हिरण्य-भूमिकर्म सन्धि के अन्तर्गत भूमि सन्धि सम्बद्ध दशवाँ अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ आठवाँ अध्याय समाप्त।

पादटिप्पणी :

३७. खात : खाई या ट्रेन्च युद्ध। द्र० २:२:३, ३:५:६, २:१२:३, ३:८:२१ ७:१७:४६, ७:१५:१३ गण० ३:१०३।

(२) आकाश योधि : खुले में प्रहार करने वाला, द्र० ७:१०:३६, १०:४:२।

पाठ भेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे दशमोऽध्यायःमित्रहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ भूमिसन्धिः आदितोऽष्टशततमः।

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये मित्रहिरण्य भूमि कर्म संधौ भूमि सन्धिः दशमोध्यायः आदितोऽष्टशततमः।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे एकादशोऽध्यायः मित्रहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ अनवसितसंधिः आदितो नवशततमः।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधौ भूमिसंधिः दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ आदितोऽष्टाधिकशततमोऽध्यायः ॥१०८॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ११

[षोडशशततमं प्रकरणम्—मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधयः तत्र अनवसितसंधिः]

एक सौ सोलहवां प्रकरण—मित्र-हिरण्य-भूमिकर्म सन्धियां उनके अन्तर्गत अनवसित सन्धि ।

'त्वं चाहं च शून्यं[1] निवेशयावहे[2]' इत्यनवसितसंधिः[3] ।

१. 'तुम और मैं शून्य स्थान बसायें' इस प्रकार को सन्धि 'अनवसित' सन्धि है ।

तयोर्यः प्रत्युपस्थितार्थो[1] यथोक्तगुणां भूमिं निवेशयति सोऽतिसंधत्ते ।

२. उनमें आवश्यक सामग्री युक्त जो यथोक्त गुण भूमि को बसाता है, वह विशेष लाभान्वित होता है ।

तत्रापि स्थलमौदकं[1][2] वेति महतः[3] स्थलादल्पमौदकं श्रेयः, सातत्यादवस्थितत्वाच्च[4] फलानाम् ।

३. उनमें स्थल अथवा जलयुक्त सरोवरादि सहित भूमि श्रेष्ठ होती है ? विशाल स्थल भूमि की अपेक्षा थोड़ी जल युक्त भूमि श्रेष्ठ है क्योंकि वह निरन्तर और आवश्यक फल प्रदान करने वाली होती है ।

पाठभेद :

'त्वं चाहं च' का देवनागरी अनुलिपि में 'त्वयाहं च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) शून्य : खाली या निर्जन या विजन भूमि । द्र० ५:३:२० ।

(२) निवेश : द्र० १०:२:१ ठहरना, विश्रान्ति, आवास, निवास । गण० ३:१० ।

(३) अनवसित सन्धि : खाली भूमि या आवाद भूमि को बसाने के लिए की गयी सन्धि को कहते हैं । द्र० २:२४:१, ७:११:१, ३:१६:३१, गण० २:३० ।

पादटिप्पणी :

२. (१) प्रत्युपस्थितार्थो : जब उसकी आवश्यकता पड़ती है । द्र० ७:१०:२ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) स्थलम् : वह जो वर्षा जल पर केवल आश्रित रहता है । सूखी भूमि, मरु आदि का क्षेत्र ।

(२) औदकं : जल बहुल, जलीय, नदी युक्त जो जल से प्रवाहित रहती है ।

(३) महत् : प्रचुर, अधिक, यथेष्ठ, बड़ी ।

(४) सातत्य : निरन्तर, सर्वदा, स्थायित्व । द्र० ७:११:३, ७:११:१६, गण० २:२९६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थलयोरपि प्रभूतपूर्वापरसस्यमल्पवर्षपाकमसक्तारम्भं श्रेयः ।

४. स्थल भूमियों में भी प्रचुर पूर्वापर सस्य सम्पत्ति वाली, अल्प वृष्टि से पकने वाली निर्बाध कर्षणोपयोगी भूमि श्रेष्ठ होती है।

औदकयोरपि धान्यवापमधान्यवापाच्छ्रेयः ।

५. औदक भूमियों में भी धान्य की बुवाई वाली भूमि धान्य की बुवाई के अयोग्य भूमि से श्रेष्ठ होती है।

तयोरल्पबहुत्वे धान्यकान्तादल्पान्महदधान्यकान्तं श्रेयः ।

६. उन दोनों के अधिक और कम की स्थिति में धान्य शोभी अल्प भूमि की अपेक्षा अधान्य शोभी अधिक भूमि श्रेष्ठ होती है।

महत्यवकाशे हि स्थल्याश्चानूप्याश्चौषधयो भवन्ति ।

७. अधिक स्थान में स्थल एवं जल प्राय सम्बन्धी औषधियाँ उत्पन्न होती हैं।

दुर्गादीनि च कर्माणि प्राभूत्येन क्रियन्ते ।

८. दुर्गादि कर्म प्रचुर मात्रा में सम्पन्न किये जाते हैं।

कृत्रिमा हि भूमिगुणाः ।

९. भूमि गुण कृत्रिम होते हैं अर्थात् इच्छानुरूप बनाये जा सकते हैं।

पादटिप्पणी :

४. (१) पूर्वापर : आगे पीछे अर्थात् शरद तथा वसन्त में होने वाली फसल से तात्पर्य है।

(२) अल्प वर्ष : थोड़ी वर्षा।

(३) असक्त : जो अवरुद्ध या प्रतिबन्धित नहीं है। इसका अर्थ आसक्ति रहित तथा उदासीन भी होता है। द्र० ७:११:१४।

पादटिप्पणी :

५. (१) धान्यवाप : धान्य या अन्न या अनाज बोना। अठारह प्रकार के धान्य होते हैं। गण० २:३०, मत्स्य २:६:७, २:७:१०।

पाठभेद :

'महदधान्यकान्तं' का देवनागरी अनुलिपि में 'महदान्यकान्तं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६. (१) धान्यकान्ता : धान्यादि अन्न की उपज के लिए उपयोग या अनुकूल अच्छी भूमि आदि गण० २:२०८।

पादटिप्पणी :

७. (१) महत्यवकाश : बड़ा क्षेत्र या विस्तृत भूमि।

(२) अनूप : जल प्राय प्रदेश या क्षेत्र या स्थान। द्र० २:२४:५, ४:३:६, स्कन्द० १:२, ११४, ११५, भाग० १२:३:२१।

पादटिप्पणी :

८. (१) प्राभूय : प्रचुर, अधिक, बहुत।

पादटिप्पणी :

९. (१) कृत्रिम : क्रिया साध्य, भूमि, जैसे कृत्रिम बनायी जाती है, उसी प्रकार भूमि भी बनाई जाती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खनिधान्यभोगयोः खनिभोगः कोशकरः, धान्यभोगः कोशकोष्ठागारकरः ।

१०. खनिभोग एवं धान्यभोग भूमियों में 'खनि भोग केवल कोश वृद्धि करता है और धान्यभोग कोश एवं कोष्ठागार दोनों को बढ़ाता है ।

धान्यमूला हिं दुर्गादीनां कर्मणामारम्भाः ।

११. दुर्गादि कर्मों का आरम्भ धान्य के ऊपर आश्रित होता है ।

महाविषयविक्रयो वा खनिभोगः श्रेयान् ।

१२. अथवा खनि भोग भूमि से उत्पन्न द्रव्य का विक्रय क्षेत्र बड़ा होता है (अतः वह भी उत्तम होता) ।

'द्रव्यहस्तिवनभोगयोर्द्रव्यवनभोगः सर्वकर्मणां योनिः प्रभूतनिधानक्षमश्च, विपरीतो हस्तिवनभोगः' इत्याचार्याः ।

१३. 'द्रव्यवनभोग एवं हस्तिवनभोग में द्रव्यवनभोग उत्तम होता है क्योंकि वह सब कर्मों का मूलस्रोत होता है और प्रचुर संग्रह योग्य होता है, हस्तिवनभोग इसके विपरीत होता है' ऐसा आचार्यों का मत है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) खनि : खान । द्र० ७:१:२०, ७:१२:६, २८, गण० १:५ ।

(२) धान्य भोग : जिस भूमि से धान्य का लाभ प्राचुर्य से होता है । गण० २:३०८ ।

(३) खनिभोग : प्रचुर मात्रा में खनिज का लाभ होना । गण० २:३०८ ।

(४) भोग : आय, प्राप्ति, लाभ । द्र० १:१४:५, ७:१६:१३, १४, १५, गण० ३:१३, १३९, २१० ।

पाठभेद :

'धान्य मूला' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धान्यमूल्या' तथा 'आरम्भाः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आरम्भः' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'विक्रयो' का देवनागरी अनुलिपि में 'विक्रमो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) महाविषयविक्रय : जिसे खरीदने के लिये बहुत से ग्राहक हों या विस्तीर्ण या व्यापक । द्र० ७:१२:२५ ।

(२) भोग : द्र० १:१४:५, ७:११:१०, गण० ३:१३७, १४९, २१० ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) योनिः : स्रोत, उत्पत्ति स्थान । द्र० २:१०:५०, ४:७:२८, गण० ३:२१० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेति कौटिल्यः ।

१४. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है ।

शक्यं द्रव्य[1]वनमनेकमनेकस्यां भूमौ वा[2]पयितुम्, न हस्ति[3]वनम् ।

१५. अनेक प्रकार के द्रव्य वन अनेक भूमि पर लगाये जा सकते हैं किन्तु हस्ति वन ऐसा नहीं कया जा सकता ।

हस्ति[1]प्रधानो हि परा[2]नीकवध इति ।

१६. शत्रु सेना का वध प्रमुख रूप से हाथियों द्वारा किया जाता है (अतः हस्ति वन उत्तम होता है) ।

वारि[1]स्थल[2]पथभोगयो[3]रनित्यो वारिपथभोगः, नित्य[4]: स्थलपथभोगः ।

१७. वारिपथ भोग एवं स्थलपथ भोग में अनित्य भोग वारिपथ होता है तथा स्थलपथ भोग नित्य होता है ।

भिन्न[1]मनुष्या श्रेणी[2]मनुष्या वा भूमिरिति भिन्न[3]मनुष्या श्रेय[4]सी ।

१८. भिन्न मनुष्य वाली अथवा श्रेणी मनुष्य वाली भूमि में भिन्न मनुष्य वाली भूमि उत्कृष्ट होती है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) द्रव्यवन : द्र० ७:१०:२०, गण० १:५० ।

(२) वाप : बीज बोना, यहाँ वन सम्पत्ति के लगाने से तात्पर्य है ।

(३) हस्तिवन : द्र० ९:४:८ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) हस्तिप्रधानो : द्र० २:२:१३ ।

(२) परानीक : शत्रु या दूसरे की सेना । द्र० ७:१०:१७ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) वारिपथ : जलमार्ग । द्र० २:१६:१, २४, ७:११:१७ । गण० १:१२० ।

(२) स्थलपथ : स्थलमार्ग । द्र० ३:९:२५, ३३ । गण० २:३०९ ।

(३) अनित्य : अस्थिर ।

(४) नित्य : स्थिर, अनवरत, निरन्तर । द्र० ७:९:९, ३८ ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) भिन्नमनुष्य : जिस भूमि के लोग परस्पर मिलते नहीं । जहाँ के लोग परस्पर अलग रहते हैं या आपस में मिलकर न रहने वाले हैं । द्र० ७:१०:१२, गण० २:३०९ ।

(२) श्रेणीमनुष्य : समूह में मनुष्य जो एक ही पेशा करते हैं । जहाँ मनुष्य आपस में श्रेणीबद्ध रहते हैं । आपस में मिलकर रहने वाले । यहाँ शस्त्र बनाने वाले श्रेणी से तात्पर्य है । द्र० ७:११:२० । गण० २:३०९ ।

(३) मनुष्य : लोग इनकी सृष्टि राजस् तत्वों से हुई है । द्र० १:५:३३, १:६:५, ३:३८:६:१ ।

(४) श्रेयसी : द्र० ३:४:८, ७:९:३४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भिन्नमनुष्या भोग्या भवति, अनुपजाप्या चान्येषाम्, अनापत्सहा तु ।

१९. भिन्न मनुष्यों वाली भूमि भोग्य होती है, अन्य लोगों द्वारा भेद डालने योग्य नहीं होती तथा अपत्ति सहने में सफल नहीं होती ।

विपरीता श्रेणीमनुष्या, कोपे महादोषा ।

२०. श्रेणी मनुष्य वाली भूमि उसके विपरीत होती है तथा कोप होने पर महान दोष उत्पन्न करती है ।

तस्यां चातुर्वर्ण्यनिवेशे सर्वभोगसहत्वादवरवर्णप्राया श्रेयसी, बाहुल्याद्-ध्रुवत्वाच्च कृष्याः कर्षकवती, कृष्याश्चान्येषां चारम्भाणां प्रयोजकत्वाद् गोरक्षकवती, पण्यनिचयर्णानुग्रहाद् आढ्यवणिग्वती ।

२१. उक्त भूमि में चातुर्वर्ण्य निवेश के विषय में यह विचार उचित है, सब प्रकार का कष्ट सहिष्णु होने के कारण प्रचुर निम्न वर्ण वाली भूमि श्रेष्ठ होती है, कृषि के अधिक एवं निश्चित रूपेण फल प्रद होने से कर्षकवती भूमि उत्तम होती है, कृषि के अन्य व्यापारों (कार्यों) का प्रयोजक होने से गो एवं उसके रक्षक वाली भूमि अच्छी होती है, पण्यनिचय (वस्तु संग्रह) एवं ऋण प्रदाना-नुग्रह करने में सहाय होने से समृद्ध वणिक् जनयुक्त भूमि उत्तम होती है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) भिन्नमनुष्य : द्र० ७:११:१८ ।

(२) उपजाप : प्रजा में भेद डालने का उपाय या शत्रु के बहकावे या फुसलावे में आना । द्र० १:११:८, १:१३:२६, १:१६:२६, २:६:३२ ।

(३) अनापत्सहा : आपत्ति सहने में असमर्थ । द्र० ७:३:३६, ७:५:३६ ।

पाठभेद :

'महादोषा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि 'महादोषः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) कोप : क्रोध, विद्रोह, विरोध, विरोधी भावना । द्र० १:१३:२०, १:१६:२९ । विष्णु० १:१७:५ ।

(२) महादोष : द्र० १:१५,३९, १:१७:३० ।

पाठ भेद :

'चातुर्वर्ण्यनिवेशे' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चातुर्वर्ण्याभिनिवेशे' तथा 'कर्षकवती' का 'कर्षणवती' तथा 'कृष्याश्चान्येषां' का 'कृष्याचान्येषां' तथा 'गोरक्षकवती' का 'गोरक्षवती' तथा न्यायचन्द्रिका में 'गोरक्ष्यवती' तथा 'वणिग्वती' का 'वाणिज्यवती' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१ (१) चातुर्वर्ण्य : १. ब्राह्मण, २. क्षत्री, ३. वैश्य, ४. शूद्र अर्थात् ।

१. विद्वान, २. सैनिक या रक्षक, ३. व्यापारी या वणीक् तथा ४. श्रमिक । ब्रह्मा० २:३७:५, ३:७२:३५ । विष्णु० ४:६:२०, १:६:५, ६, ८ ।

(२) अवरवर्ण : निम्न वर्ण ।

(३) कर्षकवती : कृषि योग्य भूमि । शिव० १:१३:६ ।

(४) गोरक्षवती : आभीर, गोपाल ।

(५) आढय : धनी, सम्पन्न । पंच० ३:९:५, ८ । स्कन्द० १:१:२३:७, ३:१:१:६१-६३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूयिगुणानामपाश्रयः श्रेयान् ।

२२. भूमि गुणों में रक्षा करना श्रेयस्कर है ।

दुर्गापाश्रया पुरुषापाश्रया वा भूमिरिति पुरुषापाश्रया श्रेयसी ।

२३. दुर्गापाश्रय वाली अथवा पुरुषापाश्रय वाली भूमि में से, पुरुष के आश्रय प्रदान करने वाली भूमि श्रेष्ठ है ।

पुरुषवद्धि राज्यम् ।

२४. पुरुष वाहुल्य युक्त ही राज्य है ।

अपुरुषा गौर्वन्ध्येव किं दुहीत ।

२५. पुरुष विहीन भूमि वन्ध्या गौ की तरह क्या देगी ?

महाक्षयव्ययनिवेशां तु भूमिमवाप्तुकामः पूर्वमेव क्रेतारं पणेत दुर्बलमराजबीजिनं निरुत्साहमपक्षमन्यायवृत्तिं व्यसनिनं दैवप्रमाणं यत्किंचनकारिणं वा ।

२६. अधिक हानि एवं व्यय करके वसाने योग्य भूमि को प्राप्त करने के लिए इच्छुक राजा पहले ही दुर्बल, अराज वीजो, निरुत्साही, अपक्ष, अन्याय वृत्ति, व्यसनी, दैव प्रमाण अथवा यत्किञ्चन कारी जन को क्रेता रूप में निश्चित करे ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) गुण : द्र० २:१३:३७, ३९, २:१४: ४५, ७:१:१२ । गण० १:२१५ ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) दुर्गपाश्रय : दुर्ग की सहायता, समर्थन या आश्रय या सहारा ।

(२) पुरुषापाश्रया : मनुष्यों का आश्रय या समर्थन या सहारा ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) पुरुषवद्धि : मनुष्य युक्त ही ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अपुरुष : पुरुषविहीन (राज्य) ।

(२) गौ : गाय ।

(३) वन्ध्येव : वन्ध्या या अदुग्धा गाय के समान है ।

पाठभेद :

'व्ययनिवेशांतु' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्ययनिवेशात्तु' तथा 'यत्किंचनकारिणं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यत्किंचकारिणं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) पूर्वमेव : पीछे आए राजाओं से तात्पर्य है कि खरीददार से भूमि विजिगीषु द्वारा ले ली जाएगी जबकि खरीददार का प्रयास टूट जाता है ।

(२) अराज बोजो : किसी राजवंश के न होने पर । गण० ३:३१० ।

(३) अपक्ष : निरपेक्ष ।

(४) दैवप्रमाण : भाग्यवादी या दैव पर निर्भर ।

(५) यत्किंचन : द्र० ७:११:३५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महाक्षय[1]व्यय[2]निवेशायां हि भूमौ दुर्बलो[3] राजबीजी[4] निविष्टः सगन्धाभिः[5] प्रकृतिभिः[6] सह क्षयव्ययेनावसीदति[7] ।

२७. अधिक क्षय, व्यय से बसाने योग्य भूमि में दुर्बल राजबीजी सजातीय प्रकृति जनों के साथ बस कर, अधिक क्षय-व्यय के कारण क्षीण या दुःखी होता है।

बलवानराजबीजी क्षयव्ययभयादसगन्धाभिः[1] प्रकृतिभिस्त्यज्यते ।

२८. बलवान अराजबीजी अधिक क्षय-व्यय के भय से असजातीय प्रकृति जनों द्वारा त्याग दिया जाता है।

निरुत्साहस्तु[1] दण्डवानपि[2] दण्डस्याप्रणेता सदण्डः क्षयव्ययेनावभज्यते ।

२९. दण्डवान् भी निरुत्साही दण्ड का प्रयोग नहीं करता है अतः क्षय-व्यय से दण्ड सहित विनष्ट हो जाता है।

कोशवानप्यपक्षः[1] क्षय[2]व्यय[3]यानुग्रहहीनत्वान्नकुतश्चित्[4]प्राप्नोति ।

३०. कोशवान् होकर भी पक्ष रहित राजा क्षय-व्यय में अनुग्रहहीन होने से कहीं से सफलता नहीं प्राप्त करता है।

पाठ भेद :

'दुर्बलोराज' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दुर्बलोऽराज' तथा 'सगन्धाभिः' का तंजौर में 'सरन्धाभिः' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सरन्ध्राभिः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२७. (१) महाक्षय : महालोक क्षय ।

(२) व्यय : द्र० ७:२:२ ।

(३) दुर्बल : कमजोर ।

(४) राजबीजो : राजवंशी या राजवंश । द्र० ७:११:२६ ।

(५) सगन्ध : सजातीयता, बन्धुता, सगोत्रता, परम्परा, प्रजा । द्र० १:८:१७:१९ ।

(६) प्रकृति : प्रजा ।

(७) अवसाद : भय, शिथिलता, उदासी, नाश, अन्त ।

पाठ भेद :

'क्षयव्ययभयाद्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'क्षयभयाद्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) असगन्ध : सम्बन्ध से सम्बन्वित नहीं। द्र० ९:७:११, २७ । गण० १:४२ ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) निरुत्साह : बिना शक्ति, उमंग तथा बिना उत्साह के। मनु० ५:८६ ।

(२) दण्ड : सेना, बल । गण० ३:४३ ।

पाद टिप्पणी :

३०. (१) पक्ष : द्र० ९:११:२६ ।

(२) क्षय : द्र० ७:२:२ ।

(३) व्यय : द्र० ७:२:२ ।

(४) कुतश्चित : कुछ नहीं प्राप्त करता ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्यायवृत्तिर्निविष्टमप्युत्थापयेत् ।

३१. अन्याय वृति वाला निविष्ट राजा भी उत्पाटित किया जाता है।

स कथमनिविष्टं निवेशयेत् ।

३२. वह अनिविष्ट (अव्यवस्थित) स्थान से कैसे वसाने में समर्थ हो सकता है ?

तेन व्यसनी व्याख्यातः ।

३३. उक्त रूप से व्यसनी की व्याख्या हो गयी।

दैवप्रमाणो मानुषहीनो निरारम्भो विपन्नकर्मारम्भो वाऽवसीदति ।

३४. दैवप्रमाण राजा पौरुषविहीन होने से कार्यारम्भ नहीं करता अथवा आरम्भ करके भी विपन्न होकर शान्त हो जाता है।

यत्किंचनकारी न किंचिदासादयति ।

३५. यत्किञ्चनकारी कुछ भी उपलब्ध करने में समर्थ नहीं होता है।

स चैषां पापिष्ठतमो भवति ।

३६. वह उनमें पापिष्ठतम होता है।

'यत्किंचिदारभमाणो हि विजिगीषोः कदाचिच्छिद्रमासादयेद्' इत्याचार्याः।

३७. 'यत्किञ्चनकारी कभी विजिगीषु का दोष प्राप्त कर सकता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

पाठभेद :

'वृत्तिर्निविष्टम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वृत्तिन्निविष्टम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३१. (१) अन्यायवृत्ति : अन्याय व्यवहारकारी। द्र० ३:६:९, ७:११:२६।

पादटिप्पणी :

३३. (१) व्यसनी : दुर्व्यसनी या दुराचारी राजा। द्र० १:१४:४। गण० ३:२।

पादटिप्पणी :

३४. (१) दैवप्रमाण : भाग्य या दैव पर निर्भर। द्र० ७:११:२६।

(२) अवसीदति : सुस्ती, शिथिलता, पतन, नाश, अन्त। द्र० ७:११:२७।

पादटिप्पणी :

३५. (१) यत्किंचन : अपनी इच्छानुसार या बिना बिचारे काम करने वाला। द्र० ७:११:२६।

(२) किंचित् : कुछ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) पापिष्ठतमो : सबसे अधिक दुष्ट या निकम्मा या खराब।

पादटिप्पणी :

३७. (१) यत्किंचित् : द्र० ७:११:२६।

(२) छिद्र : दुर्वल स्थान, दोष। द्र० २:३:६, ७:६:२८, ७:८:१३। गण० ३:१८३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यथा छिद्रं तथा विनाशमप्यासादयेदिति कौटिल्यः ।

३८. जिस प्रकार छिद्र को उसी प्रकार अपने विनाश को भी प्राप्त कर करता है—ऐसा कौटिल्य का मत है ।

तेषामलाभे यथा पार्ष्णिग्राहोपग्रहे वक्ष्यामस्तथा भूमिमवस्थापयेत् ।

३९. उनमें किसी के न मिलने पर वक्ष्यमाण पार्ष्णिग्राहोपग्रह के अनुसार भूमि को वसाने की व्यवस्था करे ।

इत्यभिहितसंधिः ।

४०. यह 'अभिहित' सन्धि है ।

गुणवतीमादेयां वा भूमिं बलवता क्रमेण याचितः संधिमवस्थाप्य दद्यात् ।

४१. गुणवती अथवा आदेय भूमि बलवान् द्वारा याचित होने पर सन्धि करके प्रदान करे ।

इत्यनिभृतसंधिः ।

४२. यह 'अनिभृत' सन्धि है ।

समेन वा याचितः कारणमवेक्ष्य दद्यात् 'प्रत्यादेया मे भूमिर्वश्या वा; अनया प्रतिबद्धः परो मे वश्यो भविष्यति; भूमिविक्रयाद्वा मित्रहिरण्यलाभः कार्यसामर्थ्यकारो मे भविष्यति' इति ।

४३. 'अथवा समान शक्ति वाले नृप द्वारा उक्त भूमि माँगी जाने पर कारण की समीक्षा कर दे, भूमि मुझे प्राप्य होगी या अधिकार में रहेगी, इससे प्रतिबद्ध होकर शत्रु वश में हो जायेगा, अथवा भूमि विक्रय से कार्य सामर्थ्यकारी मित्र-हिरण्य का मुझे लाभ होगा' ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) छिद्र : दुर्बल स्थान, दोष, अवक्षेप, निन्दा । द्र० २:३:६, ७:६:२८, ७:८:१३ ।

पादटिप्पणी :

३९. पार्ष्णिग्राहोपग्रहे : द्र० ६:२:१८, ७:१६:१६ । विष्णु० ४:६:१२, मत्स्य० २४०:२, ४, ब्रह्मा० ३:६५, ३२, ४:२५:१४ ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) अभिहित : कहा गया, बोला गया, घोषित किया गया । बिना लिखा पढ़ी की सन्धि । गण० २:३१२ ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) आदेय : ग्रहण करने योग्य । द्र० ९:४:५, गण० ३:६ ।

पादटिप्पणी :

४२ (१) अनिभृतसंधि : खुलीसन्धि, अत्यन्त उर्वरा खरीदनेके इच्छुक राजा को वह भूमि देकर की गयी सन्धि । गण० २:३१२ ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) प्रत्यादेय : दुबारा हस्तगत करने योग्य । वापस लेना या लौटाना या वसूल करना । द्र० ८:३:५३, ७:१०:२४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन हीनः क्रेता व्याख्यातः ।

४४. उक्त प्रकार से हीन क्रेता की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

एवं मित्रं[1] हिरण्यं[2] च सजनामजनां[3] च गाम् ।
लभमानोऽतिसंधत्ते शास्त्रवित्सामवायिकान्[5] ।।

४५. इस प्रकार शास्त्रवेता नृपति मित्र, हिरण्य, सजन एवं अजन भूमि को प्राप्त करता हुआ सामवायिक नृपों में अग्रणी बन जाता है ।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधौ अनवसितसंधिः एकादशोऽध्यायः । आदितो नवशततमः ।

सप्तम अधिकरण में षाड्गुण्य के अन्तर्गत मित्र-हिरण्य भूमि कर्म सन्धि में अनवसित सन्धि सम्बद्ध ग्यारहवाँ अध्याय समाप्त आदि से एकसौ नौवाँ अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) हीन : दुर्बल राजा से तात्पर्य है । द्र० ६:२:३५ । गण० २:२५३ ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) मित्र : साथी ।

(२) हिरण्य : धन, नगद, द्रव्य ।

(३) सजन : आबाद, जन बहुल, प्राणियों से युक्त, बन्धु सम्बन्धी ।

(४) अजन : बिना आदमी के या बिना जन के, उजाड़, ग्रामशून्य आदि ।

(५) सामवायिक : अभियान काल में बना संघ । द्र० ७:४:१९, ७:५:३८, ४९, ७:१४:१ । गण० १:१५, १:२५९ ।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे एकादशोऽध्याय । मित्रहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ अनवसित-सन्धिः आदितो नवशततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये मित्रहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ कर्म-सन्धिर्द्वादशोऽध्यायः । आदितो दशशतमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे-द्वादशोऽध्यायः मित्रहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ कर्मसन्धिः आदितोदशशततमः ।

उदयवीरशास्त्री संस्करण में—

इतिषाड्गुण्येसप्तमेऽधिकरणे मित्रहिरण्यः भूमि-कर्मसंधौ अनवसितसंधिः एकादशोऽध्यायः ।। ११ ।। आदितो नवाधिकशततमोऽध्यायः ।। १०९ ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १२

[षोडशशततमं प्रकरणम्—मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधयः तत्र कर्मसंधिः]

एक सौ सोलहवां प्रकरण—मित्र, हिरण्य, भूमिकर्म सन्धियां, उसमें कर्मसन्धि

'त्वं चाहं च दुर्गं कारयावहे' इति कर्मसंधिः ।

१. "तुम और मैं दुर्ग निर्माण करायें" इस प्रकार निश्चयपूर्वक की गयी सन्धि 'कर्मसन्धि' है ।

तयोर्यो दैवकृतमविषह्यमल्पव्ययारम्भं दुर्गं कारयति सोऽतिसंधत्ते ।

२. उनमें जो स्वभातः दुर्गम, शत्रुदुर्भेद्य, अल्प व्ययसाध्य दुर्ग निर्मित करता है, वह अधिक लाभान्वित होता है ।

तत्रापि स्थलनदीपर्वतदुर्गाणामुत्तरोत्तरं श्रेयः ।

३. उनमें भी स्थल दुर्ग, नदी दुर्ग एवं पर्वत दुर्गों में क्रमशः उत्तरोत्तर उत्तम होता है ।

सेतुबन्धयोरप्याहार्योदकात्सहोदकः श्रेयान् ।

४. सेतुबन्धों में भी आहार्योदक सेतुबन्ध की अपेक्षा सहोदक सेतुबन्ध उत्तम होता है ।

सहोदकयोरपि प्रभूतवापस्थानः श्रेयान् ।

५. सहोदक सेतुबन्धों में भी पर्याप्त कृषियोग्य भूमि युक्त श्रेष्ठ होता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) त्वं चाहं : द्र० ७:११:१ ।

(२) कर्मसंधि : कोई निश्चय कर के कि हमें अमुक कार्य करना है, इस प्रकार जो सन्धि की जाती है, उसे कर्मसन्धि कहते हैं । दो राज्यों में दुर्ग रचना के विषय में की जाने वाली सन्धि भी अर्थ किया गया है । द्र० ७:१२:१ । गण० २:३१४ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) दुर्ग : द्र० २:३:१, २ । गण० १:१२७ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) सेतुबन्ध : एक सिंचाई जल का खानव । कार्य या बांध । द्र० २:१:२२,३९, ३:९:३२ । गण० ३:१०९ ।

(२) आहार्योदक : जहां जल बाहर एकत्रित किया या लाया जाता है । द्र० २:१:२० ।

(३) सहोदक : जहां सर्वदा जल रहता है । ऐसा बांध जिसमें सर्वदा जल प्राकृतिक स्रोत से भरता रहता है । द्र० २:१:२० । गण० २:३१४ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) सहोदक : द्र० ७:१२:४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्रव्यवनयोरपि यो महत्सारवद्द्रव्याटवीकं विषयान्ते नदीमातृकं द्रव्यवनं छेदयति सोऽतिसंधत्ते ।

६. जो नृपति द्रव्य वनों में भी अपनी सीमा पर, नदी जल से सींचने योग्य विस्तृत, सारवान्, द्रव्योत्पादक भूमि वाले द्रव्यवन रक्षित (अद्रव्यच्छेदन करके सुरक्षित) करता है, वह अधिक लाभ-भाजन बनता है ।

नदीमातृकं हि स्वाजीवमपाश्रयश्चापदि भवति ।

७. नदी मातृक द्रव्यवन, सुखोपजीव्य एवं आपन्नावस्था में रक्षास्थल होता है ।

हस्तिवनयोरपि यो बहुशूरमृगं दुर्बलप्रतिवेशमनन्तावक्लेशि विषयान्ते हस्तिवनं ध्नाति सोऽतिसंधत्ते ।

८. जो नृपति हस्तिवनों में भी अपनी सीमा पर प्रचुर संख्या में बली मृगों (हस्ती आदि) से युक्त दुर्बल मृगों के स्थान वाले, अनेक मार्गों से युक्त हस्तिवन निर्मित करता है, वह लाभवान होता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) द्रव्यवन : द्र० ७:१:२० । गण० १:५० ।

(२) सार : बहुमूल्य सामान । द्र० १:१६:९, २:५:८, २:७:२, २:११:१, ५:६:४६, ८:१:६१, १०:५:४३,४६,४९ ।

(३) नदीमातृक : जो नदी जल से सींचा जाय । द्र० ७:१२:७ ।

(४) छेद : काटना ।

पाद टिप्पणी :

७. नदीमातृकं : जहां से कृषि कार्य या सिंचाई हेतु नदी जल सुविधा से पाया जा सकता है । नदी से सींचे जाने वाले स्थल प्रदेश । द्र० ७:१०:६ ।

पाठभेद :

'हस्तिवनयोरपि' का तंजौर में 'हस्तियोरपिवन' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हस्विमृगवनयोरपि' पाठ-भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) मृग : पशुओं से अभिप्राय है ।

(२) दुर्बलप्रतिवेशं : कमजोर पड़ोसी । गण० २:३६४ ।

(३) अनन्तावक्लेश : अनन्त कष्ट ।

(४) विषयान्त : विषय या क्षेत्र की सीमा । द्र० ४:३:१९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तत्रापि 'बहुकुण्ठाल्पशूरयोः अल्पशूरं श्रेयः; शूरेषु हि युद्धम्, अल्पः शूरा बहूनशूरान् भञ्जन्ति, ते भग्नाः स्वसैन्यावघातिनो भवन्ति' इत्याचार्याः ।

९. उनमें भी बहुसंख्यक दुर्बल हस्ति वाले और अल्पसंख्यक शूर हस्ति वाले वनों में अल्पसंख्यक शूर हस्तिवन श्रेष्ठ होता है। शूर हस्तियों पर युद्ध निर्भर होता है, अल्पसंख्यक शूर हाथी बहुसंख्यक दुर्बलों को भग्न कर देते हैं, भग्न होकर वे दुर्बल हाथी अपनी सेना के अवघातक होते हैं, ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

१०. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है।

कुण्ठा बहवः श्रेयांसः स्कन्धविनियोगादनेकं कर्म कुर्वाणाः स्वेषामपाश्रयो-युद्धे, परेषां दुर्धर्षा विभीषणाश्च ।

११. बहुसंख्यक कुण्ठित हाथी श्रेष्ठ होते हैं। सेना में सहायक अनेक कर्म करके, युद्ध में अपने पक्ष का उपकार करते हैं और शत्रुओं के लिए दुर्धर्ष एवं भयप्रद होते हैं।

बहुषु हि कुण्ठेषु विनयकर्मणा शक्यं शौर्यमाधातुं, न त्वेवाल्पेषु शूरेषु बहुत्वमिति ।

१२. बहुसंख्यक कुण्ठित हाथियों में शिक्षा द्वारा शौर्य स्थापित किया जा सकता है किन्तु अल्पसंख्यक शूर गजों में बहुत्व नहीं उत्पन्न किया जा सकता है।

पादटिप्पणी :

९. (१) कुण्ठ : जड़, मूढ़, मंथर, आलसी, मन्दबुद्धि, मूर्ख, सुस्त, प्रभावहीन, दुर्बल, निरुद्यम, असमर्थ, कायर, सामर्थ्यहीन। द्र० ३:१५:१६, ७:२:९, ११, १२, ८:४:३, १२:१:२५। गण० ३:१५।

(२) शूर : वीर, पराक्रमी, बहादुर।

पाठभेद :

'दुर्धर्षा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दुर्धर्षान्' पाठभेद मिलता है।

पाद टिप्पणी :

११. (१) कुण्ठा बहव : बहुसंख्यक या बहुत कुण्ठा युक्त। द्र० ७:१२:९।

(२) स्कन्ध : सेना का एक डिवीजन। द्र० १२:३:१६, १२:४:२०।

(३) विनियोग : प्रयोग, नियुक्ति, लगाना, उपयोग, सेवक।

(४) विभीषण : अति भयानक या बहुत डरावना।

पाद टिप्पणी :

१२. (१) विनयकर्मणा : शासन, आचरण, नम्रता। द्र० १:५:२, ३।

(२) शौर्य : पराक्रम, वीरता।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खन्योरपि यः प्रभूतसारामदुर्गमार्गामल्पव्ययारम्भां खनिं खानयति, सोऽति संधत्ते ।

१३. जो नृपति खानों में भी प्रचुर सारवान्, दुर्गममार्ग युक्त, अल्पव्ययसाध्य खान खुदवाता है, वह लाभवान् होता है ।

तत्रापि महासारमल्पसारं वा प्रभूतमिति 'महासारमल्पं श्रेयः, वज्रमणिमुक्ताप्रवालहेमरूप्यधातुर्हि प्रभूतंतल्पसारमत्यर्घेण ग्रसते' इत्याचार्याः ।

१४. उनमें भी महासारवान् (वहुमूल्य) अल्प अथवा अल्पसारवान् प्रचुर श्रेष्ठ है। महासार वाला अल्प श्रेष्ठ है, व्रज, मणि, मुक्ता, प्रवाल, हेम, रूप्य धातु प्रचुर अल्पसार को बहुमूल्यवत्ता से ग्रस लेता है' ऐसा आचार्यों का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

१५. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है ।

चिरादल्पो महासारस्य क्रेता विद्यते, प्रभूतः सातत्यादल्पसारस्य ।

१६. अधिक समय में अल्प संख्या में महासार का क्रेता उपलब्ध होता है किन्तु प्रचुर संख्या में तथा निरन्तर अल्पसार के क्रेता प्राप्त होते रहते हैं ।

एतेन वणिक्पथो व्याख्यातः ।

१७. इससे वणिक्पथ की व्याख्या हो गयी ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) सार : बहुमूल्य सामान, श्रेष्ठ वस्त्र । द्र० १:१६:९, २:५:८, २:७:२, २:११:९, ८:१:६१, ५:६:४६, १०:५:४३, ४६, ४९ ।

पाद टिप्पणी :

१४. (१) वज्र : हीरा । गण० १:२१८, ३:१०८, १४०, २२५ ।

(२) मणि : कुछ अनुवादकों ने पद्मराग या लाल अर्थ किया है । गण० ३:२२६, २३९ ।

(३) मुक्ता : मोती ।

(४) प्रवाल : मूंगा ।

(५) हेम : सुवर्ण, सोना । द्र० १४:१:१० । गण० ३:२१५ ।

(६) रूप्य : रजत, चांदी । द्र० २:१२:५,६ ।

(७) प्रभूत : अधिक, प्रचुर, उद्भूत, उत्पन्न। द्र० ७:१५:९ ।

(८) ग्रसते : निगल जाना । द्र० १:४:१४, २:१:१६, ७:४:८, ९:३:३ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) महासार : बहुमूल्य वस्तु ।

(२) सातत्य : निरन्तर, अनवरत । द्र० ७:११:३, ७:१२:१६ । गण० २:२९६ ।

पाठ भेद :

'वणिक्पथो व्याख्यातः' का देवनागरी अनुलिपि में 'वणिक्पथा व्याख्याताः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) वणिक्पथ : व्यापारिक जल एवं स्थल मार्ग । द्र० २:१:१९, ३८, २:६:८, ९:४:८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तत्रापि 'वारिस्थलपथयोर्वारिपथः श्रेयान्, अल्पव्ययव्यायामः प्रभूतपण्योदयश्च' इत्याचार्याः ।

१८. उनमें भी 'वारिपथ एवं स्थलपथ' में वारिपथ श्रेष्ठ होता है क्योंकि अल्प व्यय एवं अल्प श्रमसाध्य होता है तथा प्रचुर पण्य के नयनानयन में सुविधा जनक होता है ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

१९. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है।

संरुद्धगतिरसार्वकालिकः प्रकृष्टभययोनिर्निष्प्रतीकारश्च वारिपथः, विपरीतः स्थलपथः ।

२०. वारिपथ निरुद्धगमन वाला, असार्वकालिक, अतिभयकारी, एवं भयप्रतीकार रहित होता है, स्थलपथ इसके विपरीत होता है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) वारिपथ : द्र० २:१६:१, २४, ७:११:१७। गण० १:१२०।

(२) स्थलपथ : सरल या जमीन का रास्ता ।

(३) व्यायाम : उत्साह, उद्योगिता, श्रम, कार्यशक्ति, सामाजिक विधि। द्र० १:१६:२९; २:१:३०, ६:२:१, २, १०:४:१६। गण० २:२३०, ३:१२५।

(४) प्रभूतं : प्रचुर बहुत अधिक ।

(५) पण्योदय : सामान वस्तु का लाभ, फल। द्र० २:९:४, २:१६:१८, १९, ३:१२:२५, २६, २७,३०, ६:२:५।

पाठभेद :

'संरुद्धगतिर्' का देवनागरी अनुलिपि में 'रुद्धगतिर' तथा 'निर्निष्प्रतीकारश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'निष्प्रतिकारश्च' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२०. (१) संरुद्धगति : सीमित ।

(२) प्रकृष्ट : व्यापक, विस्तीर्ण, आयत, वितत। द्र० ७:९:२१,४७; ७:६:८; ७:७:२३।

(३) भययोनि : भय या खतरे का स्रोत, भय का कारण, समुद्री यात्रा या व्यापार मार्ग से तात्पर्य है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वारिपथे तु कूलसंयानपथयोः कूलपथः पण्यपत्तनबाहुल्याच्छ्रेयान्, नदीपथो वा, सातत्याद्विषह्यावाधत्वाच्च ।

२१. वारिपथ के कूलपथ एवं संयानपथ में पण्यपत्तन की अधिकता के कारण कूलपथ श्रेष्ठ होता है अथवा सातत्यगमनयोग्यता के कारण एवं उत्कट बाधारहित होने से नदीपथ श्रेष्ठ होता है ।

स्थलपथेऽपि 'हैमवतो दक्षिणपथाच्छ्रेयान्, हस्त्यश्वगन्धदन्ताजिनरूप्यसुवर्णपण्याः सारवत्तराः' इत्याचार्याः ।

२२. स्थलपथ में भी 'उत्तरापथ दक्षिणापथ से श्रेष्ठ होता है क्योंकि हस्ती, अश्व, गन्ध, दन्त, अजिन, रूप्य एवं सुवर्ण पण्य सारवस्तुएँ वहाँ प्राप्त होती है' ऐसा आचार्यो का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

२३. कौटिल्य का ऐसा मत नहीं है ।

कम्बलाजिनाश्वपण्यवर्जाः शङ्खवज्रमणिमुक्तासुवर्णपण्याश्च प्रभूततरा दक्षिणापथे ।

२४. कम्बल, अजिन, अश्व आदि पण्यों को छोड़कर शंख, वज्र, मणि, मुक्ता, सुवर्ण पण्य प्रचुर मात्रा में दक्षिणा पथ में प्राप्य होते हैं ।

पाठभेद :

'पत्तन' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पट्टण' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) कूलपथ : किनारे का मार्ग । द्र० ७:२:२१, गण० २:३१७ ।

(२) संयानपथ : समुद्री मार्ग द्वारा पथ । द्र० २:२८:१, २:१:१९, २:१७:२४, २:२७:७,१०,१२; २:६:३, २:२८:४,१२ । गण० २:३१७ ।

(३) पण्यपत्तन : बन्दरगाह । द्र० २:१:१९, २:६:३, २:१६:२४, २:२८:७,१०,१२, ७:१६:१० ।

पाादटिप्पणी :

२२. (१) हैमवतो : हिमवत, हिमालय, उत्तरापथ, उत्तरी द्वार, मध्यदेश से तात्पर्य प्रतीत होता है । गण० १:१७९ ।

(२) दक्षिणापथ : दक्षिण या दक्षिण का मार्ग ।

(३) हस्ति : हाथी ।

(४) अश्व : घोड़ा ।

(५) गन्ध : गन्ध द्रव्य कस्तूरी आदि सुगन्धित वस्तु ।

(६) दन्त : हाथी दांत ।

(७) अजिन : चर्म या मृग चर्म ।

पाठभेद :

'मुक्तासुवर्ण' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मुक्ताः सुवर्ण' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) कम्बल : कमरा ।

(२) अजिन : मृग चर्म या खाल ।

(३) वज्र : हीरा । द्र० ७:१२:१४ ।

(४) मणि : द्र० १८.१३:१४ ।

(५) मुक्ता : मोती । द्र० ७:१२:१४ ।

(६) सुवर्ण : सोना । द्र० ७:१२:१४ ।

(७) प्रभूततर : बहुत अधिक, प्रचुर ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दक्षिणापथेऽपि बहुखनिः सारपण्यः प्रसिद्धगतिरल्पव्ययव्यायामो वा वणिक्पथः श्रेयान्, प्रभूतविषयो वा फल्गुपण्यः ।

२५. दक्षिणापथ में भी बहुसंख्यक खान वाला, सारपण्ययुक्त सरल गमनागमन वाला, अल्पव्यय एवं अल्प श्रम वाला वणिक्पथ श्रेष्ठ होता है अथवा प्रचुर क्रेता वाला फल्गुपण्य युक्त वणिक्पथ श्रेष्ठ होता है ।

तेन पूर्वः पश्चिमश्च वणिक्पथो व्याख्यातः ।

२६. उक्त प्रकार से पूर्व और पश्चिम वणिक् पथ की व्याख्या हो गयी ।

तत्रापि चक्रपादपथयोश्चक्रपथो विपुलारम्भत्वाच्छ्रेयान्, देशकालसंभावनो वा खरोष्ट्रपथः ।

२७. उनमें भी चक्रपथ और पादपथ में विपुल व्यापार योग्य होने से चक्रपथ श्रेष्ठ होता है अथवा देश काल की अपेक्षानुसार खरोष्ट्र पथ श्रेष्ठ होता है ।

आभ्यामंसपथो व्याख्यातः ।

२८. इनसे अंसपथ की व्याख्या हो गयी ।

पाठ भेद :

'अल्पव्ययव्यायामो' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अल्पव्यायामो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) सारपण्य : कीमती सामान या वस्त्र ।

(२) प्रसिद्ध : अच्छी तरह जाना हुआ व्यवस्थित, पूर्णतः निरापद ।

(३) प्रभूत विषय : द्र० ७:११:१२ ।

(४) फल्गुपण्य : कम कीमती सामान । द्र० २:५:८, २:७:२, २:११,१, २:२१:२९,३० ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) पूर्व : पूर्व दिशा ।

(२) पश्चिम : पश्चिम दिशा ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) चक्रपथ : पहिया चलने का मार्ग, बैलगाड़ी चलने का मार्ग, सकटगामी पथ । गण० २:३१८ ।

(२) पादपथ : पैदल का मार्ग, पगडंडी । गण० ३:१३८ ।

(३) खरपथ : गर्दभमार्ग, गदहे चलने का मार्ग ।

(४) उष्ट्रपथ : ऊँट का मार्ग या रेगिस्तान ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) अंसपथ : कन्धे पर लेकर ढोने वाले मनुष्यों का मार्ग, कुछ लेखकों ने स्थलमार्ग अर्थ किया है । द्र० २:३:३, गण० १:१२० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परकर्मोदयो नेतुः क्षयो वृद्धिर्विपर्यये ।
तुल्ये कर्मपथे स्थानं ज्ञेयं स्वं विजिगीषुणा ।।

२९. शत्रु कर्म का उदय विजिगीषु नेता का क्षय है तथा इसके विपरीत वृद्धि है, समान कर्मफल होने पर स्थान जानना चाहिए ।

अल्पागमातिव्ययता क्षयो वृद्धिर्विपर्यये ।
समायव्ययता स्थानं कर्मसु ज्ञेयमात्मनः ।।

३०. कर्मों में अल्प आय एवं अधिक व्ययशीलता क्षय है, उसके विपरीत वृद्धि है, आय व्यय समान होने पर, स्थान जानना चाहिए ।

तस्मादल्पव्ययारम्भं दुर्गादिषु महोदयम् ।
कर्म लब्ध्वा विशिष्टः स्यादित्युक्ताः कर्मसंधयः ।।

३१. अत एव दुर्गादि कर्मों में अल्प व्यय से महान् उदय वाला कर्मफल प्राप्त कर राजा विशिष्ट होता है । इस प्रकार 'कर्म सन्धियाँ' कही गयी ।

इतिषाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणेमित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधौ कर्मसंधिद्वादशोऽध्यायः । आदितो दशशततमः ।

सप्तम अधिकरण में षाड्गुण्य के अन्तर्गत मित्र, हिरण्य भूमि, कर्म सन्धि में कर्म सन्धि सम्बद्ध बारहवाँ अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ दसवाँ अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) परकर्मोदयो : शत्रु के काम की तरक्की या उन्नति ।

(२) क्षय : अवनति, पतन । द्र० ७:२:२ । गण० २:२३९, ३:६७,९७, ३:२२२ ।.

(३) वृद्धि : अधिक आय अल्प व्यय, उन्नति । गण० २:२३९, ३:६७ ।

(४) कर्मपथ : व्यवसाय, निगम, संरचना । गण० २:३१८ ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) क्षय : अवनति ।

(२) स्थान : स्थिर, दृढ़ता, अचल स्थिर अवस्था । द्र० ७:४:२,३, ८:२:२६, मनु० ७:५६, १९०, ९:३३२ ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) विशिष्ट : विशेष, विशिष्ट लाभ के सन्दर्भ में कहा गया है, जिसे प्राप्त किया जाता है ।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे द्वादशोऽध्यायः मित्रहिरण्यभूमिकर्मसन्धौ कर्मसन्धिः आदितो दशशततमः ।।

मैसूर संस्करण में—

इतिषाड्गुण्ये पार्ष्णिग्राहचिन्तात्रयोदशोऽध्यायः आदित एकादशशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे त्रयोदशोऽध्यायः पार्ष्णिग्राहचिन्ता, आदितः एकादशशततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इतिषाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे मित्रहिरण्यभूमिकर्मसंधौ कर्मसंधिर्द्वादशोऽध्यायः ।।१२।। आदितो दशाधिकशततमोऽध्यायः ।।११०।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १३

[सप्तदशशततमं प्रकरणम्—पार्ष्णिग्राहचिन्ता]

एक सौ सत्रहवां प्रकरण—पार्ष्णिग्राह चिन्ता

संहत्यारि[2]विजिगीष्वोरमित्रयोः पराभि[3]योगिनोः पार्ष्णि गृह्णतोर्यः शक्तिसंपन्नस्य पार्ष्णि गृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

१. एक साथ मिलकर, दूसरे पर आक्रमण एवं पार्ष्णिग्रहण करने वाले विजिगीषु तथा शत्रु में जो शक्तिसम्पन्न का पार्ष्णिग्रहण करता है, वह लाभ भाजन होता है ।

शक्तिसंपन्नो ह्यमित्रमुच्छिद्य पार्ष्णिग्राहमुच्छिन्द्यात्, न हीनशक्तिरलब्धलाभः ।

२. शक्तिसम्पन्न नृप शत्रु को उच्छिन्न कर, पार्ष्णिग्राह का उच्छेदन कर सकता है किन्तु हीन शक्ति एवं विफल मनोरथ वाला नृप, ऐसा नहीं कर सकता है ।

शक्तिसाम्ये यो विपुला[2]रम्भस्य पार्ष्णि गृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

३. शक्ति समानता होने पर, जो विपुलारम्भी का पार्ष्णिग्रहण करता है, वह लाभान्वित होता है ।

विपुलारम्भो ह्यमित्रमुच्छिद्य पार्ष्णिग्राहमुच्छिन्द्यात्, नाल्पा[2]रम्भः सक्त[3]चक्रः ।

४. विपुलारम्भी नृपति शत्रु का उच्छेदन कर, पार्ष्णिग्राह का उच्छेदन कर सकता है. अल्पारम्भी एवं विक्षिप्त सैन्य वाला नृप, ऐसा नहीं कर सकता है ।

पाद टिप्पणी :

१. (१) संहत्य : साथ मिलकर ।

(२) अरि : शत्रु ।

(३) पराभियोग : दूसरे पर आक्रमण या अभियान करना ।

(४) संधत्ते : लाभान्वित, विजयी, बलयुक्त होना, मिलाना, आगे निकल जाना ।

पाठभेद :

'शक्तिरलब्धलाभः' का तंजौर में 'शक्तिलेब्धलाभः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शक्तिलब्धलाभः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) शक्तिसाम्य : समान शक्ति ।

(२) विपुलारम्भ : बड़े पैमाने पर सैनिक आक्रमण या अभियान आरम्भ करना । द्र० १३:१:१६, गण० २:३२० ।

पादटिप्पणी :

४. (१) उच्छिद्य : उच्छेद करना ।

(२) अल्पारम्भ : अल्प द्रव्य सम्भार युक्त से आरम्भ करना ।

(३) सक्तचक्र : सेना सीमित या असमर्थ हो गयी हो । द्र० ७:१३:४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आरम्भसाम्ये[1] यः सर्वसंदोहेन[2] प्रयातस्य पार्ष्णि गृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

५. आरम्भ साम्य होने पर, जो सकल सैन्य समूह के साथ प्रस्थित का पार्ष्णिग्रहण करता है, वह लाभान्वित होता है ।

शून्यमूलो[1] ह्यस्य सुकरो[2] भवति, नैकदेशबलप्रयातः[3] कृतपार्ष्णिप्रतिविधानः ।

६. मूल स्थान को रिक्त (असुरक्षित) रखने वाला सुखसाध्य होता है, सेना के कुछ भाग के साथ प्रस्थान करने वाला, पार्ष्णिग्राह का प्रति विधान करने के कारण सुख साध्य नहीं होता है ।

बलोपादानसाम्ये[1] यश्चलामित्रं[2] प्रयातस्य पार्ष्णि गृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

७. बलोपादान की समता होने पर, जो चल शत्रु पर आक्रमण करने वाले का पार्ष्णिग्रहण करता है, वह लाभान्वित होता है ।

चलामित्रं प्रयातो हि सुखेनावाप्तसिद्धिः पार्ष्णिग्राहमुच्छिन्द्यात्, न स्थितामित्रं प्रयातः ।

८. चल शत्रु (दुर्गरहित शत्रु) पर आक्रमण कर्ता सुखपूर्वक सफलता प्राप्त करता है और पार्ष्णिग्राह का उच्छेदन कर सकता है किन्तु दुर्ग सहित शत्रु पर, आक्रमण कर्ता, वैसा करने में समर्थ नहीं हो सकता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) आरम्भसाम्ये : युद्ध-यात्रा सम्बन्धी सामग्री समान होने पर ।

(२) संदोह : सैन्य संचालन, सैन्य सज्जा । साथ लेना । द्र० ५:२:५०, ६:२:३८; ७:४:७,१२, १४; ९:६:५५, १२:१:३,१३:३:२३ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) शून्यमूलो : खाली या शून्य केन्द्र या आधार या मूलस्थान या राजधानी या मूल राजधानी । गण० २:३२१; ३३५

(२) सुकर : सुखसाध्य ।

(३) प्रयात : आगे बढ़ा हुआ, गया हुआ, प्रस्थित ।

पादटिप्पणी :

७. (१) साम्य : सेना की संख्या में समानता ।

(२) चलामित्र : बिना दुर्ग का शत्रु, दुर्ग रहित अरि । गतिशील शत्रु । द्र० ७:१०:९, ७:१३:८, ७:१४:१०, ९:७:२८ ।

(३) संधत्ते : लाभ ।

पादटिप्पणी :

८. (१) स्थितामित्र : स्थिर, रक्षित परिखा से घिरा या दुर्गस्थ । द्र० ७:१०:७,७:१३:२२, ९:६:५३, गण० २:३२१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

असौ हि दुर्गप्रतिहतः पार्ष्णिग्राहे च प्रतिनिवृत्तः स्थितेनामित्रेणावगृह्यते ।

९. दुर्ग वाले शत्रु के वह दुर्ग से प्रतिहत होकर, लौटने पर, वह पार्ष्णिग्राह पर, आक्रमणकारी बनता है और अनिष्ट करता है ।

तेन पूर्वे व्याख्याताः ।

१०. उससे पूर्व की व्याख्या हो गयी ।

शत्रुसाम्ये यो धार्मिकाभियोगिनः पार्ष्णि गृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

११. शत्रुओं की समान स्थिति होने पर, जो धार्मिकाभियोगी का पार्ष्णिग्रहण करता है, वह लाभयुक्त होता है ।

धार्मिकाभियोगी हि स्वेषां परेषां च द्वेष्यो भवति, अधार्मिकाभियोगी संप्रियः ।

१२. धार्मिकाभियोगी अपने एवं अन्य लोगों का द्वेषभाजन होता है, अधार्मिकाभियोगी प्रिय बनता है ।

पाठभेद :

'निवृतः स्थितेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'निवृत्तस्थितेन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) प्रतिहत : परास्त हुआ, पछाड़ा या भगाया या रोका या अवरुद्ध किया हुआ । द्र० १०.६:४, गण० ३:३५ ।

(२) प्रतिनिवृत्त : लौटना, घूमना, वापस होना ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) पूर्वे : पहले ।

पाठ भेद :

'धार्मिकाभियोगिनः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धार्मिकाभियोगिनोः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) शत्रुसाम्य : समान शक्तिशाली शत्रु ।

(२) धार्मिक : धर्मभीरु राजा ।

(३) अभियोग : श्रम, उद्यम, आक्रमण । द्र० ८:१:४९, ७:५:३१, गण० ३:११० ।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'परेषां' लुप्त है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) स्वेषां : अपने, स्वजन ।

(२) परेषां : दूसरे लोग, अधार्मिक शत्रु, घायल, शत्रुजन, परजन । द्र० ९:४:१०, १.१६:१९ ।

(३) संप्रिय : जो इस प्रकार के राजा पर आक्रमण करता है, वह प्रिय बन जाता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन मूलहरतादात्विककदर्याभियोगिनां पार्ष्णिग्रहणं व्याख्यातम् ।

१३. उससे मूलहर, तादात्विक एवं कदर्याभियोगियों का पार्ष्णिग्रहण व्याख्यायित हो गया।

मित्राभियोगिनोः पार्ष्णिग्रहणे त एव हेतवः ।

१४. मित्राभियोगियों का पार्ष्णि ग्रहण करने में भी येही हेतु हैं।

मित्रममित्रं चाभियुञ्जानयोर्यो मित्राभियोगिनः पार्ष्णि गृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

१५. मित्र और अमित्र पर, आक्रमण करने वालों में जो मित्र पर, आक्रमणकर्ता का पार्ष्णिग्रहण करता है, वह लाभवान् होता है।

मित्राभियोगी हि सुखेनावाप्तसिद्धिः पार्ष्णिग्राहमुच्छिन्द्यात् ।

१६. मित्राभियोगी सुखपूर्वक सफलता प्राप्त कर, पार्ष्णिग्राह का उच्छेद कर सकता है।

सुकरो हि मित्रेण संधिर्नामित्रेण ।

१७. मित्र के साथ सन्धि करना सरल है, अमित्र के साथ नहीं।

मित्रममित्रं चोद्धरतोर्योऽमित्रोद्धारिणः पार्ष्णि गृह्णाति सोऽतिसंधत्ते ।

१८. मित्र और अमित्र का उद्धार करने वालों में जो अमित्र के उद्धार कर्ता का पार्ष्णिग्रहण करता है, वह लाभवान् होता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) मूलहर : जो पैतृक सम्पत्ति को अपव्यय करता हो। द्र० २:९:२१-२३, गण० १:१६३।

(२) तादात्विक : आय के अनुसार व्यय करने वाला। द्र० २:९:२०,२२, ७:१३:१३, गण० १:१६३।

(३) कदर्य : कृपण, कंजूस, जिसका कोष रिक्त रहा करता है। कृपण राजा जो प्रजा से पैसा वसूल कर प्रजा पर व्यय नहीं करता। या जो अपने परिवार को कष्ट देकर पैसा एकत्र करता है। द्र० १:१४:४।

पादटिप्पणी :

१४. (१) मित्राभियोगिनः : मित्र पर आक्रमण करने वाला।

(२) त एव हेतवः : वही कारण या वही प्रेरक कारण। द्र० १:१५:४४।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अभियोग : प्रयास करना, हमला करना, उद्योग करना। द्र० ७:५:३१, ८:१:४९, गण० २:११०।

(२) संधत्ते : आगे बढ़ना या लाभ में रहना, प्रवंचना, प्रतारण। द्र० ७:१३:१५।

पादटिप्पणी :

१६. (१) सुख : सरलतापूर्वक।

पादटिप्पणी :

१७. (१) सुकर : आसान, सरल। द्र० ९:६:५३।

पाठ भेद :

'र्योऽमित्रोद्धारिणः का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें योःमित्रोद्धारिणः' पाठभेद मिलता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वृद्धमित्रो ह्यमित्रोद्धारी पार्ष्णिग्राहमुच्छिन्द्यात्, नेतरः स्वपक्षोपघाती ।

१९. बढ़े मित्र वाला, अमित्रोद्धारी पार्ष्णिग्राह का उच्छेदन कर सकता है, स्वपक्षोपघाती अन्य ऐसा नहीं कर सकता है ।

तयोरलब्धलाभापगमने यस्यामित्रो महतो लाभाद्वियुक्तः क्षयव्ययाधिको वा स पार्ष्णिग्राहोऽतिसंधत्ते ।

२०. उनके लाभ प्राप्त किये बिना परावृत होने पर, जिसका शत्रु महान् लाभ से रहित हो अथवा अधिक क्षय-व्यय वाला हो, उसका पार्ष्णिग्रहण कर्ता लाभयुक्त होता है ।

लब्धलाभापगमने यस्यामित्रो लाभेन शक्त्या हीनः सपार्ष्णिग्राहोऽतिसंधत्ते, यस्य वा यातव्यः शत्रोर्विग्रहापकारसमर्थः स्यात् ।

२१. लाभ प्राप्त कर, परावृत होने पर, जिसका शत्रु लाभ और प्राप्ति हीन हो, वह पार्ष्णिग्राह लाभयुक्त होता है अथवा जिसका यातव्य शत्रु का ऊपकार करने में असमर्थ हो, वह पार्ष्णिग्राह लाभान्वित होता है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) वृद्ध मित्र : वृद्धि प्राप्त करता हुआ शक्ति शाली से तात्पर्य है ।

पाठ भेद :

'लाभापगमने' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'लाभावगमने' पाठभेद मिलता है :

पादटिप्पणी :

२०. (१) अपगमन : जाना, रहजाना, गायब हो जाना ।

(२) यस्यामित्र : जिस पर आक्रमण किया जाय, उसीसे तात्पर्य है ।

(३) क्षय : हानि ।

(४) व्यय : खर्च । गण० ३:६:९ ।

पाठभेद :

'लाभापगमने' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'लाभावगमने' पाठभेद मिलता है । तथा 'शत्रोर्विग्रहा' का देवनागरी अनुलिपि में 'शत्रुर्विग्रहा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) लब्धलाभ : लाभ प्राप्त, अर्जित प्राप्त ।

(२) शक्त्याहीन : शक्तिहीन ।

(३) यस्य : आक्रमण कारी से तात्पर्य है ।

(४) यातव्य : आक्रमण योग्य राजा । द्र० ६:२:१६; ७:५:१; ७:१३:२१ । गण० २:२८५ ।

(५) शत्रु : जिस पर पीछे से आक्रमण किया जाता है, उससे तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पार्ष्णिग्राहयोरपि यः शक्यारम्भबलोपादाधिकः स्थितशत्रुः[2] पार्श्वस्थायी वा सोऽतिसंधत्ते ।

२२. दो पार्ष्णिग्राहों में भी, जो साध्य कार्यारम्भानुरूप अधिक सैन्य वाला, स्थित शत्रु अथवा पार्श्वस्थायी होता है, वह लाभ भाजन बनता है ।

पार्श्वस्थायी हि यातव्याभिसारो[2] मूलाबाधकश्च भवति, मूलाबाधक[3] एव पश्चात्[4]स्थायी ।

२३. पार्श्वस्थायी यातव्य से संगत और मूल स्थान का बाधक होता है, पश्चात् स्थायी मूल स्थान का बाधक नहीं होता है ।

पार्ष्णिग्राहास्त्रयो[1] ज्ञेयाः शत्रोश्चेष्टानिरोधकाः ।
सामन्तः[2] पृष्ठतो[3] वर्गः प्रतिवेशौ[4] च पार्श्वयोः[5] ॥

२४. शत्रु की चेष्टाओं के निरोधक पार्ष्णिग्राह तीन प्रकार के होते हैं—सामन्त, पीछे स्थित, एवं पार्श्व भाग में स्थित ।

पाठभेद :

'शक्यारम्भ' का तंजोर में 'शङ्क्यारम्भ' पाठभेद मिलता है । तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पार्श्वस्थायी वा सोऽतिसंधत्ते' लुप्त है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) शक्यारम्भः : सैन्य संगठन करना ताकि सफलता मिल सके । द्र० ७:८:१२ गण० २:२८८ ।

(२) स्थितशत्रु : दुर्गादि में अवस्थित शत्रु । द्र० ७:१०:७ ७:१३:८ । गण० ३:८५ ।

(३) पार्श्व : यातव्य के पार्श्व में नहीं बल्कि आक्रमणकारी राजा के पार्श्व से तात्पर्य है । समीपवर्ती, पार्श्व स्थित राजा । द्र० २:६:२०; २:१५:३; १२:५:२७,७ । गण० १:१४० ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) पार्श्वस्थायी : पार्श्वस्थ, जो पार्श्व में स्थित या समीप रहता है । द्र० ७:१३:३२। गण० २:३२४ :

(२) अभिसार : बचाने जाना । द्र० ७:१३:३८, ३९ ।

(३) मूलाबाधक : केन्द्र या राजधानी के लिये खतरनाक ।

(४) पश्चात् : पीछे अर्थात् सेना के पीछे ।

पाठभेद :

'सामन्तः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सामन्तात्' पाठभेद मिलता है । द्र० ३३०, २५३ :

पादटिप्पणी :

२४. (१) पार्ष्णिग्राह : द्र० ६:२:१८; ४:१३:३९; ७:१३:२, मत्स्य० २४०:२,४ ।

(२) सामन्त : द्र० १:२१ १०,२४; २,९,३ १० ।

(३) पृष्ठतो : पीछे ।

(४) प्रतिवेश : पड़ोसी, पड़ोस ।

(५) पार्श्व : दोनो बगल ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अरेर्नेतुश्च मध्यस्थो दुर्बलोऽन्तर्धिरुच्यते।
प्रतिघातो बलवतो दुर्गाटव्यपसारवान्॥

२५. शत्रु एवं बिजिगीषु के मध्य स्थित दुर्बल नृपति 'अन्तर्धि' कहा जाता है, वह बलवान के प्रतिघात से दुर्ग एवं अटवी में अपसरण करने वाला होता है।

मध्यमं त्वरिविजिगीष्वोर्लिप्समानयोर्मध्यमस्य पार्ष्णि गृह्णतोर्लब्धलाभापगमने यो मध्यमं मित्राद्वियोजयत्यमित्रं च मित्रमाप्नोति सोऽतिसंधत्ते।

२६. मध्यम को वशवर्ती करने के लिये इच्छुक एवं मध्यम का पार्ष्णिग्रहण करने वाले शत्रु और विजिगीषु के लाभ प्राप्त कर, परावृत होने पर, जो मध्यम को मित्र से वियुक्त करता है और शत्रु को मित्र बनाता है, वह लाभवान् होता है।

संधेयश्च शत्रुरुपकुर्वाणो, न मित्रं मित्रभावादुत्क्रान्तम्।

२७. उपकार करने वाला शत्रु सन्धियोग्य होता है किन्तु अनुपकर्ता मित्र त्याज्य होता है।

तेनोदासीनलिप्सा व्याख्याता।

२८. उससे उदासीन लिप्सा की व्याख्या हो गयी।

'पार्ष्णिग्रहणाभियानयोस्तु मन्त्रयुद्धादभ्युच्चयः।'

२९. पार्ष्णिग्राह एवं अभियान कारी में मन्त्रयुद्ध कर्ता की अभ्युन्नति होती है।

पाठभेद :

'व्यपसारवान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्यवसारवान्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अन्तर्धि : शत्रु तथा राजा के मध्यवर्ती भू-भाग; या राज्य, बफर स्टेट।

(२) प्रतिघात : आघात के बदले किया गया आघात। द्र० २:३:२, २:५:५, ७:७:२, ७:१३:२५, ८:४:१३।

(३) अपसार : पलायन, अपमान, प्रत्यावर्तन के स्थान से तात्पर्य है।

पाठभेद :

'लाभापगमने' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'लाभागमने' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२६. (१) मध्यम। द्र० ६:२:२१, १२:२:६। गण० २:३५९।

(२) अमित्रं : मध्यम राजा से तात्पर्य है।

पादटिप्पणी :

२७. (१) शत्रु : यहाँ पार्ष्णिग्राह से तात्पर्य है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) उदासीन : तटस्थ, अपक्षपाती। द्र० ४:१३:१७, ६:२:२२, ७:९:४१। गण० २:३५९।

(२) लिप्सा : अभिलाषा, प्राप्त करने की इच्छा।

पादटिप्पणी :

२९. (१) मन्त्रयुद्ध : नीति युद्ध, बुद्धि बल से शत्रु को पराजित करने का उपक्रम। द्र० १२:२ ९:२:५, १२:१०:२७। गण० २:३२५, ३:१५८।

(२) अभ्युच्चय : वृद्धि, उत्कर्ष; अभ्युदय। द्र० ७:१:१४, ७:४:१४, ७:१३:२९; गण० २:३५।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यायाम[1]युद्धे हि क्षयव्ययाभ्यामुभयोरवृद्धिः ।

३०. व्यायाम युद्ध में क्षय-व्यय के कारण दोनों की वृद्धि नहीं होती है।

जित्वाऽपि हि क्षीणदण्डकोशः पराजितो भवति' इत्याचार्याः ।

३१. विजय प्राप्त कर भी दण्ड-कोश क्षीण होने के कारण पराजित होता है, ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

३२. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है।

सुमहताऽपि क्षयव्ययेन शत्रुविनाशोऽभ्युपगन्तव्यः ।

३३. महान् क्षय-व्यय के द्वारा भी शत्रु का विनाश मान्य होता है।

तुल्ये क्षयव्यये यः पुरस्ताद्दूष्यबलं घातयित्वा निःशल्यः पश्चाद्वश्यबलो-युध्येत सोऽतिसंधत्ते ।

३४. तुल्य क्षय-व्यय की स्थिति में जो पहले दूष्य बल वाले नृपति की हत्या करवा कर, कंटक रहित होकर, बाद में वश्य सेनासहित युद्ध करता है, वह लाभवान् होता है।

द्वयोरपि पुरस्ताद्दूष्यबलघातिनोर्यो बहुलतरं शक्तिमत्तरमत्यन्तदूष्यं च घातयेत् सोऽतिसंधत्ते ।

३५. पहले दूष्य बल घातित करने वाले दोनों में भी, जो बहुसंख्यक, अधिक शक्तिशाली एवं अत्यन्त दूष्य बल को घातित कराता है, वह लाभान्वित होता है।

तेनामित्राटवीबलघातो[1] व्याख्यातः ।

३६. उससे शत्रु बल एवं अटवी बल का घात व्याख्यायित होता है।

पादटिप्पणी :

३०. (१) व्यायाम : शस्त्र क्रिया, शस्त्रोपचार या सैनिक औपरेशन । द्र० १:१६:२९; ६:२:१, २; १०:४:१६, गण० १:१४ २:२३०, ३:१२५ ।

(२) व्यायामयुद्ध : गण० २:२२५ ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) अभ्युपगन्तव्य : मान्य लाना, स्वीकार करना चाहिए। पास जाना, मानना या स्वीकार करना चाहिए ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) पुरस्ताद : पहले, सामने, या सेना के आगे रहना या कैनन फोडर बनाना ।

पाठभेद :

'घातयेत्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पातयेत्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) दूष्य : विद्रोही, विश्वासघाती, राजा का अपघात कारी, राजद्रोही । द्र० १:११:१७, ३:१४:२७, ५:१:४, गण० ३:१५०, १७० ।

(२) अतिसंधत्ते : द्र० ७:७:६, ७:९:६ ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) घात : नाश । द्र० ३:१९:२१, गण० ३:१३५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पार्ष्णिग्राहोऽभियोक्ता[2] वा यातव्यो[3] वा यदा भवेत् ।
विजिगीषुस्तदा तत्र नेत्रमेतत्समाचरेत् ॥

३७. विजिगीषु पार्ष्णिग्राह, अभियोक्ता अथवा यातव्य हो, तो उस प्रकार नेतृत्व कार्य करना चाहिये :

पार्ष्णिग्राहो भवेन्नेता शत्रोर्मित्राभियोगिनः ।
विग्राह्य पूर्वमाक्रन्दं[1] पार्ष्णिग्राहाभिसारिणा[2] ॥

३८. विजिगीषु नेता पहले आक्रन्द को पार्ष्णिग्राह की सेना से युद्ध कराके, मित्राभियोगी शत्रु को पार्ष्णिग्राह बनाये ।

आक्रन्देनाभियुञ्जानः पार्ष्णिग्राहं निवारयेत् ।
तथाऽऽक्रन्दाभिसारेण पार्ष्णिग्राहाभिसारिणम् ॥

३९. स्वयं आक्रमणकारी होने पर, आक्रन्द द्वारा पार्ष्णिग्राह को तथा आक्रन्दाभिसार के द्वारा पार्ष्णिग्राहाभिसार को निवारित करे ।

अरिमित्रेण मित्रं च पुरस्तादवघट्टयेत्[1] ।
मित्रमित्रमरेश्चापि मित्रमित्रेण वारयेत् ॥

४०. यह सामने शत्रु के मित्र से मित्र को संघर्षरत करे तथा शत्रु के मित्र के मित्र को अपने मित्र के मित्र से निवारित करे ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) पार्ष्णिग्राह : द्र० ६:२:१७, ७:११: ३९, ७:१३।३, ३६, ३९, ४० । गण० २:२३२ ।

(२) अभियोक्ता : आक्रमक । द्र० ७:१३:३९, ४० ।

(३) यातव्य : राजा जिसके विरुद्ध आक्रमण करना उपयुक्त या योग्य है ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) आक्रन्द : आमन्त्रित मित्र या पृष्ठ भाग का मित्र । द्र० १:१६:१९, ६:२:१८, ७:४:१६ । गण० १:८१, २:३३२ ३:१९२ ।

(२) अभिसारी : जो किसी की रक्षा करने जाता है । द्र० ७:१३:२३, ३९ ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) अवघट्टन : दूसरे को युद्ध में लड़ाना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मित्रेण ग्राहयेत्पार्ष्णिमभियुक्तोऽभियोगिनः ।
मित्रमित्रेण चाक्रन्दं पार्ष्णिग्राहान्निवारयेत् ॥

४१. स्वयं आक्रान्त होने की स्थिति में अभियोगी का पार्ष्णिग्राह अपने मित्र को बनाये तथा आक्रन्द को मित्र के मित्र द्वारा पार्ष्णिग्राह से रोके ।

एवं मण्डलमात्मार्थं विजिगीषुर्निवेशयेत् ।
पृष्ठतश्च पुरस्ताच्च मित्रप्रकृतिसंपदा ॥

४२. इस प्रकार विजिगीषु पीछे और सामने मित्र प्रकृति संपदा से सम्पन्न मण्डल को अपने लिए (लाभार्थ) निविष्ट करे ।

कृत्स्ने च मण्डले नित्यं दूतान्गूढांश्च वासयेत् ।
मित्रभूतः सपत्नानां हत्वा हत्वा च संवृतः ॥

४३. सम्पूर्ण मण्डल में दूतों एवं गूढचरों को बसाये तथा शत्रुओं का मित्र बनकर, उन्हें मार-मार कर, स्वयं को छिपाये रखे ।

असंवृतस्य कार्याणि प्राप्तान्यपि विशेषतः ।
निःसंशयं विपद्यन्ते भिन्नप्लव इवोदधौ ॥

४४. भाव गुप्त न रखने वाले नृपति के सिद्धप्राय कार्य भी समुद्र में टूटी नाव के समान अवश्य ही विनष्ट हो जाते है ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) मित्रमित्रेण : अपने मित्र का मित्र ।

(२) आक्रन्द : द्र० ७:१३:३० ।

(३) निवारयेत् : निवारण करना, हटाना ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) मित्र प्रकृति : मित्र स्वयं एक प्रकृति है । राज्य की सात प्रकृतियों में एक मित्र प्रकृति भी है ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) कृत्स्न : सम्पूर्ण, समस्त । मनु० १:१०५, ११:१९ ।

(२) मण्डल : द्र० २:१९:३० ।

(३) संवृत : गुप्त, ढका हुआ या छिपा हुआ ।

पाठभेद :

'भिन्न प्लव' का देवनागरी अनुलिपि में 'भिन्नः प्लव' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) भिन्नप्लव : टूटी नाव । द्र० ३:१:२४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे पार्ष्णिग्राहचिन्ता त्रयोदशोऽध्यायः ।
आदितः एकादशशततमः ।

सातवें अधिकरण के अन्तर्गत षाड्गुण्य में पार्ष्णिग्राह चिन्ता सम्बद्ध तेरहवाँ अध्याय समाप्त ।

आदि से एक सौ ग्यारहवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठ भेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रें षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे त्रयोदशोऽध्यायः पार्ष्णिग्राहचिन्ता आदितः एकादशशततमः ॥

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये पार्ष्णिग्राहचिन्ता त्रयोदशोऽध्यायः आदित एकादशशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे त्रयोदशोऽध्यायः पार्ष्णिग्राहचिन्ता, आदितः एकादशशततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे पार्ष्णिग्राहचिन्ता त्रयोदशोःध्यायाः ॥१३॥ आदित एकादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥१११॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १४

[अष्टादशशततमं प्रकरणम्—हीनशक्तिपूरणम्]

एक सौ अट्ठारहवां प्रकरण—हीनशक्तिपूरण

सामवायिकैरेवमभियुक्तो विजिगीषुर्यस्तेषां प्रधानस्तं ब्रूयात् 'त्वया मे संधिः, इदं हिरण्यम्, अहं च मित्रम्, द्विगुणा ते वृद्धिः, नहि स्वात्मक्षयेण मित्रमुखानमित्रान् वर्धयितुम्, एते हि वृद्धास्त्वामेव परिभविष्यन्ति' इति ।

१. सामवायकों द्वारा आक्रान्त विजिगीषु उनके प्रधान से कहे 'तुम्हारे साथ मेरी सन्धि है, यह हिरण्य है, मैं मित्र हूँ, तुम्हारी दूनी वृद्धि हुई', अपनाक्षय करके दिखावे के मित्र बने शत्रुओं को बढ़ाना युक्त नहीं, ये प्रवृद्ध होकर तुम्हें ही पराभूत करेंगे ।

भेदं[1] वा ब्रूयात् 'अनपकारो यथाहमेतैः संभूयाभियुक्तस्तथा त्वामप्येते-संहितबलाः स्वस्था[2] व्यसने[3] वाऽभियोक्ष्यन्ते, बलं हि चित्तं विकरोति, तदेषां विघातय[4]' इति ।

२. अथवा भेद कहे 'जिस प्रकार' अनपकारी मैं उनके द्वारा सामूहिक रूप से आक्रान्त हुआ हूँ, उसी प्रकार ये संग्रहीत बलवाले स्वस्थ होकर अथवा तुम्हारे विपन्न होने पर, तुम पर, आक्रमण करेंगे, बल चित्त को विकृत कर देता है अतः उनका विघात करो ।'

पाठभेद :

'इति' तेलगू अनुप्रतिलिपि में नहीं है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) सामवायिक : अभियान के समय बने सह या संयुक्त कर्मी या संघ । द्र० ७:४:१२; ७:५:३८, ४९; ७:११:४१ । गण० १:१५ २:२५९ ।

(२) अभियुक्त : आक्रान्त ।

(३) प्रधान : मिली सेना या संयुक्त सेना या संघ का नेता । द्र० १:३:२६; ८:५:१२; २४, ३५, ७:१४:३ ।

(४) हिरण्य : नकद रुपया । द्र० १:१३:६, १:१९:११ ।

(५) द्विगुण : दूना, उत्कर्ष ।

(६) मुख : आमदनी का एक मद । द्र० २:६:१०; २:७:३१; २:८:२१; २:१२:३६ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) भेद : विप्र पति पत्ति या विरोध या वैमत्य । गण० ३:१४५ ।

(२) स्वस्था : सुख में निर्बाधता,सुख, विश्रान्ति।

(३) व्यसन : आपदा, संकट । द्र० ३:१४:२ १५:१:४६ । गण० ३:२ ।

(४) विघात : छिन्न-भिन्न या नाश या आघात करना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भिन्नेषु प्रधानमुपगृह्य [2]हीनेषु विक्रमयेत् [3] हीनाननुग्राह्य [4] वा प्रधाने यथा वा श्रेयोऽभिमन्येत तथा ।

३. परस्पर भेद युक्त हो जाने पर, प्रधान को लेकर, हीन बलवालों पर, अथवा हीनों को लेकर, प्रधान पर पराक्रम करे अथवा जैसा कल्याण समझे वैसा करे ।

[1]वैरं वा परैर्ग्राहयित्वा विसंवादयेत् [2] ।

४. अथवा अन्यों के साथ पारस्परिक वैर कराके, विघटित करा दे ।

फलभूयस्त्वेन वा प्रधानमुपजाप्य [2] संधिं कारयेत् ।

५. अथवा अधिक धन देकर, प्रधान को भेद युक्त करके, उसके द्वारा अन्यों के साथ सन्धि कराये ।

अथोभयवेतनाः फलभूयस्त्वं दर्शयन्तः सामवायिकान् [2] 'अतिसंहिताः स्थ' इत्युद्दूषयेयुः [3] ।

६. उसके अनन्तर उभयवेतनभोगी अधिक लाभ ग्रहण प्रदर्शित कर, सामवायिकों को यह कहकर, दूषित करें, कि 'तुम लोग अधिक प्रवञ्चित किये (ठगे) जा रहे हो ।'

पादटिप्पणी :

३. (१) भिन्न : अलग या परस्पर भेद हो जाने पर ।

(२) हीन : दुर्बल या कमजोर ।

(३) विक्रमयेत् : द्र० १:१७:२८; १:१९:१५; १२:३:१५; ५:६:२५, ७:३:११ ।

(४) अनुग्राह्य : अनुग्रह का पात्र । द्र० ७:८: २८-२९ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) वैरं : शत्रुता, पुनरावृत्ति । सूत्र ७: ८:४ का ।

(२) विसंवाद : भेद उत्पन्न कर देना । द्र० ७:८: ४ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) फलभूय : अधिक लाभ की बात करना, जितना वह पाने का अधिकारी हो सकता है ।

(२) उपजाप : गुप्त रूप से बहकाना या गुप्त रूप से प्रस्ताव रखना । द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२ ।

पाठभेद :

'उद्दूषयेयु' का तंजौर में 'उदूषयेयु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) उभयवेतन : एक गुप्त प्रतिनिधि जो दोनों ओर से वेतन पाता है । द्र० १:१२:१७-१९; १:१६:२४; ७:१४:८ । गण० १:६ ।

(२) सामवायिकं : आक्रमण काल में बना संघ । द्र० ७:४।१९; ७:५:३८, ३९ । गण० १:१५; २: २५९ ।

(३) उद्दूषयेषु : प्रधान के विरुद्ध दिमाग खराब करना या परस्पर द्वेष उत्पन्न करना, शत्रुता करा देना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुष्टेषु संधिं दूषयेत् ।

७. उनके दूषित हो जाने पर, सन्धि दूषित करें ।

अथोभयवेतना भूयो भेदमेषां कुर्युः 'एवं तद् यदस्माभिर्दर्शितम्' इति ।

८. इसके पश्चात् उभयवेतनभोगी पुनः उनमें यह कहकर भेद उत्पन्न करें, 'हमने जो पहले कहा वह इस प्रकार है ।'

भिन्नेष्वन्यतमोपग्रहेण चेष्टेत ।

९. उनमें भेद हो जाने पर, एक को स्वयं संगत कर, अन्य से युद्धादि करें ।

प्रधानाभावे सामवायिकानामुत्साहयितारं स्थिरकर्माणमनुरक्तप्रकृतिं लोभाद्भयाद्वा संघातमुपागतं विजिगीषोर्भीतं राज्यप्रतिसंबद्धं मित्रं चलामित्रं वा पूर्वानुत्तराभावे साधयेत्—उत्साहयितारमात्मनिसर्गेण, स्थिरकर्माणं सान्त्वप्रणिपातेन, अनुरक्तप्रकृतिं कन्यादानयापनाभ्यां, लुब्धमंशद्वैगुण्येन, भीतमेभ्यः कोशदण्डानुग्रहेण,

१०, प्रधान के न रहने की स्थितिमें सामवायिकों में उत्साह कर्ता, स्थिर कर्ता, अनुरक्त प्रकृति, लोभ या भयवश समूहमें अवगत, विजिगीषु से भीत, राज्य से प्रतिसम्बद्ध मित्र अथवा दुर्गादि रहित शत्रुओं में पूर्ववर्ती के अभाव में उत्तरवर्ती को स्वानुकूल करे । उत्साहयिता को आत्म समर्पण द्वारा, स्थिर कर्मा को सत्त्वप्रणिपात से, अनुरक्तप्रकृति वाले को कन्या प्रदान और कन्या ग्रहण से, लोभी को लाभांश का दूना प्रदान द्वारा, सामवायिकों से भीत को कोश-दण्ड प्रदान द्वारा स्वयं से भीत को विश्वस्त कर, प्रतिभू प्रदान से राज्य प्रति सम्बद्ध को एकता का भाव दिखाने से

पादटिप्पणी :

७. (१) संधि : सुलह । गण० १:१६, २:२३, ७, ३४९ ।

(२) दूषयेत् : सन्धि के अतिक्रमण या उलंघन या न मानना ।

पादटिप्पणी :

८. (१) एवंतद : वे तर्क करते हैं ।

पाठभेद :

'ग्रहेण चेष्टेत' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में ग्रहेण वा चेष्ढेव' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) भिन्न : परस्पर अलग हो जाने पर या फूट हो जाने पर ।

(२) उपग्रहण : समर्थन, उपकार, सहायता करना । अग्नि० २५८:८३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वतो भीतं विश्वास्य प्रतिभूप्रदानेन, राज्यप्रतिसंबद्धमेकीभावोपगमनेन, मित्रमुभयतः प्रियहिताभ्याम् उपकारत्यागेन वा, चलामित्रमवधृतमनपकारोपकाराभ्याम् ।

मित्र को दोनों ओर से प्रिय एवं हितकर वचनों अथवा उपकार और त्याग से चलामित्र को अनुपकार न करने एवं उपकार करने की प्रतिज्ञा से वश में करें ।

योवा यथाऽयोगं[1] भजेत[2] तं तथा साधयेत्, सामदानभेददण्डैर्वा यथाऽऽपत्सु[3] व्याख्यास्यामः[4] ।

११. अथवा जो जिस प्रकार भिन्न हो, उसे उस उपाय से सिद्ध करे, अथवा साम दान दण्ड भेदों से उसे वशवर्ती करें, जैसा आप त्सप्रकरण में व्याख्या करेंगे ।

व्यसनोपघातत्वरितो[1][2] वा कोशदण्डाभ्यां देशे काले कार्ये वाऽवधृतं[3] संधिमुपेयात् ।

१२. अथवा विपत्ति दूर करने की शीघ्रता रखने वाला विजिगीषु अमुक देश, काल अथवा कार्य में कोश दण्ड द्वारा सहायता करणोय है इस प्रकार सामवायिकां से सन्धि करे।

पाठभेद :

'प्रति संबद्धं मित्रं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतिसंबन्धमित्र'' तथा 'पूर्वानुत्तराभावे' का पूर्वान्यतराभावे' तथा विश्वासस्य' का 'विश्वासयेत्', तथा 'प्रतिसंवद्धंम्' का प्रतिसंबन्धम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणो :

१०. (१) सामवायिक : आक्रमण काल या अभियान काल में बना संघ । द्र० ७:४:१९, ७:१४:१ ।

(२) उत्साह : जो सामवायिकों को उत्साहित कर सके ।

(३) स्थिरकर्मा : जो शत्रु को बिना उच्छिन्न किए पीछे न हटे स्थिर होकर कार्य करने वाला ।

(४) अनुरक्त प्रकृति : प्रकृतियाँ जिसके अनुरूप रहती हैं ।

पादटिप्पणो :

११. (१) अयोगं : अलगाव, वियोग पृथक्करण, पार्थक्य, विच्छेद ।

(२) भजेत : मनु० ९:१०४, १०: ५९ ।

(३) आपत्सु : आपदा ।

(४) व्याख्या : स्पष्टीकरण । द्र० अधिकरण ९ अध्याय ५ ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) व्यसन : आपत्ति या विपत्ति या आपदा । द्र० १:४:४ ।

(२) उपघात : आघात नाश विषयक । द्र० २:१६:२, ६:४; २०:३२, ७:१६:१२ ।

(३) अवधृतं : दृढ़ीकृत, स्थिरीकृत, निश्चित, प्रज्ञान । द्र० ३:१:१९, ७:१४-१० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कृतसंधिर्हीनमात्मानं प्रतिकुर्वीत ।

१३. सन्धि करके, अपनी हीन स्थिति को ठीक करे ।

पक्षेहीनो[1] बन्धुमित्रपक्षं कुर्वीत, दुर्गमं[2] विषह्यं वा ।

१४. दुर्बल पक्ष वाला बन्धु-मित्रों को पक्ष में करे अथवा दुर्ग को अनुल्लङ्घ्य बनाये ।

दुर्गमित्रप्रतिष्टब्धो हि स्वेषां[1] परेषां[2] च पूज्यो भवति ।

१५. दुर्ग-मित्र से सुरक्षित जन आत्मोयजनों एवं अन्यजनों का पूज्य होता है ।

मन्त्रशक्तिहीनः प्रज्ञापुरुषो[2]पचयं[3] विद्यावृद्धसंयोगं वा कुर्वीत ।

१६. अन्य शक्तिहीन नृप प्रज्ञा पुरुषों का संग्रह अथवा विद्या वृद्धोंका संयोग प्राप्त करे ।

तथा हि सद्यः श्रेयः प्राप्नोति ।

१७. वैसा करके, शीघ्र श्रेय प्राप्त करता है ।

प्रभावहीनः प्रकृतियोग[2]क्षेम[3]सिद्धौ यतेत ।

१८. प्रभाव होन नृप प्रकृति (प्रजा—अमात्य) के योग क्षेम को सिद्ध करने का यत्न करे ।

पाठभेद :

'कृतसंधिर्हीन' का तेलगू अनुगतिलिपि में 'कृत-संधिहीनम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) हीन : होनवल, दुर्बल, क्षोण ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) पक्षेहीन : अपने पक्ष के विषय में दुर्बल होने पर ।

(२) दुर्गम : दुर्भेद्य, अभेद्य, अनाक्रमणीय दुर्ग ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) प्रतिष्टब्ध : रक्षित, जोरदार, समर्थन किया । द्र० २:६:१६, ७:७:११, ७:१०:२७, ९:३:२४ ।

(२) स्वेषां : स्वपक्षीय, अपने ।

(३) परेषां : परपक्षीय, पराये । द्र० १:१६:१९ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) मन्त्र : द्र० १:१५:२, १:१९:१४ ।

(२) प्रज्ञापुरुष : बुद्धिमान लोग ।

(३) अपचय । संग्रह, हानि, व्यय, असफलता, दोष । द्र० ३:९:४:१ ।

पाठभेद :

'सद्यः श्रेयः' का तंजौर तथा तेलगूअनुप्रतिलिपि में 'सच्छ्रेयः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. श्रेय : अच्छाई, कल्याण ७:९:३४ ।

पाठभेद :

'प्रभाव' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रभव' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) प्रभावहीन : शक्तिहीन । गण० ३:४३ ।

(२) योग : १:१८:१९; १३:३:५४, ५६; १:५:१६; १:१६:३४; १२ ४:२९ । गण० १:१३,२३; २:२६४ ।

(३) क्षेम : ६:२:१ । गण० २:२३० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जनपदः सर्वकर्मणां[1] योनिः, ततः प्रभावः ।

१९. जनपद समस्त कर्मों का मूल है, उसी से प्रभाव होता है।

तस्य[1] स्थानमात्मनश्चापदि दुर्गम् ।

२०. दुर्ग प्रभाव का स्थान और आपत्ति में अपना रक्षा स्थान होता है।

सेतुबन्धः[1] सस्यानां योनिः[2] ।

२१. सेतुबन्ध सस्यों (फसल) का मूल कारण है।

नित्यानुषक्तो हि वर्षगुणलाभः सेतुवापेषु[1] ।

२२. सेतुवापों में कभी-कभी होने वाला वर्षाजन्य सस्य लाभ सदैव होता है।

वणिक्पथः[1] परातिसंधानस्य[2] योनिः ।

२३. वणिक्पथ शत्रु प्रवंचन का मूल कारण होता है।

वणिक्पथेन हि दण्ड[1]गूढ[2]पुरुषातिनयनं[3] शस्त्रावरण[4]यानवाहन क्रयश्चक्रियते, प्रवेशो निर्णयनं[5] च ।

२४. वणिक्पथ से दण्ड, मूढ पुरुषों का शत्रु देश में नयन और शस्त्रावरण एवं यान का वाहन क्रय तथा पण्य प्रवेश और निर्यात किया जाता है।

पाठभेद :

'प्रभावः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रभव' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१९. (१) योनि : स्रोत, मूलकारण। सूत्र १९-२५, प्रभाव स्रोत का उल्लेख करता है। द्र० ७:१:१, गण० ३:२१०।

पादटिप्पणी :

२०. (१) तस्य : जनपद में रहने वाले लोगों से तात्पर्य है।

पादटिप्पणी :

२१. (१) सेतुबन्ध : बांध या सिंचाई के काम से तात्पर्य है। द्र० २:१:२२, ३९; ३:९:३२। गण० ३:१०९।

(२) योनि : स्रोत, मूलकारण। द्र० ७:१४:१९।

पादटिप्पणी :

२२. (१) वाप : बोना। द्र० ७:११:१५।

पादटिप्पणी :

२३. (१) वणिक्पथ : व्यापारी मार्ग। द्र० २:१:१९, ३८:३:६:८, ७:१२:१७।

(२) योनि : मूल कारण, स्रोत। द्र० ७:१:१, ७:१४:१९। गण० ३:२१०।

पादटिप्पणी :

२४. (१) दण्ड : सेना।

(२) गूढ पुरुष : गुप्तचर।

(३) अतिनयन : गुप्तरूप या चोरी से लाना या आयात करने या चोरी से आयात करना। द्र० १३:३:४८।

(४) आवरण : कवच। गण० ३:५९, १२५:२००।

(५) निर्णयन : निर्यात, बाहर ले जाना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खनि[1]: संग्रामोपकरणानां योनि[2]:, द्रव्यवनं[3] दुर्गकर्मणां यानरथयोश्च, हस्तिवनं हस्तिनाम्, गवाश्वखरोष्ट्राणां च व्रजः[4] ।

२५. खनि संग्राम के उपकरणों के, द्रव्यवन दुर्ग कर्मों एवं यान और रथ के, हस्तिवन हाथियों के तथा व्रज गो, अश्व, खर एवं ऊँटों के उत्पत्ति का मूल कारण है।

तेषामलाभे बन्धुमित्रकुलेभ्यः समार्जनम्[1] ।

२६. उनके न होने पर, बन्धुमित्र कुलों से उनका अर्जन करे।

उत्साहहीनः [1]श्रेणीप्रवीर[2]पुरुषाणां चोरगणाटविकम्लेच्छ[3]जातीनां परापकारिणां[4] गूढपुरुषाणां[5] च यथालाभमुपचयं[6] कुर्वीत ।

२७. उत्साहहीन नृप श्रेणी पुरुषों, वीर पुरुषों, चोर गणों, आटविकों एवं म्लेच्छ जातियों और शत्रु का अपकार करने वाले गूढ़पुरुषों का लाभ के अनुसार संग्रह करे।

परमिश्रा[1] प्रतीकारमाबलीयसं[2] वा परेषु प्रयुञ्जीत ।

२८. शत्रु से मित्र भाव रख कर, उसका प्रतीकार करे, अथवा आवलीयस अधिकरण के अनुसार शत्रुओं का प्रतीकार करे।

पाठभेद :

'खरोष्ट्राणां' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रथोष्ट्राणां' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

(१) खनि : खान ७:१०:२०

(२) योनि : मूलकारण स्रोत, ७:१९:१

(३) द्रव्यवन : मूल्यवान लकड़ी के वन की उपज। गण ७:१:२०, १:५०।

(४) व्रज : पशुओं का समूह, गोशाला, समुच्चय, संग्रह। ७:१६:५, गण ३: ११३।

पादटिप्पणी :

२६. (१) अर्जन : कमाना या संग्रह करना।

पाठभेद :

'उत्साहहीन : श्रेणी का तेलगू अनुप्रतिलिपि में उत्साहहीन श्रेणी पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२७. (१) प्रवीर : शूर पुरुष।

(२) श्रेणी : निगम। द्र० ४:१:२, ३, ७:११:१८, ३०, ८:४:२७, १०:१:८, १:२। गण० १:१२९, ४:१६।

(३) म्लेच्छ : म्लेच्छ जाति के लोग। १:१२:२१, २:१३:३, ७:१०:१५।

(४) परापकारिणां : गूढ़पुरुषा स्नो का विशेषण है।

(५) गूढ़पुरुष : १:१६:२४, ३३; १:११:१।

(६) उपयम : संग्रह करना ७:१४:१६।

पाठभेद :

'परमिश्रा' का तेलगू अनुद्रतिलिपि में 'परमिश्रा' तथा श्रीमूल में परमिश्रः पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) परमिश्रा : शत्रु से मिल जाने पर। ९:६:११, गण० ३:८०

(२) आवलीयस : दुर्बल राजा के लिए मार्ग निदर्शन या राजा की करणीय विधि। द्र० अधिकरण १२, ३:३:६, ३५, ७:३:६, २८ गण० ३:१५४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं पक्षेणमन्त्रण द्रव्येण च बलेन च ।
संपन्नः प्रतिनिर्गच्छेत्परावग्रहमात्मनः ॥

२९. इस प्रकार पक्ष, मन्त्र, द्रव्य और बल से सम्पन्न होकर, राजा अपने शत्रु को दमन करे।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे हीनशक्तिपूरणं चतुर्दशोऽध्यायः । आदितो द्वादशशततमं ।

सप्तम अधिकरण के अन्तर्गत षाड्गुण्य में हीन शक्तिकरण सम्बद्ध चौदहवाँ अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ बारहवाँ अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) अवग्रह : दमन, निग्रह, संयमन, अंकुश, नियन्त्रण। ७:५:१३, ३०, गण० १:४५, १:२६३ ३:२०६ ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे चतुर्दशोऽध्यायः हीनशक्तिपूरणम् आदितो द्वादशशतः ।

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये हीनशक्तिपूरणम् चतुर्दशोऽध्यायः आदितो द्वादशाशतः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे चतुर्दशोऽध्यायः हीनशक्तिपूरणम् आदितोद्वादशशतः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे हीनशक्तिपूरणं चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥ आदितो द्वादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥११२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १५

[एकोनविंशतिशततमं प्रकरणम्—बलवता विगृह्योपरोधहेतवः; विंशतिशततमं प्रकरणम्—दण्डोपनतवृत्तम्]

एक सौ उन्नीसवां प्रकरण–बलवान के साथ विग्रह[१] कर के दुर्गप्रवेश हेतु।

एक सौ बीसवां प्रकरण–दण्डोपनतवृत्त ।

दुर्बलो राजा बलवताऽभियुक्त[४]स्तद्वि[५]शिष्टबलमाश्रयेत् यमितरो मन्त्रशक्त्या नातिसंदध्यात् ।

१. बलवान् राजा से आक्रान्त दुर्बल राजा, उसकी अपेक्षा विशिष्ट बली राजा का आश्रय ले, जिसे दूसरा (आक्रमणकर्त्ता) मन्त्र शक्ति से न जीन सके ।

तुल्यमन्त्रशक्तीनामाय[१]त्तसंप[२]दो वृद्ध[३]योगाद्वा विशेषः ।

२. समान मन्त्र-शक्ति वाले नृपों में विशिष्ट बुद्धि वाले अमात्यों से युक्त नृप का अथवा वृद्ध (विद्वानों) से युक्त नृप का आश्रय ले ।

पादटिप्पणी :

प्रकरण—११९ में सूत्र १–२० और
प्रकरण—१२० में सूत्र २१–३० है।

१. (१) विग्रह : द्र० ७:१:७ ।

(२) दण्डोपनत : द्र० ५:१:५३, ७:२:९, ७:३:६, ७:१:२९ ।

(३) वृत्तम् : द्र० ८:२:२, ८:४:३६ ।

(४) अभियुक्त : आक्रान्त । द्र० ७:५:६ ।

(५) विशिष्ट : विलक्षण, विशेष गुण, अधिक, बलशाली ।

(६) सदध्यात् : पकड़ लेना, प्रचलित करना लाभ करना, विजय करना, बढ़ जाना ।

पाठ भेद :

'तुल्यमन्त्र' का भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'तुल्यबलमन्त्र' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) आयत्त : आश्रित दुर्बल राजा के संभावित मित्र का वर्णन अधीन अवतनीत । द्र० ७:१६:३१, ९:६:७, ९:१५:२, गण० १:३०२ ।

(२) सम्पद : धन-दौलत, ऐश्वर्य, सामर्थ्य। द्र० ९:६:७ ।

(३) वृद्धसंयोग : वृद्धों के साथ । द्र० ७:१४:६, गण० १:२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशिष्टबलाभावे समबलैस्तुल्यबलसंघैर्वा बलवतः संभूय तिष्ठेद् यान्न-मन्त्रप्रभावशक्तिभ्यामतिसंदध्यात् ।

३. विशिष्ट बली नृपों के अभाव की स्थिति में बलवान् शत्रु के समान बली अथवा तुल्य बल वाले संघों के साथ होकर, तब तक उसका प्रतिरोध करे, जब तक मन्त्र शक्ति और प्रभाव शक्ति से वह उनमें भेद न उत्पन्न कर दे ।

तुल्यमन्त्रप्रभावशक्तनां विपुलारम्भतो विशेषः ।

४. समान मन्त्र-प्रभाव शक्तिवाले नृपों में विपुलारम्भवान् का आश्रय ले ।

समबलाभावे हीनबलैः शुचिभिरुत्साहिभिः प्रत्यनीकभूतैर्बलवतः संभूय-तिष्ठेद् यान्न मन्त्रप्रभावोत्साहशक्तिभरतिसंदध्यात् ।

५. समान बली नृप के अभाव में शत्रु से हीन बल वाले, पवित्र हृदय से युक्त, उत्साही, शत्रु के शत्रुभूत अनेक नृपों से संयुक्त होकर, शत्रु का सामना करे, जब तक वह मन्त्र-प्रभाव एवं उत्साह शक्तियों से उन्हें भिन्न न कर दे ।

तुल्योत्साहशक्तीनां स्वयुद्धभूयिलाभाद्विशेषः ।

६. समान उत्साह शक्ति वाले नृपों में स्वयुद्ध भूमि वाला नृपति श्रेष्ठ है ।

तुल्यभूमीनां स्वयुद्धकाललाभाद्विशेषः ।

७. तुल्य भूमि वाले नृपों में स्वयुद्ध कालवाला नृपति श्रेष्ठ है ।

पाठभेद :

'तुल्यवलसंघैर्वा' का तेलगू अनुप्रनिलिपि में 'तुल्यवलसंख्यैर्वा' पाठभेद मिलता है । तथा 'यान्न' के स्थान पर 'यावन्न' का प्रयोग मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) विशिष्ट : विलक्षण, विशेष, असामान्य । द्र० ६:७:१५:१ ।

(२) तुल्यबल संघै : समान संख्या के सैनिक, समबल ।

(३) मन्त्रशक्ति : द्र० ७:१४:१६ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) विपुलारम्भ : पुष्कल द्रव्य, सामग्री लेकर जुटे, या जिस राजा के पास अस्त्र तथा युद्ध सामग्री अधिक रहती है । गण० २:३२० :

पाठ भेद :

'यान्न' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यावन्न' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) शुचि : शुद्ध या पवित्र । गण० २: १४५ ।

(२) प्रत्यनीक : शत्रु विपक्षी, शत्रु सेना ।

पादटिप्पणी :

६. (१) स्वयुद्धभूमि : अपने लिए युद्धोपयोगी भूमि । स्व से तात्पर्य सहायक कार्यों से है, न कि राजा जिसपर आक्रमण किया जाता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) तुल्यभूमि : समान, सहायक अनुकूल के प्रदेश ।

(२) स्वयुद्धकाल : अपने अनुकूल युद्ध का समय ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तुल्यदेशकालानां युग्यशास्त्रवरणतो विशेषः ।

८. तुल्य देश काल वाले नृपों में युग्य शस्त्रावरण से सम्पन्न नृपति श्रेष्ठ है।

सहायाभावे दुर्गमाश्रेयत यत्रामित्रः प्रभूतसैन्योऽपि भक्तयवसेन्धनोदकोपरोधं न कुर्यात् स्वयं च क्षयव्ययाभ्यां युज्येत ।

९. सहायक के अभाव में दुर्ग का आश्रय ले, जहाँ शत्रु प्रचुर सैन्य वाला होकर भी भक्त, यवस एवं ईन्धन में उपरोध पैदा न कर सके और स्वयं क्षय-व्यय वाला बने।

तुल्यदुर्गाणां निचयापसारतो विशेषः ।

१०. तुल्य दुर्गों में निचय एवं अपसार वाला दुर्ग श्रेष्ठ है।

निचयापसारसंपन्नं हि मनुष्यदुर्गमिच्छेदिति कौटिल्यः ।

११. राजा निचयापसार सम्पन्न मनुष्य दुर्ग की इच्छा करें, ऐसा कौटिल्य का मत है।

पादटिप्पणी :

८. (१) युग्य : सवारी वा वाहन के पशु, खर, उष्ट्र, बैलादि । द्र० ७:४:१५, ७:५:३३ ।

(२) आवरण : कवच । गण० ३:५७, १२५, २०० ।

पाठभेद :

तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वयं च' लुप्त है।

पादटिप्पणी :

९ (१) प्रभूत : प्रचुर, असंख्य, बड़ी (सेना) ।

(२) भक्त : भोजनसामग्री, भक्ष्यपदार्थ, कर्मचारियों का भत्ता ।

(३) यवस : पशुभक्ष्य, घास या चारा । द्र० २:३१:१, गण० ३:१७० ।

(४) इन्धन : जलत्नी लकड़ी । अग्नि० १: १४६:१५, १६ ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) निचय : संग्रह, समुच्चय, ढेर या स्टोर । गण० २:३१७, ३:४:२० ।

(२) अपसार : प्रत्यावर्तन, आश्रय या शरण स्थान । द्र० २:३:२, ७:७:२, ७:१३:३५, ७:१५: १२, १८, ७:१६:१, गण० २:३३७, उपग्रह १०७, ३२१ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) मनुष्य दुर्ग : जिस दुर्ग की सुरक्षा मनुष्य करता है।

(२) अपसार : द्र० ७:१५:१० ।

(३) इतिकौटिल्यः : आचार्यों एवं कौटिल्य के विचारों में कोई विशेष अन्तर नहीं है। वह केवल दुर्ग में मनुष्य के रहने का उल्लेख करता है। दुर्ग में सेना रखने पर, जोर दिया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तदेभिः कारणैराश्रयेत—'पार्ष्णिग्राहमासारं मध्यममुदासीनं वा प्रतिपादयिष्यामि; सामन्ताटविकतत्कुलीनापरुद्धानामन्यतमेनास्य राज्यं हारयिष्यामि घातयिष्यामि वा; कृत्यपक्षोपग्रहेण वाऽस्य दुर्गे राष्ट्रे स्कन्धावारे वा कोपं समुत्थापयिष्यामि; शस्त्राग्निरसप्रणिधानैरौपनिषदिकैर्वा यथेष्टमासन्नं हनिष्यामि; स्वयमधिष्ठितेन वा योगप्राणिधानेन क्षयव्ययमेनमुपनेष्यामि; क्षयव्ययप्रवासोपतप्ते वाऽस्य मित्रवर्गे सैन्ये वा क्रमेणोपजापं प्राप्स्यामि; वीवधासारप्रसारवधेन वाऽस्य स्कन्धावारावग्रहं करिष्यामि; दण्डोपनयेन वाऽस्य रन्ध्रमुत्थाप्य सर्वसंदोहेन प्रहरिष्यामि; प्रतिहतोत्साहेन वा यथेष्टं संधिमवाप्स्यामि; मयि प्रतिबद्धस्य वा सर्वतः कोपाः समुत्थास्यन्ति, निरासारं वाऽस्य मूलं मित्राटवीदण्डैरुद्घातयिष्यामि; महतो देशस्य योगक्षेममहिस्थः पालयिष्यामि; स्वविक्षिप्तं मित्रविक्षिप्तं वा मे सैन्यमिहस्थस्यैकस्थमविषह्यं भविष्यति,

१२. उन कारणों से दूर्ग का आश्रय ग्रहण करे, पार्ष्णिग्राह, आसार, मध्यम अथवा उदासीन को विरोधी शत्रुके विरुद्ध करूँगा, या सामन्त, आटविक एवं उसके विरोधी वंशजों में किसी एक द्वारा उसका राज्याहरण करूँगा अथवा उसकी हत्या करा दूँगा, अथवा शत्रु के कृत्य पक्ष को स्वानुकूल करके दुर्ग, राष्ट्र या स्कन्धावार में कोप (उपद्रव) उत्पन्न करा दूँगा, शस्त्र, अग्नि, रस (विष) प्रणिधान द्वारा या औपनिषदिक उपायों से इच्छानुसार आसन्नवर्ती का वध करूँगा, अथवा स्वयं विश्वस्तघातक पुरुषों का प्रयोग करके, उसे क्षय-व्यययुक्त करूँगा, अथवा उसके क्षय-व्यय एवं प्रवास से दुःखी मित्रवर्ग या सैन्य में क्रमशः भेद उत्पन्न करूँगा, वीवध (खाद्यवस्तु) आसार मित्रबल, ईन्धनादि की आपूर्ति वाधित कर स्कन्धावार को पीड़ित करूँगा, अथवा सेना द्वारा उसके भेद को जान कर, सर्व सैन्य समूह द्वारा प्रहार करूँगा, अथवा उसका उत्साह भंग कर इच्छानुसार सन्धि करूँगा, अथवा मेरे ऊपर आक्रमण करने वाले के प्रति सब ओर से सामन्त प्रकुपित हो जायेंगे, अथवा उसके आसार रहित मूल स्थान से मित्र सेना एवं आटविक सेना द्वारा घातित करा दूंगा, अथवा मैं यहाँ रह कर अपने विशाल देश का योग क्षेम वहन करने में समर्थ रहूँगा, अपने कार्यवश या मित्र कार्यवश अन्यत्र प्रेषित मेरी सेना यहाँ एकत्र होकर, शत्रु के लिये अनुल्लंघ्य होगी, अथवा निम्नयुद्ध, खातयुद्ध या रात्रि युद्ध में दक्ष मेरी सेना मार्ग श्रमयुक्त होकर निकट भविष्य में युद्ध कर्म कर सकेगी, अथपा विपरीत देश-काल में आकर, शत्रु बिना मेरे प्रयत्न के स्वयं क्षय-व्यय के कारण

पाठ भेद :

'पार्ष्णिग्राहमासारं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पार्ष्णिग्राहासारं' तथा 'नापरुद्धानाम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नावरुद्धानाम्' तथा 'प्रतिबद्धस्य' का 'प्रतिबन्धस्य' तथा 'मूलंमित्राटवीदण्डैर' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मूलमित्राटवीदण्डैर' तथा 'कर्म' का 'कर्मणि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१२. (१) प्रतिपादयिष्यामि : प्रयोजन १६ हैं उन्हें प्राप्त किया जाय या उन्हें अपनी तरफ मिलाकर उनकी सहायता ली जाय।

(२) स्वयम् : विजिगीषु।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निम्नखातरात्रियुद्धविशारदं वा मे सैन्यं पथ्याबाधमुक्त मासन्ने कर्म करिष्यति; विरुद्ध-देशकालमिहागतो वा स्वयमेव क्षयव्ययाभ्यां न भविष्यति; महाक्षयव्ययाभिगम्योऽयं देशो दुर्गाटव्यपसारबाहुल्यात्, परेषां व्याधिप्रायः सैन्यव्ययामानामलब्धभौमश्च, तमापद्गतः प्रवेक्ष्यति, प्रविष्टो वा न निर्गमिष्यति' इति ।

स्वयं नष्ट हो जायेगा, अथवा दुर्ग अटवी एवं अपसार की अधिकता के कारण महान् क्षय-व्यय करने में सूक्षम नृप आक्रमण कर सकेगा, शत्रु के लिये यह स्थान व्याधिजनक एवं सेना के व्यायाम योग्य भूमि से रहित है अतः यहाँ प्रवेश कर विपद्ग्रस्त होगा अथवा प्रविष्ट होकर निर्गत नहीं हो सकेगा, ऐसा माने तो दुर्गाश्रिय ले ।

कारणाभावे बलसमुच्छ्रये वा परस्य दुर्गमुन्मुच्यापगच्छेत् ।

१३. उक्त कारणों के अभाव में अथवा शत्रुबल की अधिकता में दुर्ग त्याग कर पलायित हो ?

अग्निपतङ्गवदमित्रे वा प्राविशेत् ।

१४. अथवा अग्नि में पतङ्ग तुल्य शत्रु पर टूट पड़े ?

अन्यतरसिद्धिर्हि त्यक्तात्मनो भवति इत्याचार्याः ।

१५. दूसरे उपाय से सिद्धि मिल सकती है, ऐसा आचार्यों का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

१६. कौटिल्य का यह मत नहीं है ।

संधेयातामात्मनः परस्य चोपलभ्य संदधीत ।

१७. अपनी और शत्रु की संधेय स्थिति को देख कर, सन्धि करनी चाहिए ।

विपर्यये विक्रमेण संधिमपसारं वा लिप्सेत ।

१८. विपरीत स्थिति में विक्रम द्वारा सन्धि अथवा अपसार करे ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) समुच्छ्रय : शत्रु जब बलवान हो ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) अग्निपतङ्गवाद् : आग पर फतिंगें की तरह ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अन्यतरसिद्धि : विजय या युद्ध दो में से एक ।

(२) त्यक्तात्मनो : जीवन आशा त्याग कर । गण० ३:१५८ ।

पाठ भेद :

'संधिमय' का भाषा व्याख्यान में 'सिद्धिमय' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) विपर्यय : द्र० ७:७:५ ।

(२) विक्रमेण : आक्रमण या युद्ध । द्र० १: १७:२८, १२:३:१५, ५:६:२५, ७:३:११ ।

(३) अपसारं : बचकर भाग या निकल जाना या पलायन । द्र० ७:१५:१०, गण० २:३३७, ३४०; ३:२६, १०७, १११ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संधेयस्य वा दूतं प्रेषयेत् ।

१९. अथवा संधेय राजा के पास दूत प्रेषित करे ।

तेन वा प्रेषितमर्थमानाभ्यां सत्कृत्य ब्रूयात् 'इदं राज्ञः पण्यागारम्, इदं देवीकुमाराणाम् देवीकुमारवचनात्, इदं राज्यमहं च त्वदर्पण' इति ।

२०. अथवा उसके द्वारा प्रेषित दूत को अर्थ मान द्वारा सत्कृत कर, उससे बोले—'यह राजा के लिए पण्यागार है, यह देवी एवं कुमारों के कथनानुसार उसके देवी एवं कुमारों के लिए है और यह राज्य तथा मैं तुम्हारे लिए अर्पित हैं ।'

लब्धसंश्रयः समयाचारिकवद्भर्तरि वर्तेत ।

२१. आश्रय प्राप्त कर, समयाचारिक (सेवक) सदृश भर्ता के साथ व्यवहार करे ।

दुर्गादीनि च कर्माणि आवाहविवाहपुत्राभिषेकाश्वपण्यहस्तिग्रहणसत्त्रयात्राविहारगमनानि चानुज्ञातः कुर्वीत ।

२२. दुर्गादि कर्म, आवाह, विवाह, पुत्राभिषेक, अश्वक्रय, हस्तिग्रहण, यज्ञ, अभियान. विहार गमन कर्तव्यों को इसकी अनुमति प्राप्त कर करे ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) विजित शत्रु का व्यवहार ।

पाठ भेद :—

'अहं च त्वदर्पणः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अहं च दर्पणः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) पण्यागारम् : सामान जो भेंट स्वरूप दिया जाय । द्र० २:३५:१२; ८:४:२३, २४; ९:६:२८, २९ ।

(२) देवी : महिषी, रानी ।

पाठभेद :

'समया' का देवनागरी अनुलिपि में 'सामया' पाठभेद मिलता है । तथा 'चारिक' का तंजौर में 'चारितक' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चारित' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) लब्धसंश्रय : आश्रय या शरण प्राप्तकर ।

(२) समयाचारिकावत : लोक प्रचलित चलन या प्रथा या व्यवहार । २:२१२

पाठभेद :

'षेकाश्वपण्यहस्ति' का देवनागरी अनुलिपि में 'षेकाश्वपण्यहस्ति' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) आवाह विवाह : कन्या लेना और देना । आवाह आमन्त्रण पुत्रार्थ कन्या स्वीकार करना । विवाह का अर्थ कन्या दान करना है । विवाह आठ प्रकार के होते हैं—

(१) ब्राह्म (२) दैव (३) आर्ष (४) प्राजापत्य (५) असुर (६) गन्धर्व (७) राक्षस (८) पैशाच । मनु० ३:२१, याज्ञ० १:५८:६१ । द्र० ९:६:७० । गण० २:३४१ ।

(२) सत्त्र : यज्ञ, यज्ञीय ।

(३) यात्रा : सैनिक, अभियान, उत्सव, मेला । द्र० ९:१:३४ ।

(४) अनुज्ञात : अनुमति प्राप्त । द्र० ९:७:१५: २३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वभूम्यवस्थितप्रकृतिसंधिमुपघातमपसृतेषु वा सर्वमनुज्ञातः कुर्वीत ।

२३. अपनी भूमि में स्थित प्रकृतिजनों, अमात्यों के साथ सन्धि अथवा पलायितों के प्रति उपघात प्रयोग सब कुछ उसकी आज्ञा से करे।

दुष्टपौरजानपदो वा न्यायवृत्तिरन्यां भूमिं याचेत ।

२४. अथवा पौरजानपदों के दुर्जन होने की स्थिति में न्याय वृत्ति होकर (उस नृप से) अन्य भूमि की याचना करे।

दूष्यवदुपांशुदण्डेन वा प्रतिकुर्वीत ।

२५. अथवा दूष्य तुल्य दुर्जनों पर, उपांशु दण्ड का प्रयोग कर, उनका प्रतीकार करे।

उचितां वा मित्रद्भूमिं दीयमानां न प्रतिगृह्णीयात् ।

२६. अथवा मित्र से लेकर, दी जाने वाली उचित भूमि भी न ले।

मन्त्रिपुरोहितसेनापतियुवराजानामन्यतममदृश्यमाने भर्तरि पश्येत, यथाशक्ति चोपकुर्यात् ।

२७. अपने मन्त्री, पुरोहित, सेनापति एवं युवराज में किसी के समक्ष स्वभर्ता को न देखे यथाशक्ति भर्ता का उपकार करे।

पाठभेद :

'सर्वमनुज्ञातः' का भाषा व्याख्यान में 'समनुज्ञातः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२३. (१) प्रकृति : अमात्यादिराज्यप्रकृति ।

(२) उपघात : आघात, नाश, हानि । द्र० २:१६:६, ४:२:३२, ७:१६:१२ ।

(३) अनुज्ञात : अनुमति प्राप्तकर, कार्य करना । द्र० ७:५:२३, ३:९:५ ।

पाठभेद :

'न्यायवृत्तिरन्यां' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'न्यायवृत्तिमन्यां' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२४. (१) न्यायवृत्ति : न्यायानुसार, न्यायानुकूल, न्यायाचरण भूमि का विशेषण है। द्र० ७:२:२३ ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) दूष्य : विद्रोही, विश्वासघाती । द्र० १:११:१७:, ३:१४:२७; ५:१:४, गण० ३:१५०, १७० ।

(२) उपांशु : चुपचाप दण्ड देना, गुप्त हत्या या वध । द्र० १:१३:२०, १:१७:६, गण० ३:१३६, १४४, १९४ ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) उचित : अनुकूल, उपयोगी, या योग्य या उत्तम भूमि ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) अदृश्यमाने : न दिखाई पड़े ।

(२) भर्तरि : अधिपति, अधीश्वर आदि से तात्पर्य है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दैवतस्वस्तिवाचनेषु तत्परा आशिषो वाचयेत् ।

२८. देवाराधन एवं माङ्गलिक अवसरों पर, स्वामी परक आशीर्वचनों का प्रयोग करे।

सर्वत्रात्मनिसर्गं गुणं ब्रूयात् ।

२९. सर्वत्र आत्म समर्पण एवं स्वामी के गुण का वर्णन करे।

संयुक्तबलवत्सेवी विरुद्धः शङ्कितादिभिः ।
वर्तेत दण्डोपनतो भर्तर्येवमवस्थितः ॥

३०. इस प्रकार स्वामी के पास सेना सहित सर्मपित भाव से स्थित रहकर, उसके प्रिय बली जनों की सेवा करे और उसके शङ्कित विरोधियों के साथ विरोध भाव रखे।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे बलवता विगृह्योपरोधहेतवः दण्डोपनतवृत्तं च पञ्चदशोऽध्यायः । आदितस्त्रयोदशशततमः ।

इस प्रकार सप्तम अधिकरण के अन्तर्गत षाड्गुण्य में बलवान के साथ विग्रह करके उपरोध हेतु एवं दण्डोपनत वृत्ति से सम्बद्ध पन्द्रहवाँ अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ तेरहवाँ अध्याय समाप्त।

पादटिप्पणी :

२८. (१) दैवत : देवता की या देवपूजा से तात्पर्य है।

(२) आशिषोवाच : आशीर्वचन।

पादटिप्पणी :

२९. (१) आत्मनिसर्ग : आत्म त्याग, आत्म-समर्पण।

पादटिप्पणी :

३०. (१) संयुक्तबल : मन्त्री आदि बल के कारण शक्ति को समर्पण करना।

(२) दण्डोपनत : जो अपनी सेना का समर्पण करता है। द्र० ५:१:५३, ७:२:९, ७:३:६, ७:१६:२६। गण० २:३६४।

(३) अवस्थित : अचल, दृढ़।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे पंचदशोऽध्यायः बलवता विगृह्योपरोधहेतवः दण्डोपनतवृत्तम् आदितस्त्रयोदशशततमः।

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये बलवता विगृह्योपरोधहेतवः दण्डोपनतवृत्तं च पंचदशोऽध्यायः आदितस्त्रयोदशशतः।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे पंचदशोऽध्यायः बलवता विगृह्योपरोधहेतवः दण्डोपनतवृत्तम् आदितस्त्रयोदशशततमः।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे बलवताविगृह्योपरोधहेतवः। दण्डोपनत वृत्तं पंचदशोऽध्यायः।१५। आदितस्त्रयोदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥११३॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १६

[एकविंशतिशततमं प्रकरणम्—दण्डोपनायिवृत्तम्]

एक सौ बीसवां प्रकरण—दण्डोपनायीवृत्त

अनुज्ञातसंधिपणोद्वेगकरं बलवान् विजिगीषमाणो यतः स्वभूमिः स्वर्तुवृत्तिश्च स्वसैन्यानाम्, अदुर्गापसारः शत्रुरपार्ष्णिरनासारश्च, ततो यायात् ।

१. सन्धि में हिरण्यादि देने की प्रतिज्ञा करके न देने के कारण दुःखी करने वाले को जीतने के लिये इच्छुक, बलवान् विजिगीषु अपनी सेना के लिये अपनी भूमि काल एवं जीविका की अनुकूलता होने पर तथा शत्रु के दुर्ग, अपसार, पार्ष्णि एवं आसार रहित होने पर, अभियान करे।

विपर्यये कृतप्रतीकारो यायात् ।

२. विपरीत स्थिति में प्रतीकार पूर्वक अभियान करें ।

सामदानाभ्यां दुर्बलानुपनमयेत्, भेददण्डाभ्यां बलवतः ।

३. साम एवं दान से दुर्बल तथा दण्ड-भेद से बलवान् नृपों को अपने अधीन करे ।

पाठभेद :

'ज्ञातसंधिपणोद्वेग' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ज्ञातस्कद्धिरण्योद्वेग' तथा 'अनासारश्च' का 'अनपसारश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) अनुज्ञात : द्र० ७:१५:२३ ।

(२) उद्वेग : द्र० १:१०:१०, १०:६:५० ।

(३) वृत्ति : जीविका ।

(४) अपसार : परावर्तन, परावर्तन स्थान या आश्रय या रिट्रीट । द्र० २:३:३, ७:७:२, ७:१३:२५, ७:१५:१०, १२, १८, ७.१६:१, १०:२:६, २० । गण० २:३७, ३४, ३:२६, १०७:१६१ ।

(५) आसार : सुहृद्बल । द्र० ६:२:१८, १:१६:३९, ७:६:८, २:५:५, ८ । गण० १:२२, ३:५३, १०७, १०८, १२३, १७१, २०४ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) विपर्यय : विपरीत, प्रतिकूल । द्र० ७:५:१ ।

(२) यायात् : अभियान या मार्च । द्र० ७:१:१६, ७:५:११, ७:७:२ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) उपनमयेत् : दबाना, अधीन करना, स्ववश करना, वश में करना, वशीकृत या मैत्रीभूत ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नियोगविकल्पसमुच्चयैश्चोपायानामनन्तरैकान्तराः प्रकृतीः साधयेत् ।

४. साम आदि उपायों के नियोग, विकल्प एवं समुच्चय से शत्रु प्रकृति तथा मित्र प्रकृति के नृपों को अपने अधीन करे ।

ग्रामारण्योपजीविव्रजवणिक्पथानुपालनमुज्झितापसृतापकारिणां चार्पणमिति सान्त्वमाचरेत् ।

५. ग्रामारण्योपजीवी व्रज, वणिक्पथ का अनुपालन, उज्झित, अपसृत एवं अपकारियों का अर्पण करके सामनीति का प्रयोग करे ।

भूमिद्रव्यकन्यादानमभयस्य चेति दानमाचरेत् ।

६. भूमिदान, द्रव्यदान, कन्यादान एवं अभयदान देकर, दाननीति का प्रयोग करें ।

सामन्ताटविकतत्कुलीनापरुद्धानामन्यतमोपग्रहेण कोशदण्डभूमिदाययाचनमिति भेदमाचरेत् ।

७. सामन्त, आटविक, यातव्य सम्बन्धी एवं अपरुद्ध में किसी एक को अनुगृहीत कर, कोश, दण्ड, भूमि एवं दाय की याचना करके नीति का प्रयोग करें ।

पादटिप्पणी :

४. (१) नियोग : काम में लगाना, या उपयोग, प्रयोग, प्रयोज्य, या उपाय करना, उचित होगा इस प्रकार सोच विचार कर । द्र० ९:७:७३, ७६, १५:१:६३, मनु० ९:५९, गण० २:३४४, ३:१००, ३:२६१ ।

(२) विकल्प : अमुक उपाय करना, उचित होगा, विचार करना । द्र० १५:१:६५, गण० २: ३४४, ३:१०० ।

(३) समुच्चय : संग्रह, संघात, समष्टि उपायों का एक साथ किया गया प्रयोग । द्र० १५:१:६७, गण० २:३४४ ।

(४) अनन्तरैकान्तरा : द्र० ६:२:१४ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) व्रज : व्रज का अर्थ समूह, समुच्चय, गोशाला, गोष्ठ, पशुओं का झुण्ड होता है । मथुरा से ८४ कोस चारों ओर की भूमि व्रजमण्डल कहा गया है । इसकी परिक्रमा की जाती है । द्र० ७:१४:२५ ।

(२) वणिक्पथ : द्र० २:१:१९,३८, २:६:८, ७:१२:१७ ।

(३) उज्झिता : परित्यक्त । विष्णु० ३:१५:७ ।

(४) अपसृत : छोड़कर गया या भागा व्यक्ति, भगोड़ा । द्र० ७:६:२२, ७:२:२३, ८:५:८, गण० ३:३५, १३५ ।

(५) सान्त्वम् : सुलह करना, शान्त करना । गण० ३:७४ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) अभय : भय से मुक्ति ।

पाठभेद :

'नापरुद्धानाम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नावरुद्धानाम्' पाठभेद मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकाशकूटतूष्णींयुद्धदुर्गलम्भोपायैरमित्रप्रग्रहणमिति दण्डमाचरेत् ।

८. प्रकाशयुद्ध, कूटयुद्ध, तूष्णीं युद्ध एवं दुर्गलम्भोपायों से शत्रु को अधिगृहीत कर दण्ड नीति का प्रयोग करें ।

एवमुत्साहवतो दण्डोपकारिणः स्थापयेत्, स्वप्रभाववतः कोशोपकारिणः, प्रज्ञावतो भूम्युपकारिणः ।

९. इस प्रकार स्वाधीन उत्साही के स्वदण्डोपकारो, स्वप्रभाव युक्त को स्वभूम्युपकारी नियुक्त करे ।

पादटिप्पणी :

८. (१) प्रकाशयुद्ध : निर्दिष्ट देश काल की सूचना के साथ युद्ध करना, खुलकर लड़ना । द्र० ७:६:४०, गण० ३:२७२ ।

(२) कूटयुद्ध : छिपकर या गुप्त युद्ध । बिना देश काल का सूचना या अनिर्दिष्ट देश काल के साथ युद्ध । द्र० ७:६:१७, ४२, १०:३:२; १३:१:१७, गण० ३:२७२ ।

(३) तूष्णींयुद्ध : शान्त युद्ध, गुप्त उपायों से शत्रु पर विजय पाना । द्र० ७:६:४१, १२:१३:४; १३:५:७१, गण० २:३७३ ।

(४) दुर्गलब्धोपाय : द्र० अधिकरण १३, गण० ३:१८० ।

पादटिप्पणी :

९. (१) उत्साहवतो : उत्साह शक्ति युक्त । गण० ३:४३ ।

(२) दण्डोपकारिण : सेना के लिए सहायक, सेना का उपकार करने वाले । द्र० २:१२:२१; ७:१३:२९, गण० ३:४३ ।

(३) प्रभाववत : प्रभु शक्ति सम्पन्न ।

(४) कोशोपकारिण : खजाने के लिए सहायक, कोश के लिए उपकारी ।

(५) प्रज्ञावतः : बुद्धि विवेक शक्ति युक्त । गण० १:३६ ।

(६) भूम्युपकारिणः : भूमि के लिए सहायक, भूमि के लिए उपकारी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेषां पण्यपत्तनग्रामखनिसंजातेन रत्नसारफल्गुकुप्येन द्रव्यहस्तिवनव्रजसमुत्थेन यानवाहनेन वा यद्बहुश उपकरोति तच्चित्रभोगम् ।

१०. उन स्वाधीन नृपों में पण्य-पत्तन, ग्राम, खान से उत्पन्न रत्न, सार, फल्गु एवं कुप्य से द्रव्यवन, हस्तिवन एवं व्रज से प्राप्त यान एवं वाहन से जो मित्र नृप का अधिक उपकार करता है, वह मित्र 'चित्रभोग' कहा जाता है ।

यद्दण्डेन कोशेन वा महदुपकरोति तन्महाभोगम् ।

११. जो दण्ड अथवा कोश से महान् उपकार करता है, वह मित्र 'महाभोग' कहा जाता है ।

यद्दण्डकोशभूमिभिरुपकरोति तत्सर्वभोगम् ।

१२. जो दण्ड, कोश, एवं भूमि से उपकार करता है, वह 'सर्व भोग' कहा जाता है ।

यदमित्रमेकतः प्रतिकरोति तदेकतोभोगि ।

१३. जो मित्र एक शत्रु का प्रतीकार करता है, वह 'एकतो भोगी' कहा जाता है ।

पाठभेद :

'रत्नसारफल्गुकुप्येन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रत्नसारकुप्येन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) पण्यपत्तन : व्यापारिक नगर या बन्दरगाह या पोर्ट या बन्दरगाह का उत्पादन । द्र० २:१:१९; २:१६:२४; ७:२:२८; ७:१०::२; ७:१२:२१ ।

(२) सार : द्र० ५:६:४६; १०:५:४३, ४६, ४९; २:५:८; २:९:२ । गण० १:२१; ३:१३२ ।

(३) फल्गु : द्र० २:५:८; २:७:२; २:११:१; २:२१:२९-३० ।

(४) कुप्य : द्र० १:१६:२९; २:१७:१; गण० १:७, ३२, २४६, ३:१५७ ।

(५) चित्रभोग : अनेक प्र कार से सहायता या उपकार या राजा की वह जो अनेक प्रकार सहायता करता है । गण० २:२९ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) महाभोग : बड़ा उपयोगी, भारी आनन्द या उपकार, करता है । द्र० ७:९:१३, १६, गण० ३:२९ ।

पाठभेद :

'भूमिभिरुप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भूमिरूप' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) सर्वभोग : धन आदि में सब प्रकार की सहायता करने वाला या उपयोगी । उपकार या लाभ या सहायता करना ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) एकतोभोगी : एक तरफ से उपयोगी । गण० २:२९७, ३४५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदमित्रमासारं चोभयतः प्रतिकरोति तदुभयतोभोगि ।

१४. जो मित्र शत्रु एवं आसार दोनों का प्रतीकार करता है, वह 'उभयतोभोगी' कहा जाता है ।

यदमित्रासारप्रतिवेशाटविकान् सर्वतः प्रतिकरोति तत्सर्वतोभोगि ।

१५. जो शत्रु, आसार प्रतिवेशी एवं आटविकों का सब ओर से प्रतीकार करता है, वह 'सर्वतोभोगी' कहा जाता है ।

पार्ष्णिग्राहश्चाटविकः शत्रुमुख्यः शत्रुर्वा भूमिदानसाध्यः कश्चिदासाद्येत, निर्गुणया भूम्यैनमुपग्राहयेत्, अप्रतिसंबद्धया दुर्गस्थम्, निरुपजीव्ययाऽऽटविकम्, प्रत्यादेयया तत्कुलीनं शत्रोः, अपच्छिन्नया शत्रोरपरुद्धम्, नित्यामित्रया श्रेणीबलम्, बलवत्सामन्तया संहतबलम्, उभाभ्यां युद्धे प्रतिलोमम्, अलब्धव्यायामयोत्साहिनम्,

१६. पार्ष्णिग्राह, अटाविक, शत्रु का प्रमुख अधिकारी, अथवा शत्रु भूमि प्रदान द्वारा अधीन करने योग्य हो तो गुण रहित भूमि प्रदान कर, इसे वश में करें, दुर्गस्थ पार्ष्णिग्राह आदि को दुर्ग से असंबद्ध दूरस्थ भूमि देकर, आटविक को निरुपजीव्य भूमि देकर, शत्रु कुलोत्पन्न को पुनः ग्राह्य भूमि देकर, शत्रु नियन्त्रित को शत्रु से गृहीत भूमि देकर, श्रेणीबल को नित्य शत्रु (चोरादि युक्त) युक्त भूमि प्रदान कर, संहतबल को बलवान् सामन्त वाली भूमि देकर, युद्ध में विपरीत कर्मों को नित्य शत्रु एवं बली सामन्त वाली भूमि देकर, उत्साही शत्रु को व्यायाम के अयोग्य भूमि देकर, शत्रु

पाठभेद :

'चोभयतः प्रतिकरोति' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चोपकरोति' तथा भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'चापकरोति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) उभयतोभोगि : दोनों ओर उपकार करना या दोनों तरफ से उपयोगी । गण० २:३४५

पादटिप्पणी :

१५. (१) प्रतिवेश : पड़ोसी, द्र० ३:४:४, ९:७:१८ । गण० २:३६४ ।

(२) सर्वतोभोगि : सब ओर या चारों तरफ से उपयोगी होना । द्र० ७:१६:१२, गण० २:१९७: ३४५ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) पार्ष्णिग्राह : द्र० ७:११:३९, गण० २:३३२ ।

(२) आटविक : जंगल का सरदार । गण० १:५७; ३:१७०, १९३ ।

(३) शत्रुमुख्य : मुख्य अधिकारी ।

(४) शत्रुर्वा : अथवा, स्पष्ट शत्रु ।

(५) अप्रतिसवध्वा : असंलग्न जाती हुई । गण० २:३४६ ।

(६) अपच्छिक : छीन लेना, सहसा ग्रहण ।

(७) श्रेणीबलम् : पट्टी या युद्ध का श्रृंखला वद्ध होना । द्र० ९:२:४ ।

(८) सामन्त : पड़ोसी राजा । गण० २:४८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शून्ययाऽरिपक्षीयम्, कर्शितयाऽपवाहितम्, महाक्षयव्ययनिवेशया गतप्रत्यागतम्, अनपाश्रययाप्रत्यपसृतम्, परेणाऽनधिवास्यया स्वयमेव भर्तारमुपग्राहयेत् ।

पक्षीय को शून्य भूमि देकर, सन्धि भंग कर्ता को शत्रु सैन्य एवं आटविक के उपद्रव से युक्त भूमि देकर, गत प्रत्यागत को महान् क्षय-व्यय से बसाने योग्य भूमि देकर, प्रत्यपसृत को दुर्गादि रहित भूमि देकर तथा भूतपूर्व भूस्वामी को दूसरे द्वारा न बसने योग्य उसकी भूमि देकर वश में करे।

तेषां महोपकारं निर्विकारं चानुवर्तयेत् ।

१७. इनमें महान् उपकारी एवं निर्विकार भाववाले का सदैव अनुवर्तन करे।

प्रतिलोममुपांशुना साधयेत् ।

१८. विपरीत आचरण वाले को उपांशु दण्ड से सिद्ध करे।

उपकारिणमुपकारशक्त्या तोषयेत् ।

१९. उपकार कर्ता को उपकार शक्ति द्वारा सन्तुष्ट करे।

प्रयासतश्चार्थमानौ कुर्याद्, व्यसनेषु चानुग्रहम् ।

२०. प्रयासानुरूप धन-मान दे और विपत्ति में अनुगृहीत करे।

स्वयमागतानां यथेष्टदर्शनं प्रतिविधानं च कुर्यात् ।

२१. स्वयं आगन्तुकों को यथेष्ट दर्शन देने एवं आशंका की स्थिति में रक्षा प्रति विधान की व्यवस्था करे।

---

(९) अपवाहितम् : विलोभन, बलात् अपहरण। द्र० १२:३:१४, गण० २:३४६, ३:२१०।

(१०) प्रत्यपसृतम् : शत्रु सेनाका भागा, भगोड़ा। द्र० १३:४:५१, गण० ३:३४६, ३:२०६।

(११) भर्ता : स्वामी।

पाद टिप्पणी :

१७. (१) अनुवर्तयेत् : अनुसरण या अनुगमन करना : द्र० २:७:२३, ७:१९:१९, ३३।

पादटिप्पणी :

१८. (१) प्रतिलोम : प्रतिकूल या विरोधी। गण० ३:१००।

(२) उपांशु : मौन या गुप्त या चुपचाप। द्र० १:१३:२०, १:१७:६।

कौ०—४३

पादटिप्पणी :

१९. (१) तोषयेत् : सन्तुष्ट, या प्रसन्न या सुखी करना।

पाठभेद :

'अर्थमानौ' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अर्थमाने' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२०. (१) व्यसन : आपत्ति, आपदा, विपत्ति। द्र० ३:४:२, गण० ३:२।

पादटिप्पणी :

२१. (१) प्रतिविधान : व्यवस्था या प्रतिकार।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिभवोपघातकुत्सातिवादांश्चैषु न प्रयुञ्जीत ।

२२. इन स्वाधीन नृपों का परिभव, उपघात; कुत्सा एवं अतिवाद न करे ।

दत्वा चाभयं पितेवानुगृह्णीयात् ।

२३. अभयदान देकर, पिता तुल्य अनुगृहीत करे ।

यश्चास्यापकुर्यात् तद्दोषमभिविख्याप्य प्रकाशमेनं घातयेत् ।

२४. जो अपकार करे, उसका दोष प्रसिद्ध कर प्रकट रूप से उसका वध कराये ।

परोद्वेगकारणाद्वा दाण्डकर्मिकवच्चेष्टेत ।

२५. अथवा अन्य दण्डोपनतों के उद्विग्न होने का भय होने पर, दाण्डकर्मिकोक्त उपायों आश्रय ले ।

न च हतस्य भूमिद्रव्यपुत्रदारानभिमन्येत ।

२६. वध किये गये उसकी भूमि, द्रव्य, पुत्र एवं स्त्री पर अधिकार न करे ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) परिभव : अपमान, तिरस्कार, निरादर ।

(२) उपघात : प्रहार, वध । मनु० ६:४७, नारद० ४३:११५, द्र० २:१६:६, ४:२:३३ ।

(३) कुत्सा : 'दुर्वचन, भर्त्सना । मनु० ४१:६३, भवि० ४:२०५:८४ ।

(४) अतिवाद : अतिप्रशंसा, कठोर वचन, अतिरंजना, अधिक्षेप, उपालम्भ । द्र० ४:१:४९, भवि० १:१९६, ३, मत्स्य० २८:८, विष्णु० ५:३७:४० ।

पाठभेद :

'यश्चास्यापकुर्यात्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यस्याश्चापकुर्यात्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) प्रकाश : प्रकट या खुले आम । द्र० ७:६:१७ ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) पर : अन्यान्य दूसरे ।

(२) दाण्डकर्मिकवत् : ५:१, प्रकरण० ८९

पाठभेद :

'हतस्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हृतस्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) अभिमन्येत : अभिलाषा, इच्छा लालसा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुल्यानस्य स्वेषु पात्रेषु स्थापयेत् ।

२७. इसके कुलोत्पन्न जनों को उनके अनुरूप स्थानों पर नियुक्त करे।

कर्मणि मृतस्य पुत्रं राज्ये स्थापयेत् ।

२८. कर्मरत रहकर, मरे हुए के पुत्र को राज्य पर, स्थापित करे।

एवमस्य दण्डोपनताः पुत्रपौत्राननुवर्तन्ते ।

२९. इस प्रकार दण्डोपनत नृप इस विजिगीषु के पुत्र-पौत्र के अनुगामी बनते हैं।

यस्तूपनतान् हत्वा बद्ध्वा वा भूमिद्रव्यपुत्रदारानभिमन्येत तस्योद्विग्नं मण्डलमभावायोत्तिष्ठते ।

३०. जो विजिगीषु नृप उपनत नृपों को मार कर या बन्दी बनाकर, उसके द्रव्य, पुत्र, स्त्री को अधिकृत कर लेता है, इससे उद्विग्न राजमण्डल उसके विनाशार्थ उद्यत हो जाता है।

ये चास्यामात्याः स्वभूमिष्वायत्तास्ते चास्योद्विग्ना मण्डलमाश्रयन्ते ।

३१. उसके जो अमात्य स्वभूमि (स्वकार्यों) पर, संलग्न रहते हैं, वे भी उससे उद्विग्न होकर राजमण्डल का आश्रय ग्रहण कर लेते हैं।

पादटिप्पणी :

२७. (१) कुल्यान् : स्वकुल सम्भूत, कुटुम्ब के सदस्य।

(२) पात्रेषु : उचित या योग्य स्थान से तात्पर्य है।

पादटिप्पणी :

२९. (१) अनुवर्तन : सामान लाना, अनुगमन, अनुसरण। द्र० २:७:२३, ७:१६:१७।

पादटिप्पणी :

३०. (१) मण्डलम् : मण्डल के बारह प्रकार के राजाओं की कल्पना की गई है। (१) विजिगीषु (२) शत्रु (३) मित्र (४) शत्रु का मित्र (५) मित्र का मित्र (६) शत्रु के मित्र का मित्र (७) पार्ष्णिग्राह (८) आक्रन्द (९) पार्ष्णिग्राहासार (१०) आक्रन्दासार (११) मध्यम और (१२) उदासीन। द्र० ६:२:१९:१३, गण० १:१४, १७, २२; २:३५९, ३:२३५, २०।

पाठ भेद :

'स्वभूमिष्वायत्तास्ते' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वभूमिष्वायुक्तासु' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३१. (१) स्वभूमिषु : अपने कार्यों में।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वयं वा राज्यं प्राणान् वाऽस्याभिमन्यन्ते ।

३२. अथवा स्वयं उसके राज्य या प्राणों को ले लेते हैं।

स्वभूमिषु च राजानस्तस्मात्साम्नाऽनुपालिताः ।
भवन्त्यनुगुणा राज्ञः पुत्रपौत्रानुर्वर्तिनः ।।

३३. इसलिये स्वभूमि का उपभोग कर्ता एवं सामनीति से पालित राजा विजिगीषु के अनुकूल रहकर उसके पुत्र-पौत्र के अनुगामी बनते हैं।

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे दण्डोपनायिवृत्तं षोडशोऽध्यायः। आदितः चतुर्दशशततमः ।

सप्तम अधिकरण के अन्तर्गत दण्डोपनायीवृत्त सम्बद्ध सोरहवां अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ चौदहवां अध्याय समाप्त।

पाठभेद :

'स्वयं वा राज्यं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वयं राज्यं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) अनुर्वर्तिनः : अनुसरण करने वाले, अनुयायी, आज्ञाकारी । द्र० ७:१६:१७, २९ ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे षोडशोऽध्यायः दण्डोपनायिवृत्तम् आदितश्चतुर्दश शततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये दण्डोपनायिवृत्तं षोडशोऽध्यायः आदितश्चतुर्दशशततमः ।

दसाकसंस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रें षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे षोडशोऽध्यायः दण्डोपनायिवृत्तम् आदितश्चतुर्दशशततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति वाड्गुण्येसप्तमेऽधिकरणे दण्डोपनायिवृत्तं षोडशोऽध्यायः ।१६। आदितश्चतुर्दशाधिकशततमोऽध्यायः ।।११४।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १७

[द्वाविंशतिशततमं प्रकरणम्—संधिकर्म; त्रयोविंशतिशततमं प्रकरणम्— समाधिमोक्षः]

एक सौ बाइसवां प्रकरण—संधिकर्म ।
एक सौ तेईसवां प्रकरण—समाधि मोक्ष ।

शमः संधिः समाधिरित्येकोऽर्थः ।

१. शम, सन्धि एवं समाधि, यह एक ही अर्थ है ।

राज्ञां विश्वासोपगमः शमः संधिः समाधिरिति ।

२. राजाओं का विश्वासोपगम शम, सन्धि एवं समाधि है ।

'सत्यं शपथो वा चलः संधिः, प्रतिभूः प्रतिग्रहो वा स्थावरः' इत्याचार्याः ।

३. सत्य या शपथ पूर्वक कृत सन्धि चल-सन्धि एवं प्रतिभू या प्रतिग्रह पूर्वक कृत सन्धि स्थायी संधि होती है, ऐसा आचार्यों का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

४. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है ।

पादटिप्पणी :

प्रकरण—१२२—१-३१ सूत्र

,, —१२३—३२-६१ सूत्र

१. (१) शाम : शान्ति, समृद्धि । द्र० ६:२।१, ३, गण० १:१४:, २६४; २:२३; ३४९:३:१२७ ।

(२) सन्धि : द्र० ७:१:६:७:७:१३, ४:६:१६, गण० १:१६;२:२३, ३४९ ।

(३) समाधि : दृढ़ीकरण, प्रमाणीकृत, समर्थन प्रतिभू, बंधक, आदि । द्र० १:१६:३४, ४:६:७, ७:१७:२, ३२, गण० २:३४९ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) सत्यं शपथः : सत्यपूर्वक शपथ द्वारा स्थाई होती है ।

(२) चलसन्धि : अस्थिर सन्धि ।

(३) प्रतिभू : जामिन, जमानतदार । गण० २: ३४९ ।

(४) प्रतिग्रह : शरीर बन्धक रखना । द्र० ३: १४:३८, ७:१७:३, ५:८:११, गण० २:३४९, ३५०, ३:१११, १३६, १३७ ।

(५) स्थावर : स्थिर, उन्नत सन्धि । गण० २: ३४९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सत्यं शपथो वा परत्रेह च स्थावरः संधिः इहार्थ एव प्रतिभूः प्रतिग्रहो वा बलापेक्षः ।

५. सत्य अथवा शपथ पूर्वक कृत्य सन्धि परलोक और इस लोक में स्थायी होती है, प्रहितभू अथवा प्रतिग्रह केवल इस लोक में उपयोगी और बलापेक्षी होता है।

'संहिताः स्मः' इति सत्यसंधाः पूर्वे राजानः सत्येन संदधिरे ।

६. 'हम संधिबद्ध हैं' इस प्रकार सत्य प्रतिज्ञ पूर्ववर्ती राजा सत्य से संधियुक्त होते थे।

तस्यातिक्रमे शपथेन अग्न्युदकसीताप्रकारलोष्टहस्तिस्कन्धाश्वपृष्ठरथोपस्थशस्त्ररत्नबीजगन्धरससुवर्णहिरण्यान्यालेभिरे 'हन्युरेतानि त्यजेयुश्चैनं यः शपथमतिक्रामेत्' इति ।

७. उस शपथ का अतिक्रमण होने पर शपथ पूर्वक अग्नि, जल, सीता, भूमि, प्राकार, लोष्ठ, हस्तिस्कन्ध, अश्वपृष्ठ, रथोपस्थ, शास्त्र, रत्न, बीज, गन्ध, रस, सुवर्ण एवं हिरण्य का स्पर्श करते थे ये वस्तुएँ उसे मार डालें या त्याग दें जो शपथ का अतिक्रमण करे।

पाठभेद :

'बलापेक्षः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वलाक्षेप' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) शपथ : सोगन्ध, मनु० ८:१०९ ।

(२) परत्र : परलोक में या भावी जन्म में, मनु० ३:२, ५, ५:१६६, ८:१२७ ।

(३) प्रतिग्रह : द्र० ७:१६:३ । गण० २:३४९, ३५०. ३:१११:१३६ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) सत्यसंधा : अपने वचन पर दृढ़ रहने वाले सत्यप्रतिज्ञ ।

(२) पूर्वे राजानः : पूर्व के राजागण यथा हरिश्चन्द्र, नल, युधिष्ठिर आदि ।

पाठ भेद :

'हन्युरे' तेलगू अनुप्रतिलिपि में नहीं है।

पादटिप्पणी :

७. (१) अग्नि : अग्नि ।

(२) उदक : जल : गण० ३:१७५ ।

(३) सीता : हल के फाल से भूमि के बनाने वाली रेखा, जोती भूमि का कूड़ा । द्र० २:१५:१ । गण० १:७, २३०, ३५० ।

(४) प्रकारलोष्ट : प्रकार घर की मिट्टी का ढेला, ईंटा आदि ।

(५) रथोपस्थ : रथ चालक का आसन ।

(६) बीज : धान्यादि का बीया ।

(७) गन्ध : सुगन्धि यथा चन्दनादि ।

(८) रस : घृतादि । गण० ३:१७३, ९८, २३२ ।

(९) हन : मारना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शपथातिक्रमे महतां तपस्विनां मुख्यानां वा प्रातिभाव्यबन्धः प्रतिभूः ।

८. शपथ का अतिक्रमण होने पर, महान् तपस्वियों अथवा प्रधानजनों का प्रतिभूस्वरूप होना विश्वास स्थान है ।

तस्मिन् यः परावग्रहसमर्थान् प्रतिभुवो गृह्णाति, सोऽतिसंधत्ते ।

९. उसमें जो दूसरों को निगृहीत करने में जनों को प्रतिभू बनाता है, वह लाभान्वित होता है ।

विपरीतोऽतिसंधीयते ।

१०. जो उसके विपरीत को प्रतिभू बनाता है वह, ठगा जाता है ।

बन्धुमुख्यप्रग्रहः प्रतिग्रहः ।

११. वन्धुमुख्यों को वन्धक रखना, प्रतिग्रह है ।

तस्मिन् यो दूष्यामात्यं दूष्यापत्यं वा ददाति, सोऽतिसंधत्ते ।

१२. इसमें जो दूष्य अमात्य या दूष्य अपत्य को बन्धकके रूप में होता है, वह लाभवान् होता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) महतां : महान, बड़े आदमी ।

(२) तपस्विनां : तपस्वी लोग ।

(३) मुख्य : ग्राम मुख्य लोग । द्र० १०:१२:२५, १:१६:७, १:१९:१३ ।

(४) प्रतिभाव्य : जामिन होना ।

(५) प्रतिभू : जामिन । गण० ३:३४९ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) अवग्रह : दमन, निग्रह या नियन्त्रण या दमन में समर्थ । द्र० १:८:३१, १:१५:३७ ५:१:३, २१, ५:६:१०, ७:१८:१०, ८:३:१७, ९:३:२३, २४ ।

(२) अतिसंधत्ते : विजय, आगे निकल जाना । द्र० ७:१३:१५ ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) विपरीतो : इसके विपरीत अर्थात् जो जमानत नहीं पाता ।

पादटिप्पणी :

११. (१) बन्धु : सम्बन्धी, बन्धुबान्धव ।

(२) प्रतिग्रह : दूसरे के विश्वास के लिए बंधक रखना स्वीकार करना । द्र० ७:१७:३, ५, गण० ३:३४९, ३५०, ३:१११, १३३ ।

पाठभेद :

'दूष्यामात्यं' का देवनागरी अनुलिपि में 'दूष्य-दूष्यामात्यं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) दूष्य : द्र० १:११:१७; ३:१४:२७; ५:१७:४ ।

(२) अतिसन्धेत्ते : अति लाभ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विपरीतोऽतिसंधीयते ।

१३. उसके विपरीत ठगा जाता है।

प्रतिग्रहग्रहणविश्वस्तस्य हि परेश्छिद्रेषु निरपेक्षः प्रहरति ।

१४. प्रतिग्रह को ग्रहण करके विश्वस्त जन से निर्बल स्थानों पर वह शत्रु प्रहार करता है, जो बन्धक के प्रति निरपेक्ष होता है।

अपत्यसमाधौ तु कन्यापुत्रदाने ददत्तु कन्यामतिसंधत्ते ।

१५. अपत्य को बन्धक रखकर, संधि करने के विषय में यदि कन्या या पुत्र को बंधक रखना हो, तो कन्या को बन्धक रखने वाला लाभ भाजन बनता है।

कन्याह्यदायदा परेषामेवार्थायाक्लेश्या च

१६. कन्या दायभाग ग्रहण नहीं करती तथा वह अन्य के प्रयोजनार्थ एवं शत्रु को क्लेश देने वाली नहीं होती है।

विपरीतः पुत्रः ।

१७. पुत्र उसके विपरीत होता है अर्थात वह दायभागी स्वप्रयोजनार्थं एवं शत्रु क्लेशकर होता है।

पुत्रयोरपि यो जात्यं प्राज्ञं कृतास्त्रमेकपुत्रं वा ददाति सोऽति संधीयते।

१८. पुत्रों ने भी जो जात्य, प्राज्ञ, शूर, कृतास्त्र अथवा एकलौते पुत्र को बंधक रखता है वह ठगा जाता है।

पादटिप्पणी :

१४. (१) परं : जो बन्धक देना है।

(२) छिद्र : दुर्बल स्थान। द्र० २:३:६, ७:६: १३, २८, गण ३:१८३।

(३) निरपेक्ष : अपेक्षा नहीं रखना।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अपत्य : सन्तान बच्चे सन्तति।

पाठभेद :

'ह्यदायदा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ह्यादाय' तथा 'अर्थायाक्लेश्याच' का तंजौर में 'अर्थायक्लेश्या च' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में अनर्थायक्लेशाय च तथा भाषा व्याख्यान में 'अर्थाय क्लेशाय च' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) दायाद : द्र० ३:१३:२०, गण० ३: १७५।

(२) परेषाम् : पति तथा उसके कुटुम्ब से तात्पर्य है।

(३) अक्लेश्या : पीड़ा या दुःख न देना से तात्पर्य है।

पाठभेद :

'यो' तेलगू अनुप्रतिलिपि में लुप्त है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) जात्य : कुलीन, द्र० ४:२:१५, ७: १७:२०, ८:२:३३।

(२) प्राज्ञं : द्र० १:९:३।

(३) कृतास्त्र : अस्त्र आयुध विद्या में प्रशिक्षित।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विपरीतोऽतिसंधत्ते ।

१९. उसके विपरीत करने वाला लाभान्वित होता है।

जात्यादजात्यो हि लुप्तदायादसंतानत्वादाधातुं श्रेयान् प्राज्ञादप्राज्ञो मन्त्रशक्तिलोपात्, शूरादशूरो उत्साहशक्तिलोपात्, कृतास्त्रादकृतास्त्रः प्रहर्तव्यसंपल्लोपात्, एकपुत्रादनेकपुत्रो निरपेक्षत्वात् ।

२०. कुलीन की अपेक्षा अकुलीन का बन्धक रखना इसलिये श्रेष्यस्कर होता है कि वह दायभाग के अधिकार से रहित की संतान होता है, प्राज्ञ की अपेक्षा अप्राज्ञ का आधान करना उत्तम होता है क्योंकि उसमें मन्त्र शक्ति का लोप होता है, शूर की अपेक्षा अशूर को बंधक रखना अच्छा होता है क्योंकि वह उत्साह रहित होता है, शस्त्र विद्या सम्पन्न की अपेक्षा शस्त्रविद्या रहित को बंधक करना उत्तम होता है क्योंकि वह प्रहर्तव्य संपत्ति से रहित होता है, एक पुत्र वाले की अपेक्षा अनेक पुत्रों वाले को बंधक करना उचित है क्योंकि उसके प्रति अपेक्षा कम होती है।

जात्यप्राज्ञयोर्जात्यमप्राज्ञमैश्वर्यप्रकृतिरनुवर्तते, प्राज्ञमजात्यं मन्त्राधिकारः ।

२१. जात्य एवं प्राज्ञ में अप्राज्ञ भी जात्य का ऐश्वर्य प्रकृति अनुगमन करती है, अजात्य प्राज्ञ का अनुगमन मंत्राधिकार करता है।

मन्त्राधिकारेऽपि वृद्धसंयोगाज्जात्यः प्राज्ञमतिसंधत्ते ।

२२. मन्त्राधिकार में भी वृद्धसंयोग से जात्य प्राज्ञ से आगे बढ़ जाता है।

पाठ भेद :

'लुप्तदायाद' का देवनागरी अनुलिपि में 'लुब्धदायाद' पाठभेद मिलता हैं।

पादटिप्पणी :

२०. (१) लुप्त दायाद : जो उत्तराधिकारी का न होना।

(२) अशूर : कायर भीरु।

(३) प्रहर्तव्य संपल्लोपात् : प्रहार या शस्त्र चलाने में निपुण या गुणी।

पाठभेद :

'प्राज्ञयोर्जात्यम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्राज्ञयोरजात्यम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२१. (१) जात्य : औरस, धर्मज्ञ पुत्र से तात्पर्य है। गण० २:३५१

कौ०—४४

(२) प्राज्ञ : बुद्धिमान। द्र० ७:१७:१८।

(३) ऐश्वर्य प्रकृति : स्वाभाविक प्रशासकीय प्रकृति। द्र० ८:२:२३, ३:६:१४।

(४) मन्त्राधिकार : सलाह देने का अधिकारी या योग्य। द्र० २:३:७, गण० १:७१, २:३५२।

पाठभेद :

'जात्यः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'जात्यकः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२२. (१) मन्त्राधिकार : द्र० २:३:७, ७:१७:२।

(२) जात्य : द्र० ७:१७:१८, २०:२१, ७:१७:२१।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राज्ञशूरयोः प्राज्ञमशूरं मतिकर्मणां योगोऽनुवर्तते, शूरमप्राज्ञं विक्रमाधिकारः ।

२३. प्राज्ञ एवं शूर में प्राज्ञ अशूर का अनुगमन बुद्धि कर्मों का योग करता है, शूर अप्राज्ञ का विक्रमाधिकार अनुगामी होता है ।

विक्रमाधिकारेऽपि हस्तिनमिव लुब्धकः प्राज्ञः शूरमतिसंधत्ते ।

२४, विक्रमाधिकार में भी प्राज्ञ शूर को उसी प्रकार वश में कर लेता है, जैसे लुब्धक हाथी को ।

शूरकृतास्त्रयोः शूरमकृतास्त्रं विक्रमव्यवसायोऽनुवर्तते, कृतास्त्रमशूरं लक्ष्यलम्भाधिकारः ।

२५. शूर एवं कृतास्त्र में शूर अकृतास्त्र का विक्रम व्यवसाय अनुगमन करता है, कृतास्त्र अशूर लक्ष्य लम्भाधिकारी होता है ।

लक्ष्यलम्भाधिकारेऽपि स्थैर्यप्रतिपत्त्यसमोषैः शूरः कृतास्त्रमतिसंधत्ते ।

२६. लक्ष्य लम्भाधिकार में भी शूर स्थैर्य, प्रतिपत्ति (संकट काल में सद्यः कार्यशीलता) एवं असंमोह (सावधानी) के कारण कृतास्त्र का अतिक्रमण कर जाता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) प्राज्ञशूर : बुद्धिमान तथा वीर ।

(२) प्राज्ञअशूर : बुद्धिमान तथा कायर ।

(३) कर्मणामयोगः : कार्य करने का संयोग जिसमें बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) लुब्धक : शिकारी, शूर को प्राज्ञ की अपेक्षा वरीयता होगी । द्र० १:१४:४, ३.४:२२ ।

पाठभेद :

'लक्ष्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'लक्ष' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) कृतास्त्र : अस्त्रों में शिक्षित । द्र० ७:७:१८ ।

(२) लक्ष्यलम्भ : लक्ष्यभेदन । द्र० ७:७:२६, गण० ३:२०९ ।

पाठभेद :

'लक्ष्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'लक्ष' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) लक्ष्य : निशानता । द्र० ७:१७:२५ ।

(२) प्रतिपत्य : द्र० १:९:१; २:६:१६, ७:८:३; ७:१७:२६ ।

(३) संमोष ; सतर्क या जागरूक रहना सावधान ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बह्वेकपुत्रयोर्बहुपुत्र एकं दत्त्वा शेषप्रतिष्टब्धः संधिमतिक्रामति, नेतरः ।

२७. बहु पुत्र एवं एक पुत्र वालों में बहु पुत्र वाला एक को देकर, शेष पुत्रों से गर्व युक्त होकर, संधि का अतिक्रमण करता है, एक पुत्र वाला ऐसा नहीं करता ।

पुत्रसर्वस्वदाने संधिश्चेत्पुत्रफलतो विशेषः ।

२८. एकलौते पुत्र को देने पर, सन्धि सम्पन्न होने की स्थिति में पुत्र के पुत्र वाला लाभ भागी होता है ।

समफलयोः शक्तप्रजननतो विशेषः ।

२९. समफल वाले दोनों में वह लाभवान् होता है, जो प्रजनन समर्थ हो ।

शक्तप्रजननयोरप्युपस्थितप्रजननतो विशेषः ।

३०. प्रजनन समर्थ दोनों में वह लाभान्वित होता हैं, जो शीघ्र प्रजनन समर्थ हो ।

शक्तिमत्येकपुत्रे तु लुप्तपुत्रोत्पत्तिरात्मानमादध्यात्, न चैकपुत्रमिति ।

३१. शक्तिमान् एवं एकलौते पुत्र वाला पुत्रोत्पादन में असमर्थ होने पर, अपने को बन्धक करे, एकलौते पुत्र को नहीं ।

अभ्युच्चीयमानः समाधिमोक्षं कारयेत् ।

३२. सन्धि के कारण प्रवृद्ध शक्तिवाला समाधि मोक्ष कराये ।

पाठभेद :

'शेषप्रतिष्टब्धः' का देवनागरी अनुप्रतिलिपि में 'शेषस्तब्धः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शेषप्रवृत्तिस्तब्धः' तथा श्रीमूल में 'शेषबृत्तिस्तब्धः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) प्रतिष्टब्ध । प्रबल रूप से समर्थित । द्र० ७:७:११, ७:१०:२७, ९:३;२४ ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) पुत्रसर्वस्व : पुत्र जो पिता का सर्वस्व है ।

(२) पुत्रफलत : पौत्र ।

पाठभेद :

'समफलयोः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि-में 'सफलयोः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) सम : तुल्य ।

(२) शक्तप्रजननतो : सन्तानोत्पत्ति में समर्थ या सशक्त ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) उपस्थित : पास, निकटवर्ती ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) लुप्त : सन्तानोत्पत्ति में शक्तिहीनता ।

यहाँ तक शक्ति कर्म अर्थात् सन्धि दृढ़करने का उपाय बताया गया है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) अभ्युच्चीय : नियमित, प्रचलित प्रथा के अनुरूप । द्र० ७:१:१४, ७:४:१४, ७:१३:२९, गण० २:१५४ ।

(२) समाधिमोक्ष : बन्धक रखे का मोचन या मुक्त या छुड़ा लेना । सन्धि को मजबूत करने के लिये प्रतिग्रह रूप में स्थित पुत्रादि का मोक्ष या मोचन या बन्धक रखे का छुड़ा लेना । द्र० १:१६:३४, ७:१७:१, २ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुमारासन्नाः सत्त्रिणः कारुशिल्पिव्यञ्जनाः कर्माणि कुर्वाणाः सुरुङ्गया रात्रावुपखानयित्वा कुमारमपहरेयुः ।

३३. कुमार के समीपवर्ती, कारु एवं शिल्पी के वेष वाले गुप्तचर अपने कर्मों को करते हुए, रात्रि में सुरङ्ग खना कर, उससे कुमार का अपहरण कर लें ।

नटनर्तकगायनवादकवाग्जीवनकुशीलवप्लवकसौभिका वा पूर्वप्रणिहिताः परमुपतिष्ठेरन् ।

३४. अथवा पूर्व प्रेषित नट, नर्तक, गायन, वादक, वाग्जीवन, कुशीलव, प्लवक, सौभिक शत्रु का आश्रय ग्रहण करें ।

ते कुमारं परंपरयोपतिष्ठेरन् ।

३५. वे परम्परया कुमार के पास पहुँचे ।

तेषामनियतकालप्रवेशस्थाननिर्गमनानि स्थापयेत् ।

३६. राजकुमार उनके अनिश्चितकाल में प्रवेश, निवास एवं निर्गमन की व्यवस्था कराये ।

ततस्तद्व्यञ्जनो वा रात्रौ प्रतिष्ठेत ।

३७. उनके वेष में वह, वहाँ से रात्रि में प्रस्थान करे ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) सुरूङ्गया : सुरंग से । द्र० १:२०:२, ५:२:४२ । गण० ३:२०१ ।

पाठभेद :

'प्लवक' का देवनागरी अनुलिपि में 'बल्लवक' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पल्लवक,' 'सौभिका' का 'सौहिका' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) नटनर्तक : द्र० १:१२:९; २:२:२५, गण० १:५८, ३:३५४, ३:१४८ ।

(२) कुशीलव : श्लोक पाठक तथा स्तुतिपाठक, स्त्रोत्रपाठक अथवा भाट । द्र० १:१२:९, २:१:३४, गण० १:५८, ५९, १०७; २:२५४ ।

(३) प्लवक : रस्सी पर नाचने वाला नट, तलवार आदि का खेल दिखाने वाला । द्र० ३:२७:२५; ११:१:३४ :

(४) सौभिक : बाजीगर या जादूगर कठपुतली का खेल दिखाने वाला । माया विद्या का प्रदर्शक आकाश में उड़ने वाला भी अर्थ किया गया है । द्र० २:२७:२५, ११:१:३४, गण० २:३५४, ३:१४८ ।

(५) पूर्वप्रणिहिता : पूर्व में स्थित या रखा हुआ । गण० ३:१९०, १९७ ।

पाठ भेद :

'तेषामनियत' का देवनागरी अनुलिपि में 'तेषां नियत' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) स्थापयेत : कुमार के रखने से तात्पर्य है ।

पादटिप्पणी :

३७. तद्व्यञ्जनो : उनमें एक का रूप बनाकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन रूपाजीवा[1]भार्या[2]व्यञ्जनाश्च व्याख्याताः ।

३८. उक्त रूप से रूपाजीवा और भार्या वेष में निर्गमन की व्याख्या हो गयी ।

तेषां[1] वा तूर्य[2]भाण्ड[3]फेलां[4] गृहीत्वा निर्गच्छेत् ।

३९. अथवा उनके तूर्य एवं भाण्डपेटी को लेकर निकल जाय ।

सूद[1]आरालिक[2]स्नापकसंवाहक[3]आस्तरक[4]कल्पकप्रसाधकोदकपरिचारकैर्वा द्रव्यवस्त्रभाण्डफेलाशयनासनसंभोगैर्निर्हियेत ।

४०. अथवा सूद, आरालिक, स्नापक, संवाहक, आस्तरक, कल्पक (नापित), प्रसाधक, उदकपरिचारक जन, द्रव्य, वस्त्र, भाण्डफेला (भूषण पेटिका), शयन, आसन में प्रयुक्त वस्तु के साथ उसे (राजकुमार को) निकाल ले ।

परिचारकच्छद्मना वा किंचिदरूप[1]वेलायामादाय निर्गच्छेत्, सुरुङ्गा[2]मुखेन वा निशोपहारेण[3] ।

४१. अथवा राजकुमार परिचारक वेष में कुछ द्रव्य लेकर, अरूपवेला में अथवा भूत वलि प्रदान व्याज से सुरुङ्गा द्वार से निकल जाय ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) रूपाजीवा : अपने रूप पर जीवन निर्वाह करने वाली । द्र० १:२०:२०, २:४:११, ३:२०:१५, १०:१:१०, गण० ३:३५५ ।

(२) भार्याव्यञ्जना : भार्या बनी हुई । गण० २:३५५ ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) तेषाम्: नट, नर्तक आदि रूपाजीवका ।

(२) तूर्य : एक प्रकार का वाद्ययन्त्र, तुरही । मनु० ७:२२५, गण० २:३५४ ।

(३) भाण्ड : पात्र, बर्तन, पितरी ।

(४) फेलां : एक पेटी, सन्दूक, बक्स, छितनी, टोकरी । द्र० १३:२:४८, ४९, ७:१७:४०, गण० २:३५५, ३:१९० ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) सूद : रसोइया । द्र० ९, गण० १:५७, २:३५५ ।

(२) आरालिक : खाना परोसने वाला । द्र० १:१३:९, गण० १:५८, ३:३५५ ।

(३) संवाहक : अंगविमर्दक, मालिश करने वाला । गण० २:३५४ ।

(४) आस्तरक : विस्तर बिछाने वाला ।

पाठभेद :

'परिचारकच्छद्मना' का तंजौर में 'परिवारकरमना' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'परिवारकारमना' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) अरूपवेलायाम् : अन्धेरा, जब शक्ल दिखाई न पड़े । द्र० ५:६:२ । गण० २:३५५ ।

(२) सुरुङ्गा : सुरंग । गण० ३:२०१ ।

(३) निशोपहारेण : सन्ध्या, रात्रि की पूजा या हवन ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तोयाशये[1] वा वारुणं[2] योगमातिष्ठेत् ।

४२. अथवा जलाशय में वारुणयोग का प्रयोगकर, निकल जाय ।

वैदेहकव्यञ्जना[1] वा पक्वान्नफलव्यवहारेणारक्षिषु रसमुपचारयेयुः[2] ।

४३. अथवा वैदेहक व्यञ्जन गुप्तचर पक्वान्न-फल विक्रय के साथ रक्षकों पर, विष का प्रयोग करें ।

दैवतोपहारश्राद्धप्रहवणनिमित्तमारक्षिषु[1] मदनयोगयुक्तमन्नपानं[2] रसं वा प्रयुज्यापगच्छेत्, आरक्षकप्रोत्साहनेन[3][4] वा ।

४४. अथवा दैवतोपहार, श्राद्ध उत्सव निमित्त मदनयोगयुक्त अन्न, पान या रस का प्रयोग रक्षकों पर, करके अथवा रक्षकों को धनादि से प्रोत्साहित कर, निर्गत हो जाय ।

नागरककुशीलवचिकित्सकापूपिकव्यञ्जना[1] वा रात्रौ समृद्धगृहाण्यादीपयेयुः[2] आरक्षिणां वा ।

४५. अथवा नागरक, कुशीलव, चिकित्सक एवं आपूपिक के वेष वाले गुप्तचर रात्रि में समृद्ध-गृहों अथवा रक्षकों के गृहों में आग लगा दें ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) तोयाशय : जलाशय ।

(२) वारुणयोग : डुबकी लगाकर, देर तक बहुत दूर तक निकल जाना और वहाँ स्नान के लिये निमज्जित हो जाना । द्र० १३:१:३, ४ गण० २: ३५८ ।

पाठभेद :

'रसमुप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'समव' पाठभेद मिलता है । तथा भाषा व्याख्यान एवं श्रीमूल में 'रसमव' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) वैदेहकव्यञ्जन : व्यापारी के वेश में गुप्तचर । द्र० ३:१२:३९; ३:१३:२८ । गण० १:५२, ५३, ३:१८७ ।

(२) रस : बिष, द्र० ५:१:७, ३१; २:१:३८; २:१२:०, गण० ३:१७३, १९८, २२२ ।

पाठभेद :

'अन्नपानंरसं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अन्न-पानरसं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) प्रहवण : मेला, उत्सव, भोजन, पिकनिक । प्र० १:१०:९; १:२१:२८ । गण० २: ३५६, ३:१२७, १८५ ।

(२) मदनयोग : मूढ़ बनाने वाली औषधियाँ, रस । द्र० १४:१:१६-१७; ४:४:१९; ४:७:१०, गण० २:१९८ ।

(३) आरक्षक : संतरी, रक्षक, प्रहरी, पहरेदार ।

(४) प्रोत्साहन : उत्साहित करना या नुकसान करना या भड़काना ।

पाठ भेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वा' 'आरक्षिणां' के बाद नहीं है ।

पादटिप्पणी :

४५. नागरक : साहसी, वीर, बहादुर, नागरिक से भिन्न है । गण० २:३५६ ।

(२) दीपयेयुः : अग्नि लगाना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैदेहकव्यञ्जना वा पण्यसंस्थामादीपयेयुः ।

४६. अथवा वैदेहक वे गुप्तचर पण्यसंस्था में आग लगा दें।

अन्यद्वा शरीरं निक्षिप्य स्वगृहमादीपयेत् अनुपातभयात् ।

४७. अथवा स्वान्वेषण भय से अन्य का शव रखकर, अपने गृह में आग लगवा दें।

ततः संधिच्छेदखातसुरुङ्गाभिरपगच्छेत् ।

४८. तदनन्तर वहाँ से दीवाल के या सुरंग से निकल जाय।

काचकुम्भभाण्डभारव्यञ्जनो वा रात्रौ प्रतिष्ठेत ।

४९. अथवा काचभार, कुम्भकार या भाण्डभार के वेष में रात्रि में प्रस्थान कर जाय।

मुण्डजटिलानां प्रवासनान्यनुप्रविष्टो वा रात्रौ तद्व्यञ्जनः प्रतिष्ठेत, विरूपव्याधिकरणारण्यचरच्छद्मनामन्यतमेन वा ।

५०. अथवा रात्रि में मुण्डों एवं जटिलों के प्रवासन में प्रवेश कर उन्हीं के वेष में प्रस्थान करे अथवा रूप परिवर्तित कर, व्याधिग्रस्त बनकर या अरण्यचर बनकर (रात्रि में) चला जाय।

पादटिप्पणी :

४६. (१) वैदेहक व्यंजन : वाणिक या व्यापारी वेषधारी गूढ़पुरुष विशेष। द्र० ७:१७:४३ गण० ३:५३, ३:१८७।

(२) पण्यसंस्था : बाजार। द्र० ४:२:१; ४:८: १७, गण० २:३५६ :

पादटिप्पणी :

४७. (१) अन्यद्वाशरीर : दूसरे का शरीर। लाक्षागृह से पाण्डवों का निकालने का यहाँ संकेत लिया गया है।

(२) अनुपात : अनुसरण, अनुधावन पीछा करना। द्र० २:२९:२२, १०:५:३३, ७:१७:५६, ५९, गण० ३:३५६।

पाठभेद :

'च्छेदखात' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'च्छेदवात' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४८. (१) संधिच्छेद : दिवाल में छिद्र या मुक्का या छेद। गण० २:३५६।

(२) खात : प्रणाली। द्र० २:५:६, २:१२:२, ३:८:२१, गण० ३:१०३।

पादटिप्पणी :

४९. (१) काच : बहगी, शीशा भी अर्थ होता है। काष्ठादि वाहक। गण० १:२२८; ३:२१५।

(२) कुम्भ : जल ढोने वाला कहार या वह कार्य करने वाले हैं। गण० ३:३५६।

(३) भाण्डभार : सामान का बोझ। गण० ३:३५६।

पाठभेद :

'जटिलानां प्रवासनान्यनु' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि 'जटिला प्रवासनतु' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'जटिलाप्रवासाननु' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५०. (१) मुण्ड : सरमुण्डन कराया, द्र० २:३: ३२; १०:३:३९।

(२) जटिल : जटाधारी साधु। द्र० १:११:१३, १४; १:१३:१५, स्कन्द० ७:१:२०५, ६०।

(३) विरुपकरण : स्वाभाविकरूप परिवर्तन, ब्रह्माण्ड० ३:१५:४३, गण० १:५३, २:३५६।

(४) व्याधिकरण : व्याधित व्यक्ति के समान रूपधारी, द्र० १४:३:४।

(५) अरण्यचर : वनचारी। द्र० ३:४:१३, गण० ३:३५।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रेतव्यञ्जनो वा गूढैर्निर्ह्रियेत ।

५१. मृतक वेष में गुप्तचरों द्वारा निकाल लिया जाय।

प्रेतं वा स्त्रीवेषेणानुगच्छेत् ।

५२. अथवा स्त्री वेष में मृतक का अनुगमन कर चला जाय।

वनचरव्यञ्जनाश्चैनमन्यतो यान्तमन्यतोऽपदिशेयुः ।

५३. वनचर वेष वाले गुप्तचर अन्वेषण करने वालों को अन्य ओर जाने वाले राजकुमार अन्य ओर गया हुआ बता दें।

ततोऽन्यतो गच्छेत् ।

५४. वह (राजकुमार) उसके विपरीत मार्ग से चला जाय।

चक्रचराणां वा शकटवाटैरपगच्छेत् ।

५५. अथवा शकट चारियों के शकट समूहों के साथ चला जाय।

आसन्ने चानुपाते सत्त्रं वा गृह्णीयात् ।

५६. अथवा पीछा करने वालों के समीप आने पर, छिपने के स्थान में छिप जाय।

पादटिप्पणी :

५१. (१) प्रेत : शव से तात्पर्य है। द्र० ३:१३:८।

५२. (१) प्रेत : शव।

पाठभेद :

'अन्यतो यान्तम' तेलगू अनुप्रति लिपि में लुप्त है।

पादटिप्पणी :

५३. (१) वनचर : बनवासी या वन में रहने या विचरण करने वाले।

पादटिप्पणी :

५४. (१) अन्यतो : दूसरी दिशा, दूसरी ओर।

पादटिप्पणी :

५५. (१) चक्रचराणां : गाड़ीवानों। चक्रचर का अर्थ कुम्हार, तेली या बाजीगर भी होता है। गण० २:३५।

(२) शकट : गाड़ी। द्र० ४:४:३।

(३) वाट : घेरा। द्र० २:४:२५, २६; ३:६:५, १२; ४:१३:६ गण० १:१३।

पादटिप्पणी :

५६. (१) आसन्न : निकटवर्ती।

(२) अनुपात : पीछा करना, अनुसरण करना, द्र० २:२९:२२, १०:५:३३, ७:१७:५९, गण० २:३५६।

(३) सत्त्र : छिपने का स्थान निभृत द्र० १०:२:१५; १०:३:२४, गण० ३:३२।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सत्त्राभावे हिरण्यं[1] रसाविद्धं[2] वा भक्ष्यजातमुभयतः पन्थानमुत्सृजेत् ।

५७. अथवा उसके अभाव में मार्ग के दोनों ओर हिरण्य अथवा विष युक्त भक्ष्यवस्तु छोड़ दे।

ततोऽन्यतोऽपगच्छेत् ।

५८. तत्पश्चात् उसके विपरीत स्वयं चला जाय।

गृहीतो वा सामादिभिरनुपातमतिसंदध्यात्, रसविद्धेन वा पथ्यदनेन ।

५९. अथवा गृहीत होने पर साम-दानादि उपायों से अथवा विष युक्त पाथेय देकर, अन्वेषकों को धोखा दे।

वारुणयोगाग्निदाहेषु वा शरीरमन्यदाधाय शत्रुमभियुञ्जीत 'पुत्रो मे त्वया हतः' इति ।

६०. अथवा वारुणयोग या अग्निदाह में अन्य का शरीर प्रक्षिप्त कर, शत्रु पर अभियोग लगाये 'तुमने मेरे पुत्र को मार डाला।'

उपात्तच्छन्नशस्त्रो वा रात्रौ विक्रम्य[1] रक्षिषु ।
शीघ्रपातैरपसरेद्गूढप्रणिहितैः सह ॥

६१. अथवा गुप्तरूप से शस्त्र लेकर रात्रि में रक्षकों पर, आक्रमण कर, शीघ्रगामी यानों से गूढपुरुषों के साथ निर्गत हो जाय।

पाठभेद :

'भक्ष्य' का तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में (भक्ष) पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५७. (१) हिरण्य : नगद मुद्रा या रुपया द्र० २:१३:३, गण० ३०१,६ ।

(२) रसाविद्ध : विषयुक्त ।

पादटिप्पणी :

५८. (१) अन्य : अन्यपथ, दूसरी तरफ, दूसरी ओर, द्र० ७:१७:५४ ।

पाठभेद :

'पथ्यदनेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पथ्यदानेन' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५९. (१) पथ्यदन : पाथेय, मार्ग का भोजन, या मार्ग में खाने-पीने का स्थान, या व्यापारियों के मार्ग का दैनिक खर्चा। द्र० २:१६:२४; ४:५:१६ ।

पादटिप्पणी :

६०. (१) वारूण योग : द्र० ७:१६:४२ ।

(२) आधाय : ऊपर रखना ।

(३) अभियुञ्जीत : शत्रु को दोषी बनाना। आक्रमण करना ।

पादटिप्पणी :

६१. (१) विक्रम्य : आक्रमण । द्र० ७:९:२२, ७:१५:१२, ८:५:१५, ९:२:११ ।

(२) शीघ्रपातैः : शीघ्र चलाजाय ।

(३) गूढ़ : गुप्तचर । द्र० १:११:१, १:१६:२४,३३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे संधिकर्म समाधिमोक्षः च सप्तदशोऽध्यायः। आदितः पञ्चदशशततमः ।

सप्तम अधिकरण के अन्तर्गत षाड्गुण्य में सन्धिकर्म, समाधिमोक्ष सम्बद्ध सत्रहवाँ अध्याय समाप्त । आदि से एकसौ पन्द्रहवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठ भेद :

गणपति शास्त्री में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे सप्तदशोऽध्यायः सन्धिकर्म सन्धिमोक्षः आदितः पंचदश शततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सन्धिकर्मसन्धिमोक्षश्च सप्तदशोऽध्यायः आदितः पंचदशशतः ।

वसाकसंस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे सप्तदशोऽध्यायः सन्धिकर्म सन्धिमोक्षः आदितः पंचदशशततमः :

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे सन्धिकर्म सन्धिमोक्षः सप्तदशोऽध्यायः ।।१७।। आदितः पंचदशाधिक शततमोऽध्यायः ।।११५।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १८

[चतुर्विंशतिशततमं प्रकरणम्—मध्यमचरितम्; पञ्चविंशतिशततमं प्रकरणम्—उदासीनचरितम्; षड्विंशतिशततमं प्रकरणम्—मण्डलचरितम्]

एक सौ चौबीसवां प्रकरण—मध्यम चरित
एक सौ पच्चीसवां प्रकरण—उदासीन चरित
एक सौ छब्बीसवां प्रकरण—मण्डल चरित

मध्या[1]मस्यात्मा[2] तृतीया[3] पञ्चमी[4] च प्रकृतिः[5] प्रकृतयः ।

१. मध्यम स्वयं, मित्र एवं मित्र का मित्र ये मध्यम की प्रकृतियाँ हैं ।

द्वितीया[1] चतुर्थी[2] षष्ठी[3] च विकृतयः[4] ।

२. द्वितीया, चतुर्थी एवं षष्ठी प्रकृति मध्यम की विकृतियाँ हैं ।

तच्चेदुभयं मध्यमोऽनुगृह्णीयात्, विजिगीषुर्मध्यमानुलोमः[1] स्यात् ।

३. यदि मध्यम दोनों को अनुगृहीत करे, तो विजिगीषु मध्यम के अनुकूल रहे ।

पाठभेद :

'आत्मा तृतीया' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आत्मतृतीया' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

प्रकरण १२४ : सूत्र १-२५;
प्रकरण १२५-सूत्र २६-३७ तथा
प्रकरण १२६ सूत्र ३८-४४ में है ।

१, (१) मध्या : प्रकृति । द्र० ६:२:२३; गण० २:२५९ ।

(२) आत्मा : स्वयं ।

(३) तृतीया : मित्र ।

(४) पञ्चमी : मित्रा मित्र ।

(५) प्रकृति : द्र० ६:१:६ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) द्वितीया : अरि ।

(२) चतुर्थी : अरि मित्र ।

(३) षष्ठी : अरिमित्र-मित्र ।

(४) विकृति : अमित्र प्रकृति, परिवर्तित, युक्त विरूपित; कुरूप, गण० २:३५३ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) अनुलोम : अनुकूल, नियमित, स्वाभाविक, क्रमानुसार ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न चेदनुगृह्णीयात्, प्रकृत्यनुलोमः स्यात् ।

४. यदि उसपर अनुग्रह न करे, तो भी अपनी प्रकृति के अनुकूल रहे ।

मध्यमश्चेद्विजिगीषोर्मित्रं मित्रभावि[1] लिप्सेत, मित्रस्यात्मनश्च मित्राण्युत्थाप्य मध्यमाच्च मित्राणि भेदयित्वा मित्रं त्रायेत[2] ।

५. यदि मध्यम विजिगीषु के मित्रभावि मित्र को अधीनस्थ करने की इच्छा करे, तो वह मित्र के तथा अपने मित्रों को प्रोत्साहित कर, मध्यम से उसके मित्रों को भिन्न कर, मित्र की रक्षा करे ।

मण्डलं[1] वा प्रोत्साहयेत् 'अतिप्रवृद्धोऽयं मध्यमः सर्वेषां नो विनाशायाभ्युत्थितः, सम्भूयास्य यात्रां[2] विहनाम[3]' इति ।

६. अथवा यह कहकर, मण्डल को प्रोत्साहित करें, 'यह मध्यम अतिप्रवृद्ध हो गया है, हम सब लोगों के विनाशार्थ उद्यत हो गया है, हम लोग संघटित होकर, उसका अभियान विनष्ट करें ।'

तच्चेन्मण्डलमनुगृह्णीयात्, मध्यमावग्रहेणात्मानमुपबृंहयेत् ।

७. यदि वह प्रोत्साहन प्राप्त राजमण्डल अनुग्रह करे, तो (विजिगीषु) मध्यम को निग्रहीत करके अपनी वृद्धि करे ।

पाठभेद :

'मित्रं त्रायेत' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मित्रं स्रायेत' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) मित्रभावि : अधिकरण । द्र० ७:३:९; ७:४:७; ७:९:४३, ७:१८:२९, गण० २:३६४ ।

(२) त्रायेत : रक्षा करना, द्र० ७:१८:१३ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) मण्डलं : राजमण्डल, द्र० २:१९:१३, गण० १:१४, १७, २२, २:३५९, ३:१३५ ।

(२) यात्रा : अभियान । द्र० १:१६:२९; ९:६:३४, ७:१५:३२, १२:५:१, गण० १:१८ ।

(३) विहन् : हिंसा, हत्या, चोट पहुँचाना, विफल करना । गण० २:११८ ।

पादटिप्पणी :

७. उपबृंह : वृद्धि, उपचय, वर्धन, सशक्त करना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न चेदनुगृह्णीयात्, कोशदण्डाभ्यां मित्रमनुगृह्य ये मध्यमद्वेषिणो राजानः परस्परानुगृहीता वा बहवस्तिष्ठेयुः, एकसिद्धौ वा बहवः सिद्धेयुः, परस्पराद्वा शङ्किता नोत्तिष्ठेरन्, तेषां प्रधानमेकमासन्नं वा सामदानाभ्यां लभेत ।

८. यदि राजमण्डल अनुकूल न हो, तो कोश-दण्ड द्वारा मित्र को अनुगृहीत करके, जो मध्यम द्वेषी राजा हो या, जो मध्यम द्वेषी परस्पर सहयोग करने वाले बहुसंख्यक हों, अथवा एक के अनुकूल होने पर, सब अनुकूल हो जायँ, अथवा परस्पर एक दूसरे की शङ्का में विरोधार्थ उद्यत न होते हों, उसमें एक प्रधान को या निकटवर्ती को सामदान द्वारा स्वपक्षीय करे ।

द्विगुणो द्वितीयम्, त्रिगुणस्तृतीयम् ।

९. उस प्रकार द्वितीय को प्राप्तकर, दोगुना तथा तृतीय को प्राप्तकर, तीनगुना बल वाला (विजिगीषु) हो जाता है ।

एवमभ्युच्चितो मध्यममवगृह्णीयात् ।

१०. इस प्रकार प्रवृद्ध विजिगीषु मध्यम का निग्रह करे ।

देशकालातिपत्तौ वा संधाय मध्यमेन मित्रस्य साचिव्यं कुर्यात्, दूष्येषु वा कर्मसन्धिम् ।

११. अथवा देश-काल के अनुसार मध्यम के साथ सन्धि करके, मित्र का साचिव्य करे अथवा दूष्यों के साथ कर्म सन्धि करे ।

पाठभेद :

'एक सिद्धौ वा' का भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'एकसिद्धा वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) मध्यमद्वेषिणो : मध्यम के द्वेषी । द्र० ७:१८:१, ६:२;२१ ।

(२) नोत्तिष्ठेरन् : न उठना, विरोध या विद्रोह न करना ।

(३) आसन्नं : निकट ।

पाठभेद :

'अवगृह्णीयात्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपगृह्णीयात्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) अभ्युच्चित : आवर्धित । द्र० ७:१: १४, ७:४:१४, ७:१३:२९, ७:१७:३२, गण० २: २५७ ।

पाठभेद :

'मध्यमेन मित्रस्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मध्यमेतपुत्रस्य' तथा 'कर्मसंधिम्' का 'कस्सन्धिम्' तथा तंजौर में 'कसंधिम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) अतिपत्ति : अतिक्रमण, समय का व्यतीत होना, कार्य पूरा न करना ।

(२) सचिव्यं कुर्यात् : सहायता करना, गुप्त रूप से मित्र की सहायता, सेना तथा धन से करना ।

(३) दूष्येषु : मध्यम राजा के लिए यह प्रयुक्त हुआ है । द्र० १:११:१७, ३:१४:२७; ५:१:४ ।

(४) कर्मसन्धि : द्र० ७:१२:१, गण० २:३१४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्शनीयं वाऽस्य मित्रं मध्यमो लिप्सेत प्रतिस्तम्भयेदेनम् 'अहं त्वा त्रायेय' इति आ कर्शनात् ।

१२. अथवा विजिगीषु के कर्शनीय मित्र को यदि मध्यम चाहे तो, उसे (कर्शनीय को) उस कथन से अभयदान दे 'मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा' उसका पालन मध्यम द्वारा कर्शन होने तक करे।

कर्शितमेनं त्रायेत ।

१३. दुर्बल हो जाने पर उसकी रक्षा करे।

उच्छेदनीयं वाऽस्य मित्रं मध्यमो लिप्सेत, कर्शितमेनं त्रायेत मध्यम वृद्धिभयात् ।

१४. यदि विजिगीषु के उच्छेदनीय मित्र को मध्यम स्वाधीन करना चाहे, तो वह उस मित्र को दुर्बल हो जाने पर, रक्षा करे अन्यथा मध्यम की वृद्धि होगी।

उच्छिन्नं वा भूम्यनुग्रहेण हस्ते कुर्याद् अन्यत्रापसारभयात् ।

१५. अथवा उच्छिन्न हुए, उसे भूमिदान द्वारा अनुगृहीत कर, स्वहस्तगत करे, अन्यथा वह अन्यत्र (शत्रु-पक्ष में) अपसरण कर सकता है।

पादटिप्पणी :

१२. (१) कर्शनीय मित्र : ऐसा मित्र जो विजिगीषु का विरोधी रहता है। जिसे धन एवं सेना से कृश या कमजोर बनाया जासकता है। द्र० ७:१८:१३, गण० ३:२०० ।

(२) अस्य मित्रं : विजिगीषु ।

पाठ भेद :

'कर्शितमेनं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कर्शितमेतं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) कर्शित : कमजोर या दुर्बल किया गया। द्र० ७:३:१६, ७:४:१०, ७:८:८, ७:१०:४, १३:४:१ ।

त्रायेत : रक्षा करना। द्र० ७:१८:५ ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) उच्छेदनीय : नष्ट करने योग्य।

(२) त्रायेत : द्र० ७:१८:५ ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अन्यत्र : दूसरी जगह शत्रु की छावनी या स्थान में चले जाना। द्र० १:२०:२, २:३:३ ।

(२) अपसार : पलायन, चला जाना। द्र० २:५:५, ८:४:१३, गण० २:३३७, ३४०, ३:२६, १०७, १११ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्शनीयोच्छेदनीययोश्चेन्मित्राणि मध्यमस्य साचिव्यकराणि स्युः, पुरुषान्तरेण संधीयेत ।

१६. यदि अपने कर्शनीय एवं उच्छेदनीय के मित्र मध्यम का साहाय्य करने वाले हों, तो अन्य पुरुष को उपस्थित कर मध्यम के साथ सन्धि करे।

विजिगीषोर्वा तयोर्मित्राण्यवग्रहसमर्थानि स्युः, संधिमुपेयात् ।

१७. अथवा कर्शनीय एवं उच्छेदनीय के मित्र विजिगीषु को निगृहीत करने में समर्थ हों, तो मध्यम के साथ वह (विजिगीषु) सन्धि करे।

अमित्रं वाऽस्य मध्यमो लिप्सेत, संधिमुपेयात् ।

१८. अथवा यदि मध्यम विजिगीषु के शत्रु को अधिकार में करना चाहे, तो वह (विजिगीषु) मध्यम से सन्धि करे।

एवं स्वार्थश्च कृतो भवति मध्यमस्य प्रियं च ।

१९. इस प्रकार स्वार्थ भी सिद्ध होता है और मध्यम का प्रियकार्य भी होता है।

मध्यमश्चेत् स्वमित्रं मित्रभावि[1]लिप्सेत, पुरुषान्तरेण संदध्यात्[3] ।

२०. यदि मध्यम मित्रभावि स्वमित्र को अधीनस्थ करना चाहे, तो विजिगीषु अन्य पुरुष को उपस्थित कर, मध्यम से सन्धि करे।

[1]सापेक्षं वा 'नार्हसि मित्रमुच्छेत्तुम्' इति वारयेत् ।

२१. अथवा अपेक्षा होने पर, उसे यह कह कर, निवारित करे 'मित्र का उच्छेद करना उचित नहीं है।'

उपेक्षेत वा 'मण्डलमस्य कुप्यतु स्वपक्षवधात्' इति ।

२२. अथवा यह समझ कर, उपेक्षा करे 'स्वपक्ष का बध करने से राजमण्डल उस पर क्रुद्ध हो जायेगा।'

पादटिप्पणी :

१६. (१) साचिव्य : सहायता । द्र० ७:१८:१६ । गण० ३:१८४ ।

(२) पुरुषान्तर : अन्य पुरुष द्वारा की गयी सन्धि । द्र० ७:३:२४, गण० २:५१ ।

पाठभेद :

'विजिगीषोर्वातयोर्' का तंजौर में 'विजिगीषोर्वास्तयोर्' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विजिगीष्वोर्वा तयोर्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२०. (१) मित्रभावि : द्र० ७:१८:५, गण० २:३६४ ।

(२) पुरुषान्तर सन्धि : द्र० ७:१८:१६, गण० २:२५१ ।

(३) संदध्यात् : सन्धि करना ।

पादटिप्पणी :

२१. सापेक्षं : जिसमें किसी की अपेक्षा हो, दूसरे पर अवलंबित हो ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अमित्रमात्मनो वा मध्यमो लिप्सेत कोशदण्डाभ्यामेनं¹मदृश्यमानोऽनुगृह्णीयात् ।

२३. यदि मध्यम अपने शत्रु का अधीन करने की इच्छा करे, तो विजिगीषु अदृश्य रहकर, कोश-दण्ड द्वारा उस शत्रु की सहायता करे ।

उदासी¹नं वा मध्यमो लिप्सेत, अ²स्मै साहाय्यं दद्याद् 'उदासीनाद्भिद्यै³ताम्' इति ।

२४. अथवा यदि मध्यम उदासीन को अधीनस्थ करना चाहे, तो उसे उम भाव से सहायता दे यह 'उदासीन से भिन्न हो जाय ।'

मध्यमोदासीनयोर्यो मण्डलस्याभिप्रेतस्तमाश्रयेत् ।

२५. मध्यम एवं उदासीन में जो मण्डल का अधिक प्रिय हो, उसका आश्रय ले ।

मध्यमोदासीन चरितं व्याख्यातम् ।

२६. मध्यम उदासीन के चरित की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

उदासीनश्चेन्मध्यमं लिप्सेत यतः शत्रुमतिसंदध्यात् मित्रस्योपकारं कुर्याद् उदासीनं वा दण्डोपकारिणं लभेत ततः परिणमेत ।

२७. यदि उदासीन मध्यम को अधीनस्थ करना चाहे, तो जिससे शत्रु का अपकार एवं मित्र का उपकार कर सके अथवा जो मध्यम या उदासीन सैन्योपकारी हो उस पक्ष को ग्रहण करे ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) एनम् : मध्यम के शत्रु से तात्पर्य है।

(२) अदृश्यमान : छिपकर, गुप्त रूप से ।

पाठभेद :

'अस्मै साहाय्यं दद्याद्' तेलगू अनुप्रतिलिपि में लुप्त है ।

पादटिप्पणी :

२४. उदासीन : निरपेक्ष । द्र० ४:१३:१७, ६:३:२२, ७:९:४४, ७:१२:२४, गण० २:३५९, ३:१०० ।

(२) अस्मै : मध्यम से ।

(३) भिद्य : अलग करना ।

पाठभेद :

भाषा व्याख्यान तथा श्रीमूल में 'उदासीनं वा' के पूर्व 'मध्यमम्' और जुटा हुआ है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) दण्डोपकारिणं : जो सेवा सहायक होता है । द्र० ७:१६:१९, ७:४:१०, ७:८:८, ७:१०:४, २:१२:२१, ७:१६:२९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवमुपबृंह्यात्मानमरिप्रकृतिं कर्शयेन्मित्रप्रकृतिं चोपगृह्णीयात् ।

२८. उस प्रकार अपनी वृद्धि करके, विजिगीषु अरिप्रकृति का कर्शन एवं मित्रप्रकृति का उपकार करे।

सत्यप्यमित्रभावे तस्यानात्मवन्नित्यापकारी शत्रुः शत्रुसंहितः पार्ष्णिग्राहो वा व्यसनी यातव्यो व्यसने वा नेतुरभियोक्ता इत्यरिभाविनः; एकार्थाभिप्रयातः पृथगर्थाभिप्रयातः संभूययात्रिकः संहितप्रयाणिकः स्वार्थाभिप्रयातः समुत्थायिकः कोशदण्डयोरन्यतरस्य क्रेता विक्रेता वा द्वैधीभाविक इति मित्रभाविनः; सामन्तो बलवतः प्रतिघातोऽन्तर्धिः प्रतिवेशो वा बलवतः पार्ष्णिग्राहो वा स्वयमुपनतः प्रतापोनतो वा दण्डोपनत इति भृत्यभाविनः सामन्ताः ।

२९. विजिगीषु के प्रति शत्रुभाव रखने वाले अरिभावी सामन्त के आठ भेद होते हैं—अनात्मवान्, नित्यापकारी, शत्रु, शत्रुसंहित, पार्ष्णिग्राह, व्यसनी यातव्य अथवा व्यसन में आक्रमण कर्ता; मित्रभावी सामन्त के आठ भेद होते हैं—एकार्थाभिप्रयात, पृथगर्थाभिप्रयात, सम्भूययात्रिक, संहित प्रयाणिक, स्वर्थाभिप्रयात, समुत्थायिक, कोश एवं दण्ड में किसी एक का क्रेता या विक्रेता तथा द्वैधीभाविक; भृत्यभावी सामन्त आठ प्रकार के होते हैं—बलीराजा का सामन्त, प्रतिघात, अन्तर्धि-प्रतिवेशी अथवा वलवान् का पार्ष्णिग्राह या स्वयं आश्रित अथवा प्रभाववश उपनत या दण्डोपनत।

तैर्भूम्येकान्तरा व्याख्याताः ।

३०. उक्त प्रकार से भूम्येकान्तर राजाओं (मित्रों) की व्याख्या सम्पन्न हो गयी।

पाठभेद :

'उपबृंह्या' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उपगृह्या' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) कर्शयेत् : क्षीण या दुर्बल करना। द्र० ७:३:१६, ७:४:१०, ७:८:८, ७:१०:२४, गण० ३:२००।

पाठभेद :

'नेतुरभियोक्ता' का देवनागरी अनुलिपि में 'नेतुमभियोक्ता' पाठभेद मिलता है। तथा 'वा' क्रेता विक्रेता के बाद लुप्त है। तथा 'बलवतः प्रति' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बलवन्तः प्रति' तथा 'ऽन्तर्धिः प्रतिवेशो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'न्तर्धिप्रतिवेशो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३०. (१) भूम्येकान्तरा : दो राज्यों का मध्यवर्ती राज्य, जो एक मध्यवर्ती राज्य से अलग है। या वफर भूमि। द्र० ७:१७:३२, गण० २:३६४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेषां शत्रुविरोधे यन्मित्रमेकार्थतां[१] व्रजेत् ।
शक्त्या तदनुगृह्णीयाद्विषहेतयया परम् ॥

३१. उनमें शत्रु के साथ विरोध होने पर, जो मित्र कृतसन्धि (अनुकूल) हो, उसकी कोश-दण्डादि शक्ति से उतनी सहायता करे, जिससे वह शत्रु को अभिभूत करने में समर्थ हो।

प्रसाध्य शत्रुं यन्मित्रं वृद्धं गच्छेदवश्यताम् ।
सामन्तैकान्तराभ्यां तत्प्रकृतिभ्यां विरोधयेत् ॥

३२. जो मित्र शत्रु को पराजित कर, प्रवृद्ध हो जाता है और वश में नहीं रहता, उसके सामन्त एवं एकान्तर (शत्रु-मित्र) प्रकृतियों से विरोध करा दे।

तत्कुलीनापरुद्धाभ्यां[१] भूमिं वा तस्य हारयेत् ।
यथा वाऽनुग्रहापेक्षं[२] वश्यं तिष्ठेत्तथा चरेत् ॥

३३. अथवा उसके कुलोत्पन्न एवं अपरुद्ध द्वारा उसकी भूमि अपहृत कराये अथवा जिस प्रकार वह अनुग्रहापेक्षी होकर वश में रहे वैसा करे।

नोपकुर्यादमित्रं वा गच्छेद्यदतिकर्शितम्[१] ।
तदहीनमवृद्धं च स्थापयेन्मित्रमर्थवित्[२] ॥

३४. जो मित्र अति दुर्बल हो और उपकार न करे तथा शत्रु से मिले, उस अर्थ वेत्ता विजिगीषु हानि एवं वृद्धि रहित स्थिति में रखे।

पाठभेद :

'यया' का तंजौर में 'या' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तया' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३१. (१) एकार्थतां : समान विषयमूलक। द्र० ५:४:१०, ७:८:२३, ७:१८:२९, ९:२:१६, १७।

पाठ भेद :

'विरोधयेत्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विशोषयेद्' पाठभेद मिलता है।

पाठभेद :

'वश्यं तिष्ठेत्' का तंजौर में 'वश्य तिष्ठेत्' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'पश्यन्तिष्ठेत्' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वश्यन् तिष्ठेत्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३३. (१) अपरुद्ध : अकृत्य या अप्रीति प्राप्त राजकुमार, पाटन ने परिवर्जित पुत्रादि अर्थ किया है। उदयवीर ने नजर बन्द व्यक्ति अर्थ किया है।

(२) अनुग्रहोपक्षं : सहायता की आशा में। गण० १:१११, ३:२००।

पादटिप्पणी :

३४. (१) कर्शितम् : अति दुर्बल या हीन शक्ति या कमजोर किया गया। द्र० ७:३:१६।

(२) अर्थवित् : अर्थशास्त्रज्ञ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थयुक्त्या चलं मित्रं संधिं यदुपगच्छति ।
तस्यापगमने हेतुं विहन्यान्न चलेद्यथा ॥

३५. जो चल मित्र अर्थयुक्ति के कारण सन्धि करता है, उसके पुनः अपगमन कारण (धनादि देकर) स्वयं दूर करे, जिससे वह न जाय ।

अरिसाधारणं यद्वा तिष्ठेत्तदरितः शठम् ।
भेदयेद्भिन्नमुच्छिन्द्यात्ततः शत्रुमनन्तरम् ॥

३६. अथवा जो शठ मित्र शत्रु से मिला हो, उसे शत्रु पक्ष से भिन्न कर, अच्छिन्न करे, तदनन्तर शत्रु का उच्छेद करे ।

उदासीनं च यत्तिष्ठेत्सामन्तैस्तद्विरोधयेत् ।
ततो विग्रहसंतप्तमुपकारे निवेशयेत् ॥

३७. जो मित्र उदासीन रहे, उसका सामन्तों से विरोध कराये, तत्पश्चात् विग्रह से सन्तप्त, उसे अपने उपकार में संलग्न करे ।

अमित्रं विजिगीषुं च यत्संचरति दुर्बलम् ।
तद्बलेनानुगृह्णीयाद्यथा स्यान्नपराङ्मुखम् ॥

३८. जो दुर्बल मित्र शत्रु एवं विजिगीषु दोनों का पक्ष ग्रहण करता है, उसे सैन्य सहायता प्रदान कर, अनुगृहीत करें, जिससे वह पराङ्मुख न हो ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) अर्थयुक्त्या : अपने काम के साधने के प्रयोजन से । द्र० ८:१:५९ ।

(२) चलमित्रं : चंचल या स्थिर मित्र । द्र० ७:१०:९, ७:१३:७,८, ७:१४:१०, गण० २:३२१ ।

(३) विहन्य : हिंसा, हत्या या प्रहार करना । गण० २:११८ ।

पाठभेद :

'अरिसाधारणं' का देवनागरी अनुलिपि में 'अतिसाधारणं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) शठ : धूर्त, वंचक, खल ।

(२) अनन्तरम् : द्र० ९:७:१७, ७:१३:२५, ७:१८:३५ ।

३७. (१) निवेशयेत् : आसन, स्थापन, रखना । गण० ३:१०७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपनीयं ततोऽन्यस्यां भूमौ वा संनिवेशयेत् ।
निवेश्य पूर्वं तत्रान्यद्दण्डानुग्रहहेतुना ॥

३९. अथवा उसे उस भूमि से हटाकर, अन्यत्र अपनी भूमि में बसाये किन्तु पहले उसकी भूमि पर, दण्डानुग्रहसमर्थ अन्य को स्थापित कर दे ।

अपकुर्यात्समर्थं वा नोपकुर्याद्यदापदि ।
उच्छिन्द्यादेव तन्मित्रं विश्वस्याङ्कमुपस्थितम् ॥

४०. जो मित्र अपकार करे अथवा आपत्ति में उपकार न करे, उस मित्र को विश्वस्त कर, अङ्कगत होने पर (उसका) उच्छेद कर दे ।

मित्रव्यसनतो वाऽरिरुत्तिष्ठेद्योऽनवग्रहः ।
मित्रेणैव भवेत्साध्यश्छादितव्यसनेन सः ॥

४१. अथवा यदि मित्रव्यसन उपस्थित होने के कारण शत्रु अनियन्त्रित होकर, प्रवृद्ध हो जाय, तो व्यसन अप्रकट करने वाले, उसी मित्र द्वारा ही, उस शत्रु को वशीभूत करे ।

पाठभेद :

'तत्रान्यद्दण्डा' का भाषा व्याख्यान तथा न्याय चन्द्रिका एवं श्रीमूल में, 'तत्रान्यं दण्डा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) अपनीय : हटाना ।

(२) तत्र : दुर्बल राजा की भूमि, जो अपने स्थान से हटाया गया है । द्र० ४:३:५४, ६४ ।

(३) दण्डानुग्रह : सेना की सहायता से ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) अङ्कमुपस्थितम् : अधिकार या पहुँच के अन्दर आना । द्र० १:१७:१० ।

पाठभेद :

'मित्रव्यसनतो' का तंजौर में 'मित्र व्यसनो वा' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अमित्रव्यसनो वा' तथा 'साध्यश्छादित' का तंजौर में 'साध्यञ्छादित' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) मित्रव्यसन : मित्र की आपदा या आपत्ति । द्र० ७:२:१० ।

(२) अनवग्रह : अनियन्त्रित । द्र० १:१५:३६; ८:७:१६; ८:४:२७, गण० १:७१ ।

(३) साध्य : कार्यान्वित होने योग्य या निषन्न होने योग्य या किया जाने योग्य ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अमित्रव्यसनान्मित्रमुत्थितं यद्विरज्यति ।
अरिव्यसनसिद्धया तच्छत्रुणैव प्रसिध्यति ॥

४२. शत्रु के व्यसन के कारण प्रवृद्ध, जो मित्र विजिगीषु से विरक्त हो जाता है, उसे शत्रु का व्यसन दूर होने पर, शत्रु द्वारा ही वश में करे ।

वृद्धिं क्षयं च स्थानं च कर्शनोच्छेदनं तथा ।
सर्वोपायान् समादध्यादेतान् यश्चार्थशास्त्रवित् ॥

४३. अर्थशास्त्र वेत्ता नृपति वृद्धि, क्षय, स्थान, कर्शन, उच्छेदन तथा समादि समस्त उपायों का विचार पूर्वक प्रयोग करे ।

एवमन्योन्यसंचारं षाड्गुण्यं योऽनुपश्यति ।
स बुद्धिनिगलैर्बद्धैरिष्टं क्रीडति पार्थिवैः ॥

४४. इस प्रकार परस्पर संबद्ध षाड्गुण्य का जो नृप अनुसन्धान करता है, वह बुद्धि शृङ्खला से बँधे नृपों से क्रीडा करता है ।

पाठभेद :

'यद्विरज्यति' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सद्विरज्यति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) अमित्रव्यसन : अमित्र की आपदा ।

(२) अरिव्यसन : शत्रु की आपत्ति या आपदा । द्र० ७:१८:४२ ।

(३) प्रसिध्य : मनु० ४:३ ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) वृद्धि : वृद्धी । द्र० ७:१:२० ।

(२) क्षय : ह्रास, अवनति । द्र० ७:२:२ ।

(३) स्थान : उन्नति, अवनति रहित एक अवस्था में स्थिर या दृढ़ । द्र० ७:४:२, ३, ८:३:२६ ।

(४) कर्शन : दुर्बल करना ।

(५) उच्छेद : नष्ट करना ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) अन्योन्य : एक दूसरे को या परस्पर ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे मध्यमचरितम् उदासीनचरितम् मण्डलचरितम् च अष्टादशोऽध्यायः । आदितः षोडशशततमः ।

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य षाड्गुण्यम् सप्तममधिकरणं समाप्त ।

सप्तम अधिकरण के अन्तर्गत षाड्गुण्य में मध्यमचरित, उदासीन चरित, मण्डल चरित से सम्बद्ध अट्ठारहवाँ अध्याय समाप्त । आदि से एकसौ सोलहवाँ अध्याय समाप्त ।

यहाँ कौटिलीय अर्थशास्त्र का षाड्गुण्य सम्बद्ध सप्तम अधिकरण समाप्त ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे अष्टादशोऽध्यायः मध्यमचरितमुदासीनचरितं मण्डलचरितम् आदितः षोडशशततमः ।

एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्यषाड्गुण्यं सप्तममधिकरणं समाप्तम् ॥

मैसूर संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये मध्यमचरितमुदासीनचरितं मण्डलचरितं चाष्टादशोऽध्यायः आदितषोडशशतः एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य षाड्गुण्यं सप्तमाधिकरणं समाप्तं ॥

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयर्थ शास्त्रे षाड्गुण्ये सप्तमाधिकरणे अष्टादशोऽध्यायः मध्यमचरितमुदासीनचरितं मण्डलचरितम् आदितः षोडशोशततमः । एतावतां कौटिलीयार्थशास्त्रस्य षाड्गुण्यं सप्तमाधिकरणं समाप्तम् ॥

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति षाड्गुण्ये सप्तमेऽधिकरणे मध्यम चरित मुदासीनचरितं मण्डलचरितमष्टादशोऽध्यायः ।१८। आदितः षोडशाधिक शततमोऽध्यायः ।।११६।।

एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्यं षाड्गुण्यं सप्तममधिकरणं समाप्तम् ।।७।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

८

अध्याय १

व्यसनाधिकारिकम्—अष्टमधिकरणम्

[सप्तविंशतिशततमं प्रकरणम्—प्रकृतिव्यसनवर्गः]

व्यसनाधिकारिक—आठवां अधिकरण

एक सौ सत्ताईसवां प्रकरण—प्रकृति व्यसनवर्ग

व्यसनयौगपद्ये सौकर्यतो यातव्यं रक्षितव्यं वेति व्यसनचिन्ता ।

१. शत्रु और विजिगीषु के व्यसन की समकालीनता होने पर, सरलता पूर्वक मान अथवा रक्षण करना उचित है, यह व्यसन चिन्ता है।

दैवं मानुषं वा प्रकृतिव्यसनमनयापनयाभ्यां संभवति ।

२. दैव अथवा मानुष प्रकृति व्यसन नय और अनय से उत्पन्न होता है।

पाठ भेद :

'वेति' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चेति' पाठ-भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१. (१) व्यसनयौगपद्ये : व्यसन की समकालीनता, सम सामयिकता । द्र० ३:१४:२ ।

(२) सौकर्यतो : सुकर, तरल ।

(३) यातव्य : राज्य जिसके विरुद्ध अभियोग किया जाता है । द्र० ६:२:१६, ७:५:१, ७:१३:२ ।

(४) रक्षितव्यं : स्थान नीति के सम्बन्ध में कहा गया है । स्थान का अर्थ आसन भी होता है तथा दृढ स्थिति पर होता है । द्र० ८:२:२६ ।

(५) इति : निर्णय देना ।

पादटिप्पणी :

२. (१) दैवं : पूर्व जन्म के कर्मों से जायमान । गण० १:४, ३:१०१ ।

(२) मानुष : मनुष्य की बुद्धि से उत्पन्न । अर्थात् राज्य के प्रकृतियों की आपदा या आपत्ति ।

(३) प्रकृतिव्यसन : प्रकृति का व्यसन; दुर्नीति, अनीति । द्र० ६:२:६,९, ८:१:२, प्रकृति भाग० ६:४:१७,४८, अनीति, अन्याय, दुर्भाग्य ।

(४) अनय : अशुभविधि । द्र० ६:२:६, १२, भाग० ७:६:२६,३६, मत्स्य० ३२३:४:१६, गण० २:२३१ ।

(५) अपनय : गुण के अपनय, गलत नीति, अनीति, सन्धि का अनुचित रूप से प्रयोग, अपकार, अपनय व्यसन का कारण है, अपनय स्वतः व्यसन नहीं है । द्र० ६:२:६,११, १:२:११, ८:१:२, ९:५:१, गण० १:२७, २:२३१, ३:७३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुण[1]प्रातिलोम्य[2]भाव[3]: प्रदोष[4]: प्रसङ्ग[5]: पीडा[6] वा व्यसनम्[7] ।

३. गुणप्रातिलोम्य, गुणों का अभाव, प्रदोष, प्रसङ्ग अथवा पीड़ा व्यसन हैं।

व्यस्यत्येनं श्रेयस इति व्यसनम् ।

४. मनुष्य को कल्याण से दूर करने के कारण व्यसन नाम सार्थक है।

'स्वाम्य[1]मात्य[2]जनपद[3]दुर्ग[4]कोश[5]दण्ड[6]मित्र[7]व्यसनानां पूर्वं पूर्वं गरीय:' इत्याचार्याः ।

५. "स्वामी अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश, दण्ड एवं मित्र के व्यसनों में क्रमशः पूर्ववर्ती का व्यसन अधिक महत्वपूर्ण है" ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति भारद्वाजः ।

६. भारद्वज उस मत को नहीं मानते,

स्वाम्यमात्यव्यसनयोरमात्य[1]व्यसनं गरीयः ।

७. 'स्वामी एवं अमात्य के व्यसन में अमात्य व्यसन प्रबल होता है।'

पाठ भेद :

'प्रसङ्गः पीडा' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रसङ्गपीडा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) गुण : नीति, विदेशी नीति, द्र० ७:१:१२, १९, २:१३:३७, ३९, २:१४:४५, गण० १:२१५।

(२) प्रतिलोम : द्र० ७:१६:१८, गण० ३:१००।

(३) अभाव : किसी प्रकृति का न होना, विभिन्न गुणों का अभाव, गुणों का कार्य रूप में परिलक्षित न होना।

(४) प्रदोष : बड़ी त्रुटि या भारी दोष। गण० ३:२।

(५) प्रसंग : प्रामादि, केवल मानवों पर लागू होता है। गण० ३:२।

(६) पीड़ा : द्र० ८:४:१।

(७) व्यसन : अपनय व्यसन का कारण है। द्र० ३:१४:२।

पादटिप्पणी :

५. (१) स्वामी : राजा। द्र० १:१४:७; ३:११:५०; ४:७:१२; ६:१:१२; ८:१०५।

(२) अमात्य : द्र० १:६:१, १:७:२९।

(३) जनपद : द्र० १:९:३; मनु० पुर को जनपद के पूर्व रखता है। ७:२९४-२९५।

(४) दुर्ग : द्र० ७:१२:३, गण० १:२७।

(५) कोश : द्र० ८:१:५; ९:४:८।

(६) दण्ड : द्र० १:४:१, गण० १:१३,२३;

(७) मित्र : द्र० ७:२:१०।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'गरीयः' के बाद 'इति' और जुड़ा हुआ है।

पादटिप्पणी :

७. (१) गरीयः : अधिक गम्भीर या बड़ा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन्त्रो[1] मन्त्रफलावाप्तिः[2] कर्मानुष्ठानमायव्ययकर्म[3][4] दण्डप्रणयनममित्राटवी-[5][6][7] प्रतिषेधो राज्यरक्षणं[8] व्यसनप्रतीकारः[9] कुमाररक्षणमभिषेकश्च[10][11] कुमाराणामायत्तम-मात्येषु ।

८. मन्त्रणा, मन्त्रफल प्राप्ति, कर्मानुष्ठान, आय व्यय कर्म, दण्ड प्रणयन, शत्रु एवं आटविकों का निराकरण, राज्य रक्षा, व्यसन प्रतीकार, राजकुमार रक्षण एवं कुमारों का अभिषेक, अमात्यों के अधीन होता है।

तेषामभावे तदभावः, छिन्नपक्षस्येव[1] राज्ञश्चेष्टानाशश्च[2][3] ।

९. उनके (मन्त्रियों के) अभाव में उक्त कर्मों का अभाव और छिन्न पक्ष-पक्षी तुल्य राजा की चेष्टाओं का नाश होता है।

व्यसनेषु चासन्नः परोपजापः[1] ।

१०. अमात्य व्यसन उपाधित होने पर, शत्रुओं का उपजाप आसन्न हो जाता है।

पाठभेद :

'दण्डप्रणयनम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दण्डाप्रणयनम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

८. (१) मन्त्रः : मन्त्रणा करना। द्र० १:१५:२, १:१९:१४।

(२) फलावाप्ति : फल निर्धारण।

(३) कार्यानुष्ठान : निश्चित कार्य का संपादन।

(४) आय व्यय कर्म : आय व्यय की व्यवस्था।

(५) दण्ड प्रणयन : सेना रखना या संघटन निर्माण।

(६) अमित्र : शत्रु।

(७) अटवी : वनचारी।

(८) राज्य रक्षण : राज्य की रक्षा।

(९) व्यसन प्रतीकार : व्यसन या आपदा के विरुद्ध उपाय करना।

(१०) कुमार रक्षण : कुमार की रक्षा करना।

(११) अभिषेक : राजकुमार का अभिषेक।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'च' लुप्त है।

पादटिप्पणी :

९. (१) छिन्नपक्ष : टूटे या भग्न या कटा पर या परकटे पक्षी के समान।

(२) चेष्टा : प्रयत्न।

(३) चेष्टानाश : सूत्र० १५:१:३९ का उद्धरण दिया गया है।

पाठ भेद :

'चासन्नः परोपजापः' का तंजोर में 'चासन्नाः परोपजापः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चासन्नाः परोपचापाः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१०. (१) उपजाप : गुप्त प्रोत्साहन, बहकाना, विमोहन। द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२।

१०–४७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैगुण्ये च प्राणाबाधः प्राणान्तिकचरत्वाद्राज्ञः, इति ।

११. अमात्यों के विपरीत होने पर, राजा की प्राणबाधा होती है, क्योंकि वे उनके प्राणान्तिकचर (प्राण के निकटवर्ती) होते हैं ।

नेति कौटिल्यः ।

१२. कौटिल्य उसे नहीं मानते ।

मन्त्रिपुरोहितादिभृत्यवर्गमध्यक्षप्रचारं पुरुषद्रव्यप्रकृतिव्यसनप्रतीकारमेधनं च राजैव करोति ।

१३. मन्त्री-पुरोहित आदि भृत्यवर्ग, अध्यक्ष प्रचार, पुरुष प्रकृति एवं द्रव्य प्रकृति के व्यसन का निराकरण तथा पुरुष प्रकृति एवं द्रव्य प्रकृति का वर्धन राजा ही करता है ।

व्यसनिषु वाऽमात्येष्वन्यानव्यसनिनः करोति ।

१४. अथवा राजा अमात्यों के व्यसन ग्रस्त होने पर, अन्य अव्यसनी अमात्यों को नियुक्त करता है ।

पूज्यपूजने दूष्यावग्रहे च नित्ययुक्तस्तिष्ठति ।

१५. पूज्यों का पूजन और दुष्यों का निग्रह करने में राजा तत्पर रहता है ।

स्वामी च संपन्नः स्वसंपद्भिः प्रकृतीः संपादयति ।

१६. गुणादि सम्पद् युक्त स्वामी प्रकृति को गुणसम्पन्न करता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) वैगुण्य : विरोध, विग्रह, गुण का अभाव, दोष । द्र० ५:६:८, ७:८:१९, ९:४:८ ।

(२) प्राणान्तिक : प्राण का अर्थ राजा के व्यक्तित्व से है । गण० ३:१३२ ।

पाठभेद :

१३. (१) अध्यक्ष प्रचार : अध्यक्ष की व्यवस्थापना ।

(२) पुरुष प्रकृति : मानवीय प्रकृति, यथा आमात्य, सेना, मित्रादि ।

(३) द्रव्य प्रकृति : जनपद की भौतिक प्रकृति । द्र० ५:४:१,२, ६:८:२८, ९:७:४९ ।

(४) एधनं : अभिवृद्धि ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) अन्यान् : दूसरे जो आपत्तियों से ग्रसित नहीं है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) पूजन : सत्कार ।

(२) अवग्रह : निग्रह, नियन्त्रण करना, अधीन करना या दबाना । द्र० १:८:२१, १:१५:३७, ७:५:१२, २०, ७:१४:२९, ८:३:१३ । गण० १:४५, २:२६३, ३:२०६ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) सम्पन्न : समृद्धिशाली, उन्नतिशील, पूर्ण विकसित ।

(२) स्वसंपद्भि : गुणादि से ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स यच्छीलस्तच्छीलाः प्रकृतयो भवन्ति, उत्थाने प्रमादे च तदायत्त्वात् ।

१७. उसका जैसा शील होता है, प्रकृतियाँ भी उसी प्रकार शील वाली होती हैं, उत्थान एवं प्रमाद में वे उसी के अधीन होती हैं ।

तत्कूटस्थानीयो हि स्वामीति ।

१८. स्वमी उन प्रकृतियों का मूल स्थान होता है ।

'अमात्यजनपदव्यसनयोर्जनपदव्यसनं गरीय': इति विशालाक्षः ।

१९. 'अमात्य' एवं जनपद के व्यसन में जनपद का व्यसन अधिक महत्त्वपूर्ण होता है, ऐसा विशालाक्ष का मत है ।

'कोशो दण्डः कुप्यं विष्टिर्वाहनं निचयाश्च जनपदादुत्तिष्ठन्ते ।

२०. कोश, दण्ड, कुप्य, विष्टि वाहन एवं निचय जनपद से उत्पन्न (प्राप्त) होते हैं ।

पाठभेद :

'स' का तंजौर में 'स्व' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वयं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) शील : चरित्र, स्वभाव, सद्वृत्ति ।

(२) उत्थान : अभ्युदय, उद्योग । द्र० १:७:२, १:९:१, १:१९:५, १:१९:१-२ ।

(३) प्रमाद : अनवधानता, अधःपतन भी अर्थ किया गया है । द्र० २:३६:४२ ।

पाठदभेद :

'तत्कूट' का देवनागरी अनुलिपि में 'स्वत्कूट' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) कूट : शिखर, मस्तक, सर्वोच्च । द्र० ८:५:१८, गण० १:१२७ ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) अमात्य : द्र० १:८:१ ।

(२) जनपद : द्र० १:९:१ ।

(३) विशालाक्ष : गण० १:४१ ।

पाठभेद :

'कोशो दण्डः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कोशदण्डः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) दण्ड : सेना । द्र० १:५:१ ।

(२) कुप्य : वन उत्पत्ति या सम्पदा । द्र० १:१६:२९; २:१७:१, ७:१६:१०; गण० १:७,३२, २४६; ३:२५७ ।

(३) विष्टि : कर्मचारीगण । द्र० १:४:१, गण० १:३२, १४३; ३:१०५, २०० ।

(४) बाहन : बैलगाड़ी या गाड़ी या हाथी, गधा आदि ।

(५) निचय : धान्यादि, समूह संग्रह, ढेर । द्र० ७:१५:१०; गण० २:२३७; ३:४, २०१ ।

(६) उत्तिष्ठन्ते : प्रादुर्भूत होते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेषामभावो जनपदाभावे, स्वाम्यमात्ययोश्चानन्तरः' इति ।

२१. जनपद के अभाव में कोशादि का अभाव होता है अतः जनपद स्वामी एवं अमात्य के अनन्तर है।

नेति कौटिल्यः ।

२२. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है।

अमात्यमूलाः सर्वारम्भाः जनपदस्य कर्मसिद्धयः स्वतः परतश्च योगक्षेमसाधनं व्यसनप्रतीकारः शून्यनिवेशोपचयौ दण्डकरानुग्रहश्चेति ।

२३. कर्मसिद्धियाँ, स्वजन एवं शत्रु से योग क्षेम साधन, व्यसन प्रतीकार, शून्य स्थान पर ग्रामादि निवेश एवं उनका परिवर्धन, दण्ड एवं कर का अनुग्रह जनपद के ये समस्त कार्यारम्भ अमात्यमूलक होते हैं।

'जनपददुर्गव्यसनयोर्दुर्गव्यसनम्' इति पाराशराः ।

२४. 'जनपद व्यसन एवं दुर्ग व्यसन में दुर्गव्यसन अधिक महत्त्वपूर्ण होता है' ऐसा पराशर का मत है।

दुर्गे हि कोशदण्डोत्पत्तिरापदि स्थानं च जनपदस्य ।

२५. दुर्ग में कोश-दण्डोत्पत्ति एवं आपत्तिकाल में जनपद को सुरक्षित स्थान की प्राप्ति होती है।

शक्तिमत्तराश्च पौरा जनपदेभ्यो नित्याश्चापदि सहाया राज्ञः ।

२६. जनपद वासियों की अपेक्षा पौरजन अधिक शक्तिमान् सर्वकालानुगामी एवं आपत्ति में राजा के सहायक होते हैं।

पादटिप्पणी :

२१. (१) अभाव : अनस्वित्व, लोप ।

(२) अनन्तर : तुरन्त, पश्चात् ।

पादटिप्पणी :

२३. (१)अमात्यमूला : दण्ड कर एवं अनुग्रह का स्रोत अमात्य है।

(२) योग : अप्राप्त की प्राप्ति ।

(३) क्षेम : प्राप्त का संरक्षण । द्र० ६:२:१, योग-क्षेम द्र० १:४:३, गण० १:५:२ ।

(४) शून्य : निर्जन प्रदेश ।

(५) निवेश : वासस्थान, पड़ाव या शिविर डालने का स्थान । गण० ३:१० ।

(६) दण्ड : जुर्माना या सजा ।

(७) कर : राज्य कर ।

(८) अनुग्रह : उपकार भेंट । गण० १:१११; ३:२०० ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) जनपदव्यसन : देश की आपत्ति या आपदा ।

(२) दुर्गव्यसन : दुर्ग की आपत्ति ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) दुर्ग : किला । गण० १:१२ ।

(२) स्थान : आश्रयस्थान द्र० ७:१८:४३, गण० २:२४०-२४५ ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) पौरा : नागरिक । अग्नि० १०:३६: २४ ।

(२) नित्य : दृढ निष्ठा वाले ।

(३) आपदिसहाय : विपत्ति में सहायक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'जानपदास्त्वमित्रसाधारणाः' इति ।

२७. जनपद निवासी तो शत्रु के अनुगामी भी हो जाते हैं ।

नेति कौटिल्यः ।

२८. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है ।

जनपदमूला[1] दुर्ग[2]कोश[3]दण्ड[4]से[5]तुवार्त्ता[6]रम्भाः ।

२९. दुर्ग, कोश, दण्ड, सेतु एवं वार्ता जनपद मूलक होते हैं ।

[1]शौर्यं [2]स्थैर्यं दा[3]क्ष्यं बाहु[4]ल्यं च जानपदेषु ।

३०. शौर्य स्थैर्य दाक्ष्य एवं बाहुल्य जनपद में होते हैं ।

पर्वता[1]न्तर्द्वीपा[2]श्च दुर्गा नाध्युष्यन्ते[3] जनपदाभावात् ।

३१. जनपद के अभाव में पर्वतीय एवं अन्तर्द्वीपीय दुर्ग रिक्त रहते हैं ।

कर्षक[1]प्राये तु दुर्गव्यसनम्, आयुधीय[2]प्राये तु जनषदे जनपदव्यसनमिति ।

३२. कृषक बहुल जनपद में दुर्ग व्यसन तथा आयुधीय बहुल जनपद में जनपद व्यसन महत्त्वपूर्ण होता है ।

पाठभेद :

'दण्डसेतु' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दण्डाः सेतु' पाठभेद मिलता हैं ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) जनपदमूल : जनपद आदि कारण या प्रेरत्त या उत्पत्ति स्थान ।

(२) दुर्ग : किला ।

(३) कोश : खजाना ।

(४) दण्ड : सेना ।

(५) सेतु : बाध, जल से सिंचाई की व्यवस्था । द्र० २:१:२०,२४; २:४:५; ३:८:३; ३:९:१० गण० १:१३५ ।

(६) वार्ता : कृषि आदि । द्र० १:४:१,३; १:१०:५, गण० १:२६ ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) शौर्य : शूरता, वीरता, पराक्रम । द्र० ७:१२:१२ ।

(२) स्थैर्य : दृढ़ता, स्थिरता । गण० ३:१३२ ।

(३) दाक्ष्य : निपुणता, दक्षता, कार्य पटुता ।

(४) वाहुल्य : संख्या वाहुल्य ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) पर्वत : पर्वतादि पर बने हुए दुर्ग । द्र० २:३१,-२, ७:१०:३१ ।

(२) द्वीप : द्वीप में पर बने हुए दुर्ग ।

(३) आध्युष्यन्ते : सूना, गैर आवाद ।

पादटिप्पणी :

३२. (२) कर्षक : कृषक, किसान । द्र० ३: १३:२८, ३:११:५२, ७:११:२१ ।

(२) आयुधीय : सैनिक । द्र० ३:१९:१५, ३:३५:१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'दुर्गकोशव्यसनयोः कोशव्यसनम्' इति पिशुनः ।

३३. 'दुर्ग व्यसन एवं कोश व्यसन में कोश व्यसन अधिक महत्व रखता है। ऐसा पिशुन (नारद) का मत है।

'कोशमूलो हि दुर्गसंस्कारो दुर्गरक्षणं जनपदमित्रामित्रनिग्रहो देशान्तरितानामुत्साहनं दण्डबलव्यवहारश्च ।

३४. दुर्ग संस्कार, दुर्ग रक्षण, जनपद-मित्र- अमित्र का निग्रह, देशान्तरित नृपों को प्रोत्साहन एवं दण्डबलव्यवहार कोश के ऊपर निर्भर होता है।

दुर्गः कोशादुपजाप्यः परेषाम् ।

३५. कोश से शत्रुओं का दुर्ग उपजाप्य होता है।

'कोशमादाय च व्यसने शक्यमपयातुं, न दुर्गम्' इति ।

३६. व्यसन काल में कोश लेकर पलायन किया जा सकता है, दुर्ग को लेकर नहीं।

नेति कौटिल्यः ।

३७. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है।

पादटिप्पणी :

३३. (१) पिशुन : (नारद) का मत है कि दुर्ग तथा कोश व्यसन में कोश व्यसन बड़ा है।

पादटिप्पणी :

३४. (१) दुर्गसंस्कार : दुर्ग बनाना या पूर्ण करना या संस्कृत करना। द्र० २:४:३१, मनु० ३:३७।

(२) देशान्तरित : देश से दूर या दूर देश में रहने वालों से तात्पर्य है।

(३) दण्डबलव्यवहार : सैनिक आदि का उपयोग शस्त्रोपचार; सैनिक शक्ति का उपयोग ८:१:३८, ९:२:४, १३:३:१५, गण० ३:५२।

पादटिप्पणी :

३५. (१) उपजाप : गुप्तप्रोत्साहन, चुपचाप फुसलाना। द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२,

पादटिप्पणी :

३६. (१) आपयातुं : पलायन, भागना, खिसक जाना।

पादटिप्पणी :

३७. (१) कौटिल्य : इसका पोषण या समर्थन नहीं करते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुर्गार्पणः कोशो दण्डस्तूष्णींयुद्धं स्वपक्षनिग्रहो दण्डबलं व्यवहार आसारं-प्रतिग्रहः परचक्राटवीप्रतिषेधश्च ।

३८. कोश, दण्ड, तूष्णीं युद्ध, स्वपक्षनिग्रह, दण्ड बलव्यवहार, मित्रबलस्वीकार, शत्रु सैन्य एवं आटविक का आक्रमण निवारण दुर्ग के अधीन होता है ।

दुर्गाभावे च कोशः परेषाम् ।

३९. दुर्ग के अभाव में कोश शत्रुओं का हो जाता है ।

दृश्यते हि दुर्गवतामनुच्छित्तिरिति ।

४०. दुर्गवालों का उच्छेदाभाव देखा जाता है ।

'कोशदण्डव्यसनयोर्दण्डव्यसनम्' इति कौणपदन्तः ।

४१. 'कोश व्यसन एवं दण्ड व्यसन में दण्ड व्यसन महत्त्वपूर्ण होता है ।' ऐसा कौणपदन्त का मत है ।

दण्डमूलो हि मित्रामित्रनिग्रहः परदण्डोत्साहनं स्वदण्डप्रतिग्रहश्च ।

४२. मित्र-अमित्र का निग्रह, अन्य की सेना का प्रोत्साहन एवं स्वदण्डप्रतिग्रह दण्ड द्वारा ही सम्भव होते हैं ।

दण्डाभावे च ध्रुवः कोशविनाशः ।

४३. दण्ड के अभाव में कोश विनाश निश्चित होता है ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) तूष्णीं युद्ध : शान्तयुद्ध । द्र० ७:६:४१ । गण० २७२ ।

(२) निग्रह : रोकथाम, नियन्त्रण ।

(३) दण्डबल व्यवहार : सेना या सैनिक शक्ति का प्रयोग करना । द्र० ८:१:३४ ।

(४) आसार : मित्र के सैनिक । द्र० १०:१:७ । गण० १:२२, ३:५३, १४,१०७, १२३, १७१, २०४ ।

(५) परचक्र : शत्रु सेना ।

(६) प्रतिषेध : निवारण । द्र० २:८;३ । ५:१:३, ३८ ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) अनुच्छित्ति : नष्ट, या उन्मूलन उच्छेद न होना ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) कौणपदन्त : भीष्म ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) परदण्डोत्साहन : सहायतार्थआयी दूसरे की सेना को उत्साहित करना ।

(२) प्रतिग्रह : संवृहण पुनःवली करणःबल कारक नूतन सैन्य समावेश । द्र० १:१६:७, २:१४:३८, ७:१७:३:५:१२, १०:२:३०, १०५:५८, १:१३:९, १०:६:१२ ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) ध्रुव : निश्चित ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोशाभावे च शक्यः कुप्येन भूम्यापरभूमिस्वयंग्राहेण[2] वा दण्डः पिण्डयितुं, दण्डवता च कोशः ।

४४. कोश के अभाव में कुप्य (वस्यादि), भूमि अथवा शत्रु भूमि पर, स्वयंगृहीत धन द्वारा दण्ड (सैन्य) संग्रह किया जा सकता है, दण्ड वालों के अधिकार में ही कोश रहता है।

स्वामिनश्चासन्नवृत्तित्वादमात्यसधर्मा[2] दण्डः इति ।

४५. 'स्वामी के आसन्नवर्ती होने के कारण दण्ड अमात्य के समान महत्त्वपूर्ण होता है'।

नेति कौटिल्यः ।

४६. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है।

कोशमूलो हि दण्डः ।

४७. दण्ड कोशमूलक होता है ।

कोशाभावे दण्डः परं गच्छति स्वामिनं वा हन्ति ।

४८. कोश के अभाव में दण्ड परगामी होता है अथवा स्वामी का वध कर देता है।

सर्वाभियोगकरश्च कोशो धर्मकामहेतुः ।

४९. कोश सब के साथ अभियोग सम्पन्न करने वाला एवं धर्म काम का हेतु होता है।

देशकाल कार्यवशेन तु कोशदण्डयोरन्यतरः प्रमाणो भवति ।

५०. देश, काल एवं कार्यवश कोश एवं दण्ड में किसी एक का महत्त्व अधिक होता है।

पादटिप्पणी :

४४. (१) कोशाभावे : कोश न होने पर ।

(२) स्वयंग्राह : द्र० ८:४।२३, ९:३:१ ।

(३) पिण्ड : विग्रह ।

पाठभेद :

'स्वामिनश्च' का देवनागरी अनुलिपि में 'स्वादिनश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) आसन्न : राजा को निकट होने से तात्पर्य है । द्र० ८:१:११ ।

(२) सधर्मा : समान धर्म या स्वभावयुक्त ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) मूल : दण्ड कोश पर निर्भर रहता है । दण्ड का स्रोत कोश है । गण० १:१३, ३:१९१ ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) परं: शत्रु या दूसरे ।

(२) हन्ति : हत्या से तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लम्भपालनो हि दण्डः कोशस्य, कोशः कोशस्य दण्डस्य च भवति।

५१. दण्ड कोश का और कोश, कोश एवं दण्ड का रक्षक होता है।

सर्वद्रव्यप्रयोजकत्वात्कोशव्यसनं गरीय इति।

५२. समस्त द्रव्य प्रकृतियों में कार्यकारी होने के कारण कोश व्यसन प्रबल होता है।

'दण्डमित्रव्यसनयोर्मित्रव्यसनम्' इति वातव्याधिः।

५३. 'दण्ड-व्यसन एवं मित्र-व्यसन में मित्रव्यसन अधिक महत्व का होता है' ऐसा वातव्याधि का मत है।

'मित्रमभृतं व्यवहितं च कर्म करोति, पार्ष्णिग्राहमासारममित्रमाटविकं च प्रतिकरोति, कोशदण्डभूमिभिश्चोपकरोति व्यसनावस्थायोगम्' इति।

५४. मित्र अपालित एवं अप्रत्यक्ष (दूरस्थ) होकर भी कर्म करता है, पार्ष्णिग्राह, आसार, अमित्र एवं आटविक का निवारण करता है और कोश, दण्ड, एवं भूमि से उपकार करता है तथा व्यसनावस्था में साथ रहता है।

नेति कौटिल्यः।

५५. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है।

दण्डवतो मित्रं मित्रभावे तिष्ठति, अमित्रो वा मित्रभावे।

५६. दण्ड युक्त नृप का मित्र मित्रभाव में स्थित रहता है, अमित्र भी मित्रभाव में रहता है।

दण्डमित्रयोस्तु साधारणे कार्ये सारतः स्वयुद्धदेशकाललाभाद्विशेषः।

५७. दण्ड एवं मित्र का कार्य तलतः समान होनेपर भी अपने अनुकूल युद्ध, देश, काल एवं काम के अनुसार वैशिष्ट्य माना जाता है।

पाठभेद :

'लम्भपालनो' का तेलगू अननुप्रतिलिपि में 'लब्ध पालनो' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'लम्भपालदो' एवं 'कोशस्य दण्डस्य' का तंजौर व तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कोशदण्डस्य' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५१. (१) लम्भ : प्राप्ति लाभ या विजय। द्र० ७:१७:३५, ३६, १३:५:५२। गण० ३:२०९।

पादटिप्पणी :

५२. (१) सर्वद्रव्य : राज्यकर द्रव्य प्रकृति यथा दुर्गादि। द्र० ५:४:१, ६:८:२८,९:७:४९।

पादटिप्पणी :

५३. (१) मित्रव्यसन : द्र० ७:१२:१०।

(२) वातव्याधि : उद्धव।

पादटिप्पणी :

५४. (१) उपकरोति : सहायता या उपकार करना :

(२) व्यसनावस्थायोगम् : मित्र का विशेषण है।

पाठभेद :

'मित्रभावे' का देवनागरी अनुलिपि में 'मित्राभावे' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५७. (१) साधारण : मामूली, सदृश, समान। द्र० ८:१:२७।

(२) सार : शक्ति, बल। द्र० १:१६:९, ८:१:६१, १०:५:१४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शीघ्राभियाने त्वमित्राटविकानभ्यन्तरकोपे न च मित्रं विद्यते ।

५८. शीघ्र अभियान में तथा अमित्र, आटविक एवं आन्तरिक जनों के कोप के समय मित्र उपस्थित नहीं रहता है ।

व्यसनयौगपद्ये परवृद्धौ च मित्रमर्थयुक्तौ तिष्ठति ।

५९. व्यसन की समकालीनता और शत्रु की वृद्धि में मित्र कार्यलाभ के पक्ष में रहता हैं ।

इति प्रकृतिव्यसनसंप्रधारणमुक्तम् ।

६०. इस प्रकार प्रकृति व्यसन का निर्धारण कहा गया ।

प्रकृत्यवयवानां तु व्यसनस्य विशेषतः ।
बहुभावोऽनुरागो वा सारो वा कार्यसाधकः ॥

६१. प्रकृति अवयवों का व्यसन वैशिष्ट्य होने पर भी बहुत्व, अनुराग अथवा सार (उत्तमगुणवत्ता) कार्य साधक होता है । अर्थात् बहुत्वादि जिसमें हो उसका अधिक महत्व है ।

पाठभेद :

'टविकानभ्यन्तर' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'टविकाभ्यन्तर' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५८. (१) अमित्र : शत्रु ।

(२) आटविक : वनवासी ।

(३) आभ्यन्तरकोप : अन्तर विद्रोह । द्र० ९:३:१२, १:१३:२०, १:६:२९, ७:१:२० ।

(४) कोप : विद्रोह । गण० ३:१२ ।

पादटिप्पणी :

५९. (१) व्यसनयौगपद्ये : जब विजिगीषु तथा शत्रु दोनों आपदा ग्रस्त हों । द्र० ८:१:१ ।

(२) अर्थयुक्तौ : द्र० ७:१८:३५ ।

पादटिप्पणी :

६०. (१) संप्रधारण : विचार, किसी विषय के औचित्य या अनौचित्य का निर्धारण या निर्णय करना ।

पादटिप्पणी :

६१. (१) प्रकृत्यवयवानां : प्रकृति के अवयव । (१) स्वामी, (२) आमात्य, (३) जनपद, (४) दुर्ग, (५) कोश, (६) दण्ड तथा (७) मित्र । (अ) राज प्रकृति–युवराजादि (आ) जनपद प्रकृति–कृषिकर्मादि (इ) दुर्ग प्रकृति–धान्वन दुर्गादि, (ई) कोश प्रकृति–रत्नादि (उ) दण्ड प्रकृति–मौल भृत्यादि (ऊ) मित्र प्रकृति सदजाति आदि ।

(२) बहुभाव : बहुसंख्यक ।

(३) अनुराग : द्र० ७:५:१४, ७:९:३५, ८:२:२४, ४८, ४९, गण० १:४३ ।

(४) सार : द्रव्य प्रकृति में आता है ।

(५) कार्य साधक : कार्य को सिद्ध करने वाले होते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वयोस्तु व्यसने तुल्ये विशेषो गणतः क्षयात् ।
शेषप्रकृतिसाद्गुण्यं यदिस्यान्नाविधेयकम् ॥

६२. शत्रु एवं विजिगीषु का व्यसन समान होने पर, गुणयुक्तता और गुणहीनता के आधार पर, वैशिष्टय माना जाता है, किन्तु यदि शेष प्रकृतियों में गुणवत्ता हो, तो वह वैशिष्टय मान्य नहीं होता।

शेषप्रकृतिनाशस्तु यत्रैकव्यसनाद्भवेत् ।
व्यसनं तद्गरीयः स्यात्प्रधानस्येतरस्य वा ॥

६३. जहाँ एक प्रकृति के व्यसन से दोष प्रकृति का नाश हो, वह व्यसन अधिक महत्वपूर्ण है, वह व्यसन प्रधान प्रकृति का हो अथवा अप्रधान का।

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणेप्रकृतिव्यसनवर्गः प्रथमोऽध्यायः । आदितः सप्तदशशततमः ।

अष्टम अधिकरण के अन्तर्गत व्यसनाधिकारिक में प्रकृति व्यसन वर्ग सम्बद्ध प्रथम अध्याय समाप्त।

आदि से एक सौ सत्रहवां अध्याय समाप्त है।

पाठभेद :

'न्नाविधेयकम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'न्नाभिधेयकम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६२. (१) तुल्य। बराबर।

(२) गुण : द्र० २:१३:२७, ३९; २:२४:४५, ७:१:१३, १९; ८:२:३, गण० १:२१५।

(३) क्षयात् : अभाव। द्र० ७:२:३, गण० १, १४३, २:२३९, ३;६७, ९७।

(४) साद्गुण्य : सद्गुण की प्राप्ति।

(५) अविधेयकम् : नियन्त्रण न होना, असफल, काम के अनुपयुक्त।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिकेऽष्टमाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः प्रकृति व्यसनवर्गः, आदितः सप्तदशशततमः।

मैसूर संस्करण में—

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे प्रकृतिव्यसनवर्गः प्रथमोऽध्यायः आदितस्सप्तदशशततमः।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः प्रकृतिव्यसनवर्गः आदितस्सप्तदशशततमः।

उदयवीरशास्त्री संस्करण में—

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे प्रकृतिव्यसनवर्गः प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

आदितः सप्तदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥११७॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय २

[अष्टाविंशतिशततमं प्रकरणम्—राजराज्ययोर्व्यसनचिन्ता]

एक सौ अट्ठाईसवां प्रकरण—राजा एवं राज्य की व्यसन चिन्ता

राजा राज्यमिति प्रकृतिसंक्षेपः ।

१. राजा एवं राज्य प्रकृति का संक्षिप्त रूप है।

राज्ञोऽभ्यन्तरो वाह्यो वा कोप इति ।

२. राजा के प्रति (राज्य का) कोप अभ्यन्तर अथवा वाह्य होता है।

अहिभयादभ्यन्तरः कोपो वाह्यकोपात्पापीयान्, अन्तरमात्यकोपश्चान्तः-कोपात् ।

३. सर्पभय सदृश आभ्यन्तर कोप वाह्य कोप की अपेक्षा अधिक अनिष्टकारी होता है, वह दो प्रकार का होता है, अन्तरमात्य कोप एवं वाह्यमात्य कोप।

तस्मात्कोशदण्डशक्तिमात्मसंस्थां कुर्वीत ।

४. अतएव (विजिगीषुनृप) कोशशक्ति एवं दण्ड शक्ति स्वाधीन रखे ।

पादटिप्पणी :

राज्य व्यसन : सूत्र २-४ राजा के जीवन सम्बन्धी आपदाओं के विषय ।

राज्य व्यसन : सूत्र ५-२५ ।

पादटिप्पणी :

१. (१) राजा : स्वामी, मित्र एवं प्रकृति ।

(२) राज्यम् : प्रशासन, राज्य करने की प्रक्रिया को कहते हैं न कि राज्य कार्य । कामन्यक १५:१, गण० १:१७, द्र० ५:१:२ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) अभ्यन्तरकोप : अमात्यादि जनित विद्रोह । द्र० ९:३:१२ ।

(२) वाह्यकोप : द्र० ९:३:२२ ।

(३) कोप : विद्रोह, राज विप्लव । द्र० १:१३:२०; १:१६:३९; ७:११:२० ।

पादटिप्पणी :

३. (१) अहिभयाद् : सर्प के समान खतरनाक । द्र० १:१७:१९, ८:२:३, ९:३:३०, ९:५:३१, गण० ३:५६ ।

(२) अभ्यन्तरकोप : अन्तःपुर के अधिकारियों का विद्रोह । द्र० ९:२:६, ९:३:१२, ८:१:५८, ८:२:२ ।

(३) अन्तरमात्यकोप : राज प्रासादीय अधिकारियों यथा दौवारिक एवं अन्तर्वांशिकादि बीसवीं शताब्दी के उत्तराध में हुए प्रकार का कोप मुसलिम देशों में सामान्य बात हो गया था । द्र० ९:३:२० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'द्वैराज्यवैराज्ययोर्द्वैराज्यमन्योन्यपक्षद्वेषानुरागाभ्यां परस्परसंघर्षेण वा विनश्यति, वैराज्यं तु प्रकृतिचित्तग्रहणापेक्षि यथास्थितमन्यैर्भुज्यते' इत्याचार्याः ।

५. 'द्वैराज्य और वैराज्य में द्वैराज्य अन्योन्य पक्ष के प्रति द्वेषभाव एवं अनुराग के कारण पारस्परिक संघर्ष से नष्ट हो जाता है, वैराज्य प्रकृतिचित्त ग्रहणापेक्षी होने से यथास्थित रहकर, (प्रजाजन द्वारा) भोगा जाता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

६. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है।

पितापुत्रयोर्भ्रात्रोर्वा द्वैराज्यं तुल्ययोगक्षेमममात्यावग्रहं वर्तयति ।

७. पिता-पुत्र अथवा दो भाइयों के विरोधभाव से द्वैराज्य होता है, वह समान योग-क्षेम होने के कारण आमात्यों द्वारा शमनीय होता है।

वैराज्यं तु जीवतः परस्याच्छिद्य 'नैतन्मम' इति मन्यमानः कर्शयति, अपवाहयति, पण्यं वा करोति, विरक्तं वा परित्यज्यापगच्छतीति ।

८. वैराज्य को विजिगीषु जीवित अन्यनृपति छीनकर (यह मेरा नहीं है) ऐसा मानता हुआ पीड़ित करता है, अन्यत्र ले जाता है, विक्रीत करता है अथवा अपने प्रति विरक्त होने पर, त्यागकर चला जाता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) द्वैराज्य : दो स्वामी या राजाओं का राज्य होता है। दो राजाओं का संयुक्त शासन। द्र० ८:२:७, गण० ३:१२।

(२) वैराज्य : द्र० ८:२:८, गण० ३:१२।

(३) अन्योन्य : जो जबर्दस्ती राज्य हथिया लेते हैं जिनका राज्य युक्त नहीं होता।

पाठभेद :

'वर्तयति' का देवनागरी अनुलिपि में 'वर्तयतेति' तथा श्रीमूल में 'वर्तयेतेति' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

७. (१) तुल्य : समान, बराबर। द्र० १:३:९, ३:४:१८, ३:१८:४, ४:१:१४, ७:१:६२।

(२) योगक्षेम : द्र० १:४:३, १:५:२।

(३) अमात्यावग्रह : जहाँ अमात्यों पर नियन्त्रण होता है। द्र० १:८:१, २९।

पाठभेद :

'वैराज्यं' का न्यायचन्द्रिका में 'वैराज्ये' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

८. (१) वैराज्यं : द्र० ८:२:५।

(२) जीवन : जीवित रहते हुए।

(३) परस्याच्छिद्य : दूसरे का छीन लेना।

(४) कर्शन : द्र० ७:३:१६, ७:४:१०, ७:८:८, ७:१०:४, १३:४:१, गण० ३:२०६।

(५) अपवाहयति : ले जाना। द्र० ७:१:३३, ९:४:८, ११:१:१६, ५३, गण० २:३४६।

(६) पण्य : बेचना, क्रय-विक्रय का भार करना। द्र० १:१७:४२, ७:६:३६, ८:४:३४, ९:३:२७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्धश्चलितशास्त्रो वा राजेति 'अशास्त्रचक्षुरन्धो यत् किंचनकारीदृढाभिनिवेशीपरप्रणेयो वा राज्यमन्यायेनोपहन्तिचलितशास्त्रस्तु यत्र शास्त्राच्चलितमतिर्भवति शक्यानुनयो भवति' इत्याचार्याः ।

९. अन्ध अथवा चलित शास्त्र नृप श्रेष्ठ होता है। 'शास्त्रदृष्टि हीन अन्ध राजा यत्किंचनकारी (स्वेच्छाचारी), दुष्कर्माभिनिवेशी अथवा अन्य द्वारा प्रेरणीय होता है, वह अन्याय से राज्य को नष्ट करता है, चलित शास्त्र नृपति जहाँ शास्त्र से चलितबुद्धि होता है, वहाँ सरलतया निवारणीय होता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

१०. यह कौटिल्य का अभिमत नहीं है।

अन्धो राजा शक्यते सहायसंपदा यत्र तत्र वा पर्यवस्थापयितुम् ।

११. अन्धराजा अमात्यादि गुण सम्पदा द्वारा कहीं भी हित में सुव्यवस्थित किया जा सकता है।

चलितशास्त्रस्तु शास्त्रादन्यथाभिनिविष्टबुद्धिरन्यायेन राज्यमात्मानं चोपहन्तीति ।

१२. चलितशास्त्र राजा शास्त्र के विपरीत अभिनिविष्ट बुद्धिवाला होने के कारण अन्याय पूर्वक राज्य तथा स्वयं को विनाश कर देता है।

व्याधितो नवो[2] वा राजेति 'व्याधितो राजा राज्योपघातममात्यमूलं प्राणबाधं वा राज्यमूलमवाप्नोति, नवस्तु राजा स्वधर्मानुग्रह-परिहारदान-कर्मभिः प्रकृतिरञ्जनोपकारैश्चरति' इत्याचार्याः ।

१३. व्याधिग्रस्त अथवा नवीन राजा में 'व्याधित राजा अमात्यमूलक राज्योपघात अथवा राज्यमूलक प्राणबाधा को प्राप्त करता है। नवीन राजा स्वधर्मानुष्ठान, अनुग्रह, परिहार (करमोक्षादि) दान, मान एवं अन्य सत्कर्मों तथा प्रजानुरञ्जनोपकारों से व्यवहार सम्पन्न करता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

पादटिप्पणी :

९. (१) अन्ध : शास्त्ररूप चक्षु रहित, शास्त्र ज्ञान विहीन। शास्त्र से अनभिज्ञ।

(२) चलितशास्त्र : जो जानबूझ कर शास्त्र की बात को नहीं-मानते। शास्त्रज्ञ होकर, जो अनुकूल आचरण नहीं करते।

(३) परप्रणेयो : दूसरों की बुद्धि प्रेरणा के अनुसार कार्य करने वाला।

पादटिप्पणी :

११. (१) पर्यवस्था : विरोध या विरोध में कही गयी बात, प्रतिपक्षवाद।

पादटिप्पणी :

१२. (१) चलितशास्त्र : द्र० ८:२:९।

(२) उपहति : चोट या विनाश है। द्र० २:७:४, ५:४:७, ८:३:९, ९:१:१२, ३:८:२२।

पादटिप्पणी :

१३. (१) व्याधितराजा : व्याधि ग्रस्त राजा। द्र० ३:४:१३।

(२) नव : नवीन राजा।

(३) अमात्यमूल : अमात्यों द्वारा किया।

(४) प्राणबाधं : जीवन का खतरा।

(५) राज्यमूल : राजा द्वारा किया।

(६) कर्म : कृषि आदि प्रजोपयोगी कार्य, गण० ३:११७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेति कौटिल्यः ।

१४. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है ।

व्याधितो राजा यथाप्रवृत्तं राजप्रणिधिमनुवर्तयति ।

१५. व्याधित राजा यथापूर्व राजकर्म सम्पन्न करता है ।

नवस्तु राजा बलावर्जितं 'ममेदं राज्यम्' इति यथेष्टमनवग्रहश्चरति ।

१६. नवीन राजा बलपूर्वक अर्जित 'यह मेरा राज्य है' ऐसा मान कर, यथेच्छ निरंकुश व्यवहार करता है ।

सामुत्थायिकैरवगृहीतो वा राज्योपघातं मर्षयति ।

१७. अथवा समुत्थायिक समूहबद्ध नृपों से अवगृहीत होकर, राज्यनाश सहन करता है ।

प्रकृतिष्वरुढः सुखमुच्छेत्तुं भवतीति ।

१८. प्रकृति के प्रति स्नेहपूर्ण न होने से सुखोच्छेद्य होता है ।

व्याधिते विशेषः पापरोग्यपापरोगी च ।

१९. व्याधित के दो भेद हैं—पापरोगी और अपापरोगी ।

नवेऽप्यभिजातोऽनभिजातं इति ।

२०. नवीन राजा में भी अभिजात राजा अनभिजात राजा श्रेष्ठ, होता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) राजप्रणिधि : राजा का नित्य का कर्म या कर्तव्य । द्र० ५:६:५, शीर्षक १:१९ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) बलावर्जित : जो शक्ति या बल के द्वारा राज्य प्राप्त करता है ।

(२) अनवग्रह : निरंकुश, अनियन्त्रित । द्र० १:१५:३६, ७:८:४१, ८:४:२७, गण० १:७१ ।

पाठभेद :

'समुत्थायिकैर्' का तेलगू अनुप्रतिलि में 'समुत्थायकैर्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) सामुत्थायिक : साथी, जो विप्लव या प्रयाण में साथी होते हैं । गण० २:३६४ ।

पाठ भेद :

'वरूढः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अगूढः' तथा 'सुखमुच्छेत्तु' का श्रीमूल में 'सुखः समुच्छेत्तु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) प्रकृति : जनता, प्रजा ।

पाठभेद :

'पापरोग्यापरोगी' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पापरोग्यपरोगी' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) पापरोगी : जैसे कुष्ठादि घृणा, पाप रोग से ग्रस्त, बुरा रोग जैसे—शीतला चेचक । गण० ३:१५ ।

(२) अपापरोगी : साधारण रोगी या जो पाप रोगी नहीं है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) अभिजात : कुलीन या उच्च कुलोत्पन्न । द्र० १:९:१, गण० १४५, ३:२११ ।

(२) अनभिजात : नीचकुलोत्पन्न ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुर्बलोऽभिजातो बलवाननभिजातो राजेति 'दुर्बलस्याभिजातस्योपजापं दौर्बल्यापेक्षाः प्रकृतयः कृच्छ्रेणोपगच्छन्ति, बलवतश्चानभिजातस्य बलापेक्षाः सुखेन' इत्याचार्याः ।

२१. अभिजात दुर्बल राजा बलवान् अनभिजात राजा से श्रेष्ठ होता है, 'दुर्बल अभिजात नृपति की प्रकृतियाँ दौर्बल्य के कारण दुःखपूर्वक वश में होती हैं किन्तु बलवान् अनभिजात की प्रकृतियाँ बल के प्रभाव से सुख से वशीभूत होती हैं' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

२२. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है।

दुर्बलमभिजातं प्रकृतयः स्वयमुपनमन्ति, जात्यमैश्वर्यप्रकृतिरनुवर्तत इति ।

२३. दुर्बल अभिजात नृपति की प्रकृतियाँ स्वयं अनुगमन (आश्रय ग्रहण) करती हैं, क्योंकि ऐश्वर्य प्रकृति कुलीन का अनुगमन करती है।

बलवतश्चानभिजातस्योपजापं विसंवादयन्ति, अनुरागे सार्वगुण्यम् इति ।

२४. बलवान् अनभिजात के उपजाप (अनुकूलता) को (प्रकृतियाँ) निष्फल कर देती हैं क्योंकि अनुराग में सर्वगुण शीलता होती है।

प्रयासवधात् सस्यवधो मुष्टिवधात्पापीयान्, निराजीवत्वाद् अवृष्टिरतिवृष्टितः ।

२५. अनायासोत्पन्न सस्यनाश की अपेक्षा सप्रयास (बोने के बाद) उत्पन्न सस्यनाश अधिक कष्ट प्रद होता है, निराजीवत्व (जीविका भाव) के कारण अवृष्टि, अतिवृष्टि की अपेक्षा अधिक कष्टप्रद होती है।

पादटिप्पणी :

२१. (१) अभिजात : उच्चकुलीन, द्र० १:९:१, ८:२:२०।

(२) उपजाप : गुप्त रूप से फुसलाना, भड़काना। द्र० २:८३२, २:१३:२६, १:१६:२६।

(३) कृच्छ्र : द्र० ५:२:१, ७:५:३३।

पाठभेद :

'अनुरागे सार्वगुण्यम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अनुयोगे साद्गुण्यम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२४. (१) विसंवाद : निष्फली कृत या विफलीकृत करना, अस्वीकार करना। द्र० ७:८:४, ७:१४:४।

(२) अनुरागे सार्वगुण्यम् : द्र० ७:५:१४, ८:९:३५, गण० १:४३।

पादटिप्पणी :

२५. (१) प्रयासवधात् : चेष्टा या उद्योग की हानि। गण० ३:१६।

(२) सस्य वध : उत्पन्न शस्य का नाश। गण० ३:१६।

(३) आजीव : जीविका।

(४) अतिवृष्टि : अधिक पानी बरसना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वयोर्द्वयोर्व्यसनयोः प्रकृतीनां बलाबलम् ।
पारंपर्यक्रमेणोक्तं याने स्थाने च कारणम् ॥

२६. प्रकृतियों में दो-दो प्रकृतियों के व्यसन का बलाबल परम्पराक्रम से यान एवं स्थान में कारण कहा गया है।

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमाधिकरणे राजराज्ययोर्व्यसनचिन्ता द्वितीयोऽध्यायः ।

आदितोऽष्टादशशततमः ।

अष्टम अधिकरण के अन्तर्गत व्यसनाधिकारिक में राज-राज्यव्यसन चिन्ता सम्बद्ध द्वितीय अध्याय समाप्त ।

आदि से एक सौ अट्ठारहवाँ अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) यान : आक्रमण या प्रकाश या मार्च, द्र० ८:५:२४, १:२१:२८; ७:१:३५. गण० २: २३७।

(२) स्थान : शान्त रहना, आक्रमण नहीं करना। द्र० ७:१८:४३, गण० १:१४३, २:२४०, २५४, ३:१०७, १२४, १४२।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिकेऽष्टमाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः राजराज्ययोर्व्यसनचिन्ता आदितोऽष्टादशशततमः ।

मैसूरसंस्करण में—

इतिव्यसनाधिकारिके राजराज्योर्व्यसनचिन्ता-द्वितीयोऽध्यायः आदितोऽष्टादशशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिके अष्टमाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः राजराज्ययोर्व्यसनचिन्ता । आदितोऽष्टादशशततमः ।

उदयवीरशास्त्रीसंस्करण में—

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे राजराज्ययोर्व्यसनचिन्ताद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ आदितोऽष्टादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११८ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय २

[एकोनत्रिंशच्छततमंप्रकरणम्—पुरुषव्यसनवर्गः]

एकसौउन्तीसवां प्रकरण—पुरुषव्यसन

अविद्याविनयः पुरुषव्यसनहेतुः ।

१. विद्याओं की अशिक्षा पुरुषव्यसन में हेतु होता है ।

अविनीतो हि व्यसनदोषान्न पश्यति ।

२. अविनीत व्यसन दोषों को नहीं देखता है ।

तानुपदेक्ष्यामः ।

३. उन दोषों का उपदेश करेंगे, अर्थात् उन्हें कहेंगे ।

कोपजस्त्रिवर्गः, कामजश्चतुर्वर्गः ।

४. त्रिवर्ग कोप से तथा चतुर्वर्ग काम से होते हैं ।

तयोः कोपो गरीयान् ।

५. उनमें (दोनों वर्गों में) कोप अधिक प्रभावकारी-प्रबल होता है ।

सर्वत्र हि कोपश्चरति ।

६. कोप सर्वत्रगामी होता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) अविद्या : विद्या या ज्ञान का अभाव ।

(२) अविनय : विनय या नम्रता का अभाव, अशिष्टता, अनुशासनहीनता । द्र० १:५:२, ३ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) अविनीत : अशिक्षित, अनम्र, गर्वीला विनय रहित । द्र० १:१७:५१, याज्ञ० २२०:६, मनु० ३४:८४ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) कोप : यहाँ क्रोध के अर्थ में प्रयोग हुआ है ।

(२) त्रिवर्ग : कोप से उत्पन्न होने वाले त्रिवर्ग—(१) वाक्पारुष्य (२) दण्डपारुष्य (३) अर्थ-दूषण । द्र० १:३०:१६ ।

(३) चतुर्वर्ग : काम से उत्पन्न होने वाले चतुवर्ग—(१) मृगया (२) द्यूत (३) स्त्री (४) मद्य-पान ।

पादटिप्पणी :

५. (१) कोपः : क्रोध । द्र० १:१३:२० ।

(२) गरीयान् : गम्भीर, अपेक्षाकृत अधिक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रायशश्च कोपवशा राजानः प्रकृतिकोपैर्हताः श्रूयन्ते, कामवशाः क्षयनिमित्तमरिव्याधिभिरिति ।

७. प्रायः कोप के वशीभूत राजा प्रकृति कोप से मारे गये और काम के वशीभूत राजा क्षय (कोप शरीर हानि) के कारण शत्रु अथवा व्याधि से (सुने जाते हैं) मरे।

नेति भारद्वाजः ।

८. ऐसा भारद्वार का मत नहीं है।

सत्पुरुषाचारः कोपो वैरयातनमवज्ञावधो भीतमनुष्यता च ।

९. कोप सत्पुरुषाचार है, इससे वैर प्रतिशोधन अवज्ञानिवारण और अपकारी मनुष्य में भयोत्पादन किये जाते हैं।

नित्यश्च कोपेन सम्बन्धः पापप्रतिषेधार्थः ।

१०. दुर्जननिग्रहार्थं कोप सम्बन्ध नित्य (अनिवार्य) है।

पाठभेद :

'क्षयनिमित्तम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'क्षय-व्ययनिमित्तम्' तथा 'अरिव्याधिभिर्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अतिव्याधिभिः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

७. (१) प्रायश : प्रायः, बहुधा, अधिकतर।

(२) प्रकृतिकोप : जनता का विद्रोह, गण० २:२२१:३५९।

(३) क्षय : शारीरिक क्षीणता, गण० १:१४३, २:२३९, ३:६७, ९७।

(४) अरि : शत्रु। द्र० ३:४:१२, ८:२:१३।

(५) व्याधि : बीमारी।

पाठभेद :

'वैरयातनम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वैराय-तनम्' तथा 'अवज्ञावधो' का 'अवज्ञातवधो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

९. (१) वैर : विरोध, शत्रुता।

(२) अवज्ञावध : तिरस्कार, उपेक्षा, अनादर, अपमान। गण० ३:१७, गण प्र० पृ० ९६:५५।

(३) भीत : भयग्रस्त, डरा हुआ।

पाठभेद :

'कोपेन सम्बन्धः' का तंजौर में 'कोपनसम्बन्धः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कोपसम्बन्धः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१०. (१) पाप : अदृष्ट उत्पन्न करने वाला कृत्य, कुकृत्य, पाप कायिक, वाचिक, मानसिक होते हैं। वायु० १८:१ अनर्गल का, करना तथा कर्तव्य का न करना पाप कहा गया है। पापी जनों का दमन बिना क्रोध के सम्भव नहीं अतः सत्पुरुष के लिये सर्वथा कोप त्याज्य नहीं है। भाग० १:१४:१९।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कामः सिद्धिला[1]भः सा[2]न्त्वं त्याग[3]शील[4]ता संप्रि[5]यभावश्च ।

११. काम सुख लाभ का हेतु है, उससे सांत्व, त्यागशीलता एवं सौम्यभाव होता है।

नित्यश्च कामेन सम्बन्धः कृतकर्मणः फलोपभोगार्थः इति ।

१२. 'कृत कर्मफलोप भोगार्थ काम सम्बन्ध नित्य (आवश्यक) है।

नेति कौटिल्यः ।

१३. कौटिल्य को यह मत मान्य नहीं हैं।

द्वेष्यता[1] शत्रुवेदनं[2] दुःखासङ्गश्च[3] कोपः ।

१४. कोप द्वेष्यभाव, शत्रुलाभ और दुःख संयोग उत्पन्न करने वाला होता है।

परिभवो[1] द्रव्यनाशः[2] पाटच्चर[3]द्यूत[4]कारलुब्ध[5]कगायन[6]वादकै[7]श्चानर्थ्यैः[8] संयोगः कामः ।

१५. काम परिभव द्रव्यनाश तथा पाटच्चर, द्यूतकार लुब्धक, गायन और वादक इन अनर्थों के साथ संयोग कराने वाला होता है।

पादटिप्पणी :

११. (१) सिद्धिलाभ : सिद्धि प्राप्ति, सफलता ।

(२) सान्त्वं : शान्त करना, प्रसन्न करना, गण० ३:७४।

(३) त्याग : मनु० ८:३१९, ९:७८।

(४) शील : सदाचरण, व्यवहार, अच्छा स्वभाव, अच्छी प्रकृति, सद्गुण ।

(५) संप्रियभाव : सौम्य, सबसे प्रिय भाव रखने वाला ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) कर्मणः फलोपभोगार्थ : अपने किये कर्मों का फल भोगने के लिए ।

पाठभेद :

'शत्रुवेदनं' का तंजोर में 'शत्रुवेतनं' तथा 'दुःखासङ्गश्च' का 'दुःखासंगतश्च' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दुःखसंगतश्च' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१४. (१) द्वेष्यता : घृणा करना ।

(२) शत्रुवेदनं : शत्रु बनाना, गण० ३:१८ ।

(३) दुःखासङ्गश्च : दुख का साथ, दुःख का योग, अनर्थ का संयोग । गण० ३:१८।

पाठ भेद :

'अनर्थ्यैः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अनर्थैः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१५. (१) परिभव : अपमान, तिरस्कार, पराजय । द्र० ७:१६:२२, ८:३:१६ ।

(२) द्रव्यनाश : धन नाश । द्र० १:१७:३१।

(३) पाटच्चर : चोर या शराबी या मद्यप। गण ३:१८ ।

(४) द्यूतकार : जुआड़ी । द्र० ३:१०:१ :

(५) लुब्धक : शिकारी । द्र० १:१४:४, ३:४:२२, गण० ३:१७१ ।

(६) गायन : द्र० १:१२:९, २:१०:३४, ७:१७:३४ ।

(७) वादकै : द्र० १:७:२, २:३५:१०, ७:५:२३, गण० १:५८, २:३५४ ।

(८) अनर्थ्य : अनर्थ । द्र० १०:७:२३, गण० ३:८९, ९८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तयोः परिभवाद्द्वेष्यता गरीयसी ।

१६. कोपज एवं कामज में कामज परिभव की अपेक्षा कोपज द्वेष्यता अधिक अनिष्टकारिणी होती है।

परिभूतः स्वैः परैश्चावगृह्यते, द्वेष्यः समुच्छिद्यत इति ।

१७. परिभूत जन, स्वजनों एवं अन्यजनों द्वारा अपना लिया जाता है किन्तु द्वेष्यजन समुच्छिन्न कर दिया जाता है।

द्रव्यनाशाच्छत्रुवेदनं गरीयः ।

१८. कामजद्रव्यनाश की अपेक्षा कोपज शत्रुवेदन अधिक अनिष्टकर होता है।

द्रव्यनाशः कोशाबाधकः, शत्रुवेदनं प्राणाबाधकमिति ।

१९. द्रव्यनाश, कोशहानि करता है किन्तु शत्रुवेदन प्राण हानिकर होता है।

अनर्थ्यसंयोगाःखसंयोदुःगो गरीयान् ।

२०. कामज अनर्थ संयोग की अपेक्षा कोपज दुःख संयोग अधिक अनिष्ट कर होता है।

अनर्थसंयोगो मुहूर्तप्रतीकारो, दीर्घक्लेशकरो दुःखानामासङ्ग इति ।

२१. अनर्थ संयोग का कुछ समय में प्रतीकार सम्भव है किन्तु दुःखों का आसंग दीर्घ काल तक क्लेशकर होता है।

तस्मात्कोपो गरीयान् ।

२२. अतः (काम की अपेक्षा) कोप अधिक अनिष्ट कर है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) परिभव : अपमान, निरादर, तिरस्कारादि, द्र० ७:१६:२२, ८:३:१५ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) परिभूत : अनादृत, मुद्रा० ४:१३ ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) वेदनं : क्लेश, सन्ताप । द्र० ८:३:१९ ।

पाठभेद :

'प्राणाबाधकम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्राणबाधकम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१९. (१) कोशाबाधक : कोश की हानि ।

(२) शत्रुवेदनं : शत्रु लाभ, शत्रु बनाना । द्र० ८:३:१८, गण० ३:१८ ।

(३) प्राणबाधक : प्राण की हानि ।

पादटिप्पणी

२०. (१) अनर्थसंयोग । अनर्थ से सम्बन्ध ।

(२) दुखःसंयोग : दुःख से सम्बन्ध ।

पाठभेद :

'मुहूर्तप्रतीकारो' का न्यायचन्द्रिका तथा श्रीमूल में 'मुहूर्तप्रीतिकरो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२१. (१) मुहूर्त : थोड़े समय या मुहूर्तमात्र, या एक क्षण या ज्योतिष के अनुसार ४८ मिनट का काल।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाक्पारुष्यमर्थदूषणं[२] दण्डपारुष्यमिति ।

२३. वाक्पारुष्य, अर्थदूषण एवं दण्डपारुष्य कोपज त्रिवर्ग है।

'वाक्पारुष्यार्थदूषणयोर्वाक्पारुष्यं गरीयः' इति विशालाक्षः ।

२४. 'वाक्पारुष्य एवं अर्थदूषण में वाक्पारुष्य अधिक प्रबल होता है।' ऐसा विशालाक्ष का मत है।

परुषमुक्तो हि तेजस्वी तेजसा प्रत्यारोहति[२] ।

२५. 'परुषवचन से आक्षिप्त तेजस्वो पुरुष तेजास्विता के कारण प्रत्याक्रमण करता है।'

दुरुक्तशल्यं हृदि निखातं तेजःसंदीपनमिन्द्रियोपतापि च' इति ।

२६. 'दुरुक्तशल्य हृदय में चुभकर। तेज को उद्दीप्त और इन्द्रियों को सन्तप्त करता है।'

नेति कौटिल्यः ।

२७. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है।

अर्थपूजा वाक्छल्य[२]मपहन्ति[३], वृत्तिविलोपस्त्वर्थदूषणम् ।

२८. अर्थपूजा वाक्शल्य को दूर करता है। वृत्तिनाश करना अर्थदूषण है।

पादटिप्पणी :

२३. (१) वाक्पारुष्य : वचन में कठोरता, गाली देना, द्र९ ३:१८:१, गण० ३:१९ ।

(२) अर्थदूषण : धनक्षति, अर्थ की क्षति, या जीविका मारना । गण० ३:१९ ।

(३) दण्डपारुष्य : सजा देने की कठोरता, या भौतिक हानि । द्र० ४:१:५७; ३:१९:१, गण० ३:१९ ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) तेजस्वी : परिभव न सहन करने वाला । द्र० ७:३:८ ।

(२) प्रत्यारोहति : प्रतीकार, प्रतिक्रिया, प्रत्याक्रमण, तेजी से आक्रमण करना ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) दुरुक्तशल्यं : दुर्वचन रूप शल्य या कांटा या बाण या तीर ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) अर्थपूजा : धन से आदर करना ।

(२) वाक्छल्यम् : वाक्शल्य । गण० ३:१९ ।

(३) अपहन्ति : दूर करना; निवारण या नष्ट करना ।

(४) वृत्तिविलोप : आजीविका का ह्रास; वृत्ति ले लेना ।

(५) अर्थदूषण : सम्पत्ति का अतिक्रमण; लोप, भंग । गण० ३:१९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अदानमादानं विनाशः परित्यागो वाऽर्थस्येत्यर्थदूषणम् ।

२९. (अर्थ-धन का) अदान, आदान, विनाश अथवा अर्थका परित्याग अर्थदूषण होता है ।

'अर्थदूषणदण्डपारुष्ययोरर्थदूषणं गरीयः' इति पाराशराः ।

३०. अर्थदूषण एवं दण्ड पारुष्य में अर्थदूषण अधिक प्रबल होता है ।

'अर्थमूलौ धर्मकामौ ।

३१. 'धर्म और काम अर्थमूलक होते हैं ।

अर्थप्रतिबद्धश्च लोको वर्तते ।

३२. 'सांसारिक व्यवहार अर्थ पर निर्भर होता है ।

'तस्यमोपघातो गरीयान्' इति ।

३३. 'उसका उपघात प्रबल होता है ।'

नेति कौटिल्यः ।

३४. यह मत कौटिल्य को अभीष्ट नहीं है ।

सुमहताऽप्यर्थेन न कश्चन शरीरविनाशमिच्छेत् ।

३५. अत्यधिक अर्थ प्राप्त करके भी कोई शारीरिक विनाश की इच्छा नहीं करता है ।

दण्डपारुष्याच्च तमेव दोषमन्येभ्यः प्राप्नोति ।

३६. दण्डपारुष्य के कारण उसी दोषको (अर्थ दोष को) अन्य से प्राप्त करता है अर्थात् धन प्रदान करके भी दण्डपारुष्य से अपनी रक्षा करता है ।

पाठभेद :

'अदानमादानं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दानमादानम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) अदान : न देना ।

(२) आदान : ले लेना । गण० १:१३९ ।

(३) विनाश : नष्ट करना ।

(४) परित्याग : त्याग या परित्यक्त, या रक्षा करने योग्य की रक्षा नहीं करना ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) पाराशरा : पराशर मतावलम्बी या आचार्यगण ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) अर्थमूलौ : अर्थ पर निर्भर या आधारित रहना ।

पाठभेद :

'प्रतिबद्धश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतिबन्धश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) उपघात : दूषण नाश या क्षति या आघात । द्र० २:१६:६, ४:२:३२, १३:५:१३ ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) सुमहता : महान, बहुत, अधिक ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) दण्डपारुष्य : द्र० ८:३:२३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति कोपजस्त्रिवर्गः ।

३७. उस प्रकार कोपज त्रिवर्ग की व्याख्य सम्पन्न है ।

कामजस्तु मृगया[2] द्यूतं[3] स्त्रियः[4] पानमिति[5] चतुर्वर्गः[1] ।

३८. कामज चतुर्वर्ग मृगया, द्यूत, स्त्रियाँ, एवं पान है ।

तस्य 'मृगयाद्यूतयोर्मृगया गरीयसी' इति पिशुनः ।

३९. उस चतुर्वर्ग के 'मृगया एवं द्यूत में मृगया अधिक प्रबल होती है, ऐसा नारद का मत है ।

स्तेनामित्र[2]व्याल[3]दाव[4]प्रस्खलन[5]भय[6]दिङ्मोहाः[7] क्षुत्[8]पिपासे[9] च प्राणबाधा[10]स्तस्याम् ।

४०. मृगया में स्तेन, अमित्र, व्याल, दाव एवं प्रस्खबलन से भय, दिङ्मोह, भूख-प्यास सम्बन्धी प्राणपीड़ा हेतु विद्यमान रहते हैं ।

द्यूते तु जितमेवाक्षविदुषा यथा जयत्सेनदुर्योधनाभ्याम्' इति ।

४१. द्यूत में अक्षक्रीडा कुशल विजयी होता ही है, जैसे जयत्सेन एवं दुर्योधन विजयी हुए ।

नेति कौटिल्यः ।

४२. कौटिल्य को यह मत मान्य नहीं है ।

तयोरप्यन्यतरपराजयोऽस्तीति नलयुधिष्ठिराभ्यां व्याख्यातम् ।

४३. उनमें भी अन्य किसी एक की पराजय होता है, जैसे नल और युधिष्ठिर पराजित हुए ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) कामजस्तु चतुर्वर्ग : कामसे उत्पन्न होने वाले चार अवगुण । द्र० ८:३:३ ।

(२) मृगया : आखेट, शिकार ।

(३) द्यूत : जुआ खेलना ।

(४) स्त्रिय : अनेक स्त्रियां ।

(५) पान : सुरापान ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) स्तेन : चोर । मनु० ७:८३, ८:३३ ।

(२) अमित्र : शत्रु ।

(३) व्याल : हिंसक जना ।

(४) दाव : वन की आग, दावानल ।

(५) प्रस्खलन : पाद स्खलन, पैर फिसलता,

(६) भय : डर ।

(७) दिङ्मोह : दिशा भ्रम ।

(८) क्षुत् : क्षुधा

(९) पिपासा : प्यास ।

(१०) प्राणबाधा : जीवन के लिए बाधा या खतरा ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) जयत्सेन : नल का भाई । महाभारत में कम से कम ५ जयत्सेनों का नाम आता है । (१) मगध देश का राजा (आदि ६७ : ४८) (२) पुरु-वंशीय एक राजा (आदि० ९५–१६:१) (३) विराट् गुप्तवास करते समय नकुल का नाम (विराट० ५:३५, २३:१२) (४) जरासंघ का पुत्र (भीष्म० १६:६ कर्ण० ५:३०) (५) धृतराष्ट्र का एक पुत्र (भीष्म० ९-४४:४५, शल्यपर्व-२६-११:१२०)

(२) दुर्योधन : धृतराष्ट्र का पुत्र ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तदेव विजितद्रव्यमामिषं[1] वैरानुबन्धश्च[2][3] ।

४४. यह विजित द्रव्य आमिष अर्थात् सर्वभोग्य होता है और वैरानुबन्ध (बैरभाव) उत्पन्न कर है।

सतोऽर्थस्य विप्रतिपत्तिरसतश्चार्जनमप्रतिभुक्तनाशो मूत्रपुरीषधारणबुभुक्षादिभिश्च व्याधिलाभ इति द्यूतदोषाः ।

४५. पूर्वाजित धन का प्रतिकूलस्थान पर उपयोग, अशुद्ध धनार्जन द्यूताजित धन का अयोगपूर्वक द्यूत में नाश, मूत्र-पुरीष अवरोध तथा बुभुक्षादि से व्याधि प्राप्ति—ये द्यूत के दोष हैं।

मृगयायाम्[1] तु व्यायामः श्लेष्मपित्तमेदः स्वेदनाशश्चले स्थिते च काये लक्षपरिचयः कोपभयस्थानेषु च मृगाणां चित्तज्ञानमनित्यज्ञानं चेति ।

४६. मृगया में व्यायाम तथा श्लेष्मा, पित्त, मेद एवं स्वेदनाश और चल-अचल शरीर पर लक्षनिर्धारण, कोष-मय स्थानों पर मृगों के चित्त का ज्ञान तथा अनित्य (कभी-कभी) मृगयागमन- ये मृगया के गुण हैं।

'द्यूतस्त्रीव्यसनयोः कैतवव्यसनम्' इति कौणपदन्तः ।

४७. 'द्यूत व्यसन और स्त्रीव्यसन में द्यूतव्यसन अधिक हानिप्रद है' ऐसा कौणपदन्त (भीष्म) का मत है।

सातत्येन[1] हि निशि प्रदीपे मातरि च मृतायां दीव्यत्येव कितवः[2] ।

४८. द्यूतकार रात्रि में दीपक प्रकाश और माता के भी मरने पर सदैव द्यूत में आसक्त रहता है।

पाठभेद :

'वैरानुबन्धश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बैरबन्धश्च' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४४. (१) आमिष : अनुवादको ने आमिष का अर्थमांस किया है।

(२) वैर : शत्रुता।

(३) अनुबन्ध : बंधन, परिणाम। द्र० १:१६:२९, ४:१०:१७, ७:६:१९, ९:४:२४, ९:७:२४।

पाठभेद :

'द्यूतदोषाः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'द्यूतदोषः' पाठभेद मिलता है।

४५. (१) विप्रतिपत्ति : अनिश्चितता नियमों का परस्पर निरुद्ध होना, विकृति। द्र० १:९:१, ७:१७:२६

पाठभेद :

'स्थिते' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्थिरे' तथा 'स्थानेषु' का 'स्थानेहितेषु' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४६. (१) मृगया : तुलनीय शकुन्तला अंक २।

पादटिप्पणी :

४७. (१) कैतवव्यसन : जुआ के व्यसन या दोष या आपदा। द्र० ६:१:२२, स्कन्द० १:१:१८; ५४।

पादटिप्पणी :

४८. (१) सातत्ये : सर्वदा, द्र० ७:११:१३, ७:१३:१६, गण० २:२९६।

(२) कितव : जुआड़ी, धूर्त, स्कन्द० १:१:१८, १३७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कृच्छ्रे[1] च प्रतिपृष्टः कुप्यति ।

४९. सङ्कटापन्न स्थिति आने पर, पूछने पर, क्रोध करता है ।

स्त्रीव्यसने तु स्नानप्रतिकर्मभोजनभूमिषु भवत्येव धर्मार्थपरिप्रश्नः ।

५०. स्त्री व्यसन में (व्यसनीराजा से) स्नान, प्रसाधन एवं भोजन स्थान पर, धर्म या अर्थ सम्बन्धी प्रश्न पूछा जा सकता है ।

शक्या[1] च स्त्रीराजहिते नियोक्तुम्, उपांशुदण्डेन[2] व्याधिना वा व्यावर्तयितुमवस्रावयितुं[3] वा' इति ।

५१. स्त्री को राजहित में लगाया जा सकता है, उसे उपांशुदण्ड अथवा व्याधि से पृथक् हटाया जा सकता है ।

नेति कौटिल्यः ।

५२. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है ।

सम्प्रत्यादेयं[1] द्यूतं निष्प्रत्यादेयं[2] स्त्रीव्यसनम् ।

५३. द्यूत सम्प्रत्यादेय एवं स्त्री व्यसननिष्प्रत्यादेय होता है ।

अदर्शनं[1] कार्यनिर्वेदः[2] कालातिपातनादनर्थो[3][4] धर्मलोपश्च[5] तन्त्रदौर्बल्यं[6] पानानुबन्धश्चेति ।

५४. अदर्शन, कार्यनिर्वेद, कालातिपात से अनर्थ प्राप्ति एवं धर्म लोप राजतन्त्रकी दुर्बलता तथा सुरापान प्रवृत्ति—ये स्त्री व्यसन के दोष हैं ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) कृच्छ्र : संकट, कठिन, द्र० ५:२:६, ७:५:६, ७:५:३३, स्कन्द० ६:५३:८३, अग्नि ११: १८:४९ ।

पाठ भेद :

'स्त्रीव्यसने' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्त्रीव्यसनेषु तु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) शक्या : संभव, होने योग्य, साध्य । द्र० ३:१:३,६, ७:१०:९, १३:६० ।

(२) उपांशुदण्ड : गुप्त दण्ड या हत्या, द्र० १:१३:२०, १:१७:६ ।

(२) व्यावर्त : चक्करखाना, परिवेष्ठत करना, पृथक करना ।

पादटिप्पणी :

५३. (१) सम्प्रत्यादेय : पुनः प्राप्य अर्थात् द्यूत में धन पुनः प्राप्त किया जा सकता है ।

(२) निष्प्रत्यादेय : अपुनः प्राप्य ।

पाठभेद :

'कालातिपात' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कार्यातिपात' पाठभेद मिलता है । तथा 'दनर्थोधर्मलोपश्च' का दनर्थधर्मलोपश्च' तथा 'पानानुबन्ध' का 'बासानुबन्ध' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५४. (१) अदर्शन : अपने को न दिखाना ।

(२) कार्यनिर्वेद : कार्य अथवा कर्म से पराङ्मुखता । गण० ३:२०३ ।

(३) कालातिपात : विलम्ब, समय का नाश ।

(४) अनर्थ : द्र० १:१७।३३, १:७:२, २:३५: १०, ७:५:२३, गण० ३:६९ ।

(५) धर्म : द्र० ३:१:३९, ४०, गण० १:२ ।

(६) तन्त्र : प्रशासन, द्र० ४:३:५४, ६४, गण० १:५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'स्त्रीपानव्यसनयोः स्त्रीव्यसनम्' इति वातव्याधिः ।

५५. 'स्त्री-व्यसन एवं पान-व्यसन में स्त्री-व्यसन अधिक प्रबल हानि कर होता हैं' ऐसा बात व्याधि का मत है।

'स्त्रीषु हि बालिश्यमनेकविधं निशान्तप्रणिधौ व्याख्यातम्' ।

५६. 'स्त्रयों की अनेक प्रकार की मूर्खतायें हैं, जिनका वर्णन निशान्तप्रणिधि में किया गया है।

पाने तु शब्दादीनामिन्द्रियार्थानामुपभोगः प्रीतिदानं परिजनपूजनं कर्मश्रमवधश्च इति ।

५७. सुरापान में शब्दादि इन्द्रियार्थों का उपयोग, प्रीतिदान, परिजन सत्कार, तथा कर्म श्रम नाश होता है।

नेति कौटिल्यः ।

५८. यह मत कौटिल्य को अभीष्ट नहीं है।

स्त्रीव्यसने भवत्यपत्योत्पत्तिरात्मरक्षणं चान्तर्दारेषु, विपर्ययो वाह्येषु अगम्येषु सर्वोच्छित्तिः ।

५९. अन्तःपुर की स्त्रियों में स्त्री व्यसन होने पर, सन्तानोत्पत्ति एवं आत्मरक्षा होती है। किन्तु वाह्यस्त्रियों में सन्तानोत्पत्यादि नहीं होती अगम्यास्त्रियों में आसक्ति होनेपर सर्वोच्छेद होता है।

तदुभयं पानव्यसने ।

६०. पानव्यसन में दोनों दोष होते हैं।

पादटिप्पणी :

५६ (१) बालिश्यम : बचपन, मूर्खता, द्र० १: २०:१४-८७, ७:१०:२३ ।

(२) निशान्त : राजकीय आवास, द्र० १: १७:२, ४:३:४, गण० १:९८ ।

(३) प्रणिधि : नियम कायदा, द्र० ५:६:५, गण० १:५६ ।

(४) व्याख्यात : अधिकरण द्र० १:२० ।

पाददिप्पणी :

५७, (१) प्रीतिदान : प्रेम का विस्तार या प्रेम का दान या करना ।

पाठ भेद :

'विपर्ययो वा' का देवनागरी अनुलिपि में 'विपर्यये वा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५९. (१) अन्तर्दारा : अपने घर की स्त्री, अपनी पत्नी ।

(२) अगम्या : जिसके साथ संगम या मैथुन अनुचित माना गया है।

(३) सर्वोच्छेदः : सर्व नाश ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पानसंपत्[1]—संज्ञानाशो[2]ऽनुन्मत्तस्योन्मत्तत्वमप्रेतस्य प्रेतत्वं कौपीनदर्शनं[3] श्रुतप्रज्ञाप्राणवित्तमित्रहानिः सद्भिर्वियोगोऽनर्थ्यसंयोगस्तन्त्रीगीतनैपुण्येषु चार्थघ्नेषु प्रसङ्ग इति ।

६१. पानसम्त्—संज्ञानाश, अनुन्मत्त का उन्मत्तत्व, अमृत (न मरा हुआ) का मृतत्व, कौपीन दर्शन तथा शास्त्र, प्रज्ञा, प्राण, वित्त एवं मित्र की हानि, सज्जनों से वियोग, अनर्थ्य प्राप्ति, अर्थ नाशक वीणा गान कौशलों में आसक्ति सुरापानोत्पन्नदोष हैं ।

द्यूतमद्ययोर्द्यूतम् ।

६२. द्यूत एवं मद्य में द्यूत अति अनिष्टकर है ।

एकेषां पणनिमित्तो[2] जयः पराजयो वा प्राणिषु[3] निश्चेतनेषु वा पक्षद्वैधेन प्रकृतिकोपं करोति ।

६३ कुछ लोगों के मत से प्राणि सम्बन्धी अथवा अप्राणि सम्बन्धी पणनिमित्तक जय अथवा पराजय दो पक्ष में होने के कारण प्रकृति कोप उत्पन्न करता है ।

विशेषतश्च संघानां संघधर्मिणां[2] च राजकुलानां द्यूतनिमित्तो भेदस्तन्निमित्तो विनाश इत्यसत्प्रग्रहः[3] पापिष्ठतमो व्यसनानां[4] तन्त्रदौर्बल्यादिति ।

६४. विशेष रूप से संघों एवं संघधर्मी राजकुलो में द्यूत निमित्त भेद हो जाता है और उसी के कारण विनाश होता है, तन्त्र दौर्बल्य उत्पन्न करने वाला होने के कारण असत्प्रग्रह व्यसनों में पापिष्ठतम है ।

पादटिप्पणी :

६१. (१) पानसंपत् : पीने में गुणी ।

(२) संज्ञानाश : विवेक का नाश । गण० ३: २३ ।

(३) उन्मत्त : विक्षिप्त । मनु० ९:७९, याज्ञ० २:३२ ।

(४) कौपीनदर्शन : गुस्य भाग का प्रकाशन । गुप्त अंग का दिखाना । गण० ३:२३ ।

(५) श्रुत : सुना हुआ । विश्रुत प्रसिद्ध ।

(६) प्रज्ञा : बुद्धि, विवेक ।

पादटिप्पणी :

६३. (१) एकेषां : खेल का एक पक्ष । द्र० १५:१:४३ ।

(२) पण : बाजो लगाये द्रव्य के अर्थ में प्रयोग किया गया है ।

(३) प्राणिषु : चेतन या जीवधारी ।

(४) निश्चेतनेषु : अचेतन ।

पाठभेद :

'इत्यसत्प्रग्रहः' का देवनागरी अनुलिपि में 'इत्यसत्परिग्रहः' तथा 'तंत्रदौर्बल्याद्' का देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तंत्रदौर्बल्याद्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६४. (१) संघानाम् : कुल संघ । द्र० १:१७: ५३ ।

(२) संघधर्मिणां : संघ की प्रकृति या गुण ।

(३) असत्प्रग्रह : बुरे लोगों का समर्थन ।

(४) तन्त्र : प्रशासन । द्र० ८:३:५४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

असतां प्रग्रहः कामः कोपश्चावग्रहः सताम् ।
व्यसनं दोषबाहुल्यादत्यन्तमुभयं मतम् ॥

६५. काम और क्रोध असज्जनों का पक्ष ग्रहण करते हैं और सज्जनों का तिरस्कार, अतः दोषधिक्य के कारण दोनों को सर्वथा व्यसन माना गया है।

तस्मात्कोपं च कामं च व्यसनारम्भमात्मवान् ।
परित्यजेन्मूलहरं वृद्धसेवी जितेन्द्रियः ॥

६६. अतएव आत्मवान्; बृद्धसेवी एवं जितेन्द्रिय नृपति दुःखोत्पादक, सर्वस्वनाशी काम और क्रोध का परित्याग करे।

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे पुरुषव्यसनवर्गस्तृतीयोऽध्यायः । आदित एकोनविंशतिशततमः ।

अष्टम अधिकरण के अन्तर्गत व्यसनाधिकारिक में पुरुषव्यसनवर्ग सम्बद्ध तीसरा अध्याय समाप्त है। आदि से एकसौउन्नीसवां अध्याय समाप्त है।

पादटिप्पणी :

६५. (१) असतां : बुरे लोग, असज्जन ।

(२) अवग्रह : दबाना, द्र० ७:१:१२, २०; ७:१४:२९, गण० १:४५, २:२६२, ३:२०६ ।

(३) सताम् : सुज्जन लोग, अच्छे जन ।

(४) व्यसन : आपदा विपत्ति । द्र० ३:१४:२, मनु० ७:४५, ५२ गण० ३:२ ।

पादटिप्पणी :

६६. (१) व्यसन : आपदा विपत्ति, मनु० ७:४५-५२, द्र० ३:१४:२ ।

(२) मूलहरम् : जो किसी को उसकी सम्पत्ति या भूमि से वंचित करता है । द्र० २:९:२०, २१; ७:१३:१३, ७:२:१४, ७:३:७ । गण० १:१६३ ।

(३) वृद्धसेवीजितेन्द्रियः : द्र० १:५:७ ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिकेऽष्टमाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः पुरुषव्यसनवर्गः आदित एकोनविंशतिशततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इतिव्यसनाधिकारिके पुरुषव्यसनवर्गस्तृतीयोऽध्यायः आदित एकोनविंशविशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिके अष्टमाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः पुरुषव्यसनवर्गः आदितएकोनविंशतिशततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इतिव्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे पुरुषव्यसनवर्गस्तृतीयोऽध्यायः । ३ ।

आदित एकोनविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ।११९।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ४

[त्रिंशच्छततमं प्रकरणम्—पीडनवर्गः; एकत्रिंशच्छततमं प्रकरणम्—स्तम्भवर्गः; द्वात्रिंशच्छततमं प्रकरणम्—कोशसङ्गवर्गः]

एकसौ तीसवाँ प्रकरण—पीडनवर्ग
एकतीसवाँ प्रकरण—स्तम्भवर्ग
बत्तीसवाँ प्रकरण—कोशसङ्गवर्ग

दैवपीडनम्—अग्निरुदकं व्याधिर्दुर्भिक्षं मरक इति ।

१. अग्नि, उदक, व्याधि, दुर्भिक्ष, एवं मरक दैवी पीड़न हैं।

'अग्न्युदकयोरग्निपीडनमप्रतिकार्यं सर्वदाहि च, शक्यापगमनं तार्याबाधमुदकपीडनम्' इत्याचार्याः ।

२. 'अग्नि एवं उदक में अग्नि पीडन प्रतीकार रहित और सर्वदाही होता है, उदक पीडन दूर किया जा सकता है और नौका से बाधा का प्रतीकार हो सकता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

३. कौटिल्य को यह मत मान्य नहीं है।

पादटिप्पणी :

(१) पीडन : द्र० ८:४:४९, ५०, गण० ३:२५

(२) स्तम्भ : द्र० १:९:[illegible], ३, ६:१:६, ८:४:३०, गण० ३:१२१ ।

दैवी आपदा का वर्णन सूत्र ४:३:१ में किया गया है।

पादटिप्पणी :

१. (१) अग्नि : आग :

(२) उदक : जल, गण० ३:१७५ ।

(३) व्याधि : द्र० ३:४:१३, ८:३:१३ ।

(४) दुर्भिक्ष : अकाल । गण० ३:११० ।

(५) मरक : मारात्मक, महामारी । द्र० ७:४:६५ । गण० ३:२५

पाठभेद :

'सर्वदाहि' का तंजौर में 'सर्वाहि' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सर्व हि' पाठभेद मिलता है। तथा 'शक्यापगमनं' का 'शक्योपशमनं' तथा 'तार्याबाधमुदक' का 'तार्याबाधकमुक्तमुदक' पाठभेद तेलगू अनुप्रतिलिपि में मिलता है।

पादटिप्पणी :

२. (१) प्रतिकार्यं : दुःसाध्य । गण० ३:१०७

(२) शक्यापगमनं : जलप्लावन से बचने की संभावना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अग्निर्ग्रामम्[1]मर्धग्रा[2]मं वा दहति, उदकवेग[3]स्तु ग्रामशतप्रवाहीति[4]।

४. अग्नि पूर्णग्राम या अर्धग्राम को भस्मासात् करता है, उदक वेग सैकड़ों ग्रामों को प्रवाहित कर देता है।

'व्याधि[1]दुर्भिक्ष[2]योर्व्याधिः प्रेतव्याधितोपसृ[3]ष्टपरिचारकव्यायामोपरोधेन कर्माण्युपहन्ति, दुर्भिक्षं पुनरकर्मोपघाति हिरण्य[4]पशुकरादायि च' इत्याचार्याः।

५. 'व्याधि एवं दुर्भिक्ष में व्याधि प्रेत (मृत) व्याधित (रुग्ण) एवं रोग ग्रस्त के परिचारकों के कृष्यादि में अवरोध उत्पन्न कर कर्म हानि करता है, दुर्भिक्ष कर्मघाती नहीं होता है और हिरण्य एवं पशु कर में प्रदान करता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः।

६. कौटिल्य उस मत को नहीं मानता है।

एकदेश[1]पीडनो व्याधिः शक्यप्रतीकारश्च, सर्वदेशपीडनं दुर्भिक्षं प्राणिनामजीवनायेति।

७. व्याधि एक देश को पीडित करता है और प्रतीकार करने योग्य होता है दुर्भिक्ष समस्त देश को पीडित करता है तथा प्राणियों का जीवन संकट ग्रस्त कर देता है।

तेन[1] मरको[2] व्याख्यातः।

८. उक्त प्रकार में मरक की व्याख्या सम्पन्न हो गयी।

'क्षुद्रक[1]मु[2]ख्यक्षययोः क्षुद्रकक्षयः कर्मणामयोगक्षेमं करोति, मुख्यक्षयः कर्मानुष्ठानोपरोधधर्मा' इत्याचार्याः।

९. 'क्षुद्र एवं मुख्य कर्मकरो के क्षय (नाश) में क्षुद्र क्षय कर्मों का योग क्षेम करता है और मुख्य-क्षय कर्मानुष्ठान में उपरोध मात्र उत्पन्न करता है,' ऐसा आचार्यों का मत है।

पादटिप्पणी :

४. (१) ग्राम : पूरागाँव।

(२) अर्धग्राम : आधागाँव।

(३) उदकवेग : जल प्रवाह।

(४) ग्रामशतप्रवाही : सैंकड़ों गाँवों को बहा ले जाता है।

पाठभेद :

'व्याधितोपसृष्ट' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्याधितापसृष्ट' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) व्याधि : बीमारी।

(२) दुर्भिक्ष : अकाल।

(३) उपसृष्ट : दुःख ग्रस्त, काम के अयोग्य।

(४) हिरण्य : नकद।

पादटिप्पणी :

७. (१) एकदेश : एक क्षेत्र या प्रखण्ड से तात्पर्य है। द्र० ५:४:१७, ५:५:३४, याज्ञ० २:२०।

पादटिप्पणी :

८. (१) तेन : दुर्भिक्ष।

(२) मरक : महामारी। द्र० ७:४:६५, ८:४:१, गण० २:२५।

पादटिप्पणी :

९. (१) क्षुद्रक : साधारण, सामान्य, छोटे। द्र० १:१३:१३, २६, २।

(२) मुख्य। मुख्य अधिकारी तथा करद आदि। द्र० १:१२:२५, १:१६:७, १:१८:१३, ५:६:७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेति कौटिल्यः ।

१०. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है।

शक्यः क्षुद्रकक्षयः प्रतिसंधातुं[1] बाहुल्यात्क्षुद्रकाणाम्, न मुख्यक्षयः ।

११. क्षुद्रकों की संख्या अधिक होने से क्षुद्रकक्षय की पूर्ति की जा सकती है किन्तु मुख्य क्षय की पूर्ति नहीं की जा सकती है।

सहस्रेषु हि मुख्यो भवत्येको न वा सत्त्व[1]प्रज्ञा[2]धिक्यात्तदाश्रयत्वात्क्षुद्रकाणामिति ।

१२. सहस्रों जनों में एक मुख्य प्राप्य होता है। अथवा नहीं भी प्राप्त होता सत्त्व प्रज्ञा एवं क्षुद्रकों का वह आश्रय भूत होता है।

'स्वचक्र[1]परचक्र[2]योः स्वचक्रमतिमात्राभ्यां दण्ड[3]कर[4]भ्यां पीडयत्यशक्यं च वारयितुम्, परचक्रं तु शक्यं प्रतियोद्धु[5]मपसारेण[6] संधिना वा मोक्षयितुम्' इत्याचार्याः ।

१३. 'स्वचक्र तथा परचक्र में स्वचक्र अत्यधिक दण्ड एवं कर द्वारा पीड़ित करता है और अनिवारणीय होता है, परचक्र के साथ युद्ध किया जा सकता है, अपसार अथवा सन्धि द्वारा उससे मुक्ति प्राप्त की जा सकती है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

१४. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है

पाठभेद :

'शक्यः' का तंजौर में 'शक्यं' पाठभेद मिलता है। तथा 'क्षुद्रकाणाम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'क्षुद्रकारणान्न' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

११. (१) प्रतिसंधातुं : उपाय, द्र० ४:६:११ ।

पाठभेद :

'धिक्यात्तदा' का तंजौर में 'धिक्यातूदा' यथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धिक्यादा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१२. (१) सत्त्व : धर्म, मान, गुण । द्र० २:१०:१६, गण० ३:१३२ ।

(२) प्रज्ञा : मेधा, बुद्धि । गण० १:३६ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) स्वचक्र : निज देश की राज्यशक्ति या सेना । द्र० ७:४:१५ ।

(२) परचक्र : परदेश की राज्यशक्ति या सेना ।

(३) दण्ड : शक्ति या सेना ।

(४) कर : टैक्स, भवि० २:२:६,९ ।

(५) प्रतियोद्धुम् : युद्ध में सामना करना ।

(६) अपसार : बाहर निकलना, पलायन, बचना भागना । द्र० १:२०:३, २:३:३, ३:५:५ गण० २:३३७, ३४०, ३:२६, १०, २१, ११ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वचक्रपीडनं प्रकृतिपुरुषमुख्योपग्रहविघाताभ्यां शक्यते वारयितुमेकदेशं वा पीडयति, सर्वदेशपीडनं तु परचक्रंविलोपघातदाहविध्वंसनापवाहनैः पीडयतीति ।

१५. स्वचक्रपीडन प्रकृति के प्रमुख पुरुषों को अनुकूल करके या उनका विघात करके निवारित किया जा सकता है अथवा वह एक देश को पोडित करता है, किन्तु परचक्र विलोप, उपघात, दाह, विध्वंसन एवं अपवाहन करके सम्पूर्ण देश को पीडित करता है ।

'प्रकृतिराजविवादयोः प्रकृतिविवादः प्रकृतीनां भेदकः पराभियोगानावहति, राजविवादस्तु प्रकृतीनां द्विगुणभक्तवेतनपरिहारकरो भवति' इत्याचार्याः ।

१६. 'प्रकृति विवाद एवं राजविवाद में प्रकृतिविवाद प्रकृतियों में भेद उत्पन्न करता है और शत्रु आक्रमण को प्रोत्साहित करने वाला होता है, राजविवाद प्रकृतियों का भक्त-वेतन दूना और करमुक्ति प्रदान करता है' ऐसा आचार्यों का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

१७. कौटिल्य को यह मत मान्य नहीं है ।

शक्यः प्रकृतिविवादः प्रकृतिमुख्योपग्रहेण कलहस्थानापनयनेन वा वारयितुम् ।

१८. प्रकृति विवाद प्रकृति मुख्य को अनुकूल करके अथवा कलह-कारण को दूर करके, निवारित किया जा सकता है ।

पाठ भेद :

'नापवाहनैः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नोपवाहनैः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) प्रकृतिपुरुष : अधिकारी । द्र० १२:३:१४ ।

(२) मुख्य : नेता । द्र० १२:१३:१४ ।

(३) विलोप : नष्ट करना, लुंठन, लूटना । द्र० २:१२:२, ७:७:४,२२, ९:२:९,१०, १०:३:१६; गण० ३:३५९ ।

(४) घात : हत्या, मारकाट, द्र० ३:९:२१ ।

(५) अपवाहनैः : बाहर ले जाना । द्र० २:१:१, गण० ३:२७, १२५ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) प्रकृतिविवाद : प्रजा का विवाद ।

(२) राजविवाद : राजकुल का विवाद, या परस्पर का झगड़ा, कलह ।

(३) अभियोग : आक्रमण । द्र० ७:५:३१, ८:१:४९, गण० ३:१५० ।

(४) परिहार : द्र० २:१:१५, २:७:६, २:१६:१२, २:३५:३, ३:९:३३, १३:४:३, १३:५:४, १०, गण० १:१११, ३:७४, २००, २१० ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) उपग्रह : समाधान, अनुकूल, अनुनय सान्त्वना, समर्थन, सहारा देना । द्र० २:१०:३४, ८:१५, २९, अग्नि० २५८:८३; गण० १:६७, २:२५१, ३:९३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विवदमानास्तु प्रकृतयः परस्परसंघर्षेणोपकुर्वन्ति ।

१९. विवादरत प्रकृतियाँ पारस्परिक संघर्ष के कारण उपकार ही करती हैं।

राजविवादस्तु पीडनोच्छेदनाय प्रकृतीनां द्विगुणव्यायामसाध्य इति ।

२०. राजविवाद प्रकृतियों का पीडिन-उच्छेदन करता है और दूने प्रयास से शमनीय होता है ।

'देशराजविहारयोर्देशविहारस्त्रैकाल्येन कर्मफलोपघातं करोति, राजविहारस्तु कारुशिल्पिकुशीलववाग्जीवनरूपाजीवावैदेहकोपकारं करोति' इत्याचार्याः ।

२१. 'देश बिहार तथा राजविहार में देश विहार त्रिकाल में कर्मफल (सस्यसम्पत्ति) का नाश करता है, राजबिहार कारु, शिल्पी, कुशीलव, वाग्जीवन, रूपाजीवा एवं बैदेहकजनों का उपकार करता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

२२. कौटिल्य को यह मत अभीष्ट नहीं है।

पादटिप्पणी :

२०. (१) उच्छेद : उखाड़ना, नाश ।

(२) व्यायाम : उद्योग, सैन्यपरिचालना, क्रियाशीलता । द्र० २:१:३०, ८:३:४६, १:४:१६, गण० १:१४, २:२३०, ३:१२६ ।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रुपाजीवा' लुप्त है।

पादटिप्पणी :

२१. (१) राजबिहार : बिहार, क्रीड़ा, मनोविनोद, राजवर्ग या राजा का मनोविनोद, गण० ३:२८ ।

(२) देशबिहार : साधारण प्रजाजन का क्रीड़ादि, मनोविनोद, गण० २:२८ ।

(३) त्रैकाल : भूत, भविष्य, वर्तमान काल, या प्रातः, मध्याह्न एवं सायंकाल ।

(४) कारु : लोहारादि कारीगर । द्र० १:१८:१२, गण० १:११ ।

(५) शिल्पी : स्वर्णकारादि, सूक्ष्म कार्यकारी शिल्पी लोग ।

(६) कुशीलत : द्र० १:१२:१९, २:१:३४, गण० १:५६, ५९, १०७, ३:२५१ ।

(७) वाग्जीवन : पेशेवर कहानी कहने वाला या मन बहलाव करने वाला । द्र० १:१२:९, १:१८:१२, २:१:३४, गण० ३:३५४ ।

(८) रूपा जीव : द्र० १:२०:२०, ७:१७:३८, गण० ३:३५५ ।

(९) वैदेहक : द्र० ३:१२:३९, ३:१३:२८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देशविहारः कर्मश्रमवधार्थमल्पं भक्षयति भक्षयित्वा च भूयः कर्मसुयोगं गच्छति, राजविहारस्तु स्वयं वल्लभैश्च स्वयंग्राहप्रणयपण्यागारकार्योपग्रहैः पीडयतीति ।

२३. देश विहार कर्मश्रम निवारणार्थ अल्प समय नष्ट करता है, समय नष्ट करके भी पुनः अधिक उत्साह पूर्वक कर्मों में लगाता है, राजविहार स्वयं राजा द्वारा तथा राजवल्लभों द्वारा प्रतिकूल रूप से धन अवाप्तकर, पण्यागारों से धन प्राप्त कर, उत्कोचादि से पीडित करता है।

'सुभगाकुमारयोः कुमारः स्वयं वल्लभैश्च स्वयंग्राहप्रणयपण्यागारकार्योपग्रहैः पीडयति, सुभगा विलासोपभोगेन' इत्याचार्याः ।

२४. 'सुभगा एवं राजकुमार के विहारों में राजकुमार का विहार स्वयं कुमार एवं अपने प्रियजनों द्वारा अपनी अभिरुचि के अनुसार धन प्राप्तकर उत्कोचादि से प्रजा को पीडित करता है और सुभगा स्वयं विलासोपभोग से पीडित करती है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

२५. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है।

शक्यः कुमारो मन्त्रिपुरोहिताभ्यां वारयितुम् न सुभगा बालिश्यादनर्थ्यजनसंयोगाच्चेति ।

२६. राजकुमार मन्त्री एवं पुरोहित द्वारा निवारित किया जा सकता है, किन्तु मूढता एवं अनर्थ्यजनों के संपर्क के कारण सुभगा को निवारित नहीं किया जा सकता है।

पादटिप्पणी :

२३. (१) बिहार : द्र० १:१०:१३, २:२:३, ८:४:२१ ।

(२) कर्म : काम की थकान, कर्म का श्रम। गण० ३:११७ ।

(३) वधार्थ : खा-पी जाना, खजाना उपभोग करना।

(४) वल्लभ : राजा के प्रियपात्र ।

(५) स्वयंग्राह : द्र० ८:१:४४ ।

(६) प्रणय : प्रेम, प्रीति । द्र० ५:२:१६, २९, गण० ३:२८ ।

(७) पण्यागार : सामान की भेंट या दान । द्र० २:३५:१२, ७:१५:२०, ८:४:२६, ९:६:३८, ३९ ।

(८) कार्योपग्रह : गण० ३:२८ ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) सुभगा : देवी, भाग्यवान, सुन्दर, नाजुक, राजा की प्रिय, शब्द का प्रयोग राज महिषी के विशेषण के रूप में किया गया है। सौभाग्यवती राजरानी । द्र० १३:३:१५, गण० ३:३८ ।

(२) कुमार : युवराज ।

(३) पण्यागारकार्योपग्रही : द्र० ८:४:२३, गण० ३:२८ ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) कुमार : द्र० ८:२:२४ ।

(२) मन्त्रि : द्र० ७:१४:१२, १:३:१५, १७ ।

(३) पुरोहित : द्र० २:९:१० ।

(४) सुभगा : द्र० ६:४:२४ ।

(५) बालिश्य : मूर्ख, लड़कपना, द्र० ७:१०:२३

(६) जन : वहाँ के लोगों से तात्पर्य हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'श्रेणीमु[१]ख्ययो[२]: श्रेणीवाहुल्यादनवग्रहास्तेयसाहसाभ्यां पीडयति, मुख्य: कार्यानुग्रहविघाताभ्याम्' इत्याचार्या: ।

२७. 'श्रेणी एवं मुख्य में श्रेणी बाहुल्य के कारण नियन्त्रण रहित होने से स्तेय एवं साहस (डाका) द्वारा प्रजा को पीडित करती है, मुख्य उत्कोच से कार्य सम्पन्न करके अन्यथा कार्य की हानि करके, पीडित करता है' ऐसा आचार्यों का मत है ।

नेति कौटिल्य: ।

२८. पर मत कौटिल्य नहीं मानता है ।

सुख्यावर्त्या श्रेणी[१] समान[२]शीलव्यसनत्वात्, श्रेणीमु[३]ख्यैकदेशोप[४]ग्रहेण वा ।

२९. समानशील एवं व्यसन के कारण अथवा श्रेणी प्रमुख को अनुग्रहीत करके श्रेणी को सरलता पूर्वक स्तेयादि कर्मों से रोका जा सकता है ।

स्तम्भ[१]युक्तो मुख्य: परप्राणद्रव्योपघाताभ्यां पीडयतीति ।

३०. गर्वयुक्त मुख्य पुरुष दूसरे की प्राण हानि, द्रव्य हानि करके, पीडित करता है ।

पाठभेद :

'कार्यानुग्रह' का तंजौर में 'कार्यविग्रह' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कार्यविग्रह' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) श्रेणी : मनुष्यों का समूह, व्यापारियों या शिल्पियों का निगम या संघटन यहाँ लड़ने वालों के वर्ग से तात्पर्य है । द्र० ७:११:१८, २:४:१६, ४:१:२३, ६:१:८, ५:३:९, ७:१४:२०, १:१:८, गण० १:१२९ ।

(२) मुख्य : द्र० ८:४:९, १२, १:१२:२५, १:१६:७, १:१८:१३, ५:६:७ ।

पाठभेद :

'सुख्यावर्त्या' का देवनागरी अनुलिपि में 'सुख्यावर्ता' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२९ (१) श्रेणी : संघ । द्र० ८:४:२७ ।

(२) समानशीलव्यसनत्वात् : समान स्वभाव या गुण तथा आपदा या अनीति या दुराचार ।

(३) श्रेणीमुख्य : श्रेणीनायक । द्र० ८:४:२७ ।

(४) एकदेशोपग्रहण : द्र० ५:४:१७, ५:५:३४ ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) स्तम्भ : क्रोध, गर्व, औद्धत्य, अनम्यं, अवरोध । द्र० १:९:१, ३, ८:४:४८, ५० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'संनिधातृसमाहर्त्रोः संनिधाता कृतविदूषणात्ययाभ्यां पीडयति, समाहर्ता करणाधिष्ठितः प्रदिष्टफलोपभोगी भवति' इत्याचार्याः ।

३१. 'संनिधाता और समाहर्ता में सन्निधाता दोषारोपण एवं कालातिक्रमण की बात कहकर, पीडित करता है, समाहर्ता करणाधिष्ठित रहकर, निश्चित वेतन का भोग करता है' ऐसा आचार्यों का कथन है ।

नेति कौटिल्यः ।

३२. कौटिल्य इस मत को नहीं मानता है ।

संनिधाता कृतावस्थमन्यैः कोशप्रवेश्यं प्रतिगृह्णाति, समाहर्ता तु पूर्वमर्थमात्मनः कृत्वा पश्चाद्राजार्थं करोति प्रणाशयति वा, परस्वादाने च स्वप्रत्ययश्चरतीति ।

३३. संनिधाता अन्य द्वारा प्रमाणित कोश में रखने योग्य वस्तु ग्रहण करता है किन्तु समाहर्ता सर्वप्रथम अपने लिये धन लेकर, तदनन्तर नृपति के लिये स्वीकार करता है अथवा विनाश करता है और कर ग्रहण में भी अपने ही विश्वास के अनुसार कार्य करता है ।

'अन्तपालवैदेहकयोरन्तपालश्चोरप्रसर्गदेयात्यादानाभ्यां वणिक्पथं पीडयति, वैदेहकास्तु पण्यप्रतिपण्यानुग्रहैः प्रसाधयन्ति' इत्याचार्याः ।

३४. 'अन्तपाल एवं वैदेहक में अन्तपाल चोरों को छोड़कर एवं अधिक मात्रा में प्राप्य धन लेकर वणिक्पथ को पीडित करता है, वैदेहक पण्य एवं प्रतिपण्य पर लाभ प्रदान कर, संवर्धन करते है' ऐसा आचार्यों का मत है ।

पाठभेद :

'कृतविदूषणा' का न्याय चन्द्रिका में 'कृतदूषणा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) संनिधाता : द्र० २:५:१, २१, गण० १:५० ।

(२) समाहर्ता : प्रशासक, द्र० २:६:१, २:३५:१, गण० १:५० ।

(३) कृतविदूषण : किये गये में दोष निकालना, निन्दा करना । द्र० ७:६:२१, गण० २:२७२, ३:२९

(४) करणाधिष्ठित : किसी कार्यालय के नियन्त्रण में, किन्तु २:५:८ तथा ३:११:१ में अर्थ कार्यालय की अध्यक्षता करना होता है ।

(५) प्रदिष्ट : निर्दिष्ट, निरूपित, नियोजित, द्र० १:११:५, १०, १२ ।

पाठभेद :

'समाहार्ता तु पूर्वम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'समाहर्तापूर्वम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) कृतावस्था : प्रतिभू, गारण्टी, दायित्व, द्र० २:८:२९ ।

(२) स्वप्रत्यय : अपने उत्तरदायित्व पर कार्य करना । द्र० २:३६:५, ३:१४:३४ ।

पाठभेद :

'चोर प्रसर्ग' का न्याय चन्द्रिका तथा श्रीमूल में 'चोरप्रसङ्ग' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) अन्तपाल : सीमा का अधिकारी । गण० १:५७; ३:३० ।

(२) वैदेहक : व्यापारी । द्र० ३:१२:३९; ३:१३:२८ ।

(३) चोर प्रसर्ग : चोरों को छोड़ देना ।

(४) वणिक्पथ : द्र० २:१:१९, ३३, २:६:८, ७:१२:१७, ७:१६:५ :

(५) पण्य : विक्रय पदार्थ, व्यापारी माल । द्र० ३:१७:४२, ७:६:३३ ।

(६) प्रतिपण्य । पण्य के बदले में दिया जाने वाला पदार्थ, विदेशी माल भी अर्थ किया जाता है । द्र० २:१६:१८, १९, ३४ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेति कौटिल्यः ।

३५. कौटिल्य को यह मत नहीं मान्य है ।

अन्तपालः पण्यसंपातानुग्रहेण वर्तयति, वैदेहकास्तु संभूय पण्यानामुत्कर्षापकर्षं कुर्वाणाः पणे पणशतं कुम्भे कुम्भशतमित्याजीवन्ति ।

३६. अन्तपाल पण्य सम्पात पर लाभ ग्रहण करता है किन्तु वैदेहक सम्मिलित रूपेण पण्यों का उत्कर्षापकर्ष एकपण का सौपण, एक कुम्भ का सौ कुम्भ करके लाभ ग्रहण करते हैं ।

अभिजातोपरुद्धा भूमिः पशुव्रजोपरुद्धा वेति 'अभिजातोपरुद्धा भूमिः महाफलाऽप्यायुधीयोपकारिणी न क्षमा मोक्षयितुं व्यसनाबाधभयात्, पशुव्रजोपरुद्धा तु कृषियोग्या क्षमा मोक्षयितुम् ।

३७. अभिजातोपरुद्ध भूमि अथवा पशुव्रजोपरुद्ध भूमि त्याज्य है, अभिजातोपरुद्ध भूमि अधिक फलप्रद होती हुई भी आयुधीयों (सैनिकों) के लिये उपयोगिनी होती है अतः व्यसनाबाध भय से वह भूमि त्याज्य नहीं है, पशु व्रजो परुद्ध भूमि कृषियोग्य होने से त्यागयोग्य हो सकती है ।

विवीतं हि क्षेत्रेण वाध्यते इत्याचार्याः ।

३८. विवीत (तृणादिभूमि) क्षेत्र (कृषि भूमि) से वाधित होता है अर्थात् कृषि भूमि अधिक महत्व की है ।

नेति कौटिल्यः

३९. कौटिल्य को यह मत नहीं मान्य है ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) पण्यसंपात : एक साथ लाए हुए विक्रय पदार्थ या सामान । गण० ३:३०, २५० ।

(२) संपात : इकट्ठा करना । द्र० ९:२:२, १३:४:३८ ।

(३) वर्तयति : वणिक्पथ ।

(४) पण्या : द्र० ५:४:७, ७:७:७ ।

(५) पणे पणशतं : एक पण पर सौ पण का लाभ ।

(६) कुम्भ : बीस द्रोणा के बराबर अनाज की तोल । मनु० ८:३२० ।

(७) आजीवन्ति : लाभ करना ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) अभिजात : कुलीन । द्र० १३:५:१९, गण० १:४५, ३:२११ ।

(२) उपरुद्ध : संताप, पीड़ा, आकीर्ण, प्रतिबन्धित । द्र० १:१४:२, २:३०:४६, ८:५:१३, ७:१०:३५, गण० ३:३५ ।

(३) व्यसन : द्र० ३:१४:२, गण० ३:२ ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) विवीत : चर भूमि, चारागाह । द्र० २:२:१; २:६:३; २:३४:६; ३:१०:२१, गण० १:१८; १४६, ३४२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभिजातोपरुद्धा भूमिरत्यन्तमहोपकाराऽपि क्षमा मोक्षयितुम्, व्यसनाबाध भयात्, पशुव्रजौपरुद्धा तु कोशवाहनोपकारिणी न क्षमा मोक्षयितुम्, अन्यत्र सस्य-वापोपरोधादिति ।

४०. पशुव्रजोपरूद्धभूमि कोश वाहनोपकार कारिणी होने के कारण छोडने योग्य नहीं होती किन्तु सस्यसम्पत्ति के लिये हानिकर होने पर त्याज्य हो सकती है।

'प्रतिरोधकाटविकयोः प्रतिरोधका रात्रिसत्त्रचराः शरीराक्रमिणो नित्याः शतसहस्रापहारिणः प्रधानकोपकाश्च, व्यवहिताः प्रत्यन्तारण्यचराश्चाटविकाः प्रकाशा दृश्याश्चरन्ति, एकादेशघातकाश्च' इत्याचार्याः ।

४१. 'प्रतिरोधक एवं आटविक में प्रतिरोधक रात्रि एवं गहन वन में गमनकारी, अन्यों के शरीर पर प्रहारकर्त्ता, नित्य (समीपस्थ) शत-सहस्त्र का धन अपहरणकारी एवं प्रधान पुरुषों को प्रकुपित करने वाले होते हैं आटविक दूरस्थ, सीमान्त अरण्यचारी, सर्वजनविदित एवं दृश्य तथा कतिपयजनों के घातक होते हैं' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

४२. उस मत को कौटिल्य नहीं मानता हैं।

प्रतिरोधकाः प्रमत्तस्यापहरन्ति अल्पाः कुण्ठाः सुखा ज्ञातुं ग्रहीतुं च, स्वदेशस्थाः प्रभूता विक्रान्ताश्चाटविकाः प्रकाशयोधिनोऽपहर्तारो हन्तारश्च देशानां राजसधर्माण इति ।

४३. प्रतिरोधक प्रमादी का धन अपहृत करते हैं वे अल्प संख्यक, कुण्ठित एवं सुख पूर्वक ज्ञेय तथा ग्राह्य होते हैं, आटविक स्वदेशस्थ, प्रचुर संख्यक एवं पराक्रमशील होते हैं वे राजाओं के तुल्य होने कारण प्रकट रूप से युद्धकारी तथा देश के लोगों का अपहरण तथा हनन करते हैं।

पादटिप्पणी :

४०. (१) उपरुद्ध : द्र० ८:५:१३, ७:१०:३५, ८:४:३ ।

पाठभेद

'रात्रिसत्त्रचराः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रात्रिसत्त्रपरा' तथा 'सरीराक्रमिणो' का तंजौर में 'शरीराक्रामिणो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४१. (१) प्रतिरोध : लुटेरे, डाकू, रोकने वाले।

(२) रात्रि : रात में कार्य करने से तात्पर्य है।

(३) सत्त्र : छिपने का स्थान। द्र० १०:३:१३, १८, २४, ८:५:११, १३:२:४३, ५० ।

(४) नित्य : द्र० ७:९:९, ३८ ।

(५) व्यवहिता : दूर या दूरवर्ती ।

(६) प्रत्यन्त : सीमा। द्र० १:१०:४२, पाटन में आटविक विषय अर्थ किया गया है। गण० ३:१६६ ।

पाठभेद

'अल्पाः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कल्पाः' तथा 'सुखाज्ञातुं' का 'सुखाज्ज्ञातुं' पाठभेद मिलता है। है।

पादटिप्पणी :

४३. (१) कुण्ठा : मन्दबुद्धि, दुर्बल, मूर्ख। द्र० ६:७:१२, १२:९:११, १३ ।

(२) स्वदेश : अपने देश, अपने घर।

(३) प्रकाशयोधि : प्रकटयुद्ध। द्र० ७:६:४०, गण० २:२७२ ।

(४) राजसधर्माणः : राजा की प्रकृति, राजा का गुण, राजा का सद्भाव।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मृगहस्तिवनयोः मृगाः प्रभूताः प्रभूतमांसचर्मोपकारिणो मन्दग्रासावक्लेशिनः सुनियम्याश्च ।

४४. मृग वन और हस्तिवन में मृग प्रचुर संख्यक, प्रचुर मांस एवं चर्म से उपकार करने वाले अल्पभोजी तथा सुगमता पूर्वक नियन्त्रण करने योग्य होते हैं ।

विपरीता हस्तिनो गृह्यमाणा दुष्टाश्च देशविनाशायेति ।

४५. हाथी इसके विपरीत होते हैं तथा दुष्ट हाथी पकड़े जाने पर, देश का विनाशकारी होते हैं ।

स्वपरस्थानीयोपकारयोः स्वस्थानीयोपकारो धान्यपशुहिरण्यकुप्योपकारो जानपदानामापद्यात्मधारणः ।

४६. स्वनगर एवं परकीयनगर का उपकार करने की स्थिति में स्वनगर का उपकार श्रेष्ठ होता है, जनपदवासियों के धान्य, पशु, हिरण्य, कुप्य, का क्रय विक्रय सम्बन्धी व्यवहार (उपकार) आपत्ति काल में अपने प्राण की रक्षा करने वाला होता है ।

विपरीतः परस्थानीयोपकारः ।

इति पीडनानि ।

४७. परनगर का उपकार उसके विपरीत (मध्यम प्रद) होता है ।

पीडन वर्ग समाप्त ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) मन्दग्रासावक्लेशिनः : चारा के विषय में कम कष्ट देते हैं । गण० ३:३२ ।

पाठभेद

'दुष्टाश्च' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दृष्टाश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) गृह्यमाण : पकड़े जाने पर ।

पाठभेद

'आपद्यात्म' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आपद्यात्म' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) स्थानीय : तहसीलदारी या ८०० ग्रामों का प्रधान कार्यालय । द्र० २:३:२, ३:१:१४, गण० १:१०४, २:१:४ ।

(२) उपकार : कठिनाई के समय की गयी सहायता ।

(३) जानपद : द्र० १:९:१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आभ्यन्तरो मुख्यस्तम्भो[2] बाह्योऽमित्राटवीस्तम्भः[3]। इतिस्तम्भवर्गः ।

४८. मुख्य पुरुष द्वारा राजकीय धन का अवरोध आभ्यन्तरस्तम्भ तथा अमित्र एवं आटविकों द्वारा राजकीय धन का अवरोध वाह्यस्तभ कहा कहा जाता है ।

ताभ्यां पीडनैर्यथोक्तैश्च पीडितः, सक्तो[1] मुख्येषु, परिहारोपहतः, प्रकीर्णो मिथ्यासंहृतः, सामन्ताटवीहृत इति कोशसङ्गवर्गः ।

४९. वाह्य एवं आभ्यन्तर पीडनों तथा दैव-मानुषकृत पीडनसे से पीडित (न्यूनकृत) मुख्य पुरुषों के पास स्थित, राजाज्ञ से परित्याग के कारण नष्ट, विकीर्ण, त्रुटिपूर्वक एकत्रित एवं सामन्तों तथा आटविकों द्वारा अपहृत कोश सङ्ग वर्ग नाम से जाना जाता है ।

पीडनानामनुत्पत्तावुत्पन्नानां च वारणे ।
यतेत देशवृद्ध्यर्थं नाशे च स्तम्भसङ्गयोः ॥

५०. देश की वृद्धि के लिये राजा पीडनों को उत्पन्न न होने में उत्पन्न पीडनों को निवारित करने में तथा स्तम्भ और कोशसङ्ग का विनाश करने में सदा प्रयत्नशील रहे ।

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे पीडनवर्गः, स्तम्भवर्गः, कोशसङ्ग-वर्गः चतुर्थोऽध्यायः ः आदितो विंशतिशततमः ।

अष्टम अधिकरण के अन्तर्गत व्यसनाधिकारिक में पीडनवर्ग, स्तम्भवर्ग, कोशसङ्गवर्ग सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ बीसवां अध्याय समाप्त ।

पाद टिप्पणी :

४८. (१) आभ्यन्तर : राष्ट्र मुख्य द्वारा कृत, उत्पादित ।

(२) स्तम्भ : प्रतिबन्ध, व्याघात, विघ्न । द्र० १:९:१, ६:१.६, ८:४:३०, गण० ३:२२३ ।

(३) वाह्य : बाहरी मित्र एवं आटविक द्वारा कृत ।

पाठभेद :

'परिहारोपहृतः' का देवनागरी अनुप्रतिलिपि में 'परिहारोपरतः' तथा 'संहृतः सामन्ताटवीहृत' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'संभृतः सामन्ताटवोभृतः' तथा 'कोशसंङ्गं का 'कोशसङ्गा' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

४९. (१) सक्त : आत्मसात् करना, या हजम कर जाना या कोश में जमा न करना । द्र० १३:३:१४

पाद टिप्पणी :

५०. (१) स्तम्भ : द्र० ६:४:४८ ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इतिकौटलीयार्थशास्त्रें व्यासनाधिकारिकेऽष्टमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः पीडनवर्गः स्तम्भनवर्गः कोशसङ्गवर्गः आदितः विंशतिशततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इतिव्यसनाधिकारिके पीडनवर्गःस्तम्भवर्गः कोशसङ्गवर्गश्च चतुर्थोध्यायः आदितो विंशतिशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इतिकौटिलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिकेऽष्टमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः पीडनवर्गः स्तम्भवर्गः कोशसङ्गवर्गः आदितो विंशतिशततमः ।

उदयवीरशास्त्री संस्करण में—

इतिव्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे पीडनवर्गः, स्तम्भवर्गः कोशसङ्गवर्ग ६ । चतुर्थोऽध्यायः । ४ । आदितो विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः । १२० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ५

[त्रयस्त्रिंशाच्छततमं प्रकरणम्—बलव्यसनवर्ग; चतुस्त्रिंशच्छततमंप्रकरणम्—मित्रव्यसनवर्गः]

एक सौ तैंतीसवां प्रकरण—बलव्यसनवर्ग

एक सौ चौंतीसवां प्रकरण—मित्रव्यसनवर्ग

बलव्यसनानि–[1]अमानितं, [2]विमानितम्, [3]अभृतं, [4]व्याधितं, [5]नवागतं, [6]दूरायातं, [7]परिश्रान्तं, [8]परिक्षीणं, [9]प्रतिहतं, [10]हताग्रवेगम्, [11]अनृतुप्राप्तम्, [12]अभूमिप्राप्तम्,

१. बल व्यसन–अमानित, विमानित, अभृत, व्याधित, नवागत, दूरायात, परिश्रान्त, परिक्षीण, प्रतिहत, हताग्रवेग, अनृतुप्राप्त, अभूमिप्राप्त, आशानिर्वेदो, परिसृप्त, कलत्रगर्मी, अन्तःशल्य, कुपित

बलव्यसनवर्ग : प्रकरण १३३ में सूत्र १-२१ हैं।

मित्रव्यसनवर्ग : प्रकरण १३४ में सूत्र २२-३० हैं।

पाठभेद :

'दूरायातं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दूरयातं' तथा 'कलत्रगर्भि' का 'कलत्रगर्हि' तथा 'अपसृतम्' का 'अतिसृतम्' तथा 'परिक्षिप्तं' का 'उपक्षिप्तं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१. बलव्यसन : सेना की आपदाएं निम्नलिखित ३४ प्रकार की होती हैं—

(१) अपमानित : सत्कार या मान न प्राप्त। द्र० ८।५:३।

(२) विमानित : तिरस्कृत। द्र० ८:५:३।

(३) अभृतं : अप्राप्त वेतन। द्र० ८:५:३।

(४) व्याधित : बीमार, अस्वस्थ। द्र० ८:५:३।

(५) नवागत : तुरन्त आई सेना। द्र० ८:५:४।

(६) दूरायात : दूर से आई सेना। द्र० ८:५:४।

(७) परिश्रान्त : शिथिल या थकी सेना। द्र० ८:५:५।

(८) परिक्षीण : खिन्न, नष्ट, शक्तिहीन। द्र० ८:५:५।

(९) प्रतिहत : पराजित। द्र० ८:५:६।

(१०) हताग्रवेग : प्रथम युद्ध से ही टूटी सेना। द्र० ८:५:६।

(११) अनृतुप्राप्त : युद्ध के अयोग्य समय। द्र० ८:५:७।

(१२) अनृतुभूमि : अनुपयोगी भूमि। द्र० ८:५:७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

[13]आशानिर्वेदि, [14]परिसृप्तं, [15]कलत्रगर्भि, [16]अन्तःशल्यं, [17]कुपितमूलं, [18]भिन्नगर्भम्, [19]अपसृतम्, [20]अतिक्षिप्तम्, [21]उपनिविष्टं, [22]समाप्तम्, [23]उपरुद्धं, [24]परिक्षिप्तं, [25]छिन्नधान्य, [26]पुरुषवीवधं, [27]स्वविक्षिप्तं, [28]मित्रविक्षिप्तं, [29]दूष्ययुक्तं, [30]दुष्ट-पार्ष्णिग्राहं, [31]शून्यमूलम्, [32]अस्वामिसंहतं, [33]भिन्नकूटम्, [34]अन्धम् इति ।

मूल्य, भिन्नगर्भ, अपसृत, अतिक्षिप्त, उपनिविष्ट, समाप्त, उपरुद्ध, परिक्षिप्त, छिन्नधान्य, छिन्नपुरुष वीवध, स्वविक्षिप्त, मित्रविक्षिप्त, दूष्ययुक्त, दुष्टपार्ष्णिग्राह, शून्यमूल, अस्वामि संहत, भिन्नकूट एवं अन्ध ।

तेषाममानितविमानितयोरमानितं कृतार्थमानं युध्येत, न विमानितमन्तःकोपम् ।

२. उनके अन्तर्गत अमानित और विमानित में अमानित बल अर्थ-मान प्राप्तकर अनुकूल होकर युद्ध कर सकता है अन्तःकोप युक्त विमानित बल नहीं ।

---

(१३) आशानिर्वेद : आशा से खिन्न । द्र० ८:५:८ ।

(१४) परिसृप्त : परित्यक्त, नेताविहीन । द्र० ८:५:८ ।

(१५) कलत्र : स्त्री । द्र० ८:५:९ ।

(१६) शल्य : काँटा । द्र० ८:५:९ ।

(१७) कुपितमूल : विद्रोही केन्द्र या स्रोत । द्र० ८:५:१० ।

(१८) भिन्नगर्भ : अन्तर पृष्ठ । द्र० ८:५:१०।

(१९) अपसृत : सेना त्यागा, या भागा या भगोड़ा । द्र० ८:५:११ ।

(२०) अतिक्षिप्त : विखर जाना । द्र० ८:५:११ ।

(२१) उपनिविष्ट : ठहरना या डेरा डालना । द्र० ८:५:१३ ।

(२२) यान : प्रयाण, मार्च । द्र० ७:१:१९ ।

(२३) उपरुद्ध : बाधित या एक ओर से घेरी हुई। द्र० ८:५:१३ ।

(२४) परिक्षिप्त : चारों ओर से घिरी हुई । द्र० ८:५ १३ ।

(२५) छिन्नधान्य : पूर्ति स्रोत का भंग होना । द्र० ८:५:१४ ।

(२६) छिन्नपुरुष : आरक्षित सैनिकों की पूर्ति । द्र० ८.५:१५ ।

(२७) स्वविक्षिप्त : अपनी भूमि में छिन्न-भिन्न या बिखरी । द्र० ८:५:१५ ।

(२८) मित्रविक्षिप्त : मित्र भूमि में बिखरी । ८:५:१५ ।

(२९) दूष्य : विश्वासघाती, विद्रोही । द्र० ८:५:१६ ।

(३०) दुष्ट पार्ष्णिग्राह : पृष्ट भाग में विरोधी शत्रु । द्र० ८:५:१६ ।

(३१) मूल : राजधानी या केन्द्र । द्र० ८:५ १७ ।

(३२) अस्वामी : राजा या सेनापति रहित । द्र० ८:५:१७ ।

(३३) कोटि : शिर या शिखर । द्र० ८:५:१८ ।

(३४) अन्ध : बिना निर्देश, बिना मार्ग दर्शक । द्र० ८:५:१८ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) अमानित : सत्कार न की गई । गण० ३:३५ ।

(२) विमानित : तिरस्कृत, गण० ३:३५ ।

(३) कृतार्थमान : धन से सत्कृत या सन्तुष्टा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभृतव्याधितयोरभृतं तदात्वकृतवेदनं युध्येत, न व्याधितमकर्मण्यम् ।

३. अभृत एवं व्याधित में अभृत बल तत्काल वेतन प्राप्त कर, युद्ध कर सकता है, अक्षम कर्म वाला व्याधित बल नहीं ।

नवागतदूरायातयोर्नवागतमन्यत उपलब्धदेशमनवमिश्रं युध्येत, न दूरायातमायातगतपरिक्लेशम् ।

४. नवागत एवं दूरायात बल में नवागत बल अन्य से देश ज्ञान प्राप्त कर तथा प्राचीनजनों के साथ होकर युद्ध करने में समर्थ हो सकता है, गतागत क्लेश युक्त दूरायात बल युद्ध नहीं कर सकता है।

परिश्रान्तपरिक्षीणयोः परिश्रान्तं स्नानभोजनस्वप्नलब्धविश्रामं युध्येत, न परिक्षीणमन्यत्राहवे क्षीणयुग्यपुरुषम् ।

५. परिश्रान्त तथा परिक्षीण बल में परिश्रान्त बल स्नान, भोजन एवं शयन से विश्राम प्राप्त कर, युद्ध कर सकता है अन्य युद्ध में क्षीण युग्य पुरुष वाला परिक्षीण बल युद्ध नहीं कर सकता है।

प्रतिहतहताग्रवेगयोः प्रतिहतमग्रपातभग्नं प्रवीरपुरुषसंहतं युध्येत, न हताग्रवेगमग्रपातहतप्रवीरम् ।

६. प्रतिहत तथा हताग्रवेग बल में युद्धारम्भ में पराजित प्रतिहत बल प्रवीर पुरुष के साथ संयुक्त होकर, युद्ध कर सकता है। किन्तु युद्धारम्भ में प्रवीर पुरुष के वध से कुण्ठित हताग्रवेगबल युद्धोत्साहित नहीं हो सकता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) अभृत : अदत्त वेतन या जिसका वेतन न दिया गया हो। गण० ३:३६ ।

(२) व्याधि : बीमार, अस्वस्थ ।

पाठभेद :

'दूरायातयोर' का तेलगु अनुप्रतिलिपि में 'दूरयातम्' तथा न्यायचन्द्रिका में 'दूरागतम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४. (१) नवागत : नवीन आई हुई सेना। गण० ३:३५ ।

(२) दूरायात : दूर से आई सेना। गण० ३:३५ कामन्दक १४:६७,७६ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) परिश्रान्त : थकी हुई। गण० ३:३५।

(२) परिक्षीण : रिक्त, नष्ट, शक्तिहीन सेना गण० ३:३५ ।

(३) युग्य : वाहन । द्र० ७:४:१५, ७:१५:१३, ७:१५:१८ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) प्रतिहत : पराजित, द्र० ७:१२:९, गण० ३:३५ ।

(२) हताग्रवेग : प्रथम युद्ध करने में ही टूटी सेना, गण० ३:३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनृत्वभूमिप्राप्तयोरनृतुप्राप्तं यथर्तुयुग्यशस्त्रावरणं युध्येत, नाभूमिप्राप्तमवरुद्धप्रसारव्यायामम् ।

७. अनृतुप्राप्त एवं अभूमिप्राप्त बल में अनृतुप्राप्त बल ऋतु के अनुरूप वाहन-शस्त्र एवं कवच युक्त होकर, युद्ध कर सकता है किन्तु अनृतु प्राप्त बल प्रसार-व्यायाम अवरूद्ध रहने के कारण युद्ध करने में असफल रहता है।

आशानिर्वेदिपरिसृप्तयोराशानिर्वेदि लब्धाभिप्रायं युध्येत, न परिसृप्तमपसृतमुख्यम् ।

८. आशा निर्वेदी एवं परिसृप्त बल में आशा निर्वेदी कामना पूर्ण होने से युद्ध कर सकता है किन्तु प्रमुख पुरुष रहित परिसृप्त बल युद्ध नहीं कर सकता है।

कलत्रगर्भ्यन्तः शल्ययोः कलत्रगर्भि उन्मुच्य कलत्रं युध्येत, नान्तःशल्यमन्तरमित्रम् ।

९. कलत्रगर्भी एवं अन्तःशल्य में कलत्रगर्भी बल स्त्रीपरिवार की सुव्यवस्था कर युद्ध कर सकता है, अन्तः शल्य अन्दर से शत्रुता रखने के कारण युद्ध नहीं कर सकता है।

पाठभेद :

'यथर्तुयुग्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यथर्तुयोग्य' पाठभेद मिलता है।

पादठिप्पणी :

७. (१) अनृत्वभूमि : अनुपयोगी भूमि।

(२) अनृतुप्राप्त : युद्ध के अयोग्य समय।

(३) प्रसार : चारे के लिए आक्रमण। द्र० ९:२:३,८, १०:२:५, १२:४:२०, गण० १ २३, ३: ५२, १०७।

(४) व्यायामम् : द्र० २:१:३०, १:१६:२९, ६:२१,८, ६:२:४६, १०:४:१६, गण० १:१४, २:२३०।

पाठभेद :

'सृतमृख्यम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपसृतम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

८. (१) आशानिर्वेदि : आशा से खिन्न या विषण्ण या निराश हुई सेना, द्र० ७:६:३०, ८:५:१, गण० ३:२,५, ३:३४।

(२) परिसृप्त : परित्यक्त, गण० ३:२५, कामन्दक १४:६९,८३।

पाठभेद :

'कलत्रगर्भि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कलत्रंगर्हि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

९. (१) कलत्र : स्त्री, भार्या। द्र० ८:५:१, गण० २:५।

(२) शल्य : कांटा, भीतर से कमजोर करने या निष्कासित करने या भीतर से शत्रुता रखने वाला। महाभारत में शल्य नीति प्रसिद्ध है। गण० ३:५७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुपितमूलभिन्नगर्भयोः कुपितमूलं प्रशमितकोपं सामादिभिर्युध्येत न भिन्नगर्भमन्योन्यस्माद्भिन्नम् ।

१०. कुपितमूल एवं भिन्नगर्भबल में कुपितमूल बल साम आदि से कोप शान्त होने के कारण युद्ध कर सकता है किन्तु भिन्नगर्भ बल परस्पर भिन्न होने के कारण युद्ध नहीं कर सकता है।

अपसृतातिक्षिप्तयोरपसृतमेकराज्यातिक्रान्तं मन्त्रव्यायामाभ्यां सत्त्रमित्रापाश्रयं युध्येत, नातिक्षिप्तमनेकराज्यातिक्रान्तं बह्वाबाधत्वात् ।

११. अपसृत एवं अतिक्षिप्त बल में अपसृतबल एक राज्य में अन्य बल से कष्ट प्राप्त करने के कारण मन्त्र और व्यायाम से सत्त्र-मित्र का आश्रय प्राप्त कर युद्ध कर सकता है अनेक राज्य में कष्ट प्राप्त अतिक्षिप्त बल अति पीडा प्राप्ति के कारण युद्ध नहीं कर सकता है।

उपनिविष्टसमाप्तयोरुपनिविष्टं पृथग्यानस्थानमतिसन्धायारिं युध्येत, न समाप्तमरिणैकस्थानयानम् ।

१२. उपनिविष्ट एवं समाप्त बल में उपनिविष्टबल पृथक् यान एवं स्थान होने के कारण शत्रु को प्रतारित कर युद्ध कर सकता है, शत्रु के साथ यान-स्थान वाला समाप्त बल युद्ध नहीं कर सकता है।

पादटिप्पणी :

१०. (१) कुपितमूल : विद्रोही केन्द्र या स्रोत या आधार। मूल का अर्थ प्रधान अधिकारी किया गया है।

(२) भिन्नगर्भ : परस्पर भेद रखने वाली सेना या अन्दर विभाजित सेना, गण० ३:३५, कामन्दक० १०:७०,८३।

पाठभेद

'क्रान्तंमन्त्र' का तंजौर में 'क्रान्तमम्मन्त्र' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'क्रान्तममन्त्र' तथा 'सत्त्र-मित्रा' का 'सत्त्रिमित्रा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

११. (१) अपसृत : सेना त्याग, भाग जाना, पलायित। द्र० ७:६:२२, ७:८:२३, ७:१६:५।

(२) अतिक्षिप्त : असक्त, बिखर जाना, अन्यत्र स्थान में चला जाना।

(३) व्यायाम : द्र० ८:५:७।

(४) सत्त्र : एक स्थान या समय जो छिपने या घात करने के लिए उपयोगी हो। द्र० १०:३:१५, १८, २४, ८:४:४१, १:३:३१, ४४, ४५।

पाठभेद :

'अतिसंधायारिं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अतिसंधाकारं' तथा न्यायचन्द्रिका एवं श्रीमूल में 'अतिसंधातारं' तथा 'समाप्तमरिणैक' का तंजौर में 'समाप्तम्मरिणैक' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'समाप्तं परिणैक' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१२. (१) उपनिविष्ट : ठहरी हुई, या पड़ाव शिविर, या डेरा डाली हुई। गण० ३:३५।

(२) यान : शत्रु के विरुद्ध प्रयाण या मार्च, द्र० ७:१:९, गण० २:२३७।

(३) स्थान : स्थित अवस्था या हाल। द्र० ७:१८:४३, गण० १:१४३, २:२४०, २:२५४, ३:१०७, १३४, १४२।

(४) समाप्तम् : पूर्णतया मिल जाना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपरुद्ध[१]परिक्षिप्त[२]योरुपरुद्धमन्यतो निष्क्रम्योपरोद्धारं प्रतियुध्येत, न परिक्षिप्तं सर्वतः प्रतिरुद्धम्।

१३. उपरुद्ध तथा परिक्षिप्त बल में उपरुद्ध बल अन्य मार्ग से निकल कर उपरोध कर्ता शत्रु से युद्ध कर सकता है, किन्तु सब ओर से घिरा परिक्षिप्त बल युद्ध नहीं कर सकता है।

छिन्न[१]धान्यपुरुष[२]वीव[३]धयोः छिन्नधान्यमन्यतो धान्यमानीय जङ्ग[४]मस्थाव[५]राहारं वा युध्येत, न छिन्नपुरुषवीवधमनभिसा[६]रम्।

१४. छिन्नधान्य तथा छिन्नपुरुष वीवध बल में छिन्नधान्य बल अन्यत्र से धान्य लाकर अथवा जङ्गम एवं स्थावर (वृक्षफ़ल) का आहार कर युद्ध कर सकता है किन्तु सर्वथा असहाय छिन्न पुरुषवीबध बल युद्ध नहीं कर सकता है।

स्वविक्षि[१]प्तमित्रवि[२]क्षिप्तयोः स्वविक्षिप्तं स्वभूमौ विक्षिप्तं सैन्यमापदि शक्यमा[३]वाहयितुं, न मित्रविक्षिप्तं विप्र[४]कृष्टदेशकालत्वात्।

१५. स्वनिक्षिप्त एवं मित्रविक्षिप्त बल में स्वविक्षिप्त बल स्वभूमि में विक्षिप्त होने के कारण आपत्ति काल में एकत्रित किया जा सकता है किन्तु मित्र देश में विक्षिप्त बल दूरवर्ती देश काल वश एकत्र नहीं किया जा सकता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) उपरुद्ध : बाधित, घेरी या रोकी हुई, नाकेबन्दी की हुई या एक तरफ से घेरी हुई। द्र० ७:१०:३५, १:४:२, २:३०:४६, ३:११:१०, ३:२०:१५, गण० ३:३५।

(२) परिक्षिप्त : घिरा हुआ, चारों तरफ से घेरी हुई सेना। द्र० ८:५:१, गण० ३:३५।

पादटिप्पणी :

१४. (१) छिन्नधान्य : पूर्ति स्रोत का भंग होना, गण० ३:३५।

(२) छिन्नपुरुष : आरक्षित या सुरक्षित सैनिकों की पूर्ति का बन्द हो जाना।

(३) वीवध : पूर्ति, द्र० ७:६:८, ७:७:२, ९:६:५४, १०:२:६, गण० ३:३५।

(४) जङ्गम : चल या जीवितप्राणी, मनु० १:४९।

(५) स्थावर : अचल।

(६) अभिसारम् : सहायता या रक्षा करने जाना, द्र० ७:१३:२३ ३८, ३९।

पाठभेद :

'शक्यमावाहयितुं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शक्यमवस्रावयितुं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१५. (१) स्वविक्षिप्त : अपनी भूमि में छिन्न-भिन्न या बिखरी, द्र० ७:९:२२, ७:५:१२, ९:३:११।

(२) मित्रविक्षिप्त : मित्र भूमि में बिखरी।

(३) आवाहयितुं : द्र० ७:७:१३, ८:३:५१, गण० १:३४१।

(४) प्रकृष्ट : दृढ़, विस्तृत, बढ़ाया हुआ, द्र० ७:९:२१, ७:७:२३, ७:१२:३०, ७:६:२।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्ययुक्त दुष्टपार्ष्णिग्राहयोर्दूष्ययुक्तमाप्तपुरुषाधिष्ठितमसंहतं युध्येत, न दुष्टपार्ष्णिग्राहं पृष्ठाभिघातत्रस्तम् ।

१६. दूष्य युक्त एवं दुष्ट पार्ष्णिग्राह में दूष्ययुक्त बल विश्वस्तजनों से युक्त तथा दूष्य सम्बन्ध रहित होकर, युद्ध कर सकता है किन्तु पीछे से आघात की शंका से त्रस्त दुष्टपार्ष्णिग्राह युद्ध नहीं कर सकता है।

शून्यमूलास्वामिसंहतयोः शून्यमूलं कृतपौरजानपदारक्षं सर्वसंदोहेन युध्येत, नास्वामिसंहतं राजसेनापतिहीनम् ।

१७. शून्यमूल तथा अस्वामिसंहत बल में शून्यमूल बल पौरजानपदों से सुरक्षित होकर, सर्व सन्दोह के साथ युद्ध कर सकता है। राज सेनापति रहित अस्वामिसंहत बल युद्ध नहीं कर सकता है।

भिन्नकूटान्धयोर्भिन्नकूटमन्याधिष्ठितं युध्येत, नान्धमदेशिकम् । इति ।

१८. भिन्नकूट एवं अन्धबल में भिन्नकूट बल अन्य अधिष्ठान से संयुक्त होकर, युद्ध कर सकता है। किन्तु उपदेशक रहित अन्धबल युद्ध नहीं कर सकता है।

दोषशुद्धिर्बलावापः सत्त्रस्थानातिसंहितम् ।
संधिश्चोत्तरपक्षस्य बलव्यसनसाधनम् ॥

१९. दोष शुद्धि, बलावाप, सत्त्रस्थान, अतिसंहित (शत्रुबल प्रतारण) सबलपक्ष से सन्धि ये बल व्यसन दूर करने के उपाय है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) दूष्य : विश्वासघाती, विद्रोही, द्र० १०:१५:१७, ३:२४:२७ ।

(२) दुष्टपार्ष्णिग्राह : पृष्ठभाग का विरोधी शत्रु ।

(३) असंहत : असंयुक्त, पृथक्-पृथक् ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) मूल : देश की राजधानी या केन्द्र ।

(२) स्वामी : राजा या सेनापति रहित समष्टि ढेरी, सैन्यसंचालन ।

(३) संदोह : द्र० ६:२:३८, ७:४:७, १२, १४, ७:१३:५, ९:६:५५ ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) कूट : चोटी, शिखर या नेता विहीन सेना से तात्पर्य हैं, द्र० ८:१:१८ ।

(२) अन्ध : शत्रु की जानकारी न रखने वाला ।

(३) अदेशिक : बिना निर्देश, विना मार्ग दर्शक, द्र० ८:५:१८ ।

पाठभेद :

'दोषशुद्धि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दोषविशुद्धिर्' तथा 'नातिसंहितम्' का 'नातिसंधानम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१९. (१) दोषशुद्धि : त्रुटि दूर करना ।

(२) बलावाप : नवीन सेना की टुकड़ियों का अनुप्रवेश ।

(३) सत्त्र : द्र० ८:५:११ ।

(४) उत्तरपक्ष : वली या श्रेष्ठ, ९:७:६५ ।

(५) वलव्यसन : सैनिक आपदाएँ, द्र० ८:५:१, १०:३:३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रक्षेत्स्वदण्डं व्यसने शत्रुभ्यो नित्यमुत्थितः ।
प्रहरेद्दण्डरन्ध्रेषु[१] शत्रूणां नित्यमुत्थितः ॥

२०. नित्य जाग्रत रहकर, व्यसन में शत्रुओं से अपनी सेना की रक्षा करे और शत्रुओं के निर्बल स्थानों पर, नित्य सावधानी से प्रहार करे ।

यतो[१] निमित्तं व्यसनं प्रकृतीनामवाप्नुयात् ।
प्रागेव[२] प्रतिकुर्वीत तन्निमित्तमतन्द्रितः ॥

२१. जिस कारण से प्रकृतियों में व्यसन उत्पन्न हो, उस कारण को (नृपति) बिना आलस्य के पहले ही दूर करे ।

अभियातं[१] स्वयं[२] मित्रं सम्भूयान्य[३]वशेन[४] वा ।
परित्यक्तमशक्त्या वा लोभेन प्रणयेन[५] वा ॥

२२. स्वकार्यहेतु अथवा अन्य के कार्य हेतु शत्रु से अभियोग (युद्ध) करने वाले मित्र से अशक्ति, लोभ अथवा शत्रु के प्रति प्रेमवश छोड़ देने पर—(वह पुनः दुःख से वश होता है ।)

विक्रीतमभियुञ्जाने[१] संग्रामे वाऽपवर्तिना ।
द्वैधीभावेन वाऽमित्रं यास्यतावाऽन्यमन्यतः ॥

२३. संग्राम चलते रहने की स्थिति में धनादि लेकर, पीछे हटने वाले विजिगीषु से परित्यक्त अथवा द्वैधीभाव के कारण त्यक्त अथवा 'तुम इस ओर से और मैं उस ओर से आक्रमण करूं' इस प्रकार मित्र शत्रु के साथ सन्धि करके, अन्य शत्रु पर आक्रमण कर्ता विजिगीषु से त्यक्त मित्र कठिनाई से वशवर्ती होता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) रन्ध्र : दुर्बल स्थान, केन्द्र, द्र० १: १६:२४ ।

पाठभेद :

यह श्लोक मैसूर संस्करण के अन्त में ३०४ वाँ तथा उदयवीर शास्त्री संस्करण में अध्याय के अन्त में ३१ वां तथा वसाक संस्करण में अध्याय के अन्त में १०८ वाँ श्लोक है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) यतोनिमित्तं : जिस कारण से ।

(२) प्रागेव : पहले ही, पूर्व में ।

पाठभेद :

'संभूयान्यवशेन' का देवनागरी अनुलिपि में 'संभूयान्यं वशेन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

प्रकरण १३४ का पद यहाँ आरम्भ होता है ।

२२. (१) अभियात : प्रयाण, कूच ।

(२) स्वयं : अपने सम्बन्ध में ।

(३) संभूय : दूसरों के साथ होकर, आपस में मिलकर ।

(४) अन्यवशेन : दूसरों के उकसाने या उत्तेजना या प्रेरणा से ।

(५) प्रणय : शत्रु के साथ मित्रता हो जानेपर, उक्त सूत्र का अन्वय सूत्र २७ के पद 'कृच्छ्रेणा साध्यते' के साथ होगा ।

पाठभेद :

'वाऽमित्रं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वा मित्रं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) अभियुञ्जाने : शत्रु, जो किसी मित्र की सेना पर, आक्रमण करे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पृथग्वा[1] सहयाने[2] वा विश्वासेनातिसंहितम् ।
भयावमानालस्यैर्वा व्यसनान्न प्रमोक्षितम्[3] ।।

२४. पृथक्-पृथक् अथवा साथ-साथ अभियान करके विश्वासघात किया गया अथवा भय, अपमान या आलस्य के कारण विपत्ति से न मुक्त किया गया मित्र—(कठिनाई से पुनः वशवर्ती होता है।)

अवरुद्धं[1] स्वभूमिभ्यः समीपाद्वा भयाद्गतम् ।
आच्छेदनाद[2]दानाद्वा[3] दत्त्वा वाऽप्यवमानितम् ।।

२५. अपनी भूमि से अवरुद्ध अथवा भयवश समीप से गया हुआ, बलपूर्वक अपहृत धन वाला दातव्य धन नहीं दिया गया अथवा देकर अपमानित किया गया मित्र दुःख पूर्वक वशवर्ती होता है।

अत्याहारितमर्थं वा स्वयं परमुखेन वा ।
अतिभारे नियुक्तं वा भङ्क्त्वा[2] परमुपास्थितम् ।।

२६. स्वयं अथवा अन्य द्वारा अपहृत धन वाला अथवा अतिकष्टप्रद कार्य सम्पन्न कर उपस्थिति होते ही पुनः अन्य अतिभारी कार्य में लगाया गया मित्र—(दुःख पूर्वकवशवर्ती होता है)।

उपेक्षितमशक्त्या[1][2] वा प्रार्थयित्वाविरोधितम् ।
कृच्छ्रेण[3] साध्यते मित्रं सिद्धं चाशु विरज्यति[4] ।।

२७. अशक्ति के कारण उपेक्षित अथवा मित्रता के लिये प्रार्थना करके भी विपरीत किया गया मित्र कष्टपूर्वक अनुकूल होता है और किसी प्रकार अनुकूल होने पर भी शीघ्र विरक्त हो जाता है।

पाठभेद :

'वमानालस्यैर्' का तेलगू अनुपतिलिपि में 'वमानलास्यैर्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२४ (१) पृथग्वा : पृथक।

(२) यान : आक्रमण या कूच या मार्च। द्र० ७:१:९।

(३) प्रमोक्षण : त्याग देना, मुक्त करना।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अवरुद्धं : रोका हुआ, न आने देना। द्र० १:१०:११, २:३७:९, ८:५:७, गण० १:४,४८।

(२) आच्छेदन : बलपूर्वक द्रव्य लेना या पृथक करना।

(३) अदानात् : न देने से।

पाठभेद :

'नियुक्तं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हियुक्तं' तथा देवनागरी अनुलिपिमें 'ऽभियुक्तं' तथा 'भङ्क्त्वा' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भक्त्वा' तथा 'परमुपस्थितम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'परमवस्थितम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२६. (१) अत्याहारित : द्र० १:६:७, गण० ३:४०।

(२) २ भङ्क्त्वा : तोड़कर।

पादटिप्पणी :

२७. (१) उपेक्षित : उपेक्षा किया हुआ या अवहेलित।

(२) अशक्य : दुर्बलता, कमजोरी।

(३) कृच्छ्र : द्र० ५:२:१, ९:५:७।

(४) विरज्य : विरक्त, असन्तुष्ट, वितुष्ठ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कृतप्रयासं मान्यं वा मोहान्मित्रममानितम् ।
मानितं वा न सदृशं शक्तितो वा निवारितम् ॥

२८. विजिगीषु के लिये प्रयासकर्ता, मान्य, प्रमादवश अपमानित किया गया अथवा अनुरूप सम्मान प्राप्त करने वाला अथवा शान्तिपूर्वक निषिद्ध मित्र—(साध्य होता है)।

मित्रोपघातत्रस्तं वा शङ्कितं वाऽरिसंहितात् ।
दूष्यैर्वा भेदितं मित्रं साध्यं सिद्धं च तिष्ठति ॥

२९. मित्रोपघात संत्रस्त अथवा शत्रु सन्धि से शंकित अथवा दूष्यो द्वारा भेदित, मित्र साध्य होता है और सिद्ध हो, चिरमित्र बनता है।

तस्मान्नोत्पादयेदेनान् दोषान्मित्रोपघातकान् ।
उत्पन्नान् वा प्रशमयेद्गुणैर्दोषोपघातिभिः ॥

३०. अतएव बिजिगीषु मित्रोपघाती दोषों को न उत्पन्न करे अथवा उत्पन्न होने पर दोषोपघाती गुणों से शान्त करे।

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमेऽधिकरणे बलव्यसनवर्गः
मित्रव्यसनवर्गः पञ्चमोऽध्यायः ।

अष्टमअधिकरण के अन्तर्गत व्यसनाधिकारिक में बल व्यसनवर्ग एवं मित्र व्यसनवर्ग सम्बद्ध पञ्चम अध्याय समाप्त।

पाठभेद :

'शक्तितो वानिवा' का न्यासचन्द्रिका तथा श्रीमूल में 'भक्तितो वा निवा'। पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) मान्य : आदरणीय।

(२) मोह : जड़ता, बुद्धिहीनता, मूढ़ता।

(३) अमानित : सत्कार न की गयी। द्र० ८:५:२।

पादटिप्पणी :

२९. (१) त्रस्त : भयभीत।

(२) अरिसंहितात् : शत्रु के साथ सन्धि किया हुआ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) प्रशम : शमन करना, शान्त करना।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिके अष्टमाधिकरणे पंचमोऽध्यायः बलव्यसनवर्गः मित्रव्यसनवर्गः आदितः एकविंशतिशततमः। एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य व्यसनाधिकारिकम् अष्टममधिकरणं समाप्तम् ॥

मैसूर संस्करण में—

इति व्यसनाधिकारिके अष्टमाधिकरणे बलव्यसनवर्गः मित्रव्यसनवर्गश्च पंचमोऽध्यायः। एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य व्यसनाधिकारिकं अष्टमाधिकरणंसमाप्तम्।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य व्यसनाधिकारिकम् अष्टममधिकरणं समाप्तम् ।

यहाँ कौटिलीय अर्थशास्त्र का व्यसनाधिकारिक अष्टम अधिकरण समाप्त ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे व्यसनाधिकारिके अष्टमाधिकरणे पंचमोऽध्यायः बलव्यसनवर्गः मित्रव्यसनवर्गः आदित एकाविंशतिशततमः । एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य व्यसनाधिकारिकं अष्टमधिकरणं समाप्तम् ॥

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति व्यसनाधिकारिकेऽष्टमोऽधिकरणं बलव्यसनवर्गः मित्रव्यसनवर्गः पंचमोऽध्यायः ।५। आदित एकविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ।१२१। एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य व्यसनाधिकारिके अष्टममधिकरणम् समाप्तम् ।८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

९

अभियास्यत्कर्म–नवममधिकरणम्

अभियास्यत्कर्म–नवम अधिकरण

अध्याय १

[पञ्चत्रिंशच्छततमं प्रकरणम्—शक्तिदेशकालबलाबलज्ञानम्.
षट्त्रिंशच्छततमं प्रकरणम्—यात्राकालाः]

एक सौ पैंतीसवां प्रकरण—शक्ति-देश-काल-बलाबलज्ञान
एक सौ छत्तीसवां प्रकरण—यात्राकाल

विजिगीषुरात्मनः परस्य च बलाबलं शक्ति[1]देश[2]काल[3]यात्रा[4]कालबलसमुद्दान[5]-काल पश्चात्कोप[6]क्षय[7]व्यय[8]लाभा[9]पदां[10] ज्ञात्वा विशिष्टबलो[11] यायात्, अन्यथाऽऽसीत[12] ।

१. विजिगीषु अपने शत्रु के बलाबल, शक्ति देश काल, यात्राकाल, बल समुद्दान काल, पश्चात् कोप, क्षय, व्यय, लाभ एवं आपदा को जानकर, विशिष्ट बल युक्त होकर, अभियान करे अन्यथा अभियान न करे ।

नवें अधिकरण में अभियास्यत्कर्म : सैनिक अभियान से पूर्व तैयारी करने तथा सावधानी कैसे की जाय, इसका वर्णन है ।

प्रकरण ३५, सूत्र १-३३ तथा प्रकरण ३६ में सूत्र ३४ से ५६ तक है ।

पाठभेद :

'समुद्दान' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'समुत्थान' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) शक्ति : उत्साह शक्ति, ६:१:५, ६:२:३३ प्रभाव शक्ति, द्र० १:२१:७, ७:६:३३, मन्त्र शक्ति ६:१४:१९, ९:२:३ ।

(२) देश : सम एवं विषम स्थान, पृथ्वी । द्र० ३:१:१५, १९, ३:१५:२९, ४:६:९, ४:९:१५, गण० २:९७, ३:४५ ।

(३) काल : शीत, ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु । द्र० ७:६:६ ।

(४) यात्रा : आत्मबल प्रसारण, कूच । द्र० १:६:२९, ९:१:३४ ।

(५) समुद्दान काल : सेना की भर्ती के पश्चात यथोचित काम पर नियुक्ति या सेना की उन्नति । द्र० १:१:१६, २९, ९:२:१, गण० ७:२१ ।

(६) पश्चात कोप : ९:१:१, ९:७:६ ।

(७) क्षय : विनाश । द्र० ७:२:२, गण० १: १४३, २:२३९; ३:६७, ३:९७ ।

(८) व्यय : खर्च, नाश, द्र० ७:२:२, ७:११: २७, ९:४:२, ९:७:२५, गण० ३:६७ ।

(९) लाभ : फल । द्र० २:६:२५, २:७:३२, गण० ३:६७ ।

(१०) आपदा : प्रकरण १४३ । बाह्य एवं आभ्यान्तर विपत्ति ।

(११) विशिष्ट बल : शत्रु बला पेक्ष इत्यादि ।

(१२) यायात् : द्र० ७:१:१६, ७:५:१६, ७: ७:२, ७:१६:२ ।

(१३) आसीत : शान्त रहना, चुप बैठना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्साहप्रभावयोरुत्साहः श्रेयान् ।

२. उत्साह एवं प्रभाव में उत्साह श्रेष्ठ होता है।

स्वयं हि राजा शूरो बलवानरोगः कृतास्त्रो दण्डद्वितीयोऽपि शक्तः प्रभाववन्तं राजानं जेतुम् ।

३. शूर, वलवान्, रोग रहित, शस्त्र विद्यायुक्त राजा स्वबलयुक्त रहकर, स्वयं एकाकी ही प्रभावशाली राजा को जीतने में समर्थ होता है।

अल्पोऽपि चास्य दण्डस्तेजसा कृत्यकरो भवति ।

४. इसके तेज से थोड़ा भी बल (सेना) विजयादि कार्य में सफल होता है।

'निरुत्साहस्तु प्रभाववान् राजा विक्रमाभिपन्नो पश्यति' इत्याचार्याः ।

५. 'निरुत्साही प्रभाव पूर्ण राजा पराक्रम काल में नष्ट हो जाता है' ऐसा आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

६. यह मत कौटिल्य को मान्य नहीं है।

पादटिप्पणी :

२. (१) उत्साह : शौर्य, बल, आरोग्य आदि द्वारा उत्साह वृद्धि होती है। द्र० ६:१:५, ६:२:३३, ९:६:४२, ९:७:९, गण० ३:४३ ।

(२) प्रभाव : कोश एवं सेना द्वारा प्रभाव होता है। द्र० १:२१:७, ७:६:३३, ७:१४:१९, ९:१:३, गण० ३:४३ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) कृतास्त्रः : अस्त्र विद्या में प्रवीण या निपुण।

(२) दण्डद्वितीयोऽपि : द्र० कामन्दक; १८:४४ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) अल्प : थोड़ा। बाबर के पास कुल बारहहजार १२००० सेना थी, जबकि इब्राहिम लोदी और राणासाङ्गा के पास, लगभग एक लाख फौज थी। किन्तु अल्प सेना होते हुए भी बाबर ने अपनी उत्साह तथा रणनीति के कारण दोनों को हरा दिया। यही बात तृतीय पानीपत के युद्ध के विषय में भी कही जा सकती है।

मराठों की सेना बहुत बड़ी थी किन्तु अहमद शाह अब्दाली ने अल्प सेना के साथ मराठों को हरा दिया।

(२) कृत्यकर : द्र० ५:२:३७ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) विक्रम : आक्रमण करना। द्र० १:१७:२८, १:१९:१५, ५:६:२५, ७:३:११, १२:३:१५, १४:३:६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रभाववानुत्साहवन्तं राजानं प्रभावेनातिसंधत्ते तद्विशिष्टमन्यं राजानमावाह्य भृत्वा क्रीत्वा प्रवीरपुरुषान् ।

७. प्रभाववान् राजा शत्रु से विशिष्ट बली राजा को आहूत कर, वेतन देकर, तथा प्रचुर धन देकर, वीर पुरुषों को स्वायत्त करके, उत्साही राजा को प्रभाव से अतिक्रान्त कर लेता है ।

प्रभूतप्रभावहयहस्तिरथोपकरणसंपन्नश्चास्य दण्डः सर्वत्राप्रतिहतश्चरति ।

८. प्रचुर प्रभाव अथवा हस्ति एवं रथोपकरण युक्त, उसका बल सर्वत्र अप्रतिहत गति से अग्रसर रहता है ।

उत्साहवतश्च प्रभाववन्तो जित्वा क्रीत्वा च स्त्रियो बालाः पङ्गवोऽन्धाश्च पृथिवीं जिग्युरिति ।

९. प्रभावशाली स्त्री, बाल, पंगु एवं अन्धे नृपों ने उत्साह सम्पन्नों को जीतकर तथा धन से वश में करके, पृथ्वी पर विजय प्राप्त किया ।

'प्रभावमन्त्रयोः प्रभावः श्रेयान् ।

१०. प्रभाव एवं मन्त्र में प्रभाव श्रेष्ठ होता है ।

मन्त्रशक्तिसम्पन्नो हि बन्ध्यबुद्धिरप्रभावो भवति ।

११. मन्त्र शक्ति सम्पन्न प्रभावहीन नृपति निष्फल बुद्धि वाला होता है ।

पाठभेद :

'भृत्वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हृत्वा' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) प्रभाव : द्र० ९:१:२, गण० ३:४३ ।

(२) उत्साह : द्र० ९:१:२, गण० ३:१३ ।

(३) तद्विशिष्टं : उत्साहयुक्त ।

(४) आवाह्य : आमन्त्रित करना, द्र० ७:१५: २२, ९:७:१० ।

(५) भृत्वा : भाड़े पर उठाना या किराये पर देना ।

पाठभेद :

'उत्साहवतश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उत्साहवन्तः' तथा 'पङ्गवो' का तंजौर में 'पङ्कवे' देवनगरी अनुलिपि में 'पङ्कवो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) उत्साहवत : उत्साहयुक्त व्यक्ति ।

(२) जित्वा : जीतकर ।

(३) स्त्रियः : जैसे रानी लक्ष्मी बाई ।

(४) बालाः : बालक, जैसे अभिमन्यु ।

(५) पंगु : लंगड़ा जैसे तैमूर ।

(६) अन्धा : जैसे धृतराष्ट्र ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) मन्त्र : मन्त्र शक्ति, द्र० ७:१४: १६, गण० ३:४० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन्त्रकर्म[1] चास्य निश्चितमप्रभावो गर्भधान्य[2]मवृष्टिरिवोपहन्ति' इत्याचार्याः ।

१२ उसके निश्चित मन्त्र कर्म को प्रभावहीनता उसी प्रकार नष्ट कर देती है, जिस प्रकार गर्भस्थधान्य को अवृष्टि' ऐसा आचार्यों का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

१३. इस मत को कौटिल्य नहीं मानता है ।

मन्त्रशक्तिः श्रेयसी ।

१४. मन्त्रशक्ति श्रेष्ठ होती है ।

प्रज्ञा[1]शास्त्र[2]चक्षु[3]र्हि राजाऽल्पेनापि प्रयत्नेन मन्त्रमाधातुं शक्तः परानुत्साहप्रभाववतश्च सामादिभिर्योगो[4]पनिषद्[5]भ्यां चातिसंधातुम् ।

१५. प्रज्ञा एवं शास्त्र चक्षुवाला राजा अल्प प्रयत्न से मन्त्र प्रयोग करने में समर्थ होता है, और उत्साह एवं प्रभाव सम्पन्न शत्रुओं को सामादि नीतियों तथा योग और उपनिषद प्रयोगों से अतिक्रान्त करने में सक्षम होता है ।

एवमुत्साहप्रभावमन्त्रशक्तीनामुत्तरोत्तराधिकोऽतिसंधत्ते ।

१६. इस प्रकार उत्साह, प्रभाव एवं मन्त्र शक्तियों में उत्तरोत्तर अधिक शक्ति वाला राजा तेजस्वी (जयी) होता है ।

देश[1]ः पृथिवी ।

१७. पृथ्वी देश है ।

पाठ भेद :

'रिवोपहन्ति' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रिवोद्रमति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) मन्त्रकर्म : विचार विमर्श पूर्वक ।

(२) गर्भधान्य : खेत या भूमि में लगा धान्य गण० ३:४४ ।

पाठभेद :

'प्रभाववतश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रभावतश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५, (१) प्रज्ञा : मेधा, बुद्धि, विवेक, तेज । गण० ३:३६ ।

(२) शास्त्र : धर्म, दर्शन, विज्ञान, कला आदि ।

(३) चक्षु : आंख, नेत्र, दृष्टि प्रज्ञा एक तथा दूसरी शास्त्र आदेश ।

(४) योग : अधिकरण १२ तथा १७ ।

(५) उपनिषद् : द्र० अधिकरण १४ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) देश : द्र० ३:१:१५, १९; ४:९:१५; ३:१६:२९; ४:६:९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्यां हिमवत्समुद्रान्तरमुदीचीनं योजनसहस्रपरिमाणं तिर्यक् चक्रवर्ति क्षेत्रम् ।

१८. पृथ्वी पर हिमालय से दक्षिण समुद्र तक का मध्य भाग तथा पूर्व-पश्चिम की ओर एक हजार योजन तक तिर्यक (तिरछे—पूर्व-पश्चिम सागर पर्यन्त) चक्रवर्ती क्षेत्र है।

तत्रारण्यो ग्राम्यः पार्वत औदको भौमः समो विषम इति विशेषाः ।

१९. उसमें अरण्य, ग्राम्य, पर्वत भाग, जलीय भाग सम एवं विषम विशेष भाग होते हैं।

तेषु यथास्वबलवृद्धिकरं कर्म प्रयुञ्जीत ।

२०. उन पर अपना बलवृद्धि कारी कर्म करे।

पाठभेद :

'तिर्यक्' का त्रिवेन्द्रम तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अतिर्यक्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) हिमवत् : हिमालय।

(२) समुद्र : भारतीय महासागर, अरब, बंगाल की खाड़ी के सन्निकट। द्र० १:६:४।

(३) उदीची : उत्तरदिशा।

(४) योजन : चार कोश या आठ मील।

(५) तिर्यक् : तिर्यक या टेढ़ी दिशा। यहां पूर्व और पश्चिम सागरों के मध्यवर्ती भूभाग से तात्पर्य है।

(६) चक्रवर्ती क्षेत्र : जिस राजा के रथ का चक्र समुद्र पर्यन्त तक चलता था, उसको चक्रवर्ती कहते थे। उस राजा को अश्वमेध तथा राजसूय यज्ञ करने का अधिकार होता था। मान्धाता और ययाति; प्रथम चक्रवर्तियों में थे। भारत वर्ष को एक शासन सूत्र में संगठित करना उनका आदर्श होता था।

चक्रवर्तियों को प्रायः सम्राट कहते थे। उन्हें एकछत्र तथा सार्व भौम भी कहा जाता था। चक्रवर्ती क्षेत्र उत्तर में हिमालय से दक्षिण में समुद्र तक विस्तृत था। पश्चिम पूर्व एक हजार योजन होता था। मार्कण्डेयपुराण में उल्लेख आता है।

इसके दक्षिण में समुद्र पर्यन्त तथा उत्तर में हिमालय स्थित है। वायु पुराण में उल्लेख है।

जिसके उत्तर में हिमालय और दक्षिण में समुद्र है और जहां पर भारतीय प्रजा हैं। उस देश का नाम भारतवर्ष हैं। वायु० ४५; ७५-७६।

कालिदास ने भी रघुवंश में चक्रवर्ती क्षेत्र के विषय में संकेत किया है। एकछत्र या सार्वभौम राजा को चक्रवर्ती कहते थे। चक्रवर्ती क्षेत्र की सीमा समय-समय पर बदलती रही है। कौटिल्य के समय भारतवर्ष में एकता की आवश्यकता रही है। अतएव कौटिल्य कालीन चक्रवर्ती क्षेत्र में बिलोचिस्तान, अफगानिस्तान, सिन्ध, तथा बंगलादेश आता था। चक्रवर्ती क्षेत्र भारतवर्ष की एक भावात्मक एकता का प्रतीक है। चन्द्रगुप्त मौर्य तथा अशोक भारतवर्ष के अन्तिम चक्रवर्ती राजा थे। उसके पश्चात् अंग्रेजों के समय का भारत वर्ष चक्रवर्ती क्षेत्र माना जा सकता हैं।

पाठ भेद :

'पार्वत औदको' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पातऔदको' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१९. (१) भौम : स्थल भूमि।

(२) सम : समतल भूमि।

(३) विषम : ऊँची नीची, उन्नतावनत भूमि। गण० ३:११४।

पादटिप्पणी :

२०. (१) बल : सेना। गण० १:१८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यत्रात्मनः सैन्यव्यायामानां भूमिः, अभूमिः परस्य स उत्तमो देशः, विपरीतोऽधमः, साधारणे मध्यमः ।

२१. जहाँ अपने सैन्य के लिये व्यायाम की भूमि हो और शत्रु के सैन्य के लिये भूमि नहो, वह उत्तम देश होता है, उसके विपरीत अधम तथा दोनो के लिये सामान्य मध्यम देश होता है।

कालः शीतोष्णवर्षात्मा ।

२२. शीत काल, उष्ण काल एवं वर्षा काल ये तीन काल होते हैं।

तस्य रात्रिरहः पक्षो मास ऋतुरयनं संवत्सरो युगमिति विशेषाः।

२३. उस काल के रात्रि, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर एवं युग विशेष-भेद होते हैं।

तेषु यथास्वबलवृद्धिकरं कर्म प्रयुञ्जीत ।

२४. उनमें विजिगीषु अपने बल का वृद्धिकारी कर्म करे ।

यत्रात्मनः सैन्यव्यायामानामृतुः, अनृतुः परस्य, स उत्तमः कालः, विपरीतोऽधमः, साधारणो मध्यमः ।

२५. जो अपने सैन्य के व्यायाम के लिये अनुकूल तथा शत्रु सैन्य व्यायाम के लिये प्रतिकूल ऋतु हो वह उत्तम काल होता है, उसके विपरीत अधम एवं दोनों के लिये साधारण मध्यम काल होता है।

पादटिप्पणी :

२१. (१) व्यायाम : आपरेशन, द्र० ८:३:४६, १०:४:१६, गण० १:२४; २:२३०; ३:१२५ ।

(२) भूमि : भूमि उत्तम, अधम, साधारण तीन प्रकार की होती है। द्र० ७:९:२, ७:९:३१, २:१:३०, गण० १:१२७ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) काल : द्र० ७:६:६;

(२) शीत : शीतकाल, जाड़ा ।

(३) उष्ण : ग्रीष्मकाल या गर्मी ।

(४) वर्षा : वर्षा काल ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) रात्रि : रात, निशा। गण० ३:११४।

(२) दिन : वह समय जिसका आरम्भ सूर्योदय तथा अन्त सूर्यास्त से होता है।

(३) पक्ष : कृष्ण-शुक्ल, गण० ३:१३८, १०:५:४, १७, १०:६:१ ।

(३) मास : महीना ।

(५) ऋतु : वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर ।

(६) अयन : उत्तरायण, दक्षिणायन ।

(७) संवत्सर : बर्ष ।

(८) युग : सत, त्रेता, द्वापर, कलि ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) उत्तम : द्र० ९:१:२१ ।

(२) अधम : द्र० ९:१:२१ ।

(३) मध्यम : द्र० ९:१:२१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'शक्तिदेशकालानां तु शक्तिः श्रेयसी' इत्याचार्याः ।

२६. 'शक्ति, देश एवं काल में शक्ति श्रेष्ठ होती है,' ऐसा आचार्यों का मत है।

शक्तिमान् हि निम्नस्थलवतो देशस्य शीतोष्णवर्षवतश्च कालस्य शक्तः प्रतीकारे भवति ।

२७. शक्तिमान् विजिगीषु निम्न स्थल वाले देश तथा शीतोष्ण वर्षा वाले काल का प्रतीकार करने में समर्थ होता है।

'देशः श्रेयान्, इत्येके।

२८. 'देश श्रेष्ठ होता है। ऐसा अन्य लोग मानते हैं।

'स्थलगतो हि श्वा नक्रं विकर्षति, निम्नगतो नक्रः श्वानम्' इति ।

२९. 'स्थल पर स्थित श्वान नक्र को तथा निम्नस्थ नक्र श्वान को खींच लेता है।

'कालः श्रेयान्' इत्येके ।

३०. 'काल श्रेष्ठ होता है' ऐसा कुछ (विद्वानों) का मत है।

'दिवा काकः कौशिकं हन्ति, रात्रौ कौशिकः काकम्' इति ।

३१. 'दिन में कौआ कौशिक (उलूक) को तथा रात्रि में कौशिक काक को मार डालता है'।

नेति कौटिल्यः

३२. ऐसा कौटिल्य का मत नहीं है।

परस्परसाधका हि शक्तिदेशकालाः।

३३. शक्ति, देश एवं काल परस्पर साधक होते हैं।

पाठभेद :

'प्रतीकारे' का तंजौर में 'प्रकारे' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२७. (१) निम्न : जल, जलीय या तराई, या नीचा, या गहरा, या ढालुआ या दलदल क्षेत्र, द्र० २:३:१, २:२३:८।

पादटिप्पणी :

२९. (१) श्वा : श्वान, कुत्ता।

(२) नक्र : घड़ियाल, मगर, ग्राह। गण० ३: १८?।

(३) निम्नगतो : गहरे में स्थित।

पादटिप्पणी :

३१. (१) काक : कौआ।

(२) कौशिक : उल्लू या पेचक।

पादटिप्पणी :

३३. (१) परस्परसाधक : एक दूसरे के पूरक या एक दूसरे के सहायक।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant 2

तैरभ्युच्चितस्तृतीयं चतुर्थं[1] वा दण्डस्यांशं मूले[2] पार्ष्ण्यां[3] प्रत्यन्ताटवीषु[4] च रक्षां[5] विधाय कार्यसाधनसहं कोशदण्डं चादाय क्षीणपुराणभक्तमगृहीतनवभक्तम-संस्कृतदुर्गममित्रं वार्षिकं चास्य सस्यं हैमनं च मुष्टिमुपहन्तुं मार्गशीर्षी यात्रां[6] यायात्[7]।

३४. उन उचित देश, काल एवं शक्ति से सम्पन्न विजिगीषु सेना का तृतीय अथवा चतुर्थ भाग मूल पार्ष्णि और प्रत्यन्त अटवी में रक्षार्थ नियुक्त कर कार्य सिद्ध करने में समर्थ कोश और दण्ड साथ लेकर, समाप्त प्राय प्राचीन खाद्य सामग्रीवाले, नवीन खाद्य वस्तु से रहित एवं असंस्कृत दुर्गवाले शत्रु का तथा उसके वर्षा कालिक फसल और हेमन्त कालिक मुष्टि (बुवाई) नाश करने के लिये मार्गशीर्ष (अगहन) में यात्रा (अभियान) करनी चाहिए।

हैमनं चास्य सस्यं वासन्तिकं[2] च मुष्टिमुपहन्तुं चैत्रीं यात्रां[3] यायात्।

३५. शत्रु के हेमन्त कालिक फ़सल एवं वसन्तकालिक मुष्टि (बुवाई) का नाश करने के लिये चैत्र में यात्रा करनी चाहिए।

क्षीणतृणकाष्ठोदकमसंस्कृतदुर्गममित्रं वासन्तिकं चास्य सस्यं वार्षिकीं च मुष्टिमुपहन्तुं ज्येष्ठामूलीयां यात्रां यायात्।

३६. विजिगीषु की क्षीण तृण-काष्ठ एवं उदक (जल) वाले दुर्गसंस्कार रहित शत्रु का तथा उसकी वसन्त कालिक का फसल और वर्षा कालिक बुवाई का नाश करने के लिये ज्येष्ठा मूलीय अर्थात् ज्येष्ठ में यात्रा करनी चाहिए।

पाठभेद :

'दण्डस्यांशं मूले' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दण्डस्यांशमूले' तथा 'क्षीणपुराण' का 'च क्षीणपुराण' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३४. (१) अभ्युच्चित : नियमित, प्रचलित प्रथा के अनुसार। गण० २:२५७।

(२) मूल : जहाँ से अभियान आरम्भ होता है, या राजधानी या केन्द्र। द्र० ७:२:१४, ७:३:१३, ८:३:६६।

(३) पार्ष्ण्याम् : पृष्ठ भाग।

(४) प्रत्यन्त : सीमावर्ती। द्र० १:१७:४२, गण० ३:१६६।

(५) रक्षा : रक्षार्थ या कार्य।

(६) यात्रा : सैनिक अभियान। द्र० १:१६: २९, गण० १:१८।

(७) यायात : मार्च, कूच। द्र० ७:१:१६, ७:५:११।

पाठभेद :

तेलगू अनुप्रतिलिपि में स्यांत्रां लुप्त है।

पादटिप्पणी :

३५. (१) हेमन्त : मार्गशीर्ष एवं पौष मास।

(२) वसन्त : चैत्र-वैसाख मास।

(३) यात्रा : द्र० ७:१५:२२; गण० १:१८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अत्युष्णमल्पयवसेन्धनोदकं वा देशं हेमन्ते यायात् ।

३७. अति-उष्ण अथवा अल्पयवस, अल्पईन्धन एवं अल्प उदक वाले देश पर हेमन्त में यात्रा करनी चाहिए ।

तुषारदुर्दिनमगाधनिम्नप्रायं गहनतृणं वृक्षं वा देशं ग्रीष्मे यायात् ।

३८. तुषारपात से दुर्दिनयुक्त, अगाधजलतडागबहुल, गहन तृण-वृक्ष युक्त देश पर ग्रीष्म में अभियान करे ।

स्वसैन्यव्यायामयोग्यं परस्यायोग्यं वर्षति यायात् ।

३९. स्व-सैन्य के व्यायाम योग्य तथा शत्रु सैन्य के व्यायाम के लिये प्रतिकूल देश पर, वर्षा काल में अभियान करे ।

मार्गशीर्षीं तैषीं चान्तरेण दीर्घकालां यात्रां यायात्, चैत्रीं वैशाखीं चान्तरेण मध्यमकालां, ज्येष्ठामूलीयामाषाढीं चान्तरेण ह्रस्वकालाम्, उपोषिष्यन्व्यसने चतुर्थीम् ।

४०. अगहन एवं पौष के मध्य दीर्घकालिक यात्रा करे, चैत-वैशाख के मध्य मध्यमकालिक यात्रा करे, ज्येष्ठ एवं आषाढ़ के मध्य अल्प कालिक यात्रा (अभियान) तथा शत्रु के व्यसन काल होने पर, मार्गशीर्षादिकाल विना अपेक्षा किये यात्रा करे ।

व्यसनाभियानं विगृह्ययाने व्याख्यातम् ।

४१. विगृह्ययान प्रकरण में व्यसनाभियान की व्याख्या की गयी है ।

पाठभेद :

'बार्षिकी च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बार्षिकीं वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) यवस : पशुओं का चारा । द्र० २:३१:१; १०:२:५, १७, गण० ३:१७० ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) तुषारदुर्दिनं : तुषार पात से बुरा दिन, कश्मीर, तक्षशिला गान्धार, जहाँ तुषार पात होता है, वहाँ का आँखों देखा वर्णन कौटिल्य करता है ।

(२) यायात् : अभियान मार्च ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) व्यसनाभियान : आपद काल में अभियान या मार्च । गण० ३:४८ ।

(२) विगृह्ययान : द्र० ७:४, गण० ३:४८ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रायशश्चाचार्याः 'परव्यसने यातव्यम्' इत्युपदिशन्ति ।

४२. प्रायः आचार्य 'शत्रु व्यसन में यात्रा करनी चाहिए' ऐसा उपदेश देते हैं।

'शक्त्युदये यातव्यमनैकान्तिकत्वाद्व्यसनानामिति' कौटिल्यः ।

४३. 'शक्ति का उत्कर्ष होने पर, यात्रा (अभियान) करनी चाहिए, क्योंकि व्यसन अनेकान्तिक होते हैं' ऐसा कौटिल्य का मत है।

यदा वा प्रयातः कर्शयितुमुच्छेत्तुं वा शक्नुयादमित्रं तदा यायात् ।

४४. जब अभियान करके शत्रु का कर्शन या उच्छेद करने में समर्थ हो, उसी समय यात्रा करनी चाहिए।

अत्युष्णोपक्षीणे काले हस्तिबलप्रायो यायात् ।

४५. जिसकी सेना में हाथी अधिक हों वह अति उष्ण काल समाप्त होने पर यात्रा करे।

हस्तिनो ह्यन्तः स्वेदाः कुष्ठिनो भवन्ति ।

४६. (क्योंकि) अन्तःस्वेद युक्त हस्ती कुष्ठी हो जाते हैं।

पाठभेद :

'प्रायशश्चाचार्याः' का तंजौर में 'प्रायशश्चो-चार्याः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रायशश्चेत्या-चार्याः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४२. (१) प्रायश : बहुधा, अधिकतर, साधारणतया।

(२) यातव्य। राजा जिसके विरुद्ध अभियान किया जाता है। द्र० ६:२:१६, ७:५:१, ७:७:२२, ७:१३:२१, ८:१:१, गण० १:२५, १६, २:२८५।

पादटिप्पणी :

४३. (१) शक्त्युदये : शक्ति वृद्धि काल में।

(२) यातव्य : द्र० ९:१:४२।

(३) अनेकान्तिकत्वात् : अनिश्चितता से।

पादटिप्पणी :

४४. (१) प्रयात : प्रस्थित।

(२) कर्शन : दुर्बल करना द्र० ७:३:१६, ७:४:१०, ७:१०:४, १३.४:१, गण० ३:२००।

(३) उच्छेत्तु : उखाड़ फेंकना कमजोर करना या नष्ट करना।

पादटिप्पणी :

४५. (१) अत्युष्णोपक्षीणे काले : जब ग्रीष्म ऋतु की कड़ी गर्मी समाप्त हो जाती है।

(२) प्रायो : बहुधा।

(३) यायात् : इस सूत्र का अर्थ इस प्रकार मालूम पड़ता है 'अति उष्ण काल में हाथियों की सेना के साथ यात्रा न करें'।

पादटिप्पणी :

४६. (१) स्वेद : पसीना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनवगाहमानास्तोयमपिबन्तश्चान्तरक्षाराच्चान्धीभवति ।

४७. स्नान एवं जलपान के अभाव में अन्तर्दाह के कारण (हाथी) अन्धे हो जाते हैं।

तस्मात्प्रभूतोदके देशे बर्षति च हस्तिबलप्रायो यायात् ।

४८. अतः प्रचुर जल युक्त देश में और वर्षाकाल में हस्तिबल बहुलता के साथ, अभियान करे।

विपर्यये खरोष्ट्राश्वबलप्रायो देशमल्पवर्षपङ्कम् ।

४९. विपरीत काल में खर, उष्ट्र एवं अश्वबल बहुल होकर, अल्पवृष्टि तथा अल्प पङ्कवाले देश पर अभियान करे।

बर्षतिमरुप्रायं चतुरङ्गबलो यायात् ।

५०. मरु प्राय देश में वर्षा काल में चतुरङ्ग बल के साथ अभियान करे।

समविषमनिम्नस्थलह्रस्वदीर्घवशेन वाऽध्वनो यात्रां विभजेत् ।

५१. अथवा मार्ग के सम, विषम, निम्न स्थल, ह्रस्व अथवा दीर्घ होने पर यात्रा को विभाजित करे।

सर्वा वा ह्रस्वकालाः स्युर्यातव्याः कार्यलाघवात् ।
दीर्घाः कार्यगुरुत्वाद्वा वर्षावासः परत्र च ॥

५२. कार्य लाघव के कारण सभी यात्रायें ह्रस्व कालिक होती हैं, अथवा कार्यगौरव के कारण दीर्घकालिक यात्रायें और वर्षा कालमें अन्य निवास किये जा सकते हैं।

पाठभेद :

'वक्षाराच्चान्धी' का तंजौर में 'वक्षाराच्चन्धी' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पक्षार चण्डी' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४७. (१) अन्तर क्षार : अन्तर्दाह, भीतर की गरमी। गण० ३:४९ :

पादटिप्पणी :

४९. (१) अल्पवर्ष : थोड़ी बर्षा।

(२) पङ्कम् : कीचड़। गण० ३:१२४।

पादटिप्पणी :

५०. (१) चतुरंगबल : चतुरंगिणी सेना, अर्थात् हाथी, अश्व, रथ, तथा पदाति सेना।

पादटिप्पणी :

५१. (१) सम : समतल चौरस भूमि।

(२) विषम : ऊबड़ खाबड़ या ऊँची नीची।

(३) निम्न : जलीय या जल प्राय।

(४) स्थल : स्थल प्राय।

(५) ह्रस्व : थोड़ी दूर का अभियान। गण० ३:६७।

(६) दीर्घ : लम्बा अभियान। गण० २:२१५।

(७) अध्व : मार्ग, रास्ता।

(८) यात्रा : अभियान।

पादटिप्पणी :

५२. (१) यातव्या : सैनिक अभियान।

(२) वर्षावास : बरसात में निवास।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे शक्तिदेशकालबलाबलज्ञानं यात्राकालाः प्रथमोऽध्यायः ।

आदितो द्वाविंशतिशततमः ।

नवम अधिकरण के अन्तर्गत अभियास्यत् कर्म में शक्ति, देश, काल, बलाबल,ज्ञान यात्रा-काल सम्बद्ध प्रथम अध्याय समाप्त । आदि से एकसौ बाइसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः । . शक्तिदेशकालबलाबलज्ञान-यात्राकालाः, आदित : द्वाविंशतिशततमोऽध्यायः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः । शक्तिदेशकाल बलाबल-ज्ञानं यात्राकालाः आदितो द्वाविंशतिशततमोऽध्यायः ।

मैसूर संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेधिकरणे शक्तिदेश-कालबलाबलज्ञानं यात्राकालाः प्रथमोऽध्यायः आदितो द्वाविंशतिशततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे शक्तिदेश-कालबलाबलज्ञानं यात्राकालाः प्रथमोऽध्यायः ॥७॥

आदितो द्वाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१२२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय २

[सप्तत्रिंशच्छततमं प्रकरणम्—बलोपादानकालाः; अष्टत्रिंशच्छततमं प्रकरणम्—संनाहगुणाः; एकोनचत्वारिंशच्छततमं प्रकरणम्—प्रतिबलकर्म]

एक सौ सैंतीसवाँ प्रकरण—बलोपादान काल
एक सौ अड़तीसवाँ प्रकरण—संनाह गुण
एक सौ उन्तालीसवाँ प्रकरण—प्रतिबल कर्म

मौल[1]भृतक[2]श्रे[3]णीमित्रा[4]मित्रा[5]टवीबलानां समुद्दानकालाः ।

१. मौल, भृतक, श्रेणी, मित्र, अमित्र, अटवी बलों का समुद्दान काल ।

प्रकरण १३७, सूत्र १-१२, इस प्रकरण में सेना के तैयार होने तथा योग्यतानुसार कार्यों में लगाने का विवरण है ।

प्रकरण १३८ सूत्र १३-२४ । सेना के उद्योग का निरूपण किया गया है ।

प्रकरण १३९ सूत्र २५-२६ । शत्रु के अनुरूप अपनी सेना को बनाने का निरूपण किया गया है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) मौल : आनुवंशिक, क्रमागत, परंपरा गत, सैनिक । द्र० ९,२:६ गण० ३:५१ ।

(२) भृतक बल : वेतन भोगी सैनिक । द्र० ९:२:३, गण० ३:५२ ।

(३) श्रेणी बल : द्र० ९:२:४, गण० ३:५२ ।

(४) मित्र बल : द्र० ९:२:५, गण० ३:१२ ।

(५) अमित्र बल : द्र० ९:२:८ ।

(६) अटवी बल : द्र० ९:२:७, गण० ३:५४ ।

(७) समुद्दान : सेना संघटित या एकत्रित करना या भरती । द्र० १.१६:२४, ९:२:१, गण० ३:५१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूलरक्षणादतिरिक्तं मौलबलम्; अत्यावापयुक्ता वा मौला मूले विकुर्वीरन्; बहुलानुरक्तमौलबलः सारबलो वा प्रतियोद्धा व्यायामेन योद्धव्यम्; प्रकृष्टेऽध्वनि काले वा क्षयव्ययसहत्वान्मौलानाम्; बहुलानुरक्तसंपाते च यातव्यस्योपजापभयादन्यसैन्यानां भृतादीनामविश्वासे; बलक्षये वा सर्वसैन्यानाम्—इति मौलबलकालः ।

२. मूल की रक्षा से अधिक होने पर अथवा अत्यधिक द्रोहरत मूल पुरुषों के मूल में विद्रोह करने की स्थिति में प्रचुर-अनुरक्त मौलबल अथवा शूरबल युक्त शत्रु के साथ प्रयत्न पूर्वक युद्ध करने की स्थिति होने पर, अधिक दूरी अथवा अधिक समय में मौल बलों के कष्ट सहन करने में समर्थ होने के कारण, स्वामी के प्रति अत्यन्त अनुरक्त दूतों द्वारा भेद उत्पन्न करने का भय होने पर, जबकि भृतक आदि अन्य सैन्य विश्वसनीय न हो अथवा जब सर्व सैन्य का बलक्षय हो जाने की स्थिति हो, तो मौल बल के प्रयोग का समय जानना चाहिए—मौलबल प्रयोगकाल समाप्त ।

'प्रभूतं मे भृतबलमल्पं च मौलबलम्'; 'परस्याल्पं विरक्तं वा मौलबलं, फल्गुप्रायमसारं वा भृतसैन्यम्'; 'मन्त्रेण योद्धव्यमल्पव्यायामेन'; 'ह्रस्वो देशः कालो वा तनुक्षयव्ययः'; 'अल्पावापं शान्तोपजापं विश्वस्तं वा मे सैन्यम्'; 'परस्याल्पः प्रसारो हन्तव्यः'—इति भृतबलकालः ।

३. 'मेरा भृतबल अधिक है और मौलबल अल्प है' 'शत्रु का मौलबल अल्प अथवा अनुराग रहित है और शत्रु भृत सैन्य अल्प अथवा दुर्बल है, अल्प परिश्रम से मन्त्र युद्ध करना होगा, छोटा देश है, थोड़ा समय लगता है और क्षय-व्यय अल्प होता है, मेरी सेना अल्प विद्रोह वाली, उपजाप रहित अथवा विश्वस्त है, 'शत्रु के अल्प प्रसार की हानि करनी है, उन स्थितियों में भृत बल का प्रयोग काल मानना चाहिए ।

पादटिप्पणी :

२. (१) मौल बल : पारम्परिक सेना ।

(२) अत्यावाप बल : अधिक विश्वास घातियों से युक्त । द्र० १०:५:२८, गण० ३:५१, ५३:१७ ।

(३) सार बल : उत्तम सेना, प्रबल सेना । द्र० ५:२:४६, १०:५:४३, ४६, ४७, ७:१:६१, गण० १:२१, ३:१३२ ।

(४) प्रकृष्ट बल : द्र० ७:६:८, ७:७:२३, ७:९:२१,४७, ७:१२:२० ।

(५) क्षय बल : द्र० ७:२:३, गण० १:१४३, २:२३९, ३:६७,९७ ।

(६) व्यय बल : धननाश । द्र० ७:२:३, ७:११:२७, ९:४:२, ९:३:५१, गण० ३:६७,९७ ।

(७) संपात बल : एकत्रित, संग्रह । द्र० ४:६ २, ८:४:३६, १३:४:३८ ।

(८)भृत बल : वेतन भोगी सेना, गण० ३:५२ ।

पाठभेद :

'अल्पावापं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अल्पस्वापं' देवनागरी अनुलिपि में 'अंल्पपाप' 'जापं विश्वस्तं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'जापमविश्वस्तं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) प्रभूत : उद्यत, उत्पन्न, प्रचुर, उन्नत विपुल, द्र० १५:३ ।

(२) फल्गु बल : कमजोर सेना । द्र० ३:५:१:३१, ३९, ५४, २० ५:५३, ४५, ४६ ।

(३) अल्पावाप : जहाँ कुछ विश्वासघाती लोग हों ।

(४) प्रसार : अग्रगामी रक्षक या सैनिक दस्ता । द्र० ९:७:६, ११:२:५, ११:४:२०, गण० १:२:३, ३:५:३, १०७, २०० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'प्रभूतं मे श्रेणीबलं, शक्यं मूले यात्रायां चाधातुम्'; ह्रस्वः प्रवासः, श्रेणीबलप्रायः प्रतियोद्धा मन्त्रव्यायामाभ्यां प्रतियोद्धुकामः; दण्डबलव्यवहारः—इति श्रेणीबलकालः।

४. 'मेरा श्रेणीबल प्रचुर है, मूल और यात्रा में रखने योग्य है' थोड़ी दूर या समय का प्रवास है शत्रु श्रेणी बल बहुल है, और मन्त्र एवं व्यायाम द्वारा युद्धेच्छुक है और वह दण्डभय से अन्य नृप को सेनापति कर, युद्ध व्यवहार करने वाला है, उन स्थितियों में श्रेणी बल का प्रयोग काल जानना चाहिए।

'प्रभूतं मे मित्रबलं शक्यं मूले यात्रायां चाधातुम्'; 'अल्पः प्रवासो मन्त्रयुद्धाच्च भूयो व्यायामयुद्धम्'; 'मित्रबलेन वा पूर्वमटवीं नगरस्थानमासारं वा योधयित्वा पश्चात्स्वबलेन योधयिष्यामि'; 'मित्रसाधारणं वा मे कार्यम्'; 'मित्रायत्ता वा मे कार्यसिद्धिः'; 'आसन्नमनुग्राह्यं वा मे मित्रम्'; 'अत्यावापं वाऽस्य सादयिष्यामि'—इति मित्रबलकालः।

५. 'मेरा मित्र बल प्रचुर है, उसे मूल में और यात्रा में लगाया जा सकता है, प्रवास अल्प दूरी का (या अल्प कालिक) है, मन्त्रयुद्ध की अपेक्षा व्यामामयुद्ध अधिक है अथवा मित्र बल से पहले शत्रु के नगरस्थ आटविक बल या आसार को युद्ध कराकर, वाद में अपने बल से युद्ध करूँगा' 'अथवा मेरे कार्य में मित्र का भी सम्मान प्रयोजन है', 'अथवा मेरी कार्य सिद्धि मित्र के अधीन है' 'अथवा मेरा मित्र आसन्न या अनुग्राह्य है', 'अथवा मित्र के विद्रोही बल का शत्रु बल से नाश करादूँगा', ये मित्र बल प्रयोग के काल हैं।

पादटिप्पणी :

४. (१) श्रेणीवल : सैनिकों की टुकड़ी जो अपने नेता के नेतृत्व में रहती है। द्र० ५:३:९, ९:२:४, गण० ३:५२।

(२) दण्डबल व्यवहार : सैनिक शक्ति का प्रयोग या सैनिक शस्त्रोपचार। द्र० ८:१:३४,३८ १३:३:१९, गण० ३:५२।

पाठभेद :

'सादयिष्यामि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'साधयिष्यामि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) मन्त्रयुद्ध : मित्र बल काल, द्र० ७:१३:१९, गण० २:३२५, ३:५८।

(२) व्यायामयुद्ध : द्र० ७:१३:३० । गण० २:३२५।

(३) अत्यावापं : द्र० ९:२:२, ५:२८। गण० ३:५१, ५३, १३०।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

'प्रभूतं मे शत्रुबलं शत्रुबलेन योधयिष्यामि नगरस्थानमटवीं वा, तत्र मे श्ववराहयोः कलहे चण्डालस्येवान्यतरसिद्धिर्भविष्यति'; 'आसाराणामटवीनां वा कण्टकमर्दनमेतत्करिष्यामि'—अत्युपचितं वा कोपभयान्नित्यमासन्नमरिबलं वासयेद् अन्यत्राभ्यन्तरकोपशङ्कायाः—शत्रुयुद्धावरयुद्धकालश्च—इत्यमित्रबलकालः ।

६. 'मेरा दण्डोपनत शत्रु प्रचुर है, जो नगर में स्थित है उसे अथवा आटविक बल को शत्रु बल से युद्ध कराऊँगा, उसमें दोनों में किसी की हानि से मेरी अर्थ सिद्धि उसी प्रकार होगी, जिस प्रकार श्वान और वराह के युद्ध में चण्डाल की अर्थ सिद्धि होती है' 'आसार बल या अटवी बल के कण्टकों का भेदन इससे करूँगा, अथवा अति प्रवृद्ध शत्रु बल को उसके कोपभय से नित्य समीप रखे किन्तु अभ्यन्तर जनों के क्रोध का भय होने पर, ऐसा न करे, शत्रु का अपने शत्रु के साथ युद्ध करने के बाद जो युद्ध काल हो, उसमें (शत्रु बल प्रयोगार्ह होता है) उन स्थितियों में शत्रु बल प्रयोग का समय होता है ।

तेनाटवीबलकालो व्याख्यातः ।

७. उक्त प्रकार से अटवी बल प्रयोग काल की व्याख्या हो गयी ।

मार्गदेशिकम्; परभूमियोग्यम्; अरियुद्धप्रतिलोमम्; अटवीबलप्रायः शत्रुर्वा, 'बिल्वं बिल्वेन हन्यताम्'; अल्पः प्रसारो हन्तव्यः—इत्यटवीबलकालः ।

८. मार्गनिर्देशन योग्य, शत्रु भूमि युद्धानुरूप, शत्रु युद्ध में निपुण अटवी बल होने पर अथवा अटवी बल बहुत शत्रु के होने पर, बिल्व को बिल्व द्वारा तोड़ने के समान, अटवी बल का प्रयोग किया जाय अथवा शत्रु का अल्प प्रसार हानि करने की आश्यकता हो—इसे अटवी बल प्रयोग काल जानना चाहिए ।

पादटिप्पणी :

६. (१) श्व : कुत्ता द्र० ७:१:३३ ।

(२) बराह : सूअर

(३) कण्टक : कष्ट देने वाला कांटा । गण० १:२४, २:११६ ।

(४) अत्युपचितं : द्र० १५:१:५० ।

(५) अन्यत्र : द्र० ९:३:१२ ।

(६) आभ्यन्तरकोप : द्र० ९:३:१२ ।

(७) शत्रुयुद्धावर : जब अपने युद्ध का समय शत्रु के युद्ध के पश्चात् होता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) अटवी बल : वन सेना, मध्ययुग में वहेलियों की फौज प्रचलित थी । काशी राज्य में भी वहेलिये का एक दस्ता था । गण० ३:५४ ।

पाठभेद :

'मार्गदेशिकम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मार्गदेशिकं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) मार्गदेशिक : मार्ग दर्शन के लिए उपयोगी । गण० ३:५४ ।

(२) प्रतिलोम : विरुद्ध, युद्ध न करने योग्य । गण० ३:१०० ।

(३) विल्व : बेल ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सैन्यमनेकमनेकस्थमुक्तमनुक्तं वा विलोपार्थं यदुत्तिष्ठति तदौत्साहिकम् अभक्तवेतनं विलोपविष्टिप्रतापकरं भेद्यं परेषाम्, अभेद्यं तुल्यदेशजातिशिल्पप्रायं संहतं महत् । इति वलोपादानकालाः ।

९. नायकविहीन अनेकस्थ, राजद्वारा अनुमति प्राप्त अथवा न अनुमति प्राप्त, जो सैन्य लूट-पाट के लिये उठ खड़ी होती है, उसे औत्साहिक कहते हैं। अभक्त वेतन होकर विलोप, विष्टि (दुर्गादिकर्म), राजाज्ञा पालन करने वाला शत्रु द्वारा भेद्य होता है, अपने समान देश-जाति एवं शिल्प वाली, संहत तथा प्रबल औत्साहिक सैन्य शत्रु द्वारा अभेद्य होती है।

तेषां कुप्यभृतममित्राटवीबलं विलोपभृतं वा कुर्यात् ।

१०. उन बलों में अमित्रबल और अटवीबल को कुप्यभृत अथवा विलोपभृत करे।

अमित्रस्य वा बलकाले प्रत्युत्पन्ने शत्रुबलमनवगृह्णीयात्, अन्यत्र वा प्रेषयेत् अफलं वा कुर्यात्, विक्षिप्तं वा वासयेत्, काले वाऽतिक्रान्ते विसृजेत् ।

११. शत्रु को अपने बल का प्रयोगकाल उपस्थित होने पर, शत्रु बल को स्वाधीन रखे, अथवा अन्यत्र भेज दे अथवा विना देय प्रदान किये प्रेषित करे, अथवा विभिन्न स्थानों पर, प्रकीर्ण करे अथवा समय बीत जाने पर भेजे।

पाठभेद :

'अनेकस्थम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अनेक जातीयस्थम्' तथा 'अभक्तवेतनं' का श्रीमूल में 'भक्तवेतनवि' तथा 'विलोपविष्टि' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'विलोवृष्टि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

९. (१) अनेकस्थं : एक इकाई में नहीं, एक नेतृत्व में भी नहीं।

(२) विलोप : विलुण्ठन, लूटना, पर राष्ट्र नाश। द्र० ३:१२:२, ७:४:२२, ८:४:१५, ९:२:१०, १०: ३:१६, गण० २:२५९।

(३) औत्साहिक : स्वयं सेवक सेना।

(४) प्रतापकर : वीरकर्म।

पादटिप्पणी :

१०. (१) कुप्य : बल की उत्पत्ति, द्र० १:१६: २९, २:१७:१, गण० १:७, ३२, २४६, ३:१५३।

(२) विलोपभृतम् : लूटपाट का लोभ दिखाकर संगृहीत की गयी सेना। द्र० ९:२:२,३।

पाठभेद :

'शत्रुबलमव' का तंजोर में 'शत्रुमुप' तथा देव-नागरी अनुलिपि एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शत्रुमव' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

११. (१) शत्रुबलम् : शत्रु सेना। गण० ३:५३।

(२) अफलं : द्र० ७:८:२८।

(३) विक्षिप्तम् : बिखरी, विसर्जित। द्र० ७: ९:२२, ७:१५:१२, ८:५:१५, ७:१७:६१, गण० २:२९४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परस्य चैतद्बलसमुद्दानं विघातयेत्, आत्मनः संवादयेत् ।

१२. शत्रु के इस बल को प्राप्त करने के अवसर में विघ्न उपस्थित करे और स्वयं को बल सम्पन्न करे ।

पूर्वं पूर्वं चैषां श्रेयः संनाहयितुम् ।

१३. उक्त बलों में क्रमशः पूर्ववर्ती बल सन्नद्ध करने योग्य होते हैं ।

तद्भावभावित्वान्नित्यसत्कारानुगमाच्च मौलबलं भृतबलाच्छ्रेयः ।

१४. सदा स्वामी से युक्त रहने और नित्य सत्कार प्राप्त होने से मौलबल भृतबल से श्रेष्ठ होता है ।

नित्यानन्तरं क्षिप्रोत्थापि वश्यं च भृतबलं श्रेणीबलाच्छ्रेयः ।

१५. निकटस्थ, शीघ्रोद्यमशील और वशवर्ती भृतबल श्रेणीबल से श्रेष्ठ होता है ।

जानपदमेकार्थोपगतं तुल्यसंघर्षामर्षसिद्धिलाभं च श्रेणीबलं मित्रबलाच्छ्रेयः ।

१६. स्वजनपद स्थित एक प्रयोजन हेतु उक्त एवं समान संघर्ष, अमर्ष एवं सिद्धि लाभ वाला श्रेणीवल मित्रवल से श्रेष्ठ होता है ।

अपरिमितदेशकालमेकार्थोपगमाच्च मित्रबलममित्रबलाच्छ्रेयः ।

१७. साहाय्य प्रदान करने में देशकाल निरपेक्ष, एक प्रयोजन हेतु सम्बद्ध मित्रबल अमित्रवल से श्रेष्ठ होता है ।

आर्याधिष्ठितममित्रबलमटवीबलाच्छ्रेयः ।

१८. आर्यजनों से युक्त अमित्रवल अटवी बल से श्रेष्ठ होता है ।

पादटिप्पणी :

१२ (१) समुद्दान : सेना संघटित करना । द्र० १:१६:२९, ९:२:१ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) संनाहयितुम् : सेना को सज्जित करना, या युद्ध के लिए तैयार करना । सैन्य संग्रह ।

पाठ भेद :

'नित्यसत्कारा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नित्यसंस्कारा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) तद्भावभावित्वा : भाव से अस्तित्व का अर्थ किया गया है । द्र० ७:१८:२९ ।

(२) सत्कारा : कामन्दक० १९:४ ।

(३) भृत बल : वेतन भोगी या किराये पर संघटित सेना ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) एकार्थं : एक ही उद्देश्य, द्र० ५:४:१०, ७:८:२३, ७:१८:२९, ९:२:१७ ।

पाठभेद :

'मित्रममित्रबला' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मित्रबला' पाठभेद मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तदुभयं विलोपा[१]र्थम् ।

१९. (उक्त) दोनों बल विलोप (लूट-पाट) के लिये होते हैं।

अविलोपे व्यसने च ताभ्यामहि[१]भयं स्यात् ।

२०. लुण्ठनादि के अतिरिक्त युद्धादि और व्यसन में उनसे सर्पवत् भय रहता है।

'ब्राह्मण[१]क्षत्रिय[२]वैश्य[३]शूद्र[४]सैन्यानां तेजः प्राधान्यात्पूर्वं श्रेयः संनाहयितुम्' इत्याचार्याः ।

२१. 'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र सैन्यों में तेजः प्राधान्य के कारण क्रमशः पूर्ववर्ती सन्नद्ध करने योग्य होते हैं' ऐसा, आचार्यों का मत है।

नेति कौटिल्यः ।

२२. कौटिल्य का मत ऐसा नहीं है।

प्र[१]णिपातेन ब्राह्मणबलं परोऽभिहारयेत् ।

२३. शत्रु प्रणिपात से ब्राह्मण बल को स्ववशवर्ती कर लेता है।

प्रहरण[१]विद्याविनीतं तु क्षत्रियबलं श्रेयः, बहुल[२]सारं वा वैश्यशूद्रबलमिति ।

२४. शस्त्रविद्या शिक्षित क्षत्रियबल अथवा प्रचुर वीर युक्त वैश्य-शूद्र बल श्रेष्ठ होता है।

पादटिप्पणी :

१९. (१) विलोप : लूट, द्र० ९:२:१०।

पादटिप्पणी :

२०. (१) अहिभय : सर्प का भय। द्र० १: १७:८, ८:२:३, ९:५:३१, अग्नि० १६८:३८-३९, गण० ३:५६।

पादटिप्पणी :

२१. (१) ब्राह्मण : अमर० २:७, भाग० २: १:३७, ८:५:४१, १०:४:३९, विष्णु० १६:६:३४।

(२) क्षत्रिय : द्र० १:४:६, अग्नि० ३६६:१, ब्रह्म० २:५:१०८, अमर २:८, वायु० ३०:८३, २३२, ४०:११७, भाग० १०:२०:४०।

(३) वैश्य : अमर० २:९।

(४) शूद्र : द्र० १:३:८, अमर० २:१०।

पाठभेद :

'ब्राह्मणबलं' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ब्राह्मबलं' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'बलं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२३. (१) प्रणिपात : प्रणत भाव, पैरों पर गिरना, प्रणाम करना।

पादटिप्पणी :

२४. (१) प्रहरण : प्रहार, आघात, आक्रमण, युद्ध। गण० ३:१२५, १४२।

(२) बहुलसार : बहुत बलशाली, अनेक वीरों से युक्त।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्मादेवंबलः परः, तस्यैतत्प्रतिबल[1]मिति बलसमुद्दानं कुर्यात् ।

२५. शत्रु बल इस प्रकार है, उसका प्रतिपक्षी बल इस प्रकार होना चाहिए, यह जानकर बल संग्रह करे ।

हस्तियन्त्र[1]शकटगर्भ[2]कुन्त[3]प्रास[4]हाटक[5]वेणु[6]शल्य[7]वद् हस्तिबलस्य प्रतिबलम् ।

२६. हस्ति बल का प्रतिपक्षी बल हस्ती, यन्त्र, शकटगर्भ, कुन्त, पास, हाटक, वेणु एवं शल्य-युक्त होना चाहिए ।

तदेव पाषाण[1]लगुड[2]आवरण[3]ाङ्कुश[4]कचग्रहणी[5]प्रायं रथबलस्य प्रतिबलम्[6] ।

२७. वही हस्तिवल का प्रतिपक्षी वल पाषाण, लगुड़, आवरण, अंकुश एवं कचग्रहणी युक्त हो तो रथ बल का प्रतिपक्षी बल होता है ।

तदेवा[1]श्वानांप्रतिबलम्, वर्मिणो[2] वा हस्तिनोऽश्वा वा वर्मिणः ।

२८. वही बल अश्वों का प्रतिबल होता है, वर्मयुक्त हाथी अथवा वर्मयुक्त अश्व—

कवचिनो[1] रथा आवरणिनः[2] पत्तयश्च चतुरङ्गबलस्य प्रतिबलम् ।

२९. कवच वाले रथ और आवरणयुक्त चतुरङ्ग वाले के प्रतिवल होते हैं ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) **प्रतिबल** : समान बलशाली या शत्रु, द्र० ९:२:२७, गण० १:१९ ।

पाठभेद :

'हाटकवेणु' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'खर्वटक-वेणु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) **हस्तियन्त्र** : हाथी पर से प्रयोग होने वाला यन्त्र या वह यन्त्र जो हाथी के विरुद्ध प्रयोग में लाया जाता है । भाला-बरछा आदि ।

(२) **शकटगर्भम्** : गाड़ी के पहिये । कामन्दक० १९:२६ ।

(३) **कुन्त** : भाला, द्र० २:१८:७, गण० १:२४२ ।

(४) **प्रास** : बरछा ।

(५) **हाटक** : त्रिकंटक, कुन्त के आकार का तीन फाल वाला कुन्त । गण० ३:५७ ।

(६) **वेणु** : लम्बा चाबुक या पैना । गण० ३:५७ ।

(७) **शल्य** : लोहदण्ड, काँटा, शलाका, या लोह गदा, जिसमें काँटा लगा रहता है । गण० ३:५७

पाददिप्पणी :

२७. (१) **पाषाण** : पत्थर ।

(२) **लगुड़** : लाठी, दण्ड या छोटी गदा । गण० ३:५७ ।

(३) **आवरण** : कवच । गण० ३:५७, १२५, २०० ।

(४) **अंकुश** : जिसे हाथी का महावत अपने हाथ में लेकर हाथी चलाता है । गण० ३:५७ ।

(५) **कचग्रहणी** : कैंची । द्र० २:२६:१८ ।

(६) **प्रतिबल** : मुकाबले में प्रतिकार करने वाले सैनिक । द्र० ९:२:२५, गण० १:१९ ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) **तदेव** : रथ प्रतिबल या हाथी प्रति-बल ।

(२) **वर्म** : कवच । कामन्दक० १९:२६, गण० ३:३२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं वलसमुद्दानं परसैन्यनिवारणम् ।
विभवेन स्वसैन्यानां कुर्यादङ्गविकल्पशः ॥

३०. उस प्रकार प्रतिवलानुरूप शत्रुसैन्य से युद्ध में समर्थ वल संग्रह करे और उसे अपनी सेना के विभवानुसार हस्त्यश्वादि अङ्ग का बाहुल्य-अल्पत्व निर्धारित करे।

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे वलोपादानकालाः संनाहगुणाः प्रतिबलकर्म द्वितीयोऽध्यायः ।

आदितस्त्रयोविंशतिशततमः ।

नवम अधिकरण के अन्तर्गत अभियास्यत् कर्म में बलोपादान काल, संनाह गुण, प्रतिबल कर्म सम्बद्ध द्वितीय अध्याय समाप्त।

आदि से एक सौ तेईसवां अध्याय समाप्त।

पादटिप्पणी :

२९. (१) कवचिन : कवचयुक्त हाथी।

(२) आवरण : वर्म। गण० ३:५७, १२५, २००।

पादटिप्पणी :

३०. (१) परसैन्यनिवारणम् : यह समुद्दान का विशेषण है।

(२) विभव : शक्ति।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः बलोपादानकालाः सन्नाहगुणाः प्रतिबलकर्म, आदितस्त्रयोविंशतिशततमोऽध्यायः।

मैसूर संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे बलोपदानकालास्सन्नाहगुणाः प्रतिबलकर्म च द्वितीयोऽध्यायः, आदितस्त्रयोविंशतिशततमः।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः बलोपदानकालास्सन्नाहगुणाः प्रतिबल कर्म, आदितस्त्रयोविंशतिशततमोऽध्यायः।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इत्यभि चास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे बलोपादानकालाः संनाहगुणाः प्रतिबलकर्म द्वितीयोऽध्यायः। आदितस्त्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः।१२३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ३

[चत्वारिंशच्छततमं प्रकरणम्—पश्चात्कोपचिन्ता; एकचत्वारिंशच्छततमं प्रकरणम्—बाह्याभ्यन्तरप्रकृतिकोपप्रतीकारः]

एक सौ चालीसवां प्रकरण—पश्चात् कोप चिन्ता

एक सौ एकतालीसवां प्रकरण—बाह्य-अभ्यन्तर प्रकृति कोप प्रतीकार

अल्पः पश्चात्कोपो महान् पुरस्ताल्लाभ[2] इति अल्पः पश्चात्कोपो गरीयान्।

१. अल्पपश्चात् कोप तथा भावी महान् लाभ में अल्प पश्चात् कोप अधिक महत्वपूर्ण होता है।

अल्पं पश्चात्कोपं प्रयातस्य दूष्यामित्राटविका हि सर्वतः समेधयन्ति, प्रकृतिकोपो[2] वा।

२. अल्प पश्चात् कोप को अभियानकर्ता के दूष्य, अमित्र एवं आटविक सब ओर से बढ़ा देते हैं अथवा प्रकृतिकोप उसे प्रवृद्ध कर देता है।

लब्धमपि च महान्तं पुरस्ताल्लाभमेवंभूते भृत्य[2]मित्र[3]क्षय[4]व्ययौ[5] ग्रसन्ते।

३. ऐसी स्थिति में प्राप्त महान् भावी लाभ को भृत्य, मित्र का क्षय-व्यय समाप्त कर देते हैं।

पादटिप्पणी :

प्रकरण १४० तथा १४१ परस्पर इतने मिले हुए हैं कि उनका सीमा निर्धारण करना कठिन है।

१. (१) पश्चात्कोपो : पीछे का विप्लव या क्षोभ। अनर्थ प्रतिपादक विषय, अनर्थोत्पादन विषय, पार्ष्णिग्राह, आटविक, एवं दूष्यादि द्वारा जिससे सब अनर्थ उत्पन्न होना सम्भावित होता है।

(२) पुरस्ताद् : आगे मोर्चा सामने, आरम्भ में।

पादटिप्पणी :

२. (१) प्रकृति : उन अधिकारियों के विषय में कहा गया है, जिनका उल्लेख निम्न सूत्र १२, १५, २०, २२ में किया गया है। मन्त्री पुरोहितादि द्वारा जनित प्रकृति का अर्थ प्रजा भी होता है। द्र० १:८:१।

पादटिप्पणी :

३. (१) पुरस्तात् : द्र० ९:३:१।

(२) भृत्य : सेवक।

(३) मित्र : साथी।

(४) क्षय : हानि।

(५) व्यय : खर्च।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्मात्सहस्रैकीयः पुरस्ताल्लाभस्यायोगः शतैकीयो वा पश्चात्कोप इति न यायात् ।

४. भावी लाभ का योग एक सहस्र में एकांश होता है और पश्चात् कोप का प्रभाव सौ में एकांश होता है अर्थात् भावीलाभ की अपेक्षा पश्चात् कोप दशगुना अधिक प्रभावशाली होता है, अतः उक्त स्थिति में अभियान करे ।

'सूचीमुखा ह्यनर्था' इति लोकप्रवादः ।

५. 'अनर्थ सूची मुख' होते हैं, ऐसी लोक प्रसिद्धि है ।

पश्चात्कोपे सामदानभेददण्डान् प्रयुञ्जीत ।

६. पश्चात् कोप में साम-दान भेद एवं दण्ड का प्रयोग करे ।

पुरस्ताल्लाभे सेनापतिं कुमारं वा दण्डचारिणं कुर्वीत ।

७. भावी लाभ में सेनापति अथवा कुमार को दण्डचारी (सैन्य नायक) नियुक्त करे ।

बलवान् वा राजा पश्चात्कोपावग्रहसमर्थः पुरस्ताल्लाभमादातुं यायात् ।

८. अथवा पश्चात् कोपा निग्रह करने में समर्थ बलवान् राजा भावी लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं अभियान करे ।

अभ्यन्तरकोपशङ्कायां शङ्कितानादाय यायात्, बाह्यकोपशङ्कायां वा पुत्रदारमेषाम् ।

९. आभ्यन्तर कोप की शंका होने पर, शंकितजनों को साथ लेकर, अभियान करे, अथवा बाह्यकोप की शंका होने पर, (उन्हें और) उनके स्त्री-पुत्रों को साथ लेकर अभियान करे ।

पादटिप्पणी :

४. (१) सहस्रैकीय : हजारों में एक ।

(२) अयोग : अप्राप्ति, अक्षमता । द्र० २:३१:१, २:३३:६,८, २:३३:८, ९:४:८, ९:५:१, गण० ३:६८ ।

(३) शतैकीयो : सौ में एक । राज० ८:१३ ७२ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) सूचीमुख : सुई की नोक, सुई जैसे मुख वाला, नुकीला, श्वेत कुशा । द्र० ४:८:३२, गण० ३:५९ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) अभ्यन्तरकोप : अर्थात् अमात्यादि द्वारा जनित विद्रोह ।

(२) बाह्यकोप : बाहरी विद्रोह अन्तपाल, आटविक आदि द्वारा विद्रोह ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभ्यन्तरावग्रहं[1] कृत्वा शून्यपाल[2]मनेकबलवर्गमनेकमुख्यं च स्थापयित्वा यायात्[3] न वा यायात् ।

१०. इन्हें अमात्यादि के अधीन करके, अनेक बलवर्ग और अनेक प्रमुख के साथ शून्यपाल को नियुक्त कर, अभियान करे अथवा अभियान न करे ।

अभ्यन्तरकोपो बाह्यकोपात्पापीयानित्युक्तं पुरस्तात्[1] ।

११. अभन्तर कोप बाह्यकोप से अधिक अनिष्टकर होता है, ऐसा पहले कहा गया है ।

मन्त्रि[1]पुरोहित[2]सेनापति[3]युवराजा[4]नामन्यतमकोपो[5]ऽभ्यन्तरकोपः[6] ।

१२. मन्त्री, पुरोहित, सेनापति, एवं युवराज इनमें किसी एक का कोप अभ्यन्तर कोप होता है ।

तमात्मदोषत्यागेन परशक्त्यपराधवशेन वा साधयेत् ।

१३. उसे अपना दोष त्यागकर अथवा मन्त्री आदि के शक्ति एवं अपराध के अनुसार (उन्हें) दण्डितकर, शान्त करे ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) अवग्रह : दबाना, अधीन करना, नियन्त्रित करना । द्र० १:८:२१, १:१५:३७, ५:६:१०, गण० १:४५, २:२६३, ३:२०६ ।

(२) शून्यपाल : राजप्रतिनिधि । द्र० १०:१:१६, १२:२:३५ ।

(३) यायात् : अभियान, मार्च । द्र० ७:१:२६, ७:५:११, ७:९:२, ७:१६:१ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) पुरस्तात् : द्र० ७:९:३३, ८:२:३, ८:३:५, ९:३:११ ।

पाठभेद :

'अन्यतमकोपो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अन्यतरकोपो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) मन्त्रि : मन्त्री ।

(२) पुरोहित : द्र० १:९:१, गण० १:४५ ।

(३) सेनापति : सेनापति । गण० १:५७, ३:११८, १२७, १४१ ।

(४) युवराज : राजा का उत्तराधिकारी ।

(५) कोप : उपद्रव, विद्रोह ।

(६) अभ्यन्तरकोप : द्र० ८:१:५८, ८:३:२, ९:३:६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महापराधेऽपि पुरोहिते संरोधनमवस्त्रावणं वा सिद्धिः, युवराजे संरोधनं निग्रहो वा गुणवत्यन्यस्मिन् सति पुत्रे ।

१४. पुरोहित के महापराधी होने पर, बन्धन अथवा देशनिर्वासन दण्ड दिया जाय, युवराज के महापराधी होने पर, बन्धन अथवा बध दण्ड दिया जाय, यदि अन्य गुणी पुत्र हो तो ।

पुत्रं भ्रातरमन्यं वा कुल्यं राजग्राहिणमुत्साहेन साधयेत् उत्साहाभावे गृहीतानुवर्तनसंधिकर्मभ्याम् अरिसंधानभयात् ।

१५. पुत्र, भ्राता अथवा अन्य स्ववंशीय राज्य ग्रहणेच्छुक को अधिकारपद प्रदान द्वारा उत्साहित कर, शान्त करे, उत्साह के अभाव में उसके शत्रुपक्षीय होने के भय से गृहीत सम्पत्ति सर्वदा के लिए प्रदान कर, सन्धि करके उसे वशवर्ती करे ।

अन्येभ्यस्तद्विधेभ्यो वा भूमिदानैर्विश्वासयेदेनम् ।

१६. अथवा उस प्रकार के अन्यजनों को भी भूमि प्रदान कर, विश्वस्त करे ।

तद्विशिष्टं स्वयंग्राहं दण्डं वा प्रेषयेत्, सामन्ताटविकान् वा तैर्विगृहीतमतिसंदध्यात् ।

१७. अथवा स्वयंग्राह सेना के साथ उसे अभियानार्थ प्रेरित करे, अथवा उसके साथ सामन्त एवं आटविकों को अभियान पर भेजे, उनके साथ विरोध होने पर, उसे बन्धन में डाल दे ।

अपरुद्धादानं पारग्रामिकं वा योगमातिष्ठेत् ।

१८. अपरुद्धादान अथवा पारग्रामिक योग का प्रयोग करे ।

पाठ भेद :

'अवसावणं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपस्रापणं' तथा 'निग्रहोवा' का देवनागरी अनुलिपि में 'निग्रहे वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) पुरोहित : यदि आभ्यन्तर कोप जनक हो ।

(२) संरोधन : बन्धन, कैद, निर्वासन ।

(३) निग्रह : मृत्यु से अभिप्राय है, प्राणदण्ड । इस सूत्र को कुछ विद्वान प्रक्षिप्त मानते हैं ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) पुत्रं : युवराज के अतिरिक्त अन्य राज पुत्र ।

(२) अन्य : कुल के अन्य सदस्य ।

(३) उत्साहेन : उत्साह पूर्वक कार्य करना ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) अन्य : द्र० ९:३:१५ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) तद्विशिष्ट : शत्रु की सेना से उत्तम या विशेषतायुक्त ।

(२) स्वयंग्राह दण्ड : जो कुछ लूट में मिले वह प्राप्त कर ले । द्र० ३:१६:२, २७, ८:१:४४, ८:४:३३, ९:६:२४, १०:३:४५, गण० ३:११८ ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) अपरुद्धादानं : एक राजकुमार, जिसे स्नेह या कृपा नहीं प्राप्त होता । उसे प्राप्त करना । द्र० १:१०:३, १:१३:१८, १:१८:१३-१६ ।

(२) पारग्रामिकं : शत्रु का ग्राम या नगर जीतने में उपयोगी । अधिकरण १३ अध्याय १ ।

(३) योग : उपयोग, गुप्त प्रतिकार । द्र० ३:१६:३४, ५:१:५४, ५:६:४८, ७:६:४३, ९:१:३५, १४:२:२९, गण० १:१३,२३, २७, ३६, ५४, ८३, १४६, २:२३०, ३:१७२, १८२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एतेन मन्त्रिसेनापती व्याख्यातौ ।

१९ इस प्रकार मन्त्री और सेनापति की व्याख्या सम्पन्न हो गयी।

मन्त्र्यादिवर्जानामन्तरमात्यानामन्यतमकोपोऽन्तरमात्यकोपः ।

२०. मन्त्री आदि के अतिरिक्त दौवारिक, आन्तर्वंशिक आदि अन्तरमात्यों में किसी के कोप का अन्तरमात्य कोप कहा जाता है।

तत्रापि यथार्हमुपायान् प्रयुञ्जीत ।

२१. वहाँ भी यथोचित उपायों का प्रयोग करे।

राष्ट्रमुख्यान्तपालाटविकदण्डोपनतानामन्यतमकोपो बाह्यकोपः ।

२२ राष्ट्र मुख्य, अन्तपाल, आटविक एवं दण्डोपनत में किसी एक का कोप बाह्य कोप होता है।

तमन्योन्येनावग्राहयेत् ।

२३. उसे उन्हीं में एक को दूसरे से शान्त करे।

अतिदुर्गप्रतिष्टब्धं वा सामन्ताटविकतत्कुलीनापरुद्धानामन्यतमेनावग्राहयेत् ।

२४. अथवा प्रबल दुर्गयुक्त राष्ट्रमुख्यादि को सामन्त आटविक अथवा तत्कुलीनापरुद्ध द्वारा बन्धनस्थ कराये।

पादटिप्पणी :

२०. (१) वर्जानाम् : अतिरिक्त।

(२) अन्तरमात्य : दौवारिक, अन्तरवांशिक आदि राजभवन के अधिकारी।

(३) अन्तरमात्य कोप : मन्त्री, पुरोहित, सेनापति, युवराज, दौवारिक आदि के अतिरिक्त अन्यों द्वारा किया गया विद्रोह या कोप।

पाठभेद :

'अन्यतमकोपो' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'अन्यतरकोपो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२२. (१) राष्ट्रमुख्य : राष्ट्र या जनपद का प्रधान व्यक्ति, समाहर्ता सम्मिलित है।

(२) अन्तपाल : राज्य सीमाधिकारी प्रधान पुरुष या महामात्य। गण० १:५७, ३:३०।

(३) आटविक : जंगल का स्वामी, अटवीपाल, अटवीपति, अटवीप्रदेश का रक्षक प्रधान अधिकारी। द्र० १:७:३, ८:४:४१,४३, गण० १:५७, ३:३७०, ३९३।

(४) दण्डोपनत : राजा की सैन्य शक्ति से प्रभावहीन व्यक्ति जो अपनी सेना का आत्मसमर्पण कर देता है। द्र० ५:१:५३, ७:२:९, ७:३:३, ७:१५:३०।

(५) बाह्य कोप : द्र० ९:३:९, गण० २:३६४।

पादटिप्पणी :

२४. (१) अति : प्रबल, शक्तिशाली, मजबूत। द्र० १:२१:२४, ३:८:१, ७:१८:३९, ९:३:२२।

(२) प्रतिष्टब्ध : मजबूती से समर्थित, द्र० ७:७:११, ७:१०:२७, ७:१७:२७।

(३) सामन्त : पड़ोसी राजा। द्र० १:२१:२४, ७:१८:३९, गण० १:४८।

(४) आटविक : वनाधिकारी। द्र० ९:३:२३।

(५) अपरुद्ध : राजा के स्नेह से हीन उपेक्षित राजकुमार।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मित्रेण[1]ोपग्राह[2]येद्वा यथा नामित्रं गच्छेत् ।

२५. अथवा अपने मित्र से मिला दे, जिससे वह शत्रु से न मिले।

अमित्राद्वा सत्त्री भेदयेदेनम्—'अयं[1]'त्वा योग[2]पुरुषंमन्यमानो भर्तर्येव-विक्रमयिष्यति, अवाप्ता[3]र्थो दण्डचारिणममित्राटविकेषु कृच्छ्रे[4] वा प्रयासे योक्ष्यति, विपुत्रदारमन्ते वा वासयिष्यति ।

२६. अथवा सत्त्री शत्रु से उसे यह कहकर पृथक् रखे, 'यह तुम्हें योगपुरुष मानकर स्वामी से युद्ध करा देगा, प्रयोजन सिद्ध होने पर (तुम्हें) सेनानायक नियुक्त कर कष्टकर प्रयासार्थ शत्रुओं को आटविकों से युद्ध में लगा देगा अथवा बिना स्त्री पुत्र के तुम्हें देशान्तर में प्रवासित कर देगा'।

प्रतिहत[1]विक्रमं त्वां भर्तरि पण्यं[2] करिष्यति, त्वया वा संधिं कृत्वा भर्तारमेव प्रसादयिष्यति ।

२७. पराजित तुम्हें स्वामी के पास पण (बन्धक) के रूप में रखेगा, और सन्धि करके स्वामी को ही प्रसन्न करेगा।

मित्रमुपकृष्टं[1] वाऽस्यगच्छ' इति ।

२८. अथवा इसके निकटस्थ मित्र के पास तुम्हें कर देगा।

पादटिप्पणी :

२५. (१) मित्रेण : स्वमित्र द्वारा।

(२) उपग्राह : गिरफ्तार करना या पकड़ लेना, द्र० ७:५:२२।

पाठभेद :

'अमित्राद्वासत्त्र' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अमित्रात्सत्त्री' तथा 'प्रतासेयोक्ष्यति' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रवासे योक्ष्यति' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२६. (१) अयम् : शत्रु।

(२) योगपुरुष : गूढ़पुरुष, गुप्तचर, गुप्तप्रतिनिधि। पाटन में तीक्ष्णरसादि अर्थ किया गया है। द्र० १:२१:२९, ५,२,३२, गण० ३:२२१।

(३) अवाप्त : प्राप्त करना।

(४) कृच्छ : द्र० ५:२:१, ७:२:६, ७:५:३३।

पादटिप्पणी :

२७. (१) प्रतिहतविक्रम : युद्ध में हार या पराजित या असफल। गण० ३:३५।

(२) पण्यं : विक्रेय वस्तु, क्रय विक्रय के योग्य। द्र० १:१७:५२, ७:६:३६, ८:४:३४।

पाठभेद :

'गच्छ' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'गच्छेत्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) उपकृष्टं : सूत्र ५:५:१४ की पुनरुक्ति है। निकट, आसन्नषम। गण० ३:२१३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रतिपन्नमिष्टाभिप्रायैः पूजयेत् ।

२९. स्वीकार करने पर उसे अभीष्ट लाभों से सम्मानित करे ।

अप्रतिपन्नस्य संश्रयं भेदयेद् 'असौ ते योगपुरुषैः प्रणिहितः' इति ।

३०. स्वीकार न करने पर उसके संश्रय को यह कहकर भिन्न करे 'यह तुम्हारे पास योग पुरुष के रूप में स्थित है' ।

सत्त्री चैनमभित्यक्तशासनैर्घातयेत्, गूढपुरुषैर्वा ।

३१. और सस्त्री अभित्यक्त शासन या गूढ पुरुषों से उसका वध करा दे ।

सहप्रस्थायिनो वाऽस्य प्रवीरपुरुषान् यथाभिप्रायकरणेनावाहयेत् ।

३२. उसके साथ प्रस्थानकर्ता प्रवीर पुरुषों को उनका अभीष्ट सिद्धकर स्वपक्षीय कर ले ।

तेन प्रणिहितान् सत्त्री ब्रूयात् ।

३३. सत्त्री उससे (शत्रु से) प्रेषित वीर पुरुषों को गूढ़पुरुष बतलाये ।

इति सिद्धिः ।

३४. इस प्रकार कोप प्रतीकार करे ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) प्रतिपन्न : उपलब्ध, प्राप्त किया, उपक्रान्त । द्र०० ७:८:३ ।

(२) पूजयेत् : सत्कृत ।

पाठभेद :

'भेदयेद् असौ' का तंजौर में 'भेदसौते' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भेदोसौते' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) संश्रयं : आश्रय । शत्रु या जहाँ विद्रोहियों ने शरण लिया है । षाड्गुण में से एक गुण । द्र० ७:१:१०, गण० २:२३७ ।

(२) योगपुरुष : द्र० ९:३:२६ ।

(३) प्रणिहित : रखा हुआ ।

पाठभेद :

'अभित्यक्त' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आभिव्यक्त' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) अभित्यक्त : वध दण्ड का दण्डित । द्र० ९:६:२९, १३:४:४८, गण० २:१६८, १६९, १९३ ।

(२) शासन : आदेश पत्र या अधिकारिक पत्र । द्र० २:९:२, २:२८:२०, १२:३:१३, गण० ३: १९३ ।

पाठभेद :

'करणेनावाहयेत्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'करणेनवाहयेत्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) सहप्रस्थायिनो : सह प्रस्थानकारी । गण० ३:१७५ ।

(२) प्रवीररुपुष : द्र० २:४:६, गण० ३:१९३ ।

(३) अवाहयेत् : द्र० ७:७:१३ ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) तेन : अपने पुराने मालिक से ।

(२) प्रणिहित : नियुक्त ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) सिद्धिः : सफलता । गण० ३:६४, ९३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परस्य चैनान् कोपानुत्थापयेत्, आत्मनश्च शमयेत् ।

३५. शत्रु के उन कोपों को उत्थापित और अपने कोपों को शान्त करे ।

यः कोपं कर्तुं शमयितुं वा शक्तस्तत्रोपजापः कार्यः ।

३६. जो कोप उत्पन्न करने अथवा उसे शान्त करने में समर्थ हो, उसी में उपजाप करना चाहिए ।

यः सत्यसंधः शक्तः कर्मणिफलावाप्तौ चानुग्रहीतुं विनिपाते च त्रातुं तत्र प्रतिजापः कार्यः, तर्कयितव्यश्च कल्याणबुद्धिरुताहो शठ इति ।

३७. जो सत्यसन्ध, कर्म की फल प्राप्ति होने पर, अनुग्रह करने में समर्थ और विपत्तिकाल में रक्षा में सक्षम हो, उसी में उपजाप करना चाहिए और यह विचार करना चाहिए कि यह कल्याण बुद्धि है अथवा शठ ।

शठो हि बाह्योऽभ्यन्तरमेवमुपजपति—'भर्तारं चेद्धत्वा मां प्रतिपादयिष्यति शत्रुबधो भूमिलाभश्च मे द्विविधो लाभो भविष्यति, अथ वा शत्रुरेनमाहनिष्यतीति हतबन्धु-

३८. शठ बुद्धि बाह्य अभ्यन्तर से इस प्रकार उपजाप करता है, 'यदि स्वामी को मारकर, मुझे राज्य प्राप्त करायेगा, तो शत्रु बध और भूमि लाभ यह दो प्रकार का मेरा लाभ होगा अथवा

पाठभेद :

'चैनान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वैनान्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) शम : दबाना, शमन करना । गण० १:१४, २६४, २:२३०, ३४९, ३:१२७, २२१ ।

पाठभेद :

'कोपं कर्तुं' का देवनागरी अनुप्रतिलिपि में 'कोपः कर्तुं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

सूत्र में विद्रोहियों को सलाह दी गई है ।

३६. (१) उपजाप : अन्य के समीप भेदोत्पादन, चुपचाप फुसलाना, गुप्त प्रोत्साहन, द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२ ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) सत्यसंध : सत्यप्रतिज्ञ, विश्वास पात्र, विश्वास पात्र मित्र, बचन पूरा करने वाला, सत्य संकल्प ।

(२) फलावाप्तौ : फल प्राप्ति विषय का ।

(३) शठ : दुष्ट बुद्धि, धूर्त, खल, बंचक ।

पाठभेद

'बाह्योऽभ्यन्तरम्' का देवनागरी अनुलिपि में 'बाह्योऽन्तरम्' तथा 'दण्डेनोद्विग्नश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दण्डेन वोद्विग्नश्च' तथा 'भूयानकृत्य' का 'भूयात् न कृत्य' तथा न्याय चन्द्रिका एवं श्रीमूल में 'भूयान् कृत्य' तथा 'अपि शङ्कितो' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अविशङ्कितो' तथा 'अभित्यक्त' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभिव्यक्त' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) शठ : द्र० ९:३:३ ।

(२) बाह्य : बाहरी ।

(३) आभ्यन्तर : भीतरी ।

(४) प्रतिपादयिष्यति : द्र० १:१०:३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पक्षस्तुल्यदोषदण्डेनोद्विग्नश्च मे भूयानकृत्यपक्षो भविष्यति, तद्विधे वाऽन्यस्मिन्नपि शङ्कितो भविष्यति, अन्यमन्यं चास्य[५] मुख्यमभित्यक्तशासनेन[६] घातयिष्यामि' इति ।

यदि शत्रु इसे मार डालेगा, तो निहत का बन्धु पक्ष तथा समान दोष वाला वर्ग राजा से उद्विग्न हो जायेगा, इस प्रकार मेरा महान् अकृत्यपक्ष तैयार हो जायेगा अथवा उस प्रकार के अन्यजन पर, भी शत्रु का अविश्वास हो जायेगा, इस प्रकार उसके एक-एक प्रमुख का अभित्यक्त शासन द्वारा बध करा दूँगा' ।

अभ्यन्तरो वा शठो बाह्यमेवमुपजपति—'कोशमस्य हरिष्यामि, दण्डं वाऽस्य हनिष्यामि, दुष्टं वा भर्तारमनेन घातयिष्यामि, प्रतिपन्नं बाह्यममित्राटविकेषु विक्रमयिष्यामि "चक्रमस्य सज्यताम्, वैरमस्य[१] प्रसज्यताम्, ततः स्वाधीनो मे भविष्यति, ततो भर्तारमेव प्रसादयिष्यामि, स्वयं वा राज्यं ग्रहीष्यामि", बद्ध्वा वा बाह्य-भूमिं भर्तृभूमिं चोभयमवाप्स्यामि, विरुद्धं वाऽऽवाहयित्वा[२] बाह्यं विश्वस्तं घातयिष्यामि, शून्यं[३] वाऽस्य मूलं[४] हरिष्यामि' इति ।

३९. अथवा अभ्यन्तर शठ बाह्य से इस प्रकार उपजाप करे—'उसके कोश का हरण करूँगा अथवा उसकी सेना का बध करूँगा अथवा उससे दुष्ट स्वामी का बध कराऊँगा, स्वीकार करने पर, बाह्य को शत्रु एवं आटविकों से युद्ध में लगा दूँगा "इसके युद्ध लग्न होने पर, उसका वैर बढ़ने पर, यह मेरा वशवर्ती होगा, तदनन्तर स्वामी को प्रसन्न करूँगा अथवा स्वयं राज्य ग्रहण करूँगा" अथवा उसे बाँधकर बाह्यभूमि और भर्तृभूमि दोनों प्राप्त कर लूँगा, अथवा विरोधी को बुलाकर, विश्वस्त का वध करा दूँगा अथवा उसके शून्य मूल का हरण करूँगा' ।

कल्याणबुद्धिस्तु[१] सहजीव्यर्थमुपजपति[२] ।

४०. कल्याणबुद्धि सहजीवी के रूप में रहकर, सार्थक उपजाप करता है ।

---

(५) अस्य : राजा का ।
(६) अभित्यक्त : द्र० ९:३:३१ ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) वैरम् : शत्रुता । गण० ३:१४५ ।
(२) आवाहयित्वा : साथी षड्यन्त्रकारियों के आने के लिए आवाहन करके ।
(३) शून्यं : राजा विहीन या राजा की अनुपस्थितियाँ । गण० ३:३५ ।
(४) मूल : आधार, केन्द्र, राजधानी । द्र० ७:२:१४, ७:३:३३, ७:८:५ ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) कल्याणबुद्धि : सच्चाभाव, इमानदारी । द्र० ७:७:९, १४ ।
(२) सहजीव्यर्थ : साथ रहने वाले, यह कल्याण बुद्धि का विशेषण है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कल्याणबुद्धिना संदधीत शठं 'तथा' इति प्रतिगृह्यातिसंदध्यात् । इति ।

४१. कल्याणबुद्धि के साथ सन्धि करे, शठ को 'ऐसा करूँगा' इस प्रकार स्वीकार कर' प्रहारित करे।

एवमुपलभ्य[1]—

परे[2] परेभ्यः स्वे[3] स्वेभ्यः स्वे परेभ्यः स्वतः परे ।
रक्ष्याः स्वेभ्यः परेभ्यश्च नित्यमात्मा विपश्चिता ।।

४२. यह सब जानकर विद्वानराजा दूसरों को दूसरों से, स्वजनों को स्वजनों से, स्वजनों को दूसरों से, स्वजनों से दूसरों को तथा स्वजनों एवं दूसरों से अपने को रक्षित करे।

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे पश्चात्कोपचिन्ता बाह्याभ्यन्तरप्रकृतिकोपप्रतीकारः तृतीयोऽध्यायः । आदितः चतुर्विंशतिशततमः ।

नवम अधिकरण के अन्तर्गत अभियास्यत्, कर्म में कोप चिन्ता, बाह्याभ्यन्तर प्रकृति कोप प्रतीकार सम्बद्ध तृतीय अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ बीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) कल्याणबुद्धि : द्र० ९:३:४० ।

पाठभेद :

'उपलभ्य' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उपलभ्यम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) एवमुपलभ्य : यह सब समझकर ।

(२) परे : दूसरे ।

(३) स्वे : अपने ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्रीसंस्करण में—

इति कौटलीयस्यार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः, पश्चात्कोपचिन्ता बाह्याभ्यन्तरप्रकृतिकोपप्रतीकारश्च, आदितश्चतुर्विंशति शतः ।

मैसूरसंस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणिपश्चात्कोपचिन्ता, बाह्याभ्यन्तरप्रकृतिकोपप्रतीकारश्च तृतीयोऽध्यायः, आदितश्चतुर्विंशतिशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे तृतीयोऽध्यायः पश्चात्कोपचिन्ता, बाह्याभ्यन्तर प्रकृतिकोपप्रतीकारश्च आदितश्चतुर्विंशतिशततमः ।

उदयवीरशास्त्रीसंस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे पश्चात्कोपचिन्ता, बाह्याभ्यन्तरप्रकृतिकोपप्रतीकारश्च तृतीयोऽध्यायः ।।३।। आदितश्चतुर्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ।। १२४ ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ४

[द्विचत्वारिंशच्छततमं प्रकरणम्—क्षयव्ययलाभविपरिमर्शः]

एक सौ बयालीसवां प्रकरण—क्षय-व्यय-लाभ विपरिमर्श

युग्य[1]पुरुष[2]ापचय[3]: क्षय[4]: ।

१. युग्य पुरुषापचय क्षय है ।

हिरण्य[1]धान्य[2]ापचयो[3] व्यय[4]: ।

२. हिरण्य-धान्यापचय व्यय है ।

ताभ्यां बहुगुणविशिष्टे[1] लाभे यायात्[2] ।

३. उनकी अपेक्षा बहुगुणविशिष्ट लाभ होने पर, अभियान करे ।

पादटिप्पणी :

१. (१) युग्य : जोड़ा, वह गाड़ी जिसमें दो घोड़े या बैल आदि जुते हुए वाहन । द्र० ७:४:१५, ७:५:३३, ७:१५:८ ।

(२) पुरुष : पुरुष कर्मचारी ।

(३) अपचय : ह्रास, अवनति, घटती, छीजना ।

(४) क्षय : हानि । द्र० ७:२:२, गण० १:१४३, २:२३९, ३:६७,९७ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) हिरण्य : मुद्रा या धन, द्र० १:१३:६, १:१९:१२ ।

(२) धान्य : द्र० ७:११:५,६, १४:२:८, गण० ३:२१८ ।

(३) अपचय : द्र० ९:४:१ ।

(४) व्यय : द्र० ७:२:२, गण० ३:६७,९७ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) विशिष्ट : विशेष, असाधारण, गुण युक्त । द्र० ७:१५:१३, ९:३:१७ ।

(२) यायात् : प्रस्थान, अभियान, आक्रमण ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदेयः[1] प्रत्यादेयः[2] प्रसादकः[3] प्रकोपको[4] ह्रस्वकालस्य[5] तनुक्षयो[6]ऽल्पव्ययो[7]-महान्[8] वृद्धयुदयः[9] कल्पो[10] धर्म्यः[11] पुरोगश्चेति[12] लाभसंपत् ।

४. आदेय, प्रत्यादेय, प्रसादक, प्रकोपक, ह्रस्वकाल, तनुक्षय, अल्पव्यय, महान्, वृद्धयुदय, कल्प, धर्म्य और पुरोग लाभसम्पद् है ।

सुप्राप्यानुपाल्यः परेषामप्रत्यादेय इत्यादेयः[1] ।

५. सुखपूर्वक प्राप्य, अनुपाल्य एवं शत्रु द्वारा अप्रत्यादेय आदेय लाभ है ।

विपर्यये प्रत्यादेयः[1] ।

६. उसके विपरीत प्रत्यादेय लाभ है ।

तमाददानस्तत्रस्थो[1] वा विनाशं प्राप्नोति ।

७. उस लाभ को ग्रहण करने वाला अथवा वहाँ रहने वाला विनाश को प्राप्त होता है ।

पाठभेद :

'प्रकोपको' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कोपको' तथा त्रिवेन्द्रम में 'तनुक्षयो' का 'तनुक्षयव्ययो' तथा 'महान् वृद्धयु' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'महावृद्धयु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. लाभ के १२ संपत् या गुण—उनके प्रकार का स्वरूप निम्नलिखित है ।

(१) आदेय : परिभाषा । द्र० ९:४:५, गण० ३:६७ ।

(२) प्रत्यादेय : द्र० ९:४:६,७,८,९, गण० ३:६७ ।

(३) प्रसादक : द्र० ९:४:१०, गण० ३:६७ ।

(४) प्रकोपक : द्र० ९:४:११,१४, गण० ३:६७ ।

(५) ह्रस्वकाल : द्र० ९:४:१६, गण० ३:६७ ।

(६) तनुक्षय : द्र० ९:४:१७, गण० ३:६७ ।

(७) अल्पव्यय : द्र० ९:४:१८, गण० ३:६७ ।

(८) महान् : द्र० ९:४:१९, गण० ३:६७ ।

(९) वृद्धयुदय : द्र० ९:४:२०, गण० ३:६७ ।

(१०) कल्प : द्र० ९:४:२१, गण० १२९ ।

(११) धर्म्य : द्र० ९:४:२२, गण० ३:६७ ।

(१२) पुरोग : द्र० ५:६:३५, ९:४:२३, गण० ३:६७ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) आदेय : लेना, प्राप्त करना, लाभ करना, ग्रहण करना, वह लाभ जो बिना कठिनाई के प्राप्त हो । द्र० ९:४:४ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) प्रत्यादेय : पुनः लेना, पुनः प्राप्त करना, द्र० ७:१०:२४, ८:३:५३ ।

पादटिप्पणी :

७. (१) तत्रस्थो : भूमि लाभ से तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

यदि वा पश्येत्—'प्रत्यादेयमादाय कोश[1]दण्ड[2]निचय[3]रक्षा[4]विधानान्यवस्रावयिष्यामि; खनि[5]द्रव्य[6]हस्ति[7]वनसेतु[8]बन्धवणिक्[9]पथानुद्धतसारान् करिष्यामि; [10]प्रकृतीरस्य कर्शयिष्यामि, [11]अपवाहयिष्यामि, [12]अयोगेना[13]राधयिष्यामि वा, ताः [14]परं प्रतियोगेन[15] [16]कोपयिष्यति; प्रतिपक्षे[17] वाऽस्य पण्यमेनं करिष्यामि, [18]मित्रमपरुद्धं वाऽस्य प्रतिपादयिष्यामि; मित्रस्य स्वस्य वा देशस्य पीडा[19]मत्रस्थस्तस्करेभ्यः परेभ्यश्च प्रतिकरिष्यामि;

८. यदि विजिगीषु यह देखे—'प्रत्यादेय को ग्रहण कर (शत्रु के) कोश, दण्ड, धान्य संचय एवं रक्षा विधान हीन करूँगा, खनि, द्रव्यवन, हस्तिवन, सेतुबन्ध एवं वणिक्पथ को सारहीन कर दूँगा, शत्रु की प्रकृतियों को दुर्बल करूँगा अथवा उन्हें वहाँ बुला लूँगा अथवा सुख समृद्धि प्रदान कर प्रसन्न करूँगा, शत्रु विपरीत आचरण कर, उन्हें कुपित करेगा अथवा उसे लाभ को शत्रु के विपक्ष को विक्रीत कर दूँगा अथवा स्वमित्र या अपरुद्ध पुत्रादि को प्रदान कर दूँगा, यहाँ रहकर,

---

पाठभेद :

'ताःपरं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि तथा न्याय चन्द्रिका में 'ताःपरः' तथा 'प्रतियोगेन' का 'प्रयोगेन' तथा 'तद्‌मित्राविरक्तं' का 'तदमित्रंविरक्तं' तथा 'तत्कुलीनं' का देवनागरी अनुलिपि में 'तत्कुलीनः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

८. (१) कोश : द्र० ८:१:५।

(२) दण्ड : सेना, गण० १:१३,२३, ३:१३७, १३८, १९२, १९४।

(३) निचय : संचय, द्र० ७:१५:१०,११, गण० २:३३७, ३:४,२७।

(४) रक्षाभिधान : द्र० १:१९:९, १२:५:३२, १३:४:१६, गण० ३:२०१।

(५) खनिद्रव्य : द्र० ७.१०:२०, गण० १:५०।

(६) द्रव्यवन : द्र० ७:१:२०, गण० १:५०।

(७) हस्तिवन : हाथी का वन। गण० १:५०।

(८) सेतुबन्ध : द्र० २:१:२२,२९, ३:९:३८, गण० ३:१०९।

(९) वणिक्पथ : द्र० २:१:१९,३८, ३:६:८।

(१०) प्रकृति : जनता। गण० २:२२१,३५९।

(११) अपवाहन : ले जाना। द्र० ७:१:३३, ८:२:८, ११:१:१६,४३।

(१२) आयोग : उपयोगी साधन, द्र० ९:५:११, गण० ३:६८।

(१३) आराधन : प्रसन्न करना।

(१४) परं : जब शत्रु पुनः प्राप्त करना चाहता है।

(१५) प्रतियोग : विरोधी साधन। गण० ३:६८।

(१६) कोप : द्र० ३:१३:२०, ३:१६:२९, ७:११:२०, ८:२:२०।

(१७) प्रतिपक्ष : द्र० ८:२:२।

(१८) मित्रमपरुद्धम् : द्र० १:१८:१३, १:१०:३, ९:३:३४।

(१९) पीडा : द्र० ८:४:१, ४९, ५०, गण० ३:२।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

[20]मित्रमाश्रयं वाऽस्य [21]वैगुण्यं ग्राहयिष्यामि, तदमित्रविरक्तः[22] [23]तत्कुलीनं प्रतिपत्स्यते; सत्कृत्य[24] वाऽस्मै भूमिं[25] दास्यामि इति संहितसमुत्थितं मित्रं मे चिराय भविष्यति' इति प्रत्यादेयमपि लाभमाददीत ।

मित्र या स्वदेश के चोरों और शत्रुओं द्वारा होनेवाली पीड़ा दूर करूँगा, उसके मित्र या आश्रय को शत्रु के विपरीत करूँगा, शत्रु से विरक्त वह मित्र उसके कुल के व्यक्ति को राज्य ग्रहणार्थ उत्साहित करेगा, अथवा उसे पुनः कन्यादानादि के अवसर पर, सत्कारपूर्वक दे दूँगा, उस प्रकार कृतसन्धि वह चिरकालिक मित्र बनेगा' उन हेतुओं के होने पर, प्रत्यादेय लाभ को भी ग्रहण करे।

इत्यादेयप्रत्यादेयौ व्याख्यातौ ।

९. आदेय-प्रत्यादेय की व्याख्या सम्पन्न हो गयी।

अधार्मिकाद्धार्मिकस्य[1] लाभो लभ्यमानः स्वेषां परेषां[2] च प्रसादको[3] भवति ।

१०. अधार्मिक (राजा) से धार्मिक (राजा) को प्राप्त धन अपने और दूसरे पक्ष के लोगों को प्रसन्न करता है।

विपरीतः प्रकोपक[1] इति ।

११. उसके विपरीत लाभ प्रकोपक होता है।

मन्त्रिणमुपदेशाल्लाभो[1]ऽलभ्यमानः कोपको[2] भवति 'अयमस्माभिः क्षय-व्ययौ ग्राहितः' इति ।

१२. मन्त्रियों के उपदेशानुसार कर्म करने पर, न होने वाला लाभ कोपकारी होता है 'हमने व्यर्थ में उसका क्षय-व्यय कराया' इस प्रकार मन्त्रियों के लिए भी शंका कारी होता है।

---

(२०) मित्रमाश्रय : द्र० १:१३:७४।

(२१) वैगुण्य : विरोध, द्र० ५:६:६, ७:८.१९, ८:१:११।

(२२) विरक्त : उदासीन।

(२३) तत्कुलीन : कुल प्रकार।

(२४) सत्कृत्य : सत्कार पूर्वक।

(२५) भूमिं दास्यामि : भूमि देना। गण० १:१२७।

पादटिप्पणी :

१०. (१) अधार्मिक : धर्म का पालन न करने वाला। वायु० ५८:३५।

(२) परेषां : पराया, दूसरे।

(३) प्रसादक : निर्मल तथा प्रसन्न करने वाला धनादि का अधार्मिक के हाथों से धर्म निष्ठ के हाथों में जाना। गण० ३:६७।

पाठभेद :

'प्रकोपक' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रकोपः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

११. (१) प्रकोपक : क्रोध या गुस्सा उभाड़ना।

पाठभेद

'क्षयव्ययौ' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'क्षयव्ययो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१२. (१) उपदेश : सलाह या मन्त्रण से तात्पर्य है।

(२) कोपक : वह लाभ जो मन्त्रियों के उपदेश या राजद्रोही मन्त्रियों के अनादर से होता है। द्र० १:१८:१, ४:१८:११, ५:६:३२, ७:६:१०, ९:४:१२, १३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्यमन्त्रिणामनादराल्लाभो लभ्यमानः कोपको भवति 'सिद्धार्थोऽयमस्मान् विनाशयिष्यति' इति ।

१३. दूष्य मन्त्रियों के अनादर से होने वाला लाभ कोपक होता है 'प्रयोजन सिद्ध करने वाला यह हम लोगों का नाश करेगा' इस अभिप्राय से मन्त्री कुपित हो जाते हैं ।

विपरीतः प्रसादकः ।

१४. इसके विपरीत लाभ प्रसादक होता है।

इतिप्रसादककोपकौ व्याख्यातौ ।

१५. प्रसादक और कोपक की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

गमनमात्रसाध्यत्वाद्ह्रस्वकालः ।

१६. गमनमात्र से सिद्ध होने वाला लाभ 'ह्रस्व काल' होता है ।

मन्त्रसाध्यत्वात्तनुक्षयः ।

१७. मन्त्र द्वारा ही सिद्ध होने वाला लाभ 'तनुक्षय' होता है ।

भक्तमात्रव्ययत्वादल्पव्ययः ।

१८. भक्त मात्र व्यय से होने वाला लाभ 'अल्पव्यय' होता है ।

तदात्ववैपुल्यान्महान् ।

१९. तात्कालिक रूप से होने वाला अत्यधिक लाभ 'महान्' होता है।

अर्थानुबन्धकत्वाद् वृद्ध्युदयः ।

२०. तत्काल और पश्चात् होने वाला अधिक और सतत लाभ 'वृद्धयुदय' होता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) दूष्य : विश्वासघाती द्रोही । द्र० १:११:१७, ३:१४:२७, गण० ३:१५०,१७० ।

(२) सिद्ध : सफल । गण० ३:१७७ ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) विपरीत : द्र० ९:४:११ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) ह्रस्वकाल : थोड़ा समय में उपजापादि मन्त्रों द्वारा यह लाभ साध्य होता है । गण० ३:६७ ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) अल्पव्यय : कम खर्च किया जाना । गण० ३:६७ ।

पादटिप्पणी :

१९. महान : बड़ा ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) वृद्ध : द्र० ७:१२:२९, गण० ३:६७।

(२) उदय : वह लाभ, जो लाभ भविष्य में भी अत्यधिक अर्थ प्राप्ति कराने वाला होता है, उसे वृद्ध उदय कहते हैं । द्र० २:९:४, २:१६:१८,१९, ३:१२:२५,२६,२७,३०, ६:२:५, गण० ३:६७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निराबाधकत्वात्कल्प[1]ः ।

२१. बाद में भी बाधा रहित लाभ 'कल्प' होता है।

प्रशस्त[1]ोपादानाद्धर्म्य[2]ः ।

२२. उत्तम उपायों से अर्जित लाभ 'धर्म्य' होता है।

सामवायिका[1]नामनिर्बन्धगामित्वात्पुरोग[2]ः । इति ।

२३. सामवायिकों को होनेवाला पूर्व अनिश्चित लाभ 'पुरोग' होता है।

तुल्यलाभदेशकालौ[1] शक्त्युपायौ[2][3] प्रियाप्रियौ[4] जवाजवौ[5] सामीप्य[6]विप्रकर्षौ[7] तदात्वानुबन्धौ सारत्व[8]सातत्ये[9] बाहुल्यबाहुगुण्ये च विमृश्य[10] बहुगुणयुक्तं लाभमाददीत ।

२४. समान लाभ की स्थिति होने पर देश-काल, शक्ति-उपाय, प्रिय-अप्रिय, जव-अजव, सामीप्य-विप्रकर्ष, तात्कालिक-अनुबन्ध, सारत्व-सातत्य एवं बाहुल्य-बाहुगुण्य का विचार कर, अधिक लाभयुक्त को ग्रहण करना चाहिए।

पादटिप्पणी :

२१. (१) कल्प : जिस लाभ में आगे किसी तरह की बाधा उपस्थित हैं। गण० १:२९।

पादटिप्पणी :

२२. (१) प्रशस्त : श्लाध्य, प्रशंसनीय।

(२) धर्म्य : नियमित जायज। प्रकाश युद्ध से प्राप्त लाभ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) सामवायिक : अभियान के समय बना संघ। द्र० ७:४:१९, ७:५:४९।

(२) पुरोग : अग्रतम। द्र० ५:६:३५, ९:७:५९, गण० ३:६७।

पाठभेद :

'जवाजवौ' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'जपाजपौ' तथा 'सारत्वसातत्यो' का 'सारत्वसारत्वा' तथा तंजौर में 'सारत्वसारत्त्र' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२४. (१) देशकाल : स्थान और समय।

(२) शक्ति : मन्त्र, प्रभाव, उत्साह शक्ति।

(३) उपाय : चार प्रकार हैं—साम, दान, भेद, दण्ड।

(४) प्रियाप्रियौ : प्रियत्व तथा अप्रियत्व, अनुकूलता तथा प्रतिकूलता या हित तथा अनहित।

(५) जवाजवौ : वेग मान तथा अवेग मान।

(६) सामीप्य : पड़ोस, निकट।

(७) प्रकर्ष : विस्तार।

(८) सारत्व : उच्चतम।

(९) सातत्य : अविच्छिन्नता या स्थायित्व। द्र० ७:१२:१६।

(१०) विमृश्य : विवेचना या विचार करके।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लाभविघ्ना :—काम[1]: कोप[2]: सा[3]ध्वसं का[4]रुण्यं ह्री[5]रनार्यभा[6]वो मान[7]: सा[8]नुक्रोशता परलो[9]कापेक्षा [10]धार्मिकत्वमत्या[11]गित्वं [12]दैन्यमसूया[13]हस्तग[14]तावमानो [15]दौरात्म्यमविश्वासो[16] [17]भयमप्रतीकार:[18] [19]शीतोष्ण[20]वर्षा[21]णामाक्षम्यं [22]मङ्गलतिथिनक्षत्रे[23]ष्टित्वम् इति ।

२५. लाभ के विघ्न—काम, कोप, साध्वस, कारुण्य, ह्री, अनार्यभाव, मान, सानुक्रोशता परलोकापेक्षा, धार्मिकत्व, अत्यागित्व, दैन्य, असूया, हस्तगत का अवमान, दौरात्म्य, अविश्वास, भय, अप्रतीकार, शीतोष्णवर्षा की असहिष्णुता, मङ्गलतिथि नक्षत्र का अपेक्षत्व ।

नक्षत्रमतिपृच्छन्तं बालमर्थोऽतिवर्तते ।
अर्थो ह्यर्थस्य नक्षत्रं किंकरिष्यन्ति तारका[1]: ।।

२६. अत्यधिक नक्षत्र पूछने वाले मूर्ख का प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है, अर्थ (धन) ही अर्थ (प्रयोजन) का नक्षत्र है, तारक क्या करेंगे ।

पाठभेद :

'धार्मिकत्वम्' का न्यायचन्द्रिका तथा श्रीमूल में 'दाम्भिकत्वम्' तथा 'अत्यागित्वं' का तंजौर में 'अत्याहित्वं' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अत्याहितत्वं' तथा श्रीमूल में 'अत्याशित्वं' पाठभेद मिलता है । तथा 'दौरात्म्यम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दारात्मिकम्' श्रीमूल में 'दौरात्मिकम्' तथा 'भयमप्रतीकार:' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भयन्नितिकार:' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'भयमणितिकार:' तथा श्रीमूल में 'भयमनिकार:' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) काम : वासना, नारी में आसक्ति । गण० १:३७ ।

(२) कोप : गुस्सा, क्रोध ।

(३) साध्वंस : भय तथा अज्ञान, मोहाच्छन्नता, अप्रगल्भता ।

(४) कारुण्य : दया, कृपा, सहानुभूति ।

(५) ह्री : लज्जा ।

(६) अनार्य भाव : क्रूरता, दुर्व्यवहार ।

(७) मान : अहंकार । गण० १:३७ ।

(८) सानुक्रोश : दयालु, करुणा कर ।

(९) परलोकापेक्षा : परलोक की कामना ।

(१०) धार्मिकत्व : धार्मिकता ।

(११) अत्यागित्व : अपने हिस्सा से अधिक लेना, अनुदार ।

(१२) दैन्य: दीनता, दरिद्रता, कायरता ।

(१३) असूया : इर्ष्या, असहिष्णुता, क्रोध ।

(१४) हस्तगतावमानो : हाथ में जो है उसके प्रति अवज्ञा ।

(१५) दौरात्म्य : दुष्टता, दुर्भावना, दुर्जनता ।

(१६) अविश्वास भरोसा न करना ।

(१७) भयम् : डर, आतंक ।

(१८) अप्रतिकार : प्रतिकार करने में असमर्थता ।

(१९) शीत : ठण्डक ।

(२०) उष्ण : गर्मी ।

(२१) वर्षा : बरसात ।

(२२) मंगल तिथि : शुभ दिन ।

(२३) नक्षत्र : तारागण ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) तारा : ग्रह ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नाधना प्राप्नुवन्त्यर्थान्नरा यत्नशतैरपि ।
अर्थैरर्थाः प्रबध्यन्ते गजाः प्रतिगजैरिव ॥

२७. निर्धन मनुष्य शतशः प्रयत्नों से भी अर्थ सिद्धि नहीं कर पाते हैं, अर्थ से अर्थ उसी प्रकार प्राप्त किए जाते हैं, जिस प्रकार गज से गज ।

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे क्षायव्ययलाभविपरिमर्शः चतुर्थोऽध्यायः ।

आदितः पञ्चविंशतिशततमः ।

नवम अधिकरण के अन्तर्गत अभियास्यत्कर्म में क्षय-व्यय-लाभ विपरिमर्श सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त ।

आदि से एक सौ पच्चीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

'नाधनाःप्राप्नु' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'साधनाःप्राप्नु' तथा 'प्रबध्यन्ते' का देवनागरी अनुलिपि में 'प्रबाध्यन्ते' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) नाधना : बिना धन के ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इतिकौटलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः क्षयव्ययलाभविपरिमर्शः आदितः पंचविंशशतः ॥

मैसूर संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे क्षयव्ययलाभविपरिमर्शः चतुर्थोऽध्यायः आदितः पंचविंशतिशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयस्यार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः क्षय व्यय लाभविपरिमर्शः आदितः पंचविंशतिशततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे क्षयव्ययलाभविपरिमर्शः चतुर्थोऽध्यायः ।४।
आदितः पंचविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१२५॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ५

[त्रिचत्वारिंशच्छततमंप्रकरणम्—बाह्याभ्यन्तराश्चापदः]

एक सौ तिरालीसवां प्रकरण—बाह्य एवं आभ्यन्तर आपत्तियां

संध्यादीनामयथोद्देशावस्थापनमपनयः ।

१. सन्धि आदि गुणों का यथोचित स्थान पर, प्रयोग न करना अपनय है।

तस्मादापदः संभवन्ति ।

२. उससे आपदायें उत्पन्न होती हैं।

बाह्योत्पत्तिरभ्यन्तरप्रतिजापा, अभ्यन्तरोत्पत्तिर्बाह्यप्रतिजापा, बाह्योत्पत्ति-र्बाह्यप्रतिजापा, अभ्यन्तरोत्पत्तिरभ्यन्तरप्रतिजापा—इत्यापदः ।

३. अभ्यन्तर प्रतिजाप से उत्पन्न बाह्य आपदा, बाह्य प्रतिजाप से उत्पन्न अभ्यन्तर आपदा, बाह्य प्रति जाप से उत्पन्न बाह्य आपदा, अभ्यन्तर प्रति जाप से उत्पन्न अभ्यन्त आपदा—उस प्रकार आपदा के (चार भेद) हैं।

पादटिप्पणी :

इस प्रकरण में आपद का अर्थ राज्य के प्रति षड्यन्त्र करना है। आपदा दो प्रकार की—शुद्ध तथा मिश्र होती हैं।

१. (१) सन्ध्यादि : सन्धि आदि।

(२) अयथोद्देशा : अनुचित रूप से।

(३) अपनय : नीति भ्रंश या गलत नीति, द्र० १:२:११, ६:२:६, ८:१:२, गण० १:२७, २:२३१, ३:३३।

पादटिप्पणी :

२. (१) आपद : खतरा।

पाठभेद :

'प्रतिजापा' का तंजौर में 'प्रातिजापा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) बाह्य : बाहरी क्षेत्र। द्र० ९:३:१२, २२।

(२) अभ्यन्तर : भीतरी क्षेत्र। द्र० ९:३:१२, २२।

(३) प्रति जाप : भेद, षड्यन्त्र। द्र० ९:३:३७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यत्र बाह्या अभ्यन्तरानुपजपन्ति, अभ्यन्तरा वा बाह्यान्, तत्रोभययोगे-प्रतिजपतः सिद्धिर्विशेषवती ।

४. जहाँ बाह्य अभ्यन्तरों का अथवा अभ्यन्तर बाह्यों का उपजाप करते हैं, वहाँ दोनों भेदों में प्रतिजपिता को सामादि से स्ववश में करना, विशेष फलप्रद होता है।

सुव्याजा हि प्रतिजपितारो भवन्ति, नोपजपितारः ।

५. प्रतिजपिता धनादि ग्रहण के प्रयोजन वाले होते हैं, उपजपिता तो ऐसे नहीं होते।

तेषु प्रशान्तेषु नान्याञ्छक्नुयुरुपजपितुमुपजपितारः ।

६. उनके (प्रतिजपिताओं के) शान्त होने पर, उपजपिता अन्यों का उपजाप करने में समर्थ नहीं हो सकते हैं।

कृच्छ्रोपजापा हि बाह्यानामाभ्यन्तरास्तेषामितरे वा ।

७. बाह्यों द्वारा अभ्यन्तरों का तथा अभ्यन्तरों द्वारा बाह्यों का उपजाप (करना) अतीव कठिन होता है।

महतश्च प्रयत्नस्य बधः परेषाम्, अर्थानुबन्धश्चात्मन इति ।

८. इससे (उपजाप से) शत्रु के महान् प्रयत्न का नाश होता और अपना प्रयोजन सिद्ध होता है।

पाठभेद :

'उभययोगेप्रति' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उभययोगप्रति' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४. (१) उपजाप : भड़काना, उत्तेजित, प्रोत्साहित करना। द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२।

(२) उभय योगे : अभ्यन्तर एवं बाह्य।

(३) प्रतिजपतः : जिसमें भेद डाला जाता है उसे, द्र० ९:३:३७।

पादटिप्पणी :

५. (१) सुव्याजा : कपट, विश्वासघात, धूर्तता, धूर्त।

पादटिप्पणी :

६. (१) प्रशान्त : शान्त या वश में किया हुआ या दबाया हुआ।

पादटिप्पणी :

७. (१) कृच्छ्र : द्र० ५:३:१, ९:३:२६, स्कन्द० ६:५३:८३, भाग० ११:१८:४९।

पाठभेद

'चात्मन इति' का श्रीमूल में 'चात्मनोऽन्य इति' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

८. (१) परेषाम् : दूसरे उकसाने वाले।

(२) अर्थानुबन्ध : लाभ।

(३) आत्मन : स्वयं, राजा। मार्क० ३:४२।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभ्यन्तरेषु प्रतिजपत्सु साम[1]दाने[2] प्रयुञ्जीत ।

९. अभ्यन्तरों के प्रतिजाप होने की स्थिति में उनपर सामदान का प्रयोग करना चाहिए।

स्थान[1]मान[2]कर्म सान्त्वम्[3] ।

१०. स्थान और मानकर्म साम है।

अनुग्रह[1]परिहारौ[2] कर्म[3]स्वायोगो वा दानम् ।

११. अनुग्रह, परिहार अथवा समग्रकर्म फल ग्रहण करने की स्वीकृति दान है।

बाह्येषु प्रतिजपत्सु भेद[1]दण्डौ[2] प्रयुञ्जीत ।

१२. बाह्यों के प्रतिजाप्य होने पर, दण्ड और भेद का प्रयोग करना चाहिए।

सत्त्रिणो[1] मित्रव्यञ्जना[2] वा बाह्यानां चार[3]मेषां ब्रूयुः 'अयं वो राजा दूष्य[4]-व्यञ्जनैरतिसंधातुकामः, बुध्यध्वम्' इति ।

१३. बाह्यों के प्रतिजपिता होने पर, उनके मित्र वेशी सत्त्री राजा के कपट प्रयोग को उस प्रकार कहें 'यह राजा दूष्य वेशी अमात्यादि से तुम्हें प्रतारित करना चाहता है, यह बात जान लो'।

पादटिप्पणी :

९. (१) साम : सन्तोष, ढाडस, समझौता। द्र० ९:५:११।

(२) दान : उपहार, भेंट। द्र० ९:५:११, गण० ३:७४।

पादटिप्पणी :

१०. (१) स्थान कर्म : विशेष अधिकार के स्थानों पर नियुक्ति करना। द्र० ७:८:४३।

(२) मान कर्म : इज्जत देना, छत्र, चामर आदि रखने का अधिकार देना। मुसलिम काल में डंका तथा विशाल सामन्तो को देकर मान किया जाता। द्र० १:६:१, ७:८:४३, गण० ३:३७।

(३) सान्त्वम् : खुश, प्राप्ति करना, शान्त या आश्वासन करना। गण० ३:७४।

पादटिप्पणी :

११. (१) अनुग्रह : कृपा, प्रसाद, राज्य प्राप्त सहायता, धनादि दान। द्र० २:१:१५, भविष्य० २:१:८,२०,२१, गण० १:१११, ३:२००, २१०।

(२) परिहार : कर की माफी त्यागना या छोड़ना। द्र० २:७:२, २:१६:१३, गण० १:१११, ३:७४,२००,२१०।

(३) कर्म : वृत्ति देने से तात्पर्य है।

पादटिप्पणी :

१२. (१) भेद : उपाय अनुक्रम में एक, फूट डालना। गण० ३:१४५।

(२) दण्ड : द्र० १:५:१, गण० १:१३,२३, ३:१३७, १३८, १९२, १९५।

पाठभेद :

'व्यञ्जना वा बाह्यानां' का तंजौर तथा तेलगु अनुप्रतिलिपि में 'व्यञ्जना बाह्यानां' तथा 'राजादूष्य' का 'राजदूष्य' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) सत्त्रि : गुप्तचर।

(२) मित्रव्यंजना : मित्र गुप्त या मित्र वेष में। द्र० ९:५:२१,२७।

(३) चार : गुप्तचर। द्र० १:१२:७, १:७:१, १:१२:२३, १:७:१६,२५,३४, ३:१:४७।

(४) दूष्यव्यञ्जन : द्रोही या विश्वासघाती के रूप में। द्र० ९:५:१४, ९:६:८।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्येषु वा दूष्यव्यञ्जनाः[1] प्रणिहिता[2] दूष्यान्बाह्यैर्भेदयेयुः, बाह्यान् वा दूष्यैः ।

१४. दूष्य बाह्य अथवा अभ्यन्तर के प्रतिजपिता होनेपर, नियुक्त दूष्यवेशी गुप्तचर दूष्यों को बाह्यों से अथवा बाह्यों को दूष्यों से भिन्न करे ।

दूष्याननुप्रविष्टा[1] वा तीक्ष्णाः[2] शस्त्र[3]रसा[4]भ्यां हन्युः[5] ।

१५. अथवा उनके अन्दर प्रविष्ट तीक्ष्ण शस्त्र और रस प्रयोग द्वारा दूष्यों की हत्या करें।

आहूय[1] वा बाह्यान् घातयेयुः[2] ।

१६. अथवा बाह्यों को आहूत कर, बध करा दें ।

यत्र बाह्या बाह्यानुपजपन्ति, अभ्यन्तरानभ्यन्तरा वा, तत्रैकान्तयोग उपजयितुः सिद्धिर्विशेषवती ।

१७. जहाँ बाह्य-बाह्यों का अथवा अभ्यन्तर-अभ्यन्तरों का उपजाप करते हैं, वहाँ उपजाप कर्ता को स्ववशवर्ती बनाना, लाभप्रद होता है ।

दोषशुद्धौ[1] हि दूष्या[2] न विद्यन्ते ।

१८. दोष की शुद्धि हो जाने पर, दूष्य नहीं रहते ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) दूष्यव्यञ्जना : द्र० १:१३:१७, ३:१४:२७, ५:१:४, ९:५:१३ ।

(२) प्रणिहिता : नियुक्त, रक्खा हुआ । द्र० ९:३:३ ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अनुप्रविष्टा : द्र० १:१७:३९, १:१६:९, २:९:२६, ४:४:२०, ४:५:९, १२, १५ ९:५:२२ ।

(२) तीक्ष्ण : वधिक, द्र० १:१४:५, ९:६:३५, ९:७:४९, गण० १:३६, ३:१४२ ।

(३) शस्त्र : हथियार ।

(४) रस : विष । द्र० १:१:१, ३०, ५:१:७, ३१, गण० ३:१२३, १९५, २२२ ।

(५) हन्युः : वध करें ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) आहूय : आमन्त्रित या आवाहन या बुलाकर । द्र० ३:९:२१, विष्णु० ५:३:११ ।

(२) घातयेयुः : मार डालें । गण० ३:१३५ ।

पाठभेद :

'योगउपजपितुः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'योगमुपजपितुः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. एकान्तयोग : अधिकारियों की संख्या एक तरफ अन्त में, राज्य एक ओर अन्त में ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) दोषशुद्धौ : बुराइयां जब दूर कर दी जाती हैं । गण० ३:३८ ।

(२) दूष्य : विद्रोही षड्यन्त्रकारी । गण० ३:१५०, १७० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूष्यशुद्धौ हि दोषः पुनरन्यान् दूषयति ।

१९. शुद्धि हो जाने पर, दोष पुनः अन्यों को दूषित करता है।

तस्माद्बाह्येषूपजपत्सु भेददण्डौ प्रयुञ्जीत ।

२०. अतएव बाह्यों के उपजाप कर्ता होने पर, भेद-दण्ड का प्रयोग करना चाहिए।

सत्त्रिणो मित्रव्यञ्जना वा ब्रूयुः 'अयं वो राजा स्वयमादातुकामः, विगृहीताः स्थानेन राज्ञा, बुध्यध्वम्' इति ।

२१. अथवा मित्रवेशी सत्त्री उपजापकों से कहें 'यह राजा प्रतिजपिताओं द्वारा तुम लोगों को अपने वश में करना चाहता है, उस राजा से विग्रह करो और सावधान रहो'।

प्रतिजपितुर्वा दूतदण्डाननुप्रविष्टास्तीक्ष्णाः शस्त्ररसादिभिरेषां छिद्रेषु प्रहरेयुः ।

२२. (प्रतिजपिता के पास से उपजपिता या) उपजपिता के पास से प्रतिजपिता के पास जाने वाले दूतों और सैनिकों में प्रविष्ट तीक्ष्ण शस्त्र और रस द्वारा उनके छिद्रों पर, प्रहार करें।

ततः सत्त्रिणः प्रतिजपितारमभिशंसेयुः ।

२३. तदनन्तर सत्त्री (उस विषय में) प्रतिजपिता का नाम लें।

अभ्यन्तरानभ्यन्तरेषूपजपत्सु यथार्हमुपायं प्रयुञ्जीत ।

२४. अभ्यन्तरों के प्रति अभ्यन्तरों के उपजापकर्ता होने पर, यथोचित उपाय करे।

पादटिप्पणी :

१९. (१) दूष्य : राजद्रोही, विश्वासघाती ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) सत्त्रि : द्र० १:१०:३, ५, २०, १:११:१, १८, ९:३:१६ ।

(२) मित्रव्यञ्जना : मित्र बना कपटी । द्र० ९:५:२३ ।

पादटिप्पणी :

यह सूत्र दण्ड के प्रयोग का वर्णन करता है।

२२. (१) दण्ड : सेना ।

(२) तीक्ष्ण : बधिक । द्र० १:३४:५, ९:७:४९ ।

(३) छिद्र : कमजोर स्थान । द्र० १:३:६, गण० ३:१८३ ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) सत्त्रि : द्र० ९:५:३१ ।

(२) अभिशंसेयु : अभियोग लगाए कि हत्या की है । अग्नि० २२७:२४, मत्स्य० २२७:६८, मनु० ८:२६८, याज्ञ० २८८ ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) उपाय : द्र० २:१०:४७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तुष्टलिङ्ग[2]मतुष्टं विपरीतं वा साम प्रयुञ्जीत ।

२५. सन्तोषप्रद होकर भी असन्तोषप्रद अथवा असन्तोषप्रद होकर भी सन्तोषप्रद साम का प्रयोग करे ।

शौचसामर्थ्यापदेशेन व्यसनाभ्युदयावेक्षणेन वा प्रतिपूजनमिति दानम् ।

२६. शौच और सामर्थ्य के व्याज से अथवा व्यसन और अभ्युदय के उपलक्ष्य में सत्कृत करना दान है ।

मित्रव्यञ्जनो वा ब्रूयादेतान् 'चित्तज्ञानार्थमुपधास्यति वो राजा, तदस्याख्यातव्यम्' इति ।

२७. अथवा मित्रवेषी गुप्तचर इनसे इस प्रकार कहे 'तुम्हारी चित्तवृत्ति जानने के लिए राजा परीक्षा लेगा, अतः इससे सुस्पष्ट कह देना चाहिए' ।

परस्पराद्वा भेदयेदेनान् 'असौ चासौ च वो राजन्येवमुपजपति' । इति भेदः ।

२८. अथवा उन्हें परस्पर भिन्न करे 'वह और वह तुम्हारे विषय में राजा से उपजाप करता है' इस प्रकार कथन भेद है ।

दाण्डकर्मिकवच्च दण्डः ।

२९. दाण्डकर्मिक तुल्य (उपांशु दण्ड) दण्ड होता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) तुष्ट : तोषयुक्त, प्रसन्न, खुश ।

(२) लिङ्ग : चिह्न । द्र० २:१०:१७, २:२९:३६, २:३:१४ ।

पाठभेद :

'भ्युदयावेक्षणेन' का 'भ्युदयोपेक्षणेन' पाठभेद तंजौर में मिलता है ।

पादटिप्पणी :

दान की परिभाषा ।

२६. (१) अपदेश : घोषणा, विज्ञप्ति । द्र० ४:८:२ ।

(२) प्रतिपूजन : अभिवादन के उत्तर में अभिवादन करना ।

(३) दान : देने की क्रिया ।

कौ०–५९

पादटिप्पणी :

२७. (१) मित्रव्यंजन : द्र० ९:५:२१ ।

(२) चित्त ज्ञानार्थं : चित्त का भाव जानना ।

(३) उपधा : मित्र की गुप्त परीक्षा । द्र० १:२०:१, १३:४:२५ ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) उपजपति : सुझाव देना या प्रोत्साहित करना, द्र० १:१०:७,११, १:१४:६, १०:३:५, १०:११:८ ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) दण्डकर्मिकवच्च : गुप्त दण्ड देना । द्र० ५:६:१५,४८, ७:१६:२५, ९:६:५ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एतासां चतसृणामपदांमाभ्यन्तरामेव पूर्वं साधयेत् ।

३०. उन चारों आपदाओं में अभ्यन्तर आपदा को सर्वप्रथम नियन्त्रित करना चाहिए।

अहिभयादभ्यन्तरकोपो बाह्यकोपात्पापीयानित्युक्तं पुरस्तात् ।

३१. पहले यह कहा जा चुका है कि अहिभय सदृश अभ्यन्तर कोप बाह्यकोप की अपेक्षा अधिक अनिष्ट कर है।

पूर्वांपूर्वां विजानीयाल्लघ्वीमापदमापदाम् ।
उत्थितां बलवद्भ्यो वा गुर्वीं लघ्वीं विपर्यये ॥

३२. उन आपदाओं में क्रमशः पूर्वपूर्ववर्तिनी आपदा (उत्तरवर्तिनो की अपेक्षा) लघु होती है। पूववर्तिनी हो अथवा उत्तरवर्तिनी बलवान् से उत्पन्न आपदा गुरु (प्रबल) तथा दुर्बल से उत्पन्न लघु होती है।

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे बाह्याभ्यन्तराश्चापदः पञ्चमोऽध्यायः। आदितः षड्विंशतिशततमः ।

नवम अधिकरण में अभियास्यत् कर्म के अन्तर्गत बाह्याभ्यन्तर आपदों से सम्बद्ध पंचम अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ छब्बीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाद टिप्पणी :

३०. (१) चतसृणामापदां : चार प्रकार के षड्यन्त्रों में ।

(२) अभ्यन्तरं : भीतरी ।

पाद टिप्पणी :

३१. (१) अहि : सर्प, द्र० १:१७:९, ८:१:३, ९:२:२० ।

(२) पुरस्तात् : द्र० ८:२:८ ।

पाठभेद :

'पूर्वांपूर्वां' का तंजोर में 'पूर्वापूर्वं' देवनागरी अनुलिपि में 'पूर्वांपूर्वं', तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पूर्व पूर्वं' तथा 'गुर्वी' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शुद्धि' पाठभेद मिलता है ।

पाद टिप्पणी :

३२. (१) पूर्वांपूर्वां : प्रत्येक पहलो । द्र० ९:५:३ ।

(२) आपदा : आपत्ति, षड्यन्त्र ।

(३) बलवद्भ्यो : बली मनुष्य से आरम्भ ।

(४) गुर्वी : बहुत बड़ी ।

(५) विपर्यय : वैपरीत्य ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमाधिकरणे पंचमोऽध्यायः बाह्याभ्यन्तराश्चापदः आदितः षड्विंशतिशततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि बाह्याभ्यन्तराश्चापदः पंचमोऽध्यायः आदितः षड्विंशतिशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमाधिकरणे पंचमोऽध्यायः बाह्याभ्यन्तराश्च आपदः आदितः षड्विंशतिशततमः ।

उदयवीरशास्त्री संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे बाह्याभ्यन्तराश्चापदः पंचमोऽध्यायः ॥५॥ आदितः षड्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१२६॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ६

[चतुश्चत्वारिंशच्छततमं प्रकरणम्—दूष्यशत्रुसंयुक्ताः (आपदः)[1]]

एक सौ चौवालीसवां प्रकरण–दूष्य शत्रु संयुक्त (आपदायें)

दूष्येभ्यः शत्रुभ्यश्च द्विविधाः शुद्धाः[2] ।

१. दूष्यों और शत्रुओं से उत्पन्न आपदायें दूष्यशुद्ध और शत्रुशुद्ध भेद से दो प्रकार की होती हैं।

दूष्यशुद्धायां[1] पौरेषु[2] जानपदेषु वा दण्डवर्जानुपायान्[3] प्रयुञ्जीत ।

२. दूष्यशुद्धा आपदा में पुरवासियों अथवा जनपदवासियों (दूष्यों) पर दण्ड के अतिरिक्त अन्य सामादि उपायों का प्रयोग करे।

दण्डो हि महाजने[1] क्षेप्तुमशक्यः ।

३. महाजन पर दण्ड प्रयोग अशक्य होता है।

क्षिप्तो वा तं चार्थं न कुर्यात्, अन्यं चानर्थमुत्पादयेत् ।

४. उस पर प्रयुक्त दण्ड प्रयोजन सिद्ध नहीं करता, अपितु अन्य अनर्थ उत्पन्न करता है।

मुख्येषु[1] त्वेषां दाण्डकर्मिक[2]वच्चेष्टेत ।

५. इनमें प्रमुख दूष्यों के प्रति दाण्डकार्मिक प्रकरणोक्त उपायों का प्रयोग करे।

पाठ भेद :

'द्विविधा' का देवनागरी अनुलिपि तथा न्याय चन्द्रिका में 'द्विधा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१. (१) आपद : षड्यन्त्र से आपद अधिक खतरनाक है।

(२) शुद्धा : आपदा दो प्रकार की होती हैं अमिश्र तथा परमिश्र।

पादटिप्पणी :

२. (१) दूष्यशुद्ध : विश्वासघातियों या द्रोहियों की अमिश्र (आपदा)।

(२) पौरेषु जानपदेषु वा : इससे प्रकट होता है कि विद्रोह केवल अधिकारी वर्ग तक सीमित नहीं रहता।

(३) उपाय : साम, दान, भेद, दण्ड। द्र० २:१०:४७, ९:५:१०, ९:६:२४।

पादटिप्पणी :

३. (१) महाजन : बहुसंख्यक या पुरवासी या जनता।

पादटिप्पणी :

५. (१) मुख्येषु : मुख्य प्रवर्तक, अग्रेसर, नायक, नेता।

(२) दाण्डकार्मिक : द्र० पंचम अधिकरण—प्रथम अध्याय। ९:५:२९, गण० २:३४७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शत्रुशुद्धायां[1] यतः[2] शत्रुः प्रधानः[3] कार्यो वा ततः समादिभिः सिद्धिं लिप्सेत।

६. शत्रुशुद्धा में जिसके वश में शत्रु, प्रधान अथवा अमात्यादि हो, उसके प्रति सामादि उपायों का प्रयोग कर, सिद्धि प्राप्त करे।

स्वामिन्यायत्ता[1] प्रधानसिद्धिः[2], मन्त्रिष्वायत्ताऽऽयत्तसिद्धिः, उभयायत्ता[3] प्रधानायत्तसिद्धिः।

७. प्रधानसिद्धि स्वामी के अधीन, अमात्यसिद्धि मन्त्रियों के अधीन तथा प्रधानामात्यसिद्धि स्वामी एवं मन्त्री के अधीन होती है।

दूष्यादूष्याणा[1]मामिश्रितत्वादामिश्रा[2]।

८. दूष्य-अदूष्य द्वारा उत्पन्न आपदा आमिश्रित होने के कारण आमिश्रा होती है।

आमिश्रायामदूष्यतः सिद्धिः[1]।

९. आमिश्रा में अदूष्य से सिद्धि होती है।

आलम्बनाभावे[1] ह्यालम्बिता न विद्यन्ते।

१०. आलम्बन के अभाव में आलम्बन प्राप्त करने वालों का भी अभाव होता है।

पाठभेद :

'शत्रुः प्रधानः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शत्रुप्रधानः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६. (१) शत्रुशुद्धायां : राजा के सहज शत्रु के आसन्न आक्रमण से उत्पन्न हुई। द्र० ९:६:१।

(२) यत : शत्रु।

(३) प्रधान : मन्त्री या अधिकारी। द्र० १:१३:२६, ७:५:१२,२४,३५,३६, ७:१४:१,३।

पाठभेद :

'प्रधानायत्तसिद्धिः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रधानायात्तासिद्धि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

७. (१) आयत्ता : अधीन, आश्रित, सहारा, अर्थात् स्वामी के सामर्थ्य द्वारा अनुकूल शत्रु। गण० ३:८०।

(२) प्रधानसिद्धि : प्रधान के द्वारा उत्पादित, विपत्ति की शान्ति। द्र० ९:६:६, गण० ३:८०।

(३) उभय : दोनों, राजा एवं मन्त्री।

पादटिप्पणी :

८. (१) दूष्यादूष्य : षड्यन्त्रकारी तथा अषड्यन्त कारी। द्र० १:११:१७।

(२) आमिश्र : एक साथ मिलाया हुआ। जब विश्वासघाती तथा अविश्वासघाती मिल जाते हैं। मिली-जुली। द्र० ९:६:९, गण० ३:८०।

पादटिप्पणी :

९. (१) सिद्धि : सफलता। गण० ३:६४,९३।

पादटिप्पणी :

१०. (१) आलम्बन : सहारा, आधार।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मित्रामित्राणमेकीभावात्परमिश्रा ।

११. मित्र और अमित्र की एकता के कारण उत्पन्न आपदा 'परमिश्रा' होती है।

परमिश्रायां मित्रतः सिद्धिः ।

१२. परमिश्रा में मित्र से सफलता की प्राप्ति होती है।

सुकरो हि मित्रेण संधिः, नामित्रेणेति ।

१३. मित्र के साथ सन्धि सुकर होती है, अमित्र के साथ नहीं।

भिन्नं चेन्न संधिमिच्छेदभीक्ष्णमुपजपेत् ।

१४. भिन्न मित्र यदि सन्धि करने की इच्छा न करे, तो उसका बार-बार उपजाप करे।

ततः सत्त्रिभिरमित्राद्भेदयित्वा मित्रं लभेत ।

१५. तदनन्तर सत्री गुप्तचरों द्वारा अमित्र से भिन्न कर, मित्र स्वायत्त करे।

मित्रसंघस्य वा योऽन्तस्थायी तं लभेत ।

१६. अथवा जो मित्रसंघ के अन्त में स्थित हो, उसे प्राप्त करे अर्थात् अपनी ओर मिलाये।

अन्तस्थायिनि लब्धे मध्यस्थायिनो भिद्यन्ते ।

१७. अन्तस्थायी के वश में होने पर, मध्यस्थायी भिन्न हो जाते हैं।

मध्यस्थायिनं वा लभेत ।

१८. अथवा मध्यस्थायी को वश में करे।

पादटिप्पणी :

११. (१) परमिश्रा : शत्रु मिश्रित आपदा। द्र० ७:१४:२८, ९:६:७३, ९:७:२८, गण० ३:८०।

पाठभेद :

'सन्धिः' का तंजौर में 'सिन्धिः' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सिद्धिः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) सुकर : आसान, सरल। द्र० ७:१३:१७।

पादटिप्पणी :

१४. (१) उपजाप : गुप्त रूप से प्रोत्साहित करना। द्र० १:१०:७,११, १:१०:३,५ १:१४:६।

पाठभेद :

'मित्र संघस्य' का श्रीमूल में 'मित्रामित्रसंघस्य' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) मित्रसंघस्य : मित्रों का संघ।

(२) अन्तस्थायी : सीमा पर स्थित। गण० ३:८०।

पादटिप्पणी :

१७. (१) अन्तस्थायी : सीमा पर स्थित। द्र० ९:२:१६,१९।

(२) मध्यस्थायि : बीच में स्थित। द्र० ९:६:१९, गण० ३:८०।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मध्यस्थायिनि लब्धे नान्तस्थायिनः संहन्यन्ते ।

१९. मध्यस्थायी के वश में होने पर, अन्तस्थायी संघटित नहीं रहते ।

यथा चैषामाश्रयभेदस्तानुपायान् प्रयुञ्जीत ।

२०. जिस प्रकार इनका आश्रय भेद हो, उन उपायों का प्रयोग करे ।

धार्मिकं[1] जातिकुलश्रुत[2]वृत्त[3]स्तवेन संबन्धेन पूर्वेषां त्रैकाल्यो[4]पकारानपकाराभ्यां वा सान्त्व[5]येत् ।

२१. धार्मिक राजा को उसके जाति, कुल, श्रुत एवं वृत्त की स्तुति सम्बन्ध से अथवा उसके पूर्वजों के त्रैकालिक उपकार और अपकार कर्तृत्व द्वारा शान्त करे ।

निवृत्तोत्साहं[1] विग्रह[2]श्रान्तं[3] प्रतिहतोपायं क्षय[4]व्यया[5]भ्यां प्रवासे[6]न चोपतप्तं [7]शौचेनान्यं लिप्समानमन्य[8]स्माद्वा शङ्क[9]मानं मैत्रीप्रधानं[10] वा [11]कल्याणबुद्धिं साम्ना साधयेत् ।

२२. निवृत्तोत्साही, विग्रहशान्त, प्रतिहतोपाय, क्षय, व्यय एवं प्रवास से उपतप्त, शौचाचार से अन्य को मित्र बनाने की इच्छावाले, अन्य से शंकाशील अथवा मैत्रीप्रधान कल्याण बुद्धि नृपति के प्रति साम नीति का प्रयोग करे ।

पाठभेद :

'स्थायिनि लब्धे' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्थापिनि वा लब्धे' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) आश्रय : संघ के प्रमुख से तात्पर्य है । द्र० १:१६:३४, ब्रह्मा० ४:७५:२७ ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) धार्मिक : धार्मिक राजा ।

(२) श्रुतविधि : ज्ञान ।

(३) वृत्तं : आचरण ।

(४) त्रैकाल : तीनों काल अर्थात् प्रातः, मध्याह्न, सायं । (१) भूत, वर्तमान, भविष्य ।

(५) सान्त्वं : द्र० २:१०:२४,३४ ।

पाठभेद :

'विग्रहश्रान्तंप्रति' का तंजौर में 'विग्रहश्रान्तः प्रति' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बिग्रहशान्तप्रति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) उत्साह : द्र० १:१७:२८, १:१९:१६, ६:१:५, ६:२:३३, ९:७:९ ।

(२) विग्रह : युद्ध ।

(३) श्रान्त : थका ।

(४) क्षय : ह्रास ।

(५) व्यय : द्र० ७:२:२, ७:१:२७, ९:४:२ ।

(६) प्रवास : द्र० १:१४:२, १:१८:१५, ७:७:१३, ७:८:२, ९:७:५ ।

(७) शौच : द्र० १:८:१,२६, १:१०:१, ७:५:२८ ।

(८) अन्य स्माद्वा : अथवा दूसरे से ।

(९) शंकमान : शंकित, शंकाशील ।

(१०) प्रधान : मित्रता भावना युक्त ।

(११) कल्याण बुद्धि : द्र० ७:६:२१, ७:७:९, १४, ९:६:२२ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लुब्धं[1] क्षीणं[2] वा तपस्वि[3]मुख्या[4]वस्थापना[5]पूर्वं दानेन साधयेत् ।

२३. लुब्ध अथवा क्षीण को तपस्वीजनों और प्रमुखजनों के सान्निध्य में दान द्वारा वशवर्ती बनाये ।

तत्पञ्चविधम्—देयविसर्गो[1] गृही[2]तानुवर्तनमात्तप्र[3]तिदानं स्वद्रव्यदानम[4]पूर्वं परस्वेषु[5] स्वयंग्राहदानं च ।

२४. वह दान पाँच प्रकार का होता है—देयविसर्ग, गृहीतानुवर्तन, आत्तप्रतिदान, स्वद्रव्य का नवीन दान, शत्रुधन में स्वयं जो ग्रहण कर लिया उसका दान ।

इति दानकर्म ।

२५. दान कर्म समाप्त ।

परस्परद्वेष[1]वैर[2]भूमि[3]हरणशङ्कितमतोऽन्यतमेन भेदयेत् ।

२६. परस्पर द्वेष, बैर एवं भूमिहरण की शंका करने वाले को इनमें से किसी एक द्वारा भिन्न करे ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) लुब्ध : आसक्त, राग, आकांक्षा ।

(२) क्षीण : धन हीन, दुर्बल, आय प्राप्त ।

(३) तपस्वी : तप करने वाला । द्र० ७:७:८, अग्नि० २२५:२५, मत्स्य० २१५:६१ ।

(४) मुख्या : द्र० १:१२:२५, १:१६:७, १:१८:१३, ५:६:७ ।

(५) अवस्थापन : जमानत के सम्बन्ध में प्रयुक्त हुआ है ।

पादटिप्पणी :

दान पाँच प्रकार का होता है यथा—

२४. (१) देयविसर्ग : स्वयं ली हुई भूमि में ब्राह्मण आदि के लिए निकाला हुआ कुछ भाग । गण० ३:८० ।

(२) गृहीतानुवर्तन : पूर्वजों द्वारा प्राप्त भूमि को भोगने की सुविधा देना । गण० ३:८१ ।

(३) आत्तप्रतिदान : गृहीत भूमि को उपयोग के लिए वापस देना । गण० ३:८१ ।

(४) अपूर्व : अपनी किसी नवीन वस्तु का दान ।

(५) परस्वेषु : लूटे धन को लूटने वालों को दे देना ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) परस्परद्वेष : तात्कालिक विरोधी भाव । द्र० ३:३:१६ ।

(२) वैर : चिरकालीन विरोधी भाव । गण० ३:१४५ ।

(३) भूमिहरण : भूमि लेने से तात्पर्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

[1]भीरुं वा [2]प्रतिघातेन 'कृतसंधिरेष त्वयि कर्म करिष्यति, मित्रस्य [3]निःसृष्टं, संधौ वा नाभ्यन्तरः' इति ।

२७. भीरु को प्रतिघात के भय से भिन्न करे अथवा इस प्रकार कहकर 'सन्धि करके यह तुम्हारे ऊपर अभियोग करेगा, मित्र के पास दूत प्रेषित किया है अथवा सन्धि होने पर, तुम अन्तरंग नहीं रहोगे' ।

यस्य वा स्वदेशादन्यदेशाद्वा पण्यानि [1]पण्यागारतयाऽऽगच्छेयुः तानि अस्य 'यातव्या[4]ल्लब्धानि' इति सात्त्रि[3]णश्चारये[2]युः ।

२८. अथवा जिसके अपने देश या अन्य देश से पण्यागार के लिए जो पण्य आयें, उन्हें इसके "यातव्य से प्राप्त हुए हैं" ऐसा सत्त्री प्रचार करें ।

बहुलीभूते शासनमभित्य[1]क्तेनप्रेषयेत् 'एतत्ते पण्यं पण्यागा[2]रं वा मया ते प्रेषितम्, सामवा[3]यिकेषु विक्रमस्व अपगच्छ वा, ततः पणशेषमवाप्स्यसि' इति ।

२९. इस प्रकार प्रचुर मिथ्याप्रचार हो जाने पर, शासन पत्र अभित्यक्त द्वारा प्रेषित करे, 'मैंने यह पण्य अथवा पण्यागार तुम्हारे लिए प्रेषित किया है, सामवायिकों पर अभियान करो, अथवा उनसे दूर हो जाओ, तदनन्तर शेषपण प्राप्त करोगे ।'

पादटिप्पणी :

२७. (१) भीरुं : कातर, कायर, डरपोक ।

(२) प्रतिघातेन : उलटे आक्रमण करना ।

(३) निसृष्ट : प्रामाणिक या अधिकृत किया हुआ । द्र० १:१६:२ ।

पाठभेद :

'यातव्याल्लब्धानि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यातव्यालब्धानि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) पण्यागार : सामान जो दान या भेंट में दिया जाता है । द्र० २:३५:१२, ७:१५:२०, ८:४:२३,२४, ९:६:२९ ।

(२) चारयेयु : समाचार फैलाना ।

(३) सत्त्रिणः : द्र० १:१०:३,५,२०, १:११:१८, ९:३:२६, गण० १:४८, ३:३५४ ।

(४) यातव्य : आक्रमण करने योग्य शत्रु । द्र० ६:२:१६, ७:१३:२१, ८:१:१, ९:१:४२,४३, गण० १:१५,१६, २:२८५ ।

पाठ भेद :

'अभित्यक्तेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभिव्यक्तेन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) अभित्यक्त : प्राण दण्ड पाया हुआ । द्र० २:५:४, ५:२:४४,५५,६५, १२:४:४, गण० ३:१६८,१६९,१९३ ।

(२) पण्यागार : माल गोदाम । द्र० २:३५:१२, ७:१५:२०, ८:४:२३,२४, ९:६:२८, १२:४:४ ।

(३) सामवायिक : संघीय अभियान में एक सदस्य । द्र० ७:४:१९, ७:५:३८, ४९, गण० २:१५, २:२५९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ततः सत्त्रिणः परेषु[१] ग्राहयेयुः[२] 'एतदरिप्रदत्तम्' इति ।

३०. तत्पश्चात् सत्त्री अन्य सामवायिकों में प्रचार करें 'यह कूट शासन शत्रु प्रदत्त है।'

शत्रुप्रख्यातं[१] वा पण्यमविज्ञातं[२] विजिगीषुं गच्छेत् ।

३१. अथवा शत्रु प्रख्यात पण्य गुप्त रूप से विजिगीषु के पास भेज दे।

तदस्य वैदेहकव्यञ्जना[१]: शत्रुमुख्येषु[२] विक्रीणीरन् ।

३२. इसके वैदेहक वेशी गुप्तचर उसे प्रमुख शत्रुओं के हाथ बिक्रीत करें।

ततः सत्त्रिणः परेषु ग्राहयेयुः[१] 'एतत्पण्यमरिप्रदत्तम्[२]' इति ।

३३. तत्पश्चात् सत्त्री अन्य शत्रुओं को रक्षापुरुषों द्वारा, उसे यह कहकर, ग्रहण कराये 'यह पण्य शत्रु प्रदत्त है'।

महापराधा[१]नर्थमानाभ्यामुपगृह्य वा शस्त्ररसाग्निभिरमित्रे प्रणिदध्यात् ।

३४. अथवा महापराधी अमात्यादि को अर्थ-मान से प्रपूजित कर, शस्त्र, रस एवं अग्नि से शत्रु पर, अभियान के लिए प्रेषित करे।

अथैकम[१]मात्यं निष्पातयेत्[२] ।

३५. प्रारम्भ में एक अमात्य को उक्त प्रकार से प्रेषित करे।

पादटिप्पणी :

३०. (१) परेषु : दूसरे अर्थात् शत्रु से तात्पर्य है।

(२) ग्राह : ग्रहण करना। द्र० १:२१:२१।

पादटिप्पणी :

३१. (१) प्रख्यात : प्रसिद्ध।

(२) अविज्ञात : वे जाना समझा या अस्पष्ट।

पादटिप्पणी :

३२. (१) वैदेहक व्यंजन : व्यापारी वेष धारण किए हुए गुप्तचर। द्र० ७:१७:४३, ४६, गण० १:५२,५३, ३:१८७।

(२) शत्रुमुख्य : शत्रु के मुख्य सरदार। द्र० १:१२:२५, १:१६:७, १:१८:१३, ५:६:७, ९:६:२३।

पादटिप्पणी :

३३. (१) ग्राहयेयु : द्र० ९:६:३०।

(२) अरिप्रदत्तम् : द्र० ६:३:३२।

पाठभेद :

'अमित्रेप्रणि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अमित्रेणप्रणि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३४. (१) महापराध : द्र० ९:३:१४।

पादटिप्पणी :

३५. (१) एकममात्यं : एक अमात्य। द्र० १३:३:११-१४।

(२) निष्पात : भाग जाना, अवसरण, पलायन, भगोड़ा बनाना। द्र० ३:१:३३,४७।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तस्य पुत्रदारमुपगृह्य रात्रौ हतमिति ख्यापयेत्[1] ।

३६. उसके स्त्री-पुत्र को गुप्त रूप से सुरक्षित कर, रात्रि में (राजा द्वारा) मार डाले गये, ऐसी प्रसिद्धि करा दे।

अथामात्यः शत्रोस्तानेकैकशः[1] प्ररूपयेत्[2] ।

३७. वह अमात्य एक-एक करके, उन (प्रेषित) अमात्यों को शत्रु से परिचित कराये।

ते चेद्यथोक्तं कुर्युर्न चैनान् ग्राहयेत्[1] ।

३८. यदि वे अमात्य कथनानुसार कर दें, तो उन्हें बन्दी न बनवाये।

अशक्तिमतो वा ग्राहयेत् ।

३९. अथवा उनके उक्तकार्य में असमर्थ होने पर, बन्दी बनवा दे।

आप्त[1]भावोपगतो मुख्यादस्यात्मानं रक्षणीयं कथयेत् ।

४०. अत्यधिक विश्वस्त बनने पर, अमात्य शत्रु से कहे 'सामवायिक प्रमुख से अपनी रक्षा कीजिए।'

अथामित्र[1]शासनं[2] मुख्योपघाताय प्रेषितमुभय[3]वेतनो[4] ग्राहयेत् ।

४१. उसके अनन्तर मुख्योपघात के लिए प्रेषित अमित्रशासन को उभयवेतन भोगो उपलब्ध करा दे।

पादटिप्पणी :

३६. (१) ख्यापयेत् : प्रसिद्ध करना।

पादटिप्पणी :

३७. (१) एकैकशः : एक एक कर।

(२) प्ररुपयेत् : खोलना, निर्दिष्ट करना या दिखाना। द्र० ४:५:१८, ११:१:४९।

पादटिप्पणी :

३८. (१) ग्राहयेत् : सूत्र ३८-३९ प्रक्षिप्त प्रतीत होता है।

पादटिप्पणी :

४०. (१) आप्त : विश्वासपात्र। द्र० १:२१:१८, भविष्य० १:१३:१४, अग्नि० १६९:३५।

पाठभेद :

'शासनंमुख्योप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शासनमुख्यायोप' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४१. (१) अमित्र : शत्रु।

(२) शासन : आज्ञा। द्र० १:१६:६,२२,२८, २:१०:१, २, २:२८:२०, १२:३:१३, गण० १:६,१६।

(३) उभयवेतन : दोनों तरफ वेतन लेने वाले। द्र० १:१२:१८,१९, १:१६:२४, ७:१४:६,८, गण० १:६०।

(४) ग्राहयेत् : शत्रु को पकड़ने से तात्पर्य है। द्र० १:१२:१८-१९।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्साहशक्तिमतो वा प्रेषयेत् 'अमुष्यं राज्यं गृहाण, यथास्थितो नः संधिः' इति ।

४२. अथवा उत्साह शक्ति युक्त किसी सामवायिक को इस आशय का कूट आदेश भेजे 'उसका राज्य ग्रहण कर लो, हमारी सन्धि वर्तमान नही है' ।

ततः सत्त्रिणः परेषु ग्राहयेयुः ।

४३. तदनन्तर सत्त्री अन्य सामवायिकों को सूचित कर दें ।

एकस्य स्कन्धावारं वीवधमासारं वा घातयेयुः ।

४४. सत्त्री किसी एक सामवायिक के स्कन्धावार, वीवध अथवा आसार को विनष्ट कर दें ।

इतरेषु मैत्रीं ब्रुवाणाः 'त्वमेतेषां घातयितव्यः' इत्युपजपेयुः ।

४५. अन्यों के साथ मैत्री का कथन करते हुए, सत्त्री उसका इस प्रकार उपजाप करें—'ये सामवायिक तुम्हारा नाश करेंगे' ।

यस्य वा प्रवीरपुरुषो हस्ती हयो वा म्रियेत गूढपुरुषैर्हन्येत ह्रियेत वा सत्त्रिणः परस्परोपहतं ब्रूयुः ।

४६. अथवा जिसका प्रवीर पुरुष, हाथी अथवा अश्व मरे या गूढ पुरुषों द्वारा मारा जाय या अपहृत किया जाय, तो उसे सत्त्री सामवायिकों में एक दूसरे द्वारा उपहृत किया गया कहें ।

पाठभेद :

'नः' का न्यायचन्द्रिका तथा श्रीमूल में 'न' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) उत्साह : द्र० ६:१:५, ६:२:३३, गण० ३:४३ ।

(२) शक्तिमतो : सामर्थ्ययुक्त ।

(३) अमुष्य : ले लेना या ऐसा करे ।

(४) यथास्थिति : जैसा है वैसे ही या यथावत् ।

पाठभेद :

'वीवधमासारं का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विविधमासारं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) स्कन्धावारं : सेनानिवेश, सैनिक छावनी । द्र० १०:१:१, गण० १:२०, ३:११३, २०१ ।

(२) वीवध : अन्न की पूर्ति से तात्पर्य है । द्र० ७:६:८, ७:७:२, ८:५:१४, १०:२:६, गण० ३:१०७, १२३, १७१, २०० ।

(३) आसार : द्र० ६:२:१८, १:१६:२९, ८:१:५४ ।

(४) घातयेयु : नष्ट करना । गण० ३:१३५ ।

पादटिप्पणी :

४५. इतरेषु मैत्री : दूसरे से मैत्री भाव से ।

पादटिप्पणी :

४६. ह्रियेत् : हरण किया गया । द्र० ६:१:६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ततः शासनमभिशस्तस्य[२] प्रेषयेत् 'भूयः कुरु ततः पणशेषमवाप्स्यसि' इति ।

४९. तदन्तर अभिशस्त के पास इस प्रकार का पत्र प्रेषित करे 'पुनः ऐसा करो, तत्पश्चात् शेष पण प्राप्त करोगे' ।

तदुभयवेतना ग्राहयेयुः ।

४८. इस पत्र को उभयवेतन भोगी ग्रहण करायें ।

[१]भिन्नेष्वन्यतमं लभेत ।

४९. सामवायिकों में भेद उत्पन्न हो जाने पर, उनमें किसी एक को वशीकृत करे ।

तेन सेनापतिकुमारदण्ड[१]चारिणो व्याख्याताः ।

५०. उक्त प्रकार से सेनापति, कुमार, दण्डचारियों के भेद की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

संधिकं च भेदं प्रयुं[२]ञ्जीत ।

५१. यहाँ सन्धिक भेद का प्रयोग भी किया जाय ।

इति भेदकर्म ।

५२. भेदकर्म समाप्त ।

पाठभेद :

'ततः' का तंजौर में 'तः' तथा तेलगू अनुप्रति- में 'तैः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) शासनं : पत्र या आदेश या आज्ञा पत्र । द्र० ९:६:४१, गण० ३:१९३ ।

(२) अभिशस्तस्य : कलंकित, अपमानित, शापित ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) उभयवेतन : द्र० १:१२:१८, १९, १:१६:२४, ७:१४:६,८, ९:६:४१, गण० १:६० ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) भिन्ने : अलग करने पर ।

पादटिप्पणी :

५०. (१) दण्डचारिणः : सैन्यचारी प्रमुखगण। सेना के अधिकार । गण० ३:१९३ ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) संधिकंचभेदं : अधिकरण ११:१ ।

(२) प्रयुञ्जीत : उपयोग करना या बनाना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तीक्ष्णमुत्साहिनं व्यसनिनं स्थितशत्रुं वा गूढपुरुषाः शस्त्राग्निरसादिभिः साधयेयुः, सौकर्यतो वा तेषामन्यतमः ।

५३. तीक्ष्ण, उत्साही, व्यसनी अथवा दुर्गादियुक्त शत्रु का गूढपुरुष शस्त्र, अग्नि, रसादि से बध कर दें अथवा कोई एक गूढपुरुष सुगमता से उसका वध करे।

तीक्ष्णो ह्येकः शस्त्ररसाग्निभिः साधयेत् ।

५४. एकाकी तीक्ष्ण पुरुष शस्त्र, रस एवं अग्नि से बध करे।

अयं सर्वसंदोहकर्म विशिष्टं वा करोति ।

५५. यह तीक्ष्ण गूढपुरुष समस्त गुप्तचरों द्वारा साध्य कर्म अथवा उससे भी विशिष्ट कर्म करने में सक्षम होता है।

इत्युपायचतुर्वर्गः ।

५६. समादि चतुर्वर्ग निरूपण समाप्त।

पूर्वः पूर्वश्चास्य लघिष्ठः ।

५७. उनमें पूर्व पूर्ववर्ती उपाय लघु होता है।

सान्त्वमेकगुणम् ।

५८. साम एक गुणयुक्त होता है।

पाठ भेद :

'तीक्ष्णमुत्साहिनं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तीक्ष्णंमुक्त्वाहीनं' तथा 'तेषामन्यतमः' का देवनागरी अनुप्रतिलिपि में 'तेषामन्यतमम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५३. (१) तीक्ष्ण : पैना-तीखा। द्र० १:१४:५, ९:५:१५।

(२) उत्साहित : पराक्रमी। द्र० ९:६:४२।

(३) व्यसनिनं : मद्य मृगया आदि व्यसनों से युक्त।

(४) स्थितशत्रु : दुर्ग आदि में ठहरा शत्रु। द्र० ७:१०:७, ७:१३:२२, गण० ३:८५।

(५) शस्त्राग्निरसादि : हथियार, आग, विष आदि।

(६) सौकर्य : सरलता, सुसाध्यता, सरलता। द्र० ९:६:१३।

पादटिप्पणी :

५५. (१) सर्वसंदोहकर्म : सम्पूर्ण सेना का मोबिलाइजेशन। द्र० ६:२:३८, ७:४:७, १४, ७:१३:५, ८:५:१७, १३:३:२३।

पादटिप्पणी :

५७. (१) लघिष्ठ : हलका या छोटा, लघु।

पादटिप्पणी :

५८. (१) सान्त्व : शान्त, खुश तथा आस्वस्त या सुलह या तुष्ट करना। द्र० ९:५:१०, गण० ३:७४।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दानं द्विगुणं सान्त्वपूर्वम् ।

५९. साम पूर्वक दान दो गुण वाला होता है ।

भेदस्त्रिगुणः सान्त्वदानपूर्वः ।

६०. साम-दान पूर्वक भेद तीन गुण वाला होता है ।

दण्डश्चतुर्गुणः सान्त्वदानभेदपूर्वः ।

६१. साम-दान-भेद पूर्वक दण्ड चार गुण वाला होता है ।

इत्यभियुञ्जानेषूक्तम् ।

६२. अभियुञ्जान (मित्रामित्र) नृपों के विषय में सामादि उपायों का कथन किया गया ।

स्वभूमिष्ठेषु तु त एवोपायाः ।

६३. स्वभूमिस्थित के विषय में उक्त उपाय किये जाँय ।

विशेषस्तु ।

६४. विशेष निरूपण इस प्रकार है ।

स्वभूमिनिष्ठानामन्यतमस्य पण्यागारैरभिज्ञातान् दूतमुख्यानभीक्ष्णं[2] प्रेषयेत् ।

६५. स्वभूमि स्थितों में किसी एक के पास मणिमुक्तादिकों के साथ परिचित प्रमुख दूतों को बार-बार प्रेषित करे ।

त एनं संधौ पर हिंसायां वा योजयेयुः ।

६६. वे दूत उसको सन्धि अथवा परहिंसा में योजित करें' ।

पाठभेद :

'दण्डश' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सान्त्वदण्डश्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६२. (१) अभियुञ्जान : जो आक्रमण करता है या आक्रमण कारी ।

पादटिप्पणी :

६५. (१) पण्यागार : भेट का सामान । द्र० २:३५:१५, ७:१५:२०, ८:४:२३,२४, ९:६:२८, २९ ।

(२) अभिज्ञात : अच्छी तरह परिचित या जाने हुए ।

(३) अभीक्ष्णं : दुहराया हुआ, बार-बार होने वाला, सतत, निरन्तर, अत्यधिक, बारम्बार, पुनः पुनः, लगातार, अत्यन्त, बहुत अधिक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अप्रतिपद्यमानं 'कृतो नः संधिः' इत्यावेदयेयुः ।

६७. सन्धि न करने पर भी हमारे साथ सन्धि कर ली है, ऐसा उसके विषय में मिथ्या प्रचार करें।

तमितरेषामुभयवेतनाः संक्रामयेयुः 'अयं वो राजा दुष्टः' इति ।

६८. उभय वेतनभोगी गुप्तचर इस मिथ्यासन्धि को अन्य मित्र-अमित्रों में इस प्रकार प्रसारित करें 'आप लोगों में यह राजा दुष्ट है'।

यस्य वा यस्माद्भयं वैरं द्वेषो वा तं तस्माद्भेदयेयुः 'अयं ते शत्रुणा संधत्ते, पुरा त्वामतिसंधत्ते, क्षिप्रतरं संधीयस्व, निग्रहे चास्य प्रयतस्व' इति ।

६९. जिसे जिससे भय,वैर अथवा द्वेष हो, उसे उससे यह कहकर, भिन्न करें 'यह तुम्हारे शत्रु के साथ सन्धि कर रहा है, पहले तुम्हें प्रतारित करेगा, शीघ्र सन्धि करो और इसे निग्रह में करने का प्रयत्न करो'।

आवाहविवाहाभ्यां वा कृत्वा संयोगमसंयुक्तान् भेदयेत् ।

७०. आवाह-विवाह के द्वारा सम्बन्ध स्थापित कर, सम्बन्ध रहित नृपों को इससे भिन्न करे।

पाठभेद :

'न संधिः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नः सिद्धिः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६७. (१) कृतो नः संधि : हमने संधि कर ली।

पादटिप्पणी :

६८. (१) दुष्टः : निकम्मा, दोषयुक्त, सदोष, विश्वासघाती।

पाठभेद :

'वैरं द्वेषो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वैरद्वेषो' तथा 'त्वामतिसंधत्ते' का देवनागरी अनुप्रतिलिपि में 'त्वामिविसंधत्ते' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६९. (१) संधत्ते : सन्धि करना।

(२) पुरा : पहले, पूर्व काल में। मनु० १:११९।

(३) क्षिप्रं : तेज, शीघ्रगामी। द्र० ७:९:५, मनु० ३:१७९।

पादटिप्पणी :

७०. (१) आवाह : कन्या ग्रहण। द्र० ७:१५:२२, गण० २:३४१।

(२) विवाह : कन्याग्रहण आठ प्रकार का होता है—(१) आर्ष, (२) ब्राह्म, (३) दैव, (४) प्राजापत्य, (५) आसुर, (६) गान्धर्व, (७) राक्षस, (८) पैशाच। मनु० ३:२१, याज्ञ० १:५८, ६१।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामन्त[1]ाटविकतत्कुलीना[2]परुद्धैश्चैषां राज्यानि घातयेत्, सार्थ[3]व्रजा[4]टवी[5]र्वा, दण्डं[6] वाऽभिसृतम्[7] ।

७१. सामन्तों, आटविकों और कुलोत्पन्न अपरुद्ध पुत्रादिकों द्वारा इनके सार्थ, व्रज, अटवी और रक्षक दण्ड (सेना) की क्षति करे ।

परस्परापाश्रयाश्चैषां जाति[1]संघाश्छिद्रेषु प्रहरेयुः गूढाश्चाग्निरसशस्त्रेण ।

७२. परस्पर भिन्न जाति संघ उनके दुर्बल स्थानों पर, प्रहार करें, और गूढपुरुष अग्नि, रस एवं शस्त्र से उनके छिद्रों पर प्रहार करें ।

वीतंस[1]गिलै[2]वंच्चारीन् योगैराचरितैः शठैः[3] ।
घातयेत्परमिश्रा[4]यां विश्वासेनामिषेण[5] च ॥

७ . परमिश्रा आपदा में कपटवृत्ति नृप वीतंस-गिल सदृश कपट उपायों से विश्वास उत्पन्न कर और सारपण्य प्रदान कर. या किसी बहाने से शत्रुओं को वशीभूत करे (या नष्ट करे) ।

पाठभेद :

'राज्यानि घातयेत्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'राज्यान्निघात' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'राज्यान्निर्घात' तथा 'व्रजाटवीर्वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्रजाटवीभिर्वा' पाठभेद मिलता हैं ।

पादटिप्पणी :

७१. (१) सामन्त : पड़ोसी या करद राजा । द्र० ३:९:३,१०, ३:८:१, ३:९:२४, ३:२०:१५, ७:१३:२४, ७:१८:२९ ।

(२) तत्कुलीन : द्र० १:१०:३ ।

(३) सार्थ : व्यापारिक वस्तुओं से लदे हुए पशुओं का कारवाँ, समुदाय । द्र० ४:५:१५ ।

(४) व्रज : गाय, भैंस आदि पशुधन । गण० ३:११३ ।

(५) अटवी : द्रव्यादि वन ।

(६) दण्ड : सेना ।

(७) अभिसृतम् : सहायता करने के लिए आना । गण० ३:८७, १३५ ।

पाठभेद :

'संघाश्छिद्रेषु' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'संघच्छिद्रेषु' तथा देवनागरी अनुप्रतिलिपि 'संघाच्छिद्रेषु पाठभेद मिलता है ।'

पादटिप्पणी :

७२. (१) जातिसंघ : जातियों का संघ, संघ वृत्त नामक अधिकरण में इनका निरूपण किया गया है । द्र० ११:१:४,५ ।

पाठभेद :

'वीतंसगिल' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पीतंसगल' तथा श्रीमूलमें 'वितंसगिल' तथा न्यायचन्द्रिका में 'पीतंसगिल' तथा 'शठः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शठम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७३. (१) वीतंस : जाल, पक्षी के विश्वासार्थ पक्षी के चित्र युक्त शरीराच्छादन वस्त्र या जाल ।

(२) गिल : भक्षक, निगलने वाला । द्र० ७:८:१-४, ७:१४:१-११, गण० ३:८८ ।

(३) शठ : गुप्त कार्य करने वाले विजिगीषु राजा ।

(४) अमिश्र : द्र० ९:६:८,९ ।

(५) मिष : बहाना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे दूष्यशत्रुसंयुक्ताः (आपदः) षष्ठोऽध्यायः । आदितः सप्तविंशतिशततमः ।

नवम अधिकरण के अन्तर्गत अभियास्यत्कर्म में दूष्य शत्रु संयुक्त (आपद्) सम्बद्ध षष्ठ अध्याय समाप्त ।

आदि से एक सौ सताइसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रेऽभियास्यत्कर्मणि नवमाधिकरणे षष्ठोऽध्यायः दूष्यशत्रुसंयुक्ताः आदितः सप्तविंशतिशततमः ॥

मैसूर संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि दूष्यशत्रुसंयुक्ता षष्ठोऽध्यायः आदितः सप्तविंशतिशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमाधिकरणे षष्ठोऽध्यायः दूष्यशत्रुसंयुक्ता, आदितः सप्तविंशतिशततमोऽध्यायः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे दूष्यशत्रुसंयुक्ताः षष्ठोऽध्यायः ॥६॥ आदितः सप्तविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१२७॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ७

[पञ्चचत्वारिंशच्छततमं प्रकरणम्—अर्थानर्थसंशययुक्ताः (आपदः); षट्चत्वारिंशच्छततमं प्रकरणम्—तासामुपायविकल्पजाः सिद्धयः]

एक सौ पैतालीसवाँ प्रकरण—अर्थानर्थसंशययुक्त (आपदायें) एक सौ छियालीसवाँ प्रकरण—उनके प्रतीकार के उपाय विकल्प से उत्पन्न सिद्धियां

कामादिरुत्सेकः स्वाः प्रकृतीः कोपयति, अपनयो बाह्याः ।

१. कामादि उत्सेक अपनी प्रकृतियों को कुपित करता है, अपनय (नीतिच्युति) बाह्यों को।

तदुभयमासुरी वृत्तिः ।

२. वे दोनों आसुरी वृत्ति हैं।

स्वजनविकारः कोपः ।

३. स्वजन विकार कोप है।

परवृद्धिहेतुषु आपदर्थोऽनर्थः संशय इति ।

४. शत्रुवृद्धि का हेतु उपस्थित होने पर, वह आपदा अर्थ, अनर्थ एवं संशय भेद से तीन प्रकार की होती है।

प्रकरण १४५, सूत्र १–६६; प्रकरण १४६, सूत्र ६७–८४।

(१) अर्थ : हिरण्य, भूमि लाभ।

(२) अनर्थ : उनके तथा शरीर के नाश या मृति या हानि को अनर्थ कहते हैं।

(३) संशय : अर्थ और अनर्थ विषयक सन्देह अनिश्चितता को संशय कहते हैं।

पादटिप्पणी :

१. (१) कामादिरुत्सेक : द्र० १:१५:११, १:६:१।

(२) अपनय : दुर्नीति, अपकार। द्र० १:२:११, ६:२:६,११, ८:१:२, ९:५:१, गण० १:२७, २:२३, ३:७३।

(३) बाह्या : विदेशी घटक।

पादटिप्पणी :

२. (१) आसुरीवृत्ति : कामादिअपनय।

पाददिप्पणी :

३. (१) स्वजन : अपने लोग।

(२) विकार : परिवर्तन। पंच० १:४४।

(३) कोप : विद्रोह। द्र० १:१३:२०, ९:४:८।

पादटिप्पणी :

४. (१) परवृद्धि : शत्रु की बलवत्ता–समृद्धि।

(२) आपद : अपत्तियाँ, खतरा।

(३) अर्थ : द्र० १:७:६, गण० ३:८९।

(४) अनर्थ : द्र० १:१७:३३, १:७:२, २:३५:१०, ७:५:२३, गण० ३:८९।

(५) संशय : अनिश्चितता, सन्देह। द्र० ९:७:८, गण० ३:९०।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

योऽर्थः[1] शत्रुवृद्धिम[2]प्राप्तः करोति, प्राप्तः प्रत्यादेयः[3] परेषां भवति, प्राप्यमाणो वा क्षयव्ययोदयो भवति, स भवत्यापदर्थः[4] ।

५. जो अप्राप्त अर्थ शत्रुवृद्धि करता है, और प्राप्त होने पर, शत्रु द्वारा प्रत्यादेय होता है, प्राप्यमाण होते हुए भी प्रचुर क्षय-व्ययकारी होता है, वह आपदर्थ है।

यथा सामन्तो[1]नामामिषभूतः[2] सामन्तव्यसन[3]जो लाभः, शत्रुप्रार्थितो वा स्वभावाधिगम्यो लाभः, पश्चात्कोपेन[4] पार्ष्णिग्राहेण वा विगृहीतुः पुरस्ताल्लाभः; मित्रोच्छेदेन संधिव्यतिक्रमेण वा मण्डलाविरुद्धो लाभः इत्यापदर्थः ।

६. यथा अनेक सामन्तों का भोग्य, जो किसी एक को प्राप्त हो, सामन्त के व्यसन से प्राप्त लाभ, स्वभावाधिगम्य शत्रुप्रार्थित लाभ, पश्चात् कोप अथवा पार्ष्णिग्राह से बाधित, यातव्य से प्राप्त लाभ, मित्रोच्छेद अथवा सन्धिभङ्ग से प्राप्त, मण्डलविरुद्ध लाभ, आपदर्थ है।

स्वतः परतो[1] वा भयोत्पत्तिरित्यनर्थः[2] ।

७. अपने अथवा अन्य से प्राप्त अर्थ के कारण भयोत्पत्ति, अनर्थ आपदा है।

पाठभेद :

'अप्राप्तः' का तंजौर में 'अवाप्तः' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) योऽर्थः : यदि अर्थ बलात् ग्रहण नहीं किया गया तो शत्रु शक्तिशाली होता जायगा। न जब्त करना एक आपद हो सकता है।

(२) वृद्धि : लाभ। द्र० ७:१२:२९, गण० १:१४३, २:२३९।

(३) प्रत्यादेय : पुनः प्राप्ति, पुनः लाभ। द्र० ७:१०:२४, ८:३:५३, ९:४:२,६,५५, गण० ३:६७।

(४) आपदर्थ : अर्थ रूप आपत्तियाँ या लाभ जो खतरनाक हो सकता है।

पाठभेद :

'शत्रुप्रार्थितो' तथा 'स्वाभावाधिगम्योलाभः' का 'स्वभावादिगम्योवा लाभः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६. (१) सामन्त : द्र० १:२१:२४, ९:३:२४, गण० १:४८।

(२) आमिषभूत : द्र० उपभोग या लाभ।

(३) व्यसन : द्र० १:१४:४, गण० ३:२१

(४) पश्चात् कोप : द्र० ९:१:१, गण० १:१९

पादटिप्पणी :

७. (१) पर : शत्रु।

(२) अनर्थ : खतरनाक, हानिकारक। द्र० गण० ३:८९।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तयोः अर्थो न वेति, अनर्थो न वेति अर्थोऽनर्थ इति, अनर्थोऽर्थ इति संशयः ।

८. अर्थ और अनर्थ में अर्थ है अथवा नहीं, अनर्थ है अथवा नहीं, अर्थ है या अनर्थ, अनर्थ है या अर्थ यह, चार प्रकार का संशय है ।

शत्रुमित्रमुत्साहयितुमर्थो न वेति संशयः ।

९. शत्रुमित्र को उत्साहित करने में अर्थ है या नहीं, इस प्रकार का प्रथम संशय होता है ।

शत्रुबलमर्थमानाभ्यामावाहयितुमनर्थो न वेति संशयः ।

१०. अर्थ एवं सम्मान द्वारा शत्रुबल को आहूत करने में अनर्थ होगा या नहीं, इस प्रक द्वितोय संशय होता है ।

बलवत्सामन्तां भूमिमादातुमर्थोऽनर्थ इति संशयः ।

११. बलवान् सामन्त वाली भूमिग्रहण में अर्थ होगा या अनर्थ, इस प्रकार का तृतीय संश होता है ।

ज्यायसा संभूय यानमनर्थोऽर्थ इति संशयः ।

१२. बलवान् के साथ मिलकर, अभियान करने में अनर्थ होगा या अर्थ, इस प्रकार का चतुर्थ संशय होता है ।

पादटिप्पणी :

८. संशय चार प्रकार के होते हैं ।

(१) अर्थ : यह अर्थ है या नहीं अर्थात् उसके भाव तथा अभाव सम्बन्धी सन्देह ।

(२) अनर्थ : अनर्थ का भाव तथा अभाव सम्बन्धी सन्देह ।

(३) अर्थोऽनर्थ : अर्थ तथा अनर्थ ।

(४) अनर्थोऽर्थ : अनर्थ या अर्थ ।

पाठभेद :

'शत्रुमित्रम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शत्रुममित्रम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) उत्साह : द्र० ६:१:५, ९:६:४१, गण० ३:४३ ।

पादटिप्पणी :

१०. शत्रुबल : शत्रु की सेना । द्र० ९:१:२०, गण० ३:५३ ।

(२) अर्थ : धन ।

(३) मान : प्रतिष्ठा ।

(४) आवाहन : बुलाना, आमन्त्रित करना, आवाहन करना । द्र० ७:१५:२२, ९:६:७०, गण० २:३४१ ।

(५) अनर्थ : शत्रु की सेना को बुलाना अनर्थ है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) अर्थोऽनर्थ : भूमि लेना अर्थ है किन्तु बलवान पड़ोसी के रहने पर, यह अनर्थ हो सकता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) ज्यायस : श्रेष्ठ, योग्य । द्र० ७:५, ४०, मनु० ४:८, ३:१३७ ।

(२) यान : अभियान या प्रयास या मार्ग ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेषामर्थसंशयमुपगच्छेत् ।

१३. उनमें अर्थकारी संशय स्वीकार करे।

अर्थोऽर्थानुबन्धः, अर्थो निरनुबन्धः, अर्थोऽनर्थानुबन्धः, अनर्थोऽर्थानुबन्धः, अनर्थो निरनुबन्धः, अनर्थोऽनर्थानुबन्धः इत्यनुबन्धषड्वर्गः ।

१४. अर्थानर्थ प्रत्येक के योग एवं अयोग के भेद से छः प्रकार का होता है—अर्थानुबन्ध अर्थ, निरनुबन्ध अर्थ, अनर्थानुबन्ध अर्थ, अर्थानुबन्ध अनर्थ, निरनुबन्ध अनर्थ, अनर्थानुबन्ध अनर्थ, यह अनुबन्ध षड्वर्ग कहा जाता है।

शत्रुमुत्पाद्य पार्ष्णिग्राहादानमर्थोऽर्थानुबन्धः ।

१५. शत्रु का उत्पाटनकर, पार्ष्णिग्राह को वश में करना, अर्थानुबन्ध अर्थ है।

उदासीनस्य दण्डानुग्रहः फलेन अर्थो निरनुबन्धः ।

१६. धन प्राप्तकर, उदासीन को सैन्य प्रदान करना, निरनुबन्ध अर्थ है।

परस्यान्तरुच्छेदनमर्थोऽनर्थानुबन्धः ।

१७. शत्रु के अन्तर्धि (मध्यस्थ) का उच्छेदन, अनर्थानुबन्ध अर्थ है।

पाठभेद :

'अनुबन्धषड्वर्गः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अनर्थषड्वर्गः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१४. (१) अनुबन्ध : परिणाम, फल। मनु० ८:१२६।

(२) अनुबन्ध षड्वर्ग : गण० ३:९१।

(१) अर्थानुबन्ध : द्र० ९:७:१५।

(२) अर्थोनिरनुबन्ध : द्र० ९:७:१६।

(३) अर्थो अनर्थानुबन्ध : द्र० ९:७:१७।

(४) अनर्थो अर्थानुबन्ध : द्र० ९:७:१८।

(५) अनर्थो निरनुबन्ध : द्र० ९:७:१९।

(६) अनर्थो अर्थानुबन्ध : द्र० ९:७:२०।

पादटिप्पणी :

१५. (१) पार्ष्णिग्राह : पृष्ठ भाग का शत्रु। द्र० ६:२:१८, ७:११:३९, ७:१३:२०, गण० २:२३२।

पाठभेद

'अनुग्रहः फलेन' का तंजौर में 'नुग्रहा फलेन' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नुग्रहफलेन' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) उदासीन : निरपेक्ष, द्र० ४:१३:१७, ६:२:२२, ७:९:४४, ७:१२:२८, गण० २:३५९, ३:१०८।

(२) दण्डानुग्रह : सेना से सहायता।

(३) फल : पारितोषिक, उपायन, परिणय।

पादटिप्पणी :

१७. (१) अन्तर : अन्तर्धि, बफर राजा या राज्य या मध्यवर्ती राजा या राज्य। द्र० ७:१३:२५।

(२) उच्छेद : उखाड़ फेकना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शत्रुप्रतिवेशस्यानुग्रहः कोशदण्डाभ्यामनर्थोऽर्थानुबन्धः ।

१८. कोश-दण्ड से शत्रु के प्रतिवेशी की सहायता, अर्थानुबन्ध अर्थ है।

हीनशक्तिमुत्साह्य निवृत्तिरनर्थो निरनुबन्धः ।

१९. हीन शक्तिवाले नृपति को उत्साहित कर, स्वयं निवृत्त हो जाना, निरनुबन्ध अनर्थ है।

ज्यायांसमुत्थाप्य निवृत्तिरनर्थोऽनर्थानुबन्धः ।

२०. बलवान् नृपति को उत्साहित कर, स्वयं निवृत्त होना, अनर्थानुबन्ध अनर्थ है।

तेषां पूर्वः पूर्वः श्रेयानुपसंप्राप्तुम् ।

२१. उनमें पूर्व-पूर्ववर्ती स्वीकार करने में श्रेष्ठ है।

इति कार्यावस्थापनम् ।

२२. कार्य अवस्थापन समाप्त ।

समन्ततो युगपदर्थोत्पत्तिः समन्ततोऽर्थापद् भवति ।

२३. सब ओर से एक साथ अर्थोत्पत्ति समन्तोऽर्थापद् है।

सैव पार्ष्णिग्राहविगृहीतासमन्ततोऽर्थ संशयापद् भवति ।

२४. वही पार्ष्णिग्राह द्वारा विरोध युक्त हो, तो समन्ततोऽर्थसंशयापद् होती है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) प्रतिवेश : शत्रु का पड़ोसी। द्र० ३:४:३, गण० २:३६१ ।

(२) कोश : धन । द्र० ८:१:५, ९:४:८ ।

(३) दण्ड : सेना ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) ज्यायान् : शक्तिशाली, प्रबल, श्रेय, द्र० ६:३:३५, ९:७:१२ ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) पूर्व : पहले का ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) कार्य : उद्यम, उद्योग । गण० ३:९३

पाठभेद :

'समन्ततोऽर्थापद्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'समन्ततोऽर्थाद्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२३. (१) समन्ततो : चारों तरफ से। चारों ओर यह आपदा है। यह नहीं निश्चय किया जा सकता कि कौन अर्थ पहले करना चाहिए। द्र० ९:७:४० ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) समन्ततो : द्र० ९:७:२३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तयोर्मित्राक्रन्दोपग्रहात्सिद्धिः ।

२५. उन दोनों में मित्र और आक्रन्द की सहायता से सिद्धि होती है।

समन्ततः शत्रुभ्यो भयोत्पत्तिः समन्ततोऽनर्थापद् भवति ।

२६. सब ओर से शत्रु से भयोत्पत्ति, समन्ततोऽनर्थापद् है।

सैव मित्रविगृहीता समन्ततोऽनर्थसंशयापद् भवति ।

२७. वही मित्र के विरोध से युक्त हो, तो समन्ततोऽनर्थ संशयापद् होती है।

तयोश्चलामित्राक्रन्दोपग्रहात्सिद्धिः; परमिश्राप्रतीकारो वा ।

२८. उन दोनों में चलशत्रु और आक्रन्द की सहायता से सिद्धि होती है अथवा परमिश्रा प्रतीकार से सिद्धि होती है।

इत लाभ इतरतो लाभ इत्युभयतोऽर्थापद्भवति ।

२९. इधर से और दूसरी ओर से भी लाभ होना, उभयतोऽर्थापद् है।

तस्यां समन्ततोऽर्थायां च लाभगुणयुक्तमर्थमादातुं यायात् ।

३०. उनमें और समन्ततोऽर्थापद् में लाभ-गुण युक्त अर्थ प्राप्त करने के लिए अभियान करे।

पादटिप्पणी :

२५. (१) आक्रन्द : आमन्त्रित मित्र या सहायक या सेना के पीछे का मित्र या मित्र राजा पर होने वाले आक्रमण को रोकने वाला राजा, विजिगीषु के पीछे का मित्र। द्र० १:१६:२९, ६:२:१८, ७:४:१६, गण० १:८१, २:२३२, ३:१९२।

(२) उपग्रह : मित्र का समर्थन प्राप्त करना। द्र० ९:७:२८।

पादटिप्पणी :

२६. (१) समन्ततोऽनर्थापद : चारो तरफ से आपदा या खतरा। द्र० ९:७:२३।

पाठ भेद :

'मित्रविगृहीता' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मित्रगृहीता' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२८. (१) चलामित्रा : गतिशील मित्र या शत्रु बिना दुर्ग का। द्र० ७:१०:९, ७:१४:१, ७:१३:७, गण० २:३२१।

(२) परमिश्रा : शत्रु में घुसा या मिला। द्र० ७:१४:२८, ९:६:११,७३, ९:६:११,१२,१३।

पादटिप्पणी :

२९. (१) उभयतो : दोनों ओर से।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तुल्ये लाभगुणे प्रधानमासन्नमनतिपातिनमूनो वा येन भवेत्तमादातुं यायात् ।

३१. समान लाभ गुण की स्थिति में प्रशस्तफलयुक्त, आसन्नवर्ती समय का विलम्ब सहने में अक्षम अथवा जिससे न्यूनता प्रतीत हो, उसे प्राप्त करने के लिए अभियान करे ।

इतोऽनर्थ इतरतोऽनर्थ इत्युभयतोऽनर्थापत् ।

३२. इधर से अनर्थ प्राप्ति दूसरी ओर से भी अनर्थ प्राप्ति हो, तो वह उभयतोऽनर्थापद् है ।

तस्यां समन्ततोऽनर्थायां च मित्रेभ्यः सिद्धिं लिप्सेत ।

३३. उसमें और समन्ततोऽनर्थापद् में मित्रों की सहायता से सिद्धि प्राप्त करे ।

मित्राभावे प्रकृतीनां लघीयस्यैकतोऽनर्थां साधयेत्, उभयतोऽनर्थां ज्यायस्य समन्ततोऽनर्थांमूलेन प्रतिकुर्यात् ।

३४. मित्रों की सहायता के अभाव में लघुतर प्रकृति त्याग द्वारा एकतोऽनर्थापद् का, प्रशस्त-तर प्रकृति त्याग द्वारा समन्ततोऽनर्थापद् का प्रतीकार करे ।

अशक्ये सर्वमुत्सृज्यापगच्छेत् ।

३५. प्रतीकार अशक्य होने पर, सर्वस्व त्यागकर, दूर जाकर, अपनी रक्षा करे ।

पाठभेद :

'नतिपातिनम्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रति-लिपि में 'नतिपातनम्' तथा 'उनो वा येन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ऊनोपायेन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) अनतिपातिनम् : अविलंब, शीघ्र, सहन करने योग्य ।

(२) यायात् : अभियान करे, मार्च, द्र० ७:१:१६ ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) उभयतोऽनर्थापत् : दोनों ओर अनर्थ या विपत्तियाँ उपस्थित होना ।

पाठभेद :

'ऽनर्थां' का तीनों बार तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ऽनर्थान्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) लघीयस्यै : छोटी, लघु ।

(२) मूले : राजधानी या केन्द्र या राज्य । गण० १:१३७, ३:१९१, ३:२१८ ।

पाठभेद :

'सर्वमुत्सृज्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'समुत्सृज्य' पाठभेद मिलता है । तथा 'अपगच्छेत' का 'अवगच्छेत' पाठभेद तेलगू अनुप्रतिलिपि में मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) उत्सृज्य : सबका त्याग करना या तिलांजलि देना ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दृष्टा हि जीवतः पुनरावृत्तिर्यथा सुयात्रोदयनाभ्याम् ।

३६. जीवित की पुनरावृत्ति (पुनरागमन) नल और वत्सराज उदयन के इतिहास से प्रमाणित है ।

इतो लाभ इतरतो राज्याभिमर्श इत्युभयतोऽर्थानर्थापद् भवति ।

३७. इधर से लाभ और दूसरी ओर से राज्याभिमर्श (राज्यपर आक्रमण) हो, तो वह उभयतोऽर्थानर्थापद् है ।

तस्यामनर्थसाधको योऽर्थस्तमादातुं यायात् ।

३८. उसमें जो अर्थ अनर्थ का प्रतीकार करने में सक्षम हो, उसे प्राप्त करने के लिए अभियान करे ।

अन्यथा हि राज्याभिमर्शं वारयेत् ।

३९. अन्यथा राज्याभिमर्श का निवारण करे ।

एतया समन्ततोऽर्थानर्थापद् व्याख्याता ।

४०. इससे समन्ततोऽर्थानर्थापद् की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

इतोऽनर्थ इतरतोऽर्थसंशय इत्युभयतोऽनर्थार्थसंशया ।

४१. एक ओर से अनर्थागम दूसरी ओर से अर्थ संशय, उभयतोऽनर्थार्थसंशयापद् है ।

तस्यां पूर्वमनर्थं साधयेत्, तत्सिद्धावर्थसंशयम् ।

४२. उसमें सर्वप्रथम अनर्थ का प्रतीकार करे, उसकी सिद्धि होने पर, अर्थ संशय दूर करे ।

एतया समन्ततोऽनर्थार्थसंशया व्याख्याता ।

४३. इससे समन्ततोऽनर्थार्थसंशयापद् की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

पाठभेद :

'जीवतः' का श्रीमूल में 'जीवता' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) सुयात्र : राजा नल । गण० ३:९४ ।

(२) उदयन : वत्सराज । गण० ३:९४ ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) वारयेत् : निवारण कर ।

पादटिप्पणी :

४०. समन्ततोऽर्थानर्थापद : द्र० ९:७:२३ ।

पाठभेद :

'ऽनर्थार्थसंशया' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नर्थार्थसंशयो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) उभयतोऽनर्थार्थसंशया : एक तरफ से अनर्थ का आगमन निश्चित हो और दूसरी तरफ से अर्थ अनिश्चितता का संशय हो ।

पाठभेद :

'व्याख्याता' का देवनागरी अनुलिपि में 'व्याख्याताः' पाठभेद मिलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इतोऽर्थ इतरतोऽनर्थसंशय इत्युभयतोऽर्थानर्थसंशयापद् ।

४४. इधर से अर्थागम और दूसरी ओर अनर्थ संशय होने पर, उभयतोऽर्थानर्थसंशयापद् होती है ।

एतया समन्ततोऽर्थानर्थसंशया व्याख्याता ।

४५. इससे समन्ततोऽर्थानर्थसंशयापद् व्याख्यायित हो गयी ।

तस्यां पूर्वां पूर्वां प्रकृतीनामनर्थसंशयान्मोक्षयितुं यतेत ।

४६. उस आपद् में पूर्व-पूर्ववर्ती प्रकृति को अनर्थ संशय से मुक्त करने का प्रयत्न करे ।

श्रेयो हि मित्रमनर्थसंशये तिष्ठन् न दण्डः, दण्डो वा न कोश इति ।

४७. अनर्थ संशय में (स्थित) मित्र अच्छा है किन्तु दण्ड नहीं, अनर्थ संशय में (स्थित) दण्ड अच्छा है किन्तु कोश नहीं ।

समग्रमोक्षणाभावे प्रकृतीनामवयवान्मोक्षयितुं यतेत ।

४८. समस्त प्रकृतियों का अनर्थ संशय दूर करना सम्भव न होने पर, उनके अवयवों को ही अनर्थ मुक्त करने का प्रयत्न करे ।

तत्र पुरुषप्रकृतीनां बहुलमनुरक्तं वा तीक्ष्णलुब्धवर्जम्, द्रव्यप्रकृतीनां सारं महोपकारं वा ।

४९. उसमें पुरुष प्रकृतियों में तीक्ष्ण और लुब्ध को छोड़कर बहुसंख्यक अथवा अनुरक्त को और द्रव्य प्रकृतियों में सार अथवा महोपकारी द्रव्य को (अनर्थ) मुक्त करे ।

पाठभेद :

'ऽर्थानर्थसंशयापद्' का तंजौर में 'नर्थार्थसंशयापद्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) संशय : द्र० ९:७:१,४, गण० ३:९० ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) प्रकृति : (१) राजा, (२) अमात्य, (३) जनपद, (४) दुर्ग, (५) कोश, (६) दण्ड, (७) मित्र ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) श्रेय : द्र० ७:९:३४ ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) प्रकृति : घटक, पुरुष रूप एवं द्रव्य-रूप । गण० २:२२४, ३:५९ ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) पुरुषप्रकृतीनां : द्र० ८:२:१३ ।
(२) तीक्ष्ण : द्र० १:१४:५, ९:५:८५, ९:६:३५ ।
(३) लुब्ध : द्र० १:१५:४ ।
(४) द्रव्यप्रकृती : द्र० ५:४:१,२, ६:८:३६ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

[1]संधिनाऽऽसनेन[2] द्वैधीभावेन[3] वा लघूनि, विपर्ययैर्[4]गुरुणि ।

५०. सन्धि, आसन अथवा द्वैधीभाव द्वारा लघु द्रव्यों को तथा उसके विपरीत विग्रह, यान एवं संश्रय द्वारा गुरु द्रव्यों को मुक्त करे ।

क्षयस्थान[2] वृद्धीनां[3] चोत्तरोत्तरं लिप्सेत ।

५१. क्षय, स्थान और वृद्धि में उत्तरोत्तर को प्राप्त करने की इच्छा करे ।

प्रतिलोम्येन[1] वा क्षयादीनामायत्यां[2] विशेषं पश्येत् ।

५२. अथवा भविष्य में विशेष लाभ की स्थिति देखकर, क्षयादि में (एक एक को) विपरीत क्रम से प्राप्त करे ।

इति देशावस्थापनम् ।

५३. देश अवस्थापन समाप्त ।

एतेन यात्रादिमध्यान्तेष्वर्थानर्थसंशयानामुपसंप्राप्तिर्व्याख्याता ।

५४. उक्त प्रकार से यात्रा के आदि, मध्य और अन्त में होने वाले अर्थानर्थसंशयों की उपसम्प्राप्ति (प्रतिक्रिया) व्याख्यायित हो गयी ।

पादटिप्पणी :

लघु गुण—

५०. (१) सन्धि : द्र० ४:६:१६, ७:१:६, ७:१२:१, २, गण० १:१६, २:२३७, ३५६ ।

(२) आसन : द्र० ७:१:८, गण० २:२३७, २५४, ३:१०७ ।

(३) द्वैधीभाव : द्र० ७:१:११, गण० २:२३ ।

(४) विपर्यय : विग्रह, यान, समाश्रय । द्र० ७:७:५ ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) क्षय : शक्ति तथा सिद्धि का ह्रास या पतन । द्र० ७:२:२, गण० १:१४३, २:२३९, ३:६७, ३:९७ ।

(२) स्थान : शक्ति तथा सिद्धि की एकावस्था, द्र० ७:६:४३, ८:५:२५, गण० १:१४२, २:२४, २५, ३:१०७, ३:१२४, ३:१४२ ।

(३) वृद्धि : शक्ति तथा सिद्धि की वृद्धि या बढ़ोत्तरी । द्र० ७:१७:२९, ९:३:५, गण० १:१४३, २:२३९ ।

पादटिप्पणी :

५२. (१) प्रतिलोम : द्र० ७:१:२०, ७:१६:१८, ८:८:१३ ।

(२) आपत्यां : भविष्य । द्र० ५:१:५७, ५:४:६, ७:६:२७, गण० ३:१०० ।

पादटिप्पणी :

५३. (१) देशावस्थापनम् : देश के लिए आपदा व्यवस्था की मुक्ति के लिए ।

पाठभेद :

'यात्रादिमध्यान्ते' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यात्रामध्यान्ते' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५४. (१) यात्रा : सैनिक अभियान या उत्सव या मेला । द्र० १:१६:२९, ३:२१:२८, ७:१५:२२, ९:१:३४, १२:५:१, १३:२:४० ।

(२) उप सम्प्राप्ति : मिलना, प्राप्त होना । गण० ३:९७ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निरन्तरयोगित्वाच्चार्थानर्थसंशयानां यात्रादावर्थः श्रेयानुपसंप्राप्तं पार्ष्णिग्राहासारप्रतिघाते क्षयव्ययप्रवासप्रत्यादेयमूलरक्षणेषु च भवति ।

५५. यात्रा के प्रारम्भ में अर्थ, अनर्थ एवं संशय के एक साथ उपस्थित होने पर, अर्थ प्राप्ति कल्याणकारी होता है, वह पार्ष्णिग्राह और आसार के प्रतिघात में तथा क्षय, व्यय, प्रवास, प्रत्यादेय एवं मूलरक्षण में सहायक होता है ।

तथाऽनर्थः संशयो वा स्वभूमिष्ठस्य विषह्यो भवति ।

५६. उसी प्रकार स्वभूमिस्थ विजिगीषु के लिए अनर्थ अथवा संशय सुखसह्य होते हैं ।

एतेन यात्रामध्येऽर्थानर्थ संशयानामुपसंप्राप्तिर्व्याख्याता ।

५७. इससे यात्रा के मध्य अर्थ, अनर्थ एवं संशय प्राप्ति के प्रतीकार की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

यात्रान्ते तु कर्शनीयमुच्छेदनीयं वा कर्शयित्वोच्छिद्य वाऽर्थः श्रेयानुपसंप्राप्तुं नानर्थः संशयो वा पराबाधभयात् ।

५८. यात्रा के अन्त में कर्शनीय अथवा उच्छेदनीय शत्रु को कृश अथवा उच्छिन्न करके, श्रेय को प्राप्त करना चाहिए, शत्रु बाधाभय के कारण अनर्थ अथवा संशय की प्राप्ति उचित नहीं होती ।

पाठभेद :

'प्रतिघातेक्षय' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतिघातक्षय' तथा 'प्रवासप्रत्यादेये मूल' का 'प्रवासप्रत्यादेयमूल' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५५. (१) पार्ष्णिग्राहसार : सेना के पृष्ठ भाग में मित्र का शत्रु ।

(२) क्षय : द्र० ७:३:२ ।

(३) व्यय : द्र० ७:२:२, ७:११:२७, ९:४:२ ।

(४) प्रवास : अभियान, मार्च । द्र० १:१४:२, १:१८:१५, ७:७:२३, ७:६:२ ।

(५) प्रत्यादेय : वापस देना । द्र० ७:१०:२४, ८:३:५३, ९:४:३:६ ।

(६) मूल : आधार, केन्द्र, राजधानी । द्र० ८:३:३६, ८:५:१० ।

पाठभेद :

'स्वभूमिष्ठस्य विषह्यो' का तंजौर में 'स्वभूमिषु स्यविषह्यो' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वभूमिषुह्यविषह्यो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५६. (१) स्वभूमिष्ठस्य : अपनी भूमि में स्थित या क्षेत्र में स्थित ।

पाठभेद

'मध्येऽर्थानर्थ' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मध्येऽनर्थं' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'यात्रान्ते' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यातृयात्रान्ते' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५८. (१) कर्शनीय : द्र० ६:२:१६, ७:१८:३२ ।

(२) उच्छेदनीय : उखाड़ने या बध करने योग्य, द्र० ६:२:१६, ७:१८:१४, ७:२०:२६,२७ ।

(३) पराबाध : द्र० १:२१:२३ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामवायिकानामपुरोगस्य तु यात्रा मध्यान्तगोऽनर्थः संशयो वा श्रेयानुपसंप्राप्तुमनिर्बन्धगामित्वात् ।

५९. सामवायिक राजाओं में अप्रधान राजा पर, अभियान के मध्य तथा अन्त में होनेवाले अनर्थ अथवा संशय का प्रतीकर श्रेष्ठ होता है, क्योंकि प्रतिबन्ध रहित, उस राजा का अन्यत्र गमन सम्भावित रहता है।

अर्थो धर्मः काम इत्यर्थत्रिवर्गः ।

६०. अर्थ, धर्म और काम अर्थ त्रिवर्ग है।

तस्य पूर्वः पूर्वः श्रेयानुपसंप्राप्तुम् ।

६१. उसमें पूर्व-पूर्ववर्ती को प्राप्त करना श्रेयस्कर होता है।

अनर्थोऽधर्मः शोक इत्यनर्थत्रिवर्गः ।

६२. अनर्थ, अधर्म और शोक अनर्थ त्रिवर्ग है।

तस्य पूर्वः पूर्वः श्रेयान् प्रतिकर्तुम् ।

६३. उसमें पूर्व-पूर्ववर्ती का (क्रमशः) प्रतीकार करना श्रेयस्कर होता है।

पाठभेद :

'अनिर्बन्ध' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अनिबन्ध' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५९. (१) सामवायिक : द्र० ७:४:१९, ७:५:३६, ४९, ७:१४:१, ९:६:३०, गण० १:१५, २:३५९।

(२) अपुरोग : जो नेता नहीं है, प्रधान रहित नेता या निदेशक। द्र० ९:४:४, २३।

(३) अनिबन्ध : प्रतिबन्ध रहित।

पादटिप्पणी :

६०. (१) अर्थ : यह सूत्र महत्त्वपूर्ण है। अर्थ को धर्म के पहले रखा गया है। द्र० १:७:६, ७, ९:७:१, गण० ३:८९।

(२) धर्म : द्र० ३:१:३८, ३९, ४०, ४३, ४४, ४५, ५०, गण० १:२७।

(३) काम : द्र० १:६:१, अग्नि० ३५३:९,१३, भाग० १:३७:३९, गण० ६:३७।

(४) अर्थ त्रिवर्ग : द्र० १:१०:१६।

पादटिप्पणी :

अनर्थ त्रिवर्ग :

६२. (१) अनर्थ : द्र० १:१७:३३, १:७:२, २:३५:१०, ७:५:२३, गण० ३:८९।

(२) अधर्म : भाग० ६:१७:४०, लिंग० १०:१२:३, वायु० मू० ५९:२७, गण० १:२७।

(३) शोक : इष्ट वस्तु अथवा प्रिय व्यक्ति का वियोग। रघु० १४:७०, गीता० १:६।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थोऽनर्थ इति, धर्मोऽधर्म इति, कामः शोक इति संशयत्रिवर्गः ।

६४. अर्थ-अनर्थ, धर्म-अधर्म एवं काम-शोक संशय त्रिवर्ग है ।

तस्योत्तरपक्षसिद्धौ पूर्वपक्षः श्रेयानुपसंप्राप्तुम् ।

६५. उसमें पूर्वपक्ष अर्थात् अनर्थ, अधर्म एवं शोक का प्रतीकार होने पर, पूर्वपक्ष अर्थात् अर्थ, धर्म एवं काम प्राप्त करना श्रेयस्कर है ।

इति कालावस्थापनम् । इत्यापदः ।

६६. काल-अवस्थापन समाप्त । आपद् निरूपण समाप्त ।

तासां सिद्धिः ।

६७. उनकी सिद्धि का निरूपण किया जा रहा है ।

पुत्रभ्रातृबन्धुषु सामदानाभ्यां सिद्धिरनुरूपा, पौरजानपददण्डमुख्येषु दानभेदाभ्यां, सामन्ताटविकेषु भेददण्डाभ्याम् ।

६८. पुत्र, भ्राता तथा बन्धुओं के विषय में साम-दान से, पौर, जानपद एवं दण्ड प्रमुखों के विषय में दान-भेद से तथा सामन्त और आटविकों के विषय में भेद-दण्ड से समुचित सिद्धि होती है ।

एषाऽनुलोमा, विपर्यये प्रतिलोमा ।

६९. यह सिद्धि क्रमनियमयुक्त होने पर, अनुलोभ तथा विपरीत होने पर प्रतिलोम कही जाती है ।

पादटिप्पणी :

६४. संशय त्रिवर्ग :
(१) अर्थोअनर्थ : गण० ३:८९ ।
(२) धर्म-अधर्म : गण० १:२७ ।
(३) काम-शोक : गण० १:३७ ।

पादटिप्पणी :

६५. (१) उत्तरपक्ष : अनर्थ, अधर्म, शोक । द्र० ८:५:१९ ।
(२) पूर्वपक्ष : धर्म, अर्थ, काम ।

पादटिप्पणी :

६६. (१) अवस्थापनम् : रखना, बिठाना, स्थापित करना ।
(२) इत्यापद : आपदा विषय समाप्त हुआ ।

पादटिप्पणी :

६७. (१) सिद्धि : पूर्णता, सफलता । गण० ३:६४, ९३ ।

पादटिप्पणी :

६८. (१) पौर : द्र० ९:६:२ ।
(२) जानपद : द्र० १:९:१ ।

पादटिप्पणी :

६९. (१) अनुलोम : अनुकूल, यथा क्रम । द्र० ४:१८:४, ७:१६:२९, ३३ ।
(२) विपर्यय : व्यतिक्रम, विपरीत । द्र० ७:७:५ ।
(३) प्रतिलोम : प्रतिकूल । द्र० ७:१६:१८, ८:१७:३३, ८:७:५२, गण० ३:१०० ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भित्रामित्रेषु व्यामिश्रो सिद्धिः ।

७०. मित्र और अमित्रों के विषय में सामादिका मिश्रित या अमिश्रित प्रयोग सिद्धिप्रद होता है।

परस्परसाधका ह्युपायाः ।

७१. उपाय परस्पर साधक होते हैं।

शत्रोः शङ्कितामत्येषु सान्त्वं शेषप्रयोगं निवर्तयति, इत्यामात्येषु दानं, संघातेषु भेदः, शक्तिमत्सु दण्ड इति ।

७२. शत्रुशंकित अमात्यों पर, प्रयुक्त साम शेष दानादि प्रयोग को, दूष्य अमात्यों पर, प्रयुक्त दान अन्य शेष प्रयोग को, संघातों (समूहवद्ध) पर प्रयुक्त भेद शेष प्रयोग को तथा शक्तिमानों पर, प्रयुक्त दण्ड शेष प्रयोग को निवृत कर देता है अर्थात् अन्य उपायों की अपेक्षा नहीं रह जाती है।

गुरुलाघवयोगाच्चापदां नियोगविकल्पसमुच्चया भवन्ति ।

७३. आपदाओं के गुरु-लाघव के अनुसार उपायों के नियोग, विकल्प एवं समुच्चय होते हैं।

'अनेनैवोपायेन नान्येन' इति नियोगः ।

७४. 'इस उपाय से सिद्धि होगी अन्य से नहीं' यह नियोग है।

पादटिप्पणी :

७०. (१) व्यामिश्र : एक साथ मिला हुआ, मिश्रित । गण० ३:१३१ ।

पादटिप्पणी :

७२. (१) सान्त्वं : द्र० ९:५:२०, ९:६:५८, गण० ३:७४ ।

(२) आमात्य : को दान से जीतेजी पकड़ते हैं।

(३) संघ : संघ के घटकों को भेद से ।

(४) शक्ति . शक्तिशाली को दण्ड से ।

पादटिप्पणी :

७३. (१) नियोग : परिभाषा । द्र० ९:७:७४, गण० २:३४४, ३:१००,२०१ ।

(२) विकल्प : परिभाषा । द्र० ९:७:७५, गण० २:३४४, ३:१०० ।

(३) समुच्चय : परिभाषा । द्र० ९:७:७६, गण० २:३४४, ३:१०० ।

पादटिप्पणी :

७४. (१) नियोग : निश्चयात्मक उपाय को नियोग कहते हैं। केवल इसी उपाय से कार्य सिद्ध होगा अन्य उपाय से नहीं। इसका अन्य अर्थ प्रवृत्त करना, प्रेरणा करना तथा नियन्त्रण नियम भी होता है। द्र० १५:१:६३, गण० २:३५४, ३:१००, ३:२०१ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'अनेन वाऽन्येन वा' इति विकल्पः ।

७५. 'इस उपाय से अथवा अन्य उपाय से सिद्धि होगी' यह विकल्प है ।

'अनेनान्येन च' इति समुच्चयः ।

७६. 'इस उपाय से और अन्य उपाय से सिद्धि होगी' यह समुच्चय है ।

तेषामेकयोगाश्चत्वारस्त्रियोगाश्च, द्वियोगाः षट्, एकश्चतुर्योगः ।

७७. सामादि उपायों में एक-एक का पृथक्-पृथक् प्रयोग करने से चार भेद, तीन-तीन के पृथक्-पृथक् प्रयोग से चार भेद, दो-दो के पृथक्-पृथक् प्रयोग से छः भेद तथा चारों का एक साथ प्रयोग करने से एक भेद होते हैं ।

इति पञ्चदशोपायाः ।

७८. इस प्रकार पन्द्रह उपाय भेद कहे गये ।

पादटिप्पणी :

७५. (१) विकल्प : इस उपाय या अन्य उपाय से काम बन सकता है । विभिन्नता, उपाय, भेदयुक्त ज्ञान । द्र० ७:६:४, गण० २:३४४, ३:१०० ।

पादटिप्पणी :

७६. (१) समुच्चय : इस उपाय के द्वारा तथा अन्य उपाय से कार्य सिद्ध हो सकता है या प्रस्तुत उपाय के अतिरिक्त और उपायों से कार्य हो सकता है । इसका अर्थ समूह, राशि । द्र० ७:१६:१७, १५:१:६, गण० २:३४४, ३:१०० ।

पादटिप्पणी :

७७. (१) चतुर्योग : तीन-तीन को मिला दिया जाय तो वृद्धि होगी । कुल १५ उपायों का वर्णन है ।

(१) साम, दान, भेद ।
(२) साम, दान, दण्ड ।
(३) साम, भेद, दण्ड ।
(४) दान, सामभेद, दण्ड ।
(५) एक साम, दान, दण्ड, भेद ।

दो का योग

(१) साम, दान ।

केवल एक का ४ होगा

(१) साम ।
(२) दाम ।
(३) दण्ड ।
(४) भेद ।

दो को मिलाने पर ६ होता है ।

(१) साम-दाम ।
(२) साम-भेद ।
(३) साम दण्ड ।
(४) दाम-भेद ।
(५) दाम-दण्ड ।
(६) भेद-दण्ड ।

इस प्रकार १५ उपाय होते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तावन्तः प्रतिलोमाः ।

७९. उतने ही प्रतिलोम (विपरीत क्रम से) भेद होते हैं।

तेषामनेकोपायेन सिद्धिरेकसिद्धिः, द्वाभ्यां द्विसिद्धिः, त्रिभिस्त्रिसिद्धिः, चतुर्भिश्चतुःसिद्धिरिति ।

८०. उनमें एक उपाय से होने वाली सिद्धि एक सिद्धि, दो से होनेवाली द्विसिद्धि, तीन से होने वाली त्रिसिद्धि एवं चार उपायों से होनेवाली सिद्धि, चतुःसिद्धि होती है।

धर्ममूलत्वात्कामफलत्वाच्चार्थस्य धर्मार्थकामानुबन्धायाऽर्थस्य सिद्धिः सा सर्वार्थसिद्धिः ।

८१. अर्थ के धर्ममूल और कामफल वाला होने के कारण धर्मार्थकामानुबन्धी, जो अर्थ सिद्धि है, वह सर्वार्थ सिद्धि है।

पादटिप्पणी :

७९. (१) प्रतिलोम : पन्द्रह प्रकार के उपाय होंगे। गण० ३:१०० ।

प्रथम वर्ग में ४ होते हैं—

(१) दण्ड
(२) भेद
(३) दान
(४) साम

द्वितीय वर्ग में ३ प्रकार के उपायों में ४ हैं—

(१) दण्ड, भेद, दान
(२) दण्ड, भेद, साम
(३) भेद, दान, साम
(४) दण्ड, दान, साम

तृतीय प्रकार के २ उपायों में ६ हैं—

(१) दण्ड-भेद
(२) दण्ड-दान
(३) दण्ड-साम
(४) भेद-दान
(५) भेद-साम
(६) दान-साम

पादटिप्पणी :

८०. (१) एकसिद्धि : एक उपाय से सिद्धि होती है।

(२) द्विसिद्धि : दो उपायों से कार्य सिद्धि होती है।

(३) त्रिभिःसिद्धि : तीन उपायों से सिद्धि होती है।

(४) चतुर्भिःसिद्धि : चार उपायों से सिद्धि होती है।

पादटिप्पणी :

८१. (१) धर्ममूल : सूत्र ६०-६९ । अधिकरण १, प्रकरण १४६, अध्याय ७ ।

(२) सर्वार्थसिद्धि : सारे प्रदेशों के उपाय, धर्म, अर्थ, काम।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इति सिद्धयः, दैवादग्निरुदकं व्याधिः प्रमारो विद्रवो दुर्भिक्षमासुरी सृष्टिरित्यापदः ।

८२. सिद्धियाँ समाप्त । अग्नि, उदक, व्याधि, प्रमारी, विद्रव, दुर्भिक्ष एवं आसुरी सृष्टि दैवी आपदायें हैं ।

तासां दैवतब्राह्मणप्रणिपाततः सिद्धिः ।

८३. देवता-ब्राह्मण का प्रणिपात करने से उनका प्रतीकार होता है ।

अतिवृष्टिरवृष्टिर्वा सृष्टिर्वा याऽऽसुरी भवेत् ।
तस्यामाथर्वणं कर्म सिद्धारम्भाश्च सिद्धयः ॥

८४. अतिवृष्टि, अवृष्टि अथवा जो आसुरीसृष्टि होती है, उसमें अथर्ववेदोक्तकर्म तथा सिद्ध तपस्वीजनों के शान्तिकर्म से सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ।

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे अर्थानर्थ संशययुक्ता (आपदः) तासामुपायविकल्पजाः सिद्धयः सप्तमोऽध्यायः । आदितः अष्टाविंशतिशततमः ।

नवम अधिकरण के अन्तर्गत अभियास्यत् कर्म में अर्थानर्थ संशययुक्त (आपत्तियाँ) उनके उपाय विकल्प व सिद्धियों से सम्बन्धित सप्तम अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

'प्रमारो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रमादो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

दैवी आपदा :

८२. (१) अग्नि : जल आदि विघ्न हैं न कि आपदा । द्र० ४:३:१, ८:४:१ ।

(२) प्रमार : मरक, महामारी, गण० ३:१०१ ।

(३) विद्रव : भय या घबड़ाकर भाग जाना, पलायन । गण० ३:१०१ ।

(४) दुर्भिक्ष : अकाल । गण० ३:१०१ ।

(५) आसुरीसृष्टि : चूहा, सांप, भूत प्रेत आदि । एक मत से अग्नि, बाढ़ आदि पीड़ा है न कि आपदा । द्र० ३:२:२, गण० ३:१०१ ।

पादटिप्पणी :

८३. (१) प्रणिपात : वन्दना ।

(२) सिद्धि : सफलता या यहाँ उपशम का अर्थ है । गण० ३:६४, ९३ ।

पाठभेद :

'अतिवृष्टिर्वृष्टिर्वा सृष्टिर्वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'असृष्टिरतिसृष्टिर्वा' तथा श्री मूल में 'अवृष्टिरतिवृष्टिर्वा' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्रीसंस्करण में—

इति कौटलीयस्यार्थशास्त्रेऽभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे सप्तमोऽध्यायः अर्थानर्थसंशययुक्तास्तासामुपायविकल्पजाः सिद्धयश्च, आदितोऽष्टाविंशतिशततमः ॥

एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य अभियास्यत्कर्म नवममधिकरणं समाप्तम् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य अभियास्यत्कर्म नवममधिकरणं समाप्तम् ।

कौटिलीय अर्थशास्त्र के अभियास्यत् कर्म सम्बद्ध नवम अधिकरण समाप्त ।

मैसूरसंस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि अर्थानर्थसंशययुक्ताः तासामुपायविकल्पजाः सिद्धयश्च सप्तमोऽध्यायः, आदितोऽष्टाविंशतिशततमः ।

एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य अभियास्यत्कर्म नवममधिकरणम् ॥

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे अभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे सप्तमोऽध्यायः अर्थानर्थसंशयमुक्तास्तासामुपायविकल्पजास्सिद्धयश्च आदितोष्टाविंशतिशततमः ।

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य अभियास्यत्कर्म नवममधिकरणं समाप्तम् ।

उदयवीरशास्त्रीसंस्करण में—

इत्यभियास्यत्कर्मणि नवमेऽधिकरणे अर्थानर्थसंशययुक्तास्तासामुपायविकल्पजाः सिद्धयश्च सप्तमोऽध्यायः ॥ ६ ॥ आदितोऽष्टाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२८ ॥

एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य अभियास्यत्कर्म नवममधिकरणं समाप्तम् ॥ ९ ॥

श्री रघुनाथ सिंह पुत्र श्री बटुकनाथ सिंह, जन्म स्थान ग्राम खेवेली निवास स्थान औरंगाबाद (भीटा) वाराणसी ने १९८५ में कौटिल्य अर्थशास्त्र के द्वितीय खण्ड को लिखकर समाप्त किया ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेखक की रचनाएँ

राजतरंगिणी :

कल्हण : प्रथम खण्ड (द्वितीय संस्करण)
: द्वितीय खण्ड
: तृतीय खण्ड
: चतुर्थ खण्ड
जोनराज : जोन राजतरंगिणी
श्रीवर : जैन राजतरंगिणी (प्रथम भाग)
श्रीवर : जैन राजतरंगिणी (द्वितीय भाग)
शुक : राजतरंगिणी
रघुनाथ सिंह : राजतरंगिणी, प्रथम खण्ड
(शाहवीर वंश, चकवंश मुगल, पठान वंश)
रघुनाथ सिंह : राजतरंगिणी, द्वितीय खण्ड
(सिख, डोगरा एवं आधुनिक काल)
काश्मीर कीर्ति कलश
काश्मीर कीर्ति शिखर
काश्मीर कीर्ति शेष

राजनीति :

१. आधुनिक राजनीति का क. ख. ग.
२. कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम् (प्रथम भाग)
३. कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम् (द्वितीय भाग)
४. जवाहरलाल नेहरू का महाप्रस्थान
५. जागृत नैपाल
६. धर्मनिरपेक्षराज्य
७. फासिज्म

धर्म :

१. ऋग्वेद कथा
२. बुद्ध कथा
३. रामायण कथा
४. योगवाशिष्ठ कथा
५. विश्व के धर्मप्रवर्तक
६. सर्वधर्मसमभाव

पर्यटन :

१. आर्याना
२. आस्ट्रेलिया
३. दक्षिणपूर्व एशिया

कहानी :

१. भिखारिणी

उपन्यास :

१. इन्द्रजाल
२. संस्कार
३. मैं
४. कहाँ
५. एक कोना
६. चौरा
७. लावारिस (टवर्ग हीन)

अंग्रेजी :

१. टुवर्डस्फ्रीडम
२, कनसिडर
३. वर्ल्ड क्रोमोलाजी, एनशिएण्ट, प्रथम भाग

यन्त्रस्थ :

१. वर्ल्ड क्रोनोलाजी, क्लासिकल एण्ड डार्कएज
२. वर्ल्ड क्रोनोलाजी, मिडीवल
३. वर्ल्ड क्रोनोलाजी, मार्डन
४. काश्मीरकीर्तिस्थैर्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.